प्रकाशक
श्री जवाहर विद्यापीठ,
भीनासर – ३३४ ४०३

मुद्रक
साखला प्रिन्टर्स
सुगन निवास, चन्दनसागर
बीकानेर

श्री वीतरागाय नम

प्रस्तावना

(लेखक –श्री कुन्दनमलजी फिरोदिया, अध्यक्ष बबई–धारासभा)

स्वर्गस्थ पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज के चरित्र–ग्रथ की प्रस्तावना लिखने का मुझे अवसर दिया गया इसलिए चरित्र-समिति का मै प्रथम आभार मानता हूँ। पूज्यश्री का स्वर्गवास हुआ तब मै सन् १९४२ के आन्दोलन के सबब से कारावास मे था। कुछ दिनो के बाद मुझे वहा एक पत्र भी मिला कि मै पूज्यश्री के बारे मे, मेरी जो स्मृतिया हो, वह लिख भेजू। कारावास मे होने के सबब मै लिखने मे असमर्थ था। इसका मुझे दु ख होता रहा। प्रस्तावना लिखने का मुझे मौका मिला यह मै अपना अहोभाग्य समझता हूँ। पूज्यश्री के चरणारविन्द मे श्रद्धाजलि अर्पित करने का मेरा पवित्र कर्त्तव्य है। यह कार्य मैने बडे हर्ष से स्वीकार कर लिया।

पूज्यश्री के प्रथम दर्शन का लाभ मुझे तब मिला जब पूज्यश्री दक्षिण प्रान्त मे पधारे और अहमदनगर शहर मे ही आपका दक्षिण का प्रथम चातुर्मास सवत् १९६८ मे हुआ। मेवाड मालवा छोडकर पूज्यश्री दक्षिण मे पधारे तब वह किचित् व्यथित अन्त करण से ही पधारे थे। रतलाम जैन ट्रेनिग कालेज के कुछ विद्यार्थियो ने दीक्षा लेने का निश्चय करके कालेज छोड दिया, उसका आरोप पृज्यश्री पर कालेज के उस वक्त के कार्यवाहक और "जेन हितेच्छु" पत्र के सम्पादक श्री वाडीलाल मोतीलाल शाह ने लगाया था। पूज्यश्री को इसका बडा दु ख होता था।

पूज्यश्री हमेशा कहते थे कि तीर्थकरो की आज्ञा मे रहकर उपदेश ओर आदेश का पूरा खयाल रखकर मै साधु-जीवन व्यतीत करता हूँ। इसी चातुर्मास मे दक्षिण के नेता शास्त्र–वेत्ता श्रीमान् वालमुकुन्दजी साहेब मुथा और श्रीमान् वाडीलालजी अहमदनगर पधारे। पूज्यश्री के रूबरू बात होने पर और पूज्यश्री का उपदेश और आदेश का शास्त्र-शुद्ध विवरण सुनने से आत्म-साक्षी से पूज्यश्री ने ऊपर के नेताओ के और अहमदनगर के श्रावको के सामने खुले दिल से जो बाते रखी उनसे सबको सतोष हुआ ओर पूज्यश्री के ऊपर लगाये हुए इलजाम का परिमार्जन हुआ।

दक्षिण मे पूज्यश्री पहली बार ही पधारे थे, तो भी उनके ओजस्वी-तेजस्वी व्याख्यान का जनता के ऊपर गहरा असर हुआ ओर पूज्यश्री के प्रति दक्षिण प्रात का आदर और भक्तिभाव बढ गया। पूज्यश्री की ज्ञान–लालसा बहुत बडी थी। पूज्यश्री का जेन शास्त्रो का अध्ययन तो ऊँचे दर्जे का ओर मार्मिक हुआ ही था परन्तु दक्षिण मे आने पर पृज्यश्री को अच्छे–अच्छे धार्मिक ग्रन्थ और अन्य वाङ्मय पढने का अवसर मिला। पूज्यश्री रामतीर्थ, विवेकानन्द, तुकाराम आदि हिन्दुधर्मीय साधुओ की विचार–धारा से परिचित हुए। इसी वक्त सस्कृत भाषा का ज्ञान, धर्मो के तुलनात्मक अभ्यास के वास्ते बहुत जरूरी आपने समझा और उस बारे मे विचार होने लगा। पृज्यश्री के सामने एक बडा प्रश्न उपस्थित था कि अन्य धर्मीय पडितो से साधु अध्ययन कैसे करे ? पृज्यश्री ने इस बारे मे बहुत विचार करके

निश्चय किया कि इस वक्त की परिस्थिति मे अन्य धर्मीय पडित के पास से भी सस्कृत, व्याकरण आदि का अध्ययन करने मे हरकत नही। आप अनेक वक्त ऐसा कहा करते थे कि पिता की जव दो आज्ञा पुत्र को होती है कि तुम अज्ञानी मत रहो और अन्य धर्मियो से विद्या ग्रहण न करो। इन दोनो आज्ञाओ का पूर्ण पालन होना शक्य नही था। स्थानकवासी सप्रदाय मे वैसे कोई साधु ही दिखते नही थे जो सस्कृत का अध्ययन अपने साधुओ को करा सके। तव उन्होने इन दो आज्ञाओ मे से दूसरी आज्ञा मे किंचित् दोष लगा तो भी प्रथम आज्ञा का पालन होने से स्थानकवासी समाज मे सस्कृत के अध्यापको की परम्परा निर्माण हो जायगी यह निश्चय करके पूज्यश्री ने अपने दो शिष्य वर्तमान पूज्यश्री गणेशीलालजी महाराज और प मुनिश्री घासीलालजी महाराज को सस्कृत का अध्ययन कराना शुरू किया। पूज्यश्री भी जव समय मिलता था तब स्वय सस्कृत का अध्ययन करते थे। पूज्यश्री की ज्ञान-पिपासा दुर्दम्य थी। ज्ञान मिले तो वह उसको ग्रहण करके जैन तत्त्वज्ञान से मिलान करने का यत्न करते थे। पूज्यश्री ने देखा कि उपरिनिर्दिष्ट दोनो शिष्यो का सस्कृत व्याकरण का अभ्यास पूरा हो गया, परन्तु वह कैसा हुआ इसकी जाच होना जरूरी था। इसके लिए अहमदनगर शहर मे ही उनकी परीक्षा का आयोजन किया गया। फरग्युसन कालेज के सस्कृत-अध्यापक महामहोपाध्याय वासुदेव अभ्यकर शास्त्री तथा डाक्टर गुणे शास्त्री ने लेखी और मोखिक परीक्षा ली। उसका परिणाम बहुत सतोषजनक आया। दोनो ही साधु पहले वर्ग के गुण प्राप्त कर सके। इस आयोजन की व्यवस्था का मुझे ही लाभ मिला था। यह बात विशेष रीति से कहने का तात्पर्य यह है कि जो पूज्यश्री ने उस वक्त निश्चय करके सस्कृत अध्ययन शुरू न किया होता तो आज न्यारे-न्यारे सप्रदायो मे सस्कृत का उच्च ज्ञान धारण करने वाले साधु-साध्वी दिखते है वह न होते। अब स्थानकवासी साधु-साध्वियो को अन्य धर्मीय पडितो के पास से अध्ययन करने की जरूरत ही नही।

पूज्यश्री का जैन-शास्त्रो का अगाध ज्ञान, अन्य दर्शनो का तुलनात्मक किया हुआ अध्ययन, विशाल कल्पना-शक्ति, स्फूर्तिप्रद ओजस्वी वाणी और श्रोताओ को चकित एव प्रभावित कर देने वाली व्याख्यान-शैली से आपका प्रभाव जैन-अजैन सव श्रोताओ पर बहुत गहरा पडता था। शास्त्र मे श्रावक को साधु का 'अम्मापियरो' कहा है इस तरफ लोगो का ध्यान आप खीचते थे 'सति एगेहिं भिक्खूहिं गारत्था सजमुत्तरा' इस शास्त्र-वचन का आधार लेकर श्रावक-श्राविकाओ को उनके ऊचे पवित्र स्थान का पूरा खयाल करा देते थे। आनन्दजी श्रावक, साधु नही थे, तो भी भगवान् महावीर ने गोतम स्वामी को उनकी क्षमा मागने को कहा। यह भी दृष्टान्त हमेशा आप देते थे। तात्पर्य यह था कि श्रावक लोग अपना स्थान भूल गये थे। श्रावको ने अपने कर्त्तव्य पूरे नही बजाये तो साधु-समाज पर उसका बुरा परिणाम होगा, यह वात पूज्यश्री के सामने थी। जेन स्थानकवासी सप्रदाय मे भी वहुत लोग पुराने विचार वन गये थे। वर्तमान विज्ञान-युग और जेन-धर्म का केसे मेल मिलाना, यह बात वह समझ ही नही ... थे। उपदेश-परम्परा भी इसी ढग की हो रही थी। उससे तरुण शिक्षित लोग धर्म से दूर जा रहे थे।

पूज्यश्री का समस्त जेन-सघ पर वडा उपकार हे कि उन्होने इन युवको को जैनधर्म की श्रद्धा मे स्थिर किया। जो-जो युवक आपके व्याख्यान सुनते थे वह सब अपनी श्रद्धा दृढ करके ही जाते थे। मे तो स्वय जव पूज्यश्री का व्याख्यान सुनता था तो मुझे तो एक व्याख्यान से ही १५ दिन तक विचार

करने की सामग्री मिलती थी। पूज्यश्री का श्रावको का अधिकार-विवरण तो अत्यन्त श्रवणीय ओर विचारणीय था। उपासकदशाग सूत्र मे वर्णित आनन्दजी श्रावक के चरित्र से लोगो के दिलो मे जो भूल भरे विचार थे वे आप निकाल सकते थे।

स्थानकवासी सम्प्रदायो मे ऐसी मान्यता एक वक्त जैन भाई लेकर बैठे थे कि खेती करना पाप है। पूज्यश्री ने इसका जो खुलासा किया उससे वह भ्रम दूर हो गया। खेती करने मे पाप होता तो महावीर भगवान् के दश श्रावको मे से प्रथम श्रावक आनन्दजी सैकडो हल की खेती कैसे कर सकते थे ? आनन्दजी सरीखे पुण्यवान् श्रावक और महावीर सरीखे उपदेशक होते हुए भी खेती बडे परिमाण मे होती थी तो उसका अर्थ हमको जरूर समझना चाहिए। ससार की कोई क्रिया एकान्त पाप और एकान्त पुण्य की होती नही। पाप-पुण्य का अल्प बहुत्व देखना चाहिये। अल्पारभ और महारम्भ का विषय तो पूज्यश्री अपने व्याख्यानो मे बारम्बार सुनाते थे। ऐसा मान लीजिये कि किसी भी आदमी ने खेती नही की, अनाज पैदा नही किया तो जनता भूखी मरेगी या मासाहारी बन जायगी। इससे तो एक जैनी खेती करे तो वह हिंसा-अहिंसा का खयाल रखकर विवेकपूर्वक ही करेगा। वह खेती बिना विवेक से होने वाले खेती-कार्य से बहुत ठीक है। पूज्यश्री का वक्तव्य इस बारे मे इतना प्रभावशाली होता था कि पुराने विचारवाले बहुत-से श्रावको ने और कुछ साधुओ ने भी अपने विचार मे परिवर्तन कर लिया।

उपासकदशाग के श्रद्धालकजी के चरित्र से पूज्यश्री समाज को अन्य-अन्य छोटी-मोटी जातियो की तरफ अपने कैसे खयाल होने चाहिये, यह समझाते थे। श्रद्धालकजी कुँभार थे तो भी दश श्रावको मे उनकी गणना हुई। जैनधर्म मे जाति और कुल को महत्व नही। महत्व हे मनुष्य के कर्तव्य को। पूज्यश्री देखते थे कि चारो ओर इससे विरोधी बर्ताव हो रहा था। जो जैन कुल मे जन्मे वही जैनी, यह समझ कितनी भूलभरी है यह बात पूज्यश्री अच्छी तरह से शास्त्रो के आधार से सावित करते थे। उत्तराध्ययन सूत्र का आधार लेकर पूज्यश्री फरमाते थे कि –

कम्मुणा बम्हणो होई, कम्मुणा होइ खत्तियो।
कम्मुणा वेसियो होई, सुद्दो हवइ कम्मुणा॥

इस सूत्र का विवरण इतना सुन्दर होता था कि वह सुनकर जनता मुग्ध होती थी। जेन धर्म विश्व-धर्म है ऐसा हम कहते है, परन्तु हमारा बर्ताव बिलकुल इसके खिलाफ है। पूज्यश्री के इस बारे मे विचार बहुत दृढ थे। छूत-अछूतो का विवरण तो आप ही के मुख से सुनना आनददायक था। जेनधर्म मे नही है जाति-भेद ओर नही बतलाया छूत-अछूतवाद। अछूतो के वास्ते जैनधर्म खुला नही होता तो मेतार्य मुनि और हरिकेशी मुनि, जो चाडालकुल मे जन्मे थे, वे जैनधर्म की दीक्षा केसे ग्रहण कर सकते धे ?

परन्तु दुर्भाग्य है हमारा कि हमारी कूप-मडूक वृत्ति ने ओर कोती दृष्टि ने जैनियो का दुनिया मे स्थान नीचे गिरा दिया, जैनियो की सख्या दिन-पर-दिन घटती जा रही हे ओर उनके प्रति अन्य समाजो मे जो भाव पैदा हो रहे है उसके जिम्मेदार हम ही हे। हम ऐसे मार्ग पर चलते है कि अपने स्वार्थ के सिवाय दूसरी बात हमारी नजर मे ही नही आती। अन्यान्य समाजो से हमारा वर्ताव कैसी हमदर्दी से, प्रेम से होना चाहिये यह हम सब भूल गये। जैनधर्म मे कही हुई भावनाओ को हम पुस्तक मे रखना जानते है। बहुत हुआ तो उसका वर्णन हम स्थानक मे सुन लेते है परन्तु बाहर ससार के

मैदान मे हमारा बर्ताव विलकुल स्वार्थी, लोभी वृत्ति का वन गया। इसका पूज्यश्री को वहुत रज होता था। जैनधर्म ने सवसे ऊचा स्थान चारित्र्य को दिया है और हम सम्यक्–चारित्र्य को विलकुल भूल गये है।

पूज्यश्री का जन्म-स्थान भिल्ले के प्रात का हे। इनको वचपन से ही गरीव, अज्ञानी लोगो की तरफ बहुत वात्सल्य और प्रेम था। इन सव लोगो के साथ हम प्रेम से रहे, उनकी सेवा करे, इसमे सच्ची अहिंसा है यह पूज्यश्री फरमाते थे। पूज्यश्री आनन्दजी श्रावक का उदाहरण लेकर हमेशा कहते थे कि आनदजी जैसे राज-दरबार से सलाह मसलत लेने योग्य थे और उनकी सलाह मसलत ली जाती थी, अव कितने श्रावक हम बता सकते है जो अपने कर्तव्य से जेनधर्म के ऊचे चारित्र्य को दीपा रहे हे ?

पूज्यश्री के विचार तो बहुत ही क्रातिकारी थे। समाज उन सब विचारो को अपना नही सका यह दुर्भाग्य हे। मुझे पूरा ध्यान है कि जव पूज्यश्री दक्षिण मे दूसरे वक्त लालचन्दजी महाराज को, जो दक्षिण मे बीमार थे, दर्शन देने के वास्ते पधार रहे थे। पूज्यश्री अहमदनगर से करीव २५ मील दूर राहुरी ग्राम को पधारे। वहा मै और अहमदनगर के कुछ भाई पूज्यश्री के दर्शनार्थ गये। राहुरी मे पूज्यश्री ने जो व्याख्यान दिया, जो विचार प्रकट किये वह मै कभी भूल नही सकता। दक्षिण देश मे मारवाड आदि प्रातो से आये हुए ओसवाल जैन भाई बहुत-से छोटे-छोटे ग्रमो मे वसे हे और व्यापार-धधा करके गुजारा करते है। उनका कर्तव्य और बर्ताव कैसा होना चाहिये, यह पूज्यश्री ने उस वक्त फरमाया। आपने लोगो को कहा कि जिन लोगो मे आप बसते हो, जिनसे कमाई करते हो, उनके प्रति हमदर्दी, वात्सल्य, प्रेम रखना जरूरी है, "Live and let live" जीओ और जीने दो, यह तत्त्व ध्यान मे रखने की जरूरत आप पूज्यश्री ने बतलाई। हम ही सुखी बने और पडोस मे बसनेवाले लोग केसे भी दु ख मे हो तो परवा नही, यह खयाल नही छोडोगे तो आपका देहातो मे रहना मुश्किल हो जायगा। वह प्रश्न आज प्रत्यक्ष खडा है और देहातो की जैन-जनता सकट मे है।

पूज्यश्री ने तो शास्त्रो से उदाहरण देकर बतलाया कि जिस स्थान मे हम बसते हे वहा के लोगो को अपनाने का एक मार्ग तो उन्ही के साथ रोटी–बेटी का व्यवहार भी कर लेना हे। पूज्यश्री ने शास्त्रो के दाखले देकर बतलाया कि पूर्वकाल मे जब कोई श्रावक अन्य प्रात मे या देश मे व्यापार निमित्त जाते थे तो वहा पर विवाहादि क्रिया भी वह कर लेते थे। यह सब विचार शास्त्र-सम्मत होगे तो भी हमारे वर्तमान जमाने के लोगो को कहा तक अच्छे लगेगे, वह बात न्यारी हे।

श्रावको का कर्त्तव्य समझाने के वक्त पूज्यश्री उपासक दशाग के श्रावक-चरित्र का ही उपयोग [illegible]रते थे। महासतकजी श्रावक के चरित्र पर से श्रावको को कितनी सहिष्णुता रखनी चाहिये, इसका [illegible]क विवेचन आप करते थे। महासतकजी श्रावक की पत्नी मासाहारी होने पर भी उसके साथ [illegible] का कैसा बर्ताव था और आज हम छोटी-छोटी बातो पर से लोगो को समाज मे से बाहर फेक देते है। यह बात पूज्यश्री अच्छी तरह समझाते थे। पूज्यश्री के व्याख्यान सुनने वाले सभी युवक ऐसे ही व्याख्यान हमको चाहिये, ऐसा कहते थे और जैन धर्म पर भी अपनी श्रद्धा स्थिर बना लेते थे। पूज्यश्री कोई भी नई बात हो जो जेन तत्वो से मिलती हो और सयमी जीवन बिताने मे उपयोगी हो उसको खुशी से ग्रहण करते थे।

महात्मा गाधी ने खादी का प्रचार हिन्दुस्तान मे सन् १९२० से किया। महात्माजी की खादी की तरफ देखने की दृष्टि आर्थिक और राजकीय थी, परन्तु पूज्यश्री ने उसमे अहिंसा का पालन देखा। चरबी लगाये हुए मिल के कपडो का उपयोग करने से खादी का उपयोग करने मे अहिंसा का पालन ज्यादा होता है। यह देखकर पूज्यश्री ने खादी का ही कपडा लेना मजूर किया और पूज्यश्री व्याख्यानो मे भी श्रावको को उसका उपदेश बहुत जोर से करने लगे। आपके उदाहरण से कुछ साधुओ ने भी खादी का इस्तेमाल करने का निश्चय किया और श्रावको ने भी उस बारे मे प्रत्याख्यान किये।

पूज्यश्री व्याख्यानो मे गोपालन का बहुत महत्व समझाते थे। चार गोकुल रखनेवाले कहाँ आनदजी श्रावक और कहाँ मोल का दूध लेकर काम चलाने वाले वर्तमान श्रावक ? हिन्दुस्थान सरीखे खेती पधान देश मे गोपालन की कितनी जरूरत है यह तो कहने की जरूरत ही नही। आपके इस विषय पर जो पभावी प्रवचन होते थे उनका ही परिणाम घाटकोपर की जीवदया सस्था है। इस सस्था ने गत वीस चर्ष मे ८००० गाय-भैसो को जीवन दिया और २५ मन शाम और सुबह अच्छा निखालस दूध लोगो को मिलने की व्यवस्था हुई है। मृत्यु-भोज, वृद्ध-विवाह, कन्या-विक्रय, ब्याजखोरी आदि सामाजिक विषयो पर आपके विचार समाजोन्नति के पोषक और मनुष्य जीवन को नीतिमय बनाने मे बहुत मददगार होते थे।

पूज्यश्री बालब्रह्मचारी थे। ब्रह्मचर्य का पालन जीवन सफल बनाने मे अत्यन्त जरूरी है और जैन-शास्त्रो के अनुसार मनुष्य क्रमश किस प्रकार ब्रह्मचर्य द्वारा उत्कर्ष कर सकता है इस विषय पर आपका विवेचन प्रभावी होता था।

पूज्यश्री का विभूतिमत्व बहुत बडा था। आपके मुख पर ब्रह्मचर्य का तेज हमेशा चमकता था। आपके गुणो के आकर्षण से हिन्दुस्थान के बडे-बडे नेताओ ने आपके दर्शन का लाभ लिया। अहमदनगर मे आप विराजते थे उस वक्त लोकमान्य तिलक स्थानक मे पधारे और आपश्री से वार्तालाप किया। राजकोट मे आप विराजते थे उस वक्त महात्मा गाधी और सरदार बल्लभभाई पटेल ने आपके दर्शन किये। इसके अलावा विट्ठल भाई पटेल, जमनालाल बजाज, विनोबा भावे, ठक्कर वाप्पा, रामेश्वरी नेहरू, कस्तूरबा गाधी, सेनापति बापट आदि बहुत से देश और समाज के नेताओ ने आपके दर्शन का लाभ लेकर परिचय किया।

पूज्यश्री दस प्रकार के धर्म पर जब व्याख्यान फरमाते थे तव देशधर्म क्या है ओर उसके प्रति हमारे जैनियो के क्या खयाल होने चाहिये इसका सुन्दर विवरण आप फरमाते रहे।

स्थानकवासियो मे से अलग हुये तेरापथी लोग शास्त्र-विरुद्ध और दुनिया की समझ के खिलाफ प्ररूपणा कर रहे है ओर उससे जेनधर्म के बारे मे लोगो को भ्रम और गैरसमझ पैदा होती है। इसलिये आप उन मतो का हमेशा खडन करने तो तैयार थे। आपने उसके वास्ते थली मे विहार करके वडा कष्ट भी उठाया और इस विषय मे 'सद्धर्ममण्डन' और 'अनुकम्पा-विचार' यह दो पुस्तके लिखी है। आपने देश के न्यारे-न्यारे प्रातो मे विहार करके उपदेश द्वारा उपकार किया है। दो वक्त आपने दक्षिण देश मे विहार किया। वबई से लेकर पूरे महाराष्ट्र सतारा तक को आपने पुनीत किया। काठियावाड और गुजरात को भी आपने दर्शन दिये। उत्तर मे दिल्ली तक आपने देश स्पर्शा है। मेवाड, मालवा, मारवाड और मध्यभारत यह तो आपका कार्य-क्षेत्र ही था।

जब दक्षिण मे आप विराजते थे तब उस वक्त के पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज जो वडे भाग्यवान् आत्मार्थी साधु थे, उन्होने सब वातो का विचार करके आपको ही उत्तराधिकारी चुना ओर आपको युवाचार्य बनाने का निश्चय किया। इस बारे मे जब अहमदनगर जिले के हिवडा ग्राम मे आप विराजते थे वहा पत्र तार द्वारा और समक्ष टेप्युटेशन लेकर कुछ श्रावक पधारे। तब आपने वहुत विचार किया और पूज्यश्री को (पू श्रीलालजी म को) मिले विना नक्की कहने से आपने इन्कार किया। युवाचार्य सरीखे बडे मान की पदवी घर चल आती है तब भी आप स्वीकार करने मे क्यो आनाकानी करते थे ? इसका खुलासा पूज्यश्री के विचारो से जो परिचित हो वही कर सकते हैं। युवाचार्य होना ओर पूज्य वनना यह बडा जिम्मेदारी का कार्य होता है। श्रीहुकमीचन्दजी महाराज के सम्प्रदाय जैसे बडे सम्प्रदाय का, जिसमे साधु-साध्वियो की सख्या काफी है, बोझ अपने कधो पर लेने से अपनी आत्मा की उन्नति मे किचित् बाधा उपस्थित होती हे। यही वाधा आपको खटकती थी और इसी कारण आपको स्वीकृति देने मे देरी लगी।

पूज्यश्री ने यह बोझ उठा तो लिया, पर जहाँ तक मै पूज्यश्री के विचारो को जान सका, मे कह सकता हूँ कि इस बोझ के कारण आपके दिल मे हमेशा यही भाव रहा कि आत्मा की उन्नति के वास्ते जितना ज्यादा समय देना चाहते थे, उतना नही दे सके।

न्यारे-न्यारे सम्प्रदाय होने की अपेक्षा एक ही महावीर का सम्प्रदाय हो तो बहुत अच्छा, यह आपके विचार तो सुपरिचित है। इसी कारण से अजमेर मे सन् १९३३ मे साधु-सम्मेलन का जो वडा आयोजन हुआ, उसमे आप प्रेक्षक और सलाहकार के रूप मे ही हाजिर हुए। आपको इस बडे आयोजन की फलश्रुति समाधानकारक नही दीखती थी। परन्तु इतना होते हुए भी जब साधु-सम्मेलन के निर्णयो को कान्फरेस के अजमेर-अधिवेशन मे स्वीकार किया गया तब उसका पूरा अमल पूज्यश्री ने किया और समाज की उन्नति के प्रति अपने प्रेम का सबूत दिया।

स्थानकवासी सम्प्रदायो मे श्रीहुकमीचन्दजी महाराज का सम्प्रदाय एक बडा सम्प्रदाय हे। इस सम्प्रदाय मे ऊची पदवी के अनेक साधु हुए हे। उन सब मे सितारे सरीखे आप चमकते हे, यह कहने मे कुछ अतिशयोक्ति नही है, ऐसा मै मानता हूँ।

बडे-बडे व्याख्यानी साधुओ के जब चातुर्मास होते हे तब दर्शन और श्रवण के उत्सुक श्रावको की भीड लगती है। हजारो की मेदनी एकत्र होती हे ओर इन सबके खाने, पीने, रहने की व्यवस्था करना एक वडा मुश्किल काम हो जाता है। वडे शहरो मे इन बातो की सुविधा मिल जाती हे और वहा के लोग प्राय ज्यादा पैसे वाले होने से सब काम सफलतापूर्वक सम्पन्न कर डालते हे, मगर इसका परिणाम यह हुआ कि व्याख्यानी भाग्यवान् साधुओ के चातुर्मास छोटे गावो मे होना कठिन हो गया। इस बारे मे पूज्यश्री के विचार विलकुल निश्चित थे। आप तो हमेशा फरमाते थे कि शहरो की अपेक्षा ग्रामो मे साधुओ को चातुर्मास मे शाति ज्यादा रहती हे औरअध्ययन, अध्यापन ओरध्यान एव आत्मोन्नति की तरफ ज्यादा लक्ष्य दे सकते हे। इससे पूज्यश्री जहा तक बन सके, ग्रामो मे ही चातुर्मास करना पसन्द करते थे। परन्तु समाज की वर्त्तमान हालत देखते शहरो मे आपको विराजना होता था। परन्तु आप इस विषय पर फर्माते हुए स्पष्ट कहते थे कि मूर्त्तिपूजक जेन यात्री जब यात्रा के वास्ते जाते अथवा हिन्दुस्तान के लोग यात्रा के वास्ते दूर-दूर जाते थे तब कोन उनके खान-पान का इन्तजाम करता था ?

ठहरने के लिए जगह की व्यवस्था हो गई तो दूसरी सब व्यवस्था दर्शनार्थ आने वालो को कर लेनी चाहिए। इस विचार की तरफ समाज ने अभी तक पूरा ध्यान नही दिया। इस प्रथा के अमल मे आने से छोटे-मोटे सब ग्रामो को सब साधु-साध्वियो का सरीखा लाभ शक्य हो जाएगा।

पूज्यश्री का जीवन-चरित इतना गहन और विशाल है कि उसके न्यारे-न्यारे पहलू का, प्रस्तावना सरीखे अल्प स्थान मे विचार करना शक्य नही और यह करने मे मै अपने को समर्थ नही समझता। यह पस्तावना तो पूज्यश्री के प्रति मेरे दिल मे जो भाव थे और जो स्फूर्ति मैने आपके उपदेश से पाई, उससे कुछ अश मे अनऋण होने की दृष्टि से ही लिखने का साहस किया है।

पूज्यश्री के जीवन-चरित से जैन-समाज के चारो तीर्थों को स्फूर्ति-सन्देश मिले और समाज को अपना जीवन सफल बनाने मे यह चरित्र सहायभूत होगा, यह मेरा विश्वास है।

पूज्यश्री के जीवन-चरित की प्रस्तावना मे पूज्यश्री के विचारो को मै पूरी तरह दर्शित नही कर सका। अगर कुछ स्थलो पर अनजान मे समझफेर पैदा करने वाला लेखन मेरे हाथ से हुआ हो तो मै सब चतुर्विधि सघ की क्षमा चाहता हूँ।

खामेमि सव्वे जीवा सव्वे जीवा खमतु मे।
मित्तो मे सव्वभूएसु वेर मज्झ ण केणई॥

श्रावण शु ६
सवत्सरी
ता २०-८-४७

चतुर्विध सघ का सेवक
कु सो फिरोदिया

प्रकाशकीय

परम श्रद्धेय युगदृष्टा, क्रान्तदर्शी, ज्योतिर्धर आचार्य पूज्य श्रीजवाहरलालजी म सा भारतीय सत–परम्परा के जाज्वल्यमान नक्षत्र थे। आपका जन्म वि स १९३२ मे कार्तिक शुक्ला चतुर्थी को थादला (म प्र) मे हुआ था। 16 वर्ष की अवस्था मे आपने जैन भागवती दीक्षा अगीकृत की ओर सवत् २००० मे आषाढ शुक्ला अष्टमी को भीनासर (वीकानेर) मे आपका स्वर्गवास हुआ।

आचार्य श्री का व्यक्तित्व बडा आकर्षक ओर प्रभावशाली था। आपकी दृष्टि बडी उदार, प्रगतिशील तथा विचार विश्व–मैत्रीभाव व राष्ट्र चेतना से ओतप्रोत थे। आपने भारतीय स्वाधीनता–आन्दोलन के सत्याग्रह, अहिंसक प्रतिरोध, खादी–धारण, गो–पालन, अछूतोद्धार, व्यसन–मुक्ति जेसे रचनात्मक कार्यक्रमो मे सहयोगी बनने की जनमानस को प्रेरणा दी ओर देहज प्रथा, बाल विवाह, वृद्ध विवाह, मृत्युभोज, सूदखोरी जेसी कुप्रथाओ के खिलाफ लोकमानस को जागृत किया। आपके राष्ट्रधर्मी, क्रान्तदृष्टा, आत्मलक्षी व्यक्तित्व से प्रभावित होकर राष्ट्रपिता महात्मा गाधी, लोकमान्य तिलक, प मदनमोहन मालवीय, सरदार बल्लभ भाई पटेल जेसे महान् राष्ट्रनेता आपके सम्पर्क मे आए। आप प्रखर वक्ता और असाधारण वाग्मी महापुरुष थे। 'जवाहर किरणावली' नाम से ५१ भागो मे प्रकाशित आपका प्रेरणादायी विशाल साहित्य विश्व मानवता की अमूल्य निधि है। वह ओज, शक्ति ओर चरित्र निर्माण का जीवन साहित्य है। इस साहित्य से प्रेरणा लेकर हजारो लोगो ने अपना उत्थान किया हे। ऐसे महान् ज्योतिर्धर क्रान्तदर्शी आचार्य का जीवन, व्यक्तित्व ओर कर्तृत्व न केवल जेन समाज के लिए वरन् सम्पूर्ण मानव समाज के लिए सतत प्रेरणा का स्रोत हे।

साहित्य की विभिन्न विधाओ मे जीवनी का अपना विशिष्ट स्थान हे। इसमे चरित्र नायक की छोटी–छोटी बातो ओर घटनाओ का उसके अन्तर ओर वाह्य व्यक्तित्व का कलात्मक निरूपण किया जाता है। नेतिक भावना ओर चरित्र निर्माणकारी चेतना उद्‌बुद्ध करने की दृष्टि से महापुरुषो की प्ररेणादायी जीवनियो के अध्ययन का अपना विशिष्ट महत्व हे। महान् पुरुषो के जीवन की छोटी–छोटी महत्वपूर्ण घटनाओ द्वारा किशोर वर्ग के छात्रो के मानस–पटल पर जीवन निर्माण के जिन सूत्रो की छाप पडती है, वह वडे–वडे धार्मिक ओर सेद्धान्तिक ग्रन्थो का अध्ययन करके नही प्राप्त की जा सकती। पूज्य आचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा की जीवन गाथा इस दृष्टि से आवाल वृद्धो के लिए प्रेरणादायी और मार्गदर्शक हे।

आचार्य श्री की जीवनी का लेखन कार्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान प शोभाचन्दजी भारिल्ल एव प इन्द्रचन्दजी शास्त्री द्वारा आचार्य श्री की विद्यमानता मे ही प्रारभ कर दिया गया था। पर उसके सम्पन्न होने के पूर्व ही आचार्य श्री का स्वर्गवास हो गया था। इस पर भी जीवनी लेखन का कार्य चालू रहा और स २००४ मे श्री श्वेताम्बर साधुमार्गी जैन हितकारिणी सस्था, बीकानेर द्वारा उसका प्रकाशन किया गया।

यहा उल्लेख अपासगिक नही कि राष्ट्रीयता, समन्वित आत्मधर्म के प्रणेता, बहुआयामी प्रभावक व्यक्तित्व के धनी, प्रज्ञा पुज एव युग प्रवर्तक आचार्य श्री की जीवनी प्रकाशित कराने का आद्य श्रेय हितकारिणी सस्था के तत्कालीन मत्री समाजभूषण सेठ श्री चम्पालालजी बाठिया को है। आपकी सूझबूझ, दूरदर्शिता एव गुरु–निष्ठा से ही यह कीर्तिमानीय कार्य मूर्त रूप ले सका। यही नही, श्रीमद् जवाहराचार्य की वाणी को कालजयी बनाने हेतु आपने अथक प्रयास कर उनके व्याख्यानो पर आधारित 'जवाहर किरणावली' ग्रन्थ का पकाशन भी कराया। इसके 35 भाग आचार्यदेव की विद्यमानता मे ही प्रकाशित हो गये तथा जवाहर विद्यापीठ के स्वर्ण जयन्ती वर्ष मे यह सख्या 50 कर दी गई।

जीवनी के चार अध्यायो मे आचार्य श्री के प्रारम्भिक जीवन, मुनि पर्याय, आचार्यत्व एव जीवन सध्या का विस्तृत एव रोचक विवरण प्रस्तुत किया गया है। प्ररिशिष्ट मे विभिन्न आचार्यो, सन्त मुनिराजो, राजा–महाराजाओ, सामाजिक कार्यकर्ताओ एव विद्वानो की श्रद्धाजलिया सकलित की गई है। अन्त मे कतिपय सैद्धान्तिक चर्चाए भी समाविष्ट है, जिनसे ग्रन्थ की महत्ता एव उपादेयता मे वृद्धि हुई है।

द्वितीय सस्करण का प्रकाशन सन् 1982 मे स्व सेठ श्री जुगराज जी धोका (मद्रास) के अर्थ सौजन्य से श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ, बीकानेर द्वारा हुआ था परन्तु इसकी निरन्तर बढती हुई माग के कारण तृतीय सस्करण श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर (बीकानेर) द्वारा प्रकाशित कराया जा रहा है।

प्रस्तुत सस्करण आदर्श समाजसेवी, प्रतिष्ठित व्यवसायी एव सघनिष्ठ सुश्रावक श्री सूरजमल जी पीचा के अर्थ–सौजन्य से हो रहा है। मूलत गगाशहर निवासी श्री पीचा का व्यवसाय–क्षेत्र दिल्ली, विजयवाडा, मद्रास आदि है। न्यासी–परम्परा के प्रतीक रूप मे आप सामाजिक/धार्मिक/शैक्षणिक/सास्कृतिक कार्यो मे सदैव सक्रियता एव उत्साहपूर्वक अग्रणी रहते है तथा उदात्त दानशीलता के अनुशीलन मे मुक्तहस्त से प्रभूत दान देकर पुण्यार्जन करते रहे है।

अपने पितृश्री– स्व श्री सुखलाल जी, मातुश्री– श्रीमती कस्तूराबाई तथा चाचाजी श्री महेशदासजी से प्राप्त सद्–सस्कारो को आपने निरन्तर वृद्धिगत तो रखा ही, इन्हे अग्र–पीढी को भी कुशलतापूर्वक सोपा है। ऐसे सदाचारी, सुसस्कृत, शासननिष्ठ एव दानशील परिवार से समाज गोरवान्वित एव आशान्वित है। आपकी धर्मपत्नी श्रीमती कमला देवी आदर्श सुश्राविका है जो आपके पुण्यार्थ कार्यो की प्रेरिका व सहकारी रहती है। आपके सुपुत्र–द्वय (श्री किरणचद जी श्रीमती अरुणा जी एव श्री मनोज कुमार जी) भी परिवार की यशस्वी दानशीलता के साक्षात स्वरूप है और सामाजिक/

धार्मिक गतिविधियो मे सक्रिय सचेष्ट हैं। आपकी सुपुत्री श्रीमती शान्ता जी (धर्मपत्नी श्री पूनमचद जी दुगड) एक धर्मप्रिय महिलारत्न है और सघ–शासन समर्पण की प्रतीक भी।

श्री पीचा के प्रति सस्था आभारी है और उन्हे साधुवाद देती है।

श्री जवाहर किरणावलियो के प्रकाशत हेतु समाजसेवी, उत्साही कार्यकर्त्ता श्री खेमचन्दजी छल्लाणी गगाशहर की अहम भूमिका रही है। एतदर्थ सस्था आभार प्रकट करती है।

प्रस्तुत जीवन चरित्र के उत्तम मुद्रण, परामर्श सुझाव देने के वास्ते हम श्री दीपचन्द साखला, साखला प्रिन्टर्स, बीकानेर के भी आभारी है।

आशा है, इस जीवन चरित्र के पठन से पाठको को नई स्फूर्ति, शक्ति और प्रकाश मिलेगा, इसी मगल भावना के साथ

निवेदक

बालचन्द सेठिया
अध्यक्ष

सुमतिलाल बाठिया
मत्री

श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर (बीकानेर)

विषय-सूची

परिशिष्ट

श्रद्धांजलियाँ

प्रतिष्ठित पुरुषों की श्रद्धांजलियाँ

पद्यमयी

श्रद्धांजलियाँ ४२७ से ४४२

परिशिष्ट ४४३ से ४५८

सुजानगढ़–चर्चा ४५९ से ४७१

चुरु–चर्चा ४७३ से ४८२

परिशिष्ट ४८३ से ४८८

जवाहर-साहित्य

(श्री जवाहर विद्यापीठ भीनासर द्वारा प्रकाशित)

दिव्य दान	किरण १	उदाहरण माला भाग २	किरण २६
दिव्य जीवन	किरण २	उदाहरण माला भाग ३	किरण २७
दिव्य सन्देश	किरण ३	नारी जीवन	किरण २८
जीवन धर्म	किरण ४	अनाथ भगवान भाग १	किरण २९
सुबाहु कुमार	किरण ५	अनाथ भगवान भाग २	किरण ३०
रूक्मिणी विवाह	किरण ६	गृहस्थ धर्म भाग १	किरण ३१
जवाहर स्मारक	किरण ७	गृहस्थ धर्म भाग २	किरण ३२
सम्यक्त्व पराक्रम भाग १	किरण ८	गृहस्थ धर्म भाग ३	किरण ३३
सम्यक्त्व पराक्रम भाग २	किरण ९	सती राजमती	किरण ३४
सम्यक्त्व पराक्रम भाग ३	किरण १०	सती मदनरेखा	किरण ३५
सम्यक्त्व पराक्रम भाग ४	किरण ११	हरिश्चन्द्र तारा	किरण ३६
सम्यक्त्व पराक्रम भाग ५	किरण १२	सकडाल पुत्र	किरण ३७
धर्म और धर्मनायक	किरण १३	जवाहर ज्योति	किरण ३८
राम वन गमन भाग १	किरण १४	जवाहर विचार सार	किरण ३९
राम वन गमन भाग २	किरण १५	सुदर्शन चरित्र	किरण ४०
अजना	किरण १६	सती वसुमति भाग १	किरण ४१
पाण्डव चरित्र भाग १	किरण १७	सती वसुमति भाग २	किरण ४२
पाण्डव चरित्र भाग २	किरण १८	भगवती सूत्र पर व्याख्यान भाग १	किरण ४३
बीकानेर के व्याख्यान	किरण १९	भगवती सूत्र पर व्याख्यान भाग २	किरण ४४
शालिभद्र चरित्र	किरण २०	भगवती सूत्र पर व्याख्यान भाग ३	किरण ४५
मोरवी के व्याख्यान	किरण २१	भगवती सूत्र पर व्याख्यान भाग ४	किरण ४६
सम्वत्सरी	किरण २२	भगवती सूत्र पर व्याख्यान भाग ५	किरण ४७
जामनगर के व्याख्यान	किरण २३	भगवती सूत्र पर व्याख्यान भाग ६	किरण ४८
प्रार्थना प्रबोध	किरण २४	भगवती सूत्र पर व्याख्यान भाग ७	किरण ४९
उदाहरण माला भाग १	किरण २५	भगवती सूत्र पर व्याख्यान भाग ८	किरण ५०

नोट - पूरा सैट लेने पर वर्तमान मूल्य ७६६/- रु मे से २५% कमीशन याद देकर रु ५७०/- मे दिया जावेगा।

प्रातःस्मरणीय परमप्रतापी जैनाचार्य पूज्यश्री १००८
श्री जवाहर लालजी महाराज

संथारा सीझने के वाद
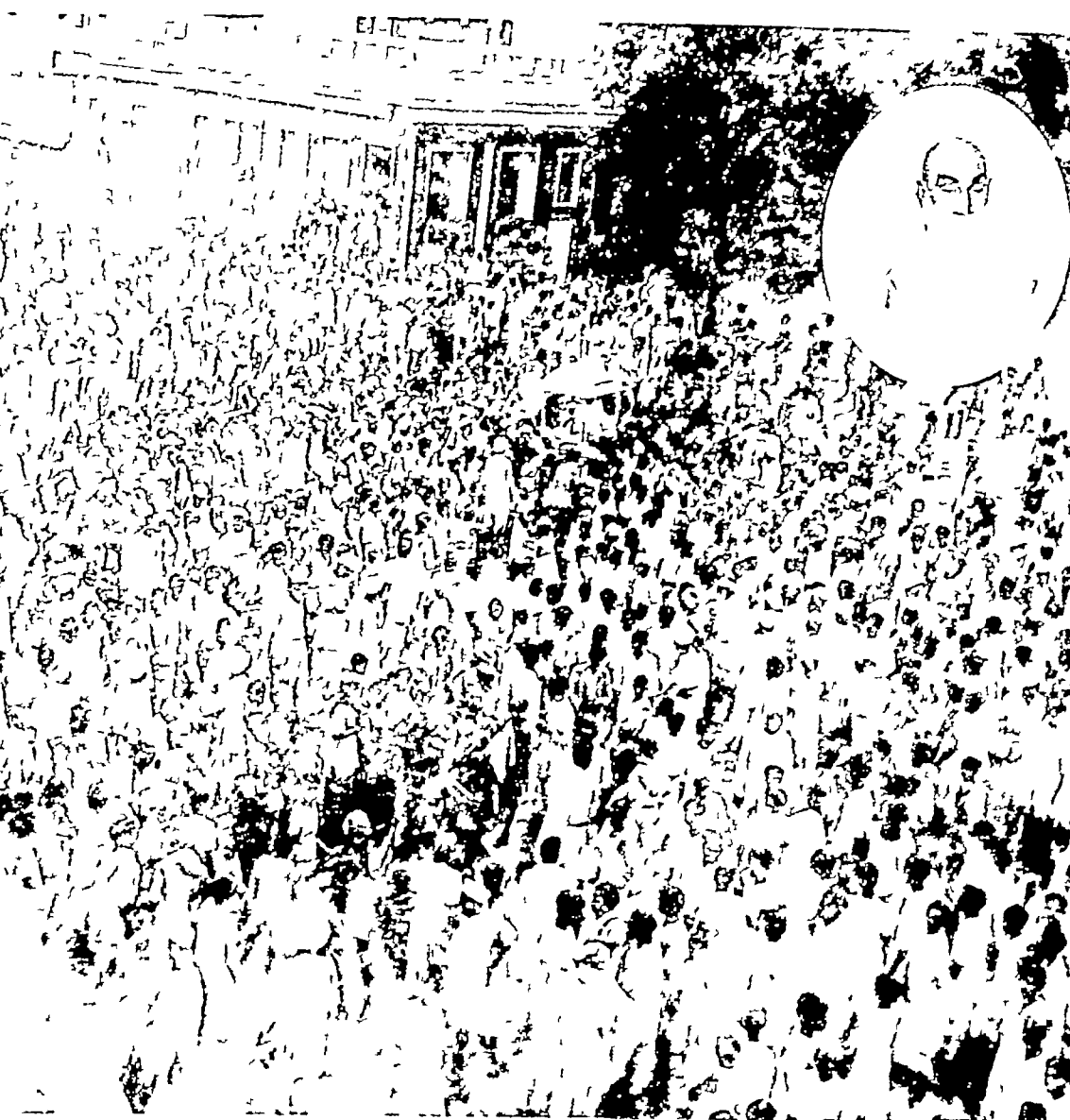
श्री जवाहर लालजी महाराज दाह क्रिया के लिए प्रस्थान
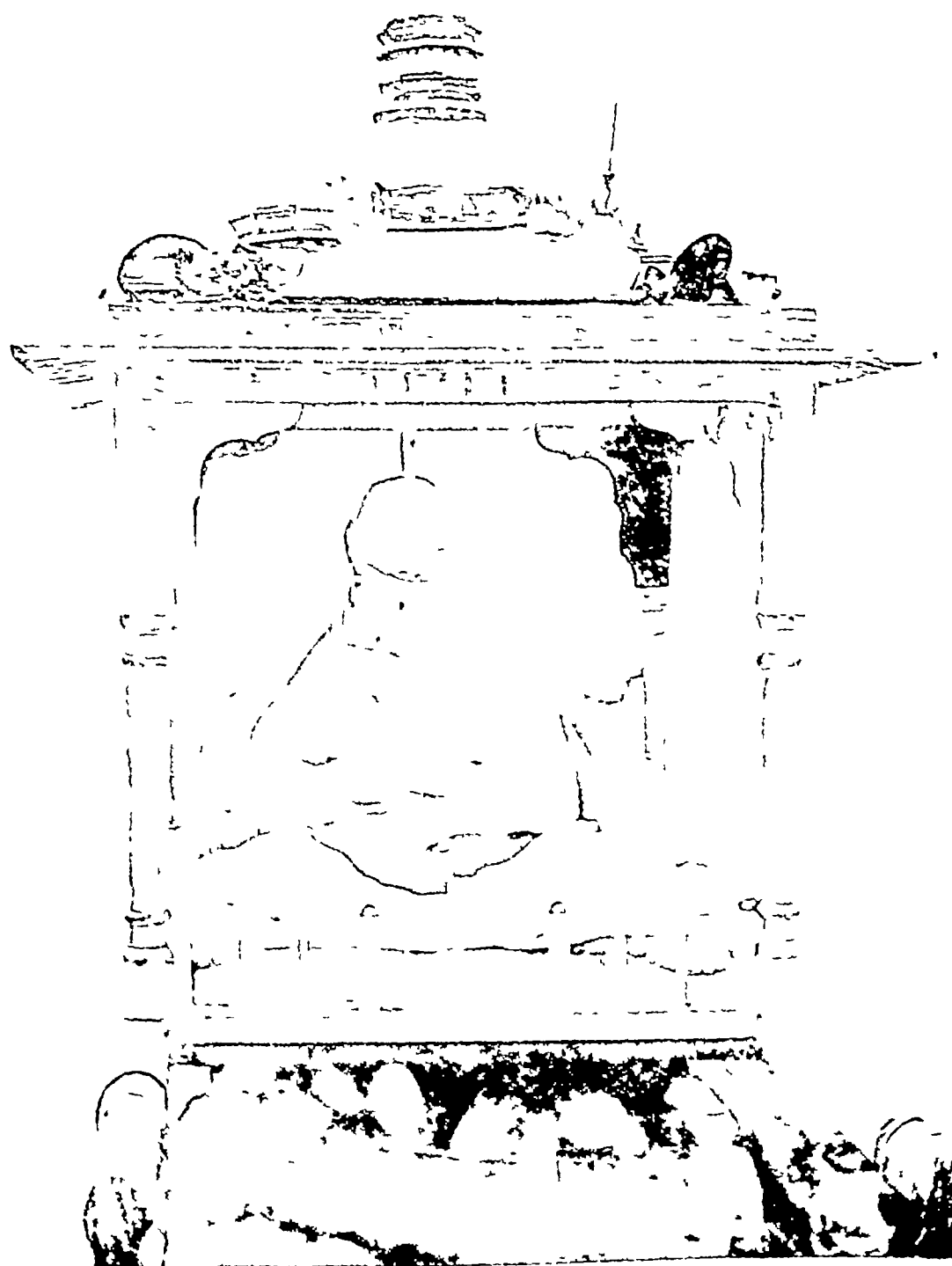
श्री जवाहर लालजी महाराज चिता पर

प्रथम अध्याय

प्रारम्भिक जीवन

विषय-प्रवेश

'भूतल पर मानव जीवन की कथा मे सबसे बडी घटना उसकी आधिभौतिक सफलताए अथवा उसके द्वारा बनाये और बिगाडे हुए साम्राज्य नही, बल्कि सचाई और भलाई की खोज के पीछे उसकी आत्मा की की हुई युग-युग की प्रगति है। जो व्यक्ति आत्मा की इस खोज के प्रयत्नो मे भाग लेते है, उन्हे मानवीय सभ्यता के इतिहास मे स्थायी स्थान प्राप्त हो जाता है। समय महावीरो को अन्य अनेक वस्तुओ की भाति बडी सुगमता से भुला चुका है, परन्तु सतों की स्मृति कायम है।'

-सर राधाकृष्णन्

भौतिक सफलताए प्राप्त करने वाले बडे-बडे वीर शिरोमणि अपनी स्मृति कायम रखने के लिए जो स्मारक खडे करते है, वे स्मारक उसी प्रकार क्षण-भगुर है, जैसे उनकी सफलताए। न जाने कितने शासक इस पृथ्वी पर आए और चले गए। खून की नदिया बहाकर, दुर्बलो को सताकर ओर अगणित अत्याचार करके उन्होने अपनी विजय-पताका फहराई। वायु के वेग से चचल और निरन्तर कापनेवाली पताका ने उनकी सफलताओ की चचलता और अस्थिरता की ओर सकेत किया, मगर तात्कालिक सफलता के नशे मे चूर शासको ने उस ओर ध्यान ही नही दिया। किन्तु काल की कठोर चक्की ने कुछ ही क्षणो मे उन्हे और उनकी पताकाओ को धूल मे मिला दिया। अपना नाम अमर करने के लिए उन्होने अपने नाम पर बडे-बडे नगर बसाए, वज्रमय दुर्ग खडे किये और दृढतम स्तूप बनवाए, लेकिन आज उनका नाम-निशान भी शेष नही है। भूकम्प का एक धक्का, पारस्परिक द्वेष की चिनगारी, किसी अधिक बलवान् की हुकार या प्रकृति का तनिक-सा कोई क्षोभ उनकी सारी सफलताओ को और उनके समस्त स्मारको को जड से उखाडने के लिए पर्याप्त सिद्ध हुआ।

अब जरा अध्यात्म-जगत् की ओर देखिए। अध्यात्म-जगत् की वस्तु स्थायी हे। आधिभौतिक आक्रमण वहा असर नही करते। जो महान् व्यक्ति आत्मान्वेषण के प्रशस्त पथ पर चल पडता है उसे भौतिक सफलताए विचलित नही कर सकती। जो पुरुष आध्यात्मिक जगत का साम्राज्य प्राप्त करके, आत्मिक विभूतियो का स्वामी बन जाता है और आत्म-विकास का उज्ज्वल आदर्श जगत के सामने

प्रस्तुत कर देता है, काल उसका दास बन जाता है। उस काल-विजेता और मृत्युञ्जय महापुरुष का जीवन-आदर्श युग-युग के मनुष्य-समाज को प्रेरणा देता रहता है। उसकी सफलता को कभी विफलता का सामना नही करना पडता।

जो व्यक्ति जनता को आत्मान्वेषण के पथ पर ले चलने का प्रयत्न करता है, वही ससार का सच्चा हितचिन्तक है। ऐसा महान् व्यक्ति ही ससार मे सुख और शान्ति का शाश्वत साम्राज्य स्थापित कर सकता है। वह किसी दरिद्र को हीरो, पन्नो या मोतियो का दान नही करता, किन्तु उसकी आत्मा मे ऐसी शक्ति भर देता है जिससे वह नरपतियो की निधियो को ठुकरा सके। वह किसी दुर्बल को हाथी, घोडे या तोप-तलवार देकर बलवान् नही बनाता, किन्तु उसमे ऐसे प्राण फूक देता है कि वह एकाकी तोपो और मशीनगनो के सामने अविचलित मन से, शान्ति और मुस्कराहट के साथ छाती खोलकर खडा हो सकता है। ऐसे महान् पुरुष की वाणी और उसके उपदेश युग-युग मे जनता का मार्ग-प्रदर्शन करते रहते है। जबतक भव्य-पुरुष आत्म-विकास के लिए उद्योग करते रहेगे तबतक ऐसे महापुरुषो की स्मृति कायम रहेगी।

ससार मे अनादिकाल से दो शक्तिया कार्य कर रही है। एक आसुरी शक्ति और दूसरी दैवी शक्ति। भौतिक सफलताओ के लिए सतत प्रयत्न मे लगे रहना, उसके लिए आत्मा को भूल जाना, अपनी आकाक्षाओ मे बाधक बनने वाले व्यक्तियो का हिंसात्मक उपायो से सहार करना तथा दिन-रात भोग-लिप्साओ मे फसे रहना आसुरी शक्ति का खेल है। जिस व्यक्ति मे इसका प्राबल्य होता है वह सदा असन्तोष की आग मे झुलसता रहता है। इस शक्ति का विकास करके मनुष्य राक्षस बन जाता है। वह दूसरो का ध्वस करके खुश होता है। सैकडो वर्षों की सभ्यता और सस्कृति को फूक से उडाकर अट्टहास करता है। मनुष्य को मनुष्य का शत्रु बनाकर उसे हिंस्र-पशुओ के समान लडते देखकर हर्षित होता है। ससार से सुख और शाति को मिटा देना ही वह अपना कर्त्तव्य मानता है। शरीर मे क्षय के कीटाणुओ की तरह ऐसे व्यक्ति का अस्तित्व ससार के लिए बहुत भयकर होता है। आसुरी शक्ति को लेकर जो व्यक्ति किसी समाज या देश के नेता बन जाते है वे दुनिया मे प्रलय-सी मचा देते है।

दैवी शक्ति से सम्पन्न पुरुष भौतिक सफलताओ को महत्त्व नही देता। वह तो चाहता है-हृदय मे प्रेम, शाति और सन्तोष रहना चाहिए, धन चाहे रहे या न रहे। उसकी दृष्टि मे सुख बाह्य साधनो मे नही किन्तु आत्म मे ही है। ससार मे दैवी शक्ति का जितना अधिक प्रचार होता है उतनी ही सुख और शाति की वृद्धि होती है। ऐसी शक्ति का प्रचार करने वाले महापुरुष जगदुद्धारक कहे जाते है। ., शस्त्र, धन, शरीर आदि वस्तुओ पर निर्भर रहकर मनुष्य पशु बन जाता है। ऐसे व्यक्तियो मे हुई मनुष्यता को जगाना ही ऐसे महापुरुषो का काम है। कठोर तपस्या द्वारा वे अपनी आत्मा को र्द बनाते है। कष्टो को सहकर उसे दृढ बनाते है तथा भयकर उपसर्गों का सामना करके उसकी ी क्षा लेते है। जब सभी कसौटियो पर अपने को खरा पाते है तो जन-कल्याण के लिए निकल पडते ।

उनके उपदेश अन्तरात्मा को प्रकाशित कर देते है। पाशविकता के अन्धकार मे दबी हुई मानवता फिर चमकने लगती है। ऐसे महापुरुष अज्ञानान्धकार का भेदन करते हुए अध्यात्मगगन मे सूर्य के समान चमकते है। ऐसे महापुरुषो का जीवन ससार मे आदर्श की स्थापना करता है। उनके उपदेश नए ससार

को घडते है। उनके कार्य नव-निर्माण करते है। विश्व की प्रगति का इतिहास उठाकर देखे तो मालूम पडेगा कि वह इस पकार की थोडी-सी विभूतियो का खेल है। जो विचारधारा इन विभूतियो मे बही, बाह्यरूप धारण करके वही विश्व-पगति का इतिहास बन गई। ऐसे व्यक्तियो का जीवन-चरित तथा उनकी विचार-धारा ही ससार का इतिहास है।

यहा हमे ऐसी ही एक विभूति की जीवन-कथा अकित करनी है। वे एक सत थे। कहा जाता है कि उन्होने ससार को छोड दिया था। अगर उगलियो पर गिने जाने वाले कुछ व्यक्ति और घर-गिरस्ती ही ससार है तो निस्सदेह उन्होने ससार त्याग दिया था। मगर कुछ व्यक्तियो के बदले उन्होने विश्व के प्राणी-मात्र के साथ अपना सबध स्थापित किया था। 'सर्वभूतात्मभूत' की भावना उनमे सजीव हो गई थी। और यद्यपि उन्होने ईट-चूने का अपना कहलाने वाला मकान त्याग दिया था फिर भी वह लाखो मनुष्यो के हृदय-मदिर मे निवास करते थे। इस प्रकार ससार के त्यागी होकर भी उन्होने ससार का बडे-से-वडा उपकार किया है। उनकी जीवनी एक समाज के उत्थान का इतिहास है। उनका आत्म-निर्माण जन-कल्याण के महान् साधन का निर्माण है। उनका उपदेश प्रगति का बिगुल है।

जन्म

भारतवर्ष मे मालवा प्रान्त का स्थान महत्त्वपूर्ण है। यह प्रान्त हिन्दुस्तान का हृदय है। विश्व-विख्यात विक्रमादित्य, महाराज उदयन तथा साहित्य-रसिक भोज जैसे अनेक राजाओ की क्रीडा-भूमि होने का सौभाग्य उसे प्राप्त है। मगर इससे भी बडी विशेषता यह है कि मालवा की उर्वरा भूमि मे अर्वाचीन काल ने भी अनेक सतो को जन्म दिया है। मालवा का नैसर्गिक सौन्दर्य आकर्षक है। मालवा की शस्य-श्यामला भूमि विख्यात है। कहावत है-

देश मालवा गल गभीर।
पग-पग रोटी, डग-डग नीर॥

इसी मालवा प्रान्त मे झाबुआ रियासत के अन्तर्गत थादला नामक एक कस्वा है। नाग पर्वत के नाम से विन्ध्याचल की पश्चिमी पर्वत-श्रेणियो ने उसे अपनी गोद मे छिपा रखा है। घोडपुर नदी उसका पाद-प्रक्षालन करती हुई बहती है और उसके आसपास के खेतो को सरसब्ज वनाती है। गाव के चारो ओर भीलो की बस्तिया है।

इसी कस्बे मे ओसवाल जाति शिरोमणि, कवाडगोत्रीय सेठ ऋषभदासजी नामक सद्-गृहस्थ रहते थे। उनके दो पुत्र थे-बडे का नाम धनराजजी और छोटे का नाम जीवराजजी था। धनराजजी के तीन पुत्र और एक कन्या थी, जिनके नाम खेमचदजी, उदयचदजी और नेमचदजी थे। कन्या ने आगे चलकर पूज्य श्री धर्मदासजी महाराज के सम्प्रदाय मे दीक्षा ली।

वही पर धोकागोत्रीय सेठ श्रीचदजी रहते थे। उनके पूनमचन्द जी और मोतीलालजी नामक दो पुत्र थे। मोतीलालजी के दो सन्तान थीं-नाथीबाई और मूलचन्दजी।

जीवराजजी का विवाह कुमारी नाथीबाई से हुआ था। दम्पति मे परस्पर खूब प्रेम था। दोनो की धर्म मे दृढ श्रद्धा थी। स्वभाव अत्यन्त कोमल और दयालु था। श्रावक के व्रतो का पालन करते हुए दोनो सात्विक और पवित्र जीवन बिता रहे थे।

ज्ञानपचमी की पूर्वभूमिका मे, अर्थात् कार्तिक शुक्ला चतुर्थी विक्रम सवत् १९३२ के दिन नाथीवाई ने एक तेजस्वी पुत्र को जन्म दिया। यह वही पुत्र था, जिसने आगे चलकर ज्ञान का प्रकाश फेलाया ओर अगणित नर-नारियो के आन्तरिक अन्धकार को दूर करने मे अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया।

पुत्र की प्राप्ति माता-पिता के लिए वडे हर्प की वात होती है। फिर जवाहरलाल जेसा पुत्र-रत्न पाकर कोन निहाल न हो जाता! जिस पर भी वे पहली सन्तान थे ओर विशिष्ट शारीरिक सम्पत्ति लेकर प्रकट हुए थे। आपके वाद नाथीवाई ने एक कन्या को जन्म दिया, जिसका नाम जडाववाई था।

नामकरण

यथासमय बालक का नाम रखा गया-'जवाहरलाल'। माता-पिता अपनी समझ मे अपने वालक का नाम सुन्दर और प्रिय रखना चाहते है। नाम ओर गुणो का सामजस्य करने के लिए राशि और नक्षत्र देखे जाते हे। फिर भी नाम के अनुसार गुण ओर गुण के अनुकूल नाम क्वचित् ही देखा जाता है। जहा दोनो बाते अनुकूल मिल जायँ वहाँ घुणाक्षर-न्याय ही समझना चाहिए। हमारे चरितनायक के विषय में भी यही बात हुई। उस समय किसने सोचा होगा कि जिस वालक का नाम जवाहरलाल रखा जा रहा है, वह अपने भावी जीवन मे अनेक जोहर दिखलाकर अपना नाम इस प्रकार सार्थक करेगा! कौन जानता था कि कुरूढियो और कुसस्कारो के अधकार मे, अज्ञानता की घोर निशा मे, ढोगो और ढकोसलो के कोहरे मे उसकी ज्योति सदा दीप्त रहेगी ओर वह प्रकाश का पुज सिद्ध होगा।

शैशव

प्राय सभी महापुरुषो के जीवन-विकास का इतिहास दु खो, कष्टो, मुसीवतो, परेशानियो या सकटो से आरभ होता है। सुख मनुष्य को बेभान बना देता हे। सुख के समय आत्मा की विभिन्न शक्तिया सुस्त पड जाती हैं। सुख आत्मिक शक्तियो का जग है, जिसके लगने पर मनुष्य अशक्त-सा बन जाता हे। इसके विपरीत दु ख आत्मिक शक्तियो के विकास मे अत्यन्त सहायक होता हे। जो मनुष्य दु ख क समय दीनता को पास भी नही आने देता और वीरतापूर्वक दु खो के साथ सघर्ष करता हे, उसकी सोई हुई शक्तिया भी जाग उठती हे ओर उन शक्तियो मे ऐसा तीखापन आ जाता हे जेसे सिल्ली पर घिसने से उस्तरे मे। यही कारण हे कि आत्मा की खोज के लिए उद्यत होने वाले महान् पुरुष सबसे पहले, प्राप्त सुख-सामग्री का परित्याग कर देते हे। 'आयावयाही चय सोगमल्ल' अर्थात् कष्ट-सहिष्णु वनो, सुकुमारता त्यागो, यह सुखी वनने का मार्ग है। भगवान् का जीवन देख जाइए, उसमे यह उपदेश ओत-प्रोत मिलेगा। भगवान् अपने-आप आये हुए कष्टो को ही सहन नही करते थे वरन् कभी-कभी स्वय कष्टमय परिस्थिति उत्पन्न करके उस पर विजय प्राप्त करते थे। यही उनके लोकोत्तर विकास का रहस्य है। इससे उनकी आत्मिक शक्तियो को बडा वेग मिलता था। मतलव यह हे कि दु ख ही आत्मिक शक्तियो के विकास मे सहायक होता हे।

स्वेच्छापूर्वक कष्ट-सहन करने मे ही आत्म-विजय हे। चाहे वह कष्ट स्वय उत्पन्न किये गये हो, चाहे किसी अन्य व्यक्ति द्वारा अथवा प्रकृति ने उत्पन्न किए हो, यदि मनुष्य उनसे विचलित नही होता तो उसकी प्रगति रुक नही सकती।

आत्मोन्नति के ऊचे उद्देश्य से प्रेरित होकर मनुष्य जो कार्य करता है, वह कार्य हमारे चरितनायक के लिए पकृति ने किया। कोन जाने प्रकृति ने एक सत पुरुष का निर्माण करने के लिए ही ऐसी व्यवस्था की हो। प्रकृति ने उन्हे ऐसी परिस्थितियो मे रखा कि बचपन से ही वे मोह-जाल को भेदने मे समर्थ हो सके। आप दो वर्ष के हुए थे कि हैजे के प्रकोप से माता का देहान्त हो गया। बालक अभी प्यासा ही था कि वह स्रोत सूख गया जिससे मातृ-स्नेह का अमी-रस झरता था। इस प्रकार प्रकृति ने उन्हे माता से वचित कर जीवन का एक प्रगाढ बधन दूर कर दिया। माता से वचित होने पर भी मातृ-भक्ति के विषय मे आपके विचार बडे ही गम्भीर रहे है।

महापुरुषो मे बचपन के सस्कार ही पल्लवित होकर विशाल रूप धारण कर लेते है। उनका जीवन-चरित समझने के लिए उन सस्कारो का अध्ययन करना आवश्यक है। साधारण व्यक्ति और महापुरुष मे एक बडा अन्तर यह होता है कि साधारण व्यक्ति के बचपन के सस्कार बडे होने पर अन्य बातो से दब जाते है या सर्वथा नष्ट हो जाते है। महापुरुष मे बचपन के सस्कार प्रबल रूप मे मौजूद रहते हे। वे अन्य बातो को अपने निर्दिष्ट पथ मे सहायक बना लेते है। इस प्रकार वे सस्कार यथासमय दृढता पाकर विशाल रूप धारण कर लेते है और जगत्-कल्याण के साधन बन जाते हे।

मानव जीवन मे प्रेम का आरम्भ जन्म के साथ ही होता है किन्तु साधारण व्यक्ति मे वह एक स्थान से दूसरे स्थान पर पलटता रहता है और महापुरुष मे अपने असली स्थान को विना छोडे उत्तरोत्तर विकसित होता जाता है। महापुरुषो का प्रेम निर्मल होने के साथ ही असीम होता है। वह एक साथ सर्वत्र व्याप्त होकर रहता है। साधारण व्यक्ति के स्नेह मे सकुचितता, सीमाबद्धता होती है।

हमारे चरितनायक मे माता के प्रति जो निर्मल प्रेम के सस्कार पडे थे वे विकसित होकर मातृ-जाति की महत्ता के रूप मे परिणत हुए। आपको प्रत्येक महिला मे मातृत्व का दर्शन होता था। हृदय मे ओर आखो के आगे भी, आपके लिए स्त्री का काल्पनिक और भौतिक रूप सदेव मातृत्व से युक्त ही होता था। कहना चाहिए कि आपके हृदय मे स्त्री की कल्पना माता के रूप मे ही थी। किसी भी स्त्री का अपमान आपकी दृष्टि मे माता का अपमान था। स्त्री-जाति की दयनीय दशा देखकर आपको असीम दु ख होता था। मातृ-जाति के प्रति किये जाने वाले दुर्व्यवहार की आप ओजस्वी भाषा मे टीका करते हुए कहते थे -

''मित्रो, स्त्री पुरुष का आधा अग है। क्या यह सम्भव है कि किसी का आधा अग बलिष्ठ और आधा अग निर्बल हो ? जिसका आधा अग निर्बल होगा उसका पूरा अग निर्बल होगा। ऐसी स्थिति मे आप पुरुष-समाज की उन्नति के लिए जितने उद्योग करते हे, वे सब असफल ही रहेगे, अगर पहले आपने महिला-समाज की स्थिति सुधारने का प्रयत्न न किया।''

' स्त्रिया जगज्जननी का अवतार है। इन्ही की कोख से महावीर, बुद्ध, राम, कृष्ण आदि उत्पन्न हुए हे। पुरुष-समाज पर स्त्री-समाज का बडा भारी उपकार है। उस उपकार को भूल जाना, उसके प्रति अत्याचार करने मे लज्जित न होना घोर कृतघ्नता है।

पुरुषो, स्त्री-जाति ने तुम्हे ज्ञानवान् और विवेकी बनाया है फिर किस बूते पर तुम इतना अभिमान करते हो ? किस अभिमान से तुम उन्हे पैर की जूती समझते हो ?

''धन्य हे स्त्री-जाति! जिस काम को पुरुष घृणित समझता है और एक बार मे ही हाय-तोवा मचाने लगता हे उससे कई गुना कष्टकर कार्य स्त्री-जाति हर्षपूर्वक करती है। वह कभी नाक नही सिकोडती, मुह से कभी 'उफ्' तक नही करती। वह चुपचाप, अपना कर्त्तव्य समझकर अपने काम मे जुटी रहती हे। ऐसी महिमा है स्त्री-जाति की!''[1]

मातृ-जाति के विषय मे उस महापुरुष का ऐसा उदात्त उपदेश था।

माता की गोदी छिन जाने पर आपके लालन-पालन सा सारा भार पिताजी पर आ पडा। वे अपने हाथो से भोजन बनाते, अपने लाल को प्रेम के साथ खिलाते। आप अनेक असुविधाए सह लेते पर मातृ-हीन बालक को किसी प्रकार का कष्ट न होने देते। पिता की मीठी प्रेम-रस से पकी हुई रोटियों को आप कभी नही भूले। उनकी मधुरता का वर्णन आप अपने प्रवचनो मे भी अनेक बार किया करते थे।

इधर प्रकृति एक महान सत का निर्माण करने मे लगी थी। उसने देखा कि पितृ-ममता का बन्धन मजबूत होता जा रहा है और इस कारण उसके प्रयत्न मे बाधा पडने की सभावना है, वह सावधान हो गई। उसने एक बन्धन हटाने के पश्चात् एक दूसरे बन्धन को भी हटा देना उचित समझा। जब चरितनायक पाच वर्ष के हुए तो उनके पिता का भी देहान्त हो गया। मातृ-हीन बालक अव पितृ-हीन भी हो गया। पाच वर्ष की अवस्था मे बालक को अपने पैरो पर खडा होना पडा।

ऊपरी दृष्टि से देखा जाय तो ऐसा लगता हे कि प्रकृति ने हमारे चरितनायक के साथ अत्यन्त क्रूर व्यवहार किया हे। उसकी निर्दयता की सीमा नही है। मगर गहरी दृष्टि से देखने पर निराला ही तत्त्व दिखाई देगा। कौन कह सकता है कि प्रकृति की क्रूरता और निर्दयता ने ही जवाहरलालजी को जगत् का असली स्वरूप नही समझा दिया! विश्वामित्र ने राजा हरिश्चन्द्र को 'सत्य हरिश्चन्द्र' के रूप मे ससार मे विख्यात किया। उसी प्रकार प्रकृति की निष्ठुरता ने जवाहरलालजी को 'धर्माचार्य' और 'सन्त' के रूप मे प्रसिद्ध किया। कुदरत की करामात को कौन समझ सकता है!

माता और पिता का आश्रय हट चुका। अब उन्हे अपनी योग्यता द्वारा ही आश्रय प्राप्त करना था। पाच वर्ष की अल्प-अवस्था मे ही उन पर यह भार आ पडा। जो व्यक्ति आगे चलकर विशाल समाज का नेता बनने वाला हो उसके लिए प्रकृति यह केसे बर्दाश्त कर सकती हे कि वह दूसरो के आश्रय पर पले। उसे तो बचपन से ही भयकर आपत्तियो को हँसते-हँसते सहने का पाठ सीखना पडता हे।

पिता का देहान्त होने पर आप अपने मामा के यहा रहने लगे। पिताजी के वडे भाई श्री धनराजजी ने इन्हे अपने पास रखने का बहुत आग्रह किया। किन्तु आपके मामा श्री मूलचन्दजी धोका ने भगिनी-प्रेम के कारण इन्हे अपने ही पास रखा। वे प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। थादला मे कपडे की दुकान करते थे। आप वही रहने लगे।

विद्यार्थी-जीवन

महापुरुषो का विद्यार्थी-जीवन किसी स्थान या काल-विशेष मे ही समाप्त नही हो जाता। प्रत्येक स्थान उनकी पाठशाला हे और प्रत्येक क्षण उनका अध्ययन-काल। जन्म से लेकर मृत्यु-पर्यन्त वे नवीन-नवीन ज्ञान प्राप्त करते रहते हे और अपने जीवन मे उसका यथोचित उपयोग करते जाते हे। सामान्य

१ जवाहर किरणावली, तृतीय भाग

व्यक्ति पुस्तको मे लिखी बातो को अपने मस्तिष्क मे ठूस लेता है, समय पर उन्हे उगल भी देता है परन्तु अपने जीवन मे नही उतारता। ऐसे व्यक्तियो के लिए ज्ञान भार होता है। महापुरुष ऐसा नही करते। वे जो कुछ भी सीखते है उसे अपने जीवन मे उतारने का प्रयत्न करते रहते है। इस प्रकार का अमली ज्ञान ही वास्तविक शिक्षा या अभ्यास कहा जा सकता है। इसी से जीवन सस्कारमय और उन्नत बनता है।

साधारण व्यक्ति अधिकतर पुस्तको पर निर्भर रहते है। किसी से सुने या पढे बिना उन्हे ज्ञान नही होता। किन्तु महापुरुषो के लिए सारा ससार ही एक खुली हुई पुस्तक है। प्रत्येक घटना, प्रत्येक परिवर्तन और पत्येक स्पदन उनके सामने नवीन पाठ लेकर आता है और उन्हे नवीन बोध दे जाता है।

हमारे चरितनायक प्रकृति की ओर बडी बारीक नजर से देखा करते थे। उन्होने स्कूल की अपेक्षा प्रकृति की महान् पाठशाला मे अधिक अध्ययन किया। अपने जीवन के अनुभव के आधार पर ही उन्होने कहा-'प्रकृति की पाठशाला मे जो सस्कारी ज्ञान मिलता है वह कालेज या हाई-स्कूल मे मिलना कठिन है। पकृति की प्रत्येक रचना मे से महापुरुष कुछ-न-कुछ शिक्षा प्राप्त करते ही रहते है।'

आपका इस प्रकार का विद्यार्थी-जीवन आजन्म बना रहा। जीवन के अन्तिम क्षण तक वे नई-नई बाते और नये-नये विचार ग्रहण करते रहे और उन्हे अपने जीवन मे उतारते गए।

यद्यपि आप मे क्षयोपशमजन्य अनुभव-ज्ञान की प्रचुरता थी, तथापि आपका साहित्यिक अध्ययन भी बहुत विशाल था। जेनागम-साहित्य तो उनका मुख्य विषय था ही, उन्होने उपनिषद्, गीता, सत-साहित्य, गाधी-साहित्य आदि का भी अध्ययन किया था। आपके अध्ययन की विशेषता यह थी कि आप अध्ययन किये हुए प्रत्येक विषय को अपने अनुभव के रस मे मिलाकर सरस वना लेते थे। जैसे गाय नीरस घास को भी मधुर दूध के रूप मे परिणत कर लेती है, उसी प्रकार आप अपने अध्ययन को अनुभव-ज्ञान द्वारा मिश्रित करके प्रभावशाली और विशद बना लेते थे। उनके प्रवचनो से स्पष्ट प्रतीत होता है कि आपका अध्ययन कितना तात्त्विक, मार्मिक और सम्यग्दृष्टिपूर्ण था।

आपका जन्मस्थान थादला गुजरात का पडौसी है। वहा की भाषा पर गुजराती भाषा का वहुत अधिक प्रभाव है। वहा के भील तथा दूसरे लोग गुजराती से मिलती जुलती भाषा वोलते है। वहा की प्रारम्भिक पाठशालाओ मे गुजराती भाषा ही पढाई जाती है।

उन दिनो थादला मे ईसाइयो की तरफ से प्राइमरी स्कूल चल रहा था। जवाहरलालजी को उनके मामाजी ने इसी स्कूल मे प्रविष्ट करा दिया। मगर स्कूल का नीरस वातावरण आपको सुहाया नही। वहा की तोता-रटन्त से आपको सतोष नही हुआ। जीवित और जागृत-ज्ञान की अभिलाषा रखने वाला पुरुष वहा कैसे सतुष्ट हो सकता था। कुछ गुजराती, हिन्दी और गणित सीखकर ही आप स्कूल से हट गए और साथ ही आपका स्कूली जीवन समाप्त हो गया।

तीन-दोहे

जवाहरलालजी मे मातृ-प्रेम के वीज कब और कसे वोये गए इस वात का साधारण उल्लेख पहले किया गया है। उस समय आप अवोध शिशु थे। स्कूल मे आने पर वे वीज अकुरित हो गए।

स्कूल की पाठ्य पुस्तक मे नीचे लिखे तीन दोहे थे -

टगमग पग टकतूँ नही, खाई न शकतूँ खाज।
उठी न शकतूँ आपथी, लेश हती नहि लाज ॥१॥
ए असवर आणी दया, वालक पर मा-वाप।
सुख आये दुख वेठवे, ए उपकार अमाप ॥२॥
कोय करे एवे समय, वेहक घडी वरदाश।
आखी उमर थई रहे, ते नर नो नर दास ॥३॥

यह तीन दोहे चरितनायक के हृदय मे सीधे उतर गए। आप इन्हे वार-वार पढते, रास्ते चलते गुनगुनाते और अपने साथियो को सुनाते-समझाते। इनके मर्म पर विचार करते और सोचते 'मुझे माता-पिता की सेवा करने का अवसर मिलता तो मै कितना भाग्यशाली होता,' मगर खेद है कि उनकी यह अभिलाषा मन मे ही रह गई। माता-पिता मे से अव कोई भी जीवित न था।

प्राय अतृप्त अभिलाषाए हृदय मे घर कर लेती है और प्रवलतर होकर जीवन-व्यापिनी वन जाती हे। माता-पिता की सेवा का महत्त्व उन्होने भली-भाति अनुभव कर लिया। आगे चलकर यही सेवा-भाव विशाल रूप मे परिणत हो गया और उसने मानव-सेवा का रूप धारण किया। आप जगत्-कल्याण और आत्म-कल्याण के पवित्र उद्देश्य से ससार के सुखो को ठुकराकर मुनि वने। प्राणीमात्र का कल्याण ही उनके जीवन का एक उद्देश्य था।

साहस और संकट

विपत्ति की सभावना मात्र से साधारण व्यक्ति भयभीत हो जाता हे और जव विपत्ति सम्मुख आ जाती है, तो घवरा उठता हे। उसकी यह घवराहट स्वय एक भयानक विपत्ति वन जाती हे, किन्तु महापुरुष विपदा आने पर उल्लास का अनुभव करते हे। सशस्त्र शत्रु को सामने देखकर जेसे शूरवीर क्षत्रिय वीर रस मे डूव जाता है और अपना जोहर दिखलाकर विजेता का पद प्राप्त करता हे, उसी प्रकार महापुरुष विपत्तियो का सामना होने पर उल्लास के साथ उनसे जूझता हे ओर विजय-लाभ करके अपनी शक्तियो का विकास करता हे। ऐन मोके पर पीछे हटना, अवसर को खो देना उसे ऐसा मालूम पडता हे जेसे आत्मोन्नति का वहुत वडा अवसर हाथ से चला गया हो। उस समय उसकी हालत उस व्यापारी के समान होती हे जो वाजार मे तेजी के समय कुछ न कमा सकने के कारण हाथ मलता रह गया हो। महापुरुष सकटो पर सवार होकर विपदाओ के वीच, वाणो की वोछार झेलते हुए अपने सकल्प की ओर आगे वढते चलते हे। हमारे चरितनायक मे महापुरुषो का यह लक्षण भी वाल्यावस्था से ही विद्यमान था।

एक वार आप कुछ साथियो के साथ वैलगाडी द्वारा यात्रा कर रहे थे। पहाडी रास्ता था-टेढा मेढा ओर ऊवड-खावड। ऊपर निकले हुए वडे-वडे पत्थरो पर गाडी के पहिये चढते और धडाम से नीचे गिरते। जान पडता था, गाडी चूर-चूर हुए विना न रहेगी। कही-कही रास्ता वहुत तग था। एक ओर पाताल की प्रतिस्पर्धा करने वाली गहरी खाई और दूसरी ओर हिमालय का मुकाविला करने के अकड कर खडा पहाड। जरा चूक हुई कि खाई के सिवा ओर कहीं ठिकाना नही। पग-पग पर का सकट।

भय के कारण गाडी-सवार नीचे उतर गए। उन्होने पैदल चलने मे ही अपनी खैर मानी। मगर दीक्षा लेने के पश्चात् सदैव पैदल विहार करने वाले और पैदल विहार की उपयोगिता समझाने वाले हमारे चरितनायक उस समय भी गाडी से नीचे न उतरे। सकट से बचने के लिए ऐसा करना कायरता समझकर साहस का दुर्लभ आनद उपभोग करने के लिए आप गाडीवान के साथ गाडी मे बैठे रहे। उस समय आप तनिक भी भयभीत न हुए। गाडी लडखडाती हुई आगे चलती रही। अब वह उतार मे आ गई थी। बैल बेतहाशा भागने लगे। गाडीवान ने उन्हे काबू मे करने का बहुतेरा प्रयत्न किया, मगर वह सफल न हो सका। गाडीवान समझ गया कि आज सवार की, उसकी, और बैलो की खैर नही, या तो गाडी उलट जायगी या किसी गड्ढे मे गिरेगी। गाडीवान ने गाडी-बैल की चिन्ता छोड दी और प्राण-रक्षा की फिकर की। 'सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्द्धं त्यजति पण्डित ' अर्थात् पण्डित पुरुष, सर्वनाश के समय आधा छोडकर आधा बचा लेता है। गाडीवान अपने प्राणो के विषय मे पडित सिद्ध हुआ। वह अपने प्राण बचाने के लिए नीचे कूद पडा। थोडी देर के लिए बैलो को स्वराज्य मिल गया। वह निरकुश भागने लगे। कैसी मुसीबत की घडी थी! मगर उस समय भी एक व्यक्ति निश्चिन्त मगर गम्भीर भाव से गाडी पर सवार था। वह चाहता तो गाडीवान से भी पहले कूद सकता था और अपने प्राणो की रक्षा कर सकता था। लेकिन उसने ऐसा सोचा तक नही। वह था हमारा चरितनायक-अनुपम साहस का धनी जवाहरलाल!

गाडीवान के कूदने के कुछ ही क्षण पश्चात् जवाहरलालजी ने गाडीवान का स्थान ग्रहण कर लिया। रासे हाथ मे लीं और बैलो को रोकने का प्रयत्न करने लगे। इतने ही मे एक जोर का धक्का लगा और आप जुए पर आ गिरे। जुए पर लटकने की अवस्था मे भी आपकी बुद्धि स्थिर रही। बुद्धि की स्थिरता की बदौलत ही आप रासे अपने हाथ मे पकडे रहे और सयोग से उन्ही के सहारे लटके चले। तनिक भी घबराहट पैदा होती तो रस्सी हाथो से सरक जाती। फिर या तो गाडी से कुचले जाते या किसी खाई मे जा गिरते। दोनो हालतो मे प्राणो का सकट तो था ही।

'विकारहेतौ सति विक्रियन्ते, येषा न चेतासि त एव धीरा ।'

बुद्धि मे विकार उत्पन्न करने वाले कारण उपस्थित होने पर भी जिनका चित्त विकृत नही होता, वही वास्तव मे धीर पुरुष कहलाते है।

जवाहरलालजी के अगाध धैर्य और असीम साहस के फलस्वरूप गाडी-बैल बच गये और उनका भी कुछ बिगाड न हुआ। अन्त मे वे सकुशल निर्दिष्ट स्थान पर जा पहुचे।

साहस के ऐसे उत्कृष्ट उदाहरण विरले है। इस प्रकार की घटनाए महापुरुषो के जीवन के मर्म की ओर सकेत करती हे।

बचपन मे जवाहरलालजी अनेक दुर्घटनाओ से बाल-बाल बचे। एक बार आप किसी मकान की दीवार के पास खडे बाते कर रहे थे। बाते समाप्त करके ज्यो ही आप वहा से हटे त्यो ही दीवार धडाम से आ गिरी। दीवार मानो उनके हटने की ही बाट जोह रही थी!

कोन जाने यह घटना आकस्मिक थी या दूसरो के उपकार मे लगने वाले जीवन को प्रकृति ने बचा लिया! जगत मे ऐसी घटनाए होती है जिनका निष्कर्ष निकालना मानव-बुद्धि से परे की बात है। महापुरुषो के जीवन मे खास तौर पर इस प्रकार की घटनाए घटित हो जाती है।

वचपन मे आपको कई वार सन्निपात जैसे भयकर रोगो का सामना करना पडा, मगर आयुकर्म की प्रवलता समझिए, या भव्य जीवो क पुण्य का प्रभाव कहिए, आप समस्त सकटो का सामना करते हुए, मृत्यु पर विजय-प्राप्त करने मे समर्थ हो सके। ऐसे गभीर प्रसगो पर भी आपकी चित्त-वृत्ति असाधारण रूप से शान्त वनी रहती थी। आपकी यह शान्ति ओर सहनशीलता धीरे-धीरे किस प्रकार विकसित होती गई, यह वात पाठको को अलग पृष्ठो मे अकित मिलेगी।

व्यापार

ग्यारह वर्ष की कोमल वय मे जवाहरलालजी स्कूल छोडकर अपने मामाजी के साथ कपडे की दुकान पर वेठने लगे। पूरा मनोयोग लगाकर ही उन्होने यह कार्य सीखना आरभ किया। फल यह हुआ कि अपनी तीक्ष्ण बुद्धि ओर प्रतिभा के कारण कपडे के व्यवसाय मे आप शीघ्र ही निपुण हो गए। मामाजी ने यह देखकर सतोष की सास ली ओर सारा कार्य-भार आपके सिर पर डाल दिया। मामाजी इस ओर से निश्चिन्त हो गये। जवाहरलालजी मे कपडे परखने की इतनी योग्यता आ गई थी कि यदि कीमत मे वहुत थोडे अन्तर वाले दो थान अधेरे मे आपके सामने रख दिये जाते तो उन्हे टटोल कर ही आप वतला देते कि इनमे एक या दो पाई प्रतिगज का अन्तर हे ओर इनका अमुक नवर हे। कपडा पहचानने की यह कला देखकर वस्त्रो के व्यापार मे अपनी सारी आयु पूर्ण कर देने वाले वृढे व्यापारी भी चकित रह जाते थे।

वहुत-से विद्वानो का कहना हे कि प्रतिभा का विकास किसी एक निश्चित मार्ग मे ही होता है। जिस व्यक्ति का झुकाव त्याग की ओर होता है वह व्यापार आदि दुनियादारी के कामो मे विशेप निपुणता प्राप्त नही कर सकता। आध्यात्मिकता की ओर मनोवृत्ति वाला लोकिक वातो मे विशेप सफल नही हो सकता। कई एक महान् पुरुषो के जीवन-चरित्र भी इस कथन का समर्थन करते हे। मगर हमारे चरित-नायक का जीवन इसका अपवाद हे। आपकी जीवनी से यह प्रमाणित होता हे कि प्रतिभा के एक ही ओर विकास होने की वात सर्वांश मे सत्य नही हे। कोई-कोई महापुरुप विशिष्ट प्रतिभा के भी धनी होते हे कि जिस ओर अपनी प्रतिभा दौडाए उसी ओर सफलता प्राप्त कर लेते हे। विजली सभी ओर प्रकाश फेलाती है। जवाहरलालजी जिस प्रकार व्यापारिक क्षेत्र मे पृर्ण सफल हुए उसी प्रकार आध्यात्मिक क्षेत्र मे भी वहुत उन्नति की। आप जेसे सफल व्यापारी वने वेसे ही सफल धर्माचार्य भी सिद्ध हुए।

जहा प्रतिभा के साथ साहस ओर मनोयोग का समन्वय होता है, वहा सफलता मिलते देर नही लगती। यह त्रिपुटी सफलता की जननी हे। जिस व्यक्ति मे जितनी मात्रा मे यह त्रिपुटी होगी वह उतनी ही मात्रा मे सफलता का भागी वन सकेगा। यही तीन चीजे त्याग के साथ मिलकर मनुष्य को महान् धर्मात्मा भी वना देती है।

प्रतिभा द्वारा मनुष्य अपना मार्ग खोज निकालता हे। साहस के द्वारा विपत्तियो की पहवाह न करता हुआ उस मार्ग पर चलता है ओर मनोयोग से उस पर स्थिर रहता हे-विचलित नही होता। इसके वाद उसके विकास मे वाधा डालने वाली कोई शक्ति नही रह जाती। मनोयोग की विकसित शक्ति द्वारा ही योगीजन आश्चर्य-जनक सिद्धिया प्राप्त कर लेते हे। यही कारण है कि जिस ओर वे झुके, सफलता । दासी वनती गई। उनकी सम्पूर्ण सफलता का यही मूलमत्र हे।

मान्त्रिक के रूप में

जिन दिनो जवाहरलालजी कपडे की दुकान कर रहे थे, आपने धरण ठीक करने का मत्र सीख लिया। किसी की धरण टल जाती तो आप मत्र पढकर उसे ठिकाने बिठा देते। धीरे-धीर गाव भर मे आपकी मत्र-वादिता की पसिद्धि हो गई। आये दिन लोग आपको बुलाने आने लगे। दुकान के काम मे व्याघात होने लगा, लेकिन आप समान भाव से सभी के घर चले जाते और धरण बिठा देते। मगर मामाजी को यह वात अच्छी न लगी। उन्होने जवाहरलाजी से मत्र का काम छोड देने के लिए कहा। आप उनका आदेश अस्वीकार न कर सके।

एक बार दीपावली का जमा-खर्च कर रहे थे कि तब एक दिन एक आदमी धरण ठीक करने के लिए बुलाने आया। आपने बहुत टाल-मटोल की मगर वह नही माना। आपने मन ही मन निश्चय किया- चला तो जाता हू मगर मत्र नही पढूगा, यो ही हाथ हिलाकर फूक मारता जाऊगा। इससे धरण ठीक नही होगी और लोग मेरा पिड छोड देगे।

उन्होने यही किया। वे रोगी के सामने बैठकर हाथ हिलाने लगे, फूक मारने लगे, मगर मत्र-पाठ नही किया। मगर थोडी ही देर मे उन्हे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि मत्र न पढने पर भी धरण ठिकाने आ गई.और दर्द बन्द हो गया। यह देखकर आपने सोचा कि वास्तविक शक्ति श्रद्धा मे ही हे। रोगी को श्रद्धा हो गई कि इन्होने मत्र पढा है और इस मत्र से धरण अवश्य ठीक हो जाती हे। इसी श्रद्धा के कारण रोगी का दर्द मिट गया। आपका यह विचार धीरे–धीरे विश्वास के रूप मे परिणत हो गया और आपने श्रद्धा और सकल्प का प्रबल अनुभव किया। इसी अनुभव के आधार पर आपने वाणी उच्चारी है -

' क्या सकल्प मे दु ख दूर करने का सामर्थ्य है ? इस प्रश्न का उत्तर हे- अवश्य। सकल्प मे अनन्त शक्ति है। सकल्प से दु ख दूर हो जाते हे, साथ ही नवीन दु ख का प्रादुर्भाव नही होता।'

'अपनी सकल्प-शक्ति का विकास ही आध्यात्मिक विकास है। सत्सकल्प का प्रभाव जड सृष्टि पर भी अवश्य पडता है।'

'सकल्प मे यदि बल हुआ तो कार्य-सिद्धि मे सुगमता और एक प्रकार की तत्परता होती हे। वास्तविक वात तो यह हे कि कार्य की सिद्धि प्रधानत सकल्प-शक्ति पर अवलवित हे।'

चरितनायक के ये उद्गार अपने जीवन के अनुभव के स्रोत से ही निकले है। उनकी वाणी का अधिकाश भाग उनके विभिन्नकालीन निजी अनुभवो की अभिव्यक्ति मात्र हे। उनका ज्ञान अन्तरतम से उदभूत होकर वाहर निकला है, वाहर से ठूसकर भीतर नही भरा गया। ऐसा ज्ञान वडा ही तेजस्वी सुदृढ और परिमार्जित होता है।

काला वाव

एक बार श्री जवाहरलालजी की पीठ पर काला वाव हो गया। [illegible]
पर भी आराम न हुआ। वैद्यो से चिकित्सा करवाई मगर [illegible]
पर भी व्यथ हुआ। [illegible] परेशानी मे थे कि [illegible]
करा- मे [illegible] इसे ठीक [illegible]

[illegible]

से एक जडी लाकर दे दी। कुछ खाई और कुछ बाव पर लगाई। तीन ही दिन मे बीमारी सफा हो गई। आपने चार आने भील को इनाम मे दिये।

इस घटना से आपके मन मे यह धारणा जम गई कि भील निरे मूर्ख या जगली ही नही है। उनके पास भी बहुत-सी ऐसी विद्याए है, जिन्हे सीखने से हम बहुत-कुछ लाभ उठा सकते है। शहर मे रहने वाले वैद्यो और डाक्टरो की अपेक्षा इन्हे जगल की जडी-बूटियो का और उनके गुण-दोषो का अधिक ज्ञान है। इस घटना से आपका विश्वास जडी-बूटियो पर भी हो गया। भावी जीवन मे आपने अनेक बार विदेशी औषधो के सेवन का सख्त शब्दो मे विरोध किया है। यह विरोध अनुभव-जनित ज्ञान के आधार पर था।

धर्म-जीवन का प्रभात

जैन सस्कृति मे जिस क्रिया-काण्ड का वर्णन पाया जाता है, उस सब का मूल सम्यक्त्व है। सम्यक्त्व की विद्यमानता मे ही चरित्र मुक्ति या आत्मशुद्धि का निमित्त बनता है। जहा सम्यक्त्व नही, वहा कठोर-से-कठोर क्रिया-काड भी ससार भ्रमण का ही कारण होता है। सम्यक्त्व से क्रिया-काड सजीव हो जाता है, उसमे प्राण आ जाते है। अकेला क्रिया-काड ही नही, वरन गभीर से गभीर ज्ञान भी सम्यक्त्व के अभाव मे मिथ्या ज्ञान ही रहता है। सम्यक्त्व मोक्ष-महल का पहला सोपान है। मुमुक्षु जीव का मोक्ष मार्ग यही से आरम्भ होता है। वास्तव मे दृष्टि जबतक निर्मल न बने तबतक वस्तु का वास्तविक स्वरूप समझा नही जा सकता। दृष्टि की यह निर्मलता धर्म-श्रद्धा से उत्पन्न होती है। अतएव धर्म-श्रद्धा को अगीकार करना ही व्यवहार से सम्यक्त्व ग्रहण करना कहलाता है।

सम्यक्त्व ग्रहण करते समय, ग्रहण करने वाला प्रतिज्ञा करता है कि 'मै आज से वीतराग देव को ही अपना देव मानूगा, अहिंसा आदि पाच महाव्रतधारी साधुओ को ही अपना गुरु समझूगा और वीतराग कथित दयामयधर्म को ही धर्म स्वीकार करूगा।'

किसी भी मत की परीक्षा करने का सर्वोत्तम और सरल उपाय यही है कि उसके देव, गुरु और धर्म की परीक्षा कर ली जाय। जिस मत मे ऐसे देव की पूजा होती है जो अपने भक्त की स्तुति से प्रसन्न हो जाने के कारण रागी है, जो अपने निन्दक को घोर दड देने के कारण द्वेषी है, जो भोग-विलास से अतीत नही हो सकता। इसी प्रकार जिस मत के साधु कचन-कामिनी के त्यागी नही है, प्राणी-मात्र पर समभाव नही रखते और हिंसा आदि दोषो से पूर्णतया रहित नही है, वह मत मुमुक्षु जीवो के लिए उपादेय नही हो सकता। इसी भाति जिस मत मे सम्पूर्ण भूत-दया का उपदेश नही है बल्कि प्रकारान्तर से हिंसा का विधान और दया-अनुकम्पा का निषेध है वह मत भी मोक्षाभिलाषियो के लिए ग्राह्य नही हो सकता।

सम्यक्त्व ग्रहण करने का अर्थ गुण-पूजक होना है। सम्यक्त्व ग्रहण करते समय व्यक्ति यही प्रतिज्ञा करता है कि मै अब से निर्दोष देव, निर्दोष गुरु और निर्दोष धर्म को स्वीकार करता हू।

जिन दिनो जवाहरलालजी कपडे की दुकान करते थे, थादला मे पूज्य धर्मदासजी महाराज के सम्प्रदाय के मुनि श्री गिरधारीलालजी महाराज पधारे। आप मुनिजी का व्याख्यान सुनने गए। धर्म की ओर आपका सोया हुआ आकर्षण जागृत हो गया। उसी समय खडे होकर आपने सम्यक्त्व ग्रहण किया।

किसी भी मनुष्य का असाधारण विकास पूर्व-जन्म के सस्कारो के बिना नही हो सकता। बाल्यावस्था मे धर्म के पति इस प्रकार की पीति उत्पन्न होना निश्चय ही पूर्वजन्म के सस्कारो का परिपाक है। आपकी यह धर्म-श्रद्धा तात्कालिक भावावेश का परिणाम नही थी किन्तु चिरकाल से सचित सस्कारो का फल था। इस सचाई का ज्वलन्त प्रमाण यही है कि वह धर्म-श्रद्धा द्वितीया के चन्द्रमा की भाति निरतर बढती ही चली गई। उस धर्म-श्रद्धा के फलस्वरूप उन्होने एक महान सत का गौरव प्राप्त किया, धर्माचार्य की पतिष्ठा पाई। और आत्म-शुद्धि के अधिकारी बने।

सम्यक्त्व ग्रहण करने के पश्चात् आपका इहलौकिक धार्मिक जीवन आरभ हुआ।

यद्यपि जवाहरलालजी ने सम्यक्त्व ग्रहण करके धर्म-मार्ग की ओर नजर फेर ली थी, फिर भी वे अभी तक व्यवसाय मे ही लगे हुए थे। जो प्रकृति शिशु-अवस्था से ही उनके मोह-बधन काटने मे लगी थी, उसे भला यह कैसे रुचिकर हो सकता था। प्रकृति ने माता और पिता के मोह का बधन काट फैका था मगर जवाहरलालजी के लिए मामा के मोह का एक नवीन बधन उत्पन्न हो गया था। ऐसी स्थिति मे प्रकृति कब निश्चेष्ट रह सकती थी। उसने इस बधन को भी काट फैकना ही उचित समझा। जब आप तेरह वर्ष के हुए तो आपके मामाजी तेतीस वर्ष की उम्र मे ही स्वर्गवासी हो गये। माता-पिता की गोद छिन जाने पर जो आश्रय मिला था वह भी अब सदा के लिए भग हो गया।

मामाजी की मृत्यु से चरितनायक के हृदय को गहरी चोट लगी। इधर मामाजी का वियोग उनके लिए असह्य हो उठा, उधर दुकान का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व उनके सिर आ पडा। विधवा मामी और पाच वर्ष के ममेरे भाई घासीरामजी के पालनपोषण की जिम्मेदारी भी इन्ही पर आई।

मामाजी की अकाल-मृत्यु ने जैसे उन्हे निद्रा से जगा दिया। आपको ससार की दु ख-बहुलता का ज्ञान हुआ। मन-ही-मन सोचने लगे- जीवन पानी के बुलबुले के समान हे। हवा का एक हल्का-सा झोका उसे समाप्त कर देता है। भवन, धन, तन और स्वजन- सब यही रह जाते हे ओर हस निकल जाता हे। प्राणी इन पराई वस्तुओ के मोह मे क्यो पडे है ! इस जीवन का क्या उद्देश्य हे! कहा की सार्थकता है! ससार का वैभव-विलास क्या जीवन की सफलता की कसौटी हे! यह क्षण-नश्वर भोग्य पदार्थ क्या 'अनत जीवन' मे काम आ सकते है! और यह शरीर! कितना बेवफा है! केसा दगाबाज हे! शरीर, आत्मा का उपयोग कर रहा है! और आत्मा, शरीर की कितनी व्यथाए भोग रहा हे ? इस मूर्खता का अत होना ही चाहिए।

वैराग्य

'चैतन्य आत्मा! तेरी यह गभीर भूल है कि अब तक आत्मा को भूला रहा। अब मेरी बात तू मान ले, अपनी भूल को सुधारने की चेष्टा कर। तू परमात्मा का भजन कर। परमात्मा का सान्निध्य ही तुझे अपना लक्ष्य बनाना चाहिए। तू आप ही अपना कर्त्ता हे ओर जगत के अन्य पदार्थ तेरे सहायक है। तू उनसे काम लेने वाला स्वामी हे। पर तू यह बात भूल रहा है। तू जिनका स्वामी है उनका दास बन रहा है- उनकी अधीनता मे आनन्द मान रहा है। इसलिए अपना अज्ञान दूर कर और देख कि, तेरे साधन तुझे किस कटकाकीर्ण पथ पर घसीटे लिये जा रहे है। [illegible] प्रकाश तेरा स्वागत करेगा और परम कल्याण का पथ प्रदर्शित करेगा।

'हे आत्मन्! अनन्त काल व्यतीत हो चुका हे फिर भी तूने धर्म की विशिष्ट आराधना नहीं की। इस कारण तू सिद्धरूपी कोयल होकर ससारी जीवरूप कोवा वना हुआ हे। अव तुझे अत्यन्त अनुकूल अवसर हाथ लगा हे। यह अवसर वार-वार नही मिलने का। इस समय तू अपनी शक्ति का प्रयोग कर। अपने पुरुषार्थ को काम मे ला। अगर अव भी तू अपना जोश न दिखायेगा तो अनादिकाल से अव तक जिस स्थिति मे रहा हे, उसी स्थिति मे चिर-काल पर्यन्त रहना पडेगा।'

यह उद्‌गार, जिनमे अमृत का झरना वह रहा हे ओर जो आत्मा को पवित्र प्रेरणा एव स्फूर्ति देने वाले हे, हमारे चरितनायक की अन्तरात्मा के उद्‌गार हे। यह मुमुक्षु पुरुष का अन्तर्नाद हे। इन उद्‌गारो ने वाणी का रूप भले ही वाद मे धारण किया हो मगर ससार से विरक्त होते समय उनके हृदय-प्रदेश मे यह उत्पन्न हो चुके थे।

इस प्रकार के विचारो मे मग्न रहने के कारण उनका वेराग्य दिनो-दिन वढता गया। जिस दुकान को उन्होने वडी लगन के साथ चलाया था, अव उसमे उनका मन नही लगता था। उन्हे घर सराय के समान मालूम होता था। सराय मे मुसाफिर दो दिन ठहरता ओर चल देता हे। दो दिन के लिए लम्वी-चोडी दुकान जमाकर वैठ जाना ओर चलने की फिकर न करना अज्ञान हे। मनुष्य को अपनी महायात्रा की भी कुछ चिन्ता करनी चाहिए। माता,पिता ओर मामा के वियोग का स्मरण आने पर चित्त मे व्यथा उत्पन्न हो उठती थी, मगर इस समय उनकी प्रधान चिन्ता यही थी कि ससार के प्रपच से किस प्रकार ओर कव छुटकारा मिले!

उन्होने दुकान उठाने का निश्चय कर लिया। धीरे-धीरे काम समेटना शुरु किया। लेन-देन चुकता करने लगे। इस प्रकार विरक्त हो जाने पर भी आप अपने भविष्य का निर्णय न कर पाये। आप यह निश्चय न कर सके कि अव करना क्या चाहिए ? हृदय मे प्रवल जिज्ञासा उत्पन्न हो गई। इस जिज्ञासा के कारण आप वेचैन से रहने लगे। वास्तव मे किसी अच्छे गुरु का ससर्ग हुए विना इस जिज्ञासा की निवृत्ति होना अशक्य था।

गुरु की प्राप्ति

'पुस्तक सामने भले रहे, परन्तु उसका ज्ञान गुरु से ही प्राप्त करना उचित हे। गुरु के विना ज्ञान प्राप्त करना अधेरे मे आरसी लेकर मुह देखने के समान हे। आज गुरु की सहायता लिए विना ज्ञान प्राप्त किया जाता हे, यह वुराई हे। प्रत्येक वात गुरु के समीप समझकर उस पर विश्वास करो तो भ्रम मे पडने से वच सकते हो ओर आत्मा का कल्याण कर सकते हो।'

हमारे चरितनायक का यह उपदेश उनकी उस समय की मनोवृत्ति का परिचायक हे जव आप गुरु के विना वेचैन हो रहे थे। ससार के प्रति विरक्ति हो जाने पर भी आपको अपना कर्त्तव्य नही सूझ रहा था। सयोग से उन्ही दिनो थादला मे मुनिवर्य श्रीराजमलजी महाराज के शिष्य मुनि श्रीघासीलाल जी महाराज तथा मगनलालजी महाराज और श्रीघासीलालजी महाराज के शिष्य श्रीमोतीलाल जी महाराज तथा देवीलालजी महाराज पधारे। आप मुनियो के दर्शन करने गये। उनका प्रवचन भी सुना। चरितनायक को जेसे गुरु की तलाश थी वेसे ही गुरु मिल गए। मुनियो ने ससार से छुटकारे का मार्ग वतलाया ओर मुनिधर्म का स्वरूप समझाया। आप सासारिक प्रपचो से पहले ही निवृत्त हो चुके थे।

दीक्षा का मार्ग जानकर आपको ऐसा हर्ष हुआ जेसे जगल मे मार्ग भूले मनुष्य को अपने घर का मार्ग मिल गया हो। उन्होने मन ही मन मुनिव्रत धारण करने का विचार कर लिया।

पुण्यशाली पुरुषो के लिए थोडा-सा भी धर्मोपदेश हितकर साबित होता है।प्राचीन कथा-साहित्य मे ऐसी अनेक घटनाओ का उल्लेख है। इन्ही घटनाओ की पुनरावृत्ति हमारे चरितनायक की जीवनी मे हुई।

दुविधा में

मुनि-दीक्षा अगीकार करने का विचार कर लेने पर भी श्री जवाहरलालजी के मार्ग मे एक बडी अडचन थी। वह अडचन किसी बाह्य व्यक्ति या वस्तु के कारण नही थी। वे इतने साहसी और निर्भय थे कि इस प्रकार की अनेक अडचने आने पर भी कभी कातर नही हो सकते थे। मगर यह अडचन तो उन्ही की अन्तरात्मा से उत्पन्न हुई थी। और उसका सम्बन्ध उनके दूसरे कर्त्तव्य के साथ था। महापुरुष किसी बाहरी अडचन की परवाह नही करते, किन्तु जहा कर्त्तव्य बुद्धि स्वय दो मार्गो की ओर प्रेरणा करती है वहा निश्चय करना कठिन हो जाता है। उस समय वे अत्यन्त अशान्त और बेचैन हो जाते है। दो ओर से जहा एक साथ आह्वान हो रहा हो वहा किस ओर जाना चाहिए ? दुविधा की यह स्थिति बडी नाजुक होती है। ऐसी ही परिस्थिति मे अर्जुन जैसा महान् योद्धा गाडीव छोडकर किकर्त्तव्य-विमूढ हो गया था। सौभाग्य से कृष्ण जेसे कुशल सलाहकार उस समय अर्जुन के समीप थे, मगर श्री जवाहरलालजी को स्वय ही अपना कर्त्तव्य स्थिर करना था।

पहले बतलाया जा चुका हे कि जवाहरलालजी का एक पाच वर्ष का ममेरा भाई था। मामाजी के देहान्त के वाद उसके भरण-पोषण का भार आपके कन्धो पर ही आ पडा था। जब-जब आप दीक्षा ग्रहण करने का विचार करते तब-तब मामा के उपकारो का स्मरण हो आता। आपका हृदय गद्गद् हो उठता। आप सोचते- उस उपकार के नाते इस बालक के प्रति मेरा क्या कर्त्तव्य हे ? मेरे वाद इस बालक का क्या होगा ? इसके पालन-पोषण की क्या अवस्था होगी।

जवाहरलालजी बहुत दिनो तक इस दुविधा मे फसे रहे। बहुत सोचने पर भी किसी निष्कर्ष पर न पहुच सके। इस दुविधा के कारण उनके चित्त की व्याकुलता और भी बढ गई। वे अशान्त रहने लगे।

समाधान

हमारे अन्दर अनेक त्रुटियो मे से एक त्रुटि यह भी है कि हम अपनी अन्तरग-ध्वनि की ओर ध्यान नही देते। अन्तरात्मा जिस बात को पुकार-पुकार कर कहता ह उसे सुनने और समझने की ओर हमारा ध्यान नही जाता। अगर मनुष्य अपने अन्तर्नाद की ओर ध्यान दे तो उसे प्राय कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य के विषय मे विमूढ न होना पडे।

हमारे चरितनायक ने शायद अपनी इसी अवस्था के अनुभवो पर यह वाणी उच्चारी है। अब तक आपके सामने जो विकट समस्या उपस्थित थी और सुलझाये नही सुलझती थी, उसका समाधान अन्तरात्मा की ध्वनि मे क्षण भर मे हो गया। मानो लोकोत्तर प्रकाश मिल गया।

वात यो हुई कि आप अपने उस भाई को छाती पर लिटाकर अपने कर्त्तव्य-मार्ग पर विचार कर रहे थे। भाई के स्नेह और ससार के प्रति वैराग्य मे द्वन्द्व युद्ध चल रहा था। कभी एक ओर झुकाव होता, कभी दूसरी ओर। इतने मे अन्तरात्मा ने प्रश्न किया-'जब तुम पाच वर्ष के थे तव क्या हुआ था ?' वस इसी प्रश्न मे समस्या का पूर्ण समाधान समाया हुआ था। अन्तरात्मा ने फिर कहा-'ससार मे कोई किसी पर निर्भर नही है। सभी अपना-अपना भाग्य साथ मे लाये हे। मुनष्य अपने को दूसरे का पालक-पोषक मानकर अहकार बढाता है। एक दूसरे का भाग्य-विधाता नही बन सकता।'

एक बार श्री जवाहरलालजी के मस्तिष्क मे उनकी सारी जीवनी चित्रपट की भाति चक्कर काट गई। मा दो वर्ष का छोड गई और पिताजी पाच वर्ष का। उस समय मेरा पालन करने वाला कौन था ? क्या यह बालक भी तकदीर लेकर न आया होगा ? भाग्य विपरीत होने पर मेरा आश्रय भी कितने दिन टिक सकता है ? अगर आज मेरी जीवन-लीला समाप्त हो जाय तो इसका आश्रय-दाता कौन होगा ?

इस प्रकार विचार करके श्री जवाहरलालजी ने बिना विलब आत्म-कल्याण की ओर अग्रसर होने का फैसला लिया।

श्री जवाहरलालजी की प्रकृति आरभ से गम्भीर रही है। मन मे दीक्षा का निश्चय कर लेने पर भी उसे जल्दी प्रकट कर देना उन्होने उचित न समझा। अब वे प्रतिदिन व्याख्यान सुनने जाते, साधुओ की सगति करते और अधिक समय ज्ञान-ध्यान मे बिताते। इस प्रकार वे मन ही मन दीक्षा के सकल्प को दृढ करने लगे।

आपके तीन सहपाठी भी आपके साथ दीक्षा ग्रहण करने के लिए तैयार हुए थे। उनके नाम थे-श्रीमीयाचन्दजी, भानचन्द्रजी और खेमचन्द्रजी। कुछ समय बाद उनका वैराग्य तो शान्त हो गया मगर आपका वैराग्य क्रमश बढता ही चला गया।

दृढ और स्थायी निश्चय सफलता का प्रधान करण हे। महापुरुष अपने हित-अनहित का ओर सभावनाओ का विचार करके एक बार जो निश्चय कर लेते हे, उससे फिर विचलित नही होते। विघ्न-बाधाए उन्हे अपने पथ से डिगा नही सकती। आपत्तिया ओर विपत्तिया उनका रास्ता नही रोक सकती। उनका सकल्प इतना प्रबल होता है कि सफलता उनकी ओर खिची चली आती हे। श्री जवाहरलालजी ने मुनि-व्रत धारण करने का प्रवल सकल्प कर लिया था, फिर ससार की कोन-सी शक्ति थी जो उन्हे विचलित करने मे समर्थ होती ?

कसौटी

'तुम ऐसी जगह खडे हो जहा से दो मार्ग फ टते है। तुम जिस ओर चाहो, जा सकते हो। एक ससार का मार्ग हे, दूसरा मुक्ति का। अर्थात् एक मार्ग वधन का और दूसरा स्वाधीनता का। ससार के-वधन के-मार्ग पर चलोगे तो चलने का कभी अत ही नही आ सकेगा ओर लक्ष्य पर कभी पहुच नही सकोगे। मुक्ति का मार्ग शीघ्र ही भव-भ्रमण का अत लाता हे। शास्त्रकारो ने मोक्ष-मार्ग पर चलने की प्रेरणा की हे।'

'जो मनुष्य इस अमूल्य मानव-देह को पाकर भी मोज-शोक मे इसे गवा देता हे उसके वरावर कोई मूर्ख नही कहला सकता। वुद्धिमान् मनुष्य इस देह को पाकर क्षण-क्षण मे अपनी श्रेष्ठ-साधना का

मन्त्र जपता रहता है पर मूर्ख यही समझता है कि मनुष्य-जन्म पाया है- फिर ऐसी देह नही मिलेगी, इसलिए जो कुछ मौज-शौक करलू, वही मेरी है।'

जिस महात्मा के हृदय से आगे चलकर इस प्रकार के उद्‌गार निकले है, वह भला कबतक दुनियादारी के चक्कर मे फसा रहता ? जब उसने देखा कि मेरी मानसिक तैयारी पूर्ण हो चुकी है और अब विलम्ब करना उचित नही है तो उसने दीक्षा ग्रहण करने का अपना विचार अपने पिताजी के बडे भाई धनराज जी के समक्ष प्रस्तुत कर दिया। ताऊजी को जवाहरलालजी का विचार सुनकर बहुत आश्चर्य और दु ख हुआ। उन्होने जवाहरलालजी के विचारो की गहराई को नही पहचाना- सोचा-'नादान बालक है। साधु के बहकावे मे आ गया है। डाट-फटकार से रास्ते पर आएगा। यह सोचकर उन्होंने डाट-फटकार दिखलाकर चुप कर दिया। मगर यहा तो रग पक्का चढ चुका था। वह उतरने वाला न था। ताऊजी की फटकार कामयाब नही हुई। जवाहरलालजी का विचार अटल ही बना रहा।

धनराजजी ने जब देखा कि डाट-डपट से काम नही चलेगा तो उन्होने उनका साधुओ के पास आना-जाना बद कर दिया। निगरानी के लिए अपने दो लडके नियुक्त कर दिये और सख्त हिदायत कर दी कि उनमे से कोई एक हर समय जवाहरलालजी के पास रहे और उन्हे साधुओ के पास न जाने दे।

इस पतिबन्ध के कारण कुछ दिनो तक उनका साधुओ के पास आना-जाना रुका रहा। मगर प्रतिबन्ध ढीला होते ही फिर आवागमन आरभ हो गया। साधुओ के पास न जा सकने पर भी उनके विचारो मे तनिक भी शिथिलता न आई । वे पहले की भाति दृढ रहे। आपने उन्ही दिनो सचित्त जल पीने का त्याग कर दिया।

दूसरी चाल

धनराजजी ने जब देखा कि साधुओ के पास आना-जाना बद करके भी वे श्री जवाहरलालजी के विचार नही बदल सके तो उन्होने दूसरी चाल चली। गाव के सभी लोग आपके दीक्षा लेने के विचारो से परिचित हो चुके थे। धनराजजी ने अपने सब मिलने-जुलने वालो को समझा दिया कि जब कभी जवाहरलालजी उनसे मिले तो वे साधुओ की निन्दा किया करे। उन्हे साधुओ का भय दिखाए-साधुओ को भयकर रूप मे चित्रित करे, जिससे उनके विचार बदल जाय।

ताऊजी की यह शिक्षा उनके सभी परिचित सज्जनो ने कण्ठ तक उतार ली। उनमे से जो जवाहरलालजी से मिलता वही भरपेट मुनियो की निन्दा करता। कोई बूढा कहता-'बच्चा, तुम साधु मत होना। साधु लडकों को ले जाकर जगल मे छोड देते हे और उनका सामान खोस लेते है ?' कोई-कोई आलकारिक भाषा मे कहते-साधु बच्चो को पीट-पीटकर हलुवा बना देते हैं। कडकडाते तेल के कढारे मे कचोरी की तरह उबालते है।' इस तरह जितने मुह, उतनी ही बातें जवाहरलालजी को सुनाई पडती। मगर आप भी अपनी धुन के पक्के थे। वे किसी के बहकावे मे न आये और अपने निश्चय पर निश्चल बने रहे। यही नही, वरन् इस प्रकार के व्यवहार से उन्होंने अपने निश्चय को और भी दृढ कर लिया।

एक वार एक वेरागी वावा आपके मकान पर आये। नाम था उनका परमानन्दजी, मगर वावाजी के नाम से ही वह मशहूर थे। खूब मालदार और खूब प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। वह धनराजजी के मित्र थे। जवाहरलालजी के दीक्षा सवधी विचार उन्हे भी विदित हो चुके थे। वे तरह-तरह से इन्हे समझाने लगे। उन्होने अपने जीवन भर मे सचित समस्त बुद्धिमत्ता खर्च कर दी मगर मुद्ग शैल की दृढता धारण किये हुए श्री जवाहरलालजी पर उनकी वुद्धिमत्ता ने कुछ भी असर नही दिखाया।

वावाजी की वातो का उत्तर देना व्यर्थ समझकर जवाहरलालजी मोन साधे वैठे रहे। ताऊजी के मित्र होने के नाते भी उन्होने नम्रता धारण करना ओर विरोध न करना उचित समझा। मगर इस मोन का असर बावाजी पर उलटा पडा। बातो ही वातो मे वह वहुत आगे वढ गए। धमकाकर कहने लगे-'धनराजजी तुम्हे दीक्षा लेने की अनुमति कदापि नही देगे। अगर गडवड करोगे तो पकड कर खाट के साथ बाध दिये जाओगे।'

बावाजी को आसमान पर चढते देख जवाहरलालजी ने उत्तर देना ही उचित समझा। उन्होने गभीर ओर शात स्वर मे कहा- 'बाबाजी, आप इतनी वाते तो कह गए मगर आपने यह विचार न किया कि इनका सभालना कठिन हो सकता हे। मुझे दीक्षा लेने की अनुमति मिल गई तो आपकी वातो की क्या कीमत रह जायगी ? आप जैसे सयाने व्यक्ति की बाते एक वालक के सामने असत्य सावित हो, यह आप कैसे सहन कर सकेगे ? आपके हक मे अच्छा तो यही हे कि आप विचार कर वचन निकाले। इसमे तो कोई सन्देह ही नही कि दीक्षा की अनुमति मुझे मिलेगी।'

जवाहरलालजी के इस उत्तर मे असीम आत्म-विश्वास भरा हुआ हे। उन्हे पूर्ण विश्वास हे कि मेरा सकल्प टल नही सकता। दुनिया मुझे विचलित नही कर सकती। इस प्रकार का दृढ आत्मविश्वास जिसे प्राप्त हो, वह वडा ही भाग्यशाली है। वह सारे ससार को अकेला ही पराजित कर सकता हे। धन्य है यह दृढता! धन्य है यह अक्षय अभिलाषा! धन्य हे यह साहस!

वैरागी वावा ने यह कल्पना भी न की होगी कि छोटा दिखाई देने वाला यह वालक इतना साहस कर सकता है! वावाजी यह उत्तर सुनते ही चकित रह गए। वह मानो उडे जा रहे थे ओर बीच मे अचानक धक्का लगा ओर वह नीचे आ गिरे। इस अवज्ञा ओर दृढता से भरे उत्तर को सुनकर उनका बोल वद हो गया। कौन जाने, वावाजी ने मन ही मन वालक की बुद्धिमत्ता ओर साहसिकता की प्रशसा की या नही, मगर इतना वे समझ गये कि उसे समझा सकना उनके वश से वाहर की बात हे।

इस प्रकार धनराजजी के धीरे-धीरे सभी शस्त्र वेकार होते गये। उन्होने अनेक यत्न किये मगर कोई सफल नहीं हुआ। किन्तु स्नेह का वन्धन साधारण वधन नही हे। इस वधन से प्रेरित होकर धनराजजी इस वात पर तुले थे कि जवाहलाल किसी प्रकार अपना इरादा वदल दे, यदि वह सभव नही तो यह भी असभव है।

आंशिक त्याग

'अखड व्रह्मचारी मे अद्भुत शक्ति होती हे। उसके लिए क्या शक्य नही हे ? अखड व्रह्मचारी अकेला ही सारे व्रह्माण्ड को हिला सकता हे। अखड व्रह्मचारी वह हे जिसने अपनी समस्त इन्द्रियो को

और मन को अपने वश मे कर लिया हो। इद्रिया जिसे फुसला नही सकतीं, मन जिसे विचलित नही कर सकता। ऐसा अखड ब्रह्मचारी शीघ्र ही ब्रह्म का साक्षात्कार कर सकता है।

ब्रह्मचर्य का पालन करने के लिए और साथ ही स्वास्थ्य की रक्षा के लिए जिह्वा पर अकुश रखने की बहुत आवश्यकता है। जिह्वा पर अकुश न रखने से अनेक पकार की हानिया होती है।'

हमारे चरितनायक ने ब्रह्मचर्य और रसना-निग्रह के विषय मे जो प्रभाव-शाली उपदेश दिया है, उसे पहले अपने जीवन मे उतार लिया था। यह उपदेश उनके जीवन के अनुभव पर अवलबित है। जब आप वैरागी अवस्था मे थे तभी से त्याग की ओर आपकी भावना बढती जा रही थी। सचित्त जल पीने का त्याग आप पहले ही कर चुके थे। अब आपने सचित्त वनस्पति खाने का और रात्रि-भोजन का भी त्याग कर दिया। इस पकार जिह्वा पर अकुश स्थापित करने के पश्चात् आपने कुछ दिनो बाद आजीवन ब्रह्मचर्य-व्रत धारण कर लिया।

आत्मिक उन्नति के लिए त्यागशील बनना आवश्यक है। सभी मत और सभी पथ त्याग का विधान और समर्थन करते है। जैनधर्म तो त्याग की नीव पर ही खडा हुआ है। त्याग आत्मा मे दृढता उत्पन्न करता हे और कठिनाइयो को जीतने मे समर्थ बनाता है। यदि कोई व्यक्ति किसी स्वादिष्ट वस्तु को खाने का त्याग कर देता हे तो उसे रसनेन्द्रिय के सयम का अभ्यास करना ही होगा। रसनेन्द्रिय का सयम ब्रह्मचर्य के लिए आवश्यक है। जो जीभ को वश मे नही कर सकता वह ब्रह्मचर्य का पालन भी नही कर सकता। ब्रह्मचर्य की महिमा का वर्णन नही किया जा सकता। ऊपर चरितनायक के जो उपदेश-वाक्य दिये है, उनमे थोडे से शब्दो मे ही ब्रह्मचर्य की महत्ता का प्रतिपादन कर दिया गया है।

इस पकार एक-एक वस्तु का त्याग भी धीरे-धीरे विकास की ओर ले जाता हे। खाने, पीने, सोने बेठने आदि के काम आने वाली भोग्य वस्तुओ मे से जिनका जितना त्याग किया जाता है, आत्मा उतना ही बलवान् बनता हे। क्या धार्मिक और सामाजिक, सभी दृष्टियो से इद्रिय-सयम जीवन-विकास के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

हमारे चरितनायक पूर्ण-त्याग के मार्ग पर चलना चाहते थे, अतएव उसके लिए उन्होने पहले से ही तैयारी आरभ कर दी। ताऊजी ने स्नेह के वश होकर उन्हे त्याग से च्युत करने का प्रयत्न किया, मगर आप दृढ बने रहे। ताऊजी के द्वारा लगभग प्रतिदिन ही कोई-न-कोई अडचन उपस्थित की जाती थी। यह देखकर आपने घर मे भोजन करना छोड दिया। आप थादला मे ही दूसरे श्रावको के घर भोजन करने लगे। इस प्रकार श्रीधनराजजी के प्रयत्नो का फल विपरीत हुआ और उनके प्रयत्नो के कारण भी जवाहरलालजी त्याग के पथ पर शीघ्रतापूर्वक दृढ होते चले गए।

बाल्यावस्था की प्रतिभा

जवाहरलालजी मे प्रतिभा का वैभव जन्म-जात था। वे उन भाग्यवान् महापुरुषो मे से एक थे, जिन्हे प्रतिभा विरासत मे मिलती है। इसी कारण वे बाल्यावस्था मे भी तीव्र प्रतिभा-शाली और प्रत्युत्पन्नमति थे। किसी बात का तत्काल माकूल उत्तर देना आपकी विशेषता रही है। एक ही उदाहरण से उनकी प्रखर प्रतिभा का पाठको को पता चल जायगा।

एक वार आप किसी ब्राह्मण पडित के घर जाकर अपनी जन्म-पत्री दिखा रहे थे। उसी समय वहा पण्डित आत्मारामजी आ पहुचे। वे राज्य के एक अधिकारी थे। मामा मूलचन्दजी के मित्र होन के कारण जवाहरलालजी उन्हे भली-भाति जानते थे।

जवाहरलालजी ने ज्योतिपी से पूछा-'कोई ऐसा ग्रह वतलाइए जो मेरी दीक्षा मे सहायक हो।

पडित आत्मारामजी ने उन्हे चिढाने के उद्देश्य से कहा- 'क्या तुम ढूढिया साधु वनना चाहते हो ? क्या तुम्हे मालूम हे, ढूढियो की उत्पत्ति कैसे हुई ?'

जवाहरलालजी-'जी हा, मे ढूढिया साधु वनना चाहता हू। आप वताइए, किस प्रकार उनकी उत्पत्ति हुई हे ?'

आत्मारामजी ने आरभ किया- महात्मा गोरखनाथ के दो चेले थे- एक का नाम था मछेन्द्रनाथ और दूसरे का पारसनाथ। एक दिन गुरुजी ने दोनो चेलो को भिक्षा लाने के लिए भेजा। वेचारे वहुत घूमे पर भिक्षा नही मिली।एक जगह वनियो की पगत हो रही थी।पारसनाथ वहा पहुच गए ओर उन्होन भिक्षा की याचना की। पगत के पास एक मरी वछिया पडी थी। वनियो ने कहा- इसे ले जाकर दूर फेक आओ तो तुम्हे वढिया पकवान देगे।

पारसनाथ ने विना सकोच मरी वछिया खीचकर दूर फेक दी। वनियो ने खूव मिठाई दी। उस लेकर पारसनाथ अपने गुरुजी के पास पहुचा।

उधर मछेन्द्रनाथ खाली हाथ लौटा। गुरु गोरखनाथ ने मछेन्द्र को वहुत धिक्कारा ओर पारसनाथ की प्रशसा की। मछेन्द्रनाथ ने उसी समय पारसनाथ की पोल खोल दी। वछिया वाली वात सुनकर गुरुजी ने पारसनाथ को अपने आश्रम से निकाल दिया ओर शाप दिया- 'तुमने जिन वनियो की वछिया खींची है, आज से तुम उन्ही के गुरु हो गए।'

वस, तभी से ढूढिया मत चल पडा। इसी घटना के चिह्न-स्वरूप ढूढिया साधु हाथ मे गाय की पूछ के समान ओघा ओर अम्वाडे के समान पात्र रखते हे। क्या तुम उन्ही पारसनाथ के चेले वनना चाहते हो ?

पडितजी की यह मनगढत कहानी सुनकर जवाहरलालजी ने उसी समय उत्तर दिया- 'पडित, आप अधूरी वात कह रहे हे। इस कहानी मे वहुत-सी वाते छूट गई हे। आपकी आज्ञा हो तो मे उन्हे पूरी कर दूँ'

पडितजी के पूछने पर श्री जवाहरलालजी ने कहना आरम्भ किया-'वास्तव मे वात यह हे कि वछिया वहुत भारी थी। पारसनाथ अकेले उसे खीच नही सके। सहायता के लिए उन्होंने मछेन्द्रनाथ को बुलाया। मिठाई के लोभ से वह भी आकर सम्मिलित हो गया। मछेन्द्र ने मुह के तरफ से वछिया पकडी ओर पारसनाथ ने पूछ की तरफ से, दोनो उठाकर उसे दूर फेक आये। मगर वनियो ने कहा- हमने अकेले पारसनाथ को मिठाई देने का वायदा किया था, मछेन्द्रनाथ को नही। यह कहकर उन्होंने उसे मिठाई नही दी। इससे मछेन्द्रनाथ चिढ गया। उसने गुरु के पास जाकर पारसनाथ की शिकायत कर दी। गुरुजी को नाराज होते देख पारसनाथ ने भी मछेन्द्रनाथ की पोल खोल दी। गुरुजी मछेन्द्र पर

भी क्रोधित हो गए। उन्होने उसे शाप दिया-"आज से तुम ब्राह्मणो के गुरु हुए। इस पाप के लिए तुम्हारे हाथ मे गाय का मुह रहेगा और उसकी आते धारण करोगे।"

तभी ब्राह्मण हाथ मे गोमुखी रखते है और आतो की तरह जनेऊ पहनते है। माला फेरते समय गोमुखी मे हाथ रखते है और स्नान करते समय जनेऊ को आते मानकर खूब धोते है, जिससे उनमे बदबू न आने पावे। गाय की पूछ मे तेतीस कोटि देवताओ का वास माना जाता है। उसका अम्बाडा अमृत का स्थान है। यह दोनो अग गाय के शरीर मे बहुत पवित्र माने जाते है। इसके विपरीत गाय का मुह अपवित्र माना जाता है। उससे गाय अशुचि पदार्थो को भी खा जाती है। आते तो अपवित्र है ही। ये दोनो चीजे ब्राह्मणो के पल्ले पडी। अब आप ही सोच देखिये, दोनो मे बुरा कौन ठहरा ?'

श्री जवाहरलालजी का जैसे-का-तैसा उत्तर सुनकर आत्मारामजी अवाक् रह गए। यद्यपि यह एक कल्पित कहानी है इसमे कोई तथ्य नही है, किन्तु श्री जवाहरलालजी की कल्पना-शक्ति और प्रतिभा का इससे भली-भाति अनुमान किया जा सकता है। छोटी-सी अवस्था मे इतनी बडी बात तत्काल गढ लेना साधारण बात नही है। इसके लिए प्रखर प्रतिभा चाहिए, और एक राज्याधिकारी के सामने निर्भयता के साथ उसे कहने की हिम्मत होना भी कठिन है। मगर श्री जवाहरलालजी मे इस हिम्मत की भी कमी नही थी। ईट का जवाब पत्थर से देना भी उन्हे खूब आता था। वस्तुत इन गुणो के अभाव मे कोई भी व्यक्ति महत्ता प्राप्त नही कर सकता।

इन दिनो श्री जवाहरलालजी जल मे कमल की भाति अलिप्त भाव से घर मे रहते थे, तथापि उन्हे वर्त्तमान स्थिति मे भी सतोष नही था। वे ऐसा कोई उपाय खोज रहे थे जिससे अनगार बनने की उनकी अभिलाषा शीघ्र पूरी हो सके। उधर ताऊजी दीक्षा न लेने-देने पर तुले हुए थे। जवाहरलालजी की प्रत्येक प्रवृत्ति पर उनकी निगाह रहती थी।

एक बार श्री जवाहरलाल जी ने सुना कि ससार-सागर से पार उतारने वाले मुनिराज इस समय लीबडी मे विराजमान है। यह स्थान थादला से बारह कोस दूर है। जवाहरलालजी की बडी उत्कठा हुई कि उनके दर्शन करके नेत्र सफल करू किन्तु कोई उपाय न था। तथापि श्रीजवाहरलालजी निराश होना नही जानते थे। उन्हे विश्वास था कि जहा इच्छा प्रबल है वहा कोई न-कोई मार्ग निकल ही आता है। अतएव अवसर की प्रतीक्षा करने लगे।

जवाहरलालजी के चचेरे भाई (धनराजजी के पुत्र) उदयराजजी किसी काम से दाहोद जाने के लिए तैयार हुए। दाहोद से लीबडी नजदीक ही है। जवाहरलालजी भी उनके साथ चलने को तैयार हो गये। दोनो बैलगाडी मे बैठकर चल दिये।

रास्ते मे अनास नदी पडती थी। नदी तक पहुचते-पहुचते अधेरा हो गया। नदी मे बैल उतर तो गये किन्तु चढाव मे कचिया गये। चढाने का प्रयत्न किया गया तो कभी इधर मुड जाते, कभी उधर। नदी पहाडी थी और उस समय उसमे पानी नही था किन्तु पत्थरो की भरमार थी। भयानक जगल था, अधकार से परिपूर्ण काली रात फैल गई थी। पथरीला रास्ता था, पग-पग पर गाडी उलटने की सम्भावना थी। जवाहरलालजी उस समय पन्द्रह वर्ष के और उदयराजजी सत्तरह वर्ष के थे। गाडीवान भी इन्ही के अनुरूप छोटी उम्र का था। भीलो की आबादी होने के कारण लुट जाने का भय सिर पर मडरा रहा था।

तीनो ने मिलकर वहुत यत्न किया मगर गाडी नदी के चढाव पर न चढी। उदयराजजी और गाडीवान घवरा उठे। दोनो जोर-जोर से रोने लगे। मगर जवाहरलालजी किसी और ही धातु से वने थे। रोना उन्होने सीखा ही नही था। विपत्ति आने पर वह घवराते नही थे। उन्होने एक जगह कहा हे- विपत्ति को सम्पत्ति के रूप मे परिणत करने का एक मात्र उपाय यह हे कि विपत्ति से घवराना नही चाहिए। विपत्ति को आत्म-कल्याण का एक श्रेष्ठ साधन समझकर, विपत्ति आने पर प्रसन्न रहना चाहिए। जिसका विचार इतना उच्च गभीर हे, उसके लिए यह विपत्ति तो नगण्य हे। वह इससे कैसे घवराता ?

श्री जवाहरलालजी इस समय एकदम शान्त थे। उन्होने दोनो को धैर्य वधाया और कहा-'घवराने की क्या वात है ? गाडी क्या यहीं पडी रहेगी ? वह निकलेगी और जल्दी ही निकल जायगी।' इतना कहकर उन्होने अपना काला कोट पहिना और छडी घुमाते हुए भीलो की वस्ती की ओर चल दिये। वहा जवाहरलालजी का एक परिचित भील रहता था। आप अकेले अधेरे मे उसी को बुलाने के लिए रवाना हुए। हिंसक पशुओ से भरे भयानक जगल मे, रात्रि के समय, निर्भय होकर दो मील चलने पर आप भीलो की बस्ती मे पहुचे। परिचित भील को आवाज दी। उसे अपना हाल सुनाया और मिहनताना देने का वचन देकर उसे अपने साथ ले आए। गुलजी तडवी नामक उस भील ने अपने साथ दस-वारह भील और लिये। उनकी सहायता से गाडी नदी के चढाव पर चढी और सवके जी मे जी आया।

रात भर वही कही विश्राम लेकर दोनो भाई दूसरे दिन दाहोद पहुचे। उदयचदजी अपना काम पूरा करके थादला लौट आये। श्री जवाहरलालजी वहा से लीवडी चल दिये। वहा जाकर वे साधुओ की सेवा मे रहने लगे और दीक्षा लेने के लिए तैयार हो गए।

उदयचदजी जब अकेले थादला लौटे और धनराजजी को पता चला कि जवाहरलालजी लीवडी पहुच गये हे, तो वह उसी समय लीवडी के लिए रवाना हुए। उन्हे भली-भाति पता था कि पखी पींजरे मे से निकल चुका है ओर अव सरलता से यो ही वापस नही लोटने का। अव ऐसे चुग्गे की आवश्यकता है जिसके लोभ मे पडकर पखी फिर पीजरे मे आ वसे। धनराजजी वडे अनुभवी आदमी थे। जानते थे कि ससार का कोई भी प्रलोभन उस पखी को आकर्पित नही कर सकता। अतएव उन्होने ऐसे चुग्गे की व्यवस्था की कि पखी वश मे आ गया। वह चुग्गा क्या था ? थादला के तत्कालीन सरपच शाहजी प्यारचद जी का पत्र था, जिसमे जवाहरलालजी को लक्ष्य करके लिखा था-'तुम थादला लोट आओ। दीक्षा की आज्ञा दिलाने की जिम्मेवारी मुझ पर हे।'

दीक्षा के प्रलोभन रूप चुग्गे से आकर्पिक होकर उडा हुआ पखी फिर लोट आया। आखिर दीक्षा के सिवाय उसे और चाहना ही क्या थी! उसने सोचा-'थादला जाते ही मुझे दीक्षा लेने की आज्ञा मिल जायगी। मेरे मन की मुराद पूरी हो जायगी। अव वावाजी के साथ चले जाने मे हर्ज ही क्या हे ?'

इस प्रकार विचार कर आप वावाजी (श्री धनराजजी) के साथ लोट आये। मगर थादला आते ही वावाजी ने रग पलट दिया। दीक्षा की आज्ञा देने से साफ इन्कार कर दिया। जवाहरलालजी को शाहजी का सहारा था। वे उनके पास पहुचे। मगर सरपच शाहजी अपनी लाचारी प्रकट करके रह गये! कहने लगे- 'मेने तुम्हारे वावाजी का खूव समझाया मगर वे आज्ञा देने क लिए तेयार नही होते । मे क्या जानता था कि वे इस प्रकार पलट जायगे! उनकी लिखत मेरे पास होती तो कुछ कार्रवाई भी करता, मगर ऐसा कुछ हे नही। जितना कह सकता था, कह चुका, उन्हे समझा चुका। अव क्या हो सकता हे ?'

सरपच महोदय की यह सरलतापूर्ण लाचारी देख श्री जवाहरलालजी को घोर निराशा हुई। फिर भी उन्होने अपना सकल्प नही छोडा और किसी दूसरे अवसर की राह देखने लगे।

पुनः पलायन

थादले के भैरा धोबी के पास एक घोडा था, जिसे वह किराये पर भी चलाया करता था। श्री जवाहरलालजी ने वही घोडा पाच रुपये मे तय कर लिया। भैरा अपने घोडे पर उन्हे लीबडी पहुचा देगा। मगर गाव से ही घोडे पर सवार होने मे कठिनाई थी। बाबाजी को पता लग जाता तो निकलना असम्भव हो जाता। इसलिए निश्चित किया गया कि भैरा अपना घोडा लेकर नौगावा नदी पर दो पहर तक पहुच जायगा और बाद मे किसी समय जवाहरलालजी वहा आ मिलेगे।

श्री जवाहरलालजी अपने निश्चित समय पर घर से बाहर निकले। महात्मा बुद्ध रात्रि के घोर अधकार मे घर से रवाना हुए थे, श्री जवाहरलालजी ने दुपहरी के चमकते सूर्य के प्रकाश मे प्रस्थान किया। फिर भी दोनो का उद्देश्य समान था। जैसे ही आप गाव से बाहर निकले कि रास्ता भूल गए। लीबडी के बदले झाबुआ की राह पकड ली। कुछ ही दूर गये थे कि एक रिश्तेदार से भेट हो गई। वे आपके रिश्ते मे बहनाई होते थे और आपके विचारो से परिचित थे। उनका नाम था कोदाजी घोडावत। उन्होने सारा वृत्तान्त सुनकर आपको ठीक रास्ता बतला दिया।

नदी के किनारे चलते-चलते आप भैरा धोबी के पास पहुचे और घोडे पर सवार होकर लीबडी की ओर रवाना हुए। पाच कोस चलने पर सूर्य अस्त हो गया। रास्ते की चौकी पर सिपाही ने रोका। अगले गाव मे ठहर जाने का वायदा करके चौकीदार से पिण्ड छुडाया और आगे चले।

जो रास्ता सीधा लीबडी जाता था उसमे बडे-बडे पहाड थे और जगल भी था। जगली जानवरो का भी भय बना रहता था। रात मे उस रास्ते जाना खतरनाक था। कदाचित् आप तैयार हो जाते तो भैरा हरगिज जाना मजूर न करता। उसे अपनी और अपने घोडे की जान की जोखिम भी तो थी। अतएव श्री जवाहरलालजी ने सीधा मार्ग छोडकर लम्बे मार्ग से ही जाना उचित समझा। चलते-चलते दाहोद के नजदीक पहुचे। वहा खान नदी के किनाने एक खरबूजे वाले की झोपडी थी। उसी झोपडी मे शेष रात्रि बिताकर प्रात काल होते ही फिर रवाना हुए।

रास्ते मे एक हूमड महाजन मिले। वे आपके मित्र थे। उन्होने भोजन के लिए बहुत आग्रह किया परन्तु आप सचित्त जल के त्यागी थे और अचित्त जल तैयार नही था। विलम्ब करना असह्य होने के कारण सिर्फ भैरा को भोजन कराकर वे तत्काल वहा से चल दिये।

जिस बात की आशका थी वही हुई। बहुत जल्दी करने पर भी जब आप लीबडी पहुचे तो आपका स्वागत करने के लिए बाबाजी वहा मौजूद मिले। बाबाजी उनसे भी पहले पहुच गये थे। उन्होगे मार्ग की भयानकता का खयाल नही किया और सीधे मार्ग से ही आ पहुचे थे।

बाबाजी ने श्री जवाहरलालजी को थादला लौटने के लिए शक्ति भर समझाया। मगर 'सूरदास की कारी कमरिया चढे न दूजो रग' वाली उक्ति चरितार्थ हुई। श्री जवाहरलालजी टस से मस नही हुए। बाबाजी भी जल्दी हार मानने वाले नही थे। उन्होने धमकाना शुरू किया। मगर जब तमाम धमकिया बेकार हो गई और श्री जवाहरलालजी ने लौटने से साफ इन्कार कर दिया तो बाबाजी फिर दीन पड

गए। उन्होने अपने हृदय की सारी व्यथा जवाहरलाजी के सामने उडेलकर रख दी। वृद्ध धनराजजी ने कहा-'देखो, मे वूढा हो गया हू। तुम्हारे मामा के घर कोई पुरुप शेप नही वचा हे। उस कुटुम्ब का भार कौन सभालेगा ? मेरा खयाल भले ही न करो मगर मामा को मत भुलाओ। तुम्हारे ऊपर उनका कितना उपकार हे ? धर्म के नाम पर क्या यह कृतघ्नता शोभा दे सकती है। मामा के उस नादान वालक को किसके सहारे छोड आए हो ? उसका उत्तरदायित्व तुम्ही पर हे। अपना उत्तरदायित्व छोडकर भाग निकलना तो कायरता है, धर्म कायरता नही सिखलाता । हा, जब वह वालक सयाना हो जाय और मेरी आखे मुद जाय तब इच्छानुसार कर सकते हो। इसलिए बेटा! मेरी वात मानो। हट मत करो। घर लोट चलो।'

प्रतिकूल उपसर्ग देखने-सुनने मे कठोर मालूम होते हे परन्तु सहने मे उतने कठोर नही होते। इसके विरुद्ध अनुकूल उपसर्ग बडे ही मनोरम और लुभावने जान पडते है परन्तु उन्हे सहन करना सरल नही होता। अच्छे-अच्छे योगी भी अनुकूल उपसर्गों के चक्कर मे पडकर अपनी साधना से नष्ट हो जाते है। शास्त्र मे कहा है-

अहिमे सुहुमा सगा, भिक्खूण जे दुरुत्तरा।
जत्थ रागे विसीयति, ण चयति जवित्तए॥

—सूयग अ 3, उ 2।

अर्थात् यह अनुकूल उपसर्ग बडे ही सूक्ष्म होते है। साधु पुरुष बडी कठिनाई से इन्हे जीत पाते है। कई-एक तो इन उपसर्गों के आने पर अपने सयम की रक्षा करने मे ही असमर्थ हो जाते हे।

वे अनुकूल उपसर्ग कौन-से है, सो शास्त्रकार कहते हे-

अप्पेगे नायओ दिस्स, रोयति परिवारिया।
पोस णे ताय! पुट्ठोसि, कस्स ताय! जहासि णे ?
पिया ते थेरओ तात! ससा ते खुड्डिया इमा।
भायरो ते सगा तात! सोयरा कि जहासि णे ?
मायर पियर पोस, एव लोगो भविस्सइ।
एव खु लोइय तात! जे पालति मायर॥
एहि ताय! घर जामो, मा य कम्मे सहा वय।
वितिय पि ताय! पासामो जामु ताव सय गिह॥

अर्थात्-साधु के परिवार वाले साधु को देखकर घेर लेते हे ओर रोकर कहते हे-तात! तू हमे क्यो त्यागता है! हमने लडकपन से तुम्हारा पालन किया हे, अब तुम हमारा पालन करो।

तात! तुम्हारे पिता वूढे है और तुम्हारी वहन नादान है। यह तुम्हारे सगे भाई हे। तुम हम लोगो को क्यो त्यागते हो ?

हे पुत्र ! अपने माता-पिता का पालन करो। उनका पालन करने से ही परलोक सुधरेगा। जगत् का यही आचार है और इसलिए लोग अपने माता-पिता का पालन करते हे।

हे तात! चलो घर चले। अब से तुम भले ही कोई काम मत करना। हम काम कर दिया करेगे। एक बार काम से घबरा कर तुम भाग आये हो, पर अब चलो, अपने घर चले।

इस पकार अनुनय, विनय लाचारी और बेबसी पकट करने वाले तथा पलोभनो मे फसाने वाले यह अनुकूल उपसर्ग बडे करारे होते है। शास्त्रकार के शब्दो मे साधु भी बडी कठिनाई से इन्हे सहन कर पाते है। हमारे चरितनायक अभी साधु नही बने थे, साधु होने के उम्मीदवार ही थे। फिर भी उन्होने अत्यन्त धैर्य के साथ बाबा जी के अनुकूल उपसर्गो को सहन किया। उन्होने बाबाजी को नम्रतापूर्वक निवेदन किया-

'गार्हस्थ्य एक जजाल है। इस जजाल मे मै पडना नही चाहता। दीक्षा लेने का पक्का निश्चय कर चुका हू। धन दौलत और ससार के अन्य सुख-साधन मेरी निगाह मे तुच्छ है। जीवन का क्या भरोसा है! आज है, कल नही। माता छोडकर चली गई। पिताजी भी जल्दी ही चल दिये। मामाजी ने भी उनका अनुगमन किया। यह सब घटनाए मेरी आखो के सामने घटी। जीवन पर भरोसा कैसे किया जाय! ऐसी स्थिति मे एक क्षण गवाना भी मेरे लिए असह्य है। जितनी जल्दी मनुष्य आत्म-कल्याण मे लग जाय उतना ही श्रेयस्कर है।

मामाजी की मृत्यु होने पर भी उस बालक का पालन-पोषण हुआ ही था। इसी प्रकार अब भी होता रहेगा। अभी तो मै दीक्षा ले रहा हू, यदि मेरी मृत्यु हो जाय तो उसे कौन पालेगा! मै न होता तो भी उसका भरण-पोषण तो होता ही। वास्तव मे कोई किसी पर निर्भर नही है। सब अपने-अपने कर्मो का फल भोगते है। यह तो मनुष्य का झूठा अहकार है कि वह अपने आपको पालक-पोषक समझता है। कोई किसी का भाग्य-पलट नही सकता।

बाबाजी! मेरे विचारो को आप सोडावाटर का उफान न समझे। यह विचार क्षणिक नही, स्थायी और दृढ है। उनमे परिवर्तन करने का प्रयास निरर्थक है। विवेकी पुरुष के लिए ससार मे आकर्षण की क्या चीज है! सभी कुछ नीरस, दु खमय और क्षणिक है। आपके लिए यही उचित है कि आप मुझे दीक्षा लेने की आज्ञा दे दे। अगर आप आज्ञा न देगे तो मै साधुओ की तरह रहकर सारा जीवन बिता दूगा। मेरा निश्चय अब बदल नही सकता। मै कोई बुरा कार्य करने के लिए उद्यत नही हुआ हू। आप प्रसन्नतापूर्वक मुझे आज्ञा दीजिए और घर लौट जाइए।'

साधुता का अभ्यास

बाबाजी का श्री जवाहरलालजी पर गाढा स्नेह था। इसी स्नेह की प्रेरणा से उन्होने दीक्षा न लेने देने का भरसक प्रयत्न किया। मगर अन्त मे उन्हे निराश होना पडा। बाबाजी का श्री जवाहरलालजी पर जितना प्रेम था उससे कही बढकर श्री जवाहरलालजी का सयम पर प्रेम था। बाबाजी का प्रेम राजस था श्री जवाहरलालजी का सात्त्विक। अन्त मे सात्त्विक प्रेम ने राजस प्रेम पर विजय प्राप्त की। बाबाजी निराश होकर थादला लौटे। इधर जवाहरलालजी ने साधु-वृत्ति का अभ्यास प्रारभ कर दिया। अब आप किसी के घर भोजन नही करते थे। झोली मे कटोरिया रखकर साधुओ की तरह गोचरी [illegible]। आप शास्त्रो के मूलपाठ और थोकडे कठस्थ करने लगे। कुछ दिनो बाद साधु तो [illegible] किन्तु आप वही रहकर साधु सरीखा जीवन बिताने लगे। आठ महीने तक आप [illegible]।

सफलता

'हे आत्मन् ! जब अतरग शत्रु तेरे ऊपर आक्रमण करेगे, उस समय तू छिपकर वेठा रहेगा तो उन शत्रुओ पर विजय केसे प्राप्त कर सकेगा ? युद्ध के समय छिपे रहना वीरात्मा को शोभा नही देता। इसलिए तैयार हो जा। तेरा वल अनन्त है। तेरी क्षमता अपार है। ससार की समस्त शक्तिया तेरी शक्ति के सामने पानी भरती है। तेरे शत्रु भले ही प्रवल है, पर अजेय नही है। उन्हे जीतने का प्रवल सकल्प करते ही आधी विजय प्राप्त हो जाती हे।

हे आत्मन्! अव उठ खडा हो। अपनी शक्ति को सभाल। अतरग शत्रुओ को छिन्न–भिन्न कर डाल। शत्रुओ पर विजय प्राप्त करने से तुझे अलोकिक वेभव प्राप्त होगा। तू सनातन साम्राज्य का स्वामी बनेगा।

चरितनायक की इस ओजस्वी वाणी मे कितना बल हे ? इसमे सकल्प की महत्ता हे, आत्मा की अनन्त और असीम शक्तियो पर दृढ आस्था भरी है, आत्मिक शुद्धि प्राप्त करने की तीव्र व्यग्रता छिपी है ओर आत्म–विकारो का क्षय करने के लिए प्रवल प्रेरणा नजर आती हे। जिस महान् आत्मा के विचार इतने उच्च, उज्ज्वल ओर उन्नत हे, उसे ससार के प्रलोभन अपने वश मे केसे कर सकते थे ? उसके सकल्प को कौन पराजित कर सकता था ? सचमुच उसकी तीव्र भावना के सामने ससार की शक्तिया पानी भरती थी। अनेकानेक कठिनाइया आने पर भी वह रचमात्र भी विचलित नही हुआ। अन्तरायो की वर्षा के बीच भी वह ज्यो–का–त्यो खडा रहा। वास्तव मे महापुरुषो का यही स्वभाव होता हे।

आठ महीने तक साधु-वृत्ति का अभ्यास करने के अनन्तर जब आपने देखा कि वावाजी अव भी आज्ञा देने को तैयार नही है तो उन्होने अपने सगे-सम्बन्धियो को पत्र लिखे। पत्रो मे यह भी उल्लेख कर दिया कि-'आप आग्रह करके बाबाजी से आज्ञा नही दिलायेगे तो मुझे किसी अज्ञात स्थान को चला जाना पडेगा और फिर कभी थादला नही आ सकूगा।'

श्री जवारलालजी के निश्चय पत्थर की लकीर होते थे। सभी लोग उनकी आदत से परिचित थे। अत पत्र मिलते ही सम्बन्धी-जन चिन्ता मे पड गये। आखिर जाति के प्रतिष्ठित पुरुषो ओर सम्वन्धी-जनो की एक पचायत हुई। सब पचो ने बावाजी से आज्ञा देने का आग्रह किया।

बाबाजी सभी प्रयत्न करके थक चुके थे। अज्ञात स्थान चले जाने की धमकी से वे भी विचलित हो उठे थे। उन्होने सोचा-'जवाहर का निश्चय वदल नही सकता। वह अपने विचारो का पक्का हे। कही अनजान जगह चला गया तो देखना भी दुर्लभ हो जायगा। इससे वेहतर हे कि आज्ञा लिख दू। जव चाहूगा, दर्शन कर आया करूगा।'

वावाजी आज्ञा के लिए तेयार हो गए। वही पचायत मे आज्ञा-पत्र लिखा गया ओर श्री जवाहरलालजी के पास भी एक पत्र भेज दिया गया। उसमे लिखा था-'विक्रम सवत् १९४८ की मार्गशीर्ष शुक्ला एकादशी के वाद आपको दीक्षा लेने की आज्ञा दी जाती हे।'

दीक्षा-संस्कार

'कर्म-रहित अवस्था प्राप्त करना अपने ही हाथ की बात है। सयम किसी भी प्रकार दु ख-प्रद नही वरन् आनन्ददायक है। विवेकपूर्वक सयम का पालन किया जाय तो सयम इस लोक मे भी सुखदायक है और परलोक मे भी।'

सयम को इह-परलोक मे आनन्दप्रद मानने वाले श्री जवाहरलालजी को जब सयम धारण करने का आज्ञापत्र प्राप्त हुआ तो उनकी प्रसन्नता का पार न रहा। 'शुभस्य शीघ्रम्' वाली उक्ति का अनुसरण करके आपने मार्गशीर्ष शुक्ला द्वितीया (वि स १९४७) को ही दीक्षा धारण करने का मुहूर्त्त निश्चय किया। दीक्षा के आमत्रण-पत्र भेजे गये। सैकडो श्रावक बाहर से एकत्रित हुए। बाबाजी स्वय उपस्थित नही हो सके। उन्होने अपने पुत्र श्री उदयचन्दजी को भेजा। निश्चित समय पर सैंकडो नर-नारियो के समक्ष मुनिश्री बडे घासीलालजी महाराज[1] ने आपका केशलोच किया और महाव्रतो का उच्चारण करके दीक्षा दे दी। उस समय आप श्री मगनलालजी महाराज के शिष्य बने थे। इस प्रकार हमारे चरितनायक की चिरकालीन अभिलाषा पूर्ण हुई। मुनिपन धारण करके आपने अपने को कृतकृत्य समझा। आपके लिए मानव-जीवन की सफलता का द्वार खुल गया। सिर पर लम्बे अर्से से जो बोझा-सा लदा था, वह हल्का हो गया। वैरागी श्री जवाहरलालजी को सयम क्या मिला, रक को नव-निधिया मिल गईं, मानो दरिद्र के घर कल्पवृक्ष आ गया। आपका हृदय सतुष्ट हुआ और अन्तरात्मा को अपूर्व शान्ति का लाभ। इसके बाद चरितनायक के जीवन का नया प्रभात आरभ हुआ।

प्रभु की गोद में

अब हमारे चरितनायक के जीवन मे आमूल परिवर्त्तन हो गया। इस परिवर्त्तन के पीछे कौन-सी भावना काम कर रही थी, यह बात परोक्ष रूप मे आ चुकी है। यहा उसे स्पष्ट कर देने की आवश्यकता है। मुनि-जीवन धारण करने मे उनका क्या महत् उद्देश्य था, यह चीज चरितनायक के शब्दो मे ही व्यक्त करना अधिक उचित होगा। निम्नलिखित उद्धरण उन्ही की समय-समय पर प्रकट हुई वाणी से सगृहीत किये गए है-

(१)

प्रभो! जब तक मुझ मे अपूर्णता विद्यमान है तब तक मुझे आपके चरणो की नौका का आश्रय मिलना चाहिए। आपकी चरण–नौका का आधार पाकर मै ससार–सागर से पार पहुचना चाहता हू।

(२)

प्रभो! मेरी आशा-अभिलाषा ऐसी है कि तुम्ही उसे पूर्ण कर सकते हो। तुम्हारे सिवाय दूसरा कोई उसे पूर्ण नही कर सकता। इसलिए मैंने तुम्हारी शरण ली है। पुत्र की आशा तो स्त्री भी पूर्ण कर सकती है। उसके लिए तुम्हारी शरण ग्रहण करने की क्या आवश्यकता है ? मै तुमसे ऐसी ही आशा

---

१ यह श्री घासीलालजी महाराज श्री हुक्मीचन्दजी म के सम्प्रदाय की महान विभूति थे। बडे पवित्र और चरित्र-सम्पन्न तपोधनी थे। उनके शुभाशीर्वाद ने ही हमारे चरितनायक को इस पद पर पहुचाया है।

करता हू जिसकी पूर्ति किसी और से हो ही नही सकती। मेने तुम्हारा स्वरुप जानकर तुम्हे हृदय मे वसाया हे ओर अपने हृदय को तुम्हारा मन्दिर समझने लगा हूँ।

(३)

प्रभो! मै भागकर तेरे चरण-शरण मे आया हू। इन विकार-विपधरो से मुझे वचा। मेरी रक्षा कर। विकार-विष उतारकर मेरा उद्धार कर।

(४)

प्रभो! मे ऊर्ध्वगामी होना चाहता हू, प्रगति के महान् ओर अतिम लक्ष्य की दिशा मे निरन्तर प्रयाण करने की कामना करता हू। मुझे वह शक्ति दीजिए कि अधोगामी न वनू। विश्व के प्रलोभन मुझे किचित् भी आकृष्ट न कर सके। भगवन्, अगर आप मेरे कवच वन जाये तो मे कितना भाग्यशाली होऊ!

(५)

प्रभो! ससार की कामना मेरा हाथ पकडकर मुझे अपनी ओर खीच रही हे। इस कामना से वचने के लिए तेरी शरण मे आना ही एकमात्र उपाय है। प्रभो! अगर तू मुझे अपनी शरण मे लेकर मेरी वाह पकड ले तो सासारिक कामना तुझसे डरकर मेरा पल्ला छोड देगी। इसलिए इस कामना के फदे मे से छुडाने के लिए मेरी वाह पकड, मुझे अपनी शरण मे ले।

(६)

प्रभो! तीन लोक के समस्त पदार्थों मे मुझे तू ही प्यारा है। तू मुझे प्राणो के समान प्यारा हे। वही क्यो, तू मेरे लिए प्राणो का भी प्राण है। इसलिए प्राणो से भी अधिक प्यारा हे।

(७)

भगवन्! यदि तेरा तेज मेरे हृदय पर प्रतिविम्वित हो जाय तो मे अनन्त शक्तिशाली वन सकता हू- मेरी समस्त सासारिक वासना शात हो सकती है। अत प्रभो! अपने अनन्त तेज की कुछ किरणे इधर फैक दो, जिससे मोह-ममता के तिमिर से आवृत मेरा अन्त करण उद्भासित हो जाय।

यही कतिपय उद्धरण चरितनायक की मनोभावना समझने मे पर्याप्त सहायता दे सकते हे। इन्ही पवित्रतम आकाक्षाओ से प्रेरित होकर आपने प्रभु की गोद मे बेठना उचित समझा।

❑

द्वितीय अध्याय

मुनि जीवन

परीषहो पर विजय प्राप्त करना मुनिधर्म का खास अग है। मुनियो को सर्दी-गर्मी, भूख-प्यास आदि के परीषह प्राय आते ही रहते है। उनसे घबरा उठने वाला व्यक्ति मुनिधर्म का पालन नही कर सकता।

मुनि जवाहरलालजी को दीक्षा लेते ही परिषहो का सामना करना पडा। दीक्षा के दिन उनकी तबीयत अच्छी न थी। नवीन साधुजीवन की गुरुता के विचार से मस्तिष्क मे भारीपन आ गया हो, यह भी सभव है।

प्रथम परीक्षा

दीक्षित लेने के दिन ही अन्य साधुओ के साथ विहार करके आप गाव के बाहर महादेव के मन्दिर मे ठहरे। सर्दी ठीक-ठीक परिमाण मे आरम्भ हो चुकी थी। मन्दिर चारो ओर से खुला था। नदी नजदीक थी। ठडी हवा के झोके शरीर मे कपकपी पैदा कर रहे थे। दीक्षा लिए अभी एक दिन भी नही हुआ था। आत्मा बलवान् थी सही, मगर शरीर मे सुकुमारता थी। शीतल वायु के थपेडो से आपका शरीर कापने लगा। फिर भी उच्च उद्देश्य से दीक्षा धारण करने वाले बालक मुनिश्री जवाहरलालजी घबराये नही। सोचने लगे 'सयमी जीवन की यह पहली परीक्षा है। भविष्य किसने देखा है! कौन जाने अभी कितने और कैसे-कैसे कष्ट झेलने पडेगे ? ऐसे ही अवसर तो आत्मा को दृढ बनाते है। मुझे हर्षपूर्वक यह सब सहना चाहिए।'

नव-दीक्षित जानकर साथी मुनियो ने अपने वस्त्र उन्हे ओढा दिये। मगर आपने अपने कष्ट की शिकायत किसी से नही की। धीरे-धीरे आप भी अन्य मुनियो की भाति सहिष्णु बन गये और फिर सर्दी-गर्मी की आपको उतनी चिन्ता नही रही। इस प्रकार आप पहली परीक्षा मे उत्तीर्ण हुए।

अध्ययन और विहार

मुनिश्री जवाहरलालजी ने अपने गुरु श्री मगनलालजी महाराज से शास्त्रो का अध्ययन आरम्भ किया। आपकी बुद्धि अत्यन्त तीक्ष्ण थी अत आप शास्त्रीय विषय की गहराइ मे बहुत शीघ्र प्रवेश कर

जात थे। स्मरण शक्ति की तीव्रता के कारण आपने शास्त्रो की वहुत-सी गाथाए और पाठ कण्ठस्थ कर लिये। वुद्धि तीक्ष्ण और स्मरण शक्ति तीव्र थी ही, साथ मे एकनिष्ठा और विनयशीलता का भी सम्मिश्रण था। इन सव कारणो से आपका ज्ञान निरतर वढने लगा। सीखते समय प्रत्येक वात आप वडे ध्यान से सुनते, उस पर विचार करते और हृदयगम कर लेते। बडे साधुओ की सेवा करने मे सदैव तत्पर रहते। आपकी बुद्धि, एकाग्रता, और सेवा-शीलता आदि देखकर सभी साधु आप पर प्रसन्न रहते थे। मुनिश्री मगनलालजी महाराज तो यह सव गुण देखकर समझ चुके थे कि आप भविष्य मे, समाज मे सूर्य की भाति चमकेगे। अत वे बडी लगन के साथ आपको पढाते और सयम मे उत्तरोत्तर वृद्धि के लिए उपदेश देते रहते। गुरु के प्रति आपकी श्रद्धा-भक्ति भी उत्तरोत्तर वढती जाती थी।

मुनिश्री लीबडी से विहार करके दाहोद, झाबुआ, रभापुर और थादला होते हुए पटलावद पहुचे।

गुरु-वियोग और चित्त-विक्षेप

पटलावद पहुचने पर मुनिश्री मगनलालजी महाराज बीमार हो गए। उनकी बीमारी उत्तरोत्तर वढती ही चली गई। अन्त मे माघ कृष्णा द्वितीया को, आपकी दीक्षा के डेढ मास पश्चात् ही उनका स्वर्गवास हो गया।

लोकोत्तर पुरुषो का चित्त एक ओर वज्र से भी कठोर होता हे तो दूसरी ओर फूल से भी कोमल होता है। जो महापुरुष अपनी विपदाओ को कठोरतापूर्वक सहन करता चला जाता हे, वही दूसरो का साधारण-सा कष्ट देखकर मोम की तरह पिघल जाता है। नव दीक्षित मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज की कठोरता और कोमलता भी इसी किस्म की थी। गुरुजी के स्वर्गवास से आपके हृदय को तीव्र आघात पहुचा। माता, पिता और मामाजी की मृत्यु पर जिसने अनुपम धेर्य का परिचय दिया था वह गुरु की मृत्यु से विकल हो गया! डेढ महीने मे ही श्री मगनलालजी महाराज ने इन्हे अपनी ओर इतना आकृष्ट कर लिया था कि उनके वियोग का धक्का सहन करना कठिन हो गया। गुरु-विरह के कारण वह दिन-रात शोक मे डूबे रहते। किसी काम मे मन न लगता। प्राय एकान्त मे बैठकर कुछ सोचते रहते। इस चिन्ता का प्रभाव उनके मस्तिष्क पर वहुत बुरा पडा।

निरन्तर चिन्तित रहने से आप विक्षिप्त-से हो गये। दिन-रात गुरुजी का ध्यान बना रहता। कभी सोचते-गुरु के अभाव मे मोक्षमार्ग का उपदेश कोन देगा ? शास्त्र कोन पढाएगा ? सयम मे दृढ कोन करेगा ? कभी इच्छा होती- अव सथारा करके जीवन का अत कर देना ही उचित है। गुरु के विना जीवन व्यर्थ है। कभी-कभी अकेले जगल मे जाकर तपस्या करने की सोचते। उन्हे किसी पर विश्वास नही होता था। अपने साथी साधुओ और दर्शनार्थ आने वाले श्रावको को भय-दृष्टि से देखा करते। इतना सव होने पर भी इस बात का बडा ध्यान रहता कि कही सयम मे कोई दोष न लग जाय।

मुनि की कठोर-चर्या का पालन करते हुए इस अवस्था मे इन्हे सभालना वहुत कठिन कार्य था। फिर भी तपस्वी मुनिश्री मोतीलालजी महाराज ने हिम्मत न छोडी। वे आपको अच्छी तरह सभालते, सान्त्वना देते और हर समय आपका ध्यान रखते। चित्त-विक्षेप का समाचार सुनकर वावाजी आपको लेन आये। किन्तु मुनिश्री मोतीलालजी महाराज ने उन्हे समझा दिया-अशुभ कर्मो के उदय से ऐसा हो

रहा है। उदय मे आने वाले कर्म भोगने ही पडते है। थादला ले जाने से ही कर्म नही छूट जायगे। अतएव इन्हे यही रहने दो। हम इन्हे पूरी तरह सभालने का यत्न कर रहे है और करेगे।

उन दिनो श्री जवाहरलालजी महाराज ने एक पद बना रखा था। उसे वे ऊचे स्वर से पढने लगते और पढते-पढते उसमे लीन हो जाते। वह पद यह था-

अरिहत देव नेडे।
जीने तीन भुवन में कुण छेडे॥

अर्थात् समस्त आतरिक शत्रुओ को नष्ट कर डालने वाले-अरिहत देव जिसके नजदीक मौजूद है-जिसकी अन्तरात्मा मे विराजमान है- उसे तीन लोक मे कौन छेड सकता है ?

यह पद उस समय आपका रक्षा-मत्र बन गया। यह पद बोलते-बोलते आप समस्त बाते भूल जाते। ससार की सुध-बुध न रहती। इससे उन्हे शान्ति मिलती। इस अवस्था मे आपको जो अनुभव हुआ वह जीवन-व्यापी हो गया। आपने अपने प्रवचनो मे भगवान् के नाम-स्मरण की महिमा बडे ही ओजपूर्ण शब्दो मे प्रकट की है। एक उद्धरण लीजिए-

महापुरुषो के जीवन मे नाम-स्मरण का स्थान बहुत ऊचा रहा है। जिस समय वे सासारिक उलझनो से ऊब जाते है, उनका चित्त अशान्त और उद्विग्न हो जाता है, उस समय भगवान् का नाम ही उन्हे सान्त्वना देता है। भयकर विपत्तियो के उपस्थित होने पर भगवन्-नाम ही उन्हे धैर्य बधाता है और किकर्त्तव्यविमूढ हो जाने पर मार्ग प्रदर्शन करता है। नाम-स्मरण अपूर्व शक्ति का स्रोत है। जब-जब आत्मा निर्बल बनती है तो नाम-स्मरण उसमे नवीन शक्ति फूक देता है। नाम-स्मरण मे इतना बल, इतना रस और इतना पकाश कहा से आया ? इस प्रश्न का उत्तर अनुभवगम्य है। वह युक्ति और शब्दो की पहुच से परे है। फिर भी इतना कहा जा सकता है कि आत्मा मे अनन्त शक्तिया विद्यमान हे। अभी वे सभी अविकसित अवस्था मे पडी हुई है। आत्मा मे अनन्त ज्ञान है, अनन्त सुख है, अनन्त वीर्य हे। जिस समय मनुष्य 'सिद्धोऽह शुद्धोऽह अनन्त ज्ञानादिगुणसमृद्धोऽहम्' का तत्त्व समझकर, भगवान् मे तन्मयता स्थापित करके उनके नाम का स्मरण करने लगता है उस समय उसे अपने मे छिपी हुई शक्तियो का आभास होने लगता है। यह आभास ज्यो-ज्यो निर्मल होता जाता है त्यो-त्यो परम आनन्द का अनुभव बढता जाता है। भगवान् का स्मरण आत्मविकास को आमत्रण देता है। नाम-स्मरण आत्मिक शक्तियो का उद्बोधन है, क्योकि पूर्ण विकसित आत्मा ही भगवान् है।

जीवन के प्रभात से लेकर जीवन की सध्या तक मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज मे नामस्मरण की लगन वृद्धिगत होती रही हे। वडे सेवेरे उठकर ईश्वर का ध्यान करना आपका नित्य-कर्म था। दैनिक प्रवचन प्रारम्भ करने से पहले आप जिस श्रद्धा, भक्ति और तन्मयता से प्रार्थना किया करते थे, उसे देखने वाले ही जान सकते है। उस समय आप भक्ति-रस मे डूब जाते थे। उस समय की आपकी मुद्रा आज भी दर्शको के सामने सजीव हो उठती है। प्रार्थना करते-करते आप सूरदास का निर्वल के वल राम वाला पसिद्ध भजन गाया करते। उस समय ऐसा मालूम होता कि आप अपना सारा वल, सारा ज्ञान सारा सुख, ईश्वर के चरणो मे समपित कर चुके है। स्वय निर्वल हो गए। अपना अस्तित्व मिटा दिया। ईश्वर के साथ अभेद होते ही ईश्वरीय वल आत्मा मे आ गया। ईश्वर के अस्तित्व मे लीन हो गये।

आत्मा मे परमात्मा का वल आ जाने पर असफलता दूर हो जाती हे। उस समय ईश्वरीय शक्ति मनोवाछित कार्य पूरा कर देती हे। इसी समय भक्त लोग भोतिक शक्तियो का विश्वास छोडकर आध्यात्मिक शक्तियो का आह्वान करते हे। उस समय अज्ञान का परदा हटते ही उन्हे जो आनन्द होता हे, जो शक्ति प्राप्त होती हे तथा ज्ञान की जो ज्योति प्रकट होती हे, उसके सामने ससार की समस्त सम्पत्तिया तुच्छ हे, नगण्य हे, नाचीज हे। इसी अलोकिक आनन्द का अनुभव करने के लिए अनेक मनुष्य राज-वेभव को ठुकराकर अकिचनता धारण करते हे। हमारे चरितनायक मे भी उस आनन्द की दिव्य धारा का स्रोत बहता था। यह बात उनकी भावमय मुद्रा से, उनकी मस्ती से ओर उनकी भक्तिमयी वाणी से सहज ही प्रकट हो आती थी।

पटलावद से विहार करके मुनिश्री अनेक गावो मे होते हुए राजगढ पधारे। वहा एक वार आपने जगल मे जाकर तपस्या करने का निश्चय कर लिया, किन्तु मुनिश्री मोतीलालजी महाराज के समझाने से मान गए थे। राजगढ से आप धार पधार गये। विहार मे आप आत्म-चितन मे लीन रहते थे। बडे साधु खडे होने को कहते तो खडे हो जाते, चलने को कहते तो चल पडते। न आपको शास्त्रो का वोझ मालूम होता, न रास्ते की थकावट ही मालूम होती। कभी-कभी आप जगल मे चले जाने को उद्यत होते मगर उस अवस्था मे भी सयम का इतना भान था कि अगर कोई मुनि आपका ओघा ले लेता तो वहीं पर खडे रह जाते। विना ओघा एक कदम भी आगे न वढाते। सयम के अतरग तक उतरे हुए सस्कारो का ही यह प्रभाव था।

धार के प्रसिद्ध श्रावक पन्नालालजी ने वेद्यो की आयुर्वेद विधि से इलाज करवाया मगर कोई इलाज कारगर न हुआ। अन्त मे वे एक डाक्टर को लाये। सिर के पिछले भाग मे प्लास्टर लगाने के लिए वाल हटाना आवश्यक था। वाल हटाने के लिए नाई बुलाया गया। मगर नाई से वाल कटवाना साधु के आचार से विरुद्ध हे, यह वात उस समय भी आपके ध्यान मे थी। उन्होने नाई से वाल नही कटवाये। मगर डाक्टर का कहना था कि बाल साफ होने चाहिए। अतएव उन्होने अपने ही हाथ से लोंच करना आरभ कर दिया और विना किसी कठिनाई के सभी वाल उखाड डाले। आपके सिर पर उस समय वहुत घने घुघराले वाल थे। दीक्षा के वाद लोच करने का यह पहला ही अवसर था। फिर भी वडे धेर्य के साथ, बिना किसी हिचकिचाहट के उन्होने लोच कर डाला। सयम-पालन की उनकी लालसा वहुत गहरी ओर प्रवल थी। सयम के लिए वडे से-वडा कष्ट उनके लिए नगण्य था। उनकी यह स्थिरता ओर सयम सम्वन्धी तीव्र श्रद्धा देखकर वहा उपस्थित जनता चकित रह गई। उस समय मुनिश्री के पास डाक्टर एम भाऊ और डाक्टर गोपाल भाऊ उपस्थित थे।

केश-लुचन हो जाने के पश्चात् डाक्टर ने नियत स्थान पर प्लास्टर लगाया। उस समय श्री जवाहरलालजी महाराज स्थिर ओर शात वेठे रहे। सिर मे से लगभग तीन सेर पानी निकला। वे वेहोश हो गए। धीरे-धीरे होश आ गया, मगर अशान्ति इतनी बढ गई कि एक भी शव्द वोलने की हिम्मत न रही- धीरे-धीरे आपकी कमजोरी हट गई ओर आप स्वस्थ हो गए। मानसिक अवस्था भी ठीक हो गई। मानसिक ओर शारीरिक अस्वस्थता दूर होते देखकर मुनियो ओर श्रावको को अत्यन्त प्रसन्नता हुई।

मुनिश्री के इस अस्वास्थ्य का कारण क्या था, यह आपने स्वय ही वाद मे प्रकट किया है। राजकोट क एक प्रवचन मे आपने कहा था-'आज वालका के मस्तिष्क मे भय के सस्कार वहुत डाले जाते हे।

इससे कितनी हानि होती है, यह बात मै जानता हू। मेरी माता मुझे दो वर्ष का छोडकर चली गई थी और मेरे पिता पाच वर्ष का छोडकर चले गये थे। मेरा पालन-पोषण मेरे मामा के घर हुआ था। वहा से थोडी दूर एक मकान था, जो बहुत नीचा होने के कारण अधकारमय रहता था। स्त्रिया कहा करती- इस मकान मे भूत रहता है। मै यह बात सुनकर डरता था और इस कारण रात के समय दुकान से अपने मामा के मकान जाना होता तो उस मकान के पास से न जाकर लम्बा चक्कर काटकर दूसरे रास्ते से जाता। मेरे मस्तिष्क मे भूत के जो सस्कार पड गये थे, वे दीक्षा लेने के बाद भी समूल नष्ट नही हुए। दीक्षा लेने के बाद मेरे दीक्षा-गुरु का डेढ मास बाद ही स्वर्गवास हो गया। उस समय मै लगभग पाच महीना विक्षिप्त-सा रहा था। मेरे मस्तक मे भूत के जो सस्कार पडे थे उनके कारण उस समय मुझे ऐसा लगता था कि कोई प्रत्यक्ष ही मुझ पर जत्र-मत्र कर रहा है। मगर जब मै स्वस्थ हुआ तो मालूम हुआ कि वास्तव मे वह सब मेरा भ्रम था, और कुछ भी नही।'

महाभाग मोतीलालजी महाराज

मनुष्य-समाज मे आज यदि सस्कारिता है, नैतिकता है, धार्मिकता है, तो उसका सारा श्रेय विभिन्न युगो मे उत्पन्न होने वाले उन महापुरुषो को है, जिन्होने मनुष्य जाति के उत्थान के लिए अपना जीवन अर्पित किया है। अपने जीवन-व्यवहार द्वारा, अपने उपदेशो द्वारा, साहित्य द्वारा जिन्होने मनुष्य के समक्ष महान् आदर्श उपस्थित किया है, मानवीय भावनाओ का धरातल ऊचा उठाया है और मनुष्य जाति को जागृत एव शिक्षित बनाकर ससार का महान् उपकार किया है, उन महापुरुषो का जीवन-इतिहास ही सभ्यता का इतिहास है। ससार अनादि काल से ऐसे महापुरुषो की पूजा करता चला आया है।

महापुरुषो ने मानव-सस्कृति का निर्माण किया है, मगर महापुरुष सीधे आसमान से उतरकर नही आते। उनका निर्माण भी इसी ससार मे होता है। परिस्थितियो के अतिरिक्त अनेक सबधित जन भी ऐसे होते है जो महापुरुषो के निमार्ण मे प्रत्यक्ष-परोक्ष रूप मे सहायक होते है। अगर मनुष्य-समाज महापुरुषो का ऋणी है तो उन विशिष्ट व्यक्तियो का भी ऋणी है जिन्होने किसी को महापुरुष के दर्जे पर पहुचाने के लिए कोई कसर नही रखी। महाभाग मुनिश्री मोतीलालजी महाराज ऐसी ही विभूतियो मे से थे। प मोतीलालजी नेहरू की छत्रच्छाया न मिलती तो प जवाहरलालजी नेहरु इस रूप मे हमे प्राप्त होते या नही, कौन कह सकता है ? इसी प्रकार मुनिश्री मोतीलालजी महाराज की छत्रच्छाया के अभाव मे मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज का इस रूप मे प्राप्त होना भी सदिग्ध ही था। प मोतीलालजी नेहरू की सार-सभाल के फल-स्वरूप प जवाहरलालजी राष्ट्रीय क्षेत्र मे तेजस्वी सूर्य की भाति चमक उठे। इसी प्रकार मुनिश्री मोतीलालजी महाराज की निरन्तर की सार-सभाल से मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज धार्मिक क्षेत्र मे सूर्य की भाति चमके। मुनिश्री जवाहरलालजी और प जवाहरलाल नेहरु मे कितना सादृश है, यह बताने का यहा अवकाश नही है। राणपुर (काठियावाड) के प्रसिद्ध पत्र 'फूलछाब' के सम्पादक और अग्रगण्य गुजराती लेखक श्री मेघाणी ने आपके प्रचवन-सग्रह की समालोचना करते हुए लिखा है- हिन्दुस्तान मे जवाहरलाल एक नही, दो है। एक राष्ट्रनायक है, दूसरा धर्म-नायक है। हम इस वाक्य मे इतना और जोड देना चाहते है कि भारत मे जवाहरलालजी के सरक्षक मोतीलालजी भी दो थे- एक प मोतीलाल नेहरू और दूसरे तपस्वी मुनिश्री मोतीलालजी महाराज। हम यहा विस्तृत तुलना मे नही पडना चाहते। किंतु मुनिश्री मोतीलालजी महाराज के सबध मे कतिपय बातो का उल्लेख करना आवश्यक प्रतीत होता है।

मुनिश्री जवाहरलालजी का निर्माण करने मे श्री मोतीलालजी महाराज का वहुत वडा हाथ रहा हे। उन्होने वडी-वडी मुसीबते झेलकर, तरह-तरह की कठिनाइया उठाकर मुनिश्री का सरक्षण किया है। चित्त-विक्षेप की अवस्था मे उन्होने जिस लगन के साथ मुनिश्री की सेवा-सुश्रूषा की, उसकी उपमा मिलना भी सरल नही है। समाज जैसे मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज का ऋणी हे, उसी प्रकार मोतीलालजी महाराज का भी हे। आपके सस्मरण हमारे चरितनायक के सस्मरणो के साथ सदा-सर्वदा जीवित रहेगे।

तपस्वी मुनिश्री मोतीलालजी महाराज का जन्म सिगोली (मेवाड) मे हुआ था। आपके पिता का नाम उदयचदजी कटारिया और माता का नाम विरदीवाई था। अठारह वर्ष की आयु मे जीवन के उद्यान मे नवयोवन के बसत का आगमन होता है। ससार की कामना रूप कोकिलाए अपनी कुहुक से मनुष्य को मदोन्मत्त बना देती है। मन रूपी भ्रमर रस-लोलुप बनकर अधखिली कलियो के चरण चूमने को उद्यत रहता है। जीवन-उद्यान मे सरसता और अनुराग का साम्राज्य व्याप्त हो जाता हे, उस समय विरक्ति-भोगो के प्रति वैराग्य होना सहज बात नही हे। प्रबल प्रकृति से युद्ध करके उसे पराजित किये विना वैराग्य का रग ऐसे समय नही चढ सकता। मुनिश्री मोतीलालजी ऐसे ही प्रकृति-विजयी थे। उन्होने अठारह वर्ष की आयु मे ससार का त्याग किया और मुनिश्री राजमलजी महाराज के निकट मुनिदीक्षा अगीकार कर ली। यह समय जीवन का ही बसन्त नही था वरन् प्रकृति का बसत भी था। वि स १९३२ के माघ शुक्लपक्ष मे (बसत पचमी के लगभग) आपकी दीक्षा हुई और वि स १९८३, फाल्गुन कृष्णा एकादशी के दिन जलगाव मे आपने स्वर्गारोहण किया।

आप उच्च-कोटि के तपस्वी साधु थे। आपकी तपस्या प्राय चलती रहती थी। एक से अडतालीस (सैतालीस को छोडकर) तक का थोक किया था और इसके अतिरिक्त मासखमण आदि अनेक तप किये थे।

आप जेसे उच्चकोटि के तपस्वी थे वेसे ही उत्कृष्ट सेवा-भावी भी थे। आपकी सेवापरायणता साधुओ के सामने एक आदर्श उपस्थित करती है। मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज का चित्त जव विक्षिप्त हो गया था तब वावाजी उन्हे लेने आये, मगर आपने सेवा का भार अपने सिर ले लिया था ओर वावाजी को उनकी समुचित सेवा होते देखकर सतोप भी हो गया था। अत वे लोट गये। चित-विक्षेप जव कुछ अधिक वढ गया तव श्रावको ने मुनिश्री मोतीलालजी महाराज से निवेदन किया- 'आप अकेले हे। मुनिश्री की सेवा करने मे आपको वेहद कष्ट उठाना पडता हे। अत आप इन्हे हमे सोप दीजिए, हम सेवा करेगे और स्वस्थ होने पर आपकी सेवा मे उपस्थित कर देगे।' श्रावको की प्रार्थना के उत्तर मे श्री मोतीलालजी महाराज ने कहा-'जव तक मेरे तन मे प्राण है, तब तक इनकी सेवा करता रहूगा।'

इन्ही दिनो श्री जवाहरलालजी महाराज एकवार नग्न हो गए। मोतीलालजी महाराज ने उन्हे चोलपट पहनाना चाहा। चोलपट्ट पहनाते समय उन्होने आपके पेट मे काट खाया। काटने से घाव हो गया। फिर भी धन्य मुनि मोतीलालजी महाराज! आप जरा भी हताश न हुए। आप अकेले ही अपना घाव सभालते ओर जवाहरलालजी महाराज को भी सभालते। साधु-मर्यादा के अनुसार देनिक कृत्य भी करते।

गुरु-शिष्य की सकीर्ण मनोभावना के कारण, रतलाम मे तीस साधु मोजूद रहते हुए भी मुनिश्री मोतीलालजी महाराज के समीप कोई साधु न आया। इस सकीर्णता को नष्ट करने के उद्देश्य से ही आगे चलकर महाराज श्री जवाहरलालजी ने आचार्य-पद पाप्त होने पर यह नियम बनाया कि समस्त शिष्य एक ही गुरु (आचार्य) के हो। धर्मक्षेत्र का यह साम्यवाद इस अवस्था के कटु अनुभवो का परिणाम था। कई कारणो से यह नियम स्थायी न रह सका और उसे परिवर्त्तित करना पडा। अस्तु।

वास्तव मे मुनिश्री मोतीलालजी महाराज की सेवा-परायणता के फलस्वरूप ही मुनिश्री की रक्षा हो सकी। आगे चलकर आपने सदैव मुनिश्री के साथ ही चातुर्मास किया। सिर्फ एक अतिम चातुर्मास साथ-साथ न हो सका। अतिम समय मे मुनिश्री मोतीलालजी महाराज की भी खूब सेवा हुई। आपके सुशिष्य तत्कालीन मुनि और वर्त्तमानकालीन आचार्यश्री गणेशीलालजी महाराज आदि साधु सदैव आपकी सेवा मे तत्पर रहे।

हमारे चरितनायक मुनिश्री मोतीलालजी महाराज के असीम उपकारो को हृदयग्राही शब्दो मे व्यक्त किया करते थे। मुनिश्री का स्मरण आते ही आपका हृदय गद्‌गद् हो उठता था। अतिम समय तक मुनिश्री के प्रति वे कृतज्ञ रहे। आप अकसर कहा करते थे-'तपस्वी मुनिश्री मोतीलालजी महाराज के मेरे ऊपर असीम उपकार है।'

प्रथम चातुर्मास

चातुर्मास का काल समीप आ गया था। विहार करके चातुर्मास के योग्य दूसरे स्थान पर पहुचना कठिन था। अतएव धार मे ही चातुर्मास करने का निश्चय हुआ। मुनिश्री मे अब कुछ शक्ति आ गई थी। मस्तिष्क भी स्वस्थ और शान्त था। अतएव आपने अध्ययन आरम्भ कर दिया। शास्त्रो का पाठ कठस्थ करने लगे। मगर आपका उर्वर मस्तिष्क इतने से ही सतुष्ट न हुआ। वह कोई ऐसा क्षेत्र खोज रहा था जिसमे कल्पना-शक्ति को पूरा अवकाश हो और साथ ही गम्भीर विचार की भी आवश्यकता हो।

वर्त्तमान धार प्राचीन काल की धारा नगरी है, जिसमे राजा भोज जैसे राज कवि हुए है। भोज के समय मे वहा सरस्वती का वास था। साधारण श्रेणी के लोग भी सुन्दर-से-सुन्दर कविता करते थे। ऐसे क्षेत्र मे पहुचकर मुनिश्री का कविताकला की ओर आकृष्ट होना स्वाभाविक था। आप कविता-रचना की ओर आकृष्ट हुए। उस समय आपने जम्बूस्वामी तथा अन्य महापुरुषो की स्तुति मे कई कविताए रची । इसी मे आपको आनन्द प्राप्त होने लगा। नीतिकार का कथन है-

काव्य-शास्त्र विनोदेन कालो गच्छति धीमताम्।

अर्थात्-बुद्धिमान पुरुष काव्य-शास्त्र या काव्य और शास्त्र के विनोद मे ही अपना समय व्यतीत करते है।

हमारे चरितनायक पर यह उक्ति पूरी चरितार्थ होती थी। उधर आप धर्म-शास्त्र का अध्ययन करते रहते थे ओर इधर भाषा-काव्य का निर्माण और आस्वादन भी करते थे। अल्पकाल मे ही आप सुन्दर रचनाए करने मे सफल हुए।

काव्य-शास्त्र के अनेक आचार्य कविता के लिए शक्ति, निपुणता, अभ्यास, लौकिक और शास्त्रीय बातो का निरीक्षण आदि की आवश्यकता बतलाते है। मगर किसी-किसी आचार्य के मत से

प्रतिभा ही काव्य-रचना का प्रधान साधन हे। मुनिश्री मे उस समय प्रतिभा ही सवसे वडी पूजी थी। उसी के आधार पर आप मधुर ओर सरस कविता करने मे समर्थ हो सके।

मुनिश्री मे प्रतिभा का वेभव जन्म जात था। इस प्रतिभा के आधार पर ही आप उस समय भी तत्काल कविता रच डालते थे। कभी-कभी व्याख्यान मे वेठे-वेठे ही कविता रच डालते और वही श्रोताओ को सुनाकर आनन्द-विभोर कर देते थे। आपकी समस्त रचनाए प्राय भक्ति-रस-मयी है। किन्तु वीच-वीच मे अन्यान्य रसो का भी उनमे वडा ही सुन्दर सन्निवेश है। पुस्तकीय अध्ययन अधिक न होने पर भी प्रकृति की पाठशाला मे आपने गम्भीर अध्ययन किया था।

वास्तव मे देखा जाय तो कविता का सम्वन्ध बाह्य वस्तुओ के साथ उतना नही हे जितना कवि के हृदय की अनुभृति के साथ। हृदय की अनुभूति बढकर जब सगीतमय होकर बाहर निकलने लगती हे तो उसका नाम कविता हो जाता हे। मुनिश्री जवाहरलालजी मे अनुभूति की प्रबलता थी। महापुरुपो मे इसका होना आवश्यक भी हे। कवि, धर्माचार्य,राष्ट्र-नेता, समाज-सुधारक, दार्शनिक, साहित्यकार आदि सभी मे यही अनुभूति काम करती है और भिन्न-भिन्न रूप धारण करके प्रकट होती है। कवि मे यह कविता वन जाती है, धर्माचार्य मे सयम, त्याग और तपस्या का रूप ग्रहण करती हे, राष्ट्र-नेता मे वाणी तथा वलिदान के रूप मे प्रकट होती हे। दार्शनिक मे वह गभीरता का रूप धारण करती हे। और साहित्यकार मे कला के उद्‌गम का स्रोत वन जाती हे। मगर हमारे चरितनायक मे वह कविता सयम, वाणी आदि अनेक रूपो मे प्रकट हुई हे। उनके प्रवचन तीव्र अनुभूति के ज्वलत प्रमाण है।

उग्र विहार

जीवन-निर्माण मे यात्रा का स्थान वहुत महत्त्वपूर्ण हे। यह यात्रा शिक्षा का प्रधान अग मानी गई है। केवल लम्वी-लम्वी और साहस-पूर्ण यात्राओ के कारण ही वहुत-से व्यक्तियो का नाम इतिहास मे अमर हे। उनकी यात्राओ का वर्णन साहित्य की अमूल्य सम्पत्ति हे।

भारतीय सस्कृति मे यात्रा को आध्यात्मिक पवित्रता दी गई हे। उसमे भी श्रमणसस्कृति मे इसे ओर भी अधिक महत्त्व प्राप्त है। उग्र विहारी होना श्रमण का कर्त्तव्य वतलाया गया हे। चातुर्मास के अतिरिक्त किसी भी स्थान पर एक मास से अधिक ठहरना साधु के लिए निपिद्ध है। विशेपावश्यक भाष्य मे लिखा हे कि जो साधु भविष्य मे आचार्य वनने वाला हो उसे भिन्न-भिन्न प्रान्तो मे भ्रमण करना चाहिए।

यात्रा का सवसे वडा लाभ आध्यात्मिक विकास है। एक स्थान से दूसरे स्थान तक पेदल भ्रमण करने मे मार्ग की अनेक प्रकार की परिस्थितिया सामने आती हे। कही पहाड आते हे, कही कल-कल करती हुई नदिया प्रवाहित होती है। कही हरे-भरे खेत और कही वीहड जगल। कही सघन वृक्षावली और कही विशाल एव रूखा रेगिस्तान। कही श्रद्धा-भक्ति के भार से झुके हुए भद्र ग्रामीण स्वागत के लिए उद्यत मिलते है तो कही क्रूरकर्मा डाकू लूटने के लिए तयार होते हे। कही सिह, व्याघ्र आदि हिंसक प्राणियो का सामना करना पडता है तो कही क्रीडा करते हुए भोले मृग-शिशु दृष्टिगोचर होते हे। यह सव देखने से प्रकृति का ज्ञान होता है और समभाव रखने का अभ्यास वढता हे। हमारे चरितनायक पेदल भ्रमण करते हुए प्रकृति का वडी वारीक नजर से अवलोकन करते थे और उससे मिलने वाली

शिक्षा का विचार किया करते थे। आपका यह कथन कि 'प्रकृति की पाठशाला मे से जो सस्कारी ज्ञान मिलता है। वह कॉलेज या हाईस्कूल मे मिलना कठिन है।' आपके पकृति निरीक्षण का परिणाम था। एक झरने का निरीक्षण करके आपकी कल्पना कहा तक दौडती है, यह जानने योग्य है। आप कहते है -

'जगल मे झर्-झर् ध्वनि करके बहते झरने को देखकर महापुरुष क्या विचार करते है ? वे विचारते है- जब मै इस झरने के पास नही आया था तब भी झरना झर्-झर् आवाज कर रहा था। अब मै इसके पास आया हूँ तब भी यह झर्-झर् आवाज कर रहा है। जब मै यहा से चला जाऊगा तब भी इसकी यह ध्वनि बद न होगी। चाहे कोई राजा आवे या रक आवे, कोई इसकी प्रशसा करे, या निन्दा करे मगर झरना सदैव एक ही रूप मे अपनी आवाज जारी रखता है- न उसे कम करता है न ज्यादा। वह अपनी आवाज मे तनिक भी परिवर्त्तन नही करता। इस प्रकार जैसे यह झरना अपना धर्म नही बदलता वैसे ही अगर मै भी अपने धर्म को न बदलू तो मेरा जीवन सार्थक हो जाय। इस झरने मे राग-द्वेष नही है। जिस पुरुष मे झरने का यह गुण विद्यमान है वह वास्तव मे महापुरुष है।

इसके अतिरिक्त झरने मे एक धारा से बहने का भी गुण है। यह जिस धारा से बह रहा है उसी धारा से बहता रहता है। मगर जब हम अपने जीवन की धारा की ओर दृष्टिपात करते है तो देखते है कि हमारे जीवन की धारा थोडी-थोडी देर मे पलटती रहती है। हमारे जीवन की एक निश्चित धारा ही नही है। धन्य है यह निर्झर जो निरन्तर एक ही धार से बहता रहता है।

झरने मे तीसरा गुण भी है, जो खास तौर से हमारे लिए उपादेय है। यह झरना अपना समस्त जीवन (जल) किसी बडी नदी को सौप देता है और उसके साथ होकर समुद्र मे विलीन हो जाता है। वहा पहुचकर वह अपना नाम भी शेष नही रहने देता। इसी प्रकार मै भी किसी महापुरुष की सगति से परमात्मा मे मिल जाऊ तो क्या कहना है।'

'जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि' इस कहावत के अनुसार एक प्राकृतिक पदार्थ को देखकर एक मनुष्य जो शिक्षा लेता है, दूसरा उससे विपरीत भी ले सकता है। हमारे चरितनायक ने झरना देखकर समताभाव, धर्म-दृढता और परमात्मा मे आत्मार्पण की जो महान् शिक्षा ली है वह उनके जीवन की पवित्रता का परिचय देता है। प्रकृति के विषय मे आपके विचार बहुत गभीर थे। आपके यह शब्द ध्यान देने योग्य है -

'तुम समझे होओगे कि गूगी प्रकृति तुम्हारी क्या सहायता कर सकती है ? मगर यह तुम्हारा भ्रम है। प्रकृति मौन सहायता पहुचाती रहती है।'

परन्तु प्रकृति के पर्यवेक्षण का अनुपम आनन्द पैदल चलने वालो को ही नसीब होता है। रेल, मोटर या वायुयान की छाती पर सवार होने वाले और गोली की तरह सरसराहट करके एक जगह से दूसरी जगह जा पहुचने वाले लोग इस आनद से प्राय वचित ही रहते है। मार्ग के दृश्य उन्हे भागते हुए स्वप्न के समान दृष्टिगोचर होते है। उनके साथ हृदय का कोई सम्बन्ध स्थापित नही होने पाता।

पैदल यात्रा करने वाला पुरुष रास्ते के ग्रामो और वन-खडो के निवासियो के परिचय मे आता है। उनसे सभाषण करके प्रेम-सबध स्थापित करता है। यहा तक कि जगल के हिसक प्राणियो के साथ भी मैत्री जोड लेता है। वह धीरे-धीरे विश्व-प्रेम की ओर अग्रसर होता है।

मार्ग की विषम परिस्थितियो का धैयपूर्वक सामना करने से आत्म-वल की वृद्धि होती है।

पैदल यात्रा से ज्ञान-वृद्धि मे भी वहुत सहायता मिलती हे। मानव-स्वभाव का परिचय प्राप्त करन के लिए पैदल भ्रमण अत्यन्त उपयोगी है। विभिन्न भाषाए, वोलिया ओर सस्कृतिया समझने के लिए भी इसकी आवश्यकता हे।

प्रचार की दृष्टि से तो पेदल भ्रमण अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ हे। महावीर और वुद्ध जेसे ससार क महान् नेताओं ने भी पेदल भ्रमण करके ही जनता मे धर्म-जागृति उत्पन्न की, क्रान्ति का मन्त्र फूका और युग-युग से चली आई रूढियो के स्थान पर वास्तविक कर्त्तव्य की स्थापना की थी। इस युग के आदर्श नेता महात्मा गाधी ने भी डाडी के लिए पैदल प्रयाण करके जनता मे एक अद्‌भुत जोश पेदा कर दिया था।

चारित्र-रक्षा की दृष्टि से भी साधु के लिए एक नियत स्थान पर न टिककर पेदल भ्रमण करना आवश्यक हे। अधिक समय तक एक स्थान पर टिके रहने से मोह की जागृति होने का भय रहता है। इस दृष्टि से जैन शास्त्रो मे साधु के लिए नवकल्पी विहार आवश्यक माना गया है।

धार मे चातुर्मास समाप्त करके मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने उग्र विहार आरम्भ किया। आपने आपने साधु-जीवनकाल मे मारवाड, मेवाड, मालवा, मध्यभारत, गुजरात, काठियावाड तथा महाराष्ट्र को पवित्र किया है। हरियाना, देहली ओर सयुक्त-प्रान्त मे भी आपकी उपदेश-गगा प्रवाहित हो चुकी है। जेन साधु की कठोर मर्यादाओ का पालन करते हुए इतना विस्तृत विहार करना आप सरीखे धर्मवीरो का ही काम है। इसी से आपकी साहसिकता ओर कष्टसहिष्णुता का अनुमान किया जा सकता हे।

धार से आप इन्दोर पधारे। वहा एक मास ठहकर विहार करते हुए उज्जेन पधारे। उज्जेन मे आपने मालवी भाषा मे थोडी देर तक व्याख्यान देना प्रारभ कर दिया। इस प्रकार राजा भोज की राजधानी धारा नगरी मे आपकी कविता धारा का उद्‌गम हुआ ओर परम-प्रतापी महाराजा विक्रमादित्य की राजधानी उज्जयिनी मे आपकी जयिनी व्याख्यान-धारा प्रवाहित हुई।

उज्जैन मे पन्द्रह-वीस दिन ठहरकर आप वडनगर, वदनावर होते हुए रतलाम पधार गए।

आचार्य का आशीर्वाद

रतलाम मे उस समय श्री-श्री १००८ पृन्य श्री उदयसागरजी महाराज विराजमान थे। यह आचार्य श्री प प्र पृन्य श्री हुक्मीचन्द्रजी महाराज के सम्प्रदाय के तीसरे पद पर सुशोभित थे। मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने उनके दर्शन किये और अपने को भाग्यशाली समझा। पृज्यश्री ने उनकी कविताए, व्याख्यानशक्ति तथा प्रतिभा देखकर वहुत सतोष और हर्ष प्रकट किया। उन्होने यह भी आशा प्रकट की कि मुनिश्री भविष्य मे उत्कृष्ट साधु होग और जिन शासन का दिपायगे। पृज्यश्री की यह आशा मुनिश्री के लिए आशीर्वाद वन गई।

पृज्यश्री ने हमारे चरितनायक स जो सुनहरी आशा वाधी थी, वह आशा आशीर्वाद ही नही वनी वरन मुनिश्री क लिए एक वडी जिम्मेवारी भी वन गई। मुनिश्री ने यह जिम्मेवारी पूरी तरह अदा

की और पूज्यश्री की आशा पूर्णत सफल कर दिखाई। आप निरन्तर प्रगति करते गये और कुछ दिनो मे चमक उठे।

पूज्यश्री ने आपको अपने पास रखने की इच्छा प्रकट की मगर कतिपय कारणो से ऐसा सुयोग न मिला। आपकी वक्तृत्व-शक्ति उस समय भी आरम्भ मे ही इतनी विकसित हो चुकी थी कि पूज्यश्री भी उससे प्रभावित हो गये और शास्त्रज्ञ एव स्थविर मुनियो की मौजूदगी मे भी आपको ही व्याख्यान देने के लिए आमन्त्रित करते।

कुछ दिन रतलाम ठहरकर आप जावरा पधारे। वहा मुनिश्री रत्नचन्द्रजी महाराज विराजमान थे। उनके दर्शन करके आप जावद पहुचे। जावद मे मुनिश्री (बडे) चौथमलजी महाराज विराजते थे। जी जवाहरलालजी महाराज उनसे विभिन्न विषयो पर प्रश्नोत्तर किया करते और उन्हे अपनी कविताए सुनाया करते। आपकी तर्क-शक्ति और प्रतिभा देखकर भावी आचार्य मुनिश्री चौथमलजी महाराज ने श्री घासीलालजी महाराज से कहा था- 'यह बालक बडा प्रतिभाशाली और होनहार है। आपके पास इसे पढाने की सुविधा नही है। अगर आपको सुविधा हो तो इसे रामपुरा (होल्कर स्टेट) ले जाइये। वहा शास्त्रो के अच्छे ज्ञाता श्रावक केशरीमलजी रहते है। उनसे इसे शास्त्रो का अभ्यास कराइये।'

द्वितीय चातुर्मास

मुनिश्री घासीरामजी महाराज को श्री चौथमलजी महाराज का परामर्श उचित प्रतीत हुआ। उन्होने पाच ठाणो से रामपुरा की ओर विहार किया। उस समय आप निम्नलिखित पाच साधु थे -

१- मुनिश्री घासीरामजी महाराज
२- मुनिश्री बदीचद जी महाराज
३- मुनिश्री मोतीलालजी महाराज
४- मुनिश्री देवीलालजी महाराज
५- मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज

रामपुरा पहुचकर श्री जवाहरलालजी महाराज ने शास्त्रज्ञ श्रावक श्री केसरीमलजी के पास आगमो का अध्ययन आरभ कर दिया। सवत् १९५० का चातुर्मास वही किया। अल्पकाल मे ही आपने दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, आचाराग, सूत्रकृताग और प्रश्नव्याकरण सूत्र अर्थ सहित पढ लिये। इसी चातुर्मास मे श्रावक-समाज मे आपकी ख्याति फैल गई। समय-समय पर आप अपने व्याख्यानो से भी श्रावक-समाज को प्रभावित करने लगे।

तृतीय चातुर्मास

उस समय मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज को व्याख्यान देने का साधारण अच्छा अभ्यास हो गया था। आपकी वाणी मे स्वाभाविक माधुर्य और ओज था। अब आप स्वतन्त्र रूप से व्याख्यान फरमाने लगे थे। आपका तीसरा चातुर्मास जावरा मे हुआ। वहा आप ही मुख्य रूप से दैनिक व्याख्यान देते थे। व्याख्यानो मे आपने नूतन शैली का भी समावेश करना आरभ कर दिया था। फिर भी प्राचीन शैली के रूढि-ग्रस्त वृद्ध और नवीन विचारो से ओत-प्रोत नवयुवक सभी आपके व्याख्यानो को समान रूप से पसद करते थे।

जावरा मे आपका उपदेश सुनने के लिए काफी भीड इकट्ठी हो जाती थी। जिस उपदेशक ने अभी तक प्रसिद्धि प्राप्त नही की थी, जिसने आगमो का तलस्पर्शी ज्ञान प्राप्त नही किया था ओर अभी तक उदीयमान उपदेशक ही था, उसने अपनी जन्म-जात प्रतिभा के प्रभाव से, अपनी आत्मा की गहराई से स्वत प्रस्फुरित होने वाली वाणी से तथा अल्पकालीन प्रकृति-पर्यवेक्षण से जनता को अपनी ओर आकर्षित कर लिया। उनका उपदेश सुनने के लिए लोग उत्सुक होने लगे।

पूर्वभव के सस्कार कहिये या ज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम एव उपादेय नाम-कर्म का तीव्र उदय कहिए, हमारे चरितनायक का विकास दिन दूना रात चौगुना होता गया।

चातुर्मास मे जावरा मे अमृत-वर्षा करके आपने मुनिश्री मोतीलालजी महाराज के साथ थादला की ओर प्रस्थान किया। मुनिश्री घासीरामजी महाराज वृद्धावस्था के कारण जावरा मे ही विराजमान रहे।

थादला आपकी जन्म भूमि थी। आप थादला की धूल मे खेले थे। वहा के अन्न-जल से वडे हुए थे। वहा के लोगो ने आपको शिशु के रूप मे, मातृ-हीन तथा पितृ-हीन बालक के रूप मे और फिर वस्त्र-विक्रेता के रूप मे देखा था। आज वही वालक नवीन रूप मे थादला मे उपस्थित हुआ। उसे कठोर सयमी ओर प्रभावशाली उपदेशक के रूप मे देखने की उत्कण्ठा किसे न हुई होगी ? थादला की जनता मुनिश्री को इस रूप मे पाकर निहाल हो गई। उसने मुनिश्री के गौरव को अपना ही गोरव समझा। आपकी वाणी सुनकर लोगो को रोमाच हो आया। थादला निवासी अपने आपको धन्य मानने लगे। कुछ दिन थादला ठहरकर आपने वहा से विहार कर दिया।

चौथा चातुर्मास

थादला से विहार करके मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज फिर जावरा पधारे। वहा से धार आदि अनेक ग्रामो ओर नगरो मे उपदेश की धारा वहाते हुए फिर थादला आये। वहा की जनता ने चातुर्मास समीप आता देख वही चातुर्मास करने का तीव्र आग्रह किया। अतएव स १९५२ का चातुर्मास आपने थादला मे ही किया। चातुर्मास मे आपके उपदेशो से ही वहुत धर्म-जागृति हुई। जनता के जीवन मे धर्म के सस्कार पडे।

मातृभूमि के विषय मे आपकी भावना बहुत उदार थी। आप भारतवर्ष को ही भारतीयो की जन्मभूमि कहा करते थे। प्रान्तीयता का सकीर्ण विचार आपको छू तक नही गया था। भारतवर्ष को लक्ष्य करके आपने कहा है-

आपने इसी भारत-भूमि पर जन्म ग्रहण किया है। इसी भूमि पर शैशव-क्रीडा की है। इस भूमि के प्रताप से आपके शरीर का निर्माण हुआ है। हंस ने मानसरोवर से जो कुछ प्राप्त किया है उससे कही बहुत अधिक आपने अपनी जन्मभूमि से पाया है। अतएव हंस पर मानसरोवर का जितना ऋण है, उसकी अपेक्षा बहुत अधिक ऋण आपके ऊपर अपनी जन्मभूमि का है। इस ऋण को आप किस प्रकार चुकाएगे ?

जिस भूमि मे तुम्हारा [illegible] कल्याण हो रहा है [illegible] तुच्छ मानकर स्वर्ग का गुणगान करते [illegible]

[illegible]

मातृभूमि के विषय मे आपकी कल्पना उत्यन्त उदार थी। बडे ही प्रभावजनक शब्दो मे आप मातृभूमि की महिमा का वर्णन किया करते थे। आपके यह विचार आपके साहित्य मे जगह-जगह विखरे पडे है। जब आपके साहित्य का विषयवार सकलन होगा तो इस विषय का भावमय वर्णन बडे-बडे राष्ट्रनेताओ को भी चकित कर देगा। अस्तु।

भारतवर्ष मे भी थादला विशेषरूप से आपका जन्म-स्थान था। उसका आप पर विशेष ऋण भी माना जा सकता है। यद्यपि आप साधु हो चुके थे और सासारिक बधनो को काट चुके थे तथापि मातृभूमि का ऋण अब भी आप अपने ऊपर चढा समझते थे। साधुओ पर मातृभूमि का ऋण है। यह बात आप अपने प्रवचनो मे कहा करते थे। मगर उस ऋण को चुकाने का गृहस्थो का तरीका और है और साधुओ का तरीका और। साधु वहा की जनता को धर्मोपदेश देकर, फैले हुए अन्याय और अधर्म को हटाकर, वहा का अज्ञान दूर करके उस ऋण से बरी हो जाते है। आप चार महीने तक धर्मोपदेश देकर और लोगो को धर्म-मार्ग मे लगाकर उस ऋण से मुक्त हो गये।

पांचवां चातुर्मास

थादला का चातुर्मास समाप्त करके मुनिश्री घासीलालजी महाराज की सेवा का लाभ उठाने के पश्चात् आप रतलाम होते हुए तथा अन्य स्थानो मे भ्रमण करते हुए शिवगढ पधारे। स १९५३ का चातुमार्स वही किया।

वहा भी आपके व्याख्यानो का खूब प्रभाव पडा। शिवगढ के ठाकुर साहब के भाई जो बाद मे स्वय ठाकुर साहब हो गये, आपके उपदेश से प्रभावित हुए। मुनिश्री के प्रति ठाकुर साहब की बडी श्रद्धा-भक्ति थी। आपने उपदेशो से प्रभावित होकर जीवन भर के लिए मद्य और मास का परित्याग कर दिया। अन्य लोगो ने भी अनेक प्रकार के त्याग प्रत्याख्यान किये। बहुत से पशु मारे जाने से बचाये गए।

शिवगढ का चातुमार्स पूर्ण करके मुनिश्री रतलाम और फिर जावरा पधारे। उस समय जावरा मे मुनिश्री बडे जवाहरलालजी महाराज विराजमान थे। शास्त्रो के अध्ययन की भूख आप को बनी ही रहती थी। महाराज का सुयोग पाकर आपने फिर आगमो का अध्ययन आरम्भ कर दिया और कई आगमो की वाचना ली।

छठा चातुर्मास

जावरा से विहार करके आप सैलाना पधारे और स १९५४ का चातुर्मास सैलाना मे ही व्यतीत किया।

अनुभव और अध्ययन की वृद्धि के साथ ही साथ आपकी वक्तृत्व-कला भी विकसित होती चली। सैलाना मे राज्य के बडे-बडे पदाधिकारी आपके धार्मिक प्रवचनो से प्रभावित और आकृष्ट हुए। आपका तप, त्याग और सयम उत्कृष्ट श्रेणी का था ही, वाणी का भी विकास हो चुका था। यह सोने और सुगध का सयोग था। इस सयोग से आपके प्रति जैन-जैनेतर जनता समान भाव से श्रद्धा प्रदर्शित करती थी।

आपके उपदेश के प्रभाव से लोगो ने अनेक प्रकार के दुर्व्यसनो का त्याग किया। बडी सख्या मे लोगो ने तपश्चर्या की। धर्म की अच्छी प्रभावना हुई।

चातुर्मास पूर्ण होने के अनन्तर मुनिश्री फिर जावरा पधारे। वहा तत्कालीन युवाचार्य मुनिश्री चौथमलजी महाराज विराजमान थे। कुछ दिन ठहरकर युवाचार्यजी के साथ आपने भी रतलाम की ओर विहार किया। रतलाम मे उस समय के महाप्रतापी आचार्य पूज्यश्री उदयसागरजी महाराज विराजमान थे। पूज्यश्री, युवाचार्य तथा वहु-सख्यक मुनियो के एक साथ दर्शन करके आप आनन्द-विभोर हो गए। कहते है, उस समय रतलाम मे करीब डेढ सो सत और सतिया एकत्र थे।

उन्ही दिनो, माघ शुक्ला दशमी को आचार्यश्री का स्वर्गवास हो गया।

सातवां-आठवां चातुर्मास

रतलाम से विहार करके आप मुनिश्री मोतीलालजी महाराज के साथ खाचरौद पधारे। खाचरोद पधारने पर आपने सोचा- यदि श्री घासीरामजी महाराज यहा विराजे तो उन्हे अधिक सहूलियत रहेगी। यह सोचकर आप फिर जावरा पधारे ओर श्री घासीलालजी महाराज को खाचरोद ले आये। सवत् १९५५ का चातुर्मास आपने खाचरोद मे ही किया। खाचरोद मे रहते हुए आपको सग्रहणी का रोग हो गया। उपचार करने पर भी कुछ लाभ नही हुआ।

जीवन-विकास के लिए एक अनिवार्य साधन है-जीवन का निरीक्षण। जो पुरुष अपने जीवन-व्यवहार को सावधानी के साथ जाचता रहता हे, अपने मानसिक भावो को पहरेदार की तरह देखता रहता है, उसके जीवन का आश्चर्य-जनक विकास अल्प-काल मे ही हो सकता हे। अपने प्रति प्रामाणिक रहकर ऐसा करते रहने से आत्मा पापो से वचता हे। यही कारण है कि साधु अपने सयम की रक्षा के उद्देश्य से प्रतिदिन आलोचना करते हे। आलोचना मे गुरु के समक्ष अपने सभी दोप प्रकाशित कर दिये जाते हे और उन दोपो के निवारण लिए यथायोग्य प्रायश्चित अगीकार किया जाता हे। दैनिक कार्यक्रम मे किसी भी कारण से व्यतिक्रम हो जाय तो उसका प्रायश्चित करने के लिए प्राय प्रतिदिन कुछ उपवासो का दड आता हे। प्रतिदिन के उपवासो का दड पूरा करने के लिए एक विशिष्ट विधि है। वह यह कि एक साथ किये गए दो उपवास (वेला), अलग-अलग समय मे किये गए पाच उपवासो के वरावर होते है। तीन उपवास (तेला) करने से पच्चीस उपवासो का फल प्राप्त होता हे। चार उपवास (चौला) सवा सौ उपवासो के वरावर होते हे ओर पाच उपवास (पचोला) छह सो पच्चीस उपवासो के वरावर होते है। इस प्रकार उत्तरोत्तर पाच गुना फल एक-एक उपवास पर वढता जाता हे। उस तप के दूसरे दिन पारसी का त्याग वढाने से दुगुना लाभ होता हे।

मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज के दैनिक कार्य-क्रम मे हुए व्याघात के प्रायश्चित्त-स्वरूप कुछ उपवास चढ गये थे। बीमारी वढती देखकर आपने विचार किया- जीवन का क्या भरोसा हे ? अगर इन उपवासो को उतारे विना ही मेरी मृत्यु हो गई तो मुझ पर ऋण रह जायगा। अतएव पहले इन उपवासो को उतार लेना श्रेयस्कर है। शारीरिक रोगो की चिकित्सा करने से पहले आत्मा के रोग की ओर ध्यान देना आवश्यक है।

महत्ता का अनुभव हुआ। तत्पश्चात् आपने अपने उपदेशो मे जहा-तहा अनशन तप के महत्त्व का प्रभावशाली और अनुभव-पूर्ण विवेचन किया है। वह विवेचन आपके इसी अनुभव का परिणाम है, यह कहना असगत न होगा। आपने फरमाया है-

'तप एक पकार की अग्नि है जिसमे समस्त अपवित्रता, सम्पूर्ण कल्मष एव समग्र मलीनता भस्म हो जाती है। तपस्या की अग्नि मे तप्त होकर आत्मा सुवर्ण की भाति तेज से विराजित हो जाता है। अतएव तप-धर्म का महत्त्व अपार है।'

'जैसे आहार करना शरीर-रक्षा के लिए आवश्यक है उसी प्रकार आहार का त्याग करना-उपवास करना भी जीवन-रक्षा के लिए आवश्यक है। आज अनेक स्वास्थ्य-शास्त्री उपवास का महत्त्व समझकर उसे पाकृतिक चिकित्सा मे प्रधान स्थान देते है। उपवास से शरीर कृश अवश्य होता है परन्तु उस कृशता से शरीर को किसी प्रकार की हानि नही पहुचती। शरीर की कृशता शरीर के सामर्थ्य के ह्रास का प्रमाण नही है।'

'जिन भयकर रोगो को मिटाने मे डाक्टर असमर्थ थे, वे रोग भी अनशन के द्वारा मिटाये गए है। उपवास के सबध मे मेरा स्वानुभव है और मै कह सकता हू कि उपवास से अनेक रोगो का विनाश होता है। सभव है, जिन्होने उपवास-सबधी अनुभव प्राप्त नही किया ऐसे लोग उपवास की यह महत्ता कदाचित् स्वीकार न करे, पर उनके अस्वीकार का कोई मूल्य नही है। अनुभवी इस सत्य को स्वीकार किये बिना नही रह सकते।'

'उपवास इन्द्रियो की रक्षा करने वाला है। धर्म साधना का सबल साधन है। इन्द्रियो की चचलता का निग्रह उपवास से होता है।

इन्द्रियो को काबू मे रखना बहुत कठिन है। महाशत्रु पर अधिकार करना सरल है पर इन्द्रियो पर अधिकार करना कठिन है। उपवास ही इन्द्रियो पर अधिकार करने का सरल साधन है।

मनुष्य हमेशा खाता है। सावधानी रखने पर भी कही भूल हो जाना अनिवार्य है। प्रकृति भूल का दड देने से कभी नही चूकती। किसी और से आप अपने अपराध क्षमा करा सकते है पर प्रकृति के दड से आप किसी भी प्रकार नही बच सकते। अगर आप प्रकृति के किसी कानून को तोडते है तो आपको तुरन्त उसका दड भोगने के लिए उद्यत रहना होगा। आप दूसरो की आखो मे धूल झोक सकते है पर प्रकृति के आगे आपकी एक नही चलेगी। प्रकृति के कानून अटल है-अचल है। उनमे तनिक भी हेर-फेर नही हो सकता। ऐसी स्थिति मे भोजन मे कोई भूल हुई नही कि कोई-न-कोई रोग आ धमकता है। उस रोग के प्रतिकार का सरल और सफल उपाय उपवास ही है। आपने उपवास किया और रोग छू-मन्तर हुआ। अगर आपको कोई रोग नही है तो भी उपवास करने का अभ्यास लाभदायक ही है।

अपने नियम के अनुसार प्रकृति जितने मनुष्यो के उत्पन्न करती है, उनके खाने के लिए भी वह उतना ही पैदा करती है। पर मनुष्य अपनी धीगा-धीगी से आवश्यकता से अधिक खा जाता है। इस पकार अकेले भारतवर्ष ने छह करोड मनुष्यो की खुराक को छीन कर उन्हे भूखे मारने का पाप अपने सिर ले लिया है। भारत मे तेसीस करोड मनुष्य है। इनमे से छह करोड को अलग कर सत्ताईस करोड महीने मे छह उपवास करने लगें तो क्या छह करोड भूखो को भोजन नही मिल सकता?

इस प्रकार उपवास भूखों की भूख मिटाने वाला, रोगियो के रोग हटाने वाला और ईश्वरोपासक को ईश्वर से भेंट कराने वाला है। उपवास का अर्थ ही है-ईश्वर के समीप वास करना।'

मुनिश्री के उपदेश अधिकाश उनके विविध अनुभवो का ही परिणाम है। उपवास के विषय में आपने अधिकारपूर्वक, दृढता के साथ जो मत व्यक्त किया है, उनका अनुभव ही उसका साक्षी है। अनुभव-ज्ञान में कितनी गम्भीरता, कितनी तेजस्विता और कितनी दृढता होती है!

चातुर्मास पूर्ण होने पर मुनिश्री अनेक स्थानो मे विचरते हुए फिर खाचरौद पधार गए और मुनिश्री घासीरामजी महाराज की सेवा मे रहने लगे। स १९५६ का चातुर्मास भी आपने खाचरौद मे ही किया। इसी चातुर्मास मे श्री राधालालजी भटेवरा ने आपके पास दीक्षा ग्रहण की।

खाचरौद मे दूसरा चौमासा समाप्त करके आपने मुनिश्री मोतीलालजी महाराज और श्री राधालालजी महाराज के साथ जावरा की ओर विहार किया। वहा अन्य साधुओ के साथ आचार्य महाराज विराजमान थे।

पूज्यश्री चौथमलजी महाराज ने माघ शुक्ला दशमी के दिन आचार्य-पद अलकृत किया था। उस समय वे वयोवृद्ध थे। नेत्र-शक्ति क्षीण हो गई थी। अधिक विहार नही कर सकते थे। ऐसी स्थिति मे इतने विशाल सम्प्रदाय का सचालन और निरीक्षण करना उनके लिए कठिन था। अतएव उन्होने भिन्न-भिन्न प्रान्तो मे विचरनेवाले साधुओ की देख-रेख के लिए चार साधु नियुक्त कर दिए, जिनमे से एक हमारे चरितनायक भी थे।

मुनिश्री को दीक्षा लिये उस समय सिर्फ आठ वर्ष हुए थे। आपकी उम्र चोवीस वर्ष की थी। सम्प्रदाय मे लम्बी दीक्षा और वडी उम्र के बहुत से मुनिराज थे। मगर प्रतिभा, सयम-परायणता, व्यवस्था शक्ति और दूसरी योग्यताओ के कारण आप इस पद के योग्य समझे गये। इतनी छोटी दीक्षा पर्याय मे यह पद प्राप्त होना सूचित करता है कि आप उस समय भी साधु-समचारी के विशिष्ट ज्ञाता हो गए थे। उत्सर्ग और अपवाद-मार्ग के रहस्य को भली-भाति जानने लगे थे, व्यवस्था करने मे कुशलता प्राप्त कर चुके थे और आगमानुकूल सयम-पालन की प्रतीति करा चुके थे।

आचार्य श्री चौथमलजी महाराज अस्वस्थ होने के कारण अतिम तीन वर्षो मे जावरा तथा रतलाम ही विराजे रहे। उस समय मुनिश्री श्रीलालजी महाराज उनकी सेवा मे थे। तेजस्वी, प्रतिभाशाली तथा आचार-निष्ठ होने के कारण आचार्यश्री उन्हे अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहते थे। मुनिश्री श्रीलालजी महाराज को आचार्यश्री ने आस-पास के क्षेत्रो मे ही विचरने का आदेश दिया और वे आस-पास ही विचरने लगे।

नौवां चातुर्मास १९५७

कुछ दिन पूज्यश्री की सेवा मे रहकर मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने तीन ठाणा से महनपुर की ओर विहार किया। उस समय मुनिश्री मोतीलालजी महाराज आपके साथ थे। महनपुर उज्जैन के समीप एक छोटा-सा कस्बा है। संवत १९५७ का चातुर्मास वही हुआ।

के कारण आप अशक्त तो थे ही, शरीरिक अस्वस्थता भी चलती रहती थी। कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा की रात्रि को आचार्यश्री की व्याधि कुछ बढ गई। शरीर की अस्थिरता का विचार करके आपने दूसरे दिन चतुर्विध श्रीसघ के सामने मुनिश्री श्रीलालजी महाराज को युवाचार्य जाहिर किया। उसके एक सप्ताह पश्चात् ही अष्टमी की रात्रि मे आचार्यश्री चौथमलजी महाराज स्वर्ग सिधार गए।

उस समय श्री श्रीलालजी महाराज रतलाम मे ही मौजूद थे। एक सप्ताह युवाचार्य-पदवी भोगकर कार्तिक शुक्ला नौवी के दिन प प श्रीलालजी महाराज ने आचार्य-पद सुशोभित किया।

नवीन आचार्य के दर्शन

रतलाम मे चातुर्मास पूर्ण करके पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज अनेक स्थानो पर धर्मोपदेश देते हुए इन्दौर पधारे। उसी समय मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज भी महतपुर मे चातुर्मास समाप्त करके इन्दौर पधार गये। पूज्यश्री के दर्शन करके आपको अत्यन्त प्रमोद हुआ।

इन्दौर से पूज्यश्री के साथ रतलाम की ओर विहार हुआ। बडनगर तक सभी सत साथ-साथ पधारे। वहा से मुनिश्री मोतीलालजी महाराज और हमारे चरितनायक देहात मे धर्म-प्रचार करने के लिए अलग हुए और पूज्यश्री के रतलाम पहुचने के कुछ दिनो पश्चात् आप दोनो सत भी रतलाम पधार गये।

रतलाम से पूज्यश्री ने मेवाड की ओर विहार किया। मुनिश्री मोतीलालजी महाराज और मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज आदि कई सन्तो ने कुछ दिन ठहरकर उसी ओर विचरना आरम्भ कर दिया।

जवाहरात की पेटी

मेवाड प्रान्त मे धर्म की जागृति करते हुए पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज उदयपुर पधारे। वहा आपके मधुर और प्रभावशाली प्रवचनो से अनेक धार्मिक कार्य हुए। आपके ही सदुपदेश से मेवाड के प्रधानमत्री रा रा कोठारीजी श्री बलवन्तसिह जी साहब ने जैन धर्म अगीकार किया।

एक दिन कोठारीजी तथा उदयपुर के श्रीसघ ने पूज्यश्री से आगामी चातुर्मास उदयपुर मे करने की प्रार्थना की। पूज्यश्री ने उत्तर दिया- 'इस वर्ष यहा चातुर्मास करना मेरे लिए अनुकूल प्रतीत नही होता। मै आपके लिए जवाहरात की पेटी के समान मुनि जवाहरलालजी को भेज दूगा। उनके यहा पहुचने से आनन्द मगल होगा।'

उदयपुर के श्रीसघ ने नतमस्तक होकर पूज्यश्री का कथन स्वीकार किया। धन्य है मुनिश्री जवाहरलालजी, जो अपनी योग्यता के द्वारा आचार्य महाराज के मुखारविन्द से प्रशसा के पात्र बने। और धन्य है आचार्य महाराज, जो अपने छोटे सन्तो के सद्गुणो की प्रशसा करके उन्हे उत्साहित करते है। सचमुच सन्तो का स्वभाव ऐसा ही भद्र और कोमल होता है।

दसवां चातुर्मास १९५८

पृज्यश्री के आदेश से मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने तीन सन्तो के साथ स १९५८ का चातुर्मास उदयपुर मे किया। उदयपुर मे प्रतिदिन प्रभावशाली प्रवचनो द्वारा आप श्रोताओ को प्रभावित करने लगे। हजारो श्रोता, जिनमे जेन ओर जैनेतर, हिन्दू और मुसलमान, पुरुष ओर स्त्रियो का समावेश

था आपके उपदेश से लाभ उठाते थे। मुनिश्री मृगापुत्र का अध्ययन फरमाते थे। कर्मो का फल किस प्रकार भोगना पडता है, इस विपय का आप हूवहू शव्द-चित्र खीच देते थे। किसनगढ के रहने वाले एक मुसलमान भाई तो विना नागा उपदेश सुनने आते थे। उन पर भी उपदेश का खूव प्रभाव पडा ओर वे सदा के लिए मुनिश्री के भक्त वन गये।

उसी चातुर्मास मे मुनिश्री मोतीलालजी महाराज ने ४५ दिन की तीव्र तपस्या की। तपस्या के पूर के दिन मेवाड सरकार के आदेश से उदयपुर के सभी कसाईखाने वद रखे गये ओर वहुत से प्राणियो का अभय-दान दिया गया।

चातुर्मास मे उदपुर मे वडा आनन्द रहा। वातावरण मे उत्साह ओर स्फूर्ति के साथ सात्विकता छा गई। उदयपुर की जनता पूज्यश्री के वचनो को बार वार याद करती ओर कहती-वास्तव मे जवाहरलालजी महाराज जवाहरात की ही पेटी है।

इसी चातुर्मास मे चरितनायक ने वर्तमान पूज्यश्री गणेशीलालजी महाराज को सम्यक्त्वरत्न प्रदान किया। उस समय किसे ज्ञात था कि सम्यक्त्व देकर जिसे आज धर्म के प्रवेश-द्वार पर खडा किया है, वही आगे चलकर उनका प्रधान शिष्य वनेगा ओर अन्त मे उनका उत्तराधिकारी होकर शासन दिपायेगा।

उदयपुर मे चातुर्मास पूर्ण करके मुनिश्री तरावलीगढ पधारे। वहा श्री घासीलालजी को मुनि-दीक्षा दी। वहा से मारवाड की ओर विहार किया। रास्ते मे आपको कुछ लुटेरे मिल गए। उस समय श्री घासीरामजी महाराज नवदीक्षित ही थे। नवीन वस्त्र पहने थे। भिक्षा मागकर जीवन-निर्वाह करने वाले और अन्न-जल का एक भी कण आज का कल न रखने की दृढ परम्परा का पालन करने वाले, ससार की सम्पत्ति को साप की तरह भयावह समझने वाले अकिचन मुनियों के पास ओर धरा ही क्या था ? कुछ लकडी के पात्र, कुछ वस्त्र ओर कुछ शास्त्र ही उनके पास थे। अभागे लुटेरो को लूटने के लिए मिले भी तो यह साधु मिले! न जाने किस मुहूर्त्त मे लूटने चले थे! वे मन-ही-मन पछताते होगे, झुझलाते होगे ओर अपनी तकदीर को कोसते होगे।

अग्रेजी भाषा मे एक कहावत है-Some thing is better than nothing अर्थात् कुछ भी नही से कुछ भला। वेचारे कितना साहस वटोरकर घर से निकले होगे ? जगल मे अपने शिकार की कितनी आर कितनी देर प्रतीक्षा की होगी ? कितनी मनवार करके अपने मन को इस जोखिम के लिए मनाया होगा ? अव वहुत नही तो थोडा ही सही ? मगलाचरण मे असफलता तो नही कहलाएगी ? शकुन तो नही विगडेगा! इसके अतिरिक्त साधु मगल-रूप है तो उनके वस्त्र भी शायद हमारे लिए मगलमय सिद्ध हो जाय! ऐसा ही कुछ सोचकर लुटेरो ने साधुओ के कई वस्त्र छीन लिये! यहा तक कि श्री घासीलालजी का कमर मे पहनने का वस्त्र चोलपट्ट भी उनके शरीर पर न रहने दिया।

उस समय मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने लुटेरो को जैन साधु का परिचय दिया। उन्हे वतलाया- हम जैन साधु है। रुपया-पैसा पास नही रखते। भिक्षा मागकर निर्वाह करते है। भिक्षा के लिए यह पात्र है, लज्जा ढकने के लिए वस्त्र और पठन-पाठन के लिए शास्त्र है। इनके सिवाय हमारे पास कुछ है नही। भाइयो! हम लूटकर तुम क्या पाओगे ? फिर जैसी तुम्हारी इच्छा!

मुनिश्री के समझाने पर एक लुटेरे ने चोलपट्ट वापस कर दिया। कुछ वस्त्र लेकर वे एक ओर चले गए और मुनि-गण ने दूसरी ओर आगे पस्थान किया। अगले गाव पहुचने पर लोगो ने जब यह घटना सुनी तो उन्हे असह्य हो गई। उन्होने रिपोर्ट करके चोरो को पूरा दड दिलाने की ठानी। मगर मुनिश्री ने समभाव का उपदेश देकर सबको शान्त किया।

ग्यारहवां चातुर्मास

चातुर्मास के पश्चात अनेक क्षेत्रो मे धर्म-पचार करते हुए मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज जोधपुर पधारे। सवत् १९५८ का चातुर्मास आपने जोधपुर मे ही व्यतीत किया। सयोग से तेरहपथ सम्पदाय के आचार्यश्री डालचदजी का चातुर्मास भी जोधपुर मे ही था।

दया-दान का प्रचार

जैन समाज की श्वेताम्बर शाखा मे तेरहपथ नाम से एक सम्प्रदाय है। इसके मूल प्रवर्त्तक भिक्खुजी स्वामी माने जाते है।पारभ मे वे स्थानकवासी सम्प्रदाय के आचार्य पूज्यश्री रघुनाथजी महाराज के शिष्य थे। कर्मोदय की विचित्रता से उनके मस्तिष्क मे कुछ मिथ्या धारणाए जम गईं। पूज्यश्री रघुनाधजी महाराज ने उनके निराकरण का भरसक प्रयत्न किया और अनेक शास्त्रो के मूल पाठ दिखलाए, मगर कोई किसी के कर्मोदय को कैसे पलट सकता है? भिक्खुजी जब अपनी धारणाओ पर अडे रहे तो अत मे उन्हे सघ से पृथक कर दिया गया और उन्होने अपनी मान्यताओ का स्वतत्र रूप से पचार करना आरभ कर दिया। 'मुण्डे-मुण्डे मतिर्भिन्ना' कहावत के अनुसार सबकी अपनी-अपनी समझ अलग-अलग होती है और इसी कारण ससार मे बहुत-से मत, पथ, सम्प्रदाय एव परम्पराए है। मगर तेरहपथ सम्प्रदाय इन सबमे अपना विशेष स्थान रखता है। यह सम्प्रदाय, धर्म के मूलभूत तत्त्व दया-दान पर कुठाराघात करता है और इस प्रकार मानवता के विरुद्ध विद्रोह करता है। इसके कुछ मन्तव्य इस प्रकार है-

(१) मरते हुए जीव को बचाने मे पाप है। अगर गोओ के बाडे मे आग लग जाय तो उन्हे बचाने के उद्देश्य से वाडा खोल देने वाला पाप का भागी होगा। बचा हुआ जीव अपने शेष जीवन मे जो पाप करेगा उन सब पापो का भागी बचाने वाला भी होगा।

(२) प्यास से तडपते हुए किसी भी मनुष्य या दूसरे प्राणी को पानी पिला देना पाप है, क्योंकि पानी मे असख्यत जीव हे और पानी पिलाने से एक जीवन की रक्षा करने मे असख्यात जीवन मरते हे। अगर कोई दयालु छाछ जैसी निर्वद्य चीज, जिसमे जीव नही है, पिलाकर किसी के प्राण बचा लेता हे तो वह भी पाप का भागी होता है, क्योंकि जीव-रक्षा करना ही पाप है।

(३) माता का अपने बालक को दूध पिलाकर पालन-पोषण करना और गर्भस्थ [illegible] करना भी एकान्त पाप है।

(४) अगर कोई सुपुत्र माता-पिता की सेवा करता है तो उसका [illegible]

भगवान् महावीर ने तेजोलेश्या से जलते गोशालक की रक्षा [illegible] जीव-रक्षा का यह उदाहरण जब उपस्थित किया जाता है तो [illegible] भगवान महावीर चूक गए।

यहा इतना बतला देना आवश्यक हे कि ससार मे जितने भी विशिष्ट विचारक ओर मत-प्रवर्त्तक हुए हे उन्होने धर्माचरण का ही उपदेश दिया ओर जीव-रक्षा को सब धर्माचरणो मे श्रेष्ठ धर्म बतलाया हे। जेनागम तो जीव-रक्षा के लिए प्रसिद्ध हे ही। उनका निर्माण इसी उद्देश्य से हुआ हे। जेन-शास्त्र मे कहा हे-'सव्वजगजीवरक्खणदयट्ठयाए पावयण भगवया सुकहिय।' अर्थात् जगत् के सभी जीवो की रक्षा रूप दया के लिए भगवान् ने प्रवचन कहा हे। जैनेतर शास्त्र भी जीव रक्षा को प्रधान धर्म स्वीकार करत हे। यह बात इतनी स्पष्ट है कि इसके समर्थन के लिए उन शास्त्रो के उद्धरण देने की आवश्यकता ही प्रतीत नही होती।

पूज्यश्री रघुनाथजी महाराज ने भिक्खूजी को शास्त्र-पाठो से बहुत समझाया, परन्तु भिक्खूजी ने अपना हठ न छोडा तो उन्हे सम्प्रदाय से पृथक् कर दिया गया। भिक्खूजी के साथ उनके स्नेही छह साधु और निकल गये। स्थानकवासी समाज मे ही एक दूसरे सम्प्रदाय के आचार्य पूज्यश्री जयमल्लजी महाराज थे। पूज्यश्री रघुनाथजी महाराज और उनके सम्प्रदाय के साधुओ मे काफी घनिष्ठता थी। मिलना-जुलना, वार्त्तालाप तथा एकत्र निवास भी होता रहता था। अतएव भिक्खूजी ने उस सम्प्रदाय के छह साधुओ पर भी अपना असर डाल दिया। इस प्रकार तेरह व्यक्तियो ने मिलकर अपने नव-निर्मित अदया-अदान धर्म का प्रचार प्रारम्भ कर दिया। इन्ही का सम्प्रदाय 'तेरहपथ' कहलाता हे।

भगवान् महावीर के अहिंसा-धर्म का इस प्रकार विपरीत प्रचार होते देखकर ओर भोली जनता को धर्म के नाम पर घोर अधर्म ओर निर्दयता का शिकार होते देखकर मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज का सदय हृदय पिघल गया। जीव-रक्षा को पाप बतलाना मानवता के नाम पर और धर्म के नाम पर घोर कलक हे। ऐसी भयानक मान्यताओ का प्रबल विरोध करना ही मुनिश्री ने अपना कर्त्तव्य समझा।

तेरहपथ के आचार्य डालचन्दजी का चोमासा भी उस साल जोधपुर मे ही था। इस कारण सत्य वस्तु जनता को समझाने का यह अच्छा अवसर था। मुनिश्री ने तेरहपथ के प्रधान ग्रथ 'भ्रम-विध्वसन' का सूक्ष्म रीति से अवलोकन किया। 'भ्रम-विध्वसन' के अवलोकन से आप की उक्त इच्छा अधिक बलवती हो उठी। आपने सोचा-सर्व-साधारण के सामने यदि यह बात आ जाय कि तेरहपथियो का मत जेन शास्त्रो के विरुद्ध है तो यह कलक जैन-धर्म के नाम पर न रहे। श्रावको ने भी सत्य को प्रकट कर देने की मुनिश्री की इच्छा का समर्थन किया। मुनिश्री ने इस उद्देश्य की पूर्त्ति के लिए शास्त्रार्थ करने का उपाय ही समुचित समझा। शास्त्रार्थ का सिलसिला शुरू करने के अभिप्राय से मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने सात प्रश्न तेयार किये। श्रावको ने उन प्रश्नो को लेकर एक विज्ञप्ति निम्नलिखित रूप मे प्रकाशित कर दी -

तेरहपथियों को विदित हो कि नीचे लिखे प्रश्न सविस्तर सूत्रार्थ के पाठ सहित तुम्हारे पूज्यजी से पूछकर लिखो। सात प्रश्न निम्नलिखित हे-

(१) श्रीमन्महावीर भगवान् को दीक्षा लेने के बाद चूका बताते हो, सो वह पाठ दिखाओ।

(२) साधु के सिवाय किसी को दान देने मे एकान्त पाप बताते हो, सो पाठ दिखाओ।

(३) बयालीस दोष टालकर आहार लेनेवाले पडिमाधारी श्रावक को दोष रहित आहार देने मे पाप बताते हो, सो पाठ दिखाओ।

(४) साधुजी महाराज को किसी दुष्ट ने फासी दी। किसी दयावान् ने धर्म-बुद्धि से उसे खोल दिया। तुम उन दोनो को पापी कहते हो और श्रद्धते हो, सो पाठ दिखाओ।

(५) गायो का बाडा भरा हुआ है, उसमे किसी दुष्ट ने आग लगा दी। किसी दयावान् ने किवाड खोलकर गायो को बाहर निकाल दिया और उनके प्राण बच गए। तुम उन दोनो को पाप कहते हो, सो पाठ दिखाओ।

(६) पन्द्रहवा कर्मादान 'असजती पोसणिया' कहते हो और सिखलाते हो, सो पाठ दिखलाओ।

(७) असयती का जीना नही वाच्छना, ऐसा कहते हो, सो पाठ दिखाओ।

इन प्रश्नो का उत्तर जल्दी लिखो। और भी बहुत से प्रश्न है।

तुम्हारा मत अर्थात् भीखमजी का चलाया हुआ मत जैन-सिद्धान्त तथा जैन आगमो के विरुद्ध स्पष्ट दिखाई देता है। तुम्हारे पूज्यश्री न्याय-पूर्वक चर्चा अर्थात् शास्त्रार्थ करना चाहे तो हमारे साधुजी चर्चा करने को तैयार है। स्थान तीसरा और निष्पक्ष विवेकी समझदार तीसरे मत के मध्यस्थ मोअज्जिज मुकर्रर होवे ताकि गलवा न हो सके। चर्चा जरूर होनी चाहिए। एक हफ्ते की मियाद दी जाती है, क्योंकि चौमासे के दिन थोडे रहे है। जो इस मौके पर तुम्हारे पूज्यश्री चर्चा नही करेगे तो हम लोग तो समझते ही है, और भी सब लोग तुम्हारे को झूठा समझेगे। सम्वत् १९५९ कार्तिक सुदी २।

बाईस सम्प्रदाय की तरफ से
मुणोत अमरदास। भण्डारी किसनमल।

इस नोटिस के बाजार मे बटते ही तेरहपथियो की तरफ से भण्डारी किशनमल जी एक पत्र बाईस सम्प्रदाय के श्रावको के पास आया। उसमे लिखा था-पू डालचन्दजी शास्त्रार्थ करने के लिए तैयार है, शीघ्र चर्चा कर लो। पत्र मे चर्चा-स्थान के लिए उदयमन्दिर तथा मध्यस्थ के लिए अन्य दो सज्जनो के अतिरिक्त उदयमन्दिर के महन्त गोसाई गणेशपुरीजी को चुना था। उदयमन्दिर जोधपुर से काफी दूर पर है।

इस पत्र के उत्तर मे बाईस सम्प्रदाय की ओर से भण्डारी किशनमलजी को लिखा गया कि शास्त्रार्थ के लिए स्थान उदयमन्दिर उपयुक्त नही है। पता नही शास्त्रार्थ कितने दिन चले, जाने मे बहुत सा समय व्यर्थ चला जायगा। मध्यस्थ, दर्शक तथा श्रोताओ को भी वहा जाने-आने मे परेशानी होगी। इसलिए कोई समीपवर्ती स्थान चुनना चाहिए।

इसके अतिरिक्त गणेशपुरीजी महन्त तेरहपन्थियो के पक्षपाती है। उनके स्थान पर शास्त्रार्थ करना तथा उन्हे मध्यस्थ बनाना दोनो बाते अनुचित है।

मध्यस्थ के लिए हम गुरा साहेब श्री जवाहरमलजी, मणिविजयजी, तथा कविराज श्री मुरारीदानजी का नाम पेश करते हे। स्थान के लिए आप आहुवा की हवेली, ओसवाल जाति का नोहरा या किसी भी समीपवर्ती मकान को चुन सकते हे। इससे जनता अधिक लाभ उठा सकेगी तथा शास्त्र लाने ले जाने मे मुनियो को कष्ट न होगा।

तेरहपथियो ने जवाहरमलजी तथा मणिविजयजी को मध्यस्थ बनाने से इन्कार कर दिया और गणेशपुरीजी के लिए फिर आग्रह किया। स्थान-समय के लिए भी वे टालमटोल करने लगे।

अन्त मे उनसे कहा गया-दोनो पक्ष वाले कविराज श्री मुरारीदान जी को मध्यस्थ चुन ले। स्थान और समय के लिए उन्ही से निर्णय करा लिया जाय। वे जो कहे, दोनो को मान्य हो। कविराज जोधपुर के एक प्रतिष्ठित विद्वान सज्जन थे, मध्यस्थ भी थे। साहित्य-सेवी उनके नाम से भली भाति परिचित है।

तरहपथियो ने इस बात को भी मजूर नही किया। वास्तव मे वे शास्त्रार्थ करने से डरते थे और उसे टालने का प्रयत्न कर रहे थे।

जनता ने समझ लिया कि तेरहपन्थी शास्त्रार्थ करना नही चाहते। अन्त मे उनसे कहा गया-यदि आप शास्त्रार्थ करना नही चाहते तो जाने दीजिये, उन सात प्रश्नो का उत्तर दीजिए। इस पर तेरहपन्थियो की ओर से कोई उत्तर न मिला।

प्रतापमलजी का प्रतिबोध

मारवाड मे पचभद्रा नामक एक गाव है। वहा प्रतापमलजी चोपडा एक धर्म-प्रेमी गृहस्थ रहते थे। वे तेरहपथ के अनुयायी थे। तेरहपथ मे उनकी बडी श्रद्धा थी।

एक बार विचार करते-करते तेरहपथियो की प्ररूपणा मे उन्हे कुछ सदेह हुआ। सन्देह-निवारण के लिए चौपडाजी अपने आचार्य डालचन्दजी के पास जोधपुर आये। डालचदजी ने इधर-उधर की बातो से उन्हे समझाने का प्रयत्न किया मगर तत्त्व के जिज्ञासु को इससे सन्तोष नही हुआ। उन्होने आगम का पाठ दिखलाने के लिए कहा। इस पर डालचदजी बिगड खडे हुए और उन्हे मिथ्यात्वी कहकर टाल दिया।

मनुष्य प्राय अपनी दुर्बलता को छिपाने के लिए क्रोध का आश्रय लेता है। मगर धर्म तो कल्याण के लिए है। धर्म के क्षेत्र मे दृढता के साथ सत्य का विचार करना चाहिए। वहा किसी प्रकार की बनावट या दिखावट को स्थान नही हो सकता। धर्म के विषय मे कोई समझोता काम नही देता। जिसे सत्य को खोजने की प्रबल आकाक्षा है वह गुपचुप बिना समझे-बूझे कोई बात न मानेगा। वह प्रत्येक बात को शास्त्र के अनुसार समझकर ही ग्रहण करेगा। वह शका करने मे सकोच भी नही करेगा और उसका धर्मगुरु उसकी शका से क्रुद्ध नही होगा। इस विषय मे हमारे चरितनायक स्पष्ट शब्दो मे कहते है-'जैन-शास्त्र कहता है कि सूत्र सिद्धान्त की बात चुपके-चुपके बताना उचित नही। अतएव तुम्हे जो कुछ भी बताया गया है उसके सबध मे पूछ-ताछ करो और उत्पन्न हुई शका का समाधान प्राप्त करो।' बिना समझे-बूझे किसी बात को स्वीकार कर लेने के विषय मे आपका कहना है-'धर्म के विषय मे अक्सर ऐसा होता है कि शका होने पर भी पूछताछ नही की जाती और शका को हृदय मे स्थान दिया जाता है। कुछ लोगो का तो यहा तक कहना है कि हमारे सामने जो कुछ आवे, उसी को खा जाना चाहिए। इस प्रकार पशुओ की भाति सोचे-समझे बिना किसी वस्तु को खाने बैठ जाना अनुचित है। इसी प्रकार चाहे जिस बात को बिना विचारे मान लेना हानिकारक है। प्रतिपृच्छना के प्रश्न द्वारा जैन-शास्त्र इस बात का अनुमोदन करता है कि कोई बात बिना विचारे नही मान लेनी चाहिए, वरन् पूछ-ताछ करके योग्य मालूम हो तो ही कोई बात माननी चाहिए।

जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से शका करना आवश्यक है। शका किये बिना अधिक ज्ञान नही प्राप्त हो सकता। जिज्ञासा ज्ञानोपार्जन का एक कारण है। आज विज्ञान का जो आधिपत्य देखा जा रहा है, उस विज्ञान का आविष्कार भी जिज्ञासा से ही हुआ है।

तात्पर्य यह है कि जिसे सत्य पर सम्पूर्ण श्रद्धा है वह न शका करने से घबराता है और न समाधान करने से। शका-समाधान मे झुझला उठना सत्य के ऊपर अश्रद्धा का द्योतक है।

पतापमलजी जिज्ञासु तो थे ही समाधानकर्त्ता की टाल-मटोल से उनकी जिज्ञासा और बढ गई। वे सत्य वस्तु का निर्णय करना चाहते थे अत मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज के पास आये। मुनिश्री ने जैनागमो के पाठ बतलाकर उनकी सब शकाओ का समाधान कर दिया। पतापमलजी ने मुनिश्री की युक्ति और आगम के अनुकूल व्याख्या सुनी तो उन्हे ऐसा मालूम हुआ कि मै अधकार मे हू ओर अब पकाश की रेखा देख रहा हू। वे फिर डालचदजी स्वामी के पास पहुचे और शास्त्रीय पाठ बताकर उनसे खुलासा करने की पार्थना की।

डालचन्दजी स्वामी के पास जो अन्तिम शस्त्र था, उसी का उन्होने प्रयोग किया। वह यह कि भीखमजी महाराज के वचनो पर अविश्वास नही करना चाहिए। अविश्वास करने से मिथ्यात्व का पाप लगता है।

पतापमलजी बोले- आपके कथनानुसार चार निर्मल ज्ञानो के धनी महावीर स्वामी भी छद्मस्थ अवस्था मे चूक गये तो भीखमजी स्वामी के या आपके वचन अचूक कैसे माने जा सकते है ? मुझे तो एकमात्र भगवान् के वचनो पर ही भरोसा है। आप भगवान् का वचन-आगम का पाठ-दिखाइये, तभी आपकी बात मानी जा सकती है।

यह स्पष्ट और निर्भीक बात सुनकर तेरहपथियो के पूज्य डालचदजी नाराज हो गये और कहने लगे–तुम्हे बाईस टोलो के साधु ने बहका दिया है। उससे कहो शास्त्रार्थ के लिए तैयार हो जाए।

प्रतापमलजी ने आकर मुनिश्री जवाहरलाल जी महाराज से यह बात कह दी। मुनिश्री तो सत्यासत्य का निर्णय करने के लिए उद्यत ही थे। उन्होने कहला भेजा कि प्रात काल अमुक स्थान पर मिल ले जिससे शास्त्रार्थ का स्थान, समय आदि का निर्णय किया जा सके।

तेरहपन्थी पूज्य डालचदजी ने प्रतापमलजी के सामने तो मिलने की बात मजूर करली किन्तु दूसरे दिन नियत स्थान पर वे नही पहुचे। मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज तो नियत स्थान पर जाकर और वहा डालचदजी को न पाकर लौटने लगे। प्रतापमलजी साथ थे। वे मुनिश्री को ऐसे रास्ते से लाये जिस पर डालचदजी का निवास था। जब मुनिश्री उनके उपाश्रय के सामने पहुचे और उनकी नजर आप पर पडी तो उनके शिष्य मगनजी बारह साधुओ के साथ बाहर निकल आये और अण्ड-वण्ड बोलने लगे।

मुनिश्री ने मगनजी से कहा- इस पकार के वचन बोलना साधु को शोभा नही देता। अगर आप शास्त्रार्थ करना चाहते है तब तो स्थान और समय का निर्णय कर लीजिए, अन्यथा स्पष्ट उत्तर दीजिए।

मगनजी ने कहा- इस सुनार के चबूतरे पर बैठकर शास्त्रार्थ कर लीजिए।

मुनिश्री ने उत्तर दिया-यो चलते रास्ते शास्त्रार्थ नही हुआ करते। इस समय शास्त्रार्थ कैसे हो सकता है ? किसी तीसरे स्थान पर तथा पक्षपात-रहित एव समझदार चार मध्यस्थ चुन लीजिए। वहा शान्ति-पूर्वक विचार-विनिमय तथा शास्त्रो के अर्थ का निर्णय हो सकेगा।

मगर मगनजी को यह कव अभीष्ट था ? वे वेसिर-पेर की वाते फिर कहने लगे और इस प्रकार वात को टालने की कोशिश करने लगे।

मुनिश्री ने यह रग देखकर उनसे अधिक वार्त्तालाप करना उचित न समझा। वे सीधे डालचन्दजी के सामने पहुच और कहा-'अगर आपको शास्त्रार्थ करना हे तो मध्यस्थ ओर स्थान का चुनाव कर लीजिये। मे तेयार हू। इस प्रकार शास्त्रार्थ की चुनोती देकर मुनिश्री अपने स्थान पर पधार गये।

मुनिश्री के चले जाने पर तेरहपथी श्रावको ओर साधुओ ने प्रतापमलजी का जो घोर अपमान किया उससे उन्हे तेरहपथ से घृणा हो गई। अपनी शका का समाधान करने और तत्त्वनिर्णय के लिए किए हुए प्रयत्न का यह दुष्परिणाम होगा,यह उन्हे मालूम नही था। वाद में वे मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज के पास आये और उन्होने सारा वृत्तान्त कहा। मुनिश्री ने उन्हे सच्चे धर्म पर श्रद्धा करने का उपदेश दिया। प्रतापमलजी कुछ दिनो तक मुनिश्री की सेवा मे रहे ओर धर्म का वास्तविक स्वरूप समझने का प्रयास करते रहे। जव उन्हे सन्तोप हो गया तो मुनिश्री से सच्ची श्रद्धा लेकर ओर उन्हे अपना गुरु मानकर वे अपने घर चले गये।

प्रत्युत्तरदीपिका

चातुर्मास पूर्ण हो गया। डालचदजी स्वामी ने न शास्त्रार्थ किया, न सात प्रश्नो का उत्तर ही दिया। छ महीनो वाद तेरहपंथियो की तरफ से 'प्रश्नोत्तरसमीक्षा' नाम की पुस्तिका प्रकाशित हुई। उसमे सात प्रश्नो का उत्तर देन का प्रयत्न किया गया था ओर वाईस सम्प्रदाय से वही प्रश्न उलट कर पूछे गये थे। पुस्तिका भडारी कृष्णमल, जोधपुर की ओर से प्रकाशित हुई थी।

इस पुस्तिका मे प्रकट की हुई दया-दान-विरोधी भ्रमपूर्ण मान्यताओ पर विचार करने के लिए मुनिश्री ने 'प्रत्युत्तरदीपिका' नामक पुस्तक तेरह दिन की तपस्या करके तेरह दिनो मे तेयार की। यह पुस्तक श्रीमान् सेठ वहादुरमल जी वाठिया लाइब्रेरी, भीनासर (वीकानेर) की ओर से प्रकाशित हुई है। इस पुस्तक मे विस्तारपूर्वक तेरहपथ की भ्रम-मय धारणाओ का निराकरण किया गया हे। इस पुस्तक के उत्तर मे तेरापथी फिर कुछ न लिख सके।

वालोतरा

जोधुपर मे चातुर्मास व्यतीत करके मुनिश्री जवाहरलालजी विहार करते हुए समदडी पधारे। उसी समय तेरहपथ के आचार्य वालोतरा पहुचे। उस समय वालोतरा मे वाईस सम्प्रदाय के दो साधु थे। वे शास्त्रो के विशेष जानकार नही थे। उन्हे देखकर डालचदजी स्वामी का जोधपुर मे ठडा पडा हुआ जोश उमड आया। आपने अपने श्रावको को भेजकर शास्त्रार्थ करने का चलेन्ज दे डाला। वाईस सम्प्रदाय वालो ने उनकी यह चाल समझ तो ली, फिर भी उन्होने चलेन्ज स्वीकार कर लिया। साथ ही उन्होने मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज को सूचना देने के लिए एक आदमी समदडी भेज दिया।

सूचना मिलते ही मुनिश्री ने समदडी की ओर विहार कर दिया और यथा-सभव शीघ्र वालोतरा पहुच गये। डालचदजी को पता चला तो वे सहम गये। किन्तु अव क्या हो सकता था ? उन्होने स्वय ही [illegible] था और अब वही [illegible] था। उसमे से बाहर निकलने की तरकीब सोची जाने [illegible] मुनिश्री [illegible] विहार [illegible] कर रहा था।

आखिरकार स्वय डालचदजी तो अलग रहे। उन्होने अपने शिष्य मगन मुनि को दस-बारह साधुओ और पचास श्रावको की एक टुकडी के साथ भेजा। शास्त्रार्थ का स्थान सूरतरामजी का मंदिर तथा मध्यस्थ श्री चन्दनमलजी लोढा चुने गये।

दूसरे दिन निश्चित समय पर मुनिश्री सूरतरामजी के मन्दिर मे पहुच गये। आज भी डालचदजी स्वामी गायब रहे उनके शिष्य मगनजी पहुचे। शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ।

मुनिश्री ने पश्न किया- आप लोग भगवान् महावीर को दीक्षा लेने के बाद छद्मस्थ-अवस्था मे चूका बतलाते है। इसके लिए आगमपमाण क्या है?

मगनजी मुनि बोले-भगवान ने दीक्षा लेने के बाद दस स्वप्न देखे थे, ऐसा शास्त्रो के मूल पाठ मे उल्लेख है। इसी से भगवान का चूकना सिद्ध होता है।

मुनिश्री–भगवान ने जो स्वप देखे थे वे यथार्थ ही थे। दशाश्रुतस्कध सूत्र के पाचवें अध्ययन मे उन्हे तीसरी चित्तसमाधि अर्थात् धर्मध्यान कहा है। अत स्वप्न देखने से चूकना सिद्ध नही होता।

मगनजी ने इधर-उधर की थोथी दलीलें देना आरम्भ किया। समय अधिक हो जाने के कारण मध्यस्थ श्री चन्दनमलजी ने कहा-'आज चर्चा यही समाप्त हो जानी चाहिए। कल मै जोधपुर से पडितो को बुला लूगा। वे आकर सूत्र के अर्थ का निर्णय कर देगे।'

दूसरे दिन लोढाजी पण्डितो को बुलाने का प्रबध कर ही रहे थे कि उन्हे पता चला-तेरहपथ के पूज्य डालचदजी विहार करने की तैयारी कर रहे है। लोढाजी ने उन्हे रोकने के लिए दो आदमी उनके पास भेजे। तब उन्होने उत्तर दिया- अब हमे यहा ठहरना नही कल्पता। मै अपने साधु मगनजी को यहा छोड जाता हू। वे चर्चा करेगे।

चढ जा बेटा शूली पर, राम तेरा भला करेगा! गुरुजी ने अपना पिड छुडाया और चेला रह गये! मगर चेला भी गुरु से कम चतुर नही थे। दूसरे दिन मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज शास्त्र आदि लेकर चर्चा के स्थान पर पहुचे। उसी समय मालूम हुआ कि 'मगन जी अपने नाम के बीच वाले अक्षर को पहला कर रहे है अर्थात् 'मगन जी 'गमन करने को तैयार है। मध्यस्थ श्री चदनमलजी को यह बतलाया गया तो वे स्वय उनके पास पहुचे और रुक कर शास्त्रार्थ करने के लिए आग्रह किया। मगर वह चेला ही क्या जो अपने गुरुजी का अनुसरण न करे! मगनजी मुनि भी न ठहरे और चले गये।

भद्र परिणामी सीधे-सादे मुनियो को देखकर तेरहपथियो के जोश मे उफान आ गया था। क्या पता था कि वादिगज-केसरी यहा आ धमकेगा और अपनी एक ही दहाड से मतवाले हाथियो का गर्व खर्व कर देगा!

मुनि श्रीजवाहरलालजी महाराज बालोतरा मे कुछ दिन ठहरे। उनके मुख से धर्म का रहस्य श्रवण कर जनता को अपूर्व बोध हुआ। सैकडो व्यक्तियो ने यथायोग्य त्याग-प्रत्याख्यान किये। कइयो ने धर्म की सच्ची श्रद्धा ग्रहण की और आपको अपना गुरु बनाकर कृतार्थता समझी।

बालोतरा से विहार करके आप पचभद्रा, समदडी सिवाना, पाली सोजत और ब्यावर मे धर्मामृत की वर्षा करते हुए अजमेर पधारे।

वारहवां चातुर्मास

कुछ दिन अजमेर विराजकर मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज व्यावर पधारे। श्रावको के विशेप आग्रह से स १९६० का चातुर्मास व्यावर मे ही किया। चातुर्मास मे खूब आनन्द रहा। धर्म का अच्छा उद्योत हुआ।

अजमेर जाने से पहले जब आप व्यावर पधारे थे, तब अकस्मात् वहा डालचदजी पधार गये। कुछ जिज्ञासु भाइयो ने यहा भी शास्त्र-चर्चा कराने का प्रयत्न किया मगर डालचदजी चर्चा के लिए तैयार न हुए।

व्यावर मे चातुर्मास समाप्त करके मुनिश्री जयतारण पधारे। वहा तेरहपथियो के सुप्रसिद्ध साधु फोजमलजी के साथ शास्त्रार्थ हुआ। इस शास्त्रार्थ मे चार सज्जन मध्यस्थ चुने गये। उन्होने शास्त्रार्थ सबधी नियम बनाकर दोनो पक्ष वालो के सामने रखे और दोनो ने उन्हे स्वीकार किया। मध्यस्थो ने जो प्रारभिक विवरण लिखा था, वह इस प्रकार है-

जयतारण शास्त्रार्थ

सवत १९६० पोप कृष्णा तृतीया को जोधपुर राज्यान्तर्गत जयतारण नगर मे बाईस सम्प्रदायान्तर्गत मुनिश्री हुक्मीचन्द्रजी महाराज के सम्प्रदाय के साधु मुनिश्री मोतीलालजी, जवाहरलालजी आदि तथा तेरहपन्थी साधु श्री डालचन्दजी के सम्प्रदाय के साधु श्री फोजमलजी, जयचन्दजी का पधारना हुआ। दोनो का आपस म शास्त्रार्थ करने का निश्चय हुआ। उसमे हम चार व्यक्तियो को दोनो तरफ स मध्यस्थ चुना गया जिनके नाम इस प्रकार है-

१- गान्धी साकलचन्द	मन्दिर मार्गी
२- सेठ मुलतानमल	मन्दिर मार्गी
३- व्यास रूपचन्दजी	वेष्णव
४- पचोली उदयराजजी	वैष्णव

हम चारो ने शास्त्रार्थ के लिए नीचे लिखे नियम बनाए। सम्वत १९५९ मे बाईस सम्प्रदाय के साधु मुनिश्री मोतीलालजी महाराज व जवाहरलालजी महाराज का चातुर्मास जोधपुर मे था। उस समय जवाहरलालजी की तरफ से तेरहपन्थियो के पूज्यश्री डालचन्दजी से सात प्रश्न पूछे गये थे। उनका उत्तर तेरहपन्थी श्रावक श्री कृष्णमलजी ने अपने पूज्यश्री डालचन्दजी से पूछ कर 'प्रश्नोत्तर' नामक पुस्तक के रूप मे छपवाया था। अब यहा जयतारण मे बाईस सम्प्रदाय के साधु श्री जवाहरलालजी व तेरहपन्थियो के श्री फौजमलजी विद्यमान है। अब जवाहरलालजी के प्रश्न और उनके उत्तरो का सत्यासत्य निर्णय हो जाना चाहिए। इसके लिए दोनो साधुओ मे शास्त्रार्थ होना तय हुआ है, उसके नियम नीचे लिखे अनुसार है-

१-दोनो पक्ष से मध्यस्थ निष्पक्ष जैनशास्त्राभिज्ञ व प्रतिष्ठित व्यक्ति चुने जाय।

२-जो व्यक्ति मध्यस्थ चुने जाय वे शास्त्रार्थ का तत्त्व-चर्चा करके अपने निर्णय के साथ दोनो [illegible]

३- दोनो तरफ के श्रावक शास्त्रार्थ मे कुछ न बोले। मध्यस्थ महोदय जैसा उचित समझें करे।

४- जो साधु शास्त्रार्थ करे वह अपने-अपने वक्तव्य को लिखित रूप मे मध्यस्थो के सामने पेश करे।

५- शास्त्रार्थ के लिए स्थान तपगच्छ का उपाश्रय निश्चित किया जाय।

६- दोनो ओर के साधु अपने-अपने कल्प तक चर्चा को उधूरी छोडकर विहार न करे।

७- शास्त्रार्थ मे बत्तीस सूत्रो के मूल पाठ, अर्थ, टीका, दीपिका आदि पचागी प्रमाण रूप से उद्धृत की जा सकेगी।

८- समय प्रतिदिन १२ से ३ तक रहेगा।

ऊपर लिखी आठ बातो को दोनो तरफ के सन्तो ने तथा श्रावको ने मध्यस्थो के सामने स्वीकार कर लिया। इसके वाद तय हुआ कि जोधपुर निवासी जवाहरमलजी गुरासा या और कोई सस्कृत का विद्वान सस्कृत टीका का अर्थ करने के लिए चुना जाय, वह जो अर्थ करे वह दोनो साधुओ को मान्य हो।

शास्त्रार्थ का प्रारम्भ करने के लिए तय हुआ कि जवाहरलालजी महाराज ने जो सात प्रश्न पूछे है तथा जिनका उत्तर 'प्रश्नोत्तर' मे छपा है, सर्वप्रथम उनमे से पहले प्रश्न का निर्णय होगा। उसके बाद फौजमलजी प्रश्न पूछेगे जिसका उत्तर जवाहरलालजी को देना होगा।

जिस पक्ष वाले इन विषयो के विपरीत चलेगे, उन्हे दोषी समझा जायगा।

पोष कृष्णा पचमी, बुधवार को शास्त्रार्थ प्रारम्भ करने का निश्चय हुआ।

चारों मध्यस्थो के हस्ताक्षर

१– गाधी साकलचन्द

२– सेठ मुलतानमल

३– व्यास रूपचन्द

४– पचोली उदयराज

यह शास्त्रार्थ एक महीने तक चलता रहा। शास्त्रार्थ मे वादी और प्रतिवादी ने क्या-क्या युक्तिया ओर आगम के पाठ उपस्थित किये, यह विषय काफी विस्तृत हे। मगर ज्ञातव्य हे और महत्त्वपूर्ण भी हे। अधिक विस्तृत होने के कारण उसे यहा नही दे रहे है मगर ज्ञातव्य होने से उसे देना आवश्यक भी है। अतएव वह अविकल रूप से परिशिष्ट मे दिया जा रहा है। जिज्ञासु पाठक उस पर मनन करे ओर देखे कि किस वचपन के साथ, कितने घोर अज्ञान के अन्धकार मे रहते हुए भगवान् महावीर को चूका-भूला कहने का दुरसाहस किया जा रहा है! यहा सिर्फ मध्यस्थो का अन्तिम फैसला दिया जाता है, जिससे यह प्रकट हो सके कि असत्य कव तक ठहर सकता है? असत्य वह कचकडा हे जो सत्य की ज्योति के स्पर्शमात्र से दग्ध हो जाता है।

मध्यस्थों का फैसला

यह खुलासो जयपुर से साधुजी महाराज सवेगीजी श्री १०८ श्री शिवजीरामजी महाराजरो किया

हुओ फागण वदि ८ मितिरो गोलेचा धनरूपमलजी जोरावरमलजी री मार्फत खुलासो फागण वदि १० आयो। इणरो हाल ये मालूम हुवो कि श्रीवीर प्रभु ने दस स्वप्न आए यो यथातथ्य हे, मोहनीय कर्म के उदय मे नही हे ओर पडित देवीशकरजी वो पडित वालकृष्णजी ने जो अर्थ किया है सो अशुद्ध (गलत) हे ओर पडित विहारीलालजी ने जो अर्थ किया हे वह शास्त्र मे मिलता हे, वह सत्य हे। जिस वास्ते आज दिन खुलासो सुणावण ने तपगच्छ के उपासरा मे आम सभा होय ने जो कुछ खुलासो जयपुर मे आयो वो सुणायो गयो कि सवेगीजी महाराजरो खुलासो आवणसू वो वाचनेसु या वात मालूम हुई कि वाईस सम्प्रदाय के साधुजी जवाहरलालजी का प्रश्न का कहना सत्य हे ओर जो दस स्वप्न श्री महावीर ने आये वह मोहनीय कम्र के उदय नही है।और तेरापथिया का साधुजी फोजमलजी का उत्तर का कहना असत्य है। वह स्वप्न महावीर स्वामी ने आये सो मोहनीय कर्म के उदय नही है। सो सभाजनो से बीनती हे। सम्वत् १९६० रा मिति फागुण सुदि ५ आदित्यवार

द - गाधी साकलचन्द — द - व्यास रूपचन्द

द - सेठ मुलतानमल — द - पचोली उदयराज

प्रथम तो वादी ओर प्रतिवादी का कथन ही यह साबित कर देगा कि कौन पक्ष कितने गहरे पानी मे था ? सस्कृत भाषा का साधारण अभ्यासी भी समझ सकता है कि फोजमलजी जिस पक्ति के प्रमाण से (एषाञ्च पिशाचाद्यर्थाना मोहनीयादिभि स्वप्नफलविषयभूतै सह साधर्म्यं स्वय समूह्यम्) स्वप्नो को मोहनीय कर्म के उदय से होना वतलाते है, उसमे इस वात की गध मात्र भी नही हे। वेचारे फौजमलजी सरकृत तनिक भी समझते होते तो विद्वानो के समक्ष इस प्रकार हास्यास्पद कथन कदापि न करते। उन्हे इस पक्ति मे 'मोहनीय' शव्द नजर आ गया और इसी बूते पर वे अपनी बात का समर्थन करने वेठ गये। इस पक्ति का सरल ओर सीधा-सा अर्थ इतना ही हे कि स्वप्न मे देखे हुए पिशाच आदि के साथ मोहनीय आदि कर्मों की जो समानता यहा विवक्षित हे वह स्वय सोच लेनी चाहिए। इस सीधे-से अर्थ को भी समझने मे जो अयोग्य है वह किस योग्यता के बल पर दिव्यज्ञानी महाप्रभु महावीर को चूका वतलाता हे! यह योग्यता किसी ऐसे-वैसे की नही, सारे सम्प्रदाय मे जो महापडित गिना जाता था उस व्यक्ति की यह योग्यता हे!

केवलज्ञान प्राप्त होने से पहले की वात हे।एक वार भगवान् विहार कर रहे थे। गोशालक अपने-आप भगवान् का शिष्य वनकर उनके साथ रहने लगा था। मार्ग मे एक तापस आतापना लेकर तपस्या कर रहा था। उसके सिर मे वहुत सी जुए थी। वे नीचे गिर रही थी। तापस उन्हे उठाकर फिर सिर मे रख लेता था। गोशालक ने यह दृश्य देखकर मजाक किया। इससे तापस को वहुत क्रोध आया और उसने तेजोलेश्या फेकी। गोशालक का शरीर जलने लगा। भगवान् ने अनुकम्पा करके शीतललेश्या द्वारा तेजोलेश्या को शान्त कर दिया।

का ऐसा अनोखा उपाय खोज निकाला जो ससार के पर्दे पर अन्यत्र कही नही मिल सकता। उन्होने भगवान् को ही भूला बताना शुरू कर दिया। धन्य है ऐसे भक्त, जो अपने भगवान् को भूला बतलाने मे सकोच नही करते। ठीक ही कहा है-

भगत जगत मे हो गये, होगे तथा अनेक।
पर भूले भगवान् का भक्त पथ है एक॥
कहा दयामय दानमय, जिनवर! तेरा पथ।
दया-दान-द्वेषी कहा, कलि का तेरापथ॥

मगर भगवान् की भूल सिद्ध करने के लिए भी प्रमाण की आवश्यकता थी, अत उन्होने दस स्वपो के समय भगवान् को मोहनीय का उदय बतलाना शुरू कर दिया। मगर यह भी कैसे सिद्ध किया जाय ? जब यह प्रश्न सामने आया तो शास्त्र का अर्थ ही उलटा-पुल्टा करने लगे। जब सेर को सवा सेर मिल गया और काम बनते न दिखाई दिया तो ब्राह्मण पडितो को लालच देकर इच्छानुसार उलटा अर्थ करवाया और भगवान् को शठ और कपटी तक कहलवाया। (देखो पडित देवीशकर का वक्तव्य, जिसमे उन्होने लिखा है कि शठ होने के कारण भगवान् के चित्त मे समाधि नही थी, इत्यादि)

एक असत्य को छिपाने के लिए अनेक असत्यो की कल्पना करनी पडती है और नाना प्रकार के जाल रचने पडते है। मनुष्य की यह दुर्बलता अत्यत दयनीय है। शास्त्रार्थ मे विजय प्राप्त करके मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज कालू, केकिन, बलून्दा, नागौर आदि क्षेत्रो को पावन करते हुए भीनासर पधारे।

भीनासर मे पदार्पण करते समय मुनिश्री की अवस्था २९ वर्ष की थी। शरीर स्वभावत सुन्दर था। यौवन और ब्रह्मचर्य के प्रताप से उसमे अद्भुत तेज और लावण्य की आभा चमकती थी। तपस्या ने आपका प्रभाव बढा दिया था। आप मे गजब की आकर्षण-शक्ति उत्पन्न हो चुकी थी। गौर वर्ण, विशाल और दीप्तिमान लोचन, उन्नत और चमकता हुआ भाल, सौम्य मुख-मडल और दूसरी शरीर-सम्पत्ति के साथ सिह-गति से जिस समय भीनासर मे मुनिश्री ने प्रवेश किया तो लोग आश्चर्य करने लगे। उस समय ऐसा मालूम होता था, मानो सूर्य का समस्त तेज छीनकर कोई राजकुमार दीक्षित हुआ है।

अद्भुत शरीर-सौभाग्य के साथ आपकी वाणी मे भी अमृत की मिठास थी और विचारो मे मौलिकता थी। विषय-प्रतिपादन की शैली रोचक, सरल और अत्यन्त भावपूर्ण थी। कहानी कहने का आपका ढग निराला ही था। साधारण-से-साधारण कथानक मे भी वे जान डाल देते थे। अत्यन्त परिचित कथा भी जब उनके मुख से सुनी जाती थी तो अपूर्व जान पडती थी। कहानी मे वे ऊचे-से ऊचे तत्त्व का सरलता के साथ समन्वय कर देते थे।

भीनासर मे मूर्तिपूजा के विषय मे यतियो के साथ भी आपकी चर्चा हुई। आपकी युक्तिया अकाट्य होती थी। आपकी प्रतिभा और तार्किकता आश्चर्य-जनक थी। उस समय के साधुओ और श्रावको के विचार से हमारे चरितनायक मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ही सम्प्रदाय मे सबसे अधिक तेजस्वी साधु थे।

भीनासर के प्रमुख तेरहपन्थी श्रावक भी मुनिश्री के पास तत्त्वचर्चा के लिए आया करते थे। कुछ दिनो के ससर्ग के फलस्वरूप उन्हे दया-दान को एकान्त पाप समझने की अपनी भूल मालूम हो गई और वे मुनिश्री के भक्त बन गए।

तेरहवां चातुर्मास

भीनासर से मुनिश्री बीकानेर पधारे। अब आपकी कीर्ति सर्वत्र फैल चुकी थी। लोग आपकी योग्यता देखकर प्रभावित थे। बीकानेर के विशाल सघ ने मुनिश्री से बीकानेर मे ही चातुर्मास करने की प्रार्थना की। आपने प्रार्थना अगीकार करके वही चातुर्मास व्यतीत किया। चातुर्मास मे सामायिक, पोषध, व्रत, प्रत्याख्यान, दान आदि धर्मकार्य खूब हुए।

चातुर्मास के पश्चात् बीकानेर से विहार कर मुनिश्री नागोर पधारे। नागौर से अजमेर होते हुए आप आचार्य महाराज के साथ नसीराबाद पहुचे।

चौदहवां चातुर्मास

नसीराबाद मे पूज्यश्री ने आपको उदयपुर मे चातुर्मास करने का आदेश दिया। पूज्य महाराज का आदेश शिरोधार्य करके आप अजमेर, ब्यावर, पाली-मारवाड-जक्शन (खारची), सादडी आदि स्थानो मे विचरते और धर्मोपदेश देते हुए उदयपुर पधारे। सम्वत् १९६२ का चातुर्मास उदयपुर मे किया।

उदयपुर का यह चातुर्मास बहुत महत्त्वपूर्ण रहा। मुनिश्री के साथ कई तपस्वी सन्त थे। उन्होने लम्बी-लम्बी तपस्याए की। श्रावको ने विविध प्रकार के त्याग-प्रत्याख्यान आदि किये और अन्य धार्मिक कार्य किये। कई कसाइयो ने हिंसा-वृत्ति त्याग कर अपना जीवन सुधारा।

इस चातुर्मास मे उदयपुर मे नो सन्त थे, उनमे से छ सतो ने इस प्रकार तपस्या की -

१- मुनिश्री मोतीलालजी महाराज	४१ उपवास
२- मुनिश्री राधालालजी महाराज	३० उपवास
३- मुनिश्री पन्नालालजी महाराज	६१ छाछ के पानी के आधार पर
४- मुनिश्री धूलचन्दजी महाराज	३५ छाछ के पानी के आधार पर
५- मुनिश्री उदयचदजी महाराज	३१ छाछ के पानी के आधार पर
६- मुनिश्री मयाचन्दजी महाराज	४१ छाछ के पानी के आधार पर

तपस्या एक अमोघ शक्ति है। जैन धर्म मे तप की महिमा का विशद वर्णन है और वह धर्म का प्रधान अग माना गया है। हमारे चरितनायक तप के विषय मे अत्यन्त मार्मिक और प्रभावपूर्ण उपदेश फरमाते थे। उनके निम्नलिखित वाक्य आज भी अन करण मे बिजली का सचार कर देते है-

तप मे क्या शक्ति है, सो पूछो उनसे जिन्होने छ छ महीने तक निराहार रहकर घोर तपश्चरण किया है और जिनका नाम लेने मात्र से हमारा हृदय निष्पाप और निस्ताप बन जाता है। तप मे क्या बल है यह उस इन्द्र से पूछो जो महाभारत के कथनानुसार अर्जुन की तपस्या को देखकर काप उठा था और जिसने अर्जुन को एक दिव्य रथ प्रदान किया था।'

‘जो तप करता है उसकी वाणी पवित्र और पिय होती है और जो प्रिय, पथ्य तथा सत्य बोलता हे उसी का तप, तप कहलाने योग्य होता है। तपस्वी को असत्य या अप्रिय भाषण करने का अधिकार नही है। तपस्वी सत्य और प्रिय भाषा ही बोल सकता है। उसे क्लेशजनक पीडाकारक या भयोत्पादक वाणी नही बोलना चाहिए। तपस्वी की वाणी मे अमृत का माधुर्य होता है। भयभीत प्राणी उसकी वाणी सुनकर निर्भय बनता है। तपस्वी अपनी जिह्वा पर सदा नियत्रण रखता है। उसकी वाणी शुद्धि और पवित्रता से पूत होती है।

यही नही, तपस्वी मे वाचिक पवित्रता के साथ मानसिक पवित्रता भी होती है। अगर मधुर भाषण मन की अपवित्रता का आवरण बन जाय तो तपस्वी की तपस्या निरर्थक हो जाती है। जिस तप से मन शरद ऋतु के चन्द्रमा के समान निर्मल बन जाता है वह सच्चा तप है। मन का रजोगुण या तमोगुण से अतीत हो जाना ही निर्मलता है। तपस्वी को ऐसी निर्मलता प्राप्त करने के लिए सदा जागृत रहना चाहिए।’

‘चक्रवर्ती भरत महाराज के पास सेना, अस्त्र-शस्त्र और शरीर के बल की कमी नही थी। लेकिन जब देवो से युद्ध का समय आता था तब वे तेला करके युद्ध किया करते थे। इसका तात्पर्य यह हुआ कि तेले का बल चक्रवर्ती के समग्र बल से भी अधिक होता है और तपस्या द्वारा देव भी पराजित किये जा सकते है।’

यह तप की महिमा है। तप के प्रभाव से दुस्साध्य कार्य भी सुसाध्य हो जाते है। आत्मा जब तपस्या के तेज से तेजस्वी हो जाता है तो उसका दूसरो पर भी प्रभाव पडे बिना नही रहता। उदयपुर के इस चातुर्मास मे तपस्वी सतो की तपस्या का दूसरे व्यक्तियो पर अच्छा प्रभाव पडा। तपस्या के अन्तिम दिन सेकडो वकरो को अभयदान दिया गया। बहुत-से कसाई भी मुनिश्री का उपदेश सुनने तथा तपस्वियो के दर्शन करने आये। मुनिश्री ने अहिंसाधर्म पर प्रभावशाली भाषण दिया। ‘हिंसा से प्राप्त होने वाले दु खो का और अहिंसा से मिलनेवाले सुखो का विस्तारपूर्वक वर्णन किया। प्रत्येक प्राणी किस प्रकार जीवित रहना चाहता है और मृत्यु के नाम मात्र से भयभीत हो जाता है, इसका सजीव चित्र खीच दिया। श्रोताओ पर आपके भाषण का जादू सरीखा असर पडा। महाराजश्री का कथन वास्तव मे बडा ही ओजस्वी होता था। अहिंसा के विषय मे आपने एक जगह कहा है-

‘सव प्राणियो ने अपनी–अपनी रक्षा के लिए और खाने के लिए दाढ व दात, देखने के लिए नेत्र, सुनने के लिए कान, सूघने के लिए नाक, चखने के लिए जीभ आदि अग– उपाग अपने–अपने पूर्व–कर्म के अनुसार प्राप्त किये है। इनको छीन लेने का मनुष्य को कोई अधिकार नही है। जो मनुष्य मक्खी के पख को भी नही वना सकता। उसको उसे नष्ट करने का अधिकार नही है। परन्तु स्वार्थ की ओट मे कुछ भी नही दीखता। जो अग–उपाग उस प्राणी के लिए उपयोगी है, मनुष्य कहा करते है कि यह तो हमारे खाने के लिए पैदा किया गया। ऐसा कहनेवालो से सिह यदि मनुष्य की भाषा मे कहे कि–तू मेरे खाने के लिए पैदा किया गया है, तो मनुष्य उसे क्या जवाव देगा ?’

मारे जाने वाले पशुओ का हृदय हिला देने वाला करुणापूर्ण वर्णन सुनकर कसाइयो का हृदय भी पिघल गया। किसी पशु के प्राण ले लेना जिनके लिए मामूली वात थी, जिनका देनिक काम भी यही था और जिनके हृदय मे घोर क्रूरता का साम्राज्य स्थापित हो चुका था, उन कसाई भाइयो का चित्त

भी मुनिश्री का उपदेश सुनकर द्रवित हो गया। उसी समय कसाइयो के मुखिया किसनाजी पटेल ने खडे होकर प्रतिज्ञा ली-

'महाराज' मे जब तक जीऊगा, कसाईपना नही करूगा। कभी किसी जीव को नही मारूगा और न मास खाऊगा। मारने के उद्देश्य से बकरा आदि पशुओ का व्यापार भी नही करूगा।'

किसनाजी पटेल ने अपनी प्रतिज्ञाओ का बराबर पालन किया। उसका एक मुकदमा अदालत मे चल रहा था। उसके लगभग तीन हजार रुपये अटके हुए थे। प्रतिज्ञाए लेने के कुछ ही दिन बाद उसकी जीत हो गई और उसे तीन हजार रुपये मिल गये। सरल हृदय किसना ने उसे 'धर्म का प्रताप समझा। इससे अहिंसा धर्म के प्रति उसकी श्रद्धा और बढ गई। उसने दूसरे भाइयो को भी हिंसावृत्ति से दूर करने का प्रयत्न किया। उसके प्रयत्न से ग्यारह कसाइयो ने पशु मारने का व्यवसाय छोड दिया और दूसरा धधा अख्तियार किया।

श्रावको ने उस समय इक्कीस रगी सामायिके की थी। इसमे ४४१ आदमी सम्मिलित होते है। कई श्रावको ने धर्मोत्साह के रग मे रगकर एक साथ सौ-सौ सामायिके की। उस समय वर्तमान आचार्य महोदय पूज्यश्री गणेशीलालजी महाराज गृहस्थावस्था मे थे, तथापि आपके सस्कारो मे धार्मिकता की गहरी छाप थी। आपने भी ४१ सामायिके एक साथ की थीं। चरितनायक के उदयपुर के पहले चातुर्मास मे आपने सम्यक्त्व ग्रहण किया था और इस चातुर्मास में आप चरित्र की ओर काफी कदम बढा चुके थे। प्रकृति अलक्षित रूप मे चरितनायक के उत्तराधिकारी का निर्माण करने मे लगी थी।

उस समय उदयपुर स्टेट के प्रधानमत्री राजेश्री बलवन्तसिहजी साहब कोठारी मुनिश्री के गाढ परिचय मे आये और परम भक्त बन गये। आपका प्रतिष्ठित परिवार आज तक पूज्यश्री के परम भक्तो मे गिना जाता है। लाला केशरीलालजी, लाला हरभजनलालजी आदि उच्च राज्यपदाधिकारियो ने भी मुनिश्री के व्याख्यानो से खूब लाभ उठाया। महद्राज सभा कोसिल के मेम्बर श्रीमदनमोहनलालजी पर तो इतनी गहरी छाप पडी कि वे महाराजश्री के परम भक्त बन गये।

मुनिश्री मोतीलाल जी महाराज की तपस्या के पारणे के दिन अनेक व्यक्तियो ने विविध प्रकार के व्रत ग्रहण किये। लाला केशरीलालजी और उनकी धर्मपत्नी ने आजीवन ब्रह्मचर्य-व्रत धारण किया। कायस्थ होने पर भी इस परिवार को मुनिश्री के प्रति बडी ही श्रद्धा भक्ति थी।

उत्तराधिकारी की प्राप्ति

मुनिश्री का व्याख्यान सुनने के लिए जो बहुसख्यक जनता एकत्र होती थी, उनमे श्री गणेशीलालजी [illegible] का नाम खासतौर पर उल्लेखनीय है। वे प्रतिदिन व्याख्यान सुनते थे और जो कुछ सुनते थे उसे अपने कानो के द्वारा अपने अन्तरग तक पहुचाते जाते थे। सोलह वर्ष की नवीन उम्र थी मगर उनके धार्मिक सस्कार बहुत पुराने थे। उन सस्कारो का आरभ कब कहा और किस प्रकार हुआ यह नहीं कहा जा सकता। उनके सस्कार पुराने होने के कारण इसी प्रकार आच्छादित थे जैसे भस्म से अंगार आच्छादित रहता है। उसी समय मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज के प्रवचनरूपी पवन चलने से ऊपर का आच्छादन दूर हो गया और उनके भीतर की ज्योति चमकने लगी। अन्य कारण [illegible] सकता। अत

मारूजी के हृदय मे वेराग्य की भावना प्रबल हो उठी। भाद्रपद शुक्ला नवमी को आपने ब्रह्मचर्य व्रत अगीकार किया और आजीवन चौविहार का खध कर लिया। उसी समय आपने दीक्षा लेने का अपना निश्चय भी पकट कर दिया। चातुर्मास समाप्त होने पर मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपद् को आपने दीक्षा अगीकार कर ली। उसी समय एक दूसरे सद्‌गृहस्थ श्री पन्नालालजी भी दीक्षित हो गये। दीक्षा के अवसर पर बडे-बडे राज्याधिकारी तथा हजारो की सख्या मे श्रावक उपस्थित थे।

दीक्षा लेने के पश्चात् मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज ने सस्कृत भाषा और जैनशास्त्रो का अध्ययन आरम्भ किया। उर्दू और फारसी आप पहले से ही जानते थे। आजकल आप ही सम्प्रदाय के आचार्य है। आपका विशेष परिचय आगे दिया जायगा।

इस प्रकार उदयपुर का यह चातुर्मास समाप्त करके चरितनायक ने वहा से विहार किया। अनेक स्थानो मे धर्मामृत बरसाते हुए आप नाथद्वार पधारे। जहा कही मुनिश्री पधारे वही लोगो मे जागृति हुई। उदयपुर के प्रधानमत्री कई बार आपके दर्शन करने आये। गोगुदा ग्राम के रावजी भी व्याख्यान सुनने आये और मुनिश्री के प्रति श्रद्धा-भक्ति लेकर लौटे।

नाथद्वारा मे उस समय मुनिश्री मुन्नालालजी महाराज विराजमान थे। मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज भी वहा पधार गये। कुछ दिनो बाद आचार्य प्रवर पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज के भी उसी ओर विहार करने के समाचार प्राप्त हुए। मुनिश्री को इस सवाद से बडी प्रसन्नता हुई। पूज्यश्री के आगमन के समय आप सामने गये और भक्तिपूर्वक उनके दर्शन किये। पूज्यश्री के साथ तपस्वी मुनि बालचन्द्रजी भी थे। जब पूज्यश्री नाथद्वारा से तीन मील दूर कोठारिया ग्राम मे पहुचे तो अकस्मात् तपस्वीजी को लकवा मार गया। कई साधुओ ने तपस्वीजी को उठाया और नाथद्वारा ले आये। उस समय नाथद्वारा मे २६ सन्त एकत्र हुए।

नाथद्वारा मे कुछ दिनो तक पूज्यश्री तथा अन्य स्थविर सतो की सेवा करके मुनिश्री ने विहार कर दिया। राजनगर, काकरोली, कुमारिया, मानवली आदि स्थानो मे उपदेश-गगा बहाते हुए आप उटाला पधारे। वहा से उदयपुर मे पूज्यश्री के पुन दर्शन करते हुए आपने दो ठाणा से झालावाड की ओर विहार किया। आपके साथ उस समय मुनिश्री बडे चादमलजी महाराज थे। उटाला से झालौड (झालावाड) सोलह मील दूर है। विकट पहाडी पथ है। मुनियो को मार्ग मे आहार-पानी मिलना कठिन है। फिर भी मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने इन कठिनाइयो की परवाह नही की और आने वाली कठिनाइयो का आनन्दपूर्वक सत्कार करते हुए झालौड पधार गये। वहा के रावजी ने बडे प्रेम से मुनिश्री के व्याख्यानो से लाभ उठाया। धीरे-धीरे उन पर जैनधर्म की गहरी छाप पड गई।

झालावाड से फिर नाथद्वारा होते हुए आप गगापुर पधारे। गगापुर मे कुछ तेरहपथी भाइयो से चर्चा हुई। उसके वाद आप पोहना पहुचे। यहा भी वहुत-से तेरहपन्थी भाई आपके पास शका-समाधान करने आया करते थे। मुनिश्री उन्हे समभाव से शास्त्रीय प्रमाणो के साथ तत्त्व समझाते और उनकी शकाओ का सन्तोषजनक समाधान करते थे। फलस्वरूप अनेक तेरहपथी आपके भक्त वन गए।

पोहना के पश्चात् आप पूर पधारे। यहा वाईस सम्प्रदाय के पाच-सात घर थे और तेरहपन्थी गृरस्थो के घर ज्यादा थे। तेरहपन्थी गृहस्थो ने मुनिश्री को ठहरने के लिए मकान देने तक की उदारता

न बतलाई। अन्त में आप जैन-मन्दिर मे ठहरे। पूर मे उस समय तेरहपन्थी साधु भी मौजूद थे। पहले उन्होंने शास्त्रार्थ करने की इच्छा प्रदर्शित की मगर जब मुनिश्री का पूरा परिचय उन्हे मिला तो उनकी इच्छा गर्भ में ही विलीन हो गई।

पूर से विहार करके आप भीलवाडा, वेगू, खदवासा होते हुए सिगोली पधारे। सिगोली मुनिश्री मोतीलालजी महाराज की जन्मभूमि है। वहा के लोगो का अधिक आग्रह देख मुनिश्री वहा मासकल्प विराजे। वहा से वेगू होते हुए पारसोली पधारे। पारसोली के रावजी पर आपके उपदेशो का अच्छा असर पडा। उन्होने कई प्रकार के त्याग-प्रत्याख्यान किये और पशु-हिंसा का त्याग किया। वहा से आप चित्तोड पधारे। चित्तोड के हाकिम साहब ने आपका उपदेश सुनकर कई प्रकार के त्याग-पत्याख्यान किए।

चित्तोड से राशमी, अरणिया, खाखला, पोटला, गगापुर, साहडा, कोशीयल, देवरिया और माकुदा होते हुए मुनिश्री आमेट पधारे। यहा कई तेरहपन्थी भाई धर्म-चर्चा करने आये और मुनिश्री ने उनका सन्तोषजनक समाधान कर दिया। आमेट से झिलुरा, देवगढ, मदारिया, निवाहेडा, बोराना होते रायपुर पधारे।

सुगनचंदजी कोठारी को प्रतिबोध

अजमेर के पास मसूदा नाम का एक सम्पन्न ठिकाना है। वहा का कोठारी परिवार प्रतिष्ठित और विशाल है। इस परिवार के श्री सुगनचन्दजी कोठारी रायपुर मे मुनिश्री के दर्शनार्थ आये। आप वहा नायब हाकिम थे। आपके पूर्वज जैन थे मगर आप आर्यसमाजी हो गये थे। अच्छे कार्यकर्त्ता, सुधारक और समझदार सज्जन थे। जैन-धर्म के वास्तविक स्वरूप का ठीक-ठीक प्रतिपादन करने वाले योग्य विद्वान का समागम न होने से उनकी श्रद्धा बदल गई थी। उन्होने यह समझ रखा था कि जैनधर्म में बाह्य क्रियाकाण्ड ही मुख्य है, आत्म-शान्ति का असली मार्ग वहा नही है। जैन-धर्म एकान्त त्याग का विधान करके अकर्मण्यता की ओर प्रेरित करता है।

मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज के व्याख्यान सुनने से और उनके साथ धर्म-चर्चा करने से आपको अपना भ्रम मालूम होने लगा। आपके विचारो मे परिवर्त्तन हो गया। एक दिन व्याख्यान-परिषद में ही खडे होकर उन्होंने कहा महाराजश्री, मेरा खयाल था कि जैन-धर्म सिर्फ बाहरी आडम्बरो से ही भरा है। उसमें कोई सारगर्भित बात नही है। मुझे खयाल भी नही था कि आप जिन बातो का उपदेश दे रहे है वे जैन धर्म मे हो सकती है। आपके भाषण से मेरी आखे खुल गई। अब मै समझा कि जैनधर्म में आत्म-शान्ति के सभी आवश्यक तत्त्व विद्यमान है।

उसी समय से कोठारी सुगनचन्दजी की श्रद्धा में परिवर्त्तन हो गया। आप फिर जैनधर्म के अनुरागी और मुनिश्री के भक्त बन गये।

रायपुर मे धर्म का उद्योत करके मुनिश्री [illegible] सन्तो के साथ गगापुर पधारे।

पंद्रहवां चातुर्मास

संवत् [illegible] का मुनिश्री का चातुर्मास गगापुर मे ही व्यतीत हुआ। इस चातुर्मास मे महाभाग

[illegible]

मुनिश्री मोतीलालजी महाराज ने ३३ दिन की तपस्या की। मुनिश्री पन्नालालजी और गगारामजी महाराज ने भी लम्बी-लम्बी तपस्याए की। मुनिश्री घासीलालजी महाराज ने अमरकोष सीखा। मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज (वर्त्तमान आचार्य) ने लगभग ४० थोकडे दशवैकालिक सूत्र मूल, सात अध्ययन का शब्दार्थ तथा उत्तराध्ययन के ९ अध्ययन कठस्थ किये। तपस्याओ के पूर के अवसर पर अनेक व्रत-पत्याख्यान एव खध हुए। बाहर से भी अनेक सज्जन धर्म की प्यास बुझाने के लिए मुनिश्री की सेवा मे पहुचे। मुनिश्री के पभावशाली उपदेशो से प्रभावित होकर बहुत से लोगो ने मदिरा, मास, पर-स्त्री-गमन आदि का त्याग किया। साहडा एव राशमी के हाकिम साहबान तथा अन्य जैनेतर भाइयो ने भी मुनिश्री के उपदेश से अच्छा लाभ उठाया।

गगापुर का चातुर्मास पूर्ण करके आप लाखोला, साडा, पोटला, राशमी होते हुए कपासन पधारे। कपासन से आकोला होते हुए बडी सादडी पधार गये। उस समय बडी सादडी मे आचार्य महाराज पूज्यश्री १००८ श्री श्रीलालजी महाराज विराजमान थे। उनके दर्शन करके मुनिश्री को अपार हर्ष हुआ।

मुनिश्री लखमीचन्दजी के ससारावस्था के पुत्र श्री पन्नालालजी, आपकी पत्नी और श्री रतनलालजी की दीक्षा इसी समय हुई। श्रीरतनलालजी बाल-ब्रह्मचारी और होनहार थे किन्तु आयुष्य की कमी के कारण स्वर्गवासी हो गये।

मुनिश्री ने विभिन्न स्थानो पर विचरकर जो धर्म-प्रचार किया था, उसके लिए पूज्यश्री ने हार्दिक सतोष प्रकट किया। वहा से अलग विचरकर आपने कानौड मे फिर पूज्यश्री के दर्शन किए।

कानौड से विहार करके आप डूगरा, नकूम, छोटी सादडी, निबाहेडा, जावद, नीमच, मन्दसौर, सीतामऊ, नगरी, जावरा होते हुए सैलाना पधारे। सैलाना मे बाजार मे आपका पब्लिक व्याख्यान हुआ। वहा से खाचरौद होते हुए रतलाम पधारे।

इस लम्बे प्रवास मे मुनिश्री ने सर्वत्र हजारो व्यक्तियो को आत्म-कल्याण का प्रशस्त पथ प्रदर्शित किया। बहुत से मूक पशुओ को अभय-दान मिला। बहुतो को मदिरा, मास, पर-स्त्री-गमन आदि के पापो से वचाया। बडे-बडे ठाकुरो, जागीरदारो, सरदारो और प्रसिद्ध शिकारियो को शिकार के घोर पाप से जिदगी भर के लिए बचा दिया।

सोलहवां चातुर्मास

वि स १९६४ मे आपका चातुर्मास ठाणा आठ से रतलाम मे हुआ। वहा विराजने से बहुत उपकार हुआ। प्रतिदिन हजारो व्यक्ति आपके व्याख्यान से लाभ उठाते थे। व्याख्यान मे सूत्रकृताग और भगवती सूत्र का सरल भाषा मे स्पष्टीकरण किया जाता था। स्वतन्त्र-रूप से सस्कृत भाषा का अध्ययन न करने पर भी अपनी अध्ययनशीलता, क्षयोपशम की प्रवलता, जन्म-जात प्रतिभा और शास्त्रीय विषयो के सूक्ष्म परिचय के कारण आप सूत्रकृताग की टीकाओ का आशय भली-भाति समझ लेते और श्रोताओ को समझाते थे। मुनिश्री दौलतऋषिजी महाराज तथा गोदाजी मालवी, सेठ अमरचदजी, रूपचदजी, हीरालालजी तथा इन्द्रमलजी कावडिया आदि गृहस्थ दोपहर के समय आपसे भगवती सूत्र का वाचन, मनन, श्रवण करने आया करते थे और मुनिश्री की मार्मिक विवेचना सुनकर अत्यन्त हर्षित होते थे।

इस चातुर्मास मे भी अनेक सन्तो ने तपस्याए की। वह इस प्रकार है–

१- मुनिश्री मोतीलालजी महाराज ४० उपवास

२- मुनिश्री राधालालजी महाराज ४० उपवास

३- मुनिश्री पन्नालाल जी महाराज ५१ उपवास

४- मुनिश्री उदयचन्दजी महाराज ३६ उपवास

मुनिश्री मोतीलालजी महाराज की तपस्या के पारणे के दिन करीब १५० खध हुए। तरह -तरह के त्याग-प्रत्याख्यान हुए। पारणा के दिन मुनिश्री मोतीलालजी महाराज स्वय भिक्षा के लिए गए। इसका जनता पर वडा प्रभाव पडा।

चातुर्मास समाप्त होने के अनन्तर मुनिश्री परबतगढ, बदनाव होते हुए कोद पधारे। कोद के ठाकुर साहब ने बडी श्रद्धा-भक्ति के साथ मुनिश्री के उपदेश सुने। बहुत-से लोगो ने शराब, आदि मादक द्रव्यो का और मास आदि अभक्ष्य वस्तुओ का त्याग किया। तीस-चालीस खध हुए।

कोद से विहार करके विडवाल, देसाई, कानून, नागदा होते हुए आप धार पधारे। मुनिश्री जहा भी पहुचे, सर्वत्र जनता को दुर्व्यसनो से छुडाया। कोद के ठाकुर साहब ने भक्ति-भाव पूर्वक मुनिश्री का उपदेश सुना और आभार माना। विडवाल के ठाकुर साहब भी व्याख्यान सुनते तथा शका-समाधान करते थे। आपने मुनिश्री के समक्ष कई त्याग-प्रत्याख्यान किये।

मुनिश्री के आगमन से धार की जनता मे आनन्द की लहर दौड गई। प्रतिदिन बहुसख्यक श्रोता आपके व्याख्यानों से लाभ उठाने लगे। वहा के सुप्रसिद्ध सेठ मोतीलालजी, गेदालालजी और कन्हैयालालजी आदि का उत्साह विशेष रूप से प्रशसनीय था। मुनिश्री के कई जाहिर व्याख्यान हुए। धार रियासत के बडे-बडे सरदार तथा राज्य-पदाधिकारी आपके व्याख्यानो से लाभ उठाने लगे। मुनिश्री के व्याख्यान की प्रशसा सुनकर धार-नरेश ने भी व्याख्यान सुनने की इच्छा प्रदर्शित की। मगर उसी समय अचानक कार्यवश उन्हे बाहर चला जाना पडा।

धार से विहार कर मुनिश्री दिसाई, राजगढ, पटलावद और कुशलगढ होते हुए और उपदेशामृत की वर्षा करके भव्यजीवो का कल्याण करते हुए बाजणा पधारे।

पशु-बलि बन्द

के पटेल मुनिश्री का व्याख्यान सुनने आये। उपदेश इतना पभावजनक हुआ कि हृदय तक असर कर गया। सरल हृदय पटेलो पर व्याख्यान का तत्काल पभाव पडा। उन्होने खडे होकर प्रतिज्ञा ली कि- 'हम लोग अपने-अपने गाव मे, दशहरे के अवसर पर देवी के सामने भैसो और बकरो की बलि नही चढायेगे और दूसरो को भी रोकने का पयत करेगे।' सभी पटेलो ने एक प्रतिज्ञा-पत्र पर अपने-अपने अगूठे लगाए और वह पतिज्ञा-पत्र वहा के श्रावको को सौप दिया। श्रावको ने इस पवित्र प्रतिज्ञा का सत्कार करने के उद्देश्य से सभी पटेलो को पगडी बधाई और पेम के साथ उन्हे विदा दी। इस प्रकार मुनिश्री के उपदेश से एक ही तहसील मे हजारो पाणियो के पाण बच गये।

कान्फ्रेंस के अधिवेशन पर

बाजणा से विहार करके शिवगढ होते हुए आप रतलाम पधारे। उन्ही दिनो रतलाम मे श्री श्वे स्था जैन कान्फेंस का दूसरा अधिवेशन था। भारतवर्ष के विभिन्न प्रातो से हजारो सज्जन कान्फ्रेस मे सम्मिलित होने आये थे। मोरबी के नरेश तथा राजपूताना एव मध्यभारत के अनेक जागीरदार भी कान्फेन्स के अधिवेशन मे शरीक हुए थे। करीब दस हजार की भीड थी। उसी अवसर पर विशाल सभा मे मुनिश्री का व्याख्यान हुआ। आपने अपने व्याख्यान मे कान्फ्रेस को सच्ची कामधेनु बनने की पेरणा करते हुए इस आशय के उद्‌गार व्यक्त किये।

'भारत मे कामधेनु की कल्पना अत्यन्त प्राचीन काल से प्रचलित है। कामधेनु का असली स्वरूप क्या है ? यह कहना आज कठिन है, क्योकि साहित्यिक कामधेनु आज कही प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर नही होती। वह तो एक सुखद कल्पना के रूप मे ही आज हमारे दिमाग मे विद्यमान है। उसका स्वरूप कुछ भी हो, उस परोक्ष कामधेनु के बदले हमे प्रत्यक्ष कामधेनु की ओर ही ध्यान देना चाहिए। आखो के आगे वाली वस्तु के प्रति उपेक्षा धारण करके अधकारमय अतीत मे भटकने से कोई लाभ नही हो सकता। अतएव हमारे सामने जो कामधेनु है, उसी की ओर हमे नजर दौडानी चाहिए। यही कामधेनु हमारा समस्त मनोरथ पूरा कर सकती है।

कामधेनु अपने चार पैरो पर अवलबित रहती है, उसी प्रकार कान्फ्रेस रूपी कामधेनु, साधु साध्वी, श्रावक और श्राविका रूप चतुर्विध सघ के सहारे खडी है। एक भी पैर अगर स्वस्थ और पुष्ट न हो तो कामधेनु लगडी और प्रगति करने मे उतनी समर्थ नही हो सकती। प्रगति करने के लिए चारो पैरो का शक्तिशाली होना आवश्यक है। इसी प्रकार कान्फ्रेस कामधेनु भी तब ही प्रगति कर सकती है जब उसके पूर्वोक्त चारो पैर समान रूप से सामर्थ्यवान हो। अगर एक भी पैर दुर्बल या रुग्ण हुआ तो उसकी प्रगति मे बाधा पडना अनिवार्य है। यद्यपि कामधेनु के दो पैर आगे और दो पैर पीछे रहते है, फिर भी पगति के लिहाज से चारो का महत्त्व है। इसी प्रकार कान्फ्रेस अर्थात् महासघ रूपी कामधेनु के दो पैर-साधु और साध्वी आगे है और दो पैर श्रावक और श्राविका -पीछे है, फिर भी प्रगति के लिहाज से सभी का महत्त्व है। चारो पैर एक दूसरे के सहायक है।

यह ध्यान रखना चाहिए कि कामधेनु जिस ओर प्रयाण करने की इच्छा करती है, उसके चारो पर उसी ओर बढते है। अगर चारो पैरो मे यह एक रूपता न हो और चारो पैर चारो विरुद्ध दिशाओ मे चलना चाहे तो बेचारी कामधेनु की क्या स्थिति हो ? वह एक भी कदम आगे नही बढ सकेगी और

जीवित रहना भी उसके लिए दूभर हो जायगा। इसी प्रकार कान्फ्रेस-कामधेनु के चारो आधार जब एक ही दिशा मे प्रयाण करने के लिए तत्पर होगे तभी वह आगे बढ सकती है। चतुर्विध सघ की दिशा अगर एक ही न हुई और सब अपनी-अपनी मनमानी करने लगे तो वह आगे नही बढ सकती। यही नही वरन् उसका जीवित रहना भी दूभर हो सकता है। कामधेनु के पिछले दोनो पैर अगले पैरो का ही अनुसरण करते है-अगले पैरो का जो लक्ष्य होता है वही पिछले पैरो का भी लक्ष्य होता है, उसी प्रकार कान्फ्रेस-कामधेनु के पिछले दोनो पैरो को अगले पैरो का ही अनुसरण करना चाहिए- वही उनका लक्ष्य होना चाहिए।

हा, अगले पैरो पर अपनी भी जिम्मेवारी है और पिछले पैरो की भी जिम्मेवारी है, अतएव रवाना होने से पहले उन्हे अपने मार्ग का भली-भाति विचार करना चाहिए। पिछले पैरो को अगले पैरो का अनुसरण करना चाहिए।

कामधेनु मे यह सामर्थ्य है कि वह घास जैसे तुच्छ पदार्थ को भी ग्रहण करके उसे दूध रूप मे परिणत कर लेती है। अगर कामधेनु मे यह शक्ति न होती तो कौन उसकी उपासना करता ? इसी प्रकार कान्फ्रेस-कामधेनु मे भी यह शक्ति होनी चाहिए। भगवान् महावीर के सघ मे जिसने प्रवेश किया-सघ ने जिसे अपनाया, वह चाहे घास की भाति तुच्छ ही क्यो न हो, उसे दूध के रूप मे परिणत करने का सामर्थ्य उसमे होना चाहिए, जैसे दूध निष्कलक, उज्ज्वल और मधुर है उसी प्रकार वह व्यक्ति भी इस कामधेनु के अपना लिए जाने पर क्रिया से निष्कलक, मन से उज्ज्वल और वचन से मधुर बन जाना चाहिए। अगर इस प्रत्यक्ष कामधेनु मे यह शक्ति न हुई तो कौन इसकी शरण ग्रहण करेगा ? कौन इसकी उपासना करेगा ?

कामधेनु के चार स्तन होते है और चारो स्तनो के द्वारा निकलने वाले दूध को प्राप्त करके कामधेनु का सेवक अपने को कृतार्थ मानता है। कान्फ्रेस अर्थात् सघ रूपी कामधेनु के भी चार स्तन है-दान, शील, तप और भावना। इन चारो स्तनो के द्वारा निकलने वाला दूध-रूपी फल भी समान होता है और उस फल को पाकर मनुष्य अपने को कृतार्थ बनाता है।

जैसे कामधेनु को दो सुन्दर सीग सुशोभित करते है उसी प्रकार यह कामधेनु भी सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चरित्र से शोभायमान होनी चाहिए। याद रखना चाहिए कि कोई भी एक सीग दूसरे के अभाव से शोभाजनक नही होता, उसी प्रकार चरित्र के बिना ज्ञान और ज्ञान के बिना अकेला चरित्र शोभा नही पाता। अतएव इन दोनो की आवश्यकता है।

कामधेनु मे दो दृष्टिया है। दोनो से वह काम लेती है। इस प्रत्यक्ष कामधेनु को भी दो दृष्टियो से काम लेना चाहिए। एक दृष्टि से उसे अपने भीतर घुसे हुए कुसस्कार को, कुरूढियो को, अज्ञान, अनैक्य, अनुत्साह आदि दोषो को देखना चाहिए और दूसरी दृष्टि से उन आवश्यक बातो को देखना चाहिए जिनको स्वीकार किये बिना उसका निस्तार नही। इस प्रकार बुराइयो का त्यागने से और उनके स्थान पर अच्छाइयो को ग्रहण करने से कल्याण का, अभ्युदय का और प्रगति का मार्ग मिलेगा और जीवन आदर्श बनेगा।

आप काफ्रेस-कामधेनु को महिमामयी बनाना चाहते है तो आपको सर्वस्व-त्याग करके परोपकार करने का पाठ सीखना होगा। एक बात और, कामधेनु उसी को मनोवाछित फल प्रदान करती है जो उसकी सेवा करता है। अगर कोई कामधेनु को घास-पानी भी न दे तो वह कैसे जीवित रहेगी और कैसे फल देगी ? इसी पकार अगर आप कान्फ्रेस-कामधेनु की सेवा करेगे, उसे पुष्ट करेगे तो वह आपको पुष्ट करेगी। पारस्परिक आदान-प्रदान का नियम यहा पूर्ण-रूप से लागू होता है।'

मुनिश्री का वह व्याख्यान आज लिखित रूप मे विद्यमान नहीं है। आपका व्याख्यान काफी लम्बा था। सच्चे सुधारक के रूप मे जनता के सामने आपने जो विचार प्रस्तुत किए थे वे अत्यन्त मननीय है। उनमे धार्मिक और सामाजिक सुधारो के सभी तत्त्वों का समावेश है। उस व्याख्यान के बाद जनता आपका व्याख्यान सुनने के लिए अत्यन्त उत्सुक रहने लगी। जब भी आपकी वाग्धारा प्रवाहित होती, लोग मत्र-मुग्ध होकर सुनते।

रतलाम से विहार करके मुनिश्री सैलाना पधारे। वहा कुछ दिन उपदेश देकर पचेड, नामली, शिवगढ, रावटी, करवड, पटलावद होते हुए थादला पधारे। सभी स्थानो पर धर्म-जागृति हुई और अनेक श्रावको ने यथाशक्ति त्याग-प्रत्याख्यान आदि किये। इस वर्ष एक तेजस्वी व्याख्याता के रूप मे सारे समाज मे आपकी पसिद्धि हो गई।

सतरहवां चातुर्मास

सवत् १९६५ का चातुर्मास आपने थादला मे व्यतीत किया। थादला मे बहुत से भाई रहते थे। नदी मे जाल डालकर मछलिया पकडना उनकी जीविका थी। श्रावको की प्रेरणा से भोई लोग मुनिश्री का उपदेश सुनने आने लगे। एक दिन उन्होने निश्चय किया-'जबतक महाराज थादला मे विराजमान रहे तबतक कोई भोई मछलिया न पकडे। श्रावको ने भोई भाइयो के इस शुभ निश्चय के प्रति अपना प्रेम प्रदर्शित किया और चातुर्मास भर अपनी ओर से उनके भोजन का प्रबध कर दिया।

विनीत निमंत्रण

उन्ही दिनो कुछ विद्वान शास्त्रार्थ करने की इच्छा से धार पहुचे। धार-नरेश सुप्रसिद्ध विद्या-विलासी राजा भोज के उत्तराधिकारी है। इसी कारण विद्वान वहा गये और शास्त्रार्थ करने की अपनी इच्छा उन्होने प्रकट की। मगर इस समय का धार भोजकालीन धारा नगरी नही थी। वह धारा तो भोज के साथ ही समाप्त हो गई। राजा भोज की मृत्यु पर एक कवि ने कहा था-

अद्य धारा निराधारा, निरालम्बा सरस्वती।
पण्डिता खण्डिता सर्वे, भोजराजे दिवगते॥

अर्थात्- आज भोजराज के स्वर्ग-गमन करने पर धारा नगरी निराधार हो गई, सरस्वती के लिए सहारा नही रहा और सब पण्डित खण्डित हो गए।

धार-नरेश मुनिश्री की प्रशसा सुन चुके थे। उनकी दृष्टि आप पर ही गई। उसी समय उन्होने एक पत्र थादला लिखा। उसमे लिखा था-'अगर मुनिश्री जवाहरलाल जी महाराज को शास्त्रार्थ करने के लिए यहा आने का अवकाश हो तो शीघ्र सूचना दीजिए। उन्हे लाने के लिए हाथी-घोडा आदि लवाजमा भेज दिया जायगा।'

थांदला के श्रावकों ने उत्तर दिया-'जैन साधु चातुर्मास मे एक ही स्थान पर रहते है। इस समय विहार करना उनकी शास्त्र-मर्यादा मे नही है। अतएव मुनिश्री वहा नही पधार सकते। अगर चातुर्मास के पश्चात् आवश्यकता हो तो सूचना दीजिएगा। हम मुनिश्री से उसी ओर विहार करने की प्रार्थना करेंगे। जैन साधु सदा पैदल ही विहार करते है। किसी भी प्रकार की सवारी का उपयोग नही करते। अतएव हाथी-घोडा आदि कुछ भी भेजने की आवश्यकता नही है।'

धार नरेश के लिए यह गौरव की बात थी कि उन्होने आगत विद्वानो को यो ही नही टाल दिया। उन्होने महाराज भोज की परम्परा को किसी अश मे कायम रखा और शास्त्रार्थ के लिए आयोजना की। मगर शास्त्रार्थ-अर्थी विद्वान् अधिक दिनो तक नही ठहर सकते थे। इस कारण शास्त्रार्थ तो न हो सका परन्तु धार-नरेश पर उस पत्र का बहुत अच्छा प्रभाव पडा। जैन साधुओ के पैदल विहार और अन्य कठोर तपश्चरण की बात जानकर उनके हृदय मे भक्ति-भाव उत्पन्न हो गया।

इस चातुर्मास मे मुनिश्री मोतीलालजी महाराज और मुनिश्री राधालालजी महाराज ने ४२-४२ दिन की अनशन-तपस्या की। श्री पन्नालालजी महाराज ने भी लम्बी तपस्या की। पूर के दिन बहुत भीड हुई। अनेक खध हुए। बहुत से भाइयो ने शिकार और मासाहार का त्याग किया। अनेक जीवो को अभय-दान दिया गया। श्रावको ने विविध प्रकार से धर्म-जागरणा की।

समाज-सुधार

उस समय थांदला मे समाज सुधार के लिए नीचे लिखा पचायतनामा लिखा गया और सर्वसम्मति से वह स्वीकार किया गया।

ओसवाल सकल पंचपुर थांदला के खाता पा. १९१७ की नकल

सवत १९६५ के साल मे चोमासा की विनन्ती अरज सघ तरफ से होने से श्री १००८ श्री तपस्वीजी महाराज परमदयाल, कृपावत, करुणा के सागर, गुण के आगर, ऐसी अनेक ओपमा योग श्री १००८ श्री मोतीलालजी महाराज साहेब, श्री १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज ठाणा ६ से चातुर्मास की कृपा करके इस क्षेत्र की सौभाग्य दशा होने से पधारे। महाराज साहेब के पधारने के पीछे यहा श्री तपस्वीजी श्री १००८ श्री मोतीलालजी महाराज साहेब, श्री १००८ श्री राधालालजी महाराज साहेब ने तपस्या दिन ४२ की दोनो महाराज साहेब ने की। बाद श्री १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज साहेब वखाण अमृतधारा मेह की तरह फरमाते हुए जीव दया, तपस्या, त्याग, वैराग वगैरा बहोत-सा उपगार हुआ। महाराज साहेब का फरमान व्याख्यान द्वारा धार्मिक व सासारिक व्यावहारिक सुधार बाबत उपदेश फरमाने से उसका असर होता रहने से आज रोज सकल पच शहर पूरा शरीक होकर नीचे मुजिब कलमवार सासारिक व धार्मिक सुधार बाबत ठहराव किया गया सकल पचो की राजी से।

नीचे मुजब कलमवार

ने परेदश जाई ने जादा देज सू परणाई देवे तो ज्यादा लिया हुआ कुल रुपया बेटी का बाप से पच वसूल कर लेवे। तथा भात खिचडी का रुपैया नकदी लेवा का हकदार पच है सो वसूल कर लेवे। अण मे उजर व पक्ष नही करेगा। लडकी की उमर ११ वर्ष पेश्तर नही परणावणी। व लडके को तेरा बरस के नीचे व पीसतालीस बरस के उपरात नही परणावणो। अणा के खीलाफ कोई भी करे तो वणा के पच ठपको देवे।

२- वीद व वीदणी बरात भाणा मे खरच जात रसम करवा की तादाद-वीद के यहा की रकम-

खीचडी न १ नारेल न १ सातो न १ आखा विवाह मे।

रास की खारका मण ४ वीदणी के घरे मेलणी।

नारेल न ५१ वीदणी परणवाने जावे जदी राज खरचा का।

१२) चवरी का पचायती।

५) वासण भाडा का भात खीचडी का।

३) देव का खीचडी का।

२) खोल का

४) पौषधशाला

वीदणी के यहा की रसम-

भात नग १ नारेल नग १ सातो नग १ आखा विवाह मे।

७) पचायती

३) देव का भात का

४) पौषधशाला

१॥) टीकरो देव का बाबत

३- विवाह मे रण्डी को नाच करावणो नही।

४- रजा की जीमण मे मोरस खाड नही गारणी।

५- लीला बाज दूना नही बापरणा कतई बद, जात मे गाम मे।

६- न्यात का निराश्रित बाया भाया पर पचायती निगाह सार सभार की रेवे

७- परगाम पचायती रसम से जावे तो राते मसाल का उजवारा सु नही जावे।

८- भील का हाथ को पाणी गाम मे व गामडा मे कोई नही पीवे।

९- जात मे वीरादरी की लुगाया बेजा गारीया नही गावे। बेजा नाच नही नाचे।

१०- श्रावण भादवा मे नयासर से नीव नाखने मकान को या दूसरो काम नही सरू करणो।

११- श्रावण भादवा मे अष्टमी या चतुर्दशी के दिन गाडी-भाडे की या घर की नही चलावणी।

वसे गाडी मे वठकर जाणो भी नही, रकम भाव भी मगावणी नही।

१२- धन लेन देन बावत पचायती रजा नही सके।

१३- माती मोत पदरा साल तक की हुई जावे तो वणी पर पचायती हक नही, सवव रजा नही देवे।

१४- हाथी दात को चूडो आपणी न्यात मे, रतलाम बीरादरी मे बन्द होवे तो आपणा अठे भी वद करी चुका हा।

१५- आतिशबाजी, झाड व हाथी नार वगेरह थादला के अन्दर नही छोडे, व परदेशी ने भी गाम मे नही छोडवा देना।

१६- पचायती हक सिवाय जो बावत आवेगा इजाफ की उस की हीसा रसीद सीरस्ता मुजव समझ ली जावेगी।

ऊपर माफक सोला ही कलम को पालन समस्त पच थादला का करेगा ओर अण के सिवाय खुशी से कोई भी वरोटी करेगा तो वासण भाडा रु २॥) व देव का रु २॥) जुमला पाच रुपैया लेणा। ऊपर लिख्या सिवाय पचायती हक दस्तूर नही है। लिख्या हुआ करियावर के सिवाय करियावर पर पचायती हक नही हे। यो ठराव समस्त पच थादला के रोबरु शाहजी साहब प्यारेलालजी के हुआ हे, सो सही हे।

सवत् १९६५ मी श्रावण वदी १३ रविवार।

(इस पर एक सो पचपन व्यक्तियो के हस्ताक्षर है)

उक्त पचायतानामा थादला के ओसवाल भाइयो का पचायतनामा है। मुनिश्री धार्मिक जीवन के अभ्युदय के लिए सामाजिक सुधारो के भी कट्टर समर्थक थे। वे जीवन मे सर्वांगीण उत्कर्ष का ही उपदेश फरमाते थे। अतएव मुनिश्री के किसी भाषण से प्रभावित होकर थादला के भाइयो ने यह पचायतनामा तेयार किया था। इसकी सोलह कलमो मे से प्रत्येक कलम मुनिश्री के उपदेशानुसार ही हे, ऐसा समझना भ्रमपूर्ण होगा। उदाहरणार्थ कलम नबर ८ मे भीलो के हाथ के पानी को निषिद्ध ठहराया गया है। भील जाति अस्पृश्य नही हे फिर भी उसमे मास मदिरा के सेवन का प्रचुर प्रचार था और शायद अव भी है। मास-मदिरा मे तीव्र घृणा करने वाले ओसवाल भाइयो ने सभवत इसी कारण यह कलम बनाई है। इसमे मास-मदिरा के सेवन का त्याग कर देने वाले भील भाइयो का भी समावेश हो जाता है और मास-मदिरा का सेवन करने वाली अन्य जातियो का समावेश नही होता। मुनिश्री का इस प्रकार का मन्तव्य कभी नही रहा। वे जातिगत अस्पृश्यता के तीव्र विरोधी थे और अपने भाषणो मे बलपूर्वक इस विषय को प्रकट करते थे। अतएव यह निर्णय थादला की पचायत का स्वतन्त्र निर्णय ही समझना चाहिए। यही बात अन्य कलमो के विषय मे भी समझनी चाहिए।

हाथी झुक गया

का छप्पर उतारा गया था। इसी समय एक ओर से हाथी आया। छप्पर इतना ऊचा नही था कि हाथी यो ही निकल जाता। महावत के इशारे से हाथी ने चारो घुटने टेक दिए और घुटने टेके-टेके ही वह छप्पर के नीचे से पार हो गया।

मुनिश्री ने यह घटना देखकर बडा सुन्दर व्याख्यान दिया। आपके व्याख्यान का आशय इस प्रकार था- 'मनुष्य अपने को सब प्राणियो से अधिक बुद्धिमान समझता है किन्तु उसे बहुत-सी बाते पशुओ से भी सीखने की आवश्यकता है। मनुष्य अकड कर चलता है। वह झुकना नही जानता। गर्व की मात्रा उसमे अत्यधिक है। मगर इस हाथी को देखो, महावत के जरा-से इशारे से किस प्रकार घुटने टेकता हुआ नम्रतापूर्वक निकल गया! पशु इशारे से ही इतना सीख सकता है तो मनुष्य क्यो नही सीखता! आप लोगो को मान, दभ आदि त्यागने का उपदेश प्रतिदिन दिया जाता है, मगर उसका विशेष असर पडा दिखाई नही देता। शास्त्र आपको प्रतिदिन धर्म-शिक्षा देते है, किन्तु क्या मै पूछू कि आपने जीवन मे कितनी उतारी है! इस हाथी को अच्छा कहना चाहिए या अपना स्वभाव न छोडने वाले मनुष्य को ?

हाथी चौपायो मे सबसे बडा प्राणी है, फिर भी इसमे कितनी नम्रता है! वह महावत की आज्ञा का किस प्रकार पालन करता है! क्या आप अपने महावत अर्थात् गुरु के उपदेशो का ऐसा पालन करते है ? नम्रता धारण करना और वडो की आज्ञा का पालन करना बडप्पन का लक्षण है। इसे लघुता का चिह्न समझना अज्ञान है।

आपको मालूम होगा कि मेघकुमार का जीव भी पूर्वभव मे हाथी था। उसने दूसरे प्राणियो को शरण देने के लिए ही अपने प्राण दे दिये। अपनी इस परोपकार वृत्ति के कारण उसने शुभ गति का वध किया और मोक्ष का मार्ग प्राप्त कर लिया। फिर भी हाथी तिर्यचगति मे माना जाता है। आप लोग मनुष्य-गति मे हे। आपको हाथी की अपेक्षा अधिक विनम्र और परोपकारी होना चाहिए।'

पत्थर फेंकने वाले पर भी क्षमा

एक बार मुनिश्री कुछ साधुओ के साथ बाहर जा रहे थे। रास्ते मे लडके मिले—खेलते, भागते, दौडते हुए। उधर से साधुओ को निकलते देख एक लडके ने पत्थर मार दिया। पास मे खडे एक आदमी ने यह देखा और गाव मे आकर कह दिया। कुछ भाई उस लडके के घर गये और उसे पकड लाये। लडके के मा–बाप घबराए। पचो ने उस बालक को दड देने का विचार किया।

मुनिश्री ने जव यह सब सुना तो समझाया-'यब बालक किसी वृक्ष पर पत्थर फैकता तो फल की प्राप्ति होती। हमारे ऊपर पत्थर फैकने से तो इसे कुछ भी नही मिला। यही दु ख की बात हे। इसे दड मिलना तो हमारे लिए और भी लज्ञा की बात होगी। साधुओ की सार-सभाल रखने की आपकी भावना प्रशस्त है मगर मेरी इच्छा है कि इस बालक को छोड दिया जाय, हम इस बालक की आत्मा का सुधार चाहते है।'

मुनिश्री की इस उदारता का जनता पर वडा प्रभाव पडा। उस बालक पर भी कम असर नही पडा। उसके हृदय मे मुनियो के प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो गई। अपराधी को दड देने की सुविधा होने पर भी दड न देना महात्मा का लक्षण हे।

सांप की एक घटना

एक वार पर्युपण पर्व के दिनो मे श्रावको ने पोपध किया। पोपध करने वाले श्रावक रात्रि के समय उपाश्रय मे सो रहे थे। उपाश्रय मे स्थान की कमी के कारण कुछ श्रावक एक दूसरे मकान मे थे। रात मे एक काला साप वहा आ गया और जहा श्रावक थे वहा वैठ गया। अधेरे मे किसी को इस नवीन अतिथि के आगमन का पता नही चला। किसी श्रावक के सिर के पास जाकर उसने अपने आगमन की सूचना भी दी मगर उस श्रावक ने उसे कुत्ते का बच्चा समझकर पास मे पडे ओघे से दूर हटा दिया। किसी की उस पर निगाह भी न गई। मगर बिना बुलाये आये इस मेहमान ने अपने अनादर का खयाल न किया और वह किसी पर खफा भी न हुआ। ओघे से हटाने पर वह एक किनारे आकर बेठ गया और सुवह तक वेठा रहा। कुछ-कुछ प्रकाश होने पर जब लोगो की दृष्टि उस पर गई तो वे बुरी तरह घवराये। दूर हट गये। मगर सर्पराज शान्त थे। लोगो को घबराते देख और अपने सत्कार की सुविधा न देख वह वहा से शान्तभाव से चले गये। फिर कौन जाने वह कहा विलीन हो गये।

इस घटना को लेकर मुनिश्री ने अपने व्याख्यान मे फरमाया-'पर्युषण के इस पावन अवसर पर और विशेपत पोपध के समय आप लोगो का प्राणी-मात्र पर समभाव होगा। आपका हृदय द्वेष और मलीनता से रहित होगा। इसका प्रभाव साप पर भी पडा। उसने आप लोगो मे आकर अपनी द्वेप-वृत्ति छोड दी। जव हमारे हृदय मे रोष और दूसरे को हानि पहुचाने की भावना होती हे तभी सामने वाला हमसे द्वेप करता हे। अगर हमारा हृदय प्रेम से परिपूर्ण हो तो दूसरे की द्वेष-वृत्ति भी शान्त हो जाती है। यही अहिंसा की भावना हे। इसी भावना के कारण तीर्थंकरो एव अन्य महात्माओ के सामने प्रकृति से हिंसक प्राणी भी अपनी हिंसकता भूल जाते हे।

'अहिंसा मे ऐसी अपूर्व शक्ति हे कि सिह और हिरन, जो जन्म से विरोधी हे अहिंसक की जाघ पर आकर सो जाते हे। 'अहिंसाप्रतिष्ठाया वेरत्याग ' अर्थात् जहा अहिंसा की प्रतिष्ठा होती हे, वहा वेर का नाश हो जाता है। अहिंसक के निकट जाति विरोधी पशुओ के एकत्र निर्वेर बसने के उदाहरण आज भले ही दिखाई न पडते हो, फिर भी अहिंसा की शक्ति के उदाहरणो की कमी नही है। अहिंसा के आराधक महात्माओ की चरणरेणु से हजारो को मारने वाला हत्यारा भी शुद्ध हो जाता हे।

गणेशीलालजी महाराज प्रतिदिन वहा जाते और दवा लाते। मगर उससे भी विशेष लाभ नही हुआ। आपकी बीमारी के समाचार बिजली के वेग से सब जगह फैल गये थे।

उन्ही दिनो नाहरसिह बुन्देला नामक वैद्य किसी का इलाज करने रभापुर आये। वैद्यजी थादला के रहने वाले थे। मुनिश्री की दशा देखकर उन्होने कहा- 'किसी प्रकार थादला पहुच सके तो मै इन्हे स्वस्थ कर सकता हू।'

मुनिश्री का जीवन इतना बहुमूल्य था कि उसकी रक्षा करने के लिए कोई भी कष्ट झेलना बडी बात नही थी। मगर इस समय तो यह प्रश्न था कि आपको किस प्रकार थादला पहुचाया जाय ? साथ मे सिर्फ दो सत थे मगर दोनो सेवापरायण और पूर्ण कर्त्तव्यनिष्ठ थे। उन्होने साहस करके मुनिश्री को थादला ले जाने का निश्चय कर लिया। मुनिश्री बेहद कमजोर हो गये थे। साधु की मर्यादा के अनुसार दो कोस से आगे दवाई भी साथ नही ले जा सकते। रभापुर से थादला चार कोस था। रभापुर का आहार पानी और औषध दो कोस तक ही काम आ सकता था। आगे क्या होगा ? यह प्रश्न सामने था। मगर जहा हिम्मत होती है, रास्ता निकल ही आता है।

मुनिश्री ने धीरे-धीरे चलना आरभ किया। आप लगातार चल भी नही सकते थे। मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज आपको सहारा देते और आगे बढ्कर रास्ते के वृक्ष के नीचे बिछौना बिछा देते। मुनिश्री टरकते-टरकते जब बिछौने के पास पहुचते तो विश्राम के निमित्त आपको लेटा देते और आपके पैर दबाने लगते। आप अकेले ही दोनो मुनियो का सारा सामान भी लादे हुए थे। इस प्रकार सहारा देते-देते, बिछौना करते और पैर दबाते-दबाते चलने से दिन भर मे अढाई कोस की यात्रा हो सकी। मुनिश्री राधालालजी आहार-पानी लाने के लिए रभापुर ही रह गये थे। वे बाद मे आये। रात्रि मे तरावली मे विश्राम किया। दिनभर चलने के कारण आपको थकावट हो गई थी इस कारण तथा राधालालजी महाराज थादला से दवा ले आये थे इस कारण रात मे कुछ नीद आ गई। नीद आने से कुछ शान्ति हुई। दूसरे दिन तरावली से विहार हुआ। मुनिश्री राधालालजी महाराज आगे बढ गये और थादला जाकर आहार-पानी और औषध लेकर फिर लौटे और मुनिश्री की सेवा मे उपस्थित हुए।

इस प्रकार दोनो मुनियो के साहस के कारण दूसरे दिन मुनिश्री थादला पधार गये। वहा श्री नाहरसिहजी बुदेला का इलाज शुरू किया गया। धीरे-धीरे डेढ मास औषधि-सेवन करने के पश्चात् आप रोग-मुक्त हुए।

कोद मे विराजमान मुनिश्री मोतीलालजी महाराज को जब मुनिश्री की बीमारी के समाचार मिले तो उन्होने उसी समय थादला की ओर विहार कर दिया। रास्ते की तकलीफो की परवाह न करते हुए वे शीघ्र ही थादला पहुच गये थे। मुनिश्री का स्वास्थ्यलाभ देखकर आपको बडी प्रसन्नता हुई। मुनिश्री इस बार मृत्यु के मुह से ही बाहर निकले।

कमजोरी दूर होने पर मुनिश्री ने कोद की ओर विहार किया। मार्ग मे झीलो की बस्तिया थी। उनमे थोडा-थोडा समय ठहरते हुए और भीलो को धर्मोपदेश देते हुए आप कोद पधारे। वहा के ठाकुर साहब ने आपका मधुर भाषण सुनकर श्रद्धा प्रकट की। पौष का महीना था। इसी समय श्रीचन्द जी विनायका ने चालीस वर्ष की अवस्था मे दीक्षा अगीकार की।

कोद से विहार करके बिडवाल, कडोद, होते हुए धार पधार कर और वहा कुछ दिन ठहरकर नागदा कानून बिडवाल, बखतगढ आदि स्थानो को पवित्र करते हुए रतलाम पधारे। रतलाम से खाचरोद और फिर जावरा पहुचे। यहा पहुचकर सम्प्रदाय सम्बन्धी कुछ बातो पर विचार करने के लिए आपको पूज्यश्री से मिलने की आवश्यकता प्रतीत हुई। आप वहा से ब्यावर पधारे और पूज्यश्री के दर्शन कर प्रसन्न हुए। यहा आपने तीन वर्ष तक दक्षिण मे विचरने की आज्ञा प्राप्त की और साथ ही निवेदन किया कि अगर धर्मप्रचार की दृष्टि से वह क्षेत्र मुझे अनुकूल लगे तो तीन साल के बाद और भी आज्ञा देने की कृपा करे। पूज्यश्री ने आपकी प्रार्थना स्वीकार की।

ब्यावर मे कुछ दिन ठहर कर आपने मालवा की ओर विहार किया। जब आप नीमच पहुचे तो उदयपुर के तथा कई अन्य स्थानो के श्रावक आपकी सेवा मे चातुर्मास की प्रार्थना करने आये। किन्तु पूज्यश्री जावरा मे चातुर्मास करने की आज्ञा दे चुके थे, अतएव सभी को निराश होना पडा।

उन्ही दिनो मुनिश्री के पास खबर आई कि महासती तपस्विनी श्री उमाजी महाराज ने जावरा मे सथारा कर लिया है और वे आपके दर्शन करना चाहती है। मुनिश्री जावरा पधारे। सथारा लम्बा हो गया। मुनिश्री, तपस्विनीजी को बार-बार शास्त्र सुनाते रहे। ५४ दिन बाद सथारा सीझ गया और महासतीजी का स्वर्गवास हो गया। मुनिश्री वहा से विहार करके ताल होते हुए फिर जावरा पधारे।

अठारहवां चातुर्मास

पूज्यश्री के आदेशानुसार मुनिश्री ने सवत् १९६६ का चातुमार्स जावरा मे किया। जावरा के नवाब साहब ने भी मुनिश्री के उपदेशो का खूब लाभ लिया। सभी श्रेणी की जनता व्याख्यान मे उपस्थित होती थी।

जावरा मे चातुर्मास समाप्त करके आप रतलाम और फिर पटलाद पधारे। उस समय पूज्यश्री रतलाम पधार गये थे अत मुनिश्री ने फिर रतलाम आकर पूज्यश्री के दर्शन किये। कुछ दिन पूज्यश्री की सेवा मे रहकर आप पटलावद, राजगढ, तेडगाव, दिसाई, बिडवाल आदि क्षेत्रो मे विचरते हुए कोद और फिर नागदा पधार गये।

उन दिनो कोद तथा आसपास के गावो मे तडबन्दी हो रही थी। मुनिश्री के पधारने पर बहुत से गावो के लोग आपके दर्शनार्थ आये। मुनिश्री ने पारस्परिक प्रेम की आवश्यकता प्रदर्शित करते हुए प्रभावशाली उपदेश दिया और वैमनस्य दूर करने की प्रेरणा की। मुनिश्री के उपदेश-रूपी जल की वर्षा से लोगो के दिलो की कालिमा बह गई। अशान्ति की ज्वालाए बुझ गइ। लोगो के हृदय शात और निष्पाप हो गये। सब भाई गले से गला लगाकर मिल गए। पार्टीबन्दी समाप्त हो गई। इसी सिलसिले मे आपको एक बार कोद पधारना पडा। वहां सब पचो ने वैमनस्य दूर करने का फैसला किया।

को सताया, न किसी को धमकाया, और न किसी को लाल आख दिखाई। आपने दीक्षा लेने से पहले वहा की समस्त जनता को प्रीतिभोज दिया और दीक्षा लेकर हलके हो गये।

दीक्ष-प्रसग पर सभी आसपास के गावो के विशिष्ट व्यक्ति उपस्थित हुए। भरपूर सम्पत्ति छोडकर तीव्र वैराग्य के साथ आपने दीक्षा अगीकार की।

जब दीक्षा की विधि हो रही थी तो कोद के ठाकुर साहब के बडे कुवर दीक्षा-स्थान मे बैठे-बेठे बीडी पीने लगे। मुनिश्री को यह अच्छा न लगा। महात्मा पुरुषो के निकट बडे-छोटे, सधन-निर्धन का कोई भेद-भाव नही रहता। मुनिश्री को इस बात का भय भी नही था कि यह ठाकुर साहब के कुवर है। अतएव मुनिश्री ने कुवर से कहा-आप बडे आदमी के लडके कहलाते है। आपको धर्मसभा की सभ्यता का खयाल रखना चाहिए। बीडी पीना यहा की सभ्यता के विरुद्ध है।

कुवर ने शायद कल्पना भी नही की होगी कि यह अकिचन साधु इतने तेजस्वी हो सकते है कि मुझ सरीखे को इस प्रकार टोके। वह एकबार अचकचा गये और कुछ लज्जित हुए। फिर बोले-'महाराज, यह तो जीवन की एक साधारण आवश्यकता है।'

मुनिश्री ने फरमाया-शारीरिक, राष्ट्रीय, सामाजिक और धार्मिक सभी दृष्टियो से बीडी हानिकारक वस्तु है। आप जैसे लोगो को पीना शोभा नही देता। और अगर जीवन इतना गिर जाय कि बीडी पिये बिना काम नही चल सकता तो क्या ऐसे स्थानो पर भी उसे नही त्यागा जा सकता ? जीवन के लिए आवश्यक तो बहुत-सी वस्तुए है मगर उन सबका क्या सभी जगह उपयोग किया जाता है ?'

कुवर साहब ने उसी समय बीडी फैक दी। अत मे उन्होने महाराजश्री का आभार माना। महाराजश्री पर उनकी भक्ति हो गई।

कोद से विहार करके मुनिश्री धार और इन्दौर होते हुए देवास पधारे।

उन्नीसवां चातुर्मास

देवास से लौटकर मुनिश्री फिर इन्दौर पधारे और वि स १९६७ का चातुर्मास इन्दौर में किया। इन्दौर मध्य भारत का प्रधान केन्द्र है। होल्कर रियासत की राजधानी है और उसमे सम्पत्तिशाली तथा विद्वानो का वास है। इन्दौर मे मुनिश्री का व्याख्यान बाजार में होता था। हजारो श्रोता एकत्र होते थे। यहा आपके व्याख्यानो की धूम मच गई। मुनिश्री मोतीलालजी महाराज ने ३९ दिन का तप किया। पूर के दिन बहुत से कसाई भाई भी व्याख्यान सुनने आये। मुनिश्री ने उस दिन अहिंसा-धर्म पर प्रभावजनक भाषण दिया। मुसलमान कसाइयो पर भी आपके भाषण का अच्छा असर हुआ। एक कसाई ने चतुर्दशी को तथा दूसरे ने एकादशी को जीवहिंसा करने का त्याग किया। उस समय जीवदया के निमित्त लगभग छ हजार का चदा कुछ उत्साही भाइयो ने एकत्र किया।

एक रुपया का महादान

मुनिश्री के व्याख्यान मे एक भद्र सज्जन थे। उन्होने भी बडे ध्यान से व्याख्यान सुना था। कहना चाहिए उनके कानो ने नही हृदय ने व्याख्यान सुना था और उनकी आत्मा ने उसका अनुमोदन किया था। उनके पास कुल पूजी १०) थी। वह उन रुपयो से प्रतिदिन मूगफली खरीद कर बेचते और जो

कुछ बचत होती उसी से अपना निर्वाह करते थे। मुनिश्री के प्रभावक प्रवचन से प्रेरित होकर उन्होने अपनी पूजी मे से एक रुपया देने की इच्छा प्रकट की। जहा हजारो की बात हो वहा एक रुपये की कौन पूछता है ? श्रावको ने गरीब समझकर उनका रुपया नही लिया। वह दान रुपये का नही, भावना का दान था- हृदय का दान था। उस दान को स्वीकार न करने के कारण उन सज्जन को इतना दु ख हुआ कि वे अपना रोना न रोक सके।

सत पुरुष सुखी की ओर उतना नही जितना दु खी की ओर देखते है। वह सज्जन रोने लगे तो मुनि श्रीगणेशीलालजी महाराज (वर्त्तमान आचार्य महोदय) की दृष्टि तत्काल उन पर जा पहुची। मुनिश्री के पूछने पर उन्होने रोने का कारण बतलाया। अपने मर्म की चोट खोलकर दिखलाई। मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज ने महाराजश्री को सब वृत्तान्त निवेदन किया। महाराजश्री ने अपने भाषण मे उन सज्जन की सद्भावना की मुक्तकण्ठ से प्रशसा की। मुनिश्री ने फरमाया-'भाइयो! इनके हृदय की भावना को देखो। जीव-दया के निमित्त अपनी शक्ति से भी बढकर त्याग करने के लिए इन भाई को कितनी उत्कठा है ? यह अपनी समस्त सम्पत्ति का दसवा भाग देने के लिए उत्सुक है। क्या आप लोगो मे कोई ऐसा है जो इनके दान का मुकाबिला करता हो ? कौन आगे आता है जो अपनी पूजी का दसवा भाग त्यागने को तैयार हो ? एक लखपति के लिए हजारो रुपयो का जो मूल्य है, उससे कही अधिक इन भाई के लिए एक रुपये का मूल्य है! ऐसी स्थिति मे इस त्याग को तुच्छ समझना अज्ञान है, अहकार है। करोडपति के लाखो और लखपति के हजारो के दान से भी बढकर यह दान है। आप सख्या का मूल्य समझते है मगर हृदय का मूल्य भी समझना चाहिए। इनकी व्याकुलता को देखो। त्याग की उच्च भावना का सत्कार करो। उन्हे निराश करना उचित नही। यह दान महादान है।'

श्रावको को अपनी भूल मालूम हुई। उन्होने बडे आदर और प्रेम के साथ उनका रुपया स्वीकार किया। उन्होने उसकी प्रशसा की और अपनी बडी-बडी दान की हुई रकमो से भी उसे बडा दान समझा।

धर्मसंकट

'व्यापारी व्यापार मे हानि-लाभ का विचार करता है, पर हे मुनियो! तुम व्यापारी की तरह हानि-लाभ के प्रश्न मे मत पडो। अपनी उद्देश्य-सिद्धि की ओर और कर्त्तव्य-पालन की ओर ही ध्यान रखो। लाभ हानि के द्वद्व मे न पडना सयम का मूल लक्षण है।

मुनियो! क्षमा रखने के साथ सुख-दु ख मे भी समान रहो। कोई तुम्हे वदना-नमस्कार करेगा, कोई भिखमगा मुफ्तखोर आदि कहकर तुम्हारा अपमान करेगा। इस प्रकार प्रशसक और निन्दक- दोना प्रकार के मनुष्य तुम्हे मिलेगे। पर प्रशसा सुनकर सुख न मानना और निन्दा सुनकर दु ख न मानना। ऐसे वाक्यो को अन्तरतम तक पहुचने ही न देना। पृथ्वी गाली देने वाले और अपने को क्षत-विक्षत करने वाले को भी आश्रय देती है इसी प्रकार हे मुनियो! जो तुम्हे गाली देता हो उसका कल्याण करो। गाली देने वाला तुम्हे निर्मल बना रहा है। तुम्हारी साधना मे सहायक हो रहा है। ऐसा मानकर उसका भी कल्याण करो।

'मुनियो! तुम पृथ्वी के समान क्षमाशील बनो। पृथ्वी को कोई पूजता है, कोई लतियाता है कोई सीचता है कोई खोदता है, पर वह सबके प्रति समान है। वह गुण ही प्रकट करती है, अवगुण पकट नही करती। तुम भी पृथ्वी के समान समभावी बनो।'

जबतक आत्मा निन्दा और प्रशसा मे अतर समझता है, कहना चाहिए तब तक उसने परमात्मा को पहचाना ही नही है। जब निन्दात्मक और प्रशसात्मक बात सुनाई पडे तो हमे यही विचारना चाहिए- हे 'आत्मन्! तू निदा और पशसा के भेद-भाव मे पडकर कबतक ससारभ्रमण करता रहेगा!'

हमारे चरितनायक के यह उद्‌गार ही पकट कर देते है कि उनके अन्त करण मे किस उच्च श्रेणी का समभाव होगा ? यह उद्‌गार जिह्वा की नही हृदय की वाणी है। मुनियो को उद्देश्य करके जो महान् आदर्श इन वाक्यो मे व्यक्त किया गया है वह पाण्डित्य का परिणाम नही, चिरकालीन जीवन-साधना का सहज सुफल है। मुनिश्री ने अपने साधु-जीवन मे सयम की जो श्रेष्ठ साधना की थी, उसी के फल-स्वरूप उनके अन्त करण मे यह अपूर्व समभाव आ गया था। उनके आगे निन्दा और प्रशसा मे कोई भेद नही रह गया था।

महापुरुषो के जीवन मे कभी-कभी बडे विकट प्रसग उपस्थित हो जाते है। वे धर्म और अधर्म के द्वन्द्व से तो अनायास ही बच निकलते है मगर जहा धर्म का आदेश द्विमुखी-दो तरफ को होता है वहा मनीषी महापुरुष भी एक बार चक्कर मे पड जाते है। मुनिश्री के जीवन मे इसी प्रकार का एक धर्मसकट उपस्थित हो गया।

रतलाम मे स्थानकवासी जैन कान्फ्रेंस की ओर से श्वे स्था जैन ट्रेनिग कॉलेज चल रहा था। जिस समय मुनिश्री का चौमासा इन्दौर मे था, रतलाम मे प्लेग फैलने के कारण कॉलेज मे चार विद्यार्थी दीक्षा लेने के लिए तैयार हुए थे। उनके नाम थे-गोकुलचन्दजी, सोमचन्दजी, चुन्नीलालजी और मोहनलालजी। चारो विद्यार्थी मुनिश्री के पास आकर धर्म-चर्चा किया करते थे। उन्होने कई बार मुनिश्री से आजीवन ब्रह्मचर्य अथवा दीक्षा आदि के लिए नियम दिला देने की प्रार्थना की। उनमे से दो तो कभी पहले ही प्रतिज्ञा ले चुके थे। मुनिश्री ने चुन्नीलालजी को लक्ष्य करके कहा-'नियम लेना तो सरल है मगर उसे निभाना कठिन होता है। ब्रह्मचर्य आदि व्रत बडे अच्छे होते है। उनसे आत्मा का कल्याण होता है। किन्तु उन्हे अगीकार करने से पहले शातचित्त होकर सोचना चाहिए कि प्रतिज्ञा निभ सकेगी या नही ? आत्म-बल को जाचे बिना जोश मे आकर ली गई प्रतिज्ञा के लिए पीछे पछताना पडता है।

कॉलेज के नियम के अनुसार जो विद्यार्थी पूरी पढाई किये बिना ही सस्था छोड दे उससे जितने दिन वह रहा हो उतने दिनो का पूरा खर्च वसूल किया जाता था। चारो विद्यार्थी दीक्षा लेने के उद्देश्य से कॉलेज छोडना चाहते थे मगर पूरा खर्च चुकाने मे असमर्थ थे। चार मे से एक गोकुलचन्दजी ने मन्त्री से आज्ञा लेकर कॉलेज छोडा, फिर भी उनसे पूरा खर्च देने का तकाजा किया गया और अन्त मे पूरा खर्च देना ही पडा।

इस घटना से दूसरे तीन छात्रो मे भय उत्पन्न हो गया और वे चुपचुप भाग निकलने की सोचने लगे। वे मुनिश्री के पास आये और आप से सलाह मागने लगे। मुनिश्री ने कहा-जब तुम लोग सयम के मार्ग पर चलना चाहते हो तो पहले आत्मा को सबल बनाओ। यदि तुममे इतना भी साहस नही कि कॉलेज के अधिकारियो से अपनी भावना स्वष्ट रूप से कह सको तो सयम का पालन कैसे कर ?

आत्म-तुष्टि और सरलता सयम के मूलाधार है। इनका अभ्यास किये विना शुद्ध चरित्र का पालन नहीं हो सकता। वेश धारण कर लेना मात्र चरित्र नही है।

मुनिश्री की यह वात सुनकर वे चुप तो हो गये मगर उन्होने अपना भाग जाने का इरादा नही बदला। आखिर एक दिन अवसर पा कर वे चल दिये। कॉलेज के अधिकारियो और जैन हितेच्छु अखबार ने इसके लिए मुनिश्री को दोषी समझा और मुनिश्री की निन्दा करने लगे।

मगर निन्दा और पशसा को समान-भाव से ग्रहण करने का उपदेश देने वाले मुनिश्री 'आत्मा के धोखिया' की वात से तनिक भी विचलित नही हुए। उन्होने निन्दा या प्रशसा की परवाह न करके सयम-पालन की दृढता पर ही ध्यान दिया। सोचा– हे आत्मन्! अगर तू ऐसे प्रसग उपस्थित होने पर धर्म से विचलित हो जायगा– असत्य भाषण करेगा या विश्वासघात करेगा तो तेरी क्या स्थिति होगी ? कामदेव जैस श्रावक भी जव घोर मुसीवत पडने पर भी धर्म पर दृढ बने रहे तो क्या तू साधु होकर और उससे कम कष्ट आने पर भी विचलित हो जायगा ? यह तेरी कसोटी है। इस कसोटी पर तुझे खरा उतरना होगा। सारा ससार एक ओर हो जाय तो उसकी चिन्ता नही, तेरे लिए धर्म का–सत्य का वल ही पर्याप्त है। अगर तूने धर्म का सहारा न छोडा तो तमाम निन्दा, स्तुति के रूप मे परिणत हो जायगी। अगर धर्म छोड दिया तो फिर क्या रह जायगा ?

इस प्रकार विचार कर मुनिश्री ने अपनी निन्दा की चिन्ता न करके अपने सयम-धर्म की रक्षा की ही चिन्ता की। मगर जव इस घटना ने ऐसा रूप धारण किया कि उससे मुनि-वर्ग पर आरोप आने लगा और मुनि-पद की ही निन्दा होने की सभावना हुई तो आपको इस ओर ध्यान देना पडा। वे स्वय तो सव-कुछ सहन कर सकते थे मगर मुनियो पर उनके निमित्त से कोई आरोप लगे, यह बात उन्हे रुचिकर नही हुई। अभी तक आपके सामने व्यक्तिगत निंदा और सयम का प्रश्न था मगर अव एक ओर सयम और दूसरी ओर मुनि-निन्दा क निराकरण की समस्या सामने आई। यह दूसरा धर्म-सकट था। इस सकट से वचने के लिए भी आपने सयम की उपेक्षा नही की।

मुनिश्री ने सोचा- 'इस घटना पर अगर इन्दोर श्रीसघ जाच-पडताल करके अपना निर्णय दे- ओर वह प्रकाशित हो जाय तो समाज के सामने सचाई प्रकट हो जायगी। फिर किसी को मुनियो पर आरोप लगाने का साहस भी नही होगा।' इस उद्देश्य से सघ-द्वारा घटना की जाच की गई और सचाई सामने आ गई। मुनिश्री निर्दोष थे और निर्दोष ही प्रमाणित हुए।

दक्षिण की ओर

दक्षिण प्रान्त के भाइयो की बहुत समय से उधर विहार करने की प्रार्थना थी ओर मुनिश्री गगारामजी महाराज का भी आग्रह था। इसके अतिरिक्त इन्दौर-चातुर्मास मे श्रीचन्दनमलजी फिरोदिया तथा अन्य सद्गृहस्थो ने मुनिश्री से दक्षिण की ओर पधारने की पुन प्रार्थना की थी। मुनिश्री का विचार भी उधर विहार करने का हो गया था और अपनी मर्यादाओ का ध्यान रखकर आपने दक्षिण की ओर विहार करने की प्रार्थना अगीकार कर ली थी।

इसी विश्वास के अनुसार इन्दौर से विहार करके मुनिश्री बडवाहा, सनावद, वोरगाव, आशीर्गढ बुरहानपुर आदि क्षेत्रो को पवित्र करते हुए फैजपुर पधारे।

क्या ठिकाना बे-ठिकानों का

जिन दिनो मुनिश्री ने इन्दौर से विहार किया और सनावद से आगे पहुचे, लगभग उन्ही दिनो भारतवर्ष मे एक सनसनी फैलाने वाली घटना घटी थी। सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी श्रीयुत् खुदीराम बोस द्वारा गोली चलाये जाने के कारण सारे भारत मे तहलका मचा था। देश भर मे अशान्ति फैली हुई थी। पुलिस की चारो और दौड धूप थी। सरकार मे तहलका मचा था। सरकार को विशेषत पुलिस अधिकारियो को प्रत्येक भारतीय खुदीराम ही दिखाई देता था। स्थानकवासी साधु दक्षिण प्रान्त के लिए नवीन थे। भिन्न प्रकार का वेष देखकर पुलिस मुनिश्री पर भी सन्देह करने लगी। सनावद-वोरगाव आदि के समीप जनता ने भी आपको सदिग्ध दृष्टि से देखना शुरू किया। अतएव मुनिश्री को स्थान और आहार मिलने मे भी कठिनाई होने लगी। मगर मुनिश्री बिना किसी कष्ट की परवाह किये आगे ही बढते चले। वे अपने निश्चय पर अटल रहे। विहार जारी रहा। आप जहा जाते वहा पुलिस-कर्मचारी आपका नाम ठिकाना पूछते। मुनिश्री के पास बताने को नाम था मगर ठिकाना वे त्याग चुके थे। शायद ऐसा ही कुछ उत्तर देते होगे- 'ठिकाना पूछते हो, क्या ठिकाना बे-ठिकानो का।' अर्थात, तुम मेरा ठिकाना पूछते हो परन्तु हम तो बे ठिकाना अर्थात् अनगार है-हमारा कोई ठिकाना ही नही है।

संत समागम

फैजपुर के आस-पास तारनपन्थी दिगम्बर जैनो पर आपका बहुत प्रभाव पडा। फैजपुर से विहार करके मुनिश्री भुसावल पधारे। यहा श्री धर्मदास जी महाराज के सम्प्रदाय के मुनिश्री चम्पालालजी महाराज का, जिन्होने बाद मे उस सम्प्रदाय के आचार्यपद को सुशोभित किया, समागम हुआ। आप एक प्रतिष्ठित साधु थे। दक्षिण मे आपका बहुत प्रभाव था। दोनो मुनिश्री आपस मे मिलकर अत्यन्त प्रसन्न हुए।

पत्रकार की अप्रामाणिकता

भारतीय व्यापारी जेसे अप्रामाणिकता के अपराधी वतलाये जाते हे, उसी प्रकार भारतीय पत्रकार भी इस अपराध से वरी नही किये जा सकते। वास्तव मे समाचार पत्रो का स्थान वहुत ऊचा है। देश और समाज की उन्नति मे वे सवसे ज्यादा सहायक हो सकते है। जो पत्र जनहित की भावना से या किसी ऊचे उद्देश्य से प्रेरित होकर जन्म लेते ओर चलते हे उनका स्थान समाज मे वडा उच्च है। परन्तु खेद है कि अधिकाश भारतीय समाचार पत्रो के सचालक अपने उत्तरदायित्व का ठीक तरह

निर्वाह न करके अपने पत्र को स्वार्थ साधन का उपाय बना लेते है। राष्ट्रीय जागरण के इस युग मे जब पत्रकार-कला का पर्याप्त विकास हो चुका है, पत्रो की यह दशा है तो आज से लगभग पेंतीस वर्ष पहले का कहना ही क्या है ? पडित जवाहरलाल नेहरू कहते है–देश मे जिस वक्त जिन्दगी और मौत की लडाई चल रही थी उस समय हमारे समाचार–पत्र सरकारी विज्ञापन छापने मे लगे थे। इस युद्ध मे सब से ज्यादा मुनाफा या तो चोर बाजार वालो ने कमाया या फिर उनसे उतर कर अखबार वालो ने। हमारे पत्रो का स्तर (Standard) विलायती पत्रो की तुलना मे चौथे–पाचवें ग्रेड का है। श्रीयुत विश्वभरनाथ विश्ववाणी-सपादक ठीक ही कहते है–'आज सती पत्रकारी कुलटा व्यावसायिकता के पजे मे फसी छटपटा रही है। आज पत्रकारी के क्षेत्र मे लोग रोजी की तलाश में आते है, सेवा की भावना से नही। देश की आजादी नही, कुटुम्ब का पालन करना उनका लक्ष्य होता है।' श्री रामावतार का यह कथन भी गलत नही है कि–'अधिकाश देशो के समाचारपत्रो पर कुछ मुट्ठी भर लोगो का ही अधिकार होता है जो अपने सकुचित स्वार्थ के लिए उनका इस्तेमाल करते है।'

जब मुट्ठी भर लोगो के हाथ मे रहनेवाले समाचारपत्रो का यह हाल है तो आज से पेंतीस वर्ष पहले के, एक ही व्यक्ति की मालिकी के समाचार-पत्र का क्या हाल होना चाहिए ? पाठक स्वय विचार करे। इस प्रकार के समाचारपत्र चादी के टुकडो पर नाचते है। चादी के टुकडे न पाकर वे चाहे जिस पर कीचड उछाल सकते है और पाकेट गर्म होते ही उसकी प्रशसा के पुल भी बाधते देर नही करते। वास्तव मे समाचारपत्रो की यह दशा बडी ही दयनीय है।

कॉलेज के विद्यार्थियो के सबध मे इन्दोर-सघ के निर्णय के पश्चात् भी और मुनिश्री पर लगाये गये आरोप असत्य प्रमाणित हो जाने पर भी 'जैन समाचार' नामक समाचार-पत्र ने किसी आन्तरिक उद्देश्य से फिर मुनिश्री के विरुद्ध एक लेख प्रकाशित किया।

पुनः प्रतिवाद

'जैन समाचार' का यह लेख देखकर मुनिश्री चम्पालालजी महाराज और उनके साथी मुनिश्री केसरीमल जी महाराज को बडा खेद हुआ। आखिर उन्होने इस आरोप से सदा के लिए जड से उखाड फेकने के उद्देश्य से भुसावल मे एक वृहत् सभा का आयोजन किया। उसमे कॉलेज के अधिकारियो को, 'जैन-हितेच्छु' व 'जैन-समाचार' के सम्पादक श्री वाडीलालशाह को और कॉलेज के भागे हुए तीनो विद्यार्थियो को भी बुलाया गया था। वाडीलाल भाई उपस्थित न हुए और न कॉलेज के मत्री ही स्वय आ सके। तीनो विद्यार्थियो ने सारा वृत्तान्त सबके समक्ष कह सुनाया। अन्तत हुआ वही जो होना उचित था। मुनिश्री फिर निर्दोष घोषित किये गये।

बीसवां चातुर्मास

वि स १९६८ का चातुर्मास मुनिश्री ने अहमदनगर मे व्यतीत किया। चातुर्मास आरभ होने के कुछ ही दिनो बाद अहमदनगर मे प्लेग फैल गया। अतएव मुनिश्री ने नगर के बाहर के एक बगले मे चातुर्मास पूर्ण किया। यहा से आहार-पानी लाने के लिए मुनियो को कभी-कभी डेढ कोस की दूरी तक जाना पडता था।

मुनिश्री का भाषण सुनने के लिए हजारो की भीड इकट्ठी हो जाती थी। मुनिश्री मोतीलालजी महाराज तथा मुनिश्री राधालालजी महाराज ने ४९-४९ दिन का तप किया। पूर के दिन करीब दस हजार रुपयो का जीवदया के निमित्त दान किया गया।

वाड़ीलाल भाई की क्षमायाचना

श्रीयुत् वाडीलाल शाह चातुर्मास से पहले यहा मुनिश्री की सेवा मे बालमुकुन्दजी, चदनमलजी मूथा सतारा वाले के साथ उपस्थित हुए। मुनिश्री ने व्याख्यान मे फरमाया- दुनिया मे देखादेखी बहुत चलती है। किसी ने कोई बात गढकर कह दी और दूसरे लोग ग्रामोफोन की तरह बिना सोचे-समझे उसे दोहराने लगते है। ग्रामोफोनअपनी ओर से कुछ मिलाता नही मगर यह मानव ग्रामोफोन अपनी ओर से नमक-मिर्च मिलाकर उस बात को अतिरजित कर डालते है। बहुत कम व्यक्ति सचाई का पालन करते है। बुद्धिमान पुरुष पहले सत्यासत्य का निर्णय करता है और फिर कोई बात मुख से बाहर निकालता है। वाडीभाई एक पत्रकार है। पत्रकार ससार का पथ-प्रदर्शक होता है। उस पर बहुत बडी जिम्मेदारी है। उसे तो हर्गिज असत्य को आश्रय नही देना चाहिए। मुझे वाडीलाल भाई के प्रति तनिक भी द्वेष नही है। मै चाहता हू कि वाडीलाल भाई भविष्य मे सत्य के पथ-प्रदर्शक बने और उनकी आत्मा का कल्याण हो।

इसी सिलसिले मे मुनिश्री ने एक पीर का दृष्टान्त फरमाया जो रोचक होने के साथ शिक्षाप्रद भी है। उसका साराश यह था-

किसी गाव मे कुछ मुल्लाओ ने मिलकर एक कब्र को पीर साहब घोषित कर दिया। उन्होने लोगो मे फेला दिया-'ये जिदा पीर साहब है। रोज रात को अपनी करामाते दिखलाते है' कभी कोई कहता- 'अभी हमने देखा है अपनी आखो से, आज पीर साहब घोडे पर सवार होकर जा रहे थे।' दूसरे दिन फिर कोई नई बात ईजाद करता-'आज रात मैने पीर साहब को गाना गाते सुना था।' इस प्रकार नित्य नई बाते सुनते-सुनते लोगो का विश्वास जमने लगा। पीर साहब की मनौती शुरू हो गई और मुल्लाओ को आमदनी होने लगी। लोग बडी भक्ति से पीर साहब को तरह-तरह की चीजे भेट करते ओर सुबह वहा उन चीजो को न पाकर समझते-पीर साहब ने मजूर करली। बात फैलते-फैलते बादशाह के दरबार तक जा पहुची। मुल्ला वहा भी पीर साहब की तारीफ फैला आये। बादशाह ने वजीर से कहा- चलो, एक दिन हम लोग भी पीर साहब के दर्शन करे।

वजीर चतुर था। वह मुल्लो की चालाकी समझता था। मगर यो कहने से बाहशाह को यकीन नही आएगा, यह उसे बखूबी मालूम था। अत उसने एक युक्ति सोची। वजीर का एक सात-आठ वर्ष का लडका था। वजीर ने उसके पेर के नाप के बहुत खूबसूरत और कीमती जूते तैयार करवाए। मखमल

के ऊपर बढ़िया सलमा-सितार का काम किया हुआ था। वीच बीच मे असली हीरा-पन्ना-जवाहरात वगैरह जडवाये गय थ। कहते है- एक जूते की कीमत सवा लाख रुपया थी।

एक दिन पीर वाली कब्र पर मेला लगा। सैकडो औरते ओर मर्द चढावे के लिए पहुचे। उसी दिन वादशाह भी वजीर के साथ वहा गया। रात होने पर वापस लौटते समय वजीर ने अपने लडके का एक जूता कब्र के पास गिरा दिया।

सुवह होते ही पीर साहव की धूम मच गई। इतनी वेशकीमती जूती भला ओर किसकी हो सकती है ? एक ने कहा- साहव रात को खुद पीर साहव तशरीफ लाये थे।' दूसरे ने ताईद करते हुए कहा- 'विलकुल सही फरमात है आप। कपडा हिलता हुआ मैने भी देखा था।' तव तीसरे जनाव बोले- 'अजी जूत उतारते तो मने भी दखा है। ओर सवूत इसका यह है कि वे अपनी एक जूती छोड गये है।'

मुल्लो को जूती पाकर इतनी खुशी हुई जितनी शायद पीरसाहब को पाकर भी न होती। जूती लेकर वे वादशाह के दरवार म हाजिर हुए। वादशाह को अव पूरा-पूरा यकीन हो गया कि जूती पीर साहव की ही है। उसने ओर उसके दरवारियो ने वारी-वारी से अपने-अपने सिर पर जूती रखी। पीर साहव की तारीफ हो ही रही थी कि वजीर वहा आ पहुचे।

वादशाह ने वडी खुशी के साथ जूती की वात वजीर को सुनाई। वजीर ने धीरे-से मुसकरा कर कहा- हुजूर की मर्जी, जो चाहे समझे, मगर यह जूती मेरे लडके की है। सवूत मे उसने दूसरी जूती पश कर दी। वादशाह अपनी वेवकूफी पर शर्मिन्दा हुआ और मुल्लो ने अपना रास्ता नापा।

यह एक दृष्टात है। इसका अर्थ इतना ही है कि निराधार ओर असत्य आते वढ-चढ कर फैलती है। मुल्लो के प्रपच क कारण वादशाह को पश्चात्ताप करना पडा और जूती सिर पर उठानी पडी। इसी प्रकार स्वार्थी लागा के प्रपच मे भले आदमी फस जाते है और फिर उन्हे पश्चात्ताप करना पडता है। यह व्याख्यान सुन कर श्री वाडीलाल भाई ने अपने लेखो के लिए मुनिश्री से क्षमायाचना की। सघ म हर्ष छा गया।

इस चातुर्मास मे मुनिश्री ने मरहठी भाषा का अभ्यास काफी वढा लिया था। सत तुकाराम क वहुत-स अभग तो आपको कठस्थ हो गए थे। आपका मराठी भाषा का ज्ञान अल्पकाल मे ही काफी अच्छा हो गया।

धर्म-वोध

के बाद जैनधर्म के विषय मे उनकी काफी अच्छी जानकारी हो गई, मुनश्री ने उनके चित्त मे धर्मश्रद्धा ऐसी दृढ कर दी थी कि वे धर्मश्रद्धालु और समाज के कर्मठ कार्यकर्त्ता भी बन सके। मुनिश्री ने फिरोदियाजी जैसे कई रत्नो को खोने से बचाया है।

कुन्दनमलजी फिरोदिया के साथ अहमदनगर के प्रसिद्ध वकील बाला साहब भी मुनिश्री से वार्त्तालाप करने आया करते थे। धर्म-सबधी उनकी शकाए बडी गभीर होती थी मगर मुनिश्री का समाधान उनसे भी अधिक गभीर और तात्त्विक होता था। वकील साहब मुनिश्री की मार्मिक विवेचना सुनकर वडे आह्लादित होते थे।

मुनिश्री की सगति का बाला साहब पर स्थायी प्रभाव पडा। आप सिर्फ तेतीस वर्ष की आयु मे शरीर छोड गये। जीवन के अन्तिम समय मे आपने अपनी पत्नी के लिए उसकी राय से सिर्फ पच्चीस रुपये मासिक खर्च के लिए नियत किये और अपनी दो-तीन लाख की सम्पत्ति अनाथरक्षा, ज्ञान-प्रचार आदि शुभ कार्यों के लिए दान कर गये। आपने पत्नी से कहा था-तुम्हारी उम्र अभी अधिक नही है। पास मे सम्पत्ति होगी तो वह अनर्थजनक हो सकती है। अत मै अपनी उपार्जित सम्पत्ति अपने सामने ही दान कर देना चाहता हूँ।

इस प्रकार साधारण जनता मे और विद्वान् वर्ग मे धर्म के प्रति प्रीति जगा कर चातुर्मास समाप्त होते ही मुनिश्री ने विहार कर दिया और घोड नदी तथा मछर होते हुए आप महाराज शिवाजी की जन्मभूमि जुन्नेर पधारे।

संस्कृत-शिक्षा

स्थानकवासी सप्रदाय मे उस समय तक सस्कृत भाषा का पठनपाठन बहुत कम होता था। व्याकरण, साहित्य आदि का अध्ययन करके ठोस पाण्डित्य प्राप्त करने की ओर किसी की रुचि नही थी। यही नही, कई पुराने विचारो के लोग तो सस्कृत भाषा के पठन-पाठन का विरोध भी करते थे। मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज को यह अच्छा न लगा। उनकी दृष्टि मे मौलिकता थी। रूढ सस्कारो के नीचे दवा रहना उनकी प्रकृति के विरुद्ध था। सयम की मर्यादाओ का वे कट्टरता के साथ पालन करते थे। मगर निराधार कुरूढियो के प्रति उनके हृदय मे कोई आदर न था। अपनी इसी दृष्टि के कारण उन्होने नवयुग की सृष्टि की और जनता का विवेक जागृत करके उसे प्रकाश प्रदान किया है।

मुनिश्री स्थानकवासी सम्प्रदाय मे समर्थ विद्वान् देखना चाहते थे। अतएव सामाजिक विरोध होते हुए भी आपने अपने शिष्य मुनिश्री घासीलालजी महाराज और मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज को सस्कृत व्याकरण पढाने का निश्चय किया।

वैतनिक पण्डित

सस्कृत पढाने का निश्चय कर लेने पर एक कठिनाई सामने आई। उस समय स्थानकवासी समाज मे कोई साधु या श्रावक ऐसा न नजर आया जो इन मुनियो को नियममित रूप से पढा सके। वेतन देकर पण्डित नियुक्त करने मे वहुत लोगो को आपत्ति थी। उनका खयाल था-'अनपढ रह जाना अच्छा है मगर वेतन देकर गृहस्थ विद्वान् से पढना अच्छा नही है। मुनिश्री अपने भाषणो मे इस विषय पर भी प्रकाश फेंका करते थे।

एक बार अहमदनगर के कुछ पधान श्रावको ने मुनिश्री के सामने यही प्रश्न रखा था। उन्होन पूछा- त्यागियो को गृहस्थो से पढना चाहिये या नही ? और साधु के निमित्त वेतनिक पण्डित रखने मे मुनियो को दोष लगता है या नही ?

मुनिश्री यह मानते थे कि जो व्यक्ति साधु के आचार को पूर्ण रूप से भली-भाति नही जानता वह उसका समीचीन रूप से पालन नही कर सकता। अपने आचार को 'भली-भाति समझने वाला ही आचार का पालन कर सकता है। ज्ञान के अभाव मे साधुता की शोभा भी नही है। समाज के उत्थान के लिए भी ज्ञान की आवश्यकता है।

इसके अतिरिक्त जयतारण आदि के शास्त्रार्थों के समय वे सस्कृत-ज्ञान का महत्त्व भली-भाति समझ चुके थे। उस समय मुनिश्री को सस्कृत भाषा का ज्ञान था इसी कारण उन्हे उतनी शानदार विजय मिल सकी थी। सस्कृत भाषा के ज्ञान के अभाव मे विद्वानो के समक्ष कैसी हास्यास्पद स्थिति हो जाती है यह बात वे तेरहपथी साधु फोजमलजी की दशा देखकर अच्छी तरह समझ चुके थे। अपने धर्म की रक्षा करने के लिए प्रतिवादियो का मुकाबिला करने के लिए सस्कृत भाषा की जानकारी अनिवार्य है।

श्रावको के प्रश्न का उत्तर मुनिश्री ने व्याख्यान मे देना ही उचित समझा। दूसरे दिन आपने व्याख्यान मे फरमाया-किसी सभ्य ओर समझदार गृहस्थ के एक पुत्र था। पिता ने मरते समय उससे कहा- बेटा तुम्हारे हित के लिए मै जो-कुछ कर सकता था, कर चुका। अब मै सदा के लिए विदा होता हू। अतिम समय मे एक शिक्षा ओर दिये जाता हू। वह यह है- 'तुम किसी से ऋण मत लेना और न भूखे ही रहना। इतना कहने के बाद पिता की मृत्यु हो गई।

महाकवि कालिदास ने कहा है-'नीचेर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण।' मनुष्य की दशा सदैव बदलती रहती है। स्थिति कभी अच्छी ओर कभी खराब हो जाती है। बडे-बडे लखपति क्षणभर मे कगाल हो जाते हैं ओर कगालो को लखपति होते देर नही लगती। उस लडके की स्थिति भी धीरे-धीरे गिरती गई। आखिर एक दिन वह आ पहुँचा कि ऋण लिये बिना कोई चारा न रहा। मगर उसे अपने पिता के अतिम शब्द याद आ गये कि उन्होने ऋण लेने का निषेध किया था। वह एक क्षण के लिए सहम गया। पिताजी का अतिम आदेश वह केसे भग करे ? परन्तु ऋण न लेने का नतीजा प्राणो का विसर्जन करना था। अगर वह ऋण नही लेता तो भूखा रहना होगा और प्राण त्यागने होगे। मगर यह भी वह केसे मजूर कर सकता है। पिता ने भूखे न मरने का भी तो आदेश दिया है। विचित्र सकट है। एक ओर कुआ और दूसरी ओर खाइ। इधर भी पिता की आज्ञा का भग और उधर भी। एक बार लडका किकर्त्तव्य-विमूढ हो गया।

भाइयो! इस लडके के मामले का फैसला आपके हाथ मे दिया जाय तो आप क्या फैसला करेगे ? उस लडके का भूखो मर जाना पसद करेगे ? क्या आप उसके निर्णय को अनुचित कह सकते है ?अगर आप थोडा-सा विचार करेगे तो मालूम होगा कि उस लडके ने उचित ही निर्णय किया।

यही बात गृहस्थ से साधुओ के अध्ययन के विषय मे समझनी चाहिए। यह ठीक है कि साधु को गृहस्थ से कोई काम नही लेना चाहिए, मगर क्या आपके धर्म-गुरुओ को मूर्ख ही बना रहना चाहिए ? क्या उन्हे धर्म पर होने वाले मिथ्या आरोपो का निवारण करने मे समर्थ नही बनना चाहिए ? शास्त्रो मे ज्ञान की महिमा का बखान निष्कारण नही किया गया। दशवैकालिक सूत्र मे कहा है-

अन्नाणी किं काही किंवा नाही सेयपावकं।

अर्थात्-अज्ञानी बेचारा क्या कर सकेगा ? वह भले-बुरे को- कल्याण और अकल्याण को, धर्म और अधर्म को क्या खाक समझेगा ?

अध्ययन और अध्यापन कोई सावद्य कार्य नही है। मर्यादा मे रहते हुए अगर गृहस्थ से अध्ययन किया जाय तो मूर्ख रहने की अपेक्षा बहुम कम दोष है। फिर प्रायश्चित द्वारा शुद्धि भी की जा सकती है। भगवान् ने गृहस्थ से काम लेने का निषेध किया है तो अल्पज्ञ रहने का भी निषेध किया है। मगर जैसे भूखो मर जाने की अपेक्षा थोडा ऋण लेकर जीवन कायम रखना लडके का कर्त्तव्य था उसी प्रकार विद्वान् होना और यथोचित प्रायश्चित लेकर शुद्धि कर लेना साधुओ का कर्त्तव्य है। आप स्मरण रखे। नवीन युग, जो हमारे-आपके सामने आया है उसकी विशेषताओ पर ध्यान दिये बिना धर्म और समाज की रक्षा होना कठिन है। धर्म और समाज की रक्षा के लिए अज्ञान का निवारण करना सर्वप्रथम आवश्यक है।

इस भाषण से बहुत-से लोगो को सतोष हुआ। मुनिश्री तो अपने दोनो शिष्यो को पढाने का निश्चय कर ही चुके थे। तदनुसार पढाई चल भी रही थी। दोनो मुनि परिश्रम के साथ अभ्यास करने लगे।

इक्कीसवां चातुर्मास

जुन्नेर से विहार करके मुनिश्री अनेक स्थानो मे विचरे। जगह-जगह धर्म प्रचार करते हुए चातुर्मास समीप आने पर फिर जुन्नेर पधार गए। सवत् १९६९ का चातुर्मास आपने जुन्नेर मे ही किया।

जुन्नेर मे स्थानकवासी साधुओ का यह पहला चातुर्मास था। वहा चातुर्मास करके आपने एक नया क्षेत्र खोल दिया।

जुन्नेर के इलाके मे श्रावको के दो दल हो रहे थे। मुनिश्री के पधारने से दलबन्दी मिट गई और एकता तथा प्रेम स्थापित हो गया।

आपके लिए यह क्षेत्र एकदम नूतन था फिर भी सैकडो की सख्या मे श्रोता एकत्र होते थे। बहुत-से राजकर्मचारी भी लाभ उठाते थे। वहा के तहसीलदार तो आपके परम-भक्त हो गये थे।

इस चातुर्मास मे मुनि श्री मोतीलालजी महाराज ने ३३ दिन का उपवास किया। पूर के दिन जीवदया तथा दूसरे धार्मिक कार्य हुए।

इस चातुर्मास मे मुनिश्री ने स्वय भी सस्कृत भाषा का विशेष अभ्यास किया।

जुन्नेर का चातुर्मास पूर्ण करके मुनिश्री मछर होते हुए खेड पधारे। यहा से चीचवड आदि स्थानो को पवित्र करते हुए आप पूना पधार गये। पूना दक्षिण का प्रसिद्ध विद्या केन्द्र है। आपका व्याख्यान सुनने के लिए पूना मे बहुत बडी सख्या एकत्र होने लगी। जैनेतर लोगो पर भी आपके उपदेश का ऐसा असर पडा कि वे भी चातुर्मास की प्रार्थना करने लगे। उन्होने आग्रह करते हुए कहा-'आप इस वर्ष पूना को ही पुनीत बनाइए। दर्शनार्थ आने वाले भाइयो की समस्त व्यवस्था का भार हम उठाएगे।' मगर पूना बहुत बडा शहर है और वहा साधुओ को कई प्रकार की असुविधाए थी। अतएव पूना-निवासियो को निराश होना पडा।

पूना से विहार करके विचरते हुए आप चीचवड पधारे। यहा श्रीयुत बक्तावरमलजी पोरवाड ने बडे वैराग्य से फाल्गुन शुक्ला द्वितीया को दीक्षा अगीकार की। उस समय आपकी आयु २४ वर्ष की थी। आप कष्टसहिष्णु और सयमशील है। जीवन सेवामय है। अतिम दिनो तक आपने पूज्यश्री की जो अनवरत सेवा की है वह सभी के लिए आदर्श है।

चीचवड से विहार करके मुनिश्री मछर, नारायणगाव, बोरी आदि मे धर्म जागृति करते हुए घोडनदी पधारे।

बाईसवां चातुर्मास

मुनिश्री ने सवत् १९७० का चातुर्मास घोडनदी मे किया। आप नौ ठाणो से घोडनदी मे विराजमान हुए। यहा भी मुनिश्री मोतीलाल जी महाराज ने लम्बी तपस्या की। पूर के दिन जीवदया के निमित्त बहुत-सा दान श्रावको ने दिया।

नजर का भ्रम

चौमासे मे एक बार मुनिश्री को बुखार आ गया। यह पहले ही कहा जा चुका है कि मुनिश्री का शरीर गौरवर्ण और सुन्दर था। स्त्रिया स्वभाव से भोली होती है। कहने लगी-'महाराज साहब! आपको नजर लग गई है। आप का शरीर देखकर किसी औरत ने नजर लगा दी है। बात बिल्कुल सही है। आपको विश्वास न हो तो गिरधारीलालजी से पूछ लीजिए।'

गिरधारीलालजी नामक सज्जन पास ही खडे थे। उनके पास एक मोहरा था। जब किसी को ज्वर हो आता या ऐसी ही कोई बीमारी होती तो औरत उसे गिरधारीलालजी के पास ले आती। गिरधारीलालजी अपने मोहरे को पानी मे रखते और उस पर अगूठा रखकर उसे उठाते। अगर मोहरा अगूठे के साथ उठ जाता तो कहते- इसे नजर लग गई है। देखो, मोहरा उठ रहा है। स्त्रियो को मोहरा उठते ही विश्वास हो जाता था।

मुनिश्री मोहरा उठने का मर्म समझना चाहते थे। जब सब लोग चले गए तो आपने मुनिश्री गणेशीलालजी म से मोहरा सरीखा एक पत्थर मगवाया। उसे पानी मे रखकर अगूठे से दबाया। हाथ के साथ ही साथ पत्थर भी ऊचा उठ आया।

मुनिश्री ने दूसरे दिन बाइयो को भलीभाति समझाया और अपने हाथ से मोहरा उठाकर उनका भ्रम दूर कर दिया। आपने बाइयो को समझाया- 'भोली बहिनो! पानी मे रखकर इस प्रकार दबाने से मोहरा अपने-आप उठ आता है। इसमे मत्र-तत्र या और कोई नजर आदि करामात नही है। आप अकारण ही झूठी बातो पर विश्वास करने लगती है। वास्तव मे नजर नाम की कोई चीज नही है। यह तो कोरा वहम है। इस वहम मे पडकर तुम अपनी धर्मश्रद्धा से च्युत न होओ। अपने किये कर्मों के सिवाय कोई कुछ नही बिगाड सकता। धर्म पर श्रद्धा दृढ रखो। फिर देवी-देवता, जादू-टोना आदि किसी से डरने की आवश्यकता नही।'

मुनिश्री के व्याख्यान से बहुत-से भाइयो और बहुत-सी बाइयों का भ्रम भग हो गया।

मुनिश्री के इस उपदेश का जनता पर अच्छा प्रभाव पडा। गुलाबचदजी नामक एक सज्जन की पत्नी को भूत आता था। वे एक दिन एक मोटा और मजबूत-सा डडा लेकर अपनी पत्नी के सामने जमकर बैठ गये। कहने लगे-' आज भूत आया और मैने इस डडे से उसका स्वागत किया! चाहे कुछ भी हो, तुम्हारी खोपडी फूट जाय तो फूट जाय मगर मै भूत को बिना मारे नही छोडूगा। कहने की आवश्यकता नही कि डडे के डर से भूत भाग गया और फिर कभी उनकी पत्नी की ओर उसने नही झाका।

लासणगाव के एक भाई चतुर्भुजजी थे। उन्होने एक आप-बीता किस्सा सुनाया। उनकी पत्नी को भूत आया करता था। जब उसे भूत आता तो एक नाइन बुलाई जाती थी। नाइन भूताविष्ट स्त्री को एक कमरे मे बद कर लेती और हाथ मे पत्थर लेकर धमकाती-'भाग, भाग, नही तो तेरा सिर फोडती हू।' सिर फूटने के भय से भूत थोडी ही देर मे भाग जाता था। कुछ दिनो तक यही हाल रहा। एक दिन चतुर्भुजजी ने किवाड मे छेद करके सारी घटना देखी। पत्थर का महामत्र देखकर उन्होने भी भूत भगाने की कला सीख ली। अब भूत आने पर नाइन की आवश्यकता नही रही। चतुर्भुजजी स्वय उक्त विधि से भूत भगाने लगे। कुछ दिनो बाद भूत ने पिड छोड दिया।

इस प्रकार की अनेक घटनाये मनोभावना से हुआ करती है। मुनिश्री के उपदेश से लोगो ने यह सत्य समझ लिया।

घोडनदी का चौमासा समाप्त करके मुनिश्री जामगाव, अहमदनगर, अम्बोरी, सोनई आदि स्थानो को पवित्र करते हुए फिर जामगाव पधारे।

तेईसवां चातुर्मास

वि स १९७१ का चातुर्मास जामगाव मे हुआ। यह स्थान अहमदनगर से आठ कोस दूर है। अध्ययन और धर्मध्यान की सुविधा देखकर मुनिश्री ने छोटे ग्राम मे चौमासा करना ही उपयुक्त समझा। फिर भी मुनिश्री की प्रसिद्धि, प्रतिभाशालिता और तेजस्विता के कारण यहा भी काफी भीड होने लगी।

मुनिश्री मोतीलालजी महाराज ने यहा ३४ दिन की तपस्या की। पूर के दिन श्रावको की ओर से दान आदि अनेक शुभ कार्य किये गये।

सेनापति वापट

जामगाव चौमासे स पहले मुनिश्री एक वार पारनेर पधारे। एस डी ओ प्रभृति वडे-वडे राज्याधिकारी मुनिश्री का व्याख्यान सुनने तो आते ही थे, पर उनमे एक विशिष्ट सज्जन थे- सेनापति वापट। वापट कट्टर देशभक्त और वृटिश शासन के घोर विरोधी थे। सरकार उनसे सदैव सतर्क रहती थी। खुफिया और दूसरी पुलिस हरदम छाया की तरह उनके पीछे लगी रहती थी। उन पर कडी निगरानी रखी जाती थी।

विद्यार्थी-अवस्था मे वे वहुत प्रतिभाशाली विद्यार्थी थे। आई सी एस के लिए वे परीक्षा मे वैठ और सर्वप्रथम आये। नौकरशाही रूपी मशीन का पुर्जा वनने के लिए वे इग्लेण्ड भेजे गये। लाला लाजपतराय की भारत मे गिरफ्तारी होने पर उन्होने वहा एक भाषण दिया, जो सरकार की आखो म वहुत खटका। उसी समय से वे खतरनाक आदमी समझे जाने लगे। पुलिस उन पर निगाह रखने लगी।

इग्लेण्ड मे रहकर आप वेरिस्टर हो गये और आई सी एस को छोड वैठे। जर्मनी जाकर आपने वम वनाना सीख लिया। आई सी एस के वदले वमवाजी की विद्या सीखकर वापट साहव स्वदेश लौटे। देश मे आकर वहुत-से नवयुवको को वम वनाना सिखाया। सेनापति उनका ऐसा ही विरुद था जैसे श्रीवल्लभ भाई का 'सरदार' विरुद है।

यह सेनापति वापट वडी श्रद्धा के साथ मुनिश्री का व्याख्यान सुना करते थे। आपके साथ सी आई डी क दो सिपाही रहते थे। आपकी स्मरणशक्ति गजब की हे। मुनिश्री का सारा भाषण उसी समय मरहठी-कविता मे तैयार करके सुना देना आपके लिए साधारण वात थी। कभी-कभी आप कहा करते-'अगर यह ब्राह्मणी (आपकी पत्नी) मेरे साथ न होती तो मैं भी मुनिजी का शिष्य वन जाता।'

वापट साहव की दिनचर्या जानने योग्य हे। सुवह उठते ही अपनी पत्नी के साथ टोकरी, कुदाली और झाड़ू लेकर घर से निकल जाते और सडके तथा नालिया साफ करते। लोग अपने-अपने घरो का कूडा-कचरा गलियो मे फेकते और आप चुपचाप उसे इकट्ठा करके, टोकरियो मे भरकर गाव के वाहर डाल आते। इसके वाद प्रतिदिन मुनिश्री का व्याख्यान श्रवण करने आते। दिन मे अगरेजी अखवारो के लिए लेख लिखते। शाम को चार से पाच वजे तक गलियो मे व्याख्यान देते। कोई सुनने वाला हो या न हो समय पर आपका व्याख्यान आरम्भ हो जाता था। धीरे-धीरे श्रोताओ की भीड लग जाती थी। रात्रि मे अछूत वालको को प्रेम से पढाते थे।

उन्हे २०) रु मासिक भेजते थे, किन्तु दूसरे-तीसरे महीने मनी-ऑर्डर वापस कर दिया जाता था। उन्हे लिख दिया जाता था कि इस बार आवश्यकता नही है।

बापट साहब अत्यन्त पतिभाशाली पुरुष है। एक बार मुनिश्री के यह पूछने पर कि आप किस उद्देश्य से सफाई किया करते है ? आपने करीब दस-बारह पृष्ठो का एक बडा ही सुन्दर और अनोखा लेख लिखा था।

वे अपने इस जीवन मे मस्त थे। उनका फक्कडपन वास्तव मे ईर्षा की चीज है। मुनिश्री के पति उन्हे बडी श्रद्धा थी। सेनापति की सेवावृत्ति, देशभक्ति, सादगी, प्रतिभा आदि देखकर मुनिश्री को बडी प्रसन्नता हुई। हर्ष है कि बापट साहब अब भी मौजूद है।

गणी पदवी

सवत् १९७१ मे जब मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज का चातुर्मास जामगाव मे था तव जैनाचार्य श्री श्री १००८ पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज रतलाम मे विराजते थे। चातुर्मास समाप्त होने से पाच दिन पहले अर्थात् कार्तिक शुक्ला दशमी को आपके पैर मे अकस्मात् तीव्र वेदना उत्पन्न हुई। परिणाम स्वरूप चातुर्मास उठने पर आप विहार न कर सके। उसी दिन पूज्यश्री के मन मे आया कि पाव मे वेदना होने के कारण मै अधिक विहार नही कर सकता। ऐसी अवस्था मे दूर-दूर फैले हुए विस्तृत सम्प्रदाय तथा साधुपरिवार की देख-रेख होना कठिन है। इसलिए सम्प्रदाय को कुछ भागो मे विभक्त करके उन्हे भिन्न-भिन्न योग्य साधुओ की देख-रेख मे सौप देना चाहिए। पूज्यश्री ने अपनी इच्छा सघ के अग्रणी श्रावको के सामने व्यक्त की। उसी समय पूज्यश्री की इच्छा के अनुसार व्यवस्थापत्र तैयार किया गया। उसकी प्रतिलिपि नीचे दी जाती है।

व्यवस्थापत्र की प्रतिलिपि

श्री जैन दयाधर्मावलम्बी पूज्यश्री स्वामीजी महाराज श्री श्री १००८ श्री हुक्मीचन्दजी महाराज के पाचवे पाट पर जैनाचार्य पूज्य महाराजाधिराज श्री श्री १००८ श्रीलालजी महाराज वर्तमान मे विद्यमान है। उनके आज्ञानुयायी गच्छ के साधु १०० से अधिक है। उनकी आज तक शास्त्र व परम्परानुसार साल सम्भाल आचार गोचार वगैरह की निगरानी यथा विधि पूज्यश्री करते रहे है। परन्तु महाराज श्री के शरीर मे व्याधि वगैरह के कारण इतने अधिक सन्तो की साल सभाल करने मे परिश्रम व विचार पैदा होता है। इसलिए पूज्य महाराज श्री ने यह विचारपूर्वक गच्छ के सन्त मुनिराजो की साल सभाल व हिफाजत के लिए योग्य सन्तो को मुकर्रर कर तालुक सन्तो को इस तरह सुपुर्दगी कर दिये है कि वे अग्रेसर सन्त अपने गण की सभाल सव तरह से रखे और कोई गण की किसी तरह की गलती हो तो ओलम्भा वगैरह देकर शुद्ध करने की कार्यवाही का इन्तजाम करे। फकत कोई बडा दोष होवे और उसकी खवर पूज्य महाराज को पहुचे तो पूज्यश्री को उसका निकालने का अख्तियार है। सिवाय इसके जो अग्रेसर है वे थोक आज्ञा चातुर्मास आदि की पूज्य महाराज श्री से अवसर पाकर ले लेवे।

इसके सिवाय जो कोई सन्त नीचे के गणो से कारणवश नाराज होकर पूज्यश्री के समीप आवे तो पूज्य महाराजश्री जैसी योग्य कार्यवाही होवे वैसी करे। यह अख्यितार पूज्य महाराज श्री को है। पूज्य महाराज श्री का कोई सन्त चला जावे तो अग्रेसर विना पूज्य महाराज श्री की आज्ञा के उससे

न भाग न कर। इसके सिवाय आचार गोचार श्रद्धा प्ररूपणा की गति है, वह गच्छ की परम्परा मुताबिक स्वाज प्रतिपालन करते रहे।

यह ठहराव शहर रतलाम मे पूज्यश्री की मरजी के अनुकूल हुआ है सो समस्त सघ को इसका अमलदरामद रखना चाहिए।

गणो के अग्रेसरो की खुलावट नीचे लिखे अनुसार है-

(१) पूज्य महाराज श्री के स्वहस्त दीक्षित अथवा पूज्य महाराज श्री की खास सेवा मे रहने वालो की देख-रेख पूज्य महाराज श्री करेगे।

(२) स्वामीजी श्री चतुर्भुजजी महाराज के परिवार मे हाल वर्तमान मे श्री कस्तूरचन्दजी महाराज वगैरह आदि दाने जो सन्त है उनकी साल सभाल की सुपुर्दगी स्वामीजी श्री मुन्नालाल जी महाराज की रहे।

(३) स्वामीजी महाराज श्री राजमलजी महाराज के परिवार मे श्री रतनचन्दजी महाराज की नेश्राय के सन्तो की सुपुर्दगी श्री देवीलालजी महाराज की रहे।

(४) पूज्यश्री चौथमलजी महाराज के सन्तो की सुपुर्दगी श्रीडालचन्दजी महाराज की रहे।

(५) स्वामीजी श्री राजमलजी महाराज के शिष्य श्री घासीरामजी महाराज के परिवार मे मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज साल सभाल करे।

ऊपर प्रमाण गण पाच की सुपुर्दगी अग्रेसरी मुनिराजो को हुई है सो अपने सन्तो की साल सम्भाल व उनका निभाव करते रहे।

यह ठहराव पूज्य महराज श्री के सामने उनकी राय मुताबिक हुआ है, सो सब सघ मजूर करके इस मुताबिक वर्ताव करे।

इस ठहराव के अनुसार मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज भी एक गण के अग्रणी चुने गए।

चौबीसवां चातुर्मास

जामगाव का चौमासा पूर्ण होने पर विभिन्न क्षेत्रो मे विचरते और धर्मोपदेश करते हुए मुनिश्री अहमदनगर पधारे। श्रावको के विशेष आग्रह के कारण सवत १९७२ का चौमासा आपने अहमदनगर मे करना स्वीकार कर लिया।

मुनिश्री का व्याख्यान बहुत ही प्रभावक व्यापक और सार्वजनिक होता था। सभी श्रेणियो के लोग बडे चाव से सुनने आते और प्रभावित होते थे।

प्रोफेसर राममूर्त्ति का आगमन

मुनिश्री ने उस दिन जीवदया और गौ रक्षा पर बडा ही ओजस्वी भाषण दिया। जनता पर गहरा प्रभाव पडा। प्रोफेसर राममूर्त्ति ने देखा होगा, वे अपने हृष्ट-पुष्ट शरीर के करतब दिखलाकर जनता को जितना पभावित करते है, उससे कही ज्यादा मुनिश्री छोटी सी जिह्वा के जादू से जनसाधारण को पभावित कर देते है। मुनिश्री के प्रभावशाली प्रवचन को सुनकर वे चकित रह गये।

मुनिश्री का भाषण होने पर उन्होने अपने सक्षिप्त भाषण मे कहा-

'इस समय मै क्या बोलू ? सूर्य के निकल आने पर जिस प्रकार जुगनू का चमकना अनावश्यक है, उस पकार मुनिश्री के अमृततुल्य उपदेश के बाद मेरा कुछ बोलना भी अनावश्यक हे। मै न वक्ता हू, न विद्वान् हू। मै तो एक कसरती पहलवान हू। किन्तु बडे-बडे विद्वानो का व्याख्यान सुनने का मुझे बडा शौक है। आज मुनिश्री का उपदेश सुनकर मेरे हृदय पर जो प्रभाव पडा है वह आज तक किसी के उपदेश से नही पडा। यदि भारतवर्ष मे ऐसे दस साधु भी हो तो निश्चित रूप से भारत का पुनरुत्थान हो जाय।

जब मै अपने डेरे से चला था तो मुझे यह आशा नही थी कि मै जिनका उपदेश सुनने जा रहा हू वे मुनिराज इतने बडे ज्ञानी और ऐसे सुन्दर उपदेशक है। आज मेरा हृदय एक अभूतपूर्व आनन्द अनुभव करके प्रफुल्लित हो रहा है। मै जीवन भर इस सुन्दर उपदेश को न भूलूगा।

मै क्षत्रिय हू किन्तु मासभोजी नही हू। जीवो पर दया करने का सदैव पक्षपाती हू। कुछ लोगो की धारणा है कि मनुष्य बिना मास खाए शक्तिशाली हो ही नही सकता। यह उनका भ्रम है। मै स्वय अन्न और वनस्पतियो के सहारे इतना बडा शरीर पाल रहा हू। कुछ लोगो की मेरे विषय मे यह गलत धारणा है कि मेरे शरीर मे कोई दैवी शक्ति है। मेरे शरीर मे कोई दैवी शक्ति नही है। केवल ब्रह्मचर्य और व्यायाम से मैने यह शक्ति सम्पादित की है। आज भी यदि कोई छह से नौ वर्ष तक का लडका मुझे मिल जाय तो मै उसे बीस वर्ष के परिश्रम से अपनी सारी शक्ति दे सकता हू। इसके लिए मै जिम्मेवार हू कि वह वीस वर्ष मे ही राममूर्त्ति बन जायगा।'

इस प्रकार अहमदनगर मे अपूर्व यशोराशि उर्पाजन करके चौमासा समाप्त होने पर आपने घोडनदी की ओर विहार किया।

लोकमान्य तिलक से भेंट

घोडनदी पहुचकर मुनिश्री राजणगाव आदि क्षेत्रो मे विचरते हुए फिर अहमदनगर पधारे। उन्ही दिनो लोकमान्य बालगगाधर तिलक कारागार से मुक्त हुए थे। अहमदनगर मे आपका 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है' विषय पर जोशीला भाषण हुआ। श्रीकुन्दनमलजी फिरोदिया, माणिकचदजी मूथा, सेठ किसनदासजी मूथा तथा श्रीचदनमलजी पीतलिया आदि के प्रयत्न से लोकमान्य भी मुनिश्री के निकट आये।

आपका सम्मिलन देखने के लिए करीब पाच हजार जनता वहा इकट्ठी हुई।

लोकमान्य तिलक ने अपने प्रसिद्ध ग्रथ 'गीतारहस्य' मे सभी धर्मों की तुलनात्मक विवेचना की है। आपने यह ग्रन्थ कारागार मे रहते हुए बडे ही कठोर परिश्रम से लिखा है। ग्रथ आपकी सूक्ष्म विवेचना शक्ति का, विशाल अध्ययन का और प्रखर पाण्डित्य का परिचायक है। इस ग्रथ मे वौद्धधर्म का विवेचन

करने के बाद जैनधर्म को कुछ बातो में भिन्न बताकर उसी के समान बतलाया है। 'गीतारहस्य पढने पर पाठक के मन पर यह छाप पडती है कि जैनधर्म मे भी बौद्धधर्म के समान केवल निवृत्ति प्रधान है। उदाहरणार्थ-गृहस्थ मोक्ष मे नही जा सकता। पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के लिए ससार-त्याग अनिवार्य है। जीवन का एकमात्र लक्ष्य गार्हस्थ्य जीवन को छोडकर मुनिवृत्ति अगीकार करना होना चाहिए। मुनियो के लिए भी मुख्य बात निवृत्ति ही निवृत्ति है। विधेय या आचरणीय बाते बहुत कम अथवा नही है।

यद्यपि ऊपर-ऊपर से देखने पर यह बाते ठीक मालूम होती है किन्तु गभीर विचार करने से मालूम होता है कि इनमे वैसा तथ्य नही है। तिलक स्वय उच्च कोटि के विद्वान थे। वे अपने ग्रन्थ कोअधिक से अधिक प्रामाणिक बनाना चाहते थे। पक्षपात मे पडकर कोई मिथ्या बात लिखने की उनसे आशा नही की जा सकती। फिर भी जैनधर्म के मूल मे जो दृष्टिकोण छिपा हुआ है, तिलक उस तक पूरी तरह नही पहुच पाये थे। मुनिश्री वह दृष्टिकोण समझाना चाहते थे। अत मुनिश्री ने कहा-

जैनधर्म केवल निवृत्ति प्रधान नही है, इसकी प्रकृति अनासक्ति प्रधान है। जैनधर्म मे वेष या बाह्य आचार बाड की तरह सहायक माना है, धान्य का स्थान वह नही ले सकता। वेष मुक्ति कारण नही है। कोई भी किसी भी वेष मे हो, अगर वह विषयो मे पूर्णरूप से अनासक्त हो चुका है तो मोक्ष प्राप्त कर सकता है। निवृत्ति मार्ग का अभ्यास भी मुक्ति का कारण है, अत स्वलिग सिद्ध भी कहा है। अनासक्ति का अभ्यास करने के लिए साधु धर्म और निवृत्ति मार्ग है। गृहस्थ होकर भी जो महापुरुष आसक्ति से सर्वथा अतीत हो जाते है वे गृहस्थलिग से भी मुक्ति के अधिकारी हो जाते है। मुक्ति के लिए जैसे निवृत्ति आवश्यक है उसी प्रकार शुद्ध प्रवृत्ति भी आवश्यक है। साधु के अमुक प्रकार के वस्त्र पहने बिना भी मोक्ष हो सकता है। भरत महाराज चक्रवर्ती सम्राट् थे। उन्होने साधु के वस्त्र धारण नही किये थे, फिर भी शीशमहल्ल मे खडे-खडे उन्हे केवलज्ञान हो गया था। माता मरुदेवी और इलायची पुत्र आदि के अनेक उदाहरण है, जो गृहस्थलिग से ही मुक्त हुए है। यह आन्तरिक भावना के प्रकर्ष का ही परिणाम था। जैनधर्म मे मोक्ष जाने वाले जीवो के पन्द्रह भेद है। उनमे एक भेद अन्यलिग सिद्ध भी है। अर्थात् पूर्ण अनासक्ति या निर्मोह-अवस्था प्राप्त हो जाने पर किसी भी वेष मे रहा हुआ व्यक्ति केवल-ज्ञान प्राप्त कर सकता है। इससे स्पष्ट है कि जैनधर्म न तो सर्वथा निवृत्ति की हिमायत करता है और न मुक्ति के लिए अमुक प्रकार के बाह्य वेष की अनिवार्यता प्रकट करता है। अनाशक्ति ही प्रधान है। अनाशक्ति के अभाव मे निवृत्ति अकर्मण्यता है। कामभोगो मे मूर्छा, गृद्धि या आसक्ति का होना ससार का कारण है और न होना मोक्ष का कारण है। अतएव जैनधर्म को सर्वथा निवृत्ति प्रधान बतलाने से उसका पूर्ण परिचय नही मिलता।

आज्ञा लेना विधेय अश है। कामभोगो को छोडना चौथे महाव्रत का निवृत्ति प्रधान अश है किन्तु आत्मरमण करना उसका पवृत्यश है। किसी भी वस्तु मे ममत्व न रखना पाचवे महाव्रत का निवृत्ति पधान अश है और तप, परीषह जय आदि के द्वारा शरीर तथा वस्त्र आदि वस्तुओ मे अनासक्ति रखने का अभ्यास बढाना पवृत्ति प्रधान अश है। इसी पकार समिति, गुप्ति आदि का पालन, पैदल विहार तथा दूसरी सभी बाते ऐसी है। जिन मे पवृत्ति और दोनो निवृत्ति हुई है। अशुभयोग से निवृत्ति और शुद्ध तथा शुभयोग मे पवृत्ति जैनधर्म का सिद्धान्त है।

बौद्धधर्म मे ज्ञान सन्तान के सिवा कोई आत्मा नही है। मोक्ष अवस्था मे वह भी नही रहता। इसलिए वहा अपने अस्तित्व को मिटा देना ही मुख्य ध्येय है। जैनधर्म मे मुक्त होने पर भी आत्मा का अस्तित्व बना रहता है।

आत्मा कर्मो के अधीन होकर ससार मे भ्रमण करता है। जैन साधक आत्मा को नवीन कर्मबन्ध से बचाना चाहता है और बधे हुए कर्मो को आत्मा से अलग करना चाहता है। इसके लिए दो मार्ग है। सवर और निर्जरा। पहला प्रवृत्ति रूप है और दूसरा निवृत्ति रूप। सवर का अर्थ है अपने को अशुभ प्रवृत्तियो से बचाना- निर्जरा का अर्थ है तप, स्वाध्याय, ध्यान, समाधि आदि से, बधे हुए कर्मो को आत्मा से पृथक् करना। इसके बारह भेद है। इस प्रकार जैनधर्म मे प्रवृत्ति और निवृत्ति साथ-साथ चलते है। मोक्ष अवस्था मे जहा सभी दु खो का अभाव है वहा अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख, अनन्त वीर्य आदि सद्भूत गुण विद्यमान है। जैनियो का आत्मा वेदान्तियो के समान निगुर्ण नही है।

आशा है, जैन धर्म का दृष्टिकोण आपके ध्यान मे आ गया होगा।

मुनिश्री की जैनधर्म की व्याख्या से तिलक को बहुत हर्ष हुआ। आपने 'गीतारहस्य' मे अगली आवृत्ति मे उचित सशोधन करना स्वीकार किया।

इसके पश्चात् लोकमान्य ने खडे होकर एक सक्षिप्त भाषण देते हुए कहा- जैनधर्म और वैदिकधर्म दोनो प्राचीन है, किन्तु अहिंसाधर्म का प्रणेता तो जैनधर्म ही है। जैनधर्म ने अपनी प्रबलता के कारण वेदिकधर्म पर कभी न मिटने वाली छाप लगा दी है। वैदिकधर्म पर जैनधर्म विजयी हुआ है। यह बात तो मै पहले से ही मानता आया हू।

जैनधर्म के विषय मे मेरा ज्ञान बहुत थोडा है, जितना है वह जैनदर्शन के मूल ग्रन्थो के आधार पर नही है। अग्रेज या दूसरे अजैन विद्वानो ने जो थोडा बहुत लिखा है उसी को पढकर मैने इस मत का परिचय प्राप्त किया है। जैनदर्शन के ग्रन्थ या तो प्राकृत भाषा मे है या सस्कृत मे। उनमे भी ऐसा कोई ग्रन्थ मेरे देखने मे नही आया जिसे पढकर जैन मत का मौलिक ज्ञान प्राप्त हो सकता है। जैन विद्वानो द्वारा आधुनिक शैली पर लिखा हुआ तो एक भी ग्रन्थ नही है। समय की अल्पता के कारण सस्कृत-प्राकृत के विशाल साहित्य का मथन करना मेरे लिए बहुत कठिन है। इसलिए अग्रेज या अजैन विद्वानो द्वारा लिये हुए फुटकल निवन्धो पर से ही अपने विचार घडने पडते है। मुनिश्री ने आज जो बाते समझाई, उनसे मुझे बडा लाभ हुआ है। मै मानता हू, जैनदर्शन का गहराई के साथ अध्ययन करने वाला एक जैन विद्वान जो सूक्ष्म वातें वतला सकता है, दूसरे विद्वान उन पर नही पहुच सकते। अहिंसा धर्म के लिए सारा ससार भगवान् महावीर व बुद्ध का ऋणी है।

मै मुनिश्री का आभार मानता हू जिन्होने भारतवर्ष के एक महान् धर्म के विषय मे मेरी गलतफहमी दूर की और उसका शुद्ध स्वरूप समझाया।

आज के भारतीय साधु समाज मे जैन साधु त्याग तपस्या आदि सद्गुणो से सर्वोत्कृष्ट है। उनमे से एक मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज है जिनका मै दर्शन कर रहा हू और जिनके व्याख्यान सुनने का आनन्द उठा चुका हू। आप सर्वश्रेष्ठ तथा सफल साधु है। मै जहा अनेक उपास्य देवो का उपासक हू-वहा सन्तो का भी अनन्य भक्त हू। अतएव अपने व्याख्यानो के प्रारम्भ मे सन्त तुकाराम के अभगो का मगलगान करता हू तथा उन्हे वेदवाक्य के समान मानता हू

गुणाःप्रियत्वेऽधिकृता न संस्तवः

अर्थात् मनुष्य अपने गुणो के कारण प्रिय होता है परिचय से नही। हमारे ये सत प्रिय है। मै भारत की भलाई मे ऐसे सत्पुरुषो से आशीर्वाद चाहता हू।'

मुनिश्री को लक्ष्य करके आपने कहा-'मुनि महाराज आप सन्त है। सर्वस्व तथा सब कामनाओ का त्याग कर चुके है। फिर भी आपमे जीवमात्र के कल्याण की कामना है। भारत की स्वतन्त्रता मे करोडो व्यक्तियो की भलाई सीमित है। जब भारत स्वतन्त्र होगा तभी जैनधर्म फूलेगा, फलेगा। यह आप जानते है। मै यह भी जानता हू कि आप सन्तो के आचार एव धार्मिक नियमो से बद्ध है। आपको प्राय राज्यविरोधी कार्य मे भाग लेने की आज्ञा नही है। अतएव केवल आशीर्वाद दीजिए। करने वाले हम कई करोड है।'

अन्त मे मै इतना और कहना उचित समझता हू कि जैन-धर्म तो आरभ से अहिंसा का प्रबल समर्थक रहा ही है किन्तु वैदिकधर्म भी जैनधर्म के प्रभाव से अहिंसा का आराधक बना है। अब अहिंसा के विषय मे आप और हम एक मत हैं। अत हम सब को कन्धे से कन्धा मिलाकर अपनी मातृभूमि के उद्धार मे लग जाना चाहिए।'

लोकमान्य चले गये और जैन विद्वानो को एक उपयोगी एव आवश्यक परामर्श भी दे गये। तिलक सरीखे विद्वान जैनधर्म की कई मान्यताओ को गलत समझे, इसमे उनका इतना दोष नही, जितना दोष युगानुकूल शैली से लिखे गये साहित्य के अभाव का है। ऐसे साहित्य के अभाव मे अधिकाश जिज्ञासु जैनेतर विद्वान जैनधर्म की वास्तविकता से अपरिचित रह जाते है। लोकमान्य तिलक का यह कहे तीस वर्ष से अधिक हो गये। मगर यह कमी अब भी ज्यो की त्यो बनी हुई है।

उन्ही दिनो नग्न मुद्रा लेने वाले काशी के सेना के साथ सनातनधर्मियो का शास्त्रार्थ होने वाला था। उसमे भारत धर्म-महामण्डल के महोपदेशक मुरादाबाद निवासी विद्यावारिधि प ज्वालाप्रसाद जी आये। आप अपने दल के साथ मुनिश्री के व्याख्यान मे पहुचे। उस दिन व्याख्यान का विषय था-

'न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः।

जाता है। जीवात्मा खिलौना बन जाता है।' इसके अतिरिक्त अन्य अनेक युक्तियो से मुनिश्री ने ईश्वर का अकर्तृत्व सिद्ध किया। पश्चात् आपने फरमाया- 'यदि विद्यावारिधिजी कुछ बोलना चाहे तो बोल सकते है।' विद्यावारिधिजी कुछ न बोले।

मुनिश्री ने इस पकार विश्वविख्यात व्यक्तियो के हृदयो पर अपनी विशिष्टता, विद्वता आर तेजस्विता की छाप अकित करके तथा धर्म की अपूर्व प्रभावना करके शेषकाल समाप्त होने पर अहमदनगर से विहार किया।

पच्चीसवां चातुर्मास

अहमदनगर से विहार करके स्थान-स्थान पर विचरते हुए मुनिश्री घोडनदी पधारे। वही वि स १९७३ का चातुर्मास हुआ। चातुर्मास आरभ होने के कुछ ही दिनो बाद घोडनदी ओर आसपास मे प्लेग फैल गया। प्लेग के कारण आप पास के सिरूर नामक गाव मे पधार गये। कुछ ही दिन व्यतीत हुए कि वहा भी प्लेग आरभ हो गया।

ऋषि सम्प्रदाय की कुछ सतियो का भी वहा चौमासा था। मुनिश्री ने उन्हे भी अन्यत्र विहार करने का परामर्श दिया। मगर उन्होने विहार करने मे एक दिन का विलम्ब कर दिया। इसका परिणाम बहुत भयकर हुआ। दो सतिया प्लेग से बीमार हो गईं। उनकी बीमारी के कारण दूसरी सतियो को भी ठहरना आवश्यक हो गया। दो सतिया और बीमार हो गईं। अन्त मे दो सतियो का स्वर्गवास हो गया।

ऐसे समय अगर साधु- साध्वी बीमारी वाले स्थान से विहार न करे तो श्रावको को भी भक्तिवश वही ठहरना पडता है ओर उन्हे हानि उठानी पडती है। प्लेग जैसी बीमारी के समय जब गाव खाली हो जाता है तो साधुओ को भी विहार करना लाजिमी हो जाता है।

प्रश्नोत्तर समीक्षा की परीक्षा

स १९७२ मे पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज का चौमासा उदयपुर मे था। न्यायविशारद, न्यायतीर्थ सवेगी मुनिश्री न्यायविजयजी का भी वही चौमासा था। इस समय तो न्यायविशारद जी साम्प्रदायिक सकीर्णता से बाहर से है और उनके विचारो मे काफी औदार्य आ गया है, मगर उस समय वे नवयुवक ही थे और काशी से पढकर बहुत कुछ ताजा ही आये थे। उस समय उनमे साम्प्रदायिकता का अभिनिवेश प्रर्याप्त मात्रा मे मौजूद था। वे अपने उपार्जित विपुल ज्ञान को पचा नही पाये थे। अतएव उन्होने पूज्यश्री से विविध प्रकार के प्रश्न पूछना आरभ किया। पूज्यश्री शान्तस्वभावी थे। वे उनके प्रश्नो का उचित समाधान कर दिया करते थे। न्यायविशारदजी को इतना ही बस न जान पडा। पूज्यश्री सागर की तरह गभीर थे। वहा उफान नही आया और उफान के बिना तूफान कैसे मचता ? अतएव न्यायविशारदजी ने १०८ प्रश्नो की एक लम्बी-चौडी पोथी-सी तैयार करके पूज्यश्री के पास भेज दी। पूज्यश्री को यह सब बखेडा पसद नही था अपने तप-सयम मे मग्न रहना उन्हे प्रिय था। पूज्यश्री ने उसका समीचीन उत्तर दे दिया। मगर श्रावको ने वह प्रश्नावली मुनिश्री के पास भिजवादी। मुनिश्री ने पहले पहल पाँच-सात, आठ प्रश्नो के उत्तर सस्कृत भाषा मे श्लोकबद्ध तैयार करवाकर भेज दिये। न्यायविशारदजी को तो उस समय अपने ज्ञान का प्रदर्शन करना अभीष्ट था। जिज्ञासा या तत्त्वचर्चा के भाव से प्रश्न नही किये गये थे। अतएव उन्होने 'प्रश्नोत्तर-समीक्षा' नामक एक पुस्तक प्रकाशित करवा दी। मुनिश्री ने

इस पुस्तक का खण्डन करते हुए 'समीक्षा की परीक्षा' नामक पुस्तक तैयार की। वह पुस्तक उसी समय प्रकाशित हो गई। उसे देखने से आपकी प्रकृष्ट प्रतिमा का पता चलता है।

प्रलोभन ठुकरा दिया

घाडनदी और आसपास के ग्रामो मे चोमासा पूर्ण करके मुनिश्री गणिया गाव पधारे। उन दिनो आचार्य पूज्यश्री श्रीलालजी ने किसी अपराध के कारण जावरा वाले सतो को सम्प्रदाय से पृथक् कर दिया था। उन्होंने अलग होते ही अपना अलग सगठन स्थापित करने का विचार किया। इसके लिए उन्हे ऐसे आचार्य की आवश्यकता थी जो अपनी प्रतिभा, प्रभाव और वाक्शक्ति के द्वारा नवीन सम्प्रदाय की प्रतिष्ठा जमा सके। इस उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए उनकी दृष्टि मुनिश्री जवाहरलालजी पर गई। ख्यालीलालजी उर्फ हरखचदजी नामक एक भाई मुनिश्री की सेवा मे पहुचे और इनसे आचार्य पदवी ग्रहण करने की प्रार्थना की।

साधारण साधु के लिए आचार्य पदवी उतनी ही प्रलोभन की वस्तु है, जितना साधारण गृहस्थ के लिए राजसिहासन। ससार त्याग देने पर भी इस पद का प्रलोभन अनेक साधुओ मे शेष रह जाता है। किन्तु मुनिश्री ने सयम को ही अपने जीवन मे प्रधान समझा। सघ के सगठन और ऐक्य के लिये वे सदव प्रयत्नशील रहे। साधु सम्मेलन के समय उन्होने जो योजना तैयार की थी उसे देखने से उनके विचार स्पष्ट समझ मे आ सकते है। वे समस्त स्थानकवासी परम्परा के सम्प्रदायो को एकता के सूत्र मे बद्ध करने के इच्छुक थे। एक बार देहली मे अपने भाषण मे उन्होने साफ शब्दो मे घोषणा की थी -

मेरी स्पष्ट सम्मति यह है कि जब तक समस्त उपसम्प्रदायो के साधु अपने पृथक्-पृथक् शिष्य बनाना तथा पुस्तक आदि अपने-अपने अधिकार मे रखना छोडकर एक ही आचार्य के अधीन न होगे तथा अपने शिष्य और शास्त्र आदि पूर्ण रूप से उन आचार्य को न सोप देगे, तब तक सघ की कोई मर्यादा स्थिर रहना कठिन है। यह कार्य चाहे आज हो चाहे कल हो या बहुत समय बाद हो, परन्तु जब तक ऐसा न हो जायगा तब तक सघ मे प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाली खराबिया दूर न होगी।

मुझे अपनी ओर से यह बात प्रसिद्ध करने मे किंचित भी सकोच नही है कि यदि उक्त रीति से समस्त सघ एक सूत्र मे सगठित होना हो तथा शास्त्राज्ञा का पालन होता हो तो इसके लिए सर्वस्व समर्पण करना मै अपना कर्त्तव्य समझता हू। हा, साधुता को मैने अपने जीवन का प्राण समझकर अगीकार किया है, इसलिए उसे अगर कोई प्राण लेने का भय बताकर भी छुडाना चाहे तो भी मै उसे नही छोड सकता। अलबत्ता साधुता के अतिरिक्त और सब कुछ उपाधि, शिष्य, शास्त्र आदि छोडने मे मुझे तनिक भी सकोच नही हो सकता।

जीवन की बडी साधना समझता था और उसके लिए सर्वस्व त्यागने को तैयार था,वह सघ मे अनैक्य पैदा करने वाले किसी पयत्न में कैसे शरीक हो सकता था ? मुनिश्री ने साफ इकार कर दिया।

गणिया गाव से विहार करके महाराजश्री धामोरी पधारे। वहा कुछ दिन विराजकर खेड होते हुए घोडनदी पधार गये। घोडनदी मे पृथक् किये हुए सन्तो की ओर से रतलाम वाले गव्वूलालजी नामक एक वकील आये और उन्होने भी आचार्य पद ग्रहण करने की प्रार्थना की। पूज्यश्री के पति विरक्ति उत्पन्न करने के उद्देश्य से उन्होने कई इधर-उधर की बाते भी कही।

महाराजश्री अपने एक सिद्धान्त पर चलने वाले सन्त थे। उन्होने इस बार भी मनाही कर दी।

मुनिश्री का उत्तर सुनकर और आपकी दृढता देखकर वकील साहब निराश होकर लौट आये। यह घटना मुनिश्री की उदात्त और सघश्रेयस् की पवित्र भावना को द्योतित करती है।

घोडनदी से विहार करके मुनिश्री विभिन्न स्थानो मे धर्मपचार करते हुए और सयम एव तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए हिवडा पधारे। वहा कुछ दिन ठहरकर आपने फिर विहार कर दिया

छब्बीसवां चातुर्मास

हिवडा से विहार करके अनेक क्षेत्र मे विचरते हुए मुनिश्री मीरी पधारे। सम्वत् १९७४ का चौमासा मीरी मे ही किया।

आपके उपदेश से प्रभावित होकर लोगो ने यहा गौशाला की स्थापना की। भीनासर (बीकानेर) के प्रसिद्ध श्रावक स्वर्गीय सेठ बहादुरमलजी बाठिया ने गौशाला को २०००) रु भेट दिये।

मुनियों की परीक्षा

चातुर्मास समाप्त होने के पश्चात् मुनिश्री विभिन्न स्थानो मे विचरते हुए और धर्मोपदेश देते हुए अहमदनगर पधारे।

वम्बई धारासभा के वर्तमान स्पीकर श्रीकुन्दनमलजी फिरोदिया तथा श्री माणिकचदजी मूथा वकील ने एक दिन मुनिश्री से वार्त्तालाप के सिलसिले मे कहा-आपके दोनो शिष्य सस्कृत का अध्ययन कर रहे है, यह आनन्द की बात है। मगर उनका अध्ययन किस प्रकार चल रहा है, और उन्होने कितनी प्रगति की है, यह बात हमे और जनता को मालूम हो ?

यद्यपि मुनियो को परीक्षा देने और प्रमाण पत्र लेने की कोई आवश्यकता नही होती और न इस ध्येय से वे अध्ययन ही करते है, तथापि समाज की शक्ति का दुरुपयोग नही हो रहा है और अध्ययनकर्त्ता मुनि अप्रमत्त भाव से अध्ययन करते है, यह जानने के लिए परीक्षा की आवश्यकता रहती है। उक्त वकीलो का कथन सुनकर मुनिश्री ने अपने दोनो शिष्यो से परीक्षा देने के लिए पूछा। दोनो ने स्वीकृति दे दी। तव अहमदनगर मे आपने दोनो मुनियो की परीक्षा दिलाने का निश्चय किया। पसिद्ध विद्वान् प गुणे शास्त्री, पी-एच डी तथा म म प अभ्यकर शास्त्री परीक्षक निर्वाचित किये गये । श्रीसघ तथा अनेक दर्शको की उपस्थिति मे परीक्षा ली गई। व्याकरण और साहित्य विषय मे पश्न पूछे गये। व्याकरण विषय मे मुनिश्री घासीलालजी महाराज को तथा मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज

को ८२ प्रतिशत प्रथम श्रेणी के नम्बर प्राप्त हुए। साहित्य मे मुनिश्री घासीलालजी म को ६७ और मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज को ७४ प्रतिशत अक प्राप्त हुए। मौखिक परीक्षा मे दोनो मुनियो ने सौ मे से सौ अक प्राप्त किए।

दोनो मुनियो की यह सफलता सराहनीय थी। परीक्षको ने अध्यापक तथा अध्येता दोनो की भूरि-भूरि प्रशसा की। उन्होने कहा- आजकल इस प्रकार प्राचीन और नवीन मत का परिस्फोट करने पढाने की पद्धति उठ-सी गई है। दोनो मुनियो ने सस्कृत मे पूर्ण परिश्रम किया है तथा अच्छी योग्यता प्राप्त की है।

मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज साधुओ को पढाने के लिए जहा विद्वान शिक्षक उपयोगी समझते थे वहा इस बात का भी उन्हे पूरा ध्यान था कि शिक्षक का सदुपयोग हो रहा है या नही।

परीक्षा आदि से निवृत्त होकर मुनिश्री ने अहमदनगर से विहार किया और हिवडा पधारे।

सत्ताईसवां चातुर्मास

वि स १९७५ का चातुर्मास हिवडा मे हुआ। हिवडा के पास तेलकुड नामक एक ग्राम था। वहा एक सदगृहस्थ थे। नाम था उनका भीमराजजी। बडे धर्मात्मा और श्रद्धालु सज्जन थे। उनके पास उनके एक भानेज (भागिनेय) रहते थे। उनका नाम सूरजमलजी कोठारी था। पूज्यश्री का धर्म और अध्यात्म रस से परिपूर्ण उपदेश सुनकर सूरजमल को १८ वर्ष की उम्र मे वैराग्य हो गया। उन्होने ससार का अनित्य और दु खमय स्वरूप समझकर दीक्षा लेने की इच्छा प्रकट की। भाद्रपद शुक्ला सप्तमी को हिवडे मे ही उन्होने मुनिश्री से मुनिदीक्षा अगीकार कर ली। दीक्षा महोत्सव बडी धूमधाम से मनाया गया। लगभग दो हजार व्यक्ति दीक्षा महोत्सव मे सम्मिलित हुए।

दुष्काल में सहायता

उन दिनो दक्षिण प्रान्त मे भयकर दुष्काल पड गया और साथ ही इन्फ्लुएजा का भी प्रकोप हो गया। प्रतिदिन अनेक व्यक्ति भूख तथा इन्फ्लुएजा से मरने लगे। उनकी करुण कथाए प्रतिदिन मुनिश्री के कानो मे पडने लगी। मुनिश्री तथा पन्नालालजी महाराज को छोडकर नौ सन्तो को भी रोग ने धर दबाया। मुनियो की देख-रेख तथा सेवा सुश्रूषा का सारा भार इन्ही दोनो सन्तो पर आ पडा। मुनिश्री उत्तम कोटि के विद्वान वक्ता और प्रभावशाली होते हुए भी इतने अधिक सेवा-भावी थे कि रात-दिन रुग्ण मुनियो की सेवा मे तत्पर रहते थे। आपने मुनिश्री गणेशीलालजी म पर अचित्त लालमिर्ची का प्रयोग किया, हवा मे रखा और जब चित्त घबराने लगता तो बडे स्नेह के साथ चित्त शान्त करते। इस प्रकार बडे परिश्रम से अपने सब मुनियो को सम्भाला। उन दिनो मुनि श्री ने शाक खाना छोड दिया। एक दिन आपने नीचे लिखी हृदय विदारक घटना सुनी।

चिन्ता मे पड गया। घर मे दो चार दिन के गुजारे के लिए भी कुछ न था। खाने वाले पाच थे। सभी का पेट पतिदिन मागता था। हारकर वह मजदूरी ढूढने के लिए गाव छोडकर चला गया। सोचता था कही से कुछ मिलने पर वापिस चला आऊगा।

घर मे बहुत थोडा अनाज बचा था। पति को न लौटा देखकर स्त्री ने स्वय भोजन करना बन्द कर दिया। उस अनाज से बच्चो का पेट पालने लगी। उन्हे रोटी खिला देती और स्वय भूखी सो रहती। इस प्रकार तीन दिन बीत गए। पतिदेव फिर भी न लौटे। घर मे अनाज का एक भी दाना बाकी न रहा। बच्चे फिर खाने को मागने लगे किन्तु मा के पास अब कुछ भी न था। वह स्वय तीन दिन से भूखी थी। उसे अपनी भूख की अपेक्षा बच्चो की भूख अधिक सता रही थी। किसी प्रकार दोपहर तक समझा बुझा कर बच्चो को चुप किया। किन्तु भूखे कब तक चुप रहते ? वे बिलबिला कर रोटी मागने लगे। मा भी उन्हीं के साथ रोने लगी। किन्तु मा का रुदन बच्चो की भूख न मिटा सकता था। मा का हृदय फटा जा रहा था किन्तु कोई चारा न था।

देवर और सास से अनबन होने पर भी वह इस आपत्ति के समय वहा जा पहुची। उस समय देवर घर पर नही था। बच्चो की करुण कथा सुन का सास का हृदय पसीज गया। उसने एक सेर बाजरी उधार दे दी।

वाजरी लेकर वह अपने घर आई और आटा पीस कर रोटी बनाने लगी।

इतने मे छोटा भाई अपने घर आया। बाजरी देने के अपराध मे उसने मा से बहुत कहा सुनी की और दौडा हुआ बडे भाई के घर पहुचा। उस समय एक रोटी अगारे पर थी, एक तवे पर सिक रही थी, एक पोई जा री थी। बाकी आटा कठोती मे था। तीनो बच्चे अगारो पर सिकती हुई रोटी की आशा मे बैठे थे। इतने मे वह नर पिशाच आ पहुचा और भौजाई पर बाजरी ठग लाने का इल्जाम लगा कर गालियो की बौछार करने लगा। हल्ला सुन कर पडौसी इकट्ठे हो गए। बच्चो पर दया करने के लिए उसे बहुत समझाया किन्तु उसने एक न सुनी। तवे तथा अगारो पर पडी हुई रोटिया तथा सारा आटा उठाकर गालिया देता हुआ वह चला गया।

बच्चे अपनी आशा को टूटते देखकर बिलख-बिलख कर रोने लगे। मा का हृदय भी टूट गया। वह भी फूट-फूटकर रोने लगी। किन्तु भूख की समस्या फिर भी हल न हुई।

माता ने अचानक रोना बन्द कर दिया। वह बन्द करना रुदन से भी अधिक भयकर था। उसने बच्चो से कहा- "आओ रोटी लेने चले।" भोले वालको को क्या पता था कि भूख से तग आकर मा का हृदय क्या करने जा रहा है ? वे साथ हो लिए। बच्चो को लेकर वह गाव से बाहर निकली। थोडी दूर पर जगल मे एक कुआ था। बच्चो को एक वृक्ष के नीचे खडा करके वह बोली-'तुम यही खडे रहना। मै रोटी लेने जाती हू।' यह कह कर वह कुए पर गई और उस मे कूद पडी।

बच्चो ने समझा- मा रोटी लेने गई है। थोडी देर तो वे आशा मे खडे रहे किन्तु मा रोटी लेकर न लौटी। वे जोर से रोने लगे और कुए मे झाक कर मा-मा पुकाने लगे। उन्हे क्या पता था, उनकी क्षुधा से तग आकर माता उन्हे छोडकर किसी दूसरे लोक मे पहुच गई है और अव उनका क्रन्दन उसके पास न पहुच सकेगा।

उसी समय बडा भाई लोटा। बेचारा मजदूरी खोजने गया था किन्तु वहा भी भाग्य ने पीछा न छोडा। तीन दिन भटकने पर भी कही काम न मिला। भूखा मरता घर लोटा तो किवाड खुले पडे थे। घर मे कोई न था। पडोसियो से सारी कथा सुनकर वह भी उसी ओर चल दिया जिधर उस की पत्नी गई थी। कुए के पास पहुचने पर उसे रोते हुए बालक दिखाई दिए। पिता को देखते ही वे रोटी-रोटी चिल्लाते हुए दोडे। बाप ने झूठी सात्वना देते हुए पूछा-"मै तुम्हे रोटी देता हू। बताओ! तुम्हारी मा कहा गई है?" बालको ने कुए की तरफ इशारा करते हुए कहा-"यहा रोटी लेने गई है।" उसने कुए पर जाकर देखा अभी बुलबुले उठ रहे थे। कई दिन की भूख के कारण वह पहले ही बहुत घबराया हुआ था, यह दशा देख कर विक्षिप्त-सा हो उठा। उसने बच्चो से कहा-"आओ! अपन भी रोटी लेने चले।" यह कहकर एक बचे को पीठ से बाध लिया और दो को बगलो मे रख लिया। कुए पर चढ कर वह भी धम से कूद पडा। भूख से तग आकर उसने अपनी तथा अपने बच्चो की जीवन लीला समाप्त कर दी।

इस हृदय विदारक घटना को मुनिश्री ने अपने व्याख्यान मे सुनाया। गरीबो की करुण दशा का वर्णन करते हुए दया दान का उपदेश दिया। परिणाम स्वरूप बाहर से दर्शनार्थ आए हुए तथा स्थानीय श्रावको ने गरीबो को भोजन देने के लिए बहुत-सा रुपया जमा किया। गाव के बहुत-से व्यक्तियो ने दस-दस मन जुआर दी। छोटी-छोटी भी बहुत-सी सहायताए प्राप्त हुईं। मजदूरी करने वाली एक बहिन ने अपनी मजदूरी मे से चार आने दिए।

तदनन्तर एक विशाल भोजनालय प्रारम्भ हो गया। गरीबो को मुफ्त भोजन दिया जाने लगा। आस-पास के गावो मे इस बात की घोषणा कर दी गई। लगभग दो-अढाई सो व्यक्तियो को प्रतिदिन दोनो समय भोजन मिलने लगा। उन मे बहुत-से व्यक्ति ऐसे भी होते थे जिन्हे एक हफ्ते से कुछ भी खाने को न मिला था।

युवाचार्य पदवी

उन दिनो पूज्यश्री का चोमासा उदयपुर मे था। इन्फ्लुएजा का प्रकोप प्राय सर्वत्र था। आश्विन मास मे उदयपुर पर भी उसका कृपाकटाक्ष बरस पडा। पूज्यश्री पर उसका असर हुआ। उनके शरीर मे तीव्र ज्वर रहने लगा। किन्तु ज्वर की दशा मे भी पूज्यश्री अपनी दैनिक धर्मक्रिया नियमित रूप से करते थे। महापुरुष अपनी नही अपने आश्रित की चिन्ता पहले करते है। पूज्यश्री ने अपनी रुग्ण अवस्था की चिन्ता न करते हुए सघ के हित का विचार किया। सोचा जीवन का क्या भरोसा है? रोग का एक ही हल्का-सा आक्रमण इसे समाप्त कर देने के लिए काफी है। रोग के अतिरिक्त भी मृत्यु के अनेको साधन ससार मे विद्यमान है। आचार्य होने के कारण मेरे ऊपर सारे सम्प्रदाय का भार है। अतएव अब मुझे अपना कोई योग्य उत्तराधिकारी चुन लेना चाहिए, जो मेरे बाद सम्प्रदाय को भली भाति सभाल सके और चतुर्विध सघ का धर्मध्यान निर्विघ्न होता रहे।

ध्यान आते ही उन्हे सान्त्वना मिली, सतोष हुआ और एक पकार से वे निश्चिन्त हो गये। उन्होने मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज को युवाचार्य चुनने का मन ही मन निश्चय कर लिया।

स्वास्थ्य कुछ ठीक होने पर पूज्यश्री ने उदयपुर मे उपस्थित श्रीसघ के सामने अपने विचार प्रस्तुत किये। उस समय वहा रतलाम, जावरा, बीकानेर आदि बहुत-से नगरो और ग्रामो से दर्शनार्थ आये हुए श्रावक भी उपस्थित थे। सभी श्रावको ने पूज्यश्री के चुनाव का हार्दिक अभिनन्दन किया।

मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज के ज्ञान, दर्शन और चरित्र की महिमा उस समय सर्वत्र फैल चुकी थी। आपकी ओजस्विनी वाणी, प्रखर प्रतिभा, सादगी तथा अन्य अनेक गुणो से सभी लोग परिचित हो चुके थे। आपका व्यक्तित्व तो असाधारण था ही। आपकी शरीर सम्पत्ति के विषय मे पहले ही लिखा जा चुका है।

अपने सयमशील शिष्यो से घिरे हुए जब आप व्याख्यान-मण्डप मे विराजते थे तो तारा मण्डल से घिरे हुए चन्द्रमा के समान सुशोभित होते थे। आश्चर्य तो यह है कि आपका मुख सूर्य की भाति देदीप्यमान था मगर मुख से निकलनेवाले वचन इतने मधुर और शान्तिप्रद होते थे मानो चन्द्रमा से अमृत बरस रहा हो। इस अमृत का पान करने के लिए हजारो चातक लालायित रहते थे। उस समय की आपकी दिव्य छवि जिसने एक बार निरख ली कि उसके हृदय मे उतर गई। आपका उपदेश अनेकान्त तत्त्व से परिपूर्ण होता था, और आपका शरीर अनेकान्त की प्रत्यक्ष साक्षी उपस्थित करता था।

दक्षिण पदेश मे जैसे महाराज शिवाजी ने अपनी वीरता की धाक जमाई थी उसी प्रकार मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने अपनी धर्मधीरता की धाक जमा दी थी। वहा आपने उसी प्रकार जैनधर्म की विजयपताका फहराई जिस प्रकार शिवाजी ने अपनी विजयपताका फहराई थी। जैसे शिवाजी ने अपने शत्रुओ को कुचल डाला था उसी प्रकार आपने समाज और धर्म सबधी कुरूढियो को कुचल दिया था। जैसे शिवाजी अपनी राजकीय स्वाधीनता के लिए जूझते रहे और अपने पथ मे आने वाले कष्टो की उन्होने कभी चिन्ता न की उसी प्रकार मुनिश्री अपनी आध्यात्मिक स्वाधीनता (मुक्ति) के लिए जूझते रहे और मार्ग मे आने वाले विघ्नो की आपने तनिक भी परवाह नही की। महाराज शिवाजी की कीर्ति का बखान भूषण जैसे कवियो ने किया जबकि महाराज श्रीजवाहरलालजी की कीर्त्ति का बखान करने वाले, भारतवर्ष के तत्कालीन सर्वश्रेष्ठ नेता लोकमान्य तिलक और विश्वविख्यात पहलवान प्रोफेसर राममूर्त्ति, सेनापति बापट आदि थे।

धर्मनौका के ऐसे कर्णधार को पाकर मोक्ष-मार्ग के किस यात्री को अपार आनन्द न होता? सभी ने मुनिश्री की प्रशसा की और पूज्य श्री के विचार के प्रति अपनी प्रसन्नता प्रकट की। सबकी अनुकूल सम्मति देखकर पूज्यश्री को और अधिक आनन्द हुआ। पूज्यश्री ने कार्तिक शुक्ला द्वितीया के दिन मुनि श्रीजवाहरलालजी महाराज को युवाचार्य पद पर नियुक्त करने की घोषणा कर दी। अपनी जन्मतिथि से दो दिन पूर्व ४३ वर्ष की अवस्था मे आप युवाचार्य घोषित कर दिये गए।

उसी समय उदयपुर श्रीसघ की ओर से हिवडा श्रीसघ को तार दिया गया- पृज्यश्री ने मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज को युवाचार्य पद पर नियुक्त किया है। स्वीकृति लेकर खुशखबरी का तार दीजिए।

तार मुनिश्री की सेवा मे उपस्थित किया गया। तार सुनकर आपके चेहरे पर एक खास तरह की गभीरता झलक उठी जैसे कोई परेशानी आ पडी हो। मगर उस समय आपने कोई उत्तर नही दिया।

महापुरुष सेनापति बनने की अपेक्षा सिपाही बनना अधिक पसद करते है। सिपाही बनने मे एक सुविधा यह है कि सिपाही को सिर्फ अपने शरीर की ही जोखिम रहती है। अपने शरीर को सेनापति के सिपुर्द करके वह आगे ही आगे बढता जाता है। मगर सेनापति की परिस्थिति दूसरे प्रकार की है। सारी सेना ही सेनापति का शरीर बन जाती है और इस शरीर का नैतिक उत्तरादायित्व उस पर होता है। सिपाही का कर्त्तव्य सिर्फ जूझना है जब कि सेनापति पर जय-पराजय की भी जिम्मेदारी होती है। सिपाही अपने बल पर खडा होता है जबकि सेनापति को सेना के बल पर साहस करना होता है। सेनापति मे अनुभव और बुद्धि होनी चाहिए जब कि सिपाही के लिए यह उतने आवश्यक नही है।

महापुरुष अपनी क्षमता को बराबर तोलते है और उनमे जितनी क्षमता होती है उससे भी कम मानकर चलते है। इससे उनकी क्षमता का निरन्तर विकास होता रहता है।

युवाचार्य पद पर नियत किये जाने का समाचार सुनकर मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज विचार मे पड गए। वे अपनी शक्ति के बाट से सम्प्रदाय का भार तोलने लगे। साधारण साधु होता तो इस अवसर पर फूला न समाता। मगर मुनिश्री इसे बहुत बडा भार समझते थे। उन्होने अपनी विस्तीर्ण सम्प्रदाय पर दृष्टि डाली और सोचा- मै लम्बे अर्से से दक्षिण मे हू। सम्प्रदाय के विशिष्ट क्षेत्रो से बहुत दूर हू! मुझ से अधिक अनुभव, योग्यता, शास्त्रीय-ज्ञान तथा उम्र वाले अनेक साधु इस सम्प्रदाय मे विद्यमान है। जिस भार को वहन करने मे उन्हे असमर्थ माना गया, क्या मै उसे वहन कर सकूगा ?

शासन का उत्तरदायित्वपूर्ण पद सभालने से पहले बुद्धिमान शासक उन सब लोगो की रुचि और सम्मति जानना आवश्यक समझता है जिन पर उसे शासन करना हो। धर्म और प्रेम के शासन मे तो यह जान लेना बहुत ही आवश्यक है। तलवार का शासन भी आखिर लोकमत अनुकूल होने पर ही चिरस्थायी हो सकता है। अतएव आपने महाराष्ट्र प्रान्त मे विचरने वाले सतो, सतियो और श्रीसघो की सम्मतिया मागी। सभी ने मुनिश्री को अपना भावी आचार्य स्वीकार करने मे हार्दिक प्रसन्नता प्रकट की।

उत्तर मे विलम्ब होते देख उदयपुर श्रीसघ की ओर से दो तार और दिये गये, मगर मुनिश्री शीघ्रता मे कोई कार्य नही करना चाहते थे।

से अपरचित हू। परिस्थितियो से परिचित हुए बिना पूर्ण स्वीकृति दे देना मेरे लिए उचित नही है। हा, पूज्यश्री की आज्ञा मुझे शिरोधार्य है मगर मुझे यह देखना है कि मुझ मे वह शक्ति है भी या नही ? अपनी शक्ति देखकर ही मुझे यह आज्ञा उठानी चाहिए, क्योकि इसका सम्बन्ध सिर्फ मेरे साथ नही वरन् समस्त श्रीसघ के साथ है। मुनिश्री घासीलालजी और गणेशीलालजी का अध्ययन चल रहा है। उसे बीच मे स्थगित कर देना भी उचित नही जान पडता। इनका अध्ययन पूरा होने पर मेरा विचार स्वय पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित होने का है। प्रत्यक्ष मिलने पर विशेष विचार कर लेगे।

यह उत्तर लेकर दोनो सज्जन चले गये। मुनिश्री हिवडा-चातुर्मास पूर्ण करके मीरी पधारे। तीन-तीन तारो का उत्तर न पाकर उदयपुर से श्री गेरीलालजी खिवसरा तथा कोई दूसरे सज्जन मुनिश्री की सेवा मे उपस्थित हुए। उन्होने बडे आग्रह के साथ प्रार्थना की- 'आप शीघ्र ही पधार कर पूज्यश्री के दर्शन कीजिए और युवाचार्य पद स्वीकार करके हम सब को आनदित कीजिए।' मगर मुनिश्री अपने दोनो शिष्यो के अध्ययन को इतना आवश्यक समझते थे कि उसे अधूरा छोडकर शीघ्र विहार कर देना उन्हे उचित प्रतीत न हुआ। अतएव उदयपुर का शिष्टमडल भी वापिस लौट गया।

विनय-पत्रिका

मीरी से विहार करते हुए मुनिश्री सोनई पधारे। आपके उपदेशों का बडा प्रभाव पडा। सार्वजनिक हित के बहुत-से कार्य हुए। उस समय सोनई-सेनेटरी बोर्ड के सदस्यो ने तथा स्कूल के प्रधानाध्यापक श्री केशव बाजीराव देशमुख ने मुनिश्री को विनयपत्रिका अर्पित करते हुए कहा-

'ससार मे अनेक दु ख देने वाले मायामय बधनो को तोडने वाले, काम क्रोध आदि छ रिपुओ को वश मे करने वाले, कामनाओ का सर्वथा त्याग करने वाले अर्थात् ससार से विरक्त, 'अहिंसा परमो धर्म ' के महा-मत्र से ओतप्रोत, सकटाकीर्ण तथा कठोर सयम महाव्रत को धारण करने वाले, जगत् का कल्याण करने के लिए ग्रामानुग्राम विचरते हुए स्वनामधन्य, तपोधन श्री श्री १००८ श्री मुनि मोतीलालजी महाराज एव पण्डितप्रवर श्री १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज अपने विद्याविलासी एव गुरुभक्त शिष्यो के साथ विचरते हुए ता २२ जून १९१८ ई को प्रात काल ८ बजे सोनई ग्राम मे पधारे। हम अपने ग्राम का सौभाग्य मानते है कि आप सरीखे पवित्र एव विद्वान् महात्माओ के दर्शन एव चरणस्पर्श से यह पवित्र हुआ। आपके विद्वता और नैतिकता से परिपूर्ण उपदेशो से भरे व्याख्यान सर्वधर्मावलम्बियो ने बडी श्रद्धा और सम्मान के साथ सुने और परम हर्ष प्रकट किया। उस समय वे अपना धार्मिक भेदभाव भूल गए।

पहले दिन दान विषय पर आपका भाषण बालाजी के मन्दिर मे हुआ। ता २३ से २७ तक पचायती बाडे मे नीति, परोपकार, एकता, विद्या तथा अनुकम्पा विषयो पर आपके व्याख्यान हुए। इसके बाद भी जनता के विशेष आग्रह से विविध विषयो पर आपके व्याख्यान हुए। आपके उपदेशो का जनता पर गहरा एव स्थायी प्रभाव पडा। विद्वता तथा त्याग से भरे आपके उपदेशो ने हमारे सामाजिक जीवन मे उथल-पुथल करदी है। आपका महत्त्व हमारे हृदयो मे बैठ गया है। अपने पवित्र और उच्च विचारो द्वारा आपने जाति तथा धन के भेद-भाव को दूर करके प्रेम करना सिखलाया है जो बाते बडे-बडे विद्वान् भी नही समझा पाते उन्हे आपने बहुत ही सरल तथा सक्षेप रूप से समझा दिया है।

मालवा की ओर प्रस्थान

उदयपुर के श्रावको के लौट जाने पर सम्प्रदाय के प्रधान श्रावक रतलाम निवासी सेठ वर्धभानजी पीतलिया तथा भीनासर निवासी सेठ बहादुरमलजी बांठिया मीरी मुनिश्री की सेवा मे उपस्थित हुए। उन्होंने आचार्य श्री की वृद्धावस्था और अस्वस्थता का स्मरण दिलाते हुए कम से कम एक वर्ष के लिए मालवा मे पधारने और युवाचार्य पदवी स्वीकार करने की आग्रहपूर्ण प्रार्थना की। आप लोगो ने यह भी कहा कि इसके पश्चात् आप आवश्यक समझें तो फिर महाराष्ट्र पधार जावे। आचार्यश्री का तो यही फरमान है कि मुनिश्री जवाहरलालजी को युवाचार्य पद पर नियुक्त करने की घोषणा तो हो ही चुकी है, परम्परागत विधि से मुनिश्री मोतीलालजी महाराज उन्हे चादर ओढा देवे। फिर वे जब उचित समझे तब मालवा की ओर विहार कर सकते है। किन्तु समस्त श्रीसघो की यही इच्छा है कि युवाचार्यपद-महोत्सव आप दोनो महापुरुषो की एक जगह उपस्थिति मे ही मनाया जाय।

मुनिश्री स्वय भी आचार्य महाराज के दर्शन करने से पहले और मालवा आदि की साम्प्रदायिक परिस्थिति का पूर्ण अध्ययन किये बिना यह भार स्वीकार करने मे सकोच कर रहे थे। अत आपने पीतलियाजी और बांठियाजी की बात मान ली और अध्ययन करने वाले दोनो मुनियो को महाराष्ट्र मे ही छोडकर मालवा की ओर विहार कर दिया। यह समाचार सुनकर आचार्यश्री को और समस्त श्रीसघ को बडी प्रसन्नता हुई।

पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज के सम्प्रदाय के लिए रतलाम क्षेत्र महत्त्वपूर्ण है। सम्प्रदाय के [illegible] बडे महोत्सवो को मनाने का गौरव इसी स्थान को प्राप्त है। तृतीय पाट पर विराजमान पूज्यश्री उदयसागरजी महाराज ने रतलाम मे ही पूज्यश्री चौथमलजी महाराज को युवाचार्य घोषित किया था। यही पूज्यश्री चौथमलजी महाराज ने आचार्यपद सुशोभित करके सम्प्रदाय का भार सभाला था। पूज्य श्रीलालजी महाराज ने भी इसी स्थान पर युवाचार्य पद अलकृत किया था। उसके बाद इन्होने भी यही सम्प्रदाय का भार सभाला था। अब मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज का युवाचार्य पदवी [illegible] महोत्सव मनाने के लिए भी रतलाम स्थान ही उपयुक्त समझा गया।

पूज्यश्री ने भी उदयपुर मे चौमासा पूर्ण करके रतलाम की ओर विहार किया। [illegible] भी रतलाम की ओर अग्रसर होने लगे। आप मार्ग मे विहार करके जलगाव, भुसावल [illegible] अन्य अनेक स्थानो को पावन करते हुए [illegible] पधारे। वहा से आपने इन्दौर की ओर प्रस्थान किया।

भावी आचार्य का अभिनन्दन

जिस दिन आप इन्दौर मे पदार्पण करने वाले थे, ऐसा जान पडता था कि किसी उत्सव की तैयारी हो रही है। जनता हर्षविभोर थी। सभी के वदन पर पसन्नता नाच रही थी। उत्साह और उमंग उछल रही थी। नर-नारियो के झुण्ड मुनिश्री की अगवानी करने जा रहे थे। भगवान महावीर के जयनाद के साथ आपने इन्दौर मे पवेश किया।

केसरीचंद भंडारी की आत्म-शुद्धि

इन्दौर के केसरीचदजी भडारी को पाठक जानते होगे। जेन टेनिग कॉलेज के विद्यार्थियो के मामले मे आपने भी मत्री की हैसियत से मुनिश्री पर आरोप लगाया था। आप अपने कृत्य के लिए पहले ही क्षमायाचना कर चुके थे, फिर भी उन्हे आत्मसन्तोष नही हुआ था। एक पवित्र महात्मा पर मिथ्या दोषारोपण करने की बात स्मरण करके आपको ऐसा लगता जैसे किसी ने डक मारा हो। ज्यो-ज्यो मुनिश्री की कीर्ति बढती जाती थी त्यो-त्यो केसरीमलजी का सताप भी बढता जाता था।

मुनिश्री जब इन्दौर पधारे तब केसरीचदजी मुनिश्री की सेवा मे उपस्थित हुए और लिखित क्षमापत्र पेश करके विनम्र क्षमायाचना की। मुनिश्री ने केसरीचदजी को सतजनोचित उदारभाव से सान्त्वना देते हुए कहा-'आप अब नि शल्य हो। आपने मेरी आत्मा का कोई अपराध नही किया है। बल्कि मुझे अपनी अपकीर्त्ति सहन करके भी सयम की मर्यादा पर दृढ रहने का अवसर आपके निमित्त से मिल गया। इससे मेरा कुछ लाभ ही हुआ है। हानि कुछ नही हुई। आपके प्रति मेरे हृदय मे अणु-मात्र भी दुर्भाव नही है। मेरी हार्दिक अभिलाषा यही है कि भविष्य मे आप और सत्य के पक्ष-पाती बने।

मुनिश्री का यह उदार भाव और सयम-प्रेम साधु-समाज के लिए आदर्श और अनुकरणीय है। केसरीचदजी आपकी क्षमाशीलता देखकर बहुत प्रसन्न हुए और धर्मध्यान मे अधिक लीन रहने लगे।

रतलाम में पदार्पण

इन्दोर से विहार करके मुनिश्री रतलाम पधारे। रतलाम निवासियों के हर्ष का पार न रहा। बाहर के भी बहुसख्यक लोग उपस्थित थे। फाल्गुन शु १० को मुनिश्री मोतीलालजी महाराज तथा अन्य मुनियो के साथ जब आप रतलाम पधारे तो हजारो नर-नारी आपकी अगवानी के लिए सामने गये।

पूज्यश्री फाल्गुन शुक्ला पचमी को ही पधार चुके थे। आपने आते ही सर्व-प्रथम पूज्यश्री के दर्शन किये और पूज्यश्री ने अपना प्रमोद व्यक्त किया। वर्त्तमान आचार्य और भावी आचार्य का यह सम्मिलन ऐसा जान पडता था जैसे चिरोदित और उदीयमान सूर्य मिलकर चमक रहे हो।

युवाचार्य पद महोत्सव

चैत्र कृष्णा नवमी बुधवार सम्वत् १९७५ ता २६ मार्च १९१९ का दिन युवाचार्य पद-प्रदान के लिए नियत किया गया। आचार्य तथा युवाचार्य दोनो महापुरुषो का एक स्थान पर दर्शन करने तथा महोत्सव में सम्मिलित होने के लिए हजारो व्यक्ति बाहर से आने लगे। चैत्र कृष्णा सप्तमी तक सारा नगर भक्त श्रावक वृन्द से भर गया। रतलाम श्रीसघ ने सभी के स्वागत का उत्तम प्रबन्ध किया था। रतलाम श्रीसघ ने बाहर से आनेवालो के लिये जो कल्पना की थी उससे चार गुणा लोक उतर आये,

यह देख रतलाम के लोगो मे भी उत्साह का पूर उमड आया। तुरन्त ठहरने के लिये मकानो व सभी तरह का रातदिन एक करके प्रवन्ध किया गया और महोत्सव को यादगार वनाया। व्याख्यान हाल मे इतनी गुजायश नही थी कि उस जनता को समावेश कर सके इसलिए वहुत दूर तक सडक पर जनता वैठी थी। वडे-वडे रायवहादुर और पाव मे सोना पहने हुए राज्य-मान्य लोगो को भी व्याख्यान हाल मे प्रवेश करना कठिन हो गया था। स्वागताध्यक्ष सेठ वर्धभानजी साहव वडी कठिनाई से अन्दर जा सके। क्योंकि उनकी वहा जरूरत थी।

चैत्र कृष्णा अष्टमी मगलवार को समाज के प्रमुख श्रावकों की एक सभा श्रीमान् सेठ वहादुरमलजी साहव वाठिया भीनासर निवासी की अध्यक्षता मे हुई। उसमे अगले दिन का कार्य-क्रम निश्चित किया गया और अन्य कई उपयोगी प्रस्ताव पास किये गए। जिनका विशद वर्णन उस समय के जैन प्रकाश मे प्रकाशित हुआ है।

चैत्र कृष्णा नवमी वुधवार को प्रात काल छह बजे से ही उपाश्रय मे दर्शको की भीड जमा होने लगी। रग-विरगी पोशाको मे सजे हुए विभिन्न प्रान्त निवासियो का यह सम्मेलन अपूर्व-सा दिखाई देता था। ऐसा मालूम पडता था जेसे जिन शासन का उद्यान रग-विरगे फूलो से भरा हो और विकास के यौवन मे प्रवेश कर रहा हो। भिन्न-भिन्न प्रकार की पगडी धारण किए हुए पुरुषो का इतनी वडी सख्या मे एक स्थान पर जमा होना और एक ही धार्मिक उद्देश्य के लिए इतना उत्साह प्रदर्शित करना इस वात की सूचना देता था कि भारतीय जीवन मे धर्म अभी वहुत वडी चीज हे। भारतीय जनता धर्म की छाया मे अपने प्रान्तीय तथा जातीय भेद-भाव को भुला सकती है उसके लिए धार्मिक बन्धन सवसे वडा वन्धन और धार्मिक वन्धुत्व सवसे वडा वन्धुत्व हे।

धीरे-धीरे भीड इतनी वढ गई कि उपाश्रय मे जगह न रही। वाहर सडक पर कई शामियाने ताने गये।

आचार्यश्री का उद्‌वोधन

लगभग आठ बजे आचार्यश्री वहुत-से साधुओ के साथ वाहर पधारे और पाट पर विराज गए। साधु, साध्वी, श्रावक तथा श्राविका रूप चतुर्विध सघ ने खडे होकर आपका अभिनन्दन किया और विराज जाने पर भक्तिपूर्वक वन्दना की। किन्तु उठकर वापस वेठने मे वडी तकलीफ हुई। आचार्य श्री ने मगलाचरण के वाद नन्दीसूत्र का स्वाध्याय किया। इसके वाद युवाचार्यश्री को सम्वोधित करके अपना सन्देश प्रारम्भ किया। आपने कहा-

मुनि जवाहरलालजी!

'प्राणिमात्र का जीवन क्षण भगुर हे। कोई भी अपने को नित्य या चिरस्थायी नही कह सकता। उसमे भी हम सरीखे सोपक्रम आयुष वाला पर तो मृत्यु प्रति क्षण सवार रहती हे। ऐसी दशा मे क्षण का भरोसा नही करना चाहिए। फिर भी स्वास्थ्य, युवावस्था आदि वाह्य कारणो का अवलम्वन लेकर व्यवहार चलाया जाता है। स्वास्थ्य गिर जाने पर या वृद्धावस्था आ जाने पर प्रत्येक व्यक्ति को तेयार हो जाना चाहिए। अपना सारा उत्तरदायित्व दूसरो को सभलाकर तथा सारे सवन्धो से नाता तोडकर विदा होने के लिए तैयार रहना चाहिए। उदयपुर चातुर्मास के अन्तिम भाग मे मेरे शरीर पर राग न

भयकर आक्रमण किया। उसी समय मुझे चेत हो गया कि अब छुट्टी लेने का समय आ पहुचा है। आयुकर्म के शेष होने से मेरा जीवन बच गया किन्तु उस घटना ने मुझे सूचना दे दी है। दीक्षा लेते समय ही हम सासारिक सभी बन्धनो को तोड देते है। सासारिक बन्धु बाधवो की दृष्टि से तो हम उसी समय मृत्यु का आलिगन कर लेते है। इसलिए शरीर को त्यागकर की जानेवाली इस महायात्रा के समय हमे किसी से विदा मागने की आवश्यकता नही है। हम लोग तो उसी समय विदा ले लेते है। शरीर का छूटना हमारे लिए दु ख या अमगल की बात भी नही है। हमारे लिए जन्म ही अमगल है, दुबारा शरीर को धारण करना दु ख है। इसलिए मृत्यु को आई देखकर हमे किसी प्रकार का भय या शोक भी न होना चाहिए। हमे उस का सहर्ष स्वागत करना चाहिए।

ज्ञान, दर्शन और चारित्र की सम्मिलित उन्नति के लिए भगवान् महावीर ने चतुर्विध सघ की स्थापना की है। इस प्रकार सासारिक परिवार को छोड देने पर भी हम धर्मपरिवार मे प्रवेश करते है। इसके साथ-साथ हम पर कुछ उत्तरदायित्व भी आ पडता है। हम जिस समाज का अन्न, पानी लेकर धर्म की आराधना करते है, जो व्यक्ति अपने कल्याण की कामना से हमारी भक्ति करते है, जिनका आध्यात्मिक विकास हमी पर निर्भर है, उन्हे व्यवस्थित करना तथा सत्य मार्ग बताते रहना हमारा कर्तव्य है। यद्यपि साधु सभी प्राणियो का समानभाव से अकारण मित्र होता है किन्तु ऐसे मुमुक्षु जीवो के लिए तो दूसरा आधार ही नही है। उन्हे सन्मार्ग की ओर लाना, अग्रसर करना तथा स्थिर रखना साधुओ का कर्तव्य है। इसी प्रकार बहुत-से लघुकर्मा (हलुकर्मी) जीव ससार से विरक्त होकर अपना सारा जीवन धर्म की आराधना मे लगाना चाहते है। वे पाच महाव्रत स्वीकार करके उनका शुद्ध पालन करने के उद्देश्य से हमारे साथ रहते है और हमारी आज्ञानुसार चलते है। ऐसे साधुओ के ज्ञान, दर्शन ओर चारित्र की उन्नति करना, महाव्रतो के पालन मे किसी प्रकार की उलझन आने पर ठीक मार्ग वताना तथा किसी प्रकार का दोष लगने पर प्रायश्चित आदि देकर उन्हे शुद्ध करना बडे तथा गीतार्थ साधुओ का काम है। इन्ही सब बातो की व्यवस्था के लिए जैन शासन मे एक आचार्य चुना जाता है। उस पर चतुर्विध सघ के हित का भार होता है।

आज से अठारह वर्ष पहले, कार्तिक शुक्ला द्वितीया सम्वत् १९५७ को आचार्यप्रवर श्री १०८ पूज्यश्री चौथमलजी महाराज ने इस भार को सभालने के लिए मुझे चुना था। सात ही दिन वाद अर्थात् कार्तिक शुक्ला नवमी की रात को पूज्यश्री का स्वर्गवास हो गया। सारा भार मुझ पर आ पडा। तव से लेकर आजतक मैने उसे यथाशक्ति निभाया है। उदयपुर की बीमारी ने मुझे सूचना दे दी कि मुझे भी यह भार सौपने के लिए कोई उत्तराधिकारी चुन लेना चाहिए। जिस प्रकार स्वर्गीय पूज्य श्री ने मुझे यह उत्तरदायित्व दिया उसी प्रकार मेरा भी कर्त्तव्य है कि मै किसी योग्य व्यक्ति के हाथ मे यह उत्तरदायित्व सौप दू। इसके वाद किसी प्रकार की आकस्मिक घटना होने पर मुझे सघ की चिन्ता न रहेगी। अतएव शीघ्रातिशीघ्र किसी का चुना जाना आवश्यक था।

आपका स्मरण आते ही मुझे प्रसन्नता हुई। मैने सोचा-'सघ के शासन की वागडोर आपके हाथ मे सौप देने पर किसी प्रकार का डर नही है। आप सरीखे प्रतिभाशाली, तेजस्वी, कठोर सयमी और दृढधर्मा आचार्य को पाकर पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज का यह सम्प्रदाय अधिकाधिक विकास करेगा, ऐसी मेरी दृढ धारणा है।

मुझे इस बात का बडा हर्ष है कि मेरी तथा सघ की इच्छा को सम्मान देकर आप यहा आ गए है। अब इस भार को सभालिए। मुझे निश्चित कीजिए और श्रीसघ का हर्ष बढाइए।

आप स्वय समझदार है। शास्त्रो के जानकार है। मै इस समय आपको क्या शिक्षा दू ? मेरा तो इतना ही कहना है कि परमप्रतापी पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी महाराज सरीखे महापुरुषो का यह सम्प्रदाय दिन प्रतिदिन ज्ञान, दर्शन और चारित्र मे वृद्धि करे। हमारे पूर्ववर्ती आचार्यों ने सयम के जिस स्तर को कायम रखा है आप उसे ऊचा उठाने का प्रयत्न करे। किसी प्रकार की कमी न आने दे। आपकी प्रवृत्ति इस प्रकार हो जिससे श्रावक तथा श्राविकाओ मे भी धर्म-श्रद्धा उत्तरोतर वृद्धिगत हो। वे सदा सत्य के पक्षपाती बने। सच्चे साधु को माने। सच्चे धर्म पर चले।

मेरा विश्वास है, आपकी कर्तव्यनिष्ठा, आपकी ओजस्विनी वाणी, आपकी प्रतिभा और आपका प्रभावशाली व्यक्तित्व इन सब बातो को करने मे समर्थ है। आपके कारण अहिंसा-धर्म का महत्त्व बढेगा और उन्मार्गगामी भोले जीव सन्मार्ग पर आएगे।

यही सब बाते सोचकर मैने आपको युवाचार्य चुना है। इस बात की स्वीकृति के प्रतीक रूप इस पछेवडी को धारण कीजिए।''

यह कह कर आचार्य श्री ने स्वय धारण की हुई पछेवडी उतारी और चतुर्विध सघ के जयनाद के साथ मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज को ओढा दी। उपस्थित मुनियो ने भी आचार्य श्री के इस कार्य मे अपनी स्वीकृति प्रदर्शित करने के लिए पछेवडी ओढाने मे हाथ लगाया। उस समय आचार्य महाराज और युवाचार्य श्री के जयनाद के साथ सभा गूज उठी।

इसके बाद युवाचार्य श्री ने आचार्य श्री तथा स्थविर मुनिश्री मोतीलालजी महाराज को वन्दना की। क्रमश दूसरे मुनियो ने युवाचार्य श्री को वन्दना की। साध्वी समुदाय, श्रावक तथा श्राविकाओं ने भी भक्तिपूर्वक वन्दना की। तदन्तर युवाचार्य श्री नीचे के आसन से उठकर आचार्य श्री के समीप वाले आसन पर विराज गए।

आचार्य श्री ने सब को लक्ष्य करके फरमाया-

'पूज्यश्री हुक्मीचन्द जी महाराज की सम्प्रदाय का सौभाग्य है कि उसे ऐसा योग्य साधु नेता के रूप मे मिला है। मुनिश्री जवाहरलालजी आज से युवाचार्य है। साधु, साध्वी, श्रावक तथा श्राविका रूप समग्र श्रीसघ का कर्तव्य है कि उनकी आज्ञा मे रहकर अपने ज्ञान, दर्शन चारित्र की वृद्धि करे। मुनिमण्डल तथा इस सम्प्रदाय की आज्ञा मे विचरने वाले साध्वी समुदाय का मेरा आदेश है कि वे युवाचार्य श्री जवाहरलालजी की आज्ञा का उसी प्रकार पालन करे जिस प्रकार वे मेरी आज्ञा का पालन करते रहे है।'

पूज्यश्री के वक्तव्य के पश्चात् मुनिश्री हर्षचन्द्रजी महाराज ने समग्र मुनिमण्डल की ओर से युवाचार्यश्री का अभिनन्दन किया और उनकी आज्ञा मे रहने का विश्वास दिलाया। मुनिश्री हीरालालजी महाराज ने भी इस का अनुमोदन किया।

इसके बाद भिन्न-भिन्न प्रान्तो के श्री सघो की ओर से प्रमुख श्रावको ने हर्ष प्रकट किया और युवाचार्य श्री की आज्ञा पालन करने का वचन दिया। जिन सम्प्रदायो के प्रतिनिधि उपस्थित न हो सके थे उन्होने भी तार या पत्र द्वारा अपनी सम्मति भेजी थी।

उसी अवसर पर पूज्यश्री माधवमुनिजी महाराज ने अपनी शुभ कामना नीचे लिखी कविता के रूप मे भेजी थी-

विज्ञ युवराज श्री जवाहरलालजी मुनीश,
शान्तता के साथ एकता का साज साजेगे।
द्वैतता मिटाय वात्सल्यता हृदय मे लाय,
सर्व सम्प्रदायो के हितैषी आप बाजेगे॥
लाजेगे विपक्षीलोक, गाजेगे गजेन्द्रसम,
अह! हा! हमारे सब शोक थोक भाजेगे।
पूज्य पद पाय सम्प्रदाय मे बढाय प्रेम,
प्रतिदिन प्रताप दूनो पाते पट्ट राजेगे॥

इत्यादि अनेक कविताए, सन्देश तथा तार आदि सुनाये गये। इसके बाद युवाचार्य श्री ने नम्रतापूर्वक उस पद को स्वीकार करते हुए चतुर्विध सघ का कर्तव्य बताया। आपने फरमाया--

युवाचार्यजी का प्रवचन

आचार्यश्री एव समस्त श्रीसघ ने मुझ पर जो गुरुतर भार डाला है, उसे सफलता के साथ वहन करना साधारण कार्य नही है। विशाल सम्प्रदाय के शासन को सभालना खास तौर से मुझ जैसे अल्पशक्तिमान् व्यक्ति के लिए और भी कठिन है। मेरी कठिनाई इस कारण भी बढ जाती हे कि मै लम्बे समय से दक्षिण प्रात मे विचरता रहा हू और सामाजिक परिस्थितियो के निकट सम्पर्क मे नही रह सका हू। फिर भी जिस उत्साह के साथ स्वागत करके सघ ने मेरा उत्साह बढाया हे उससे जान पडता हे कि मुझ पर सघ का प्रेम है और सघ मुझे यह भार उठाने मे सहायता देगा। मे सघ के सहयोग से अपना गभीर उत्तरदायित्व निभाने मे समर्थ हो सकूगा। मुनिमण्डल के हार्दिक सहयोग के बिना क्षण भर भी कार्य चलना कठिन है अतएव मुनियो से मै विशेष सहयोग की आशा करता हू। इसी आशा और विश्वास के वल पर मे पूज्यश्री तथा समस्त श्रीसघ की आज्ञा शिरोधार्य करता हू।

किसी नगर मे राजा का देहान्त हो गया। राजा निस्सतान था, अतएव प्रश्न उपस्थित हुआ कि राजगद्दी किसे दी जाय ? परम्परा के अनुसार एक पक्षी छोडा गया और निश्चय हुआ कि यह जिसके सिर पर बेठ जाय उसी को राजा बना दिया जाय। पक्षी जगल मे जाकर एक घसियारे के सिर पर बेठ गया। मन्त्री तथा दरबारियो ने मिलकर उस घसियारे को राजा बना दिया। घसियारा राज्य करने लगा। वह मन्त्रियो के परामर्श से राज्य का भली-भाति सचालन करने लगा।

दरबार मे राजा के पास ही मत्री वेठा करता था। राजा जव खडा होता तो मत्री के कधे पर हाथ रखकर उसके सहारे खडा होता। एक दिन अधिक जोर देकर उठने के कारण मत्री को हसी आ गई। राजा ने तिरछी नजर से उसे हसते देख लिया।

मत्री को एकान्त मे बुलाकर राजा ने हसने का कारण पूछा। मत्री पहले तो भयभीत हुआ मगर अभयदान मिलने पर उसने सच्ची बात कह दी। बोला- 'महाराज! जिस समय आप घसियारे थे उस समय विना किसी की सहायता के ही घास का गट्टा लादकर और दो कोस चलकर नगर मे वेचने आते

थे। आज राजा हो जाने पर अपना शरीर भी आपसे नही उठता! खडे होते समय आपको मेरे कधे का सहारा लेना पडता है। इस परिवर्त्तन को देखकर मुझे हसी आ गई।

राजा ने कहा- मत्रीजी, आप मर्म की बात नही समझे। जिस समय मै घसियारा था, मेरे ऊपर सिर्फ घास के गट्ठे का ही बोझ था। मै उसे आसानी से उठा सकता था। अब सारे राज्य और समस्त प्रजा का बोझ मेरे सिर है। उसे अकेले उठा लेना मेरी शक्ति के बाहर की बात है। आपके सहारे ही मै वह भार उठा रहा हू। इसलिए खडा होते समय आपका सहारा लेता हू।

सज्जनो! मेरी स्थिति भी उस घसियारे के समान है। घसियारा इस अश मे अभागा था कि राजा के मरने के पश्चात् उस पर राज्य का भार आया था। मेरा सौभाग्य यह है कि पूज्यश्री की छत्र-छाया मेरे सिर मौजूद है और उनसे मै बहुत कुछ शक्ति प्राप्त कर सकूगा। हा, घसियारे के समान अभी तक मुझ पर सिर्फ मेरा ही भार था, अब सारे सम्प्रदाय रूपी राज्य का भार मेरे सिर आ रहा है। इसे सभालने मे मै अकेला असमर्थ हू। मुझे भी मत्री के समान स्थविर मुनिराजो की सहायता अपेक्षित है। उनकी सहायता पाकर ही मै सघ रूपी प्रजा को सभाल सकूगा।

व्यवहार मे आचार्य-पदवी सम्मान की वस्तु समझी जाती है। धार्मिक क्षेत्र मे यह सब से बडा पद है। मगर मै तो इसे बडे सेवक का पद मानता हू। इस पद को प्राप्त करने के कारण मै अपने को गौरवान्वित नही समझूगा वरन् इस पद के अनुरूप श्रीसघ की सेवा कर सका तो मै अपने को गौरवशाली समझूगा। व्यवहार मे, जो देता है उसी को लेने का अधिकार है। इसी प्रकार जो सेवा करता है उसी को सेवा कराने का अधिकार होता है। श्रीसघ की दृष्टि मे मै भले ही आचार्य, पूज्य या ऊचे पद पर आसीन समझा जाऊ मगर मै अपनी नजरो मे धर्म का एक अकिंचन सेवक ही रहूगा।

पूज्यश्री का मुझ पर असीम उपकार है। मै इनके ऋण से कभी मुक्त नही हो सकता। मुझे अध्ययन करने आदि की सब सुविधाए आपने दी है। मेरे जीवन को ऊचा उठाने मे आपका महत्त्वपूर्ण हाथ रहा है। इसके लिए मै इनका कृतज्ञ रहूगा। इस अवसर पर मै पूज्यश्री को विश्वास दिलाना चाहता हू कि श्रीसघ का कल्याण और जिनशासन की सेवा मेरे जीवन का ध्येय होगा और पूज्य श्री हुकमीचन्दजी महाराज आदि महान् पुरुषो द्वारा पावन इस सम्प्रदाय की गौरव-रक्षा करने मे मै सदैव उद्यत रहूगा।

युवाचार्य श्री के प्रवचन के पश्चात कई अन्य वक्ताओ के भाषण हुए। श्री वर्धभानजी पीतलिया ने आगत सज्जनो का आभार माना और उस समय का कार्य समाप्त हो गया।

मध्याह्न

मध्याह्न मे जीवदया, शिक्षा प्रचार आदि के सबध मे कई सज्जनो के प्रभावशाली भाषण हुए। 'जैनो की उन्नति कैसे हो?' इस उपयोगी विषय पर पूज्य महाराज ने अपना अभिप्राय प्रकट करते हुए फरमाया-किसी भी समाज की उन्नति प्रचारको पर निर्भर है। हमारे समाज मे ऐसे प्रचारको की अत्यन्त आवश्यकता है जो सर्वत्र घूम-घूम कर समाज का [illegible] हो। समाज मे जहा जिस बात की आवश्यकता हो उसकी पूर्ति करना, धर्मविमुख लोगो को धर्म की ओर आकर्षित करना, जहा शिक्षा की समुचित व्यवस्था न हो वहा व्यवस्था करना- बालको के अभिभावको को समझा-बुझा कर [illegible] संस्थाओ मे भिजवाना या अनुकूलता हो तो शिक्षा संस्था की स्थापना कराना, तथा इस प्रकार [illegible]

मे से अज्ञान हटाकर ज्ञान और सदाचार का पसार करना इत्यादि अनेक कार्य योग्य और सेवाभावी पचारको के अभाव मे नही हो सकते। पचारको के बिना आर्थिक कठिनाइयो के कारण कष्ट पाने वाले स्वधर्मी बन्धुओ का पता कौन चलावे ? पचारक हो तो यह सब समाज और धर्म की उन्नति करने वाले कार्य सुचारू रूप से हो सकते है और समाज की दशा बहुत कुछ सुधर सकती है। सच्ची लगन वाले पचास उपदेशक समाज के लिए पर्याप्त हो सकते है।

किसी सम्मेलन या उत्सव मे व्याख्यान देकर अग्रेसर का गौरव पाप्त कर लेने मात्र से समाज का श्रेच नही हो सकता इसके लिए तो रचनात्मक कार्यपद्धति अपनाना ही उपयोगी होता है। समाज को ठोस कार्य की आवश्यकता है। कोई निश्चित योजना बना कर उसे कार्यान्वित करने से ही जैन समाज का उत्थान होगा।

यह नही समझना चाहिए कि गृहस्थ प्रचारक जनता पर क्या असर डाल सके हे ? सच्ची लगन से कार्य किया जाय तो गृहस्थो का भी आदर हो सकता है। समाज मे ऐसे अनेक क्षेत्र है जहा साधुओ का विचरण नही हो पाता। साधु की मर्यादा कायम रखकर वहा पहुचना बहुत कठिन है। उन क्षेत्रो मे श्रद्धाशील विद्वान् और सच्ची निष्ठा वाले गृहस्थ ही कार्य कर सकते है। साधुओ पर सारा भार डालकर गृहस्थो को निश्चिन्त नही हो जाना चाहिए।

साधु अपनी मर्यादा के अनुसार धर्मप्रचार का कार्य करते ही हे मगर-श्रावको को भी समाज की सर्वागीण उन्नति के लिए पीछे नही रहना चाहिए।'

पूज्यश्री के उपदेश से उत्साहित होकर अनेक श्रावक समाज-सेवा के इन महत्त्वपूर्ण कार्यो मे योग देने के लिए उद्यत हुए। मगर आखिर वह तैयारी यो ही रह गई। सवत् १९७५ मे पूज्यश्री ने जो आवश्यक उपदेश दिया था, आज भी वह ज्यो का त्यो उपयोगी है। इतने लम्बे अर्से मे भी इस दिशा मे कोई व्यापक और ठोस प्रयत्न नही किया गया है। वास्तव मे पूर्वोक्त योजना का अमल मे आना समाज के अभ्युदय का कारण होगा।

रतलाम से विहार

रतलाम का समारोह सानन्द और सहर्ष सम्पन्न हो गया। आचार्यश्री और युवाचार्यश्री ने एक साथ विहार किया ओर दोनो महापुरुष जम्बूद्वीप के दो सूर्यो के समान प्रकाशमान होते हुए खाचरोद पधारे। वहा से पूज्यश्री ने उज्जैन की ओर तथा युवाचार्यश्री ने तालमडावल की ओर विहार किया। कुछ दिनो बाद पूज्यश्री भी तालमण्डावल पधार गये। यहा से फिर दोनो महानुभाव साथ विहार करके नगरी पधारे।

सम्प्रदाय के शासन का अनुभव प्राप्त करने के उद्देश्य से युवाचार्यश्री पूज्यश्री के साथ ही चौमासा करना चाहते थे। किन्तु जावरा के नवाब और श्रीसघ की प्रार्थना पर पूज्यश्री जावरा मे चौमासा करने का वचन पहले ही दे चुके थे और युवाचार्यश्री को उदयपुर भेजना आवश्यक था। अतएव यहा से दोनो को दो दिशाओ मे विहार करना आवश्यक हो गया। पूज्यश्री ने जावरा की ओर विहार किया और युवाचार्यश्री ने पूज्यश्री के आदेशानुसार उदयपुर की ओर प्रस्थान किया।

अट्ठाईसवां चातुर्मास

अपने चरणकमलो से मेवाडभूमि को पवित्र करते हुए युवाचार्यजी महाराज उदयपुर पधारे। स १९७६ का चोमासा वही किया। उदयपुर की जनता आपके उपदेशामृत का पहले भी पान कर चुकी थी। किन्तु इस बार आप चिरकाल के पश्चात् पधारे थे, आपके अनुभव और आपकी योग्यता भी पहले से कई गुना वढ चुकी थी और अव आप युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित थे। युवाचार्य के रूप मे आपका यह पहला ही चोमासा था। अत उदयपुर की जनता को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। दिन-रात धर्म का ठाठ लगा रहता। सभी प्रकार की जनता आपके उपदेशो को सुनकर कृतार्थ होती थी। आपके उपदेश से वहुत-से जीवो को अभयदान मिला और सेकडो श्रावको ने विविध प्रकार के त्याग-प्रत्याख्यान किये।

एकता का प्रयास

चातुमार्स के वाद चित्तौड, भीलवाडा होते हुए आप ब्यावर पूज्यश्री की सेवा मे पधारे। उस समय आगरा तथा जयपुर के कतिपय मुख्य श्रावको का एक डेप्यूटेशन ब्यावर आया। पूज्यश्री से प्रार्थना की- 'मुनिश्री मुन्नालालजी महाराज तथा उनके साथ के मुनि देहली से विहार करके पधार रहे हे और आपसे मिलकर साम्प्रदायिक विपयो पर, विचार विमर्श करना चाहते हे। अत जयपुर या किसी अन्य स्थान पर मिलन हो तो ठीक होगा। साम्प्रदायिक वेमनस्य वढ रहा है, वह कम हो जायगा और कोई मार्ग निकल आएगा।

पृज्यश्री सरल हृदय महापुरुप थे। माया प्रपच से दूर रहते थे। किसी प्रकार की चालवाजी उन्हे पसन्द नही थी। उनके इस मिलने मे कोई तथ्य दिखाई नही दिया। अत उन्होने स्पष्ट शव्दो मे इन्कार कर दिया। होली चातुर्मास के वाद पृज्यश्री तथा युवाचार्यश्री का मारवाड की तरफ विहार हो गया किन्तु कुछ प्रतिष्ठित लोगो ने फिर प्रार्थना की कि आप एक बार कही पर अवश्य मिल ले और जो अपवाद लगाया जाता हे कि हम तो मिलना चाहते हे, और समझोता करना चाहते हे मगर पूज्य महाराज मिलना नही चाहते और दूर-दूर जाते हे, इस अपवाद को दूर कर दे और जनता को दिखा दे कि सत्य वास्तव मे क्या हे।

यह सुनकर पृज्यश्री ने अजमेर पधारना स्वीकार कर लिया, युवाचार्यजी को जो आगे पधार गये थे, अजमेर पहुचने का सन्देश भेज दिया। दोनो महापुरुप वेशाख शुक्ला मे अजमेर पधारे। श्री मुन्नालालजी महाराज आदि पहले ही पधार चुके थे। अजमेर सघ ने दोनो महानुभावो का हार्दिक स्वागत किया।

साम्प्रदायिक एकता सबधी वार्तालाप हुआ। दोनो ओर से दो-दो व्यक्ति वातचीत करने के लिए चुने गये। पृज्यश्री श्रीलालजी महाराज की ओर से राव श्री कोठारी बलवन्तसिहजी साहव और मेहता बुधसिहजी सा वेद तथा दूसरी तरफ से ला गोकुलचदजी नाहरी और पोल्लालजी चोपडा। मगर श्रावको के समक्ष सब बाते कहना उचित न समझकर पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज, मुनिश्री मुन्नालालजी महाराज तथा मुनिश्री देवीलालजी महाराज ने एकान्त मे वार्तालाप करना तय किया। पाच-छह दिन तक बातचीत होती रही। एकता के लिए जितना किया जा सकता था [illegible] पूज्यश्री ने किया। एकता के लिए अपने पूरे [illegible]।

अत मे वार्तालाप असफल हो गया। जनता को सच्ची परिस्थिति का दिग्दर्शन कराकर दोनो महापुरुष अजमेर से पधार गए।

अजमेर की इस कार्रवाई का एक अलग ही प्रकरण बन सकता है। उस समय पूज्यश्री धर्मदासजी म के सम्पदाय के सन्त श्री रतनचन्दजी म , श्री सिरमेलजी म तथा श्री समरथमलजी म वहा मौजूद थे। वे इस प्रकरण से पूरी तरह परिचित है, क्योंकि सन्देशवाहक का कार्य उन्होने ही किया था।

अजमेर से विहार करके पूज्यश्री ब्यावर पधारे और युवाचार्यश्री ने बीकानेर की ओर प्रस्थान किया। पुष्कर से कुछ ही दूर जाने पर आपको मुनिश्री राधालालजी महाराज की अस्वस्थता के समाचार मिले। राधालालजी महाराज आपके दर्शन के लिए उत्सुक थे। अत आप पुष्कर से ब्यावर पधारे। मुनिश्री राधालालजी म को दर्शन दिये। और पूज्यश्री के दर्शन किये। आपकी इच्छा पूज्यश्री की सेवा मे रहकर चौमासा करने की थी, मगर पूज्यश्री के आदेश से आपने बीकानेर की ओर विहार किया। पूज्यश्री बडे ही दूरदर्शी महापुरुष थे। उन्होने अपनी मौजूदगी मे ही आपको सम्प्रदाय के विशिष्ट क्षेत्रो मे युवाचार्य के रूप मे भेजना आवश्यक समझा होगा। तदनुसार आप मार्ग मे धर्म का उपदेश देते हुए भीनासर पधारे।

पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज का स्वर्गवास

आषाढ कृष्णा चतुर्दशी का दिन था। पूज्यश्री जयतारण पधारे थे। अमावस्या के दिन व्याख्यान देते समय अकस्मात् आपके नेत्रो की ज्योति बद हो गई। सिर मे चक्कर आने लगे। पूज्यश्री को मृत्यु का आभास होने लगा। आपने उसी समय उपस्थित साधुओ को सथारा करा देने के लिए कहा। श्रावक और साधु विविध प्रकार से औषधोपचार कर रहे थे किन्तु पूज्यश्री को विश्वास हो गया था कि यह सब उपचार अब वृथा हे। अन्तिम समय सन्निकट आ पहुचा है।

उसी समय मुनिश्री हरखचदजी महाराज को सूचना की गई। वे उस समय ब्यावर मे विराजते थे। लगभग १४-१५ कोस का उग्र विहार करके सुदि १ को नीमाज पधारे और दूसरे दिन सुदि २ को जयतारण पहुच गए।

आषाढ कृष्णा प्रतिपद् को आचार्यश्री ने उपस्थित साधुओ को अपने समीप बुलाया। उनके सिर पर हाथ फेरा और अतिम विदा लेते हुए कहा-

'मुनिराजो! सयम को दिपाना। परस्पर प्रीतिपूर्वक रहना। युवाचार्य श्री जवाहरलालजी की आज्ञा मे विचरना! वे दृढधर्मा, चुस्त सयमी है। और मुझसे भी अधिक तुम्हारी सार-सभाल रख सकते है। मै और वे एक ही स्वरूप के हे, ऐसा समझना। उनकी सेवा करना। पूज्यश्री हुकमीचन्दजी महाराज के सम्पदाय को जाज्वल्यमान रखना। शासन की शोभा बढाना। आत्म-कल्याण को सदा सामने रखना। खमाता हू। क्षमा करना।

पूज्यश्री बोलते-बोलते रुक गये। पास मे बैठे सन्तो के भी नेत्र आसुओ से भर गये। मृत्यु को महोत्सव मानने वाले मुनि भी अपने सरल हृदय और सुयोग्य धर्मनायक की यह स्थिति देखकर एक बार विचलित हो उठे। धर्मानुराग ने उन्हे विह्वल कर दिया। उनमे से एक मुनि ने कहा-

'पूज्य महाराज साहब! आपकी आज्ञा हमारे लिए शिरोधार्य रही है और अब भी रहेगी। आप निश्चिन्त हो। हम बालको को आप क्या खमाते है ? हम लोग आपको बारम्बार खमाते है, जो आपके उपकार के बदले मे आपकी कुछ भी सेवा न कर सके। आप महापुरुष है। अविनय-आसातना के लिए क्षमा करे।'

क्षमा का आदान-प्रदान करने के पश्चात् पूज्यश्री ने अपना मनोयोग सभी ओर से एकदम निवृत्त कर लिया और श्री उत्तराध्ययनसूत्र की यह गाथा उच्चारण करने लगे-

सुत्तेसु यावि पडिबुद्ध जीवी, न वीससे पडिए आसुपण्णे।

घोरा मुहुत्ता अबल सरीरं, भारड पक्खीव चरेऽप्पमत्ते॥

अर्थात् सदा जागृत रहकर जीनेवाला, विवेकशील और शीघ्रबुद्धि वाला मनुष्य जीवन का भरोसा न करे। काल भयकर है और शरीर निर्बल है। काल के एक ही आक्रमण से शरीर छिन्न-भिन्न हो जाता है। यह जानकर भारड-पक्षी के समान प्रतिक्षण अप्रमत्त भाव से विचरना चाहिए।

पूज्यश्री इस प्रकार स्वाध्याय करके अपनी आत्मा मे लीन हो रहे थे। अन्य सन्त भी आपके साथ स्वाध्याय मे सम्मिलित हो गये। विषाद के स्थान पर गभीर शान्ति का सात्विक वातावरण फैल गया।

आषाढ शुक्ला द्वितीया को व्याधि अधिक बढ गई। उस दिन आप प्रतिक्रमण आदि नित्य नियम भी न कर सके। पूज्यश्री कहा करते थे- 'जिस दिन मुझसे नित्य नियम न हो सके, समझना वही मेरे जीवन का अतिम दिन है।' उपस्थित साधुओ को पूज्यश्री का यह कथन याद था। महान् सन्त की वाणी अन्यथा केसे हो सकती है ? इससे सतो को फिर चिन्ता ने घेर लिया। उसी रात्रि को मुनिश्री हरखचन्दजी ने पूज्यश्री को सथारा करा दिया। रात्रि के पिछले प्रहर मे, ब्राह्म मुहूर्त्त मे पूज्यश्री की आत्मा औदारिक शरीर कर बन्धन छोडकर चली गई।

शोक का पारावार

पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज के स्वर्गवास का समाचार फैलते ही सारा समाज शोकसागर मे डूब गया। उस समय सबके लिए एक मात्र सहारा युवाचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज थे। श्रीयुत डाह्याभाई ने जैनप्रकाश मे उस प्रसग को नीचे लिखे शब्दो मे अभिव्यक्त किया था-

"जिन्होने हमारे लिए इतना कष्ट उठाया, हम उन्हे जीते जी विशेष आराम न दे सके। उनके दु ख मे उनके जीते जी हमने कुछ भाग न लिया। उनकी तप्त आत्मा को शान्ति न दे सके। उनके गुणगान करने की शक्ति को भी कार्यरूप म प्रकट न कर सके। कुछ कृतघ्न व्यक्तिया न तो उनकी व्यर्थ टीका की। अपना श्रेय करने वाले सुकृत्यो को छोडकर ऐसे महात्मा, ऐसे सन्त और ऐसे कोमल हृदय दयालु पुरुष को दु ख पहुचाने की बात जब याद आती है तो हृदय फटा जाता है । परन्तु अहोभाग्य है कि आप सरीखे महारथी की जगह एक दूसरे सन्त महात्मा न स्वीकृत की है और सम्प्रदाय के सेनापति का जोखिम भरा हुआ पद स्वीकार किया है। उन्हे यश प्राप्त हो।

लगभग बत्तीस वर्ष तक पव्रज्या पालकर और उसी के बीच बीस वर्ष तक आचार्य पद को सुशोभित करके अनेक जीवो को प्रतिबोध दे पूज्यश्री ने जीवन सार्थक किया। आपका जन्म, आपका शरीर, आपकी पव्रज्या, आपका आचार्य पद यह सब अस्तित्व जनसमूह के कल्याण के लिए ही था। आपने अपनी नेश्राय मे एक भी शिष्य न करने की प्रतिज्ञा कर ली थी, किन्तु बहुसख्यक मनुष्यो को दीक्षा देकर उनका उद्धार किया और कई मुनिवरो पर अवर्णनीय उपकार किया। आपका चारित्र अत्यन्त अलौकिक था। आपके गुण अपार थे। उनका वर्णन नही किया जा सकता। विद्वान लेखक और शीघ्रकवि वर्षों तक वर्णन करते रहे तो भी आपके चारित्र का यथातथ्य निरूपण होना या आपके गुण समूह का पार पाना अशक्य है। आपके ज्ञान, दर्शन और चारित्र की शुद्धि, आपके पूर्वसचित शुभकर्मो के उदय का अपूर्व प्रभाव, वर्तमानकालीन शुद्ध प्रवृत्ति, आगामी समय के लिए दीर्घदर्शीपना, इतने प्रबल थे कि जिनकी उपमा देना ही अशक्य है। इस पचमकाल के जीवो मे आपकी समानता करने वाला कोई विरला ही व्यक्ति होगा।

तथापि आश्वासन पाने योग्य बात यह है कि आप के समान ही अनुपम आत्मीय गुण, अद्वितीय आकर्षण शक्ति, दिव्य तेज, अपार साहस, महान् आत्मबल, आपकी गादी पर विराजमान वर्तमान आचार्यश्री १००८ श्री पडितरत्न पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज साहेब मे अधिक अश मे विद्यमान है। हमारी यह हार्दिक अभिलाषा है कि आपके ज्ञान, दर्शन और चारित्र के पर्यायो मे समय-समय पर अधिकाधिक अभिवृद्धि होती रहे और वे निरामय तथा दीर्घ आयुष्य भोग कर जैनधर्म की उदार और पवित्र भावनाओ का प्रचार करने के अपने कार्य मे पूर्ण सफलता प्राप्त करे।

इसी तरह अनेक जाहिर पेपरो मे उनका विवरण प्रकाशित हुआ। कान्फ्रेस की जनरल कमिटी की बैठक हुई, उसमे भी यह प्रस्ताव आया और समाज के कर्णधारो ने खडे होकर पास किया तथा 'जैनप्रकाश' मे मुनियो का नाम आना बद था परन्तु कमिटी ने खास तौर से इसे प्रकाशित कराया।

भीनासर में स्वर्गवास-समाचार

पृज्यश्री का स्वर्गवास होने के समाचार युवाचार्य मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज को भीनासर मे प्राप्त हुए। इस आकस्मिक अवसान से आपको बहुत दु ख हुआ। अभी शोक का भार हल्का न हुआ था कि आप आचार्य घोषित कर दिए गए। समाज की सारी व्यवस्था का भार आप पर आ पडा। इतने दिन पूज्यश्री की छत्रछाया थी। इसलिए सब कुछ करते हुए भी आप निश्चिन्त थे। अब सारा उत्तरदायित्व आप पर आ पडा।

महापुरुषो के जीवन मे ऐसे अवसर बहुत आया करते है, जब एक तरफ वे शोक के आवेग से दबे रहते है, दूसरी तरफ महान् उत्तरदायित्व आ पडता है। उस समय शोक का भार मन ही मन दबाकर उन्हे कर्त्तव्य के मार्ग पर अग्रसर होना पडता है। मन मसोस कर, विवश होकर परिस्थिति को स्वीकार करने का यह अवसर बडा ही करुणाजनक होता है। किन्तु महापुरुष ऐसे विकट काल मे भी कातर नही होते। यह उनकी परीक्षा का समय होता है।

जिस दिन पूज्यश्री के स्वर्गवास का समाचार भीनासर पहुचा, उस दिन आपके तेला की तपस्या थी। आपने अपनी तपस्या लम्बी कर दी और आठ दिन का उपवास कर लिया। आठ दिन बाद भी आप अपनी तपस्या कुछ दिन और बढाना चाहते थे। मगर श्रीसघ के अत्यन्त विनम्र और करुण आग्रह के कारण आपने पारणा कर लिया।

यहा से हमारे चरितनायक पर सम्प्रदाय का गुरुतर उत्तरदायित्व आता है। आप अपने जीवन के एक नवीन अध्याय मे प्रवेश करते है।

❑

तीसरा अध्याय

आचार्य-जीवन

उनतीसवां चातुर्मास १९७७

अपने परमोपकारक आचार्य महाराज के स्वर्गवास का समाचार पाकर मुनिश्री शोक से अभिभूत हो गये। शोकाकुल और उपवास की अवस्था मे जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज बीकानेर पधारे और पूर्वनिश्चयानुसार सवत् १९७७ का चौमासा आपने बीकानेर मे ही किया।

गुरुकुल की योजना

महाराष्ट्र प्रात के दीर्घकालीन प्रवास के समय पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज विभिन्न समाजो के नेताओ और कार्यकर्त्ताओ क सम्पर्क मे आये थे। आपने जैन समाज की अवनति के कारणो पर गभीर विचार किया था। जैनधर्म सरीखे श्रेष्ठ धर्म को प्राप्त करके भी जैनसमाज विभिन्न दृष्टियो से और अनेक क्षेत्रो मे पिछडा हुआ क्यो है ? इस प्रश्न का आपने समाधान प्राप्त कर लिया था। आपके विचार से अज्ञान ही सब प्रकार की अवनति का कारण था। बहुमूल्य वस्तु पास मे होने पर भी जो व्यक्ति उसका वास्तविक मूल्य नही समझता, उसके लिए उस वस्तु का कोई महत्त्व ही नही होता। जेन समाज की यही स्थिति है। जैनधर्म सरीखा अनमोल रत्न पाकर के भी उसका असली मूल्य न समझने के कारण जैनसमाज का आध्यात्मिक विकास नही हो पा रहा है।

अज्ञानता निवारण का एकमात्र उपाय सुशिक्षा का प्रचार करना हे कि जिसके विषय मे पूज्यश्री के विचार अत्यन्त गभीर ओर सुलझे हुए थे। शिक्षा का उद्देश्य प्रकट करते हुए आपने फरमाया था-

मनुष्य अनन्त शक्ति का तेजस्वी पुज है। मगर उसकी शक्तिया आवरण मे लिपटी हुई हे। उस आवरण को हटाकर विद्यमान शक्तियो को प्रकाश मे लाना शिक्षा का ध्येय है। मगर शिक्षा शक्तियो के विकास एव प्रकाश मे ही कृतकृत्य नही हो जाती। शक्तियो के विकास के साथ उसका एक और महान् कर्तव्य हे। वह यह कि शिक्षा मनुष्य को ऐसे साचे मे ढाल दे कि वह अपनी शक्तियो का दुरुपयोग न करके सदुपयोग ही करे।

बहुत कम माता-पिता शिक्षा के वास्तविक महत्त्व को समझते है। अधिकांश माता-पिता शिक्षा को आजीविका का मददगार अथवा धनोपार्जन का साधन मान कर ही अपने बालकों को [illegible] दिलाते है। इसी कारण वह शिक्षा के विषय मे कजूसी करते है। [illegible]

अध्यापक नियत करते है, किन्तु यह बहुत बडी भूल है। छोटे बच्चो मे अच्छे सस्कार डालने के लिए वयस्क और अनुभवी अध्यापक की आवश्यकता होती है।'

इस प्रकार पूज्यश्री समय-समय पर शिक्षा की महत्ता और आवश्यकता का प्रतिपादन करते थे। पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज का स्वर्गवास हो जाने के बाद बीकानेर पधारने पर आपने शिक्षा पर बहुत जोर दिया। आपने व्याख्यान मे फरमाया-किसी महापुरुष का स्वर्गवास हो जाने पर उसकी स्मृति कायम रखने के लिए लोग स्मारक बनाते है, किन्तु ईंट और पत्थरो का बना हुआ स्मारक स्वय अस्थिर होता है। किसी त्यागी और धर्म के सच्चे सेवक का स्मारक ऐसा न होना चाहिए। त्यागी महात्मा का सबसे बडा स्मारक, जो उसके अनुयायी बना सकते है, वह है उस महात्मा के कार्य को पूरा करना। जिस बात के लिए उस महापुरुष ने अपना सारा जीवन लगा दिया, जिस ध्येय की पूर्त्ति के लिए अनेक कष्ट सहे उसे पूरा करने का प्रयत्न करना ही उनकी सब से बडी सेवा है। महापुरुषो को अपने जीवन तथा नाम से भी बढकर कार्य प्रिय होता है। वे मान-मर्यादा तथा प्रतिष्ठा के भूखे नही होते। इन सब को ठुकरा करके भी वे यही चाहते है कि किसी प्रकार उनका कार्य पूरा हो जाय।

स्वर्गीय पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज ने अपना जीवन धर्म-प्रचार तथा समाजहित मे लगाया था। उनकी सदा यही अभिलाषा रहती थी कि किसी प्रकार समाज की उन्नति हो। प्रत्येक व्यक्ति धर्म का सच्चा स्वरूप समझे। समाज की उन्नति का पहला पाया है- अज्ञान दूर करना। धर्म का सच्चा स्वरूप समझने की योग्यता भी ज्ञानप्राप्ति के द्वारा ही आ सकती है। यदि आप लोग समाज मे फैली हुई अज्ञानता को दूर करने का प्रयत्न करेंगे तो स्वर्गस्थ पूज्यश्री की आत्मा को सतोष होगा। जैन समाज मे साधनो की कमी नही है। आप लोग सब तरह से समर्थ है। किन्तु प्रयोग मे बिना लाये कोरे साधन क्या कर सकते है ? समाज मे ज्ञान का प्रचार करना आप सभी का कर्त्तव्य है। स्वर्गीय पूज्यश्री के प्रति भक्ति प्रदर्शित करने का यही उत्तम मार्ग है।'

स्वर्गीय पूज्यश्री के प्रति भक्ति तथा वर्तमान पूज्यश्री श्रीलालजी के उपदेश से प्रेरित होकर बीकानेर श्रीसघ ने एक विशाल शिक्षण सस्था के रूप मे पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज का स्मारक बनाना निश्चित किया। मुख्य-मुख्य श्रीसघो के अग्रणी व्यक्ति निमन्त्रित किये गये। लगभग दो सो सज्जन बाहर से आये, जिनमे प्राय सभी स्थानो के प्रमुख व्यक्ति थे।

ता ८ अगस्त १९२० के दिन आमंत्रित सज्जनो तथा बीकानेर एव भीनासर श्रीसघो की एक एक-सभा हुई। सभापति के आसन पर सेठ दुर्लभजी त्रिभुवन झवेरी आसीन हुए।

पूज्यश्री के वियोग पर खेद और विचाराधीन आयोजन की सफलता की कामना प्रकट करने के लिए आये हुए तारो और पत्रो का वाचन होने के पश्चात् पूज्यश्री की स्मृति मे एक विशाल शिक्षासस्था की योजना पेश की गई। विचार विनियम के पश्चात नीचे लिखे प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत किये गये-

प्रस्ताव पहला

(क) निश्चय हुआ कि सघ की उन्नति के लिए एक गुरुकुल खोला जाय और उसका नाम 'श्री श्वेताम्बर साधुमार्गी जैन गुरुकुल' रखा जाय।

(ख) इस सस्था के लिए अनुमानत पाच लाख रुपयो की आवश्यकता है, जिसमे दो लाख का चदा वसूल हो जाने पर कार्य पारभ कर दिया जाय।

(ग) कम से कम रु २१०००) का विशेष दान करने वाला इस सस्था का सरक्षक (Patron) समझा जावेगा। सस्था की प्रबन्धकारिणी का सभापति सरक्षको मे से ही चुना जायगा।

(घ) रु ११०००) ग्यारह हजार देने वाले गृहस्थ इस सस्था के सहायक गिने जायेगे। और उनमे से सस्था की पबन्धकारिणी का उपसभापति या कोषाध्यक्ष चुना जायगा।

(ङ) रु ५०००) पाच हजार या ज्यादा और रु ११०००) से कम देने वाले व्यक्ति इस सस्था के शुभेच्छुक (Sympathisor) गिने जाएगे और उनमे से भी मन्त्री आदि पदाधिकारी चुने जा सकेगे।

(च) रु २०००) या इससे अधिक प्रदान करने वाले गृहस्थ इस सस्था के सभासद् माने जाएगे और उनका चुनाव प्रबन्धकारिणी मे हो सकेगा।

(छ) चन्दा प्राप्त करने वाले गृहस्थो के नाम शिलालेखो मे गुरुकुल भवन के दरवाजे पर मय चन्दे की तादाद के प्रकट किए जाएगे।

(ज) प्रबन्धकारिणी अपनी इच्छानुसार पाच अन्य विद्वान गृहस्थो को सलाह लेने के लिए शरीक कर सकेगी और उनके मत गणना मे आ सकेगे, उन पर चन्दे का कोई प्रतिवन्ध न रहेगा।

नोट- इस गुरुकुल का उद्देश्य समाज की भावी सन्तान को धर्मपरायण, नीतिमान्, विनयवान्, शीलवान् व विद्वान् बनाने का होगा।

प्रस्ताव दूसरा

बीकानेर श्रीसघ ने प्रकट किया कि यदि बीकानेर शहर के बाहर गुरुकुल खोला जाय तो इस समय रु १२००००) की रकम यहा के सघ की ओर से लिखी जाती है। चन्दा बढाने का प्रयत जारी रहेगा। दो लाख रुपए इकट्ठे होने पर कार्यारम्भ किया जायगा।

उक्त कार्य के लिए सभा की ओर से बीकानेर श्रीसघ को हार्दिक धन्यवाद दिया जाता हे कि जिन्होने उत्साहपूर्वक इतनी बडी रकम प्रदान कर ऐसी सस्था की बुनियाद डालने का साहस किया कि जिसकी परम आवश्यकता थी।

प्रस्ताव तीसरा

इस उपयोगी कार्य मे सलाह देने के लिए तकलीफ उठाकर बाहर से पधारने वाले सज्जनो को यह सभा धन्यवाद देती है।

प्रस्ताव चौथा

श्रीयुत दुर्लभजी भाई के सभापतित्व मे यह कार्य सफलतापूर्वक किया गया अतएव यह सभा उनका उपकार मानती है।

जावरे वाले सन्तो के अलग हो जाने से उन दिनो समाज मे कुछ अशान्ति पैदा हुई थी। उस समय उनकी ओर से एक ट्रेक्ट भी निकला था। उसका जवाब देने के लिए इधर से भी श्रावक तैयार हुए किन्तु शान्ति रक्षा के उद्देश्य से पूज्य श्री ने अपने श्रावको को मना कर दिया।

इस विषय मे कमिटी ने नीचे लिखे अनुसार प्रस्ताव पास किया-

प्रस्ताव पांचवां

आपस मे निन्दा युक्त लेख छपने से समाज मे पूरी हानि होती है। हाल मे जो सत्यासत्य कमिटी जावरे की तरफ से ३६ कलमो का एक ट्रेक्ट निकला है, उसका यथोचित उत्तर दिया जाना स्वाभाविक है। मगर आज रोज श्रीमान् परमपूज्य श्री १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज साहेव ने शान्तिपूर्वक ऐसा उपदेश व्याख्यान द्वारा विस्तारपूर्वक फरमाया कि श्रीमान् सद्‌गत पूज्य महाराज साहेब के उपदेशामृत व श्री जैनधर्म के मूल क्षमाधर्म को अगीकार करके श्रीमान् के भक्तो को शान्ति ही रखनी चाहिए और छापे द्वारा उत्तर प्रत्युतर नही करना चाहिए। महाराज साहेब के इस फरमान को सबने सहर्ष स्वीकार किया। यदि किसी की तरफ से भविष्य मे भी निन्दायुक्त लेख प्रकट हो और न्यायपूर्वक उत्तर देना ही जरूरी समझा जावे तो नीचे लिखे पाच मेम्वरो के नाम से उसका प्रतिकार किया जाय-

(१) नगर सेठ नन्दलालजी वाफणा, उदयपुर।

(२) सेठ मेघजी भाई थोभण, वम्वई।

(3) सेठ कनीरामजी वाठिया, भीनासर।

(4) सेठ नथमल जी चोरडिया, नीमच।

(५) सेठ दुर्लभ जी भाई जोहरी, जयपुर।

सभा की बेठके तारीख ८ से लेकर १० तक लगातार तीन दिन होती रही। वीकानेर श्रीसघ मे अपूर्व उत्साह था। त्याग की भावना जागृत हो रही थी। लक्ष्मी की कृपा तो इस नगर पर सदा से रही है। चन्दे का चिट्ठा भरा गया। श्रीमन्तो ने वडी-वडी रकमे भरी। अनायास ही उस चिट्ठे मे केवल वीकानेर और भीनासर वालो की तरफ से दो लाख रुपए से ऊपर भरे गए। जिन से एक विशाल सस्था की नीव रखी जा सकती थी।

किन्तु स्थानकवासी समाज के भाग मे ऐसे महत्त्वपूर्ण कार्य का होना वदा न था। चातुर्मास समाप्त होते ही पूज्यश्री को मेवाड और उस के वाद दक्षिण की ओर विहार करना पडा। शारीरिक अस्वास्थ्य और दूसरे कारणो से फिर सात वर्ष तक इधर पदार्पण न हो सका। किसी योग्य प्रभावशाली कार्यकर्ता के अभाव मे वे रकमे दाताओ के पास ही पडी रही। समय वीतने पर किसी के विचार पलट गए और उसने रकम देना नामजूर कर दिया। किसी की आर्थिक स्थिति डावाडोल हो गई, इसलिए उस के पास देने को कुछ न रहा। परिणाम स्वरूप गुरुकुल की स्थापना न हो सकी।

सवत् १९८४ का चातुर्मास जब पूज्यश्री ने फिर भीनासर मे किया तो उस योजना की बात फिर उठी। कुछ सज्जनो ने अपने वचन का पालन करते हुए चन्दे मे लिखाई हुई रकम भर दी। एक लाख के लगभग इकट्ठा हो गया। उस से 'श्री श्वे साधुमार्गी जैन हितकारिणी सस्था' की स्थापना हुई। उसके द्वारा शास्त्रोद्धार, हुन्नरशाला एव सहायता का कार्य प्रारम्भ किया गया। आजकल यह सस्था गावो मे कई स्कूल चला रही है तथा असमर्थ बहिनो और भाइयो की सहायता कर रही है। इसका पूरा विवरण सवत् १९८९ के बीकानेर चातुर्मास मे दिया जायगा।

साम्प्रदायिक साधुसम्मेलन

आचार्य पद स्वीकार करने के पश्चात् पूज्यश्री सम्पदाय के साधुओ को एकत्र करके भावी उन्नति की रूपरेखा निर्धारित करना चाहते थे। उनकी यह भी इच्छा थी कि साधु समाचारी पुन व्यवस्थित कर ली जाय और व्यवस्था सबधी नियम सब को सुना दिये जाए। स्व पूज्यश्री का जब स्वर्गवास हुआ तब चातुर्मास आरभ होने मे सिर्फ ग्यारह दिन शेष थे। इतने अल्प समय मे सब साधु न एकत्र हो सकते थे और न भिन्न-भिन्न क्षेत्रो मे चौमासा करने के लिए वापिस लौट सकते थे। अत चौमासा समाप्त होने पर पूज्यश्री ने सम्पदाय के साधुओ का सम्मेलन करना निश्चित किया।

सब साधुओ की अनुकूलता के लिहाज से सम्मेलन का स्थान उदयपुर उपयुक्त समझा गया। सब को सूचना दे दी गई। विहार करके चालीस सत उदयपुर मे एकत्र हो गये। मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज पूज्यश्री की सेवा मे रहना चाहते थे और पूज्यश्री भी उन्हे सेवा मे रखना चाहते थे। अत आप दो ठाणे से दक्षिण प्रान्त से विहार करके उदयपुर पधार गये।

पूज्यश्री भी बीकानेर का चौमासा पूर्ण होते ही स्थान-स्थान पर धर्म का प्रचार करते हुए उदयपुर पधारे। उदयपुर पधार कर आपने साधुसमाचारी सबधी तथा दूसरी कलमे वाधी। सभी सतो ने पूज्यश्री की आज्ञा शिरोधार्य की।

मिल के वस्त्रों का परित्याग

उन्ही दिनो पूज्यश्री को मालूम हुआ कि मिल मे बनने वाले वस्त्रो मे चर्वी लगाई जाती हे। वस्त्रो को मुलायम और चमकीला बनाने के लिए की जाने वाली इस घोर हिंसा की बात जानकार पूज्यश्री को आश्चर्य और खेद हुआ। उन्होने मिल के वस्त्रो को सर्वथा हेय समझा और उनका त्याग कर दिया। आपने खद्दर के वस्त्र धारण किये।

तभी से आप चर्बी वाले वस्त्रो को घोर हिंसाजनक समझकर उनका तीव्र विरोध किया करते थे। आपका यह विरोध आजीवन ज्यो का त्यो बना रहा। खादी की उपयोगिता तथा विलायती एव चर्वी-लगे वस्त्रो के सबध मे आपका उपदेश बडा ही प्रबल रहा है और आपका वह उपदेश आपके साहित्य मे यत्र-तत्र बिखरा पडा है। एक बार आपने कहा था-

'साधु-सतो की यह विशेष जिम्मेवारी है कि वे तुम से चर्बी के वस्त्रो का त्याग करावे। साधु-सत अपनी जिम्मेवारी को समझे तो अहिंसा का पालन हो सकता है और तुमसे चर्वी के वस्त्रो का भी त्याग कराया जा सकता है किन्तु जब तक वे स्वय चर्वी के वस्त्रो का त्याग नही करते तब तक दूसरो से कैसे त्याग करा सकते है! कोई यह कह सकता है कि साधु, गृहस्थ के घर से वस्त्र लाते हे। इस अवस्था मे उन्हे जेसे मिल जाते है वैसे ही पहनने पडते है, पर इस कथन मे कोई जान नही है। जब चर्वी के वस्त्र उन्हे मिल जाते हे तो तलाश करने पर क्या बिना चर्बी के-खादी के-वस्त्र नही मिल सकते ? अतएव सर्वप्रथम साधुओ को चर्बी के कपडो का त्याग करना चाहिए। जिन चर्वी के वस्त्रो के लिए घोर हिंसा की जाती है उन वस्त्रो का त्याग करना ही तुम्हारे लिए उचित है। अगर तुमने अहिंसा को समझा है अगर तुम महावीर स्वामी को समझ पाये हो तो चर्वी के वस्त्रो का त्याग करना ही चाहिए। चर्वी के वस्त्रो का त्याग करने से स्वार्थ के साथ परमार्थ भी सध सकता है। इससे जीवन मे सादगी

आती है और अहिंसा की आराधना होती है। चर्बी के वस्त्रो के लिए कैसे-कैसे भयकर हत्याकाण्ड होते है, यह सब जानते-बूझते हुए भी उन वस्त्रो का उपयोग करना अहिंसा की अवहेलना करना है।

'अगर तुम चर्बी लगे मिल के वस्त्रो का त्याग करो तो तुम्हारी क्या हानि होगी ? ऐसा करने मे क्या सरकारी रुकावट है ? सरकार की ओर से ऐसी कोई रोकटोक नही है। फिर भी अगर कोई सरकार के डर से चर्बी के कपडे नही छोडता तो वह देवादिक का उपसर्ग उपस्थित होने पर किस प्रकार निर्भय और निश्चल बना रह सकेगा ?'

'तुम जिस देश मे जन्मे हो, जहा के अन्न, जल और वायु से तुम्हारे शरीर का पालन-पोषण हुआ है, उसी देश मे उत्पन्न होने वाली वस्तुओ के अतिरिक्त दूसरी वस्तुओ का तुम्हे त्याग करना चाहिए। उस वस्तु से तुम्हारा जीवननिर्वाह सरलता से हो सकेगा और साथ ही तुम महा-आरम्भ से भी बच जाओगे।'

इस प्रकार पूज्यश्री ने स्वय आजीवन खादी धारण की और जीवन भर चर्बी के वस्त्रो के त्याग का उपदेश दिया। अस्तु।

उदयपुर से विहार करके अनेक स्थानो मे विचरते हुए पूज्यश्री सनवाड पधारे। सनवाड के तत्कालीन रावजी प्रतिदिन आपका व्याख्यान सुनते थे। एक दिन गीता पर पूज्यश्री का प्रवचन सुनकर उन्हे आश्चर्य हुआ। उन्हे मालूम हुआ कि गीता का कर्मयोग जैनधर्म के अनासक्ति मार्ग का ही रूपान्तर है। अहिंसा और जीवदया पर दिये हुए व्याख्यानो का उन पर ऐसा गहरा प्रभाव पडा कि प्रसिद्ध निशानेबाज और शिकारी होते हुए भी उन्होने जीवन भर के लिए शिकार खेलने का त्याग कर दिया। उन्होने दशहरे के अवसर पर मारे जाने वाले भैसों को मारना बद कर दिया।

सनवाड के इन रावजी ने पूज्यश्री से चौमासा करने का अत्यन्त आग्रह किया मगर कई कारणो से पूज्यश्री स्वीकार न कर सके।

सनवाड से विहार कर पूज्यश्री कानोड पधारे। कानोड के रावजी ने तथा जैन-जैनेतर भाइयो ने आपके उपदेश से खूब लाभ उठाया। तदनन्तर आप बडी सादडी, छोटी सादडी होते हुए नीमच पधारे। श्रीनथमलजी चोरडिया के प्रयत्न से वहा के चमार भी पूज्यश्री का व्याख्यान सुनने आते थे। आपके उपदेश से चालीस चमारो ने यावज्जीवन मास-मदिरा का त्याग किया।

नीमच से विहार करके पूज्यश्री जावद, रामपुरा और मन्दसौर होते हुए जावरा पधारे। यहा रतलाम श्रीसघ के प्रमुख सेठ वर्धमान जी पीतलिया आपके दर्शनार्थ आये। पहले कहा जा चुका है कि पूज्यश्री के व्याख्यानो मे चर्बी-लगे वस्त्रो का अकसर निषेध किया जाता था। उस दिन के व्याख्यान मे भी यही विषय आ गया। आपने फरमाया-'दूध के घडे मे यदि गाय के खून की एक भी बूद पड जाय तो उसे काम मे नहीं लाया जाता। उसे अपवित्र समझकर लोग छोड देते है। किन्तु आश्चर्य की बात है कि गाय की चर्बी लगे वस्त्र पहनने मे लोगो को सकोच नही होता। मित्रो! इन वस्त्रो के लिए कितनी गायो और भैसो के प्राण ले लिये जाते है, क्या आप इसे जानते है ? यह वस्त्र महा आरम्भ के द्वारा बने हुए है, इसलिए पाप के कारण है। आप सभी को इन वस्त्रो का परित्याग कर देना चाहिए।'

इस प्रकार की अनेक युक्तियो और दृष्टान्तो से पूज्यश्री ने चर्बी के वस्त्र का निषेध किया।

कहते है, उन दिनो रतलाम नरेश खादी से बुरी तरह चिढते थे। गाधी टोपी उनके लिए बम की भाति भयकर थी। कई-एक गाधी टोपी पहनने वाले सिर्फ यह टोपी पहनने के अपराध मे ही गिरफ्तार कर लिये गये थे और उन्हे सजा दी गई थी। अपने महाराजा की मनोवृत्ति और पूज्यश्री के मनोभावो पर विचार करके पीतलियाजी पशोपेश मे पड गये। वे पूज्यश्री का चौमासा रतलाम मे करवाना चाहते थे। उन्हे आश्वासन भी मिल चुका था। उन्होने सोचा-अगर पूज्यश्री ने रतलाम मे भी ऐसा ही व्याख्यान दिया तो रतलाम-नरेश की नाराजी का पार नही रहेगा।

एक दिन एकान्त मे पीतलियाजी ने पूज्यश्री से निवेदन किया- पूज्यश्री! रतलाम नरेश की खादी पर तीव्र कोपदृष्टि है और हम आप का चातुर्मास रतलाम मे अवश्य कराना चाहते है। वहा इस प्रकार का उपदेश देना क्या योग्य होगा?

पूज्यश्री को रतलाम नरेश की मनोवृति जानकर आश्चर्य हुआ। साथ ही यह भी विचार आया कि ऐसे शासक को तो अवश्य ही समझाना चाहिए। उन्हे समझाने से बहुतो का उपकार हो सकता है।

मगर पूज्यश्री ने पीतलियाजी को सक्षेप मे इतना ही कहा- 'जैसा अवसर होगा, देख लिया जायगा।

पीतलियाजी यह आश्वासन पाकर सन्तुष्ट हुए और रतलाम लौट गए। पूज्यश्री भी जावरा से विहार करके रतलाम पधारे।

तीसवां चातुर्मास (१९७८)

पूज्यश्री ने सवत् १९७८ का चौमासा रतलाम मे किया। चातुर्मास मे हजारो श्रोता आपके व्याख्यान से लाभ उठाते थे। आसोज कृष्णा एकादशी के दिन रतलाम-नरेश व्याख्यान सुनने आये। पूज्यश्री का पभावशाली उपदेश लगातार दो घटे तक सुनकर वे चकित रह गये। पूज्यश्री ने बडे ही असरकारक शब्दो मे और बडी ही कौशल के साथ रतलाम-नरेश को चर्बी के वस्त्रो की हेयता और खादी की उपादेयता समझाई। आपकी वक्तृता सुनकर उनकी खादी के प्रति जो चिढ थी वह दूर हो गई और उन्होने पूज्यश्री को आश्वासन दिया। व्याख्यान की उन्होने भूरि-भूरि प्रशसा की।

रतलाम मे एक घटना और घटी। एक दिन पूज्यश्री शौच के लिए बाहर पधारे। वहा एक गाय और एक भैस चर रही थी। एक आदमी उन्हे चरा रहा था। इतने मे गालियो की बौछार करता हुआ दूसरा आदमी वहा आधी की तरह आ धमका। उसने बडी बेरहमी के साथ गाय-भैस को पीटा और चराने वाले आदमी को भी पीटा।

पूज्यश्री यह देखकर चकित हुए। आपकी समझ मे न आया कि गाय, भैस और ग्वाले का अपराध क्या है? आखिर आपने उस ग्वाले से कारण पूछा। उसने बतलाया-महाराज! यह भूमि राज्य की है। उसने (पीटने वाले ने) अपने पशु चराने के लिए यह ठेके पर ले ली है। मै अपने पशु लेकर इधर आगया। अनजान होने के कारण मुझे इसकी सीमा का ध्यान नही था। इसकी सीमा मे ढोरो का चला आना ही मेरा और इन मूगे पशुओ का दोष है।

यह वात पृज्यश्री को वहुत खटकी। भारत के प्राचीन राजवश गोभक्त थे। वे गो-सेवा को अपना परमधर्म समझते थे। मगर आज जगलात के महकमे ने घास का एक-एक तिनका वेचकर पैसे इकट्ठा करने की नीति अपनाई हे। पशुओ के लिए गोचरभूमि छोडना क्या राज्य का कर्त्तव्य नही हे ? ससार का असीम उपकार करने वाले पशु क्या पेट भर घास के भी अधिकारी नही है ?

रतलाम-नरेश जब व्याख्यान मे आये तो पूज्यश्री ने इस घटना का उल्लेख करते हुए गोचरभूमि न होने की हानिया भी प्रकट की। रतलाम-नरेश पर इसका भी बडा प्रभाव पडा और आपने आभार मानते हुए आश्वासन भी दिया।

जावरा वाले सन्तो के साथ पहले से मतभेद होने के कारण पूज्यश्री को अशान्ति होने की सम्भावना थी। उसे रोकने के लिए आपने अपने सम्प्रदाय वालो से पहले ही यह प्रतिज्ञा करवा ली थी कि दूसरी ओर से चाहे जैसा व्यवहार हो, मगर अपनी ओर से उसका कोई वेसा उत्तर नही दिया जायगा। परिणामस्वरूप कुछ अशान्तिप्रिय लोगो की ओर से छेडछाड होने पर भी इस तरफ का श्रीसघ शान्त रहा। यहा तक कि पूज्यश्री पर भी कई प्रकार के आक्षेप करने से लोग न चूके मगर सागरवत्-गभीर पूज्यश्री एकदम शान्त रहे और अपने उत्तेजित श्रावको को भी शाति रखने का उपदेश देते रहे।

चोमासे के पश्चात् पू श्री धर्मदासजी महाराज के सम्प्रदाय के मुनिश्री चम्पालालजी म रतलाम पधारे। उन्होने चातुर्मास के वातावरण से परिचित होकर और पू श्री का शान्तिप्रेम देखकर आश्चर्य प्रकट किया। आपने एक दिन अपने व्याख्यान मे फरमाया-पूज्यश्री पर कई प्रकार के निराधार आक्षेप किये गये। भोली और अज्ञान वाइया किसी के वहकाने से पूज्यश्री की व्याख्यान सभा के पास से निन्दात्मक गीत गाती हुई निकली। उन्हे सुनकर श्रावको मे उत्तेजना फैली। कई बार वातावरण मे क्षोभ भी उत्पन्न हो गया, मगर आचार्य महाराज सदेव जनता को शान्त करते रहे। वे मुह तोड उत्तर दे सकते थे मगर शान्तिरक्षा के उद्देश्य से उन्होने कभी एक भी शव्द नही कहा। ऐसे अवसर पर धेर्य रहना कठिन है, मगर आचार्य महोदय की शान्तिप्रियना प्रशसनीय हे। ऐसे मौके पर मेरा शान्त रहना भी कठिन-सा ही था। आचार्य महोदय ने जो शान्ति रक्खी है वह उन्ही के योग्य हे। उससे दूसरो को शिक्षा लेनी चाहिए। आपने धर्म को वदनाम होने से वचा लिया हे।'

इस चातुर्मास मे मुनिश्री सुन्दरलालजी म ने लम्वी तपस्या की थी। तपस्या के पूर के दिन राज्य की ओर से अगता पलाया गया। अर्थात् जीव-हिंसा वन्द रखने की आज्ञा जारी की गई।

इस चातुर्मास मे पृज्यश्री ने चर्वी वाले वस्त्रो के निपध पर खूव जोर दिया। परिणाम स्वरूप वहुसख्यक लोगो ने त्याग किया। जिन्होंने जावरा मे इस प्रकार के उपदेश से खतरा अनुभव किया था उन सेठ वर्द्धमानजी पीतलिया ने भी सपत्नीक चर्वी लगे वस्त्रो का परित्याग किया। इसी चातुर्मास मे श्री श्वे स्था जैन पृज्य श्री हुक्मीचन्दजी म की सम्प्रदाय के हितेच्छु श्रावक मडल की स्थापना हुई।

फिर दक्षिण की ओर

रतलाम का चोमासा समाप्त होते ही पृज्यश्री को विदित हुआ कि दक्षिण मे मुनि श्रीलालचन्दजी म रुग्ण अवस्था मे है और दर्शन करना चाहते है।

यद्यपि इधर आपके कई आवश्यक कार्य शेष रह गये थे, फिर भी भक्त की इच्छा को टालना आपके लिये अशक्य हो गया। आपने समाचार मिलते ही बिना विलम्ब महाराष्ट्र की ओर प्रस्थान कर दिया।

रतलाम से विहार करके पू श्री कोद, विडवाल, कडोद, धार, नालछा, माडव, खलघाट निमरानी और ठीकरी होते हुए खुर्रमपुरा पहुचे।

उग्र परीषह

खुर्रमपुरा मे श्रावक का एक भी घर नही था। दूसरे लोगो को न गोचरी के नियमो का पता था न जैन साधुओ के विषय मे कोई जानकारी थी। अतएव शुद्ध आहार-पानी मिलना कठिन हो गया। उस समय पूज्यश्री के साथ नौ सत थे। आहार-पानी की बेहद कठिनाई का विचार कर मुनिश्री मोतीलालजी महाराज ने सीदवा, सिरपुर की ओर विहार किया और पूज्यश्री अन्य चार सतो के साथ अलग हो गये।

हणुतमलजी महाराज का स्वर्गवास

मुनिश्री हणुतमलजी म कुचेरा (मारवाड) निवासी भण्डारी ओसवाल थे। गृहस्थावस्था मे किनारी-गोटे का व्यापार करते थे। वे एक आदर्श और प्रामाणिक व्यापारी थे। उन्होने एक आना फी रुपया से अधिक कभी मुनाफा नही लिया। कभी जकात की चोरी भी नही की। जकात के थानेदारो ने कई बार थोडी-सी रिश्वत लेकर बहुत से माल पर जकात छोड देने का प्रलोभन दिया किन्तु आप कभी सहमत नही हुए। इस प्रकार के प्रयत्नो को वे अत्यन्त जघन्य समझते थे। उन्होने एक पैसे के लिए भी कभी अप्रामाणिक व्यवहार नही किया। बहुत बडे धनाढ्य न होने पर भी अपनी प्रामाणिकता की प्रभूत पूजी के प्रभाव से बडे-बडे नगरो मे आपकी खूब प्रतिष्ठा थी। जब, जहा से और जितना माल वे चाहते, ला सकते थे। बडे व्यापारी आपको उधार देने मे किसी प्रकार की हिचकिचाहट नही करते थे। आसपास मे आपका काफी सम्मान था। आपने हजारो की सम्पत्ति न्याय-नीति से कमाई थी। अन्त मे वह सारी सम्पत्ति त्यागकर प्रबल वैराग्य के साथ मुनिश्री मोतीलालजी महाराज के पास दीक्षित हुए। दीक्षा लेने के बाद आपके परिणामो मे उत्तरोत्तर निर्मलता आती गई। आपने सयम मे किसी प्रकार का दोष नही आने दिया।

खुर्रमपुरा मे आप पूज्यश्री के साथ थे। वहा ठहरने के लिए कोई अच्छा मकान भी नही मिला था। पोष का महीना था और कडाके की सर्दी पड रही थी। तिस पर ठडी हवा भी चल रही थी। ऐसे अवसर पर एक खुला मदिर उतरने के लिए मिला। रात्रि के समय मुनिश्री गणेशीलालजी म ने और आपने पूज्यश्री की सेवा की। पूज्यश्री विश्राम करने लगे और आप मुनि श्रीगणेशीलालजी महाराज की सेवा करने लगे। एकाएक आपकी छाती मे दर्द उठा और वह बहुत तीव्र हो गया। साथ ही ज्वर भी चढ आया। रात्रि के समय और कोई उपाय नही किया जा सकता था अत मुनि श्रीगणेशीलालजी म ने आपकी छाती दबाई। मगर उसका कोई असर न हुआ। दर्द और साथ ही बुखार बढता चला गया। दोनो मुनियो को ऐसा प्रतीत होने लगा कि अब आराम होना कठिन है। मुनिश्री गणेशीलालजी म ने उस समय आपको आलोयणा आदि करवा दी। मुनि श्रीहणुतमलजी म ने शुद्ध हृदय से अपने जीवन

की आलोचना की। मुनि श्रीगणेशीलालजी महाराज आपको पास के एक कच्चे मकान मे ले गये और रात्रि को दो वजे तक उनके पास वैठे रहे। इसके वाद तपस्वी मुनि श्रीसुन्दरलालजी म ने उन्हे विश्राम करने के लिए कहा और वे स्वय रात भर उनके पास वैठे रहे।

उस खुले मदिर मे निर्वाह होना कठिन समझ कर प्रात काल होने पर मुनि श्रीगणेशीलालजी म दूसरे कुछ सुविधाजनक स्थान की खोज करने गये। नजदीक की एक कपास की जीनिग फेक्टरी थी। उसके मैनेजर कोई अहमदावादी मदिरमार्गी जेन दशा श्रीमाली सज्जन थे। मुनिश्री ने उन्हे जैन जानकर उनसे स्थान की याचना की तो उन्होने एक कच्ची कोठरी वता दी। कोठरी मे नीचे धूल का मोटा पलस्तर था और ऊपर कवेलू की छत थी। लेकिन उसमे विशेपता यह थी कि कोठरी वद की जा सकती थी और इस तरह हवा से कुछ वचाव हो सकता था। कोठरी का मिल जाना गनीमत समझ कर श्रीहणुतमजी म को वहा लाया गया।

मगर आहार-पानी और वीमारी की समस्या कठिन से कठिनतर होती जाती थी। इधर आहार-पानी दुर्लभ था और उधर वीमारी के कारण आगे विहार होना कठिन था। उस गाव मे चार घर अग्रवालो के और चार घर मरहठे व्राह्मणो के थे। कुल पच्चीस घरो का छोटा-सा गाव था। मुश्किल से दस घर ऐसे होगे, जहा भिक्षा मिल सकती थी।

ऐसे विकट-पसग का सामना करने के लिए पूज्यश्री ने तथा तपस्वी जी ने एकान्तर उपवास करना आरभ किया। निमोनिया मे लाभदायक होने के कारण हणुतमलजी म को तीन दिन का उपवास कराया गया। इससे वीमारी मे कुछ अन्तर पडा मगर कमजोरी ज्यादा वढ गई।

पूज्यश्री अपना कष्ट सहने मे जितने कठोर थे, दूसरो के कष्ट के लिए उतने ही कोमल हृदय थे। आपसे सतो का यह दैनिक कष्ट नही देखा गया। वीमार मुनि की चिकित्सा के साधनो का अभाव भी आपको खटका। अतएव आपने विचार किया-'आसपास मे अगर कोई दूसरा गाव हो जहा मुनि श्रीहणुतमलजी की वीमारी तक ठहरने की और उपचार की सुविधा हो सके तो वहा जाना उचित होगा। इस स्थान पर तो निर्वाह होना कठिन है।'

परिणाम स्वरूप मुनि श्रीगणेशीलालजी म तथा मुनि श्रीसूरजमलजी म दूसरा गाव देखने के लिए गए। चार कोस दूर एक वडा गाव था। लगभग १२०० घरो की आवादी थी। छह घर दिगम्बर जैनो के भी थे। दोनो मुनि वहा पहुचे और एक दिगम्बर जैन सेठ के पास जाकर उन्होने ठहरने के लिए स्थान मागा। सेठजी ने पहले कभी श्वेताम्बर साधुओ को नही देखा था। अत पहले पहल तो उन्होने आनाकानी की किन्तु सारी वात समझाने पर एक खाली दुकान मे उतरने के लिए जगह दे दी। दुकान क्या थी, चूहो का गाव ही समझिए जिसमे उनके वहुसख्यक विल विद्यमान थे।

गाव मे एक घर विवाह था। प्राय सभी दिगम्बर भाई उसी घर भोजन करते थे। अतएव सभी घरो मे घूमने पर भी वहुत थोडा आहार मिला। अनेको के घर से ज्वार की दो रोटिया और थोडा-सा गर्म पानी मिला।

शाम के समय मुनि श्रीगणेशीलालजी महाराज का उपदेश होता था। कुछ लोग उपदेश सुनने के लिए इकट्ठे हो गये। उनमे एक स्कूल-मास्टर भी थे। उपदेश का ठीक प्रभाव पडा।

दुकान मे चूहे इतने अधिक थे कि रात्रि के समय विश्रान्ति लेना असभव–सा था। अत मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज ने विश्राम के लिए स्कूल-मास्टर साहब से मकान मागा। मास्टर साहब ने स्थान तो दे दिया मगर शर्त यह रक्खी कि सुबह होने पर–स्कूल के समय से पहले-पहले मकान खाली कर दिया जाय।

रात भर स्कूल मे विश्राम करके सुबह दोनो मुनियो ने आहार-पानी की सुविधा देखने के लिए गाव मे घूमना आरभ किया। थोडा-सा आहार और कुछ पानी मिल गया। वहा इतनी सुविधा नही थी कि पाच साधु वहा कुछ दिनो तक ठहर सके। अन्त मे दोनो साधु खुर्रमपुरा लौट गये।

मुनिश्री हणुतमलजी म की बीमारी फिर बढने लगी। पूज्यश्री ने तथा अन्य साधुओ ने कल्पमर्यादा एव सुविधा के अनुसार सभी सभव उपचार किये। पूज्यश्री कभी-कभी स्वय गर्म जल मागकर लाते और अपने हाथ से सेक करते। तपस्वीजी ठीकरी गाव से औषध लाते। अन्य मुनि भी रात-दिन यथायोग्य उपचार मे लगे रहते। किन्तु नौवे दिन बीमारी बढ गई। ग्लान मुनि की मुखाकृति बदल गई। चेहरे पर भावी मृत्यु की अस्पष्ट छाया पडी दिखाई देने लगी। जीवित रहने की आशा क्षीण हो गई। पूज्यश्री ने उनके परिणामो को स्थिर रखने के लिए अतिम उपदेश देना आरभ किया। हणुतमलजी महाराज ने सथारा करने की इच्छा प्रकट की।

मुनिश्री की बीमारी का समाचार कई स्थानो पर पहुच गया था। आठवे दिन जावरा के श्री प्यारचन्दजी डफरिया तथा एक दूसरे सज्जन वहा पहुच गये। उन्होने तथा सभी सन्तो ने सथारा करा देने की सम्मति दी, लेकिन पूज्यश्री शीघ्रता नही करना चाहते थे। आपने वहा के कुछ समझदार व्यक्तियो से परामर्श किया। सभी ने एक ही बात कही-'अब मुनिजी के बचने की कोई आशा नही है। परलोक-सुधार के लिए उचित अन्तिम क्रियाए करा देना चाहिए।'

इस प्रकार सब का एक मत जानकर पूज्यश्री ने चार बजे दिन को तिविहार सथारा करा दिया। उसके बाद फिर अवस्था बिगडते देखकर चौविहार करा दिया। दूसरे दिन ग्यारह बजे मुनि श्रीहणुतमलजी महाराज ने स्वर्ग के लिए प्रस्थान कर दिया। आपकी परिणाम धारा अन्त तक निर्मल रही। पूज्यश्री पास मे बैठकर अन्त तक ससार की असारता, जीवन की क्षण भगुरता और धर्म की उपादेयता का उपदेश देते रहे।

गाव की जनता ने स्वर्गस्थ मुनिश्री की धर्म दृढता और कष्टसहिष्णुता की बडी प्रशसा की और विधिपूर्वक अंतिम सस्कार किया।

खुर्रमपुरा मे इस प्रकार कष्टमय काल व्यतीत करके पूज्यश्री ने वहा से विहार किया। लालचन्दजी महाराज के नजदीक शीघ्र पहुचना चाहते थे अत आप जल्दी-जल्दी विहार करने लगे। जिस गाव के समीप सूर्य अस्त होने को होता वही ठहरते। रास्ते के ग्रामो मे रूखा-सूखा थोडा-बहुत जो भी आहार-पानी मिलता उसी पर निर्वाह करते। इस प्रकार शीघ्रतापूर्वक विहार करते हुए पूज्यश्री बालसमद पधारे।

बालसमद मे ठहरने के लिए कोई स्थान नही मिला। अन्त मे पूछताछ करने पर एक धर्मशाला का पता चला। पूज्यश्री वहा पहुचे। धर्मशाला एक प्रकार से पशुशाला थी। इधर-उधर के [illegible] आते। अपने बैल उसमे बाध देते और आग तापते-तापते रात [illegible] देते। [illegible]

के कारण वहा वेहद डास-मच्छर और जवे थे। जहा-तहा गोवर और पेशाव भरा घास विखरा था। जो वहुतो का है वह किसी का भी नही है। ऐसी स्थिति मे धर्मशाला की सफाई कौन करता ? सार्वजनिक स्थानो को मैला-कुचेला करने की प्रवृत्ति शिष्ट भारतीय जनता मे भी पाई जाती है। फिर इस धर्मशाला मे तो अशिक्षित ग्रामीण और उनके पशु ही ठहरते थे। वहा सफाई का क्या काम ?

थोडी देर तक तो पूज्यश्री धर्मशाला मे बैठे रहे मगर रात्रि व्यतीत करना वहा असभव जान पडा। आपने मुनिश्री गणेशीलालजी म को दूसरे स्थान की खोज करने के लिए भेजा। मुनिश्री वहुत घूमे-फिरे मगर कोई उपयुक्त स्थान न मिला। अलवत्ता एक गृहस्थ के घर के वाहर का चवूतरा दिखाई दिया। चवतूरे का मालिक कही वाहर गया था। मुनिश्री ने घर मालिक की पुत्र-वधू से चवतूरे पर रात-विश्राम करने की आज्ञा मागी। वह आनाकानी करने लगी। वहा के लोगो की धारणा थी कि चोर और डाकू साधु के वेष मे फिरते है और मौका पाकर हाथ साफ करके चलते वनते है।

मुनिश्री ने उस वहिन को वहुत समझाया। कहा-हमारे गुरुजी वहुत वडे महात्मा है। वे अपने पास पैसा- टका कुछ नही रखते, वडे-वडे लखपति और करोडपति उनके चरणो मे गिरते है। वे अपने एक भक्त रोगी साधु को दर्शन देने के लिए उग्र विहार करते हुए दक्षिण की ओर जा रहे है। वहिन' तुम अपना अहोभाग्य समझो कि ऐसे महात्मा के दर्शन के लाभ का तुम्हे अवसर मिला है। रात भर विश्राम करके सुवह होते ही चले जाएगे। रात को धर्म की वाते, भजन और भगवत्कथा सुनाएगे। दिन भर चलते-चलते वहुत थक गये है। अव और कही नही जा सकते। मुनिश्री की इन वातो से उस वाई का दिल पसीज गया, किन्तु वह अपने ससुर से डरती थी। ससुर वडा क्रोधी था। उसने कहा-'महाराज' वे आने ही वाले है और आते ही तुम्हे उठा देगे। मेरी ओर से तो मनाई है नही।'

मुनिश्री गणेशीलालजी म ने कहा-'अच्छा वाई, कोई हर्ज नही। हम तुम्हारे ससुर को भी समझा लेगे।'

इस प्रकार उस वहिन की अनुमति पाकर चारो मुनि वहा ठहर गये। भण्डोपकरण उतारकर अभी वैठे ही थे कि घर-मालिक आ पहुचा। अपनी जगह मे साधुओ को वैठा देखते ही दूर से ही उसने अपशब्दो की वर्षा करनी आरम्भ कर दी। पास आकर वोला-देखो, अपना भला चाहते हो तो फौरन से पेश्तर अपना सामान उठाओ और लम्वे वनो। ठहरना है तो धर्मशाला मे जाओ। मेरा मकान धर्मशाला नही है। उठो जल्दी करो। वर्ना तुम्हारे यह सव पात्र वगैरह फोडकर टुकड-टुकड कर डालूगा।'

पूज्यश्री ने तथा मुनि श्रीगणेशीलालजी म ने उसे वहुत कुछ समझाने की चेष्टा की, मगर वह भलामानुस न समझा। सौ वातो का एक ही उत्तर उसके पास था- 'वस उठ जाओ, जल्दी करो। मै तुम्हे ठहरने दूगा तो मेरा मकान धर्मशाला वन जाएगा। सभी भिखमगे मेरे घर पर ही ठहरने लगेगे। मै ऐसा रिवाज नही डालना चाहता।

मुनिश्री की चर्या कितनी कठोर है' [illegible] की साधना करना दूध-वताशे का कोर नही है- तलवार की धार पर चलना है। ऐसी परिस्थिति का [illegible] मन मे [illegible] लेना वहुत वडा [illegible] है। प्रतिदिन का लगातार लम्वा विहार' सुवह से [illegible] तक पैदल चलना' [illegible] आहार तक न मिलना' और फिर यह व्यवहार' ठहरने [illegible] नही' [illegible] शरीर समर्पित करना' हे मुनि' [illegible]

अन्त मे पूज्यश्री अपने शिष्यो के साथ वहा से चल दिये और उसी धर्मशाला का आसरा लिया। धर्मशाला के पास तेली का एक घर था। सत उससे थोडा-सा सूखा घास माग लाये। वह नीचे बिछाया और किसी तरह रात काटी। पात काल घास वापस देकर वहा से विहार कर दिया।

विहार करके पूज्यश्री सेधवा पधारे। इसके बाद और भी उग्र विहार आरम्भ कर दिया और ग्यारह कोस चलकर एक चौकी मे ठहरे। रास्ते मे पाच गावो मे गोचरी करने पर भी सिर्फ डेढ रोटी, आधा सेर के करीब भुने चने और थोडी-सी खट्टी छाछ मिली। उसी पर निर्वाह करके पूज्यश्री आगे बढे।

खुर्रमपुरा पहुचने के बाद एक-दो दिन छोडकर कभी भरपेट आहार नही मिला था। थोडा-बहुत जो भी मिल जाता उसी पर चार साधुओ को गुजारा करना पडता। उग्र विहार के कारण भूख भी कडाके की लगती थी। फिर भी सब साधु प्रसन्न थे। बीकानेर और उदयपुर आदि स्थानो मे बडे-बडे रईसो और करोडपति सेठो द्वारा भक्ति-भाव पूर्वक वदना करते समय आपके हृदय मे जैसे भाव रहते थे, इस कष्टकर विहार के इस गाढे समय मे भी वैसे ही भाव थे।

जिनके उपदेश से हजारो भूखो को रोटी मिल जाय वे अपनी भूख की परवाह नही करते। दूसरो की भूख उन्हे जितना सताती है उतना अपनी भूख नही सताती। पूज्यश्री अथवा दूसरे किसी भी साधु को तनिक भी खेद नही हुआ और वे निरन्तर उग्र विहार करते रहे।

चौकी से विहार करके पूज्यश्री शीरपूर और वगाणी होते हुए माडल पधारे। उग्र विहार और अल्प आहार के कारण साधुओ का शरीर कुछ निर्बल-सा हो गया था मगर मन अधिक प्रबल बन गया था।

५-६ दिन माडल ठहर कर आपने विहार किया और धूलिया पहुचे। धूलिया मे पूज्यश्री को ज्वर हो आया, अत एक सप्ताह रुकना पडा। सात दिन मे पूज्यश्री का उपदेश सिर्फ डेढ घटा हो सका। इतने उपदेश से ही लोग बहुत प्रभावित हुए और कुछ दिनो ठहरने की प्रार्थना की। मगर पूज्यश्री को महाराष्ट्र पहुचने की जल्दी थी, अतएव स्वास्थ्य कुछ ठीक होते ही आपने घूलिया से विहार कर दिया।

लालचन्दजी महाराज का स्वर्गवास

मुनिश्री लालचन्दजी महाराज उस समय चारौली मे थे। पूज्यश्री धूलिया से विहार करके मालेगाव, मनमाड होते हुए राहोरी पहुचे। यहा से चारौली पधारने वाले थे, मगर राहोरी पहुचते ही आपको लालचन्दजी महाराज के स्वर्गवास का समाचार मिला। जिस भक्त की भावना पूरी करने के लिए अपने कई आवश्यक कार्य अधूरे छोडकर पूज्यश्री राजपूताना से रवाना हुए थे और मार्ग मे भयकर से भयकर कष्ट झेलते हुए, भूख-प्यास विसर कर थोडे ही समय मे आपने इतनी लम्बी यात्रा की थी, उस भक्त ने आपके पहुचने से पहले ही महायात्रा कर दी। भक्त के नेत्र अतृप्त ही रह गये। उन्होने अपने आराध्य के दर्शन न कर पाये। किन्तु उस आराध्य की क्या स्थिति हुई होगी जो सैकडो कष्ट उठाकर और सैकडो मील का लम्बा विहार करके भी अपने भक्त की अन्तिम अभिलाषा पूरी न कर सका। मनुष्य की यह विवशता देखकर पूज्यश्री को बडी विरक्ति हुई।

जिस प्रकार मानव-जीवन क्षणभगुर है उसी प्रकार विवश और पराधीन भी है। मनुष्य की ऐसी कोई योजना नही है जिसे वह पूरा करने का या उसका फल प्राप्त करने का दावा कर सकता हो। भागीरथ प्रयास करने पर भी ऐन मोके पर जरा-सी बात किसी भी योजना को सदा के लिए समाप्त कर देती है। विवशता की इस दुनिया मे रहकर मनुष्य किस बूते पर गर्व कर सकता है ? गर्व कर सकते है व जो विवशताओ को जीत चुके है। यह जीत आध्यात्मिक बल से ही प्राप्त होती है। अतएव मनुष्य जीवन का सबसे बडा और प्रधान उद्देश्य आध्यात्मिक बल प्राप्त करना ही होना चाहिए।

मुनिश्री लालचन्दजी महाराज के स्वर्गवास का समाचार मिलने से पूज्यश्री ने चारौली जाना स्थगित कर दिया। आपने यही से मालवा की ओर लौट जाने का इरादा किया। मगर अहमदनगर श्रीसघ का प्रतिनिधिमडल आपकी सेवा मे उपस्थित हुआ और अहमदनगर पधारने की प्रार्थना करने लगा। श्रीसघ के तीव्र आग्रह को आप टाल न सके और अहमदनगर पधारे। यहा महासती श्री रामकुवरजी महाराज के पास एक दीक्षा होने वाली थी। श्रीसघ के विशेष आग्रह से आपने दीक्षा-सम्मेलन तक ठहरना स्वीकार कर लिया।

उन दिनो अहमदनगर मे दुर्भिक्ष था। २२ फरवरी, १९२२ के 'जेन प्रकाश' मे जेनसमाज का उल्लेख करते हुए सम्पादक ने लिखा था-

'अहमदनगर जिला-वासियो की दुर्दशा जिन्हे देखनी हो वे वहा जाकर स्वय देखे, अथवा वहा के किसी नागरिक से दर्याफ्त करे, लेकिन इस ओर ध्यान अवश्य दे। जहा मनुष्य के लिए जीने की आशा, निराशा मे परिणत हो रही हो वहा पशुओ की दुर्दशा का क्या ठिकाना है ? हजारो मनुष्य विधर्मी हो रहे है। सैकडो ओसवाल वश के भूषण, होनहार बच्चे निराश्रित होकर इधर-उधर भटक रहे है। इस समय साधुमार्गी जेन समाज की ओर से एक भी सस्था नही जो निराश्रितो को आश्रय दे। यह अभाव बहुत खटकता है।

इस समय अहमदनगर के सुदैव से दयामयहृदय, विद्यानुरागी, मार्मिक प्रभावशाली वक्ता, पडित प्रकाड पूज्यश्री १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज साहब वहा विराज रहे है। अत अहमदनगर निवासी श्रावको को उचित है कि वे इस कमी को पूर्ण करने का प्रयत्न करे।'

पूज्यश्री ने उस समय बडे ही मार्मिक शब्दो मे दुर्भिक्ष का वर्णन करते हुए भूखो मरने वाले प्राणियो की रक्षा करने का उपदेश दिया। फल-स्वरूप सेठ मोतीलालजी मूथा सतारा-निवासी और श्री कुन्दनमलजी फिरोदिया, बी ए एल एल बी ने पीडित जनता की सेवा करने के लिए एक योजना तैयार की और कार्य आरभ कर दिया। इससे बहुत-से भाइयो को सहायता मिली।

अहमदनगर मे तेलकूड-निवासी श्रीभीमराजजी, पूज्यश्री के दर्शनार्थ आये। श्रीभीमराजजी बडे दयालु और धर्मात्मा थे। इसी कारण वह लोकप्रिय भी बहुत थे। न केवल गाव के वरन् उस प्रान्त के किसान, गरीब, अमीर सभी आपका आदर करते थे। वे अपनी आजीविका धर्म-पूर्वक ही करते थे। किसान, हजारो की कीमत के खेत आपके यहा गिरवी रखते थे किन्तु जब पूरी रकम अदा करने मे असमर्थ होकर, दुखी हृदय से आपके पास आते तो आपका दिल पिघल जाता था। उनके पास जो भी कुछ देने को होता, ले लेते और खेत उनका उन्हें दे देते। जब [illegible] कोई कुटुम्बी आपके इस व्यवहार

का विरोध करते और कहते कि पूरी रकम अदा न करने से तो खेत ही अपना हो जायगा, तो श्री भीमराजजी पेम के साथ उन्हें समझाते थे। कहते थे– इतने दिनो तक गिरवी रखे हुए इनके खेत का अन्न हम लोगो ने खाया है और अब खेत भी हजम कर जाना चाहते हो। बेचारे कितने दुखी है! अपने पुरुषार्थ से कमाओ। दूसरो को लूटकर पेट भरना महापाप है।

श्रीभीमराज का व्यवहार अगर इतना दयामय न होता तो वे एक बडे लखपति गिने जाते।

उन्होने पूज्यश्री से तेलकूड पधारने की विनम्र पार्थना की। पूज्यश्री अहमदनगर से विहार करके मीरी होते हुए वहा पधारे। वहा आप मारुति-मदिर मे विराजे थे। उसी दिन भीमराजजी अपने पन्नालालजी और चुन्नीलालजी नामक दो पुत्रो के साथ पूज्यश्री के दर्शनार्थ आये। पुत्रो ने विनोद मे कहा- पिताजी! आप कहते थे कि अगर पूज्यश्री यहा पधार जावे तो मै दीक्षा ले लू। अब आपका क्या विचार है?

भीमराजजी ने उत्तर दिया- 'मै तो अब भी तैयार बैठा हू। तुम्हारी और तुम्हारी माता की अनुमति मिलने की देरी है। अनुमति मिल जाय तो मै दीक्षा लेकर अपना जीवन सफल कर लू।'

सबकी अनुमति मिल गई और भीमराजजी ने दीक्षा लेने का निश्चय कर लिया। वे वयस्क पुरुष थे। यह पश्न खडा हुआ कि उनकी सेवा कौन करेगा? साधु, श्रावक से सेवा नही कराते। अत भीमराजजी के साधु हो जाने पर उनकी सेवा करने वाले को भी साधु हो जाना चाहिए। अतएव पश्न यह था कि उनके साथ दूसरा कौन साधु होता है? जब सब लोग इस सोच-विचार मे थे तब तक एक वीर बालक साहस के साथ आगे आ गया। उसने कहा- 'ताऊजी की सेवा मै करुगा। मै भी आपके ही साथ दीक्षा-अगीकार करुगा। आत्म कल्याण का और साथ ही सतसेवा का दोहरा लाभ मिलना बडे भाग्य की बात है।

बालक का यह उत्साह देखकर लोगो को आश्चर्य हुआ। वह बालक था- भीमराजजी का भतीजा। बालक का नाम-सिरेमल।

ससार के अनुभव से रहित एक बालक मे इस प्रकार की धर्मभावना होना असाधारण नही तो विरल घटना अवश्य है। ऐसी धर्मभावना माता-पिता के धार्मिक सस्कारो से आती है। जो माता-पिता अपने बालक को शरीर ही नही वरन् सुसस्कार भी प्रदान करते है उन्ही का गृहस्थ जीवन सार्थक होता है।

पूज्यश्री ने अपने एक पवचन मे कहा था-'बच्चों के सस्कार बचपन मे ही सुधारने चाहिए। बडे होने पर तो वह अपने आप सब बाते समझने लगेगे। मगर उनका झुकाव और उनकी प्रवृत्ति बचपन मे पडे हुए सस्कारो के ही अनुसार होगी। बचपन मे जिनके सस्कार नही सुधरे उनकी दशा यह है कि कोई भी अच्छी बात इस कान से सुनते और उस कान से निकाल देते है। इसके विपरीत सुसस्कारी पुरुष जो अच्छी और उपयोगी बात पाते है उसे ग्रहण कर लेते है। यह बचपन की शिक्षा का महत्त्व है।

माता-पिता सन्तान उत्पन्न करके छुटकारा नही पा जाते [illegible] किन्तु सन्तान उत्पन्न होने के साथ ही उनका उत्तरदायित्व आरभ होता है। शिक्षक के सुपुर्द करने से भी [illegible]

वालक के जीवन-निर्माण के लिए स्वय अपने जीवन को आदर्श वनाना चाहिए। सस्कार-सुधार की वहुत वडी जिम्मेदारी उन पर भी है। वालक को उत्पन्न कर देने से नही वरन् उसे सस्कारी वनाने से ही माता-पिता का कर्ज बालक पर चढता हे।'

'अच्छी और सदाचारी सतान उत्पन्न करने के लिए पहले माता-पिता को अच्छा और सदाचारी वनना चाहिए। वबूल के वृक्ष मे आम का फल नही लग सकता।'

पूज्यश्री के इन महत्त्वपूर्ण उद्‌गारो की प्रत्यक्ष साक्षी श्री सिरेमलजी ने उपस्थित की। आपकी यह धर्मभावना आपके परिवार की धर्मभावना का प्रतिविम्व था। भीमराजजी का सारा परिवार धर्म-प्रेमी था। श्री सिरेमलजी की माताजी पहले ही दीक्षित हो चुकी थी। कुटुम्व के किसी भी व्यक्ति का दीक्षा लेना उस कुटुम्व के सदस्य सोभाग्य की वात समझते थे। जिस समय की यह घटना हे उस समय सिरेमलजी की सगाई की तैयारिया हो रही थी। फिर भी उनके मार्ग मे कोई रुकावट नही डाली गई। उन्हे भी दीक्षा लेने की अुनमति मिल गई। इस परिवार से और भी अनेक पुरुपो एव स्त्रियो ने दीक्षा ली है। उनमे से सिरेमलजी म उच्चकोटि का ज्ञान प्राप्त करके इस सम्प्रदाय मे चमक रहे हे। समाज को आपसे वडी-वडी आशाए है।

तेलकुडगाव मे दो दिन ठहरकर और इन्ही दो दिनो मे दो भव्य पुरुपो को लोकोत्तर कल्याण का पथ प्रदर्शित करके पृज्यश्री कोकाना, हिवडा होते हुए वेलापुर पधारे।

श्री सिरेमलजी की सगाई के लिए जो सामग्री इकट्ठी की गई थी उसे वहिन-वेटियो मे वाटकर सिरेमलजी को अपने साथ लिये श्रीभीमराजजी वेलापुर आ पहुच ओर पूज्यश्री की सेवा मे रहकर साधु-प्रतिक्रमण सीखने लगे।

उसी समय अहमदनगर के मुख्य-मुख्य श्रावक पृज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुए और अपना नगर मे चातुर्मास करने की आग्रहपूर्ण प्रार्थना की। उधर जलगाव का श्रीसघ भी उपस्थित हुआ ओर उसने भी चोमासे की प्रार्थना की। हैदरावाद (दक्षिण) और तासगाव मे चोमासा करने की भी प्रार्थना की गई। सतारा निवासी सेट चन्दनमलजी मोतीलालजी मृथा ने सतारा मे चातुर्मास करने की प्रार्थना करते हुए कहा-'सतारे मे आज तक न तो कोई दीक्षा हुई है और न आपश्री का चोमासा ही हुआ। अतएव दोनो कार्य सतारे मे हो तो धर्म की वहुत प्रभावना होगी। अजैन जनता भी धर्म का महत्त्व समझने लगेगी।' यह सुनकर पूज्यश्री ने मृथाजी की प्रार्थना स्वीकार कर ली।

वेलापुर से विहार करके पूज्यश्री अहमदनगर पधारे। वहा मुनि श्रीघासीलालजी महाराज आपसे मिल गये। श्रावको ने चौमासे के लिए फिर प्रार्थना की मगर पूज्यश्री अव तो सतारे के लिए वचन दे चुके थे। फिर भी अहमदनगर सघ की प्रार्थना का खयाल करके मुनिश्री घासीलालजी महाराज और तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज को वहा चोमासा करने की आज्ञा फरमाई।

सतारा मे दीक्षा-समारोह

अहमदनगर से सतारा ९५ कोस दूर है। पूज्यश्री विहार करके वैशाख शुक्ला अष्टमी, गुरुवार का प्रात काल सतारा पधारे। आपके साथ [illegible] साधु थे। तपस्वीराज [illegible] मुनिश्री मोतीलालजी महाराज भी साथ थे।

सतारा के श्रावको और श्राविकाओ मे अपार हर्ष छा गया। पूज्यश्री ने जिस समय रतलाम से दक्षिण की ओर विहार किया था, उसी दिन से सतारा की जनता आशा लगाये वेठी थी। चातुर्मास की स्वीकृति से आशा फूल उठी और जब पूज्यश्री साक्षात् पधार गये तो आशा फलवती हो गई। अत सतारा के श्रीसघ को असीम हर्ष होना स्वाभाविक ही था।

दोनो वैरागी पूज्यश्री के सतारा पहुचने से २०-२५ दिन पहले ही वहा पहुच चुके थे। वे साधु-पतिक्रमण सीख रहे थे। पूज्यश्री के पधारने पर दोनो ने शीघ्र ही दीक्षा ग्रहण करने की इच्छा प्रकट की।

पूज्यश्री ने फरमाया-'पहले घरवालो की आज्ञा नियमानुसार लेनी होगी, फिर दीक्षा का दिन निश्चित किया जायगा।'

भीमराजजी ने कहा- हम घर से सब की सम्मति लेकर आये है, अब फिर आज्ञा प्राप्त करने की कोई आवश्यकता नही रही है। इसके अतिरिक्त अपने घर मे मै सव से बडा हू। मुझे आज्ञा कोन देगा ? रहा सिरेमल, सो वह जब लगभग ९ वर्ष का था, तव उसकी माता ने दीक्षा लेने से पहले मुझ से कहा था- 'मेरे बाद आप ही इसके मा-बाप है। इसका पालन करे और फिर किसी योग्य साधु के पास दीक्षा दिला दे। दीक्षा के लिए मेरी आज्ञा है।

उनका यह अतिम आदेश मुझे भली-भाति स्मरण है। माता की अभिलाषा पूर्ण करना मेरा कर्त्तव्य है। मेरे ऊपर उसका उत्तरदायित्व है। सिरेमल की अवस्था अव १२ वर्ष की हो गई हे। लडका वडा बुद्धिशाली हे। समयानुसार सब बाते समझता है। हम इसकी सगाई की तेयारी कर रहे थे मगर आपका पदार्पण हुआ और इसने सगाई करने से इकार कर दिया तथा दीक्षा लेने को तेयार हो गया। हमने कई बार पूछा कि तुम विवाह करोगे या दीक्षा लोगे ? यह अपने निश्चय पर अटल रहा ओर अत तक दीक्षा लेने के लिए ही कहता रहा है। इस प्रकार उसकी माता पहले ही आज्ञा दे चुकी है ओर सरक्षक की हेसियत से मे आज्ञा देने को तैयार हू। हम दोनो घरवालो की सहमति लेकर ही आये है। आपश्री भी यह जानते हे। फिर सदेह का क्या कारण है ?

अभिभावक अथवा घर वालो की स्वीकृति के बिना किसी को दीक्षा देना शास्त्रविरुद्ध हे। पूज्यश्री स्पष्ट रूप से लिखित आज्ञा-पत्र चाहते थे, ताकि शास्त्रीय मर्यादा का सम्यक् प्रकार से पालन हो।

इस प्रकार की बाते चल ही रही थी कि सिरेमलजी के वडे भाई श्रीदानमलजी सतारा आये। घर मे वही वडे थे। भीमराजजी ने श्रीसघ से कहा- अब आप पृछकर अपना सशय निवारण कर लीजिए।

श्री दानमलजी से श्रीसघ ने पूछताछ कर ली ओर दानमलजी ने स्वाकृति दे दी। स्वीकृति मिलने के दूसरे ही दिन दीक्षा का मुहूर्त्त निश्चय कर दिया गया। दानमलजी से लिखित आज्ञापत्र ले लिया गया। छपी हुई आमत्रण पत्रिकाए जगह-जगह भेज दी गईं। दीक्षा समारोह मे सम्मिलित होने के लिए दानमलजी अपने घरवालो को लाने के लिए गये और ले आये।

नियत समय पर जुलूस दीक्षास्थल पर पहुच गया। पूज्यश्री वहा पहले ही विराजमान थे। दोनो दीक्षार्थी के योग्य वस्त्र-पहनकर पूज्यश्री के चरण-कमलो मे उपस्थित हुए। पूज्यश्री ने साधु-जीवन [illegible] का और परीषहो का वर्णन करते हुए पूछा- क्या तुम इन [illegible]

ने दृढता ओर हर्प के साथ स्वीकृति प्रकट की। तव पूज्यश्री ने साधु-जीवन की प्रतिज्ञाए करवाई ओर केशलोच किया। वाद मे साधु के कर्त्तव्य विपय पर सुन्दर ओर सामयिक भापण किया। भगवान् महावीर ओर जैन-धर्म की जय की ध्वनि के साथ महोत्सव सम्पन्न हो गया। अन्त मे प्रभावना वितरण की गई।

इस महोत्सव मे माहेश्वरी भाइयो का तथा दूसरे सतारा-निवासियो का उत्साह प्रशसनीय था। ऐसा जान पडता था कि उत्सव केवल जैनो का नही, वरन् समस्त सतारा शहर का हे। पूज्यश्री की प्रभावशाली वक्तृत्व शैली ओर उनका शानदार व्यक्तित्व ही जैनेतर समाज के सम्मिलित होने का पधान कारण था।

दीक्षा-समारोह सम्पन्न होने के अनन्तर पूज्यश्री कराड होते हुए तासगाव पधारे। वहा से विविध स्थानो मे धर्म-प्रचार करते हुए फिर सतारा पधार गए।

इकतीसवां चातुर्मास (१९७९)

पूज्यश्री ने सात सन्तो के साथ वि स १९७९ का चातुर्मास सतारा मे किया। तपस्वी मुनिश्री मोतीलालजी महाराज की अवस्था अब पेसठ वर्ष की हो गई थी, फिर भी आपने लम्बी तपस्या की। पूर के दिन अभयदान आदि अनेक उपकार के कार्य हुए। मच्छीमारो का बाजार दो दिन बन्द रक्खा गया। वे पूज्यश्री का व्याख्यान सुनने आये। अमावस्या के दिन वे लोग पहले से ही जाल नही डालते थे, व्याख्यान सुनकर उन्होने ग्यारस को भी मछलिया मारने का त्याग कर दिया। कुछ ने तो जिदगी भर के लिए मछली मारना छोड दिया।

सतारा–चातुर्मास मे पूज्यश्री का व्याख्यान सुनने के लिए दादा करदीकर तथा राव साहव काले जैसे प्रतिष्ठित जैनेतर सज्जन भी उपस्थित होते थे। एक दिन राव सा ने सक्षिप्त भाषण करते हुए कहा– 'जिसमे पूज्यश्री सदृश विद्वान् और खरे सत हे वह समाज धन्य हे। ऐसे महापुरुप के दर्शन करके हम धन्य हो गए। हमारे पूर्व सचित पुण्य के प्रभाव से ही आप यहा पधारे है। अव तक हमारी दृष्टि मे जेनधर्म एक मामूली मत था, मगर पूज्यश्री के उपदेशो से उसका महत्त्व हमारी समझ मे आ गया है। अव हम मानते है कि जेनधर्म का आश्रय लेकर भी मनुष्य आत्म–विकास की चरम सीमा पर पहुच सकता हे।'

पर्युपण पर्व

सतारा मे पर्युपण पर्व वड समारोह के साथ मनाया गया। मारवाड, मेवाड, मालवा, गुजरात, नागपुर, महाराष्ट्र ओर काठियावाड आदि प्रान्तो क अनेक श्रावक ओर श्राविकाए पूज्यश्री के दर्शन के लिए तथा पूज्यश्री की सेवा मे रहकर पर्युपण की आराधना करन लिए आये थ। पर्व के समय पूज्यश्री लम्बे समय तक व्याख्यान फरमाते थ। पहले प मुनि श्रीगणशीलालजी म अपनी मधुर वाणी मे टीका सहित शास्त्र की व्याख्या करते थे और फिर पूज्यश्री का प्रवचन होता था। शास्त्र के आदेश और वर्तमान जीवन मे असामनस्य क्या दिखाई दे रहा है ? और इस दूर करने का उपाय क्या है ? इत्यादि विपयो पर पूज्यश्री वहुत ही मार्मिक विवेचन करत थ। जैन और जैनेतर श्रोता मत्र-मुग्ध होकर सुनते थे।

भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी अर्थात सवत्सरी के दिन पूज्यश्री का विद्यादान और अभयदान पर व्याख्यान हो रहा था। व्याख्यान भवन खचाखच भरा था। उसी समय सेठ मोतीलालजी मूथा ने श्री

चन्दनमलजी मूथा की स्मृति मे पन्द्रह हजार रुपयो के उदारतापूर्ण दान की घोषणा की। उसके उपयोग के सम्बन्ध मे स्पष्टीकरण करते हुए आपने कहा-'जब तक किसी उपयोगी सस्था की स्थापना नही हो जाती तब तक इस रकम का ब्याज विविध प्रकार के धार्मिक कार्यों मे खर्च किया जायगा। योग्य स्थान स्थापित होने पर सारी रकम उसे सौप दी जायगी।'आपने यह भी कहा-' कई दिनो से हम पूज्यश्री का उपदेश सुन रहे हे। मैं मानता हू कि उपदेश सुनकर हमे बडे से बडा त्याग करना चाहिए। मगर मेरा यह दान तुच्छ है। किन्तु पूज्यश्री के उपदेशो का हमारे हृदय मे अभी अकुर ही उगा है। हमारे भाग्योदय से तथा पूज्यश्री की कृपा से भावना का यह अकुर एक दिन अवश्य वृक्ष का रूप धारण करेगा और हम अपने जीवन मे शान्ति का अनुभव करेगे, ऐसी आशा है। हमारे पहले के पुण्य का ही यह प्रभाव है कि जिस बात की कल्पना करना भी दुस्साहस समझा जा सकता था वही आज प्रत्यक्ष हो चुकी है। पूज्यश्री ने सतारा मे चातुर्मास करने की कृपा की और सोने मे सुगन्ध के समान आप महानुभावो की चरणरज से हमारा नगर पवित्र हुआ है। हमारी आत्मा आज कृतकृत्य है। सत्य समझिए कि हमारे जीवन मे इससे बढकर हर्ष का विषय कोई दूसरा नही हुआ। पूज्यश्री के महान् उपकारो का बदला हम धन, जीवन और सर्वस्व अर्पण करके भी नही चुका सकते। पूज्यश्री को सतारा तक पहुचने मे अनेक कठोर परीषह सहने पडे है। आपने हमारे कल्याण के लिए ही सब कुछ सहन किया हे। हम उनके इस ऋण से किसी भी प्रकार मुक्त नही हो सकते। अन्त मे हम अपनी ओर से हुई अविनय आसातना के लिए पूज्यश्री से क्षमा-याचना करते है।

चातुर्मास का अन्तिम दृश्य

चातुर्मास समाप्त होने जा रहा था। पूज्यश्री अतिम व्याख्यान फरमा रहे थे। नगर के वडे-बडे विद्वान्, वकील तथा इतर जैन एव जैनतर श्रोताओ से व्याख्यान भवन भरा हुआ था। रीवा (मारवाड) के प्रतिष्ठित रईस सेठ मगनमलजी और श्री नौरतनमलजी भी उपस्थित थे। पहले मुनि श्री गणेशीलालजी महाराज का व्याख्यान हुआ। तत्पश्चात् पूज्यश्री ने एक कुल पुत्र का उदाहरण देते हुए 'मानव-कर्त्तव्य' की अत्यन्त सुन्दर और मार्मिक व्याख्या की। आज व्याख्यान भवन मे सर्वत्र विषाद की छाया स्पष्ट नजर आती थी। पूज्यश्री की आसन्न विदाई के विचार से जनता का हृदय गद्गद् हो रहा था।

सेठ मोतीलालजी मूथा भाषण करने के लिए खडे हुए। मगर उनका हृदय गद्गद् हो उठा। आखो से आसुओ की धारा बहने लगी। किसी प्रकार जी कडा करके उन्होने कहा- सतारा मे ऐसी कोई विशेषता नही थी जिससे कारण पूज्यश्री का पदार्पण यहा होता। किन्तु पूज्यश्री का यह महान् अनुग्रह है कि आपने हमारे को पावन किया। हमारे निर्गुण क्षेत्र मे ही पूज्यश्री ने गुणो की वर्षा करना उचित समझा। कहना चाहिए कि हमारी निर्गुणता ही पूज्यश्री को यहा खीच लाई। अतएव हमारी निर्गुणता भी आज सफल हो गई। पूज्यश्री का हमारे ऊपर महान् उपकार है। दूसरा उपकार मुनि श्रीभीमराजजी का तथा बालक मुनि श्रीसिरेमलजी का है, जिन्होने दीक्षा के लिए सतारा क्षेत्र चुना। तीसरा उपकार हमारे व्यवसाय बन्धु माहेश्वरियो का है जिनकी भक्ति से प्रेरित होकर पूज्यश्री ने सतारा मे चातुर्मास स्वीकार किया। ऐसा धार्मिक प्रसग मुझे अपने जीवन मे पहली ही बार देखने को मिला इत्यादि।

इसके बाद धर्मवीर सेठ दुर्लभजी भाई जौहरी ने संक्षिप्त भाषण करते हुए कहा- स्वर्गीय महाप्रतापी आदर्श क्रियावान पूज्यश्री १००८ श्रीलालजी महाराज के [illegible]

से पडितप्रवर पूज्यश्री १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज पार लगा रहे है, उसे देखते हुए हम श्रावको को भी चाहिए कि हम पूर्ववत् श्रद्धा, भक्ति और प्रीति रक्खे। हम देख रहे है कि उनके मुख से शब्द निकलना भी कठिन हो गया। कोमल हृदय भव्य प्राणियो के लिए ऐसा होना स्वाभाविक है। मगर वास्तव मे इतना दुखी होने की कोई वात नही है। पूज्यश्री सतारा से पधार रहे है, मगर सतारा को धर्ममय वनाकर पधार रहे है। लोह को सोना वनने के वाद पारसमणि विछुड ही जाती है। मुझे विश्वास है, जहा ऐसी धर्म-भावना है वहा धर्म की उन्नति अवश्य होगी।'

दूसरे दिन पूर्णिमा थी। चातुर्मास मे पूज्यश्री ने सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र की कथा सुनाई थी। आज कथा की पूर्णाहुति थी। धर्म और सत्य का पालन करने के लिए चाण्डाल के हाथ विक जाने वाले राजा हरिश्चन्द्र का चरित्र स्वभावत करुणापूर्ण है। जिस पर पूज्यश्री ने अपनी वाणी के चमत्कार से उसे और भी प्राणवान् वना दिया था। एक तो पूज्यश्री की विदाई का विषाद, दूसरे राजा हरिश्चन्द्र की करुण कथा! जनता की स्थिति विलक्षण हो गई। सभी श्रोता गद्‌गद् हो गये। सेठ मोतीलालजी के सक्षिप्त वक्तव्य के वाद सेठ मगनमलजी ने कहा- 'इस प्रकार का अतिशय और इस प्रकार की भक्ति मैने अन्यत्र कही नही देखी।'

मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपद् को पूज्यश्री का अतिम उपदेश हुआ। नगर के अनेक विद्वान् और प्रतिष्ठित पुरुष उपस्थित थे। आज फिर सेठ मोतीलालजी ने अपने सहयोगी व्राह्मण, माहेश्वरी, नाई आदि वन्धुओ का आभार माना और पूज्यश्री ने श्रोताओ को सान्त्वना देते हुए कहा- धर्मोपदेश देना मेरा कर्त्तव्य है। यदि आप इसे अपना उपकार मानते है, प्रत्युपकार की भावना रखते है तो मै आपसे एक ही वस्तु मागना चाहता हू और वह यह है कि मैने जो वाते आपको वतलाई है, उन्हे आप आचरण मे लाने का अभ्यास कीजिये। धर्म पर श्रद्धा रखिए। अहिंसा-धर्म को ही ससार के लिए हितकारक मानिए। सत्य तथा धर्म का उपदेश देते समय वहुत-सी कठोर प्रतीत होने वाली वाते कहनी पडती है, किन्तु उनमे एकान्त हितभावना रही हुई है। मेरी किसी भी वात से किसी का दिल दुखा हो तो मै क्षमा चाहता हू।'

इसके वाद सतारा के प्रसिद्ध वकील राव साहव सोमन ने पूज्यश्री का आभार माना और पूज्यश्री के सदुपदेशो को अमल मे लाने के लिए जनता को प्रेरणा की।

सतारा मे पूज्यश्री के चातुर्मास मे अनेक उपकार हुए। जैनेतर शिक्षित-अशिक्षित जनता की जैनधर्म के विषय मे जो मिथ्या धारणाए अर्से से चली आ रही थी वह सव सफा हो गई। लोगो को जैन-धर्म का सच्चा स्वरूप समझने का सुअवसर मिला। वहुत-से लोगो ने तरह-तरह का त्याग-प्रत्याख्यान किया। भाऊ पटेल नामक एक सज्जन ने आजीवन व्रह्मचर्य धारण किया। कइयो ने मास-मदिरा का परित्याग किया। पारस्परिक मैत्री, सदाचार, गुणो से प्रेम, प्रामाणिकता आदि मानवीय गुणो के विषय मे पूज्यश्री ने मार्मिक उपदेश दिया।

इस चातुर्मास मे वलुन्दा (मारवाड) निवासी श्रीमान सेठ गगाराम जी साहव मूथा तथा सेठ गिरधारीलाल जी साखला आदि वलुन्दा श्रीसघ के प्रमुख व्यक्ति वलुन्दा मे चातुर्मास करने की प्रार्थना करने उपस्थित हुए। मगर इतनी जल्दी पूज्यश्री कोई आश्वासनात्मक उत्तर न दे सके।

पूना की ओर प्रस्थान

सतारा का स्मरणीय चौमासा पूर्ण करके विचरते हुए पूज्यश्री पूना पधारे। आपकी ख्याति सम्पूर्ण दक्षिण पान्त मे पहले ही फैल चुकी थी। पूना मे भी बडी सख्या मे लोग आपके व्याख्यानो से लाभ उठाने लगे।

पूज्यश्री के उपदेशो से श्री जीवनलालजी नामक सद्गृहस्थ के वैराग्य की वृद्धि हुई। वह पहले से ही विरक्त थे। सयोग पाकर वैराग्य बढा और पैतीस वर्ष की अवस्था मे, अपने भनेज श्री रमणीकलाल को अपनी सम्पत्ति सभलाकर और कुछ शुभकार्य मे लगाकर आपने दीक्षा ग्रहण कर ली। आपके पास काफी सम्पत्ति थी। एक दूसरे भाई जवाहरमलजी भी उसी समय दीक्षित हुए।

पूना-श्रीसङ्घ ने उत्साह के साथ दीक्षा-महोत्सव मनाया। लगभग तीन हजार जनता उपस्थित थी। वाहर से आये सज्जनो का पूना-सङ्घ ने सुन्दर स्वागत किया।

इन दीक्षाओ मे एक विशेषता यह थी कि दोनो दीक्षाभिलाषियो ने तपस्या कर रखी थी। श्रीजीवनलाल जी ने चौविहार उपवास और जवाहरमलजी ने तेला किया था। दीक्षा ग्रहण करने के दूसरे दिन और चौथे दिन नवदीक्षित साधुओ का पारणा हुआ।

पूज्यश्री २१ दिन पूना मे धर्मोपदेश की वर्षा करते रहे। इस अर्से मे जैन और जैनेतर जनता पर धर्म का अच्छा प्रभाव पडा। धार्मिक कार्य करने के उद्देश्य से एक मडल स्थापित हुआ। पूना सङ्घ ने चातुर्मास के लिए अत्यन्त आग्रह किया, मगर पूज्यश्री ने स्वीकार नही किया।

बम्बई के श्रावको ने बम्बई मे चौमासा करने की प्रार्थना की। किन्तु बडा शहर होने के कारण वहा साधुओ को अनेक असुविधाए रहती है और सयम का सम्यक् प्रकार से पालन करना कठिन हो जाता है। यह सोचकर पूज्यश्री ने बम्बई मे चौमासा करना भी अस्वीकार कर दिया।

पूना से विहार करके पूज्यश्री खिडकी, चीचवड, चारोली, खेडगाव आदि स्थानो मे उपदेश-वर्षा करते हुए मचर पधारे। खेडगाव मे स्थानकवासी भाइयो की पच्चीस दुकाने थी, मगर धर्म की ओर किसी का विशेष ध्यान नही था। पूज्यश्री के पधारने से कम-से-कम चतुर्दशी को एकत्र होकर सामायिक करने की प्रतिज्ञा ली। यहा महासती श्रीसूरजकुवरजी म विराजमान थी, जो मुनिश्री श्रीमलजी म की ससारपक्ष की मातेश्वरी होती थी।

मचर मे पुन पूना-सङ्घ चातुर्मास की विनति करने उपस्थित हुआ। इधर मचर के भाई भी यही आग्रह करने लगे। मगर पूज्यश्री ने उस समय कुछ भी निश्चित उत्तर नही दिया।

मचर से विहार करके नारायणगाव, जुन्नेर होते हुए पूज्यश्री इगतपुरी पधारे। यहा दूर-दूर के लोग पूज्यश्री के दर्शनार्थ उपस्थित हुए। बम्बई-श्रीसङ्घ की ओर से यहा अग्रेसर सेठ मेघजी भाई थोभण जे पी , श्री अमृतलाल रायचद झवेरी, श्रीरतनचद झवेरी, माणकलाल भाई झवेरी आदि दस सज्जन घाटकोपर पधारने की प्रार्थना लेकर उपस्थित हुए। उन्होने कहा- घाटकोपर इगतपुरी से करीब ३५ कोस है। यह बम्बई का उपनगर है। वहा बम्बई जैसा कोलाहल और भीड-भाड नही है। वहा आपकी शान्ति भग नही होगी। भले ही इस समय आप चातुर्मास करने का वचन न दे मगर एक बार वहा पदार्पण करे। वहा पहुचने के पश्चात् जैसा उचित समझे कीजिएगा। यद्यपि यहा से घाटकोपर का रास्ता विकट

अवश्य है फिर भी आपके पधारने से वम्बई मे धर्म का बहुत प्रचार होगा। ववई की विशाल जैन जनता का भी असीम उपकार होगा। कृपाकर हमारी अभ्यर्थना स्वीकार कीजिए और कष्ट झेलकर भी एकबार अवश्य पधारिए।

पूज्यश्री ने एक बार घाटकोपर पधारने की स्वीकृति दे दी। कुछ दिनो पश्चात् नासिक होते हुए घाटकोपर पधार गये। वहा आपके उपदेश मे हजारो की भीड होना साधारण बात थी। तपस्वी मुनिश्री सुन्दरलालजी ने उस समय पद्रह दिन की तपस्या की। वम्बई श्रीसङ्घ मे अपूर्व उत्साह था। जब देखा कि पूज्यश्री को स्थान अनुकूल पड गया है और धर्म की खूब प्रभावना हो रही है तो श्रीसङ्घ ने चौमासे के लिए फिर प्रार्थना की। पूज्यश्री अब की बार भक्तो का आग्रह न टाल सके। आपने चातुर्मास स्वीकार कर लिया।

उन दिनो घाटकोपर मे 'प्रान्तीय राजद्वारी परिषद्' की चहलपहल थी। परिषद के सिलसिले- मे एक दिन जुलूस निकला, जिसमे तीन हजार व्यक्ति थे और सभी के हाथ मे राष्ट्रीय ध्वजा शोभायमान हो रही थी । वे सब पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुए और वदन करके शातिपूर्वक बैठ गये। पूज्यश्री ने राष्ट्रसेवा, मादक द्रव्य निषेध, मिल के वस्त्रो की अपवित्रता आदि कई विषयो पर धार्मिक दृष्टि से सक्षिप्त और प्रभावजनक भाषण दिया। उस समय सैकडो व्यक्तियो ने चाय-तमाखू आदि का त्याग किया और सैकडो ने चर्बी वाले वस्त्रो का परित्याग किया।

होली-चातुर्मास घाटकोपर मे व्यतीत करके पूज्यश्री माटुगा होते हुए दादर पधारे। दादर बहुत सकीर्ण और कोलाहलपूर्ण स्थान है। वहा की जनता ने पूज्यश्री से कुछ दिन और विराजने की प्रार्थना की। किन्तु आपने फरमाया- दादर जैसे स्थान सतो के लिए नही, व्यवसायी लोगो के लिए है। ऐसे अशान्ति और कोलाहल से परिपूर्ण स्थानो में साधुओ का चरित्र निर्मल नही रह सकता। साधुओ को एकान्त चाहिए, शान्त वातावरण चाहिए। उसी समय आपने श्रीमेघजी भाई को लक्ष्य करके कहा- 'मेघजी भाई! अगर आप साधुओ का सयम निर्मल चाहते हो तो ऐसे प्रवृत्तिमय और धमाल वाले स्थानो मे साधुओ को लाना उचित नही है।'

पूज्यश्री दादर मे सिर्फ दो दिन ठहरे और घाटकोपर लौट आये। यहा श्रीमहावीर जयन्ती पर भाषण देकर आपने विहार कर दिया। मुलून, थाना, पनवेल, उरण आदि स्थानो मे विचर कर चौमासा समीप आने पर आप फिर घाटकोपर पधार गये।

बत्तीसवां चातुर्मास (१९८०)

विक्रम सवत् १९८० का चौमासा पूज्यश्री ने घाटकोपर मे व्यतीत किया। इस चातुर्मास मे तपस्वी मुनि सुन्दरलालजी ने ८१ दिन की तपस्या धोवन-पानी के आधार पर की। इतने लम्बे उपवास का वृत्तान्त जानकर बडे-बडे डाक्टर और विद्वान लोग भी आश्चर्य करते थे। डाक्टरो का विश्वास था कि केवल पानी के आधार पर मनुष्य इतने दिनो तक जीवित नही रह सकता, मगर अपने विश्वास का प्रत्यक्ष खडन होते देखकर उनकी बुद्धि चकरा जाती थी। आखिर वे इस निर्णय पर पहुचे कि साधारण व्यक्ति से महात्माओ की शक्ति को तोलना उचित नही है। वास्तव मे आत्मबल का सामर्थ्य असीम है। जहा आत्मिक बल प्रबल होता है वहा दु साध्य कार्य भी सुसाध्य हो जाते है। पूज्यश्री ने आत्मबल के सम्बन्ध मे कहा है -

'आत्मबल मे अद्‌भुत शक्ति है। इस बात के सामने ससार का कोई भी बल नही टिक सकता। इसके विपरीत जिसमे आत्मबल का अभाव है वह अन्यान्य बलो का अवलम्ब करके भी कृतकार्य नही हो सकता।'

'आत्मबल सब बलो मे श्रेष्ठ है। यही नही वरन् यह कहना भी अनुचित न होगा कि आत्मबल ही एक मात्र सच्चा बल है। जिसे आत्मबल की उपलब्धि हो गई है उसे अन्य बल की आवश्यकता नही रहती।

'आत्मबल प्राप्त करने की क्रिया है तो सीधी-सादी, लेकिन क्रिया करने वाले का अन्त करण सच्चा होना चाहिए। वह क्रिया यह है कि अपना बल छोड दो अर्थात् अपने बल का जो अहकार तुम्हारे हृदय मे आसन जमाये बैठा है उस अहकार को निकाल बाहर करो। परमात्मा के शरण मे चले जाओ। परमात्मा से जो बल प्राप्त होगा वही आत्मबल होगा।'

'आत्मबली को प्रकृति स्वय सहायता पहुचाती है।'

आत्मबल के द्वारा महात्माओ को भी चकित कर देने वाली शक्ति प्राप्त होती है। ८१ दिन की इस तपस्या को देखकर जैन शास्त्रो मे वर्णित लम्बी तपस्याओ को अशक्यानुष्ठान समझने वाले बहुत-से लोग व्यवहार्य मानने लगे। बडे–बडे अगरेज भी तपस्वी जी को देखने आते थे। उपवास-चिकित्सा के एक डाक्टर साहब तो अकसर आपके स्वास्थ्य का चढाव उतार देखने के लिए आया करते। उन्हे अनायास ही अपने अनुभव की वृद्धि का साधन मिल गया।

तपस्या के अतिम दिन हजारो जैन–जैनेतर व्यक्तियो ने मिलकर तप–उत्सव मनाया। उस दिन आने–जाने वाले व्यक्तियो की इतनी भीड थी कि रेलवे को स्पेशियल गाडिया चलानी पडी। उसी दिन घाटकोपर पशुशाला के लिए चदा हुआ। दीर्घ तपस्या और पूज्यश्री की वाणी के प्रभाव से अजैन भाइयो ने भी हजारो का त्याग किया। पूज्यश्री के जीवदया के निमित्त करीब सवा लाख का चदा एकत्र हो गया। इसी अर्से मे जुन्नेर निवासी श्रावक मूलचदजी ने एक मास की तपस्या की।

जीवदया खाते की स्थापना

'मित्रो! दया का दर्शन करना हो तो गरीब और दुखी प्राणियों को देखो। देखो, न केवल नेत्रो से वरन् हृदय से देखो। उनकी विपदा को अपनी ही विपदा समझो और जैसे अपनी विपदा का निवारण करने के लिए चेष्टा करते हो वैसे ही उनकी विपदा निवारण करने के लिए यत्नशील बनो।'

घाटकोपर मे होली चातुर्मास व्यतीत करके जब पूज्यश्री ने दादर के लिये प्रस्थान किया तो रास्ते मे मास से भरे हुए टोकरे ले जाते हुए बहुत-से लोगो पर आपकी दृष्टि पडी। दर्याफ्त करने पर ज्ञात हुआ कि बादरा और कुटले के कसाईखानो मे जो पशु मारे जाते है उनका मास बेचने के लिए टोकरे वाले ले जाते है। उस समय बबई मे एक लाख चवालीस हजार गाए और भैसें प्रति वर्ष कटती थी।

बम्बई मे पशुओ को रखना महगा पडता है। अत दूध का व्यापार करने वाले घोसी अकसर यह करते है कि गाय-भैस जब तक काफी दूध देती है तब तक अपने पास रखते है और ज्योंही दूध तीन-चार सेर या इससे कम हुआ कि उसे कसाई को सौंप देते है। बम्बई नगर मे होने वाली इस भयानक हिंसा का हाल जानकर पूज्यश्री का हृदय दया से द्रवित हो गया। बम्बई के श्रावक पूज्यश्री का चौमासा

वहा कराना चाहते थे मगर पूज्यश्री ने चौमासा करना तो दूर, पाप के इस गढ मे पेर रखना भी उचित न समझा। जहा हत्या का इस प्रकार विकराल ताण्डव-नृत्य होता है, जहा पाप का राज्य है और निर्दयता का वास हे वहा सन्त पुरुषो को शान्ति नही मिल सकती। पूज्यश्री ने वम्वई मे प्रवेश तक नही किया। वे दादर से लोटकर घाटकोपर आ गये।

पूज्यश्री विचारने लगे–मनुष्य सृष्टि का राजा–इतना घोर स्वार्थी है! उसके विवेक और उसकी बुद्धि का क्या यही–सही उपयोग है! वह पशुओ का दूध पी जाता हे सो तो खेर, मगर समूचा पशुओ को ही इस प्रकार निगल जाता है! पेड मे जव फल न हो तो पेड को ही खा जाने वाला मनुष्य क्या बुद्धिमान कहा जा सकता है! यह स्वार्थपरायणता ओर मूर्खता जिसमे भरी हुई हे वह मनुष्य राक्षस से किस बात मे कम है ? इन बेचारे मूक पशुओ की रक्षा के लिये पूज्यश्री कुछ उपाय सोचने लगे। घाटकोपर चातुर्मास मे आपने जीवदया पर प्रभावशाली व्याख्यान दिये। अहिंसा धर्म का मार्मिक विवेचन करते हुए पशु हिंसा निवारण करने की प्रबल प्रेरणा की।

पूज्यश्री के उपदेश के प्रभाव से घाटकोपर मे 'घाटकोपर सार्वजनिक जीवदया मडल' नामक सस्था की स्थापना की गई। प्रारम्भ मे सस्था का रूप छोटा था किन्तु भावना विशाल थी। पूज्यश्री के उपदेशामृत से समय-समय पर सीची जाती रहने के कारण सस्था निरन्तर विकास करती रही और वडे परिणाम मे जीवो को वचाने मे समर्थ हो सकी। चोमासे के अन्त तक लगभग सवा लाख रुपया सस्था के पास एकत्र हो गये। वीस वर्ष मे इस सस्था ने ८००० से अधिक गायो ओर भेसो को कसाई के हाथो से वचा लिया। यह सस्था करीव २५ मन शुद्ध दूध सुबह ओर शाम जनता मे पहुचाती है। इस सस्था का दैनिक खर्च करीव ४००) रुपया हे। सस्था की पशुशाला मे ६०० पशुओ का पालन हो रहा हे। दूध देना बन्द कर देने पर पशुओ का पालन करने के लिए पनवेल, जलगाव, इगतपुरी तथा गोटी आदि कई स्थानो मे उसकी शाखाए खुल गई है।

पूज्यश्री गोपालन के विषय मे शास्त्रीय-मर्यादा के अनुसार वडा ही सुन्दर विवेचन किया करते थे। उनकी करुणाभावना मानव-समाज तक सीमित न होकर प्राणीमात्र तक गहरी पहुँच गई थी। एक प्रवचन मे आपने फरमाया था-

'शास्त्र मे लिखा है कि प्राचीन काल में श्रावक जितने करोड मोहरो का व्यापार करता, उतन ही गोकुल (दस हजार गाय) का पालन करता था। जिस समय भारत मे गोओ को ऐसा मान था उस समय भारत वेभवशाली क्यो न होता ? भारतवासी मानते हे कि गो ऋद्धि-सिद्धि देने वाली हे।

श्रीकृष्ण मूर्ख नही थे, दरिद्र नही थे। फिर उन्होने गोए क्यो चराई ? उनके गाये चराने का मर्म समझने की चिता किसे है ? एक कवि ने कहा है- गोवश की रक्षा करने के लिए ही कृष्ण ने अवतार धारण किया था। हाथ मे लकडी लेकर गोओ के साथ श्रीकृष्ण का जगल म जाना कितना मार्मिक व्यापार है ? पिजरापोल या गोशाला खोली जाती हे और चन्दा उगाकर उनका निर्वाह किया जाता है। यह उपाय कहा तक कारगर होगा ? इस प्रणाली से कव तक काम चलेगा ? गोरक्षा का असली ओर बुनियादी उपाय श्रीकृष्ण ने वतलाया है। वही सच्चा ओर टोस उपाय है।

आज लोगो को गोरक्षा के प्रति उपेक्षा हो गई है। इसी कारण ऋद्धि-सिद्धि देनेवाली गो भार रूप प्रतीत होती है। इस समय गोधन पर जितना सकट आ पडा है उतना पहले कभी नही आया था।

ऊपर कहा जा चुका है कि गौ ऋद्धि-सिद्धि देने वाली मानी जाती हे। महगाई के जमाने मे भी क्या यह कथन सत्य साबित होता है, इस पर जरा विचार कीजिए। मान लीजिए, एक अच्छी दुधारू गाय अभी सौ रुपये मे मिलती है। आप यह सौ रुपया गाय-खाते नाम लिख देगे। गाय अकसर दस महीना दूध देती है। इस समय मे आप उस पर दो सौ रुपया खर्च करेगे। इस प्रकार कुल तीन सौ रुपये खर्च हुए।

सौ रुपये की अच्छी गाय प्रात काल और सायकाल चार-चार सेर दूध कम-से-कम देगी। बाजार मे अच्छा दूध चार सेर का बिकता हो तो दस महीने मे कितने का दूध आपको मिलेगा। छह सौ रुपये का दूध आप प्राप्त कर सकते है अर्थात् तीन सौ रुपया खर्च करके आप छह सौ रुपया प्राप्त कर सकते हे।

दस मास के पश्चात् गाय दूध देना बद कर देगी, फिर भी उस पर कुछ खर्च करना होगा। मगर उसके बदले उसके वश की वृद्धि भी होगी। इसके अतिरिक्त जिनके यहा खेती होती हे उन्हे खर्च ओर भी कम पडता हे। इस प्रकार महगाई के जमाने मे भी गाय आर्थिक दृष्टि से लाभदायक है। कम-से-कम हानिकर तो नही ही है। गाय का गोबर ईधन के काम आता है। गाय का मूत्र वातावरण को ऐसा विशुद्ध रखता हे कि उसके प्रभाव से अनेक बीमारिया नही उत्पन्न होती। गो-मूत्र के गुण कस्तूरी से भी अधिक बतलाये जाते है। ऐसी आजकल के वैज्ञानिको की मान्यता है।'

' हिन्दू लोग भी किसी-न-किसी रूप मे गोवश के विनाश मे सहायक हो रहे हे। उदाहरण के लिए वस्त्रो को लीजिए। गाय की चर्वी वाले वस्त्र बडे शौक से पहने जाते हे। क्या गाय की हत्या किये विना चर्वी निकाली जाती है ? चर्बी के लिए बडी क्रूरता से गायो को कत्ल किया जाता हे और उन चर्बी वाले वस्त्रो को पहनकर लोग कहते हे- 'हम गोभक्त है। गाय हमारी माता हे।' धन्य है ऐसे मातृभक्त सपूतो को।

पर यह न समझ बैठना कि इससे गायो की ही हानि हुई है। इस पद्धति से जहा गोवश को हानि पहुची ह वहा मानववश को भी काफी हानि उठानी पडी हे और पड रही है। दूध मर्त्यलोक का अमृत कहलाता है। उसकी आजकल वेहद कमी हो गई हे। परिणाम यह है कि लोगो मे निर्वलता और निर्वलताजन्य हजारो रोग आ घुसे है। इसके अतिरिक्त तामसिक भोजन पेट मे जाता हे, जिससे सतोगुण का नाश होता जा रहा है।'

पूज्यश्री के उक्त कथन मे चेतावनी है, मार्ग-प्रदर्शन हे। कहते है- सिर्फ वम्वई मे एक हजार मे से करीव ६८५ नवजात शिशु काल का ग्रास वन जाते है। इसका प्रधान कारण शुद्ध दूध न मिलना ह।

एकता की विज्ञप्ति

श्री श्वे स्थानकवासी जेन सकल श्रीसघ वम्वई की ओर से श्रीसघ के प्रमुख सेठ मेघजी भाई थोभण को पृज्यश्री ने अपनी ओर से यह वक्तव्य प्रकट करने की अनुमति दी थी -

पत्येक समाज अपनी-अपनी स्थिति को सुधारकार आगे वढने का प्रयत्न कर रहा है। साधुमार्गी समाज मे सैकडो की सख्या मे पाच महाव्रत-धारी साधुओ के होते हुए भी समाज की अवनति हो रही है। हम साधुओ पर भी इसका वडा उत्तरदायित्व है। अत मै अपना कर्तव्य समझकर श्रीसघ को [illegible]

करता हू कि सव समाज ओर सम्प्रदाय परस्पर प्रेमभाव रक्खे।परस्पर निन्दात्मक लेख, हैडविल, पुस्तक वगेरह किसी प्रकार का छापा न छपावे।

हम अपनी तरफ से प्रतिज्ञापूर्वक आज्ञा करते है कि हमारी आज्ञा मे चलने वाले सङ्घ मे किसी भी तरह का निन्दाजनक लेख, जिससे दूसरे का दिल दुखे, नही छापा जाय। दूसरे पक्ष वाले यदि इस प्रकार के लेखादि छपावे तो भी इस सम्प्रदाय के सङ्घ की तरफ से प्रत्युत्तर के रूप मे कुछ भी न छपेगा। किसी दूसरे से छपवाकर कह देना कि हमने नही छपाया, यह मायामृषावाद है। सत्य को आदरणीय समझ कर इसे भी स्थान नही दिया जाएगा। यदि कोई व्यक्ति साधुओ पर झूठा कलक लगायेगा तो योग्य मध्यस्थो द्वारा खुलासा करने मे कोई आपत्ति नही है।

स्वर्गीय पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज ओर मेरे यश को जो सङ्घ चाहता है उसे निन्दाजनक किसी प्रकार का लेख नही छपाना चाहिए। हमे पूर्ण विश्वास है कि मेरी ओर स्वर्गीय पूज्यश्री की कीर्त्ति चाहने वाले भक्त उपर्युक्त आज्ञा को भग न करेगे।

कार्तिक शुक्ला सप्तमी को छोटी सादडी (मेवाड) निवासी श्रीकेसरीमलजी सिघी ने बडे वैराग्य से दीक्षा ली। आपने दीक्षा के लिए उत्सव और जुलूस आदि भी नही निकलने दिये।

सादगी के साथ दीक्षा सम्पन्न हुई। आगे चलकर आप भी घोर तपस्वी हुए।

एक दिन घाटकोपर के सव गोवाल पूज्यश्री का व्याख्यान सुनने आये।उपदेश से प्रभावित होकर उन्होने यह प्रतिज्ञा की कि यदि पशुशाला से हमे रुपये के चार आने भी मिल जाये तो हम कसाइयो के हाथ पशु नही वेचेगे।

पूज्यश्री प्राय व्यापक धर्म पर ही प्रवचन करते थे।प्रवचन सार्वजनिक होने से सभी सम्प्रदाया के जैन और जैनेतर वधु तथा देश नेता भी आया करते थे। श्रीमती कस्तूरवा गाधी जव पूज्यश्री के दर्शन के लिए आई तो उनका प्रत्यक्ष आदर्श उपस्थित करते हुए पूज्यश्री ने महिला समाज को खादी और सादगी का उपदेश दिया। वहुत-सी वहिनो ने जीवन-पर्यंत खादी के अतिरिक्त और कोई वस्त्र न धारण करने की प्रतिज्ञा ली।पूज्यश्री ने वा से भी कुछ वोलने के लिए कहा। वे वोली- 'मै आज अपना अहोभाग्य समझती हू कि पूज्यश्री के दर्शन हुए। मै जिस उद्देश्य से आई थी वह पूरा हो गया। मुझे अव वोलने की आवश्यकता नही रही। पूज्यश्री ने मेरा मतव्य पूरा कर दिया है।'

केन्द्रीय धारासभा के प्रेसीडेंट श्रीयुत विट्ठल भाई पटल भी एक वार पूज्यश्री के दर्शनार्थ आय। पूज्यश्री के व्यापक और उच्च विचारो से, उनके तप और त्याग स तथा वक्तृत्वशक्ति स व वहुत प्रभावित हुए। प्रसिद्ध विद्वान प लालन अनेक वार पूज्यश्री के उपदेश सुनन आये। पूज्यश्री के व्याख्यान सुनकर वे वहुत प्रसन्न हुए। मुक्त कट से व्याख्यानो की प्रशसा की। इस चातुर्मास मे श्री मेघजी भाई, श्री अमृतलाल रायचन्द झवेरी, जगजीवनदयाल भाई, मोहनलाल चन्दूलाल भाई, रतनचन्द भाई आदि भाइयो न वहुत उत्साह दिखलाया।

विहार और प्रचार

घाटकोपर का महत्त्वपूर्ण चातुर्मास समाप्त होन पर पूज्यश्री विहार करके माटुगा पधारे। उस समय पूज्यश्री के उपदेशो का मुख्य विषय जीवदया प्रचार हो गया था। [illegible]

उत्तम कार्य हुए। माटुगा से मुलून, थाना आदि मे धर्मोपदेश करते हुए आप इगलपुरी पधारे। यहा बम्बई के बहुत-से श्रावक आपके दर्शनार्थ आये। उस समय वहा के दयालु श्रावको ने घाटकोपर की सस्था से सबध रखने वाली जीवदया सस्थाए स्थापित की। घोटी मे भी एक ऐसी सस्था स्थापित हुई।

अस्पृश्यता

नासिक मे श्री मेघजी भाई थोभण जे पी पूज्यश्री के दर्शन करने आये। पूज्यश्री ने अछूतोद्धार के विषय मे अत्यन्त पभावशाली प्रवचन किया। अछूतोद्धार आपका प्रिय विषय रहा है। इस विषय पर आपने सैकडो मार्मिक और प्रभावक प्रवचन किये है। इस विषय मे आप कहा करते थे-

'धर्मभावना का तकाजा है कि मनुष्य मात्र को भाई समझा जाय। प्रत्येक मनुष्य प्रत्येक मनुष्य का बधु है। बधु का अर्थ सहायक है। इस प्रकार शूद्र आपके सहायक है और आप शूद्रो के सहायक है। चमार ने जूता बनाया और आपको पहना दिया। क्या यह आपकी सहायता नही है ? भगी ने आपका पाखाना साफ किया, आपकी नाली स्वच्छ की और आपको बदबू एव बीमारियो से बचा दिया। क्या भगी ने आपकी मदद नही की ? क्या आपकी सहायता का पुरस्कार यह होना चाहिए कि वह नीच गिना जाय ? सफाई करके भयकर बीमारियो की सम्भावना को दूर कर देने वाले मेहतर को नीच गिनना क्या कृतज्ञता की भावना के अनुकूल है ? मानव-समाज का असीम उपकार करने वाले वर्ग को अस्पृश्य, घृणास्पद या नीच समझने वाले लोग अपने को जब उच्च वर्ग का कहते है तो समझ मे नही आता कि उच्चता का अर्थ क्या है ? क्या उच्चता का अर्थ कृतघ्नता है ?

याद रक्खो यह नीच कहलाने वाले हिन्दू समाज के प्यारे लाल हैं। इन्हे धिक्कार मत दो। इनका अपमान मत करो। इनके प्रति कृतज्ञता प्रदर्शित करो। इन पर दया करो। इनके साथ स्नेह पूर्ण व्यवहार करो।'

'शूद्र आपके समाज की नींव है। महल का आधार नीव है। नीव मे अस्थिरता आ जाने से महल स्थिर नही रह सकता। अगर तुमने शूद्रो को अस्थिर कर दिया- विचलित कर दिया तो तुम्हारे समाज की नीव हिल उठेगी। तुम्हारी सस्कृति धूल मे मिल जायगी।'

'अत्यजो के विषय मे तनिक विचार कीजिए। वह आपकी अशुचि उठाते है तथा दूसरे सफाई के काम करते है। फिर भी आप उनसे घृणा करते है। आपकी अशुचि दूर करके स्वच्छता रखना क्या उनका इतना बडा अपराध है ? एक आदमी यहा अशुचि बिखेरता है और दूसरा उसे साफ कर डालता है तो आप दोनो मे से किसे अच्छा समझेगे ? आपकी अन्तरात्मा की सच्ची ध्वनि क्या होगी ? यदि साफ करने वाले को अच्छा समझेगे तो पाखानो मे अशुचि फैलाने वाले अच्छे है या उनकी सफाई करने वाले ? क्यो आप सफाई करने वाले से घृणा करते है ?

अन्त्यजो के पति दुर्व्यवहार करके आप धर्म का उल्लघन करते हे, मनुष्यता का अपमान करते है देश और जाति को दुर्बल बनाते है, अपनी शक्ति को क्षीण करते हे और अपनी ही आत्मा को गिराते है ?

इस पकार पूज्यश्री अस्पृश्यता के विरोध मे अकसर पवचन करते थे। आपके यह प्रवचन आधुनिक साहित्य की शोभा है और प्राचीन धर्मशास्त्रो का निचोड है। जनता आपके प्रवचन सुनकर

वडी प्रभावित होती थी। नासिक मे आपका प्रवचन श्रवण कर जनता ने अछूतो के साथ घृणापूर्ण व्यवहार न करने का आश्वासन दिया।

नासिक से आप पालखेड पधारे। यहा दशहरे के दिनो मे देवी के सामने भैसा मारा जाता था। पूज्यश्री के उपदेश से यह अमानुषिक प्रथा बन्द हो गई।

ब्याजखोरी का निवारण

पालखेड से विहार करके पूज्यश्री नान्दुर्डी पधारे। वहा लगभग १८०० की आवादी थी। जैन श्रावको का प्रधान धन्धा सूद लेना था। कडा ब्याज लेने के कारण वहा की जनता श्रावको के प्रति सतुष्ट नही थी। पूज्यश्री स्वय अकिचन अनगार थे और अपरिग्रह के समर्थ ओर अधिकारी समर्थक थे। आपके शब्द कितने सजीव है-

'तुम समझते हो हमने धन को तिजोरी मे केद कर लिया है, पर धन समझता हे कि हमने इतने वडे धनी को अपना पहरेदार मुकर्रर कर लिया हे।

तुम अपनी कृपणता के कारण धन का व्यय नही कर सकते पर धन तुम्हारे प्राणो का भी व्यय कर सकता है।

तुम धन को चाहे जितना प्रेम करो, प्राणो से भी अधिक रक्षा करो, उसके लिए भले ही अपनी जान दे दो, लेकिन धन अन्त मे तुम्हारा नही रहेगा- नही रहेगा। वह दूसरो का वन जायगा।

तुम धन का त्याग न करोगे तो धन तुम्हारा त्याग कर देगा। यह सत्य इतना स्पष्ट ओर ध्रुव हे कि इसमें लेशमात्र भी सन्देह नही किया जा सकता। ऐसी स्थिति मे विवेकवान् होते हुए भी इतने पामर क्यो वने जा रहे हो ? तुम्ही त्याग की पहल क्यो नही करते ? क्या स्वत्व के धागे को तोडकर फेक नही देते ?'

'पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज ने एक बार कहा था-ऐ धनिको! सावधान रहो। अपने धन मे से गरीबो को हिस्सा देकर उन्हे शान्त न करोगे, उनका आदर न करोगे, उनकी सेवा न करोगे तो साम्यवाद फैले विना न रहेगा। सामाजिक स्थिति इतनी विषम हो जायगी कि गरीब लोग धनवानो के गले काटेगे। उस समय हाय-हाय मच जायगी।'

नान्दुर्डी मे आपका प्रवचन हुआ। अन्य जातियो के श्रोता भी उपस्थित होते थे। पूज्यश्री ने एक दिन दशहरा आदि अवसरो पर होनेवाली हिंसा के निषेध का उपदेश दिया। अन्य जातीय लोगो ने कहा 'महाराज! हम लोग भैसा मारते है मगर यह साहूकार लोग सूद ले-लेकर हम मनुष्यो को मारते है। अगर ये लोग अपनी करतूतो से वाज आवे तो हम भी भैसा मारने का त्याग करने के लिए तैयार है।'

इस प्रकार के उपदेश से वहा के साहूकारो ने भी अनुचित और अन्याय-पूर्ण ब्याज लेने का त्याग कर दिया। दूसरी जाति वालो ने हिंसा का त्याग कर दिया। इस प्रकार पूज्यश्री के प्रभाव से दोहरा लाभ हुआ और गाव मे पारस्परिक प्रेम का एक नवीन वातावरण उत्पन्न हो गया। वहा के जैन और जैनेतर सभी व्यक्तियो ने नीचे लिखी व्यवस्था की –

नान्दुर्डी

२५-२-२४

मिति माघ वदी ५ शके १८४५ कथितोद्गारी नाम सवत्सरे ता २५-२-२४ के दिन नान्दुर्डी निवासी नीचे हस्ताक्षर करनेवाले मनुष्य, श्री पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज के सम्मुख आगे लिखे मुताबिक बातो का ठहराव करते है-

(१) अब से आगे जो हिसाब होगे या कर्ज लिया जायगा, उसमे मारवाडी लोगो ने १) रु प्रति सैकडा या इससे कम ब्याज लेना।

(२) किसान या ऋण लेनेवाला ब्याज तथा मुद्दत की अदायगी का ठीक-ठीक ध्यान रखे।

(३) चक्रवृद्धि ब्याज (पुलतो ब्याज) कभी न जोडा जाय।

(४) यदि किसान और साहूकार के बीच मे झगडा पैदा हो जाय, तो उसका फैसला गाव के पच करेगे।

(५) यदि किसान को पचो का फैसला मान्य न हो अर्थात् वह पचो की बताई रीति से रुपया अदा न करे, तो साहूकार को अदालत मे नालिश करने की स्वतत्रता होगी।

(६) जैनेतर मण्डली इससे आगे दशहरे पर भैसा नही मारेगी। इसके अतिरिक्त अन्य दिनो मे भी हिंसा करने की हमने आज दिन से बदी कर दी है।

''शस्त्र से जिस प्रकार हिंसा होती है, उसी प्रकार ही लोगो के पास से अधिक ब्याज वसूल करने अथवा अन्याय पूर्वक दूसरे की सपत्ति हजम करने से किसानो के गले कटते है। ऐसी दशा मे बेचारे किसान के स्त्री-बच्चे मारे-मारे फिरते है।'' यह बात जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज के उपदश से हम लोगो की समझ मे आ गई। अत जैन धर्म की पवित्र आज्ञा का अनुसरण करके हम नादुर्डी निवासी जेन धर्मावलम्वी लोग आज से अधिक ब्याज लेने, अधिक नफा लेने, अथवा अन्याय पूर्वक दूसरे की सम्पत्ति को हजम करने के दुष्कृत्यो को अपनी इच्छा से छोडते है।

इसी प्रकार हम जैनेतर लोग यह प्रतिज्ञा करते है कि साहूकारो की मुद्दत रकम और ब्याज, खेती के नियमो के अनुसार ठीक टाइम पर अदा करते रहेगे।

(७) यदि कोई साहूकार अपनी आसामी को अनाज दे, तो बाजार भाव से १) रु प्रति मन अधिक का भाव लगाकर उससे चिट्ठी लिखा ले और उचित रीति से ब्याज लगावे।

(८) हर चीज की वसूली की रसीद देना आवश्यक है।

(९) अब से आगे के तथा पीछे के जो हिसाब हो, उन सबमे यही नियम लगाया जावे। इससे अधिक अनाज पर बटती का धान्य वसूल नही किया जावे।

यह ठहराव जैन व जैनेतर (ब्राह्मण, मराठे, कोली, चमार, महार वगैरह) सब लोगो को स्वीकार है। इति।

गाव के आदमियो के हस्ताक्षर

नान्दुर्डी के एक भाई शोभाचन्द्रजी ने रुपयो की वसूली के लिए अदालत मे नालिश करने का सर्वथा त्याग कर दिया। इस उदारतापूर्ण त्याग के परिणामस्वरूप वे किसी प्रकार के घाटे मे भी नही रहे। अदालतबाज साहूकारो के रुपये चाहे न पटे मगर इन भाई की वसूली पाई-पाई हुई। इनकी उदारता ने किसानो का हृदय जीत लिया था।

नान्दुर्डी से विहार करके पूज्यश्री निफाड नेताल, लासनगाव होते हुए मनमाड पधारे। यहा भी वडी सख्या मे लोग व्याख्यान सुनने आते थे। अनेक धार्मिक कार्य हुए। यहा से विहार करके निआल डूगरी पधारे। गाव के अस्पृश्य व्याख्यान सुनने आए और उन्होने मास एव मदिरा का त्याग किया। वहुत से मुसलमान भाइयो ने भी मास-भक्षण एव जीव-हिंसा का त्याग कर दिया।

पूज्यश्री जब निआल डूगरी आदि गावो मे विचरते थे उस समय श्रावको द्वारा जो कठोर व्याज किसान आदि गरीब जनता से वसूल किया जाता था, उसकी कहानी जब पूज्यश्री ने सुनी तब उन्हे वहुत दु ख हुआ, अपने व्याख्यान मे इस प्रकार के धनोपार्जन के निर्दय अत्याचार का पूज्यश्री व्यावहारिक व धार्मिक दृष्टि सामने रखकर असरकारक उपदेश देते थे। वे कहते-अगर इसी प्रकार पठानी व्याज वसूल करने वाले श्रावको के यहा से मै भिक्षा ग्रहण करू तो मेरे ऊपर व मेरे उपदेश का आप पर क्या असर पड सकता है। उसी समय से पूज्यश्री अग मेहनत करने वालो के घर से ही अपने लिए भिक्षा मगवाते थे।

निआल डूगरी से विहार करके पूज्यश्री चालीसगाव, वागली, पाचोरा और खेडगाव होते हुए जलगाव पधारे। मार्ग मे छोटे-छोटे अनेक गावो मे जीव-दया का उपदेश किया तथा लोगो को कसाई के हाथ पशु वेचने का त्याग करवाया। जलगाव से विहार करके हिंगोणे, धारणगाव, अमलनेर होते हुए फिर धारणगाव पधारे। यहा अछूतो ने मास एव मदिरा का त्याग किया।

धारणगाव से विहार करके पूज्यश्री हिंगोणे पधारे। यहा के निवासियो ने आपके उपदेश से मास मदिरा एव जीव-हिंसा का त्याग किया।

पचो ने इकट्ठे होकर नीचे लिखे अनुसार व्यवस्था-पत्र लिखा-

श्री:

इस ठहराव के अनुसार व्यवहार न करने वाले अर्थात् मदिरा, मास आदि का सेवन करने वाले की बात का यदि कोई मनुष्य अनुमोदन करेगा, तो वह भी दण्ड का भागी होगा। यह लेख हम सार्वजनिक पञ्चो ने राजी खुशी लिखा है। तारीख मजकूर

गाववालो के हस्ताक्षर तथा अगूठे की निशानिया

यहा से विहार करके विभिन्न स्थानो पर विविध पकार का उपकार करते हुए आषाढ बदी नवमी को चौदह ठाणो के जलगाव पधारे। आषाढ वदी ११ को सुबह साढे नौ बजे पण्डित मुनि श्री घासीलालजी महाराज भी पधार गए। आषाढ बदी १० को महासतीजी श्रीरामकुवरजी महाराज भी ठाणा ७ से पधार गई। साधु और साध्वी मिलाकर कुल २४ ठाणो के विराजने से धर्म का ठाठ रहने लगा। पूज्यश्री तथा विद्वान् सतो के विराजने से धर्म का प्रद्योत होने लगा।

तेतीसवां चातुर्मास (सं. १९८१)

जलगाव के पसिद्ध सेठ लक्ष्मणदासजी श्री श्रीमाल पूज्यश्री के अत्यन्त भक्त श्रावको मे से हे। लम्बे अर्से से आपकी उत्कठा थी कि पूज्य श्री जलगाव में पदार्पण करे और धर्म सेवा का सुअवसर प्राप्त हो। सेठजी की इच्छा इस बार फलवती हुई। पूज्यश्री जलगाव पधारे। सघ मे अपूर्व उत्साह ओर आनन्द की लहर दौड गई। नर-नारियो ने बडे ही चाव और भाव से पूज्यश्री का स्वागत किया।

पूज्यश्री ने ७ ठाणो से चातुर्मास किया। महासती श्रीरामकुवरजी म का चातुर्मास भी ठा ७ से वही हुआ। व्याख्यान मे जैन और जैनेतर श्रोताओ की बडी भीड रहने लगी। डाक्टर, वकील, शिक्षक आदि सभी श्रेणियो के सस्कारी व्यक्ति आपका उपदेश सुनने आते थे।

इस चातुर्मास मे मुनि श्रीछगनलालजी महाराज ने तथा मुनि श्रीकेसरीमलजी म ने इक्कीस-इक्कीस दिन की तपस्या की। मुनिश्री जिनदासजी ने तेले-तेले का पारणा तथा प्रतिदिन धूप मे आतापना लेना आरम्भ किया। कुछ दिनो बाद आप पाच-पाच उपवासो के पश्चात् पारणा करने लगे। अन्य मुनियो ने भी फुटकर तपस्या की। तपस्या के प्रभाव से जनता भी धार्मिक कार्यो मे खूब रस लेने लगी।

पूज्यश्री के दर्शनार्थ सेठ जमनालालजी बजाज, आचार्य विनोबा भावे तथा सेठ पूनमचन्दजी राका उपस्थित हुए। श्री विनोबा भावे से पूज्यश्री ने उपनिषदो के सबध मे वार्त्तालाप किया। तत्त्व-चर्चा का मधुर रस आस्वादन करने के लिए श्री विनोबा तीन-चार दिन पूज्यश्री के साथ रहे।

पूज्यश्री जब चातुर्मास करने के निमित्त जलगाव पधारे थे तभी वहा के भगीरथ मिल मे मिल-मालिक ओर मजदूरो ने आपका भाषण सुना था। उस समय पूज्यश्री ने मजदूरो की दुर्दशा का मार्मिक चित्र खीचते हुए मिल-मालिको का कर्त्तव्य बतलाया था। आपने फरमाया था कि जो मजदूर जनता को कपडे देते है वही स्वय नगे फिरते हे। जिनकी कमाई से मिल-मालिक गुलछर्रे उडा रहे है। उनके बाल-बच्चो को भरपेट समुचित भोजन तक नही नसीब होता। यह स्थिति कब तक कायम रह सकेगी।

पूज्यश्री ने मदिरा-पान, तमाखू-सेवन आदि से होने वाली भयकर हानियो का दिग्दर्शन कराते हुए मजदूरो को भी इनके त्याग का सुन्दर उपदेश दिया था। तब से मजदूर भी समय पाकर पूज्यश्री के उपदेश सुनने आया करते थे।

रोग का आक्रमण

आषाढ़ की अमावस्या के आसपास पूज्यश्री की हथेली में अचानक दर्द होने लगा। दो-चार दिन बाद एक छोटी-सी फुन्सी निकल आई और पीड़ा बहुत बढ़ गई। पूज्यश्री ने तथा अन्य साधुओं ने उसे साधारण फुन्सी समझकर सोचा-पीव निकलने से वेदना शान्त हो जायगी और फुन्सी भी साफ हो जायगी। यह सोचकर मुनियों ने उसे चाकू से चीर दिया और पीव निकाल दी। मगर दो दिनों के बाद फुन्सी ने भयंकर रूप धारण कर लिया। फुन्सी की जगह एक भयंकर फोड़ा निकल आया। धीरे-धीरे कोहनी तक सारा हाथ सूज गया। वेदना अधिक बढ़ गई।

चिकित्सा के लिए स्थानीय डाक्टर बुलाये गये। उन्होंने ऑपरेशन करके सारा मवाद निकाल दिया और घाव भरने के लिए पट्टी बांध दी। घाव जल्दी भरने के उद्देश्य से डाक्टरों ने पूज्यश्री को जनवी जैसे तरल पदार्थ सेवन करने का परामर्श दिया। इसका परिणाम विपरीत आया। कई बार ऑपरेशन किया गया और फोड़ा अधिकाधिक भयंकर रूप धरण करके निकलने लगा। मानो वह कोई भयानक दैत्य था जो काटने पर अधिक विकराल रूप में फिर खड़ा हो जाता था।

परिस्थिति इतनी भयंकर हो गई कि पूज्यश्री का जीवन भी खतरे में दिखाई देने लगा। पूज्यश्री को अपने शरीर की तो कोई चिन्ता नहीं थी और न जीवन का ही कोई मोह था, मगर संघ की चिन्ता उन्हें अवश्य हो गई। किसी योग्य उत्तराधिकारी के हाथ में श्रीसंघ का उत्तरदायित्व सौंपे बिना यह चिन्ता दूर नहीं हो सकती थी। पूज्यश्री ने अपने सम्प्रदाय के सन्तों पर दृष्टि दौड़ाई और उनका ध्यान पं. मुनिश्री गणेशीलालजी म. पर केन्द्रित हो गया। मुनिश्री विद्वान, चरित्र-परायण और सुविनीत थे। संघ के शासन-सूत्र आपके हाथों में सौंप देने का पूज्यश्री ने विचार किया।

समाज के प्रधान श्रावक, जो वहां मौजूद थे, उनसे विचार-विनिमय किया गया। सम्प्रदाय के अनेक सन्तों और श्रावकों से भी राय मंगाई और उन्होंने पूज्यश्री के विचार का समर्थन किया। इस प्रकार पूज्यश्री के चुनाव का सबने समर्थन किया। मगर मुनिश्री गणेशीलालजी म. को इस बात का अभी तक पता नहीं चला था।

अचानक सेठ वर्धमानजी सा. पितलिया मुनिश्री के पास पहुंचे। उन्होंने कहा-महाराज! मैं आपसे एक निवेदन करने आया हूँ। वह यह है कि पूज्यश्री का स्वास्थ्य इस समय ठीक नहीं है, यह तो आप जानते ही हैं। ऐसी स्थिति में आप पूज्यश्री को किसी प्रकार के पशोपेश में न डालें और पूज्यश्री आपको जो आज्ञा दें उसे स्वीकार कर लें।

हे और इसका पालन करना बडा ही कठिन है। मुनिश्री बडे पशोपेश मे पडे। क्या करना चाहिए ? क्या मे इस गुरुतर भार को उठाने मे समर्थ हो सकूगा ? मगर अस्वीकार करने का अर्थ पूज्यश्री को इस नाजुक अवस्था मे ठेस पहुचाना होगा ? स्वीकार करने के लिए जिस सामर्थ्य की आवश्यकता है, वह मे अपने मे नही पाता! ऐसी स्थिति मे मे सङ्घ की सेवा कैसे कर सकूगा! इस प्रकार पशोपेश के पश्चात् आपने जब अपनी असमर्थता प्रकट की तो सेठ वर्धमानजी पीतलिया ने बनावटी रोष भरी आखो से मुनिश्री की ओर देखा। उनकी दृष्टि मे स्पष्ट सकेत था कि आज्ञाकारी ओर विनीत शिष्य होते हुए भी इस पसग पर यह अस्वीकृति क्यो प्रकट कर रहे है ?

परिणाम यह हुआ कि मुनिश्री को विवश होकर वह भार स्वीकार करने की स्वीकृति देनी पडी।

सेठ पीतलियाजी ने मुनिश्री घासीलालजी म को युवाचार्य पदवी का व्यवस्था-पत्र लिखने के लिए कहा। मगर उनके यह कहने पर कि मुझे लिखना नही आता, स्वय सेठजी ने व्यवस्था-पत्र का ड्राफ्ट बना दिया और मुनिश्री घासीलालजी म को उसकी नकल कर देने के लिए दे दिया। मुनिश्री घासीलालजी म ने उसकी नकल की और वह पूज्यश्री ने अपने पास रख लिया।

श्रीसघ पूज्यश्री की बीमारी से अत्यन्त चिन्तित हो उठा। आखिर बम्वई के पसिद्ध डाक्टर मुलगावकर को बुलाने का विचार किया गया। उनके बुलवाने का समाचार पाकर स्थानीय सर्जन ने पूज्यश्री के मूत्र की परीक्षा की और मधुमेह की बीमारी का निर्णय किया।

डाक्टर मुलगावकर ने रोग का इतिहास सुनकर भली-भाति परीक्षा की तो उन्होने भी कहा कि पृज्यश्री को मधुमेह की भी शिकायत है। पौष्टिक और मिष्ट आहार के कारण वह घटने के बदले बढ गया था। फोडे का मूल कारण भी यह मधुमेह ही था। डाक्टर ने एकदम ही अन्न बन्द करके सिर्फ छाछ पर रहने की सलाह दी। फोडे का ऑपरेशन और साथ ही मधुमेह का इलाज आरम्भ हुआ। तबीयत मे सुधार होने लगा। सवत्सरी के दिन पूज्यश्री मे इतनी शक्ति आ गई कि वे व्याख्यान मण्डप मे पधारे ओर करीब २० मिनट तक भाषण भी दे सके।

ऑपरेशन का दृश्य बडा ही हृदय-द्रावक था। ऑपरेशन देखनेवालो का हृदय काप रहा था। मगर पूज्यश्री के चेहरे पर चिन्ता का कोई चिह्न तक नही था। उन्होने बेहोशी के लिए क्लोरोफॉर्म नही सूघा था। होश में रहते हुए ऑपरेशन करवाया। हथेली डाक्टर के सामने पसार दी। डाक्टर ने पहले तो चाकू से एक क्रोस-सा बनाया और फिर कैची उठाकर हथेली की चमडी काट दी। पृज्यश्री के मुह से उफ तक नही निकला। जान पडता था, शरीर की ममता त्यागकर वे आत्म-लोक मे रमण कर रहे है और आत्म-रमण की तल्लीनता मे उन्हे अपने शरीर का भान ही नही है।

पूज्यश्री का यह अगाध धैर्य और असीम सहिष्णुता देखकर चकित हो जाना पडा। धन्य है ऐसे सहनशील महासन्त, जिन्होने इस रुग्ण अवस्था मे भी अपने आदर्श चरित द्वारा जनता को बोध पाठ दिया।

इस अवसर पर जलगाव के श्रीसङ्घ ने सेठ लक्ष्मणदासजी श्री श्रीमाल सेठ सागरमलजी पेमराजजी जुगराजजी, किसनलालजी आदि ओर श्री अमृतलाल रायचन्द घदेरी तथा भीनासर के सेठ बहादुरमल सा बांठिया सेठ वर्धमानजी पीतलिया, सेठ नथमलजी चोरडिया आदि सज्जनों ने बहुत सेवा की।

पर्युषण पर्व के मौके पर पूज्यश्री के दर्शनार्थ खानदेश बरार मद्रास मेवाड, मालवा आदि विभिन्न प्रान्तो से लगभग छह हजार श्रावक जलगाव आये। सबके स्वागत की व्यवस्था श्रीसङ्घ के सहयोग से सेठ लक्ष्मणदासजी ने उत्साहपूर्वक की। जलगाव सङ्घ के अन्य श्रावको ने भी अतिथियो का अच्छा सत्कार किया।

उसी अवसर पर घाटकोपर-जीवदया खाते की सहायता के लिए एक शिष्ट-मडल आया। पूज्यश्री के स्वास्थ्य-लाभ का प्रमोद श्रीसङ्घ मे काम हो रहा था, अत तीन दिन के प्रयत्न से करीब बत्तीस हजार रुपया एकत्र हो गया।

उन्ही दिनो गुजरात मे बाढ आने के कारण भीषण तबाही हुई थी। श्रावको ने बाढ पीडितो की सहायता के लिए भी लगभग तीस हजार रुपया प्रदान कर अपनी उदारता प्रदर्शित की।

लगभग इसी अवसर पर उदयपुर की जैन ज्ञान पाठशाला और ब्रह्मचर्याश्रम को करीब छह हजार की एक मुश्त सहायता और ९२६) रु वार्षिक सहायता प्रदान की गई।

इस अवसर पर सेठ लक्ष्मणदासजी मूथा का उत्साह अतीव प्रशसनीय था। उन्होने अकेले ही करीब तीस हजार रुपया खर्च करके यह साबित कर दिखाया कि लक्ष्मी का स्वामी किस प्रकार अपने धन का सदुपयोग करता है। सेठ अमृतलाल रामचद झवेरी और सेठ बहादुरमलजी बाठिया ने भी सराहनीय उत्साह प्रदर्शित किया। कई अन्य धर्म-प्रेमी श्रावक भी लम्बे अर्से तक पूज्यश्री की सेवा मे रहे और धर्माराधन करके उन्होने अपना जीवन सफल बनाया।

पूज्यश्री के स्वास्थ्य-लाभ के उपलक्ष्य मे उदयपुर, रतलाम आदि विविध स्थानो मे हर्षोत्सव मनाया गया और सार्वजनिक एव आत्म-हित के अनेक कार्य हुए। जलगाव मे इसी अवसर पर एक जैन बोर्डिंग की स्थापना की गई जो अब तक चल रही है।

चौमासा समाप्त होने पर भी दुर्बलता के कारण दो मास तक पूज्यश्री विहार न कर सके। मार्गशीर्ष कृष्णा पचमी को आपके निकट बालोतरा निवासी श्रीचुन्नीलालजी नाहर तथा बिनौली (मेरठ) निवासी श्रीवीरबलजी अग्रवाल ने दीक्षा ग्रहण की।

दीक्षा के अवसर पर प्रसिद्ध देश-सेवक सेठ जमनालालजी बजाज भी उपस्थित थे। आपने भाषण करते हुए कहा- भारतवर्ष का सौभाग्य है कि यहाँ गाधी जैसे महान पुरुष यहा पैदा हुए। यदि भारतीय जनता इनके बताए मार्ग पर चले तो स्वराज्य प्राप्त करने मे जरा भी देर न लगे परन्तु भारत की जनता उनके बतलाये रास्ते पर नही चल रही है यह हमारा दुर्भाग्य है। इसी तरह जैन समाज का अहोभाग्य है कि पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज सा [illegible] उन्हे प्राप्त हुए है। वे जो मार्ग बताए उस पर जैन समाज चले तो थोड़े ही दिन मे वह अपना पूर्ण विकास व विस्तार कर सकता है। आपका बताया मार्ग एव उपदेश हम स्वतन्त्रता प्राप्त करने मे सहायक है परन्तु मै सुनता हू कि जैन जनता आपके बताए हुए मार्ग पर नही चलती। यह उसका दुर्भाग्य है। इसलिए

प्रायश्चित्त

'जैन शास्त्र पायश्चित से ज्ञान, दर्शन ओर चारित्र की विशुद्धि बतलाते है। अन्य दर्शनकारो ने भी पायश्चित्त को स्वीकार किया हे। सभी दार्शनिक पाप से की विशुद्धि के लिए कहते हे और इस पकार सभी ने पायश्चित्त को अगीकार किया है। जैनदर्शन कहता है-पायश्चित्त द्वारा पाप का विशोधन करो। पाप के सन्ताप से बचते रहने की इच्छा करना और पाप का त्याग न करना प्रायश्चित्त नही है। पाप के परिणाम से अर्थात् दड से नही घबराना चाहिए वरन् पाप से डरना चाहिए।''

साधु का मार्ग कितना कठोर है! सयम की मर्यादा के लिए कितना सावधान रहना पडता है! सच्चा साधु अपनी निर्मलता मे लेश-मात्र भी धब्बा लगना सहन नही कर सकता। उसकी आत्मा मलीनता की आशका मात्र से कराह उठती है! शारीरिक लाचारी की दशा मे अगर सयम की किसी मर्यादा का उल्लघन हो गया हो तो वह उसे छिपाने का प्रयत्न नही करता वरन् सर्वसाधारण के समक्ष अपनी वास्तविकता खोलकर रख देता है और इस प्रकार अपने अन्त करण को उज्ज्वल बनाता है। यह साधु की साधना है। स्वेच्छा-साधना ऐसी जीवित और जागृत होती है।

साधु अपनी सेवा गृहस्थ से नही कराता। मगर पूज्यश्री को लाचार होकर डाक्टरो की सहायता लेनी पडी। इस कारण जब डाक्टरो का उपचार चल रहा था तभी पूज्यश्री ने कहा- मेरे सयम मे दोष लग रहा है। अत जब तक मै प्रायश्चित्त लेकर शुद्धि न कर लू तब तक मेरा आहार-पानी अलग रखो। सिर्फ एक साधु मेरी सेवा के लिए रहे। मगर सन्तो ने भक्ति-वश प्रार्थना की- हम आपसे अलग होना नही चाहते। यथा समय प्रायश्चित्त लेकर हम भी शुद्धि कर लेगे।

रोग से मुक्त होने पर पूज्यश्री ने रुग्णावस्था मे लगे हुए दोष का प्रायश्चित्त करना उचित समझा। अत पौष कृष्णा १४ को व्याख्यान मे चतुर्विध सङ्घ के सामने आपने आलोचना की और शास्त्रानुसार छ महीने का छेद-प्रायश्चित्त स्वीकार किया। अपनी सेवा मे रहे सन्तो को भी चौमासी तप अर्थात् १२० उपवास का प्रायश्चित्त दिया गया।

उस समय भी पूज्यश्री मे अन्न को पचाने की शक्ति नही आई थी। छाछ पर ही निर्वाह हो रहा था। अत लम्बा विहार होना अशक्य था। फिर भी कुछ दिनो बाद थोडा-थोडा विहार करते हुए आप भुसावल पधारे। वहा अग्रवाल, ओसवाल, माहेश्वरी, सरावगी और ब्राह्मण आदि मारवाडी भाइयो मे पारस्परिक वैमनस्य हो रहा था। प्रत्येक दल दूसरे को नीचा दिखाने का अवसर देखता रहता था। आपस मे इस सघर्ष से हजारो रुपयो का कचूमर हो गया था। एक दूसरे का दुश्मन बना हुआ था। पूज्यश्री ने आपस का यह वैमनस्य मिटाने के लिए उपदेश देना आरम्भ किया। दुर्वलता की दशा मे भी पूज्यश्री मस्तिष्क से पूरा परिश्रम करने लगे। आपका उपदेश सुनकर सबका हृदय द्रवित हो गया और द्वेषाग्नि शान्त हो गई। फाल्गुन सुदी अष्टमी को सभी दल वालो ने व्याख्यान मे खडे होकर पूज्यश्री से प्रार्थना की-आपके उपदेश से हमारी द्वेष-भावना शान्त हो गई है। अब आप जो भी व्यवस्था देगे, हमे स्वीकार होगी।

दूसरे दिन पूज्यश्री ने व्यवस्था देते हुए कहा- द्वेष उत्पन्न करने वाली पुरानी सब बाते भूल जाओ और अब से ऐसा वर्त्ताव रक्खो जिससे प्रेम की वृद्धि हो।

पर्युषण पर्व के मौके पर पूज्यश्री के दर्शनार्थ खानदेश, वरार, मद्रास, मेवाड, मालवा आदि विभिन्न प्रान्तो से लगभग छह हजार श्रावक जलगाव आये। सवके स्वागत की व्यवस्था श्रीसङ्घ के सहयोग से सेठ लक्ष्मणदासजी ने उत्साहपूर्वक की। जलगाव सङ्घ के अन्य श्रावको ने भी अतिथियो का अच्छा सत्कार किया।

उसी अवसर पर घाटकोपर-जीवदया खाते की सहायता के लिए एक शिष्ट-मडल आया। पूज्यश्री के स्वास्थ्य-लाभ का प्रमोद श्रीसङ्घ मे काम हो रहा था, अत तीन दिन के प्रयत्न से करीव वत्तीस हजार रुपया एकत्र हो गया।

उन्ही दिनो गुजरात मे वाढ आने के कारण भीपण तवाही हुई थी। श्रावको ने वाढ पीडितो की सहायता के लिए भी लगभग तीस हजार रुपया प्रदान कर अपनी उदारता प्रदर्शित की।

लगभग इसी अवसर पर उदयपुर की जेन ज्ञान पाठशाला ओर ब्रह्मचर्याश्रम को करीव छह हजार की एक मुश्त सहायता ओर ९२६) रु वार्षिक सहायता प्रदान की गई।

इस अवसर पर सेठ लक्ष्मणदासजी मूथा का उत्साह अतीव प्रशसनीय था। उन्होने अकेले ही करीब तीस हजार रुपया खर्च करके यह साबित कर दिखाया कि लक्ष्मी का स्वामी किस प्रकार अपने धन का सदुपयोग करता हे। सेठ अमृतलाल रामचद झवेरी ओर सेठ वहादुरमलजी वाठिया ने भी सराहनीय उत्साह प्रदर्शित किया। कई अन्य धर्म-प्रेमी श्रावक भी लम्वे अर्से तक पूज्यश्री की सेवा में रहे और धर्माराधन करके उन्होने अपना जीवन सफल वनाया।

पूज्यश्री के स्वास्थ्य-लाभ के उपलक्ष्य मे उदयपुर, रतलाम आदि विविध स्थानो मे हर्पोत्सव मनाया गया और सार्वजनिक एव आत्म-हित के अनेक कार्य हुए। जलगाव मे इसी अवसर पर एक जैन बोर्डिग की स्थापना की गई जो अब तक चल रही हे।

चौमासा समाप्त होने पर भी दुर्बलता के कारण दो मास तक पूज्यश्री विहार न कर सके। मार्गशीर्ष कृष्णा पचमी को आपके निकट बालोतरा निवासी श्रीचुन्नीलालजी तानेड तथा बिनौली (मेरठ) निवासी श्रीवीरवलजी अग्रवाल ने दीक्षा ग्रहण की।

दीक्षा के अवसर पर प्रसिद्ध देश-सेवक सेठ जमनालालजी वजाज भी उपस्थित थे। आपने भापण करते हुए कहा- भारतवर्ष के सद्‌भाग्य हे कि म गाधी जैसे महान् पुरुष यहा पेदा हुए। यदि भारतीय जनता इनके वताए मार्ग पर चले तो स्वराज्य प्राप्त करने में जरा भी देर न लगे, परन्तु भारत की जनता उनके वतलाये रास्ते पर नही चल रही हे, यह हमारा दुर्भाग्य हे। उसी तरह जेन समाज का अहोभाग्य हे कि पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज सा जैसे आचार्य उन्हे प्राप्त हुए हे। वे जो मार्ग वताए उस पर जेन समाज चले तो थोडे ही दिनो में वह अपना पूरा विकास व विस्तार कर सकता हे। आपका वताया मार्ग एव उपदेश हमे स्वतत्रता प्राप्त करने मे सहायक है, परन्तु मे देखता हू कि जैन जनता आपके वताए हुए मार्ग पर नही चलती। यह उसका दुर्भाग्य हे। इत्यादि।

कोलाडी-निवासी श्रीतिलोकचन्दजी जसरूपजी धोका ने दीक्षा के अवसर पर सात हजार रुपया घाटकोपर-जीवदया खाते को दान दिये और सात हजार दीक्षा के निमित्त लगाए।

चातुर्मास समाप्त होने पर वहुत-से साधुओं ने मालवा की ओर से पूज्यश्री के दर्शनार्थ जलगाव की ओर विहार किया।

प्रायश्चित्त

"जैन शास्त्र पायश्चित से ज्ञान, दर्शन और चारित्र की विशुद्धि बतलाते है। अन्य दर्शनकारो ने भी प्रायश्चित्त को स्वीकार किया हे। सभी दार्शनिक पाप से की विशुद्धि के लिए कहते है और इस पकार सभी ने पायश्चित्त को अगीकार किया है। जैनदर्शन कहता है-प्रायश्चित्त द्वारा पाप का विशोधन करो। पाप के सन्ताप से बचते रहने की इच्छा करना और पाप का त्याग न करना प्रायश्चित्त नही है। पाप के परिणाम से अर्थात् दड से नही घबराना चाहिए वरन् पाप से डरना चाहिए।"

साधु का मार्ग कितना कठोर है! सयम की मर्यादा के लिए कितना सावधान रहना पडता है! सच्चा साधु अपनी निर्मलता मे लेश-मात्र भी धब्बा लगना सहन नही कर सकता। उसकी आत्मा मलीनता की आशका मात्र से कराह उठती है! शारीरिक लाचारी की दशा मे अगर सयम की किसी मर्यादा का उल्घन हो गया हो तो वह उसे छिपाने का प्रयत्न नही करता वरन् सर्वसाधारण के समक्ष अपनी वास्तविकता खोलकर रख देता है और इस प्रकार अपने अन्त करण को उज्ज्वल बनाता है। यह साधु की साधना है। स्वेच्छा-साधना ऐसी जीवित और जागृत होती है।

साधु अपनी सेवा गृहस्थ से नही कराता। मगर पूज्यश्री को लाचार होकर डाक्टरो की सहायता लेनी पडी। इस कारण जब डाक्टरो का उपचार चल रहा था तभी पूज्यश्री ने कहा- मेरे सयम मे दोष लग रहा है। अत जब तक मै प्रायश्चित्त लेकर शुद्धि न कर लू तव तक मेरा आहार-पानी अलग रखो। सिर्फ एक साधु मेरी सेवा के लिए रहे। मगर सन्तो ने भक्ति-वश प्रार्थना की- हम आपसे अलग होना नही चाहते। यथा समय प्रायश्चित्त लेकर हम भी शुद्धि कर लेगे।

रोग से मुक्त होने पर पूज्यश्री ने रुग्णावस्था मे लगे हुए दोष का प्रायश्चित्त करना उचित समझा। अत पोष कृष्णा १४ को व्याख्यान मे चतुर्विध सङ्घ के सामने आपने आलोचना की और शास्त्रानुसार छ महीने का छेद-प्रायश्चित्त स्वीकार किया। अपनी सेवा मे रहे सन्तो को भी चौमासी तप अर्थात् १२० उपवास का प्रायश्चित्त दिया गया।

उस समय भी पूज्यश्री मे अन्न को पचाने की शक्ति नही आई थी। छाछ पर ही निर्वाह हो रहा था। अत लम्बा विहार होना अशक्य था। फिर भी कुछ दिनो बाद थोडा-थोडा विहार करते हुए आप भुसावल पधारे। वहा अग्रवाल, ओसवाल, माहेश्वरी, सरावगी और ब्राह्मण आदि मारवाडी भाइयो मे पारस्परिक वैमनस्य हो रहा था। प्रत्येक दल दूसरे को नीचा दिखाने का अवसर देखता रहता था। आपस मे इस सघर्ष से हजारो रुपयो का कचूमर हो गया था। एक दूसरे का दुश्मन बना हुआ था। पूज्यश्री ने आपस का यह वेमनस्य मिटाने के लिए उपदेश देना आरम्भ किया। दुर्बलता की दशा मे भी पूज्यश्री मस्तिष्क से पूरा परिश्रम करने लगे। आपका उपदेश सुनकर सबका हृदय द्रवित हो गया ओर द्वेषाग्नि शान्त हो गई। फाल्गुन सुदी अष्टमी को सभी दल वालो ने व्याख्यान मे खडे होकर पूज्यश्री से प्रार्थना की-आपके उपदेश से हमारी द्वेष-भावना शान्त हो गई है। अब आप जो भी व्यवस्था देगे, हमे स्वीकार होगी।

दूसरे दिन पूज्यश्री ने व्यवस्था देते हुए कहा- 'द्वेष उत्पन्न करने वाली पुरानी सब बातें भूल जाओ और अब से ऐसा वर्त्ताव रक्खो जिससे प्रेम की वृद्धि हो।

पूज्यजी की यह उदार व्यवस्था सभी ने स्वीकार की।

इसके पश्चात् पूज्यश्री ने भुसावल से विहार किया और आसपास के स्थानो मे विचरते हुए आप पुन जलगाव पधारे।

चौंतीसवां चातुर्मास (१९८२)

पूज्यश्री के शरीर मे अभी तक अन्न पचाने की शक्ति नही आई थी। थोडे-वहुत शाक के अतिरिक्त छाछ ही आपका मुख्य भोजन था। अन्न ग्रहण करने से पुन रोग के आक्रमण की आशका थी। अत चातुर्मास के योग्य किसी अन्य स्थान मे पहुँचना सम्भव न होने के कारण सम्वत् १९८२ का चौमासा पूज्यश्री ने जलगाव मे ही करना उचित समझा। इस वार भी जलगाव श्रीसघ का धर्म-प्रेम और उत्साह खूब प्रशसनीय रहा।

चौमासे मे उपदेश-गगा वहाकर पूज्यश्री ने मालवा की ओर प्रस्थान किया। मुनिश्री मोतीलालजी महाराज अब वहुत वृद्ध हो चुके थे। उन्होने जलगाव मे ही स्थविर वास ले लिया। उनकी सेवा के लिए मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज तथा अन्य चार सन्त वही रह गये। अन्य सन्त पूज्यश्री के साथ मालवा की ओर आये।

जलगाव से विहार करके पूज्यश्री माघ की पूर्णिमा के दिन रतलाम पधारे। रास्ते मे जगह-जगह अनेक उपकार हुए। कई स्थानो पर जातीय झगडे मिटाये। वखतगढ और वधनावर मे अनेक विध त्याग-प्रत्याख्यान क अतिरिक्त तीन गृहस्थो ने सपत्नीक ब्रह्मचर्य-व्रत धारण किया।

पूज्यश्री जब रतलाम पधारे तो सम्प्रदाय के वहुत-से वडे-वडे सन्त भी वहा पधार गए। सव मिलकर ४३ ठानो की उपस्थिति हो गई। लगभग इतनी ही सख्या मे साध्विया भी उपस्थित हुई। हजारा श्रावक पूज्यश्री तथा मुनिमण्डल के दर्शन करके नेत्र पवित्र करने के लिए आ गये। रतलाम-सघ ने सभी आगन्तुको के स्वागत ओर भोजन की समुचित व्यवस्था की।

पूज्यश्री सदेव सादगी के समर्थक रहे है। वे अकसर अपने उपदेश मे फरमाया करते थे- मुनियो के दर्शन के निमित्त जो श्रावक आते हे वे स्थानीय श्रावको के भाई वनकर आते हे या जमाई वनकर आते हैं ? अगर भाई वनकर आते है तो उन्हे मिठाई वगेरह नही खाना चाहिए। मिठाइया ओर पक्का भोजन तैयार करने मे विशेष आरम्भ होता है ओर सत्कार करनेवालो पर विशेप वोझ पडता है। अत यह प्रथा हटा देने योग्य है। रतलाम-श्रीसङ्घ ने कच्चे ओर सादे भोजन की व्यवस्था करके अन्य सङ्घो के सामने अच्छा आदर्श उपस्थित कर दिया।

वहुत-से साधुओ और साध्वियो ने उग्र तपस्या की। चार गृहस्थो ने सपत्नीक ब्रह्मचर्य-व्रत धारण किया। यहा पूज्यश्री ने अपने सम्प्रदाय की समाचारी फिर एक वार सगठित की। सामयिक परिस्थिति पर नजर रखते हुए आवश्यकतानुसार अनेक नये नियम वनाए। श्रीसङ्घ के अभ्युदय के हेतु कई अच्छी योजनाए तैयार की गईं।

रतलाम से विहार करके पूज्यश्री रामवाग पधारे। वहा रतलाम नरेश आपके दर्शन करने आये और आधा घटा ठहरे। पूज्यश्री ने उन्हे आत्म-कल्याण और प्रजा-हित के लिए वहुत-सी सूचनाए दी, जिन्हे नरेश ने आभारपूर्वक स्वीकार किया और तदनुसार व्यवस्था करने का वचन दिया। राजधर्म न त्याग पर आपका सक्षेप मे भापण भी हुआ। रतलाम-नरेश उससे अत्यन्त प्रभावित हुए।

साम्प्रदायिक एकता

जावरा वाले सन्तों के अलग हो जाने पर पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज के सम्प्रदाय मे दो आचार्य हो गये थे। दूसरे पक्ष के आचार्य पूज्यश्री मुन्नालालजी महाराज थे। एक सम्प्रदाय के दो भाग हो जाना कोई भी विवेकवान् व्यक्ति पसन्द नही करता था और फिर इस कारण मुनियो एव श्रावको मे भी पारस्परिक मन-मुटाव रहता था। कही-कही तो श्रावको में द्वेष का तीव्र वातावरण फैल गया था। समाज के अग्रणी व्यक्तियो ने दोनो को एक करने का प्रयत कई बार किया था किन्तु सफलता प्राप्त नही हुई थी।

जिस समय पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज जलगाव से रतलाम की ओर पधार रहे थे तब बखतगढ मे मुनिश्री देवीलालजी महाराज आपसे मिले। पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज के समक्ष साम्प्रदायिक प्रेम की स्थापना का पस्ताव रखा गया। पूज्यश्री शान्ति के प्रेमी थे। रतलाम मे एकता सबधी वार्तालाप करना निश्चित हुआ। पूज्यश्री मुन्नालालजी महाराज पहले से ही रतलाम मे विराजते थे।

पूज्यश्री अत्यन्त दूरदर्शी और सयम के सच्चे प्रेमी थे। जब साम्प्रदायिक एकता सबधी वार्तालाप आरम्भ हुआ तभी आपने मुनिश्री मोडीलालजी म मुनिश्री चादमलजी महाराज, मुनिश्री हरखचन्दजी महाराज, मुनिश्री घासीलालजी महाराज और मुनिश्री हीरालालजी महाराज को पच नियुक्त किया कि समस्त साधुओ के अब तक के समस्त दोषो की शुद्धि कर ली जाय। कोई किसी का दोष छिपा न रक्खे। किसी भी साधु का कोई भी दोष मुझसे अज्ञात न रहे। इसके बाद कोई किसी को दोषी न कहे। इस प्रकार सब दोषो की शुद्धि हो गई। उस समय तक कोई भी साधु दोषी न रहा। जावरा वाले सन्तो को लिफाफा देने से तीन दिन पहले ही सब शुद्धि कर ली गई। पूज्यश्री ने इस प्रकार आन्तरिक तैयारी कर ली।

दोनो पक्षो के प्रमुख श्रावको ने एकता के लिए बातचीत प्रारम्भ की। किन्तु दुर्दैव से सफलता न मिली। मास कल्प पूर्ण हो जाने के कारण पूज्यश्री ने विहार किया और रामबाग पधारे। वहा से आगे विहार करने वाले थे कि उसी समय धर्मवीर सेठ दुर्लभजी भाई जौहरी, राष्ट्रभक्त सेठ राजमलजी ललवाणी, ला गोकुलचन्दजी जौहरी आदि ने आपसे होली तक रुकने की प्रार्थना की और एकता के लिए अधिक प्रयत्न करने का वचन दिया। पूज्यश्री सह्वाश्रेयम् के लिए सदैव उद्यत थे। आप रुक गये और होली भी आ पहुची मगर एकता का प्रयत्न सफल नही हुआ। अन्त मे फाल्गुण की पूर्णिमा के दिन पूज्यश्री ने विहार किया। आप डेढ मील चले थे कि ललवाणीजी फिर आ पहुचे। उन्होने और रुकने की प्रार्थना की। पूज्यश्री फिर रुक गये मगर सफलता न हो सकी। सेठ राजमलजी का प्रयत्न भी निष्फल हुआ। पूज्यश्री निराश होकर फिर विहार की तैयारी करने लगे। इतने मे अलवर-निवासी श्रीउमरावसिहजी की प्रेरणा से सेठ वर्धभानजी पीतलिया ने पुन रुकने की प्रार्थना की। पूज्यश्री शान्ति के परम उपासक थे, अत पीतलियाजी के आग्रह से फिर रुक गये।

दोनो आचार्य एकान्त मे मिले। दोनो ने निम-लिखित एकता की शर्ते निश्चित की-

आज मिति फाल्गुन सुदि पूर्णिमा सवत् १९८२ को रतलाम मे पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी म के सम्प्रदाय के दोनो पूज्य एकत्रित होकर नीचे लिखे अनुसार ठहराव करते हे -

(८) कसाइयो ने प्राणि-वध को कम करने तथा अगता आदि रखने का निश्चय किया।

(९) वर्त्तमान उदयपुर नरेश ने, जो उस समय युवराज थे, पूज्यश्री का व्याख्यान सुना ओर प्रजा-हित तथा जीव-दया के लिए विशेप ध्यान देने का वचन दिया। दो दिन तक अगता रखाया।

(१०) सार्वजनिक हित के लिए एक फण्ड कायम किया गया।

ज्येष्ठ शु ४ को उदयपुर से विहार करके वेदला, धर्मशाला, गोगुदा होते हुए ब्यावर पधारे।

पैंतीसवां चातुर्मास (१९८३)

पूज्यश्री का सवत् १९८३ का चौमासा १८ ठाणो से ब्यावर मे हुआ। तपस्वी मुनि श्री सुन्दरलालजी महाराज ने धोवन-पानी के आधार पर ७६ दिन की तपस्या की। तपस्वी मुनि केसरीमलजी महाराज ने ६६ दिन की तपस्या की। दोनो तपस्याओ के पूर पर अनेक धार्मिक उपकार हुए।

भाद्रपद शुक्ला षष्ठी को जयतारण-निवासी सुगालचदजी मुकाणा ने २५ वर्ष की अवस्था में वैराग्य के साथ दीक्षा अगीकार की। वैरागीजी ने चार हजार रुपया इसी अवसर पर शुभ कार्यो मे लगाया। बलुदा निवासी और बेगलोर के प्रतिष्ठित व्यवसायी श्रीमान् सेठ गगारामजी ने ब्यावर की पाठशाला के दस छात्रो को छात्र-वृत्ति के रूप मे ३६००) रु प्रदान किये।

ब्यावर के इस चौमासे मे कुछ साम्प्रदायिक अभिनिवेश वाले लोगो ने अशान्ति फेलाने की चेष्टा की, किन्तु पूज्यश्री की असीम शान्ति के सागर में वह विलीन हो गई। ता १ अगस्त को मोलाना मुहम्मद अली पूज्यश्री के दर्शन करने आये और उपदेश सुनकर बहुत प्रभावित हुए।

उन्ही दिनो ता ७ नवम्बर १९२६ के 'तरुण राजस्थान' के सम्पादक ने अपनी एक टिप्पणी मे लिखा था-

आजकल नामधारी साधुओ की कमी नही हे। इनकी सख्या इतनी अधिक हे कि सच्चे साधु मिलना दुर्लभ-सा हे। किन्तु साधु जवाहरलालजी ऐसे ही दुर्लभ साधुओ मे हे। आप जेनियो के मुख्य आचार्यो मे गिने जाते हे। उस दिन ब्यावर मे हमे आपकी कथा सुनने का सोभाग्य प्राप्त हुआ। रहन-सहन और जीवन बिलकुल प्राचीन ढग का होते हुए भी आपके विचार ओर शक्ति नवीन हे। आप धर्म के प्राचीन सिद्धान्तो को देश, काल और पात्र के अनुकूल नए ढग से इस प्रकार उपस्थित करते हे कि श्रोताओ को अपने इस अर्वाचीन मार्ग पर चलने के लिए उत्तम मार्ग मिल जाता हे। देश की आवश्यकताओ को आप खूब समझते हे। खादी प्रचार ओर अछूतोद्धार पर आपका वहुत ध्यान हे। जीवन को सादा अैर सेवामय बनाने का आप अपने अनुयायियो को बराबर उपदेश करते रहते हे। सचमुच भारतवर्प मे यदि भिन्न-भिन्न सम्प्रदायो के आचार्य जवाहरलालजी महाराज का अनुकरण करे तो देश को वडा लाभ हो सकता है। हमारा अपने स्थानीय ओसवाल भाइयो से अनुरोध हे कि इन सच्चे साधु को निमन्त्रण देकर उनके उपदेशो से लाभ उठावे।

चातुर्मास की समाप्ति पर विहार होने से पहले आर्यसमाज ब्यावर के उपप्रधान श्रीचादमलजी मोदी ने नीचे लिखे उद्‌गार प्रकट किए-

पूज्यवर और अन्य महानुभावो!

समय बीतते देर नही लगती। आज पूज्य महाराज के चौमासे की अवधि समाप्त होती है। कल आपका विहार होगा।

इस अवसर पर मै अपने हृदय के उद्‌गार पूज्य महाराज तथा आप लोगो के समक्ष प्रकट करना चाहता हू।

मुझे पहले-पहल महाराज के व्याख्यान सुनने का सौभाग्य कुछ वर्ष पहले तव मिला था जव कि महाराज बीकानेर से पूज्य पदवी प्राप्त कर पधारे थे। उसी व्याख्यान से मेरी धर्म-चर्चा सुनने की रुचि हुई थी।

उसके पहले अग्रेजी स्कूलो की शिक्षा के कारण मेरी धर्म-शास्त्र सुनने की रुचि नही थी, जेसे कि पाय स्कूल के लडको मे नही होती है। मे व्यावहारिक किताबो तथा अखबारो मे ही सारी विद्वत्ता समझता था। लेकिन उस दिन का व्याख्यान सुनने से मेरी इच्छा धर्म के व्याख्यानो को सुनने की हो गई ओर उसके बाद मैने रतलाम मे भी पूज्य महाराज के व्याख्यान सुने। अन्य साधुओ का व्याख्यान सुनन ओर धर्म-शास्त्र पढने की ओर भी रुचि हो गई।

इसलिए वहुत अर्से से अपने ऊपर पूज्यश्री का अतीव उपकार मानता हू। इस चौमासे मे भी मैने आपके कई व्याख्यान सुने है। यदि कभी नही आया तो भी अपने काकाजी से व्याख्यानो के नोट सुन लिए हैं।

इस पर से यह कहने का साहस करता हू कि महाराज ने हमेशा ऐसी रीति से व्याख्यान दिया है कि किसी अन्य मत की निन्दा न हो। आपके विचार सब मतो को समता मे लाने के रहे हैं। ऐसी उदारता का प्रत्यक्ष प्रमाण यह हे कि भिन्न-भिन्न मतावलम्बी महाराज श्री के पास बराबर आते है और मुक्तकठ से प्रशसा करते है।

नोटिसो द्वारा जो थोडी गडबड हुई है उसका ज्यादा विवेचन न करके मै इतना ही कहूगा कि यह हमारी अधूरी विद्या का परिणाम है, जिससे हम एक दूसरे के विचारो को नही सह सकते और उनके उपकारो को भूल जाते हे।

महाराज की दूसरी विशेषता समाज-सुधार है। आपके व्याख्यान का अधिक भाग समाज सुधार की प्रेरणा करता है। आपने कई बार कहा है, सामाजिक सुधार के बिना आध्यात्मिक उन्नति पूर्ण नही हो सकती। आपने महाराज के व्याख्यानो मे सामाजिक विषयों पर वहुत सुना होगा। बाल वृद्ध विवाह, विधवाओ की दशा, फिजूलखर्ची, गहने कपडे, अछूतोद्धार इत्यादि विषयो पर धार्मिक दृष्टि से पूज्यश्री ने सुन्दर तथा असरकारक विवेचन किया हे।

महाराज की तीसरी विशेषता जैन समाज के विचारो का सुधार करना हे। धर्म को समझने मे जो गलत विचार फले हुए हे उनका पूज्यश्री ने निर्भय होकर विरोध किया है। गोपालन आदि कार्यों को उच्च दृष्टि से देखने तथा जन समाज मे वीरता के भावो को फैलाने आदि का प्राचीन शास्त्रानुसार जोरदार समर्थन किया हे ओर उन्हे अच्छी तरह सिद्ध किया है। महाराजजी धार्मिक सुधारक, समाज सुधारक ओर जन-धर्म प्रचारक ह।

ऐसे पूज्य महानुभावो का हमारे व्यावर नगर मे पधारना अत्यन्त सोभाग्य की वात हे। हम आशा करते हे कि महाराज हमारे ऊपर विशेष कृपा करते हुए फिर भी दर्शन देगे।

अन्त मे मै ईश्वर से प्रार्थना करता हू कि वे महाराज को चिरायु करे जिससे जनसमाज का आपके धर्मोपदेशो द्वारा विशेष कल्याण हो।

चातुर्मास समाप्त होने पर पूज्यश्री वावरा, जेठाणा, तवीजी आदि स्थानो मे धर्मोपदेश देते हुए अजमेर पधारे।

अजमेर मे श्रीयुत जालिमसिह जी कोठारी पूज्यश्री के दर्शनार्थ आये। वे आर्यसमाज के एक उत्साही कार्यकर्त्ता थे। पूज्यश्री का उपदेश सुनकर अत्यन्त प्रभावित हुए। एक दिन उन्होने कहा- 'मै समझता था कि जेनधर्म मे कार्यकर्त्ता के लिए स्थान नही हे। वह केवल निपेध सिखलाता हे- यह मत करो, वह मत करो। इस प्रकार वह मनुष्य को प्रत्येक प्रवृत्ति से अलग हटाता जाता है। समाज सेवा या लोग सेवा के लिए उसमे स्थान नही है। मेरा जीवन आरभ से ही प्रवृत्तिमय रहा हे। अकर्मण्य होकर वैठना मुझे पसद नही है। एकान्त निवृत्तिमार्ग मेरी रुचि के प्रतिकूल हे। आपके (पूज्यश्री के) व्याख्यानो से मै मानने लगा हू कि जैनधर्म में सम्यक् प्रवृत्ति के लिए भी वहुत वडा क्षेत्र है। वह सार्वजनिक कार्यो का विरोध नही करता। मुझे जेन-धर्म का यह स्वरूप पहले सुनने को मिला होता तो सम्प्रदाय-परिवर्त्तन करने की कोई आवश्यकता ही न रहती।

व्याख्यान मे इस प्रकार के उद्‌गार प्रकट करने के वाद वे कई वार दूसरे समय मे भी पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुए और अपनी शकाओ का समुचित समाधान पाकर मुनिश्री के भक्त वन गये। उनका परिवार अव जेनधर्म का अनुयायी है।

जालिमसिहजी जन्मत जैन थे ओर फिर आर्यसमाज की ओर उनकी रुचि हो गई थी। उनकी यह घटना जेन समाज के लिए विशेष महत्त्व रखती है। जेनधर्म का वास्तविक स्वरूप समझाने वाले योग्य उपदेशको की कमी के कारण पता नही कितने जैनी अन्य धर्मी बन गये हे।

वाणी का प्रभाव

साधु की चर्या वडी कठिन है। निर्दोष सयम का पालन करते हुए किसी मुनि का सव जगह विहार कर सकना सभव नही हे। नगे पेर, नगे सिर, पैदल विहार, वयालीस दोप टाल कर आहार–पानी लेना, समिति–गुप्ति आदि का पालन आदि ऐसे नियम हे जिनकी सव जगह रक्षा होना कठिन हे। फिर भी कुछ मुनि ऐसे स्थानो मे भी कभी–कभी विचरते है और परीपहो को सहन करने मे आनन्द मानते हे, मगर प्रथम तो विद्वान् साधुओ की ही अत्यन्त कमी हे ओर उनमे भी अपरिचित क्षेत्रो मे विचरने वाले इनेगिने है। परिणाम यह हे कि वहुत–से क्षेत्र ऐसे रह जाते हे जहा धर्म की चर्चा ही कभी नही हो पाती। समाज मे सुयोग्य विद्वान्, श्रद्धाशील गृहस्थ उपदेशक हो तो वे जगह–जगह घूमकर धर्म–प्रचार कर सकते है ओर जैनो को विधर्मी होने से वचा सकते हे।

विद्यमान धर्मोपदेशको को भी इस घटना पर ध्यान देने की आवश्यकता हे। जेनधर्म का मार्मिक स्वरूप समझ कर उसे जनता के समक्ष रखने की इस युग मे वडी आवश्यकता हे। ऐसा किये विना धर्म की प्रभावना की विशेप आशा केसे की जा सकती है ?

पौष कृष्ण १२ को आपश्री ने अजमेर से विहार किया। किसनगढ होते हुए जयपुर पधारे। जयपुर छोटी काशी माना जाता है। सस्कृत तथा अगरेजी शिक्षा का अच्छा केन्द्र है। यहा पूज्यश्री के उपदेश मे वडे-बडे विद्वान आने लगे और उपदेश से पभावित होकर सभी मुक्त कठ से पशसा करने लगे। उस समय 'जैनजगत् के सपादक ने लिखा था-

"साधु लोग यदि विद्वान्, लोकस्थिति को जानने वाले और धर्म के वास्तविक सिद्धान्तो को पकट करने वाले हो तो उनके उपदेश का कैसा बढिया असर होता है, इसका एक ज्वलन्त उदाहरण गत ता २४ फरवरी १९३७ को जयपुर मे देखा गया, जब कि श्वेताम्बर वाईस टोला पथ के पूज्य आचार्य श्रीजवाहरलालजी महाराज का एक सार्वजनिक व्याख्यान हुआ। साधुजी महाराज ने करीब तीन घटे तक व्याख्यान दिया और बीडी, सिगरेट, भाग आदि मादक द्रव्य, वेश्यागमन, परस्त्री सेवन, कन्याविक्रय वृद्ध विवाह आदि का विशेष, अछूतोद्धार, गोरक्षा व हिन्दू सगठन पर ऐसा प्रभावशाली व्याख्यान दिया कि श्रोता गद्‌गद्‌ हो गए।

व्याख्यान मे बहुसख्यक अजैन, प्रतिष्ठित सज्जन व विद्वान् लोग उपस्थित थे। सभी ने मुक्तकठ से आपके उपदेश की पणाली की प्रशसा की। आपके व्याख्यान की खास खूबी यह थी कि उसमे सकीर्णता की तनिक भी बू न थी। किसी भी मत वाले को कडवी लगे ऐसी कोई वात न होती थी। व्याख्यान के अत मे बीसियो अजेनो ने आपके चरण छुए, जिनमें रायबहादुर डाक्टर दलजनसिहजी खानका, चीफ मेडिकल आफिसर जयपुर का नाम विशेष उल्लेखनीय है। वास्तव मे अगर उच्च चारित्र के साथ विद्वत्ता हो तो ऐसी आत्माओ के उपदेश का असर बहुत होता है। आज जेन समाज मे विद्वान् साधुओ का वहुत वडा अभाव है ओर यह इस धर्म की बडी भारी कमी है।"

जयपुर समाज-सुधारक मडल की ओर से पूज्यश्री के दो जाहिर व्याख्यान हुए। हजारो की सख्या मे जनता ने लाभ उठाया। बाल विवाह, वृद्ध विवाह, वेश्यानृत्य, अश्लील गीत तथा रात्रि भोजन आदि बुराइयो को बद करने के लिए लोगो ने हस्ताक्षर कर दिये। गोचरभूमि की व्यवस्था तथा दूध देनेवाले पशुओ को बचाने के लिए पिजरापोल-कमेटी की स्थापना हुई।

इस अवसर पर पजाब-सम्प्रदाय के युवाचार्य श्रीकाशीरामजी महाराज ने पूज्यश्री से पजाब पधारने का अनुरोध किया था। अलवर, देहली तथा दूसरे श्रीसघो की भी प्रार्थना थी। जयपुर-श्रीसघ चोमासे के लिए प्रवल आग्रह कर रहा था किंतु पूज्यश्री बीकानेर श्रीसघ को आश्वासन दे चुके थे। अत आपने बीकानेर की ओर विहार किया।

जयपुर नगर के बाहर पधारते ही जलगाव से तार द्वारा सूचना मिली की तपस्वीराज मुनि श्रीमोतीलालजी महाराज ने, जिनका परिचय पहले दिया जा चुका है अधिक बीमारी के कारण सथारा कर लिया है। पूज्यश्री वही ठहर गए। थोडी देर वाद स्वर्गवास का समाचार आ गया। पूज्यश्री ने वडे ही करुणोत्पादक शब्दो मे तपस्वीजी की जीवनी सुनाई। श्रोताओ की आखो से अश्रुधारा वहने लगी। उस समय जीवदया के लिए ६०००) रु का चदा हुआ। बहुत से व्यक्तियो ने अपनी-अपनी ओर से कसाइयो के शिकार होने वाले पशुओ के प्राण बचाने का निश्चय किया।

विदा के समय एक साहित्यरत्न पडितजी ने नीचे लिखे उद्गार प्रकट किये–

यो जेनागमतत्त्वविद् भव महा सन्तापहारी गिरा,
नित्य पूरयते दयारसमल नो मानवाना हृदि।
पीत्वा यस्य वच सुधा किलजना मुञ्चन्ति दोपान् खिलान्।
स श्रीयुक्त जवाहरो विजयतामाचार्य वर्यश्चिरम्॥

मनहर छन्द

जय जवाहरलाल मुनि हम, धन्य कहते आपको।
आपने उपदेश से, सचमुच हटाया ताप को॥
कोमल मधुर रचनावली, पीयूप-सी गुणवान है।
धर्म की रक्षार्थ तन मन दे रहे स्वच्छन्द हो।
क्या पुरुष हो या दया के मूर्तिधर निण्यन्द हो॥
आपसे इस जयपुरी ने उच्च गोरव पा लिया।
जो समाज-सुधार हित, सत्सग कुछ तुम से किया॥
लोग जयपुर के तुम्हे सव, धन्य ही कहते रहे।
पर प्रभो इस की सुआशा, के लिए गुण वह रहे॥?॥
जो यहा से आज इतने, शीघ्र आप पधारते।
इस नगर पर और कुछ भी आप करुणा धारते॥
तो सुसभव था कि जयपुर कुछ सुधार दिखायगा।
दुर्जनो की वचना से फिर न धोखा खायगा॥
इसलिए हे प्रार्थना, कृपया इसे उर धारिए।
आप चातुर्मास मे जयपुर समोद पधारिए॥
बस दया के सिन्धु हरि की जो कृपा इस पर रही।
तो जवाहर निज जवाहर फिर दिखावेगे यही॥

जयपुर से विहार करके वगुरु, दूदू, मकराणा, वडू रूपनगढ, भादवा आदि छोटे वडे गावो मे धर्म-प्रचार करते हुए पूज्यश्री १२ ठाने से कुचेरा पधारे। वडू मे सरावगी, ओसवाल, माहेश्वरी और अग्रवालो मे वेमनस्य चल रहा था वह आपके उपदेश से दूर हो गया। मार्ग मे प्राय सभी ठाकुरो ने पूज्यश्री का हार्दिक स्वागत किया। कई ठाकुरो ने मासाहार, मदिरा आदि का त्याग किया। रूपनगढ के ठाकुर साहव ने पूज्यश्री के प्रति खूब भक्ति-भाव प्रकट किया। आप अपने लवाजमे के साथ पूज्यश्री के स्वागत के लिए सामने आये, पूज्यश्री की सेवा करके अच्छा लाभ लिया।

कुचेरे से विहार करके नागौर, नोखा, सूरपुरा, देशनोक, उदयरामसर आदि स्थानो को पवित्र करते हुए जेठ शु ५ को पूज्यश्री बीकानेर पधारे।

छत्तीसवां चातुर्मास (१९८४)

कुछ दिन बीकानेर विराज कर पूज्यश्री भीनासर पधार गए और ठा १३ से सम्वत् १९८४ का चोमासा भीनासर मे किया।

भीनासर का यह चौमासा बीकानेर के इतिहास मे बडा महत्त्व रखता है। पूज्यश्री के व्याख्यानो का तथा तपस्वी मुनियो की तपस्या का जैन एव जैनेतर जनता पर गहरा प्रभाव पडा। उसी अवसर पर श्वे स्थानकवासी जैन कान्फेस का आठवा अधिवेशन तथा भारत जैन महामण्डल का वार्षिक अधिवेशन होने से सोने मे सुगन्ध हो गई।

इस चातुर्मास मे सन्तो और सतियो ने निम्नलिखित तपस्या की -

(१) तपस्वी मुनिश्री	सुन्दरलालजी महाराज	६० दिन
(२) तपस्वी मुनिश्री	केसरीमलजी महाराज	६५ दिन
(३) तपस्वी मुनिश्री	बालचन्दजी महाराज	२५ दिन
(४) तपस्वी मुनिश्री	महासती श्रीगुरसुन्दरजी	४० दिन
(५) तपस्वी मुनिश्री	महासती चम्पाजी	३६ दिन

इनके अतिरिक्त मासखमण तथा उसके भीतर की बहुत-सी तपस्याए हुई। एक गृहस्थ महिला (भीनासर निवासी श्रीमान् धनराजजी पटवा की धर्मपत्नी) ने एक मास की (मासखमण की) तपस्या की। मुनिश्री सुन्दरलालजी महाराज की तपस्या का पूर भाद्रपद शुक्ला १४ को था और तपस्वी श्री केसरीमलजी म की तपस्या का पूर आश्विन शुक्ला १३ रविवार को था। उस दिन राज्य की ओर से अगता रखा गया। कान्फ्रेस के अधिवेशन के कारण हजारो व्यक्ति बाहर से आये। इन महातपस्वी मुनियो का दर्शन करके वे अपने को धन्य समझने लगे।

पूज्यश्री के व्याख्यान का मुख्य विषय श्रावक के १२ व्रत, अस्पृश्यतानिवारण, बाल-वृद्ध-विवाह, मृत्युभोज आदि कुरीतियो का निवारण, चर्बी वाले वस्त्रो एव अन्य महारम्भी वस्तुओ का निषेध, ब्रह्मचर्य आदि होते थे, जिनसे व्यक्ति का जीवन उन्नत हो, समाज एव राष्ट्र का कल्याण हो और इस प्रकार विश्व-कल्याण साधा जा सके।

एक बार आपका व्याख्यान सुनने के लिए लगभग तीन सौ अछूत आए। व्याख्यान मे उन्हे सब के साथ बैठने को स्थान दिया गया। पूज्य महाराज ने उस दिन मासाहार और मदिरापान की बुराइयो का विस्तार पूर्वक वर्णन किया। इनसे होने वाली आध्यात्मिक, नैतिक, सामाजिक और राष्ट्रीय हानियो का मार्मिक विवेचन किया। परिणामस्वरूप बहुत से अछूतो ने मदिरा और मास का त्याग करके अपना जीवन उन्नत बनाया।

कालेज तथा स्कूलो के विद्यार्थी, राज्य कर्मचारी, राजवशीय एव इतर सज्जन बडी रुचि के साथ आपका उपदेश सुनने आते थे। बीकानेर से भीनासर यद्यपि तीन मील दूर है तथापि बहुत से धर्मप्रेमी जैनेतर भाई भी प्रतिदिन उपदेश सुनने आते थे। एक बार पूज्यश्री का उपदेश बीकानेर नोबिल स्कूल (राजकुमार-विद्यालय) के विद्यार्थियो के समक्ष विशेषत ब्रह्मचर्य पर ही हुआ। उपदेश अत्यन्त प्रभावशाली और मार्मिक था। उसका श्रोताओ पर अत्यधिक प्रभाव पडा। आपने कहा-

आजकल ब्रह्मचर्य शब्द का सर्वसाधारण मे कुछ सकुचित-सा अर्थ समझा जाता है पर विचार करने से मालूम होता है कि वास्तव मे उसका अर्थ बहुत विस्तृत है। [illegible] अतएव उसकी महिमा भी बहुत अधिक है। [illegible]

अर्थ को लक्ष्य में रखकर ब्रह्मचारी बना है उसे अखण्ड ब्रह्मचारी कहते है। अखड ब्रह्मचारी का मिलना इस काल में अत्यन्त कठिन है। आजकल तो अखड ब्रह्मचारी के दर्शन भी दुर्लभ है। अखड ब्रह्मचारी मे अद्‌भुत शक्ति होती है। वह चाहे सो कर सकता है।

अखड ब्रह्मचारी अकेला सारे ब्रह्माण्ड को हिला सकता है। अखड ब्रह्मचारी वह है जिसने अपनी समस्त इन्द्रियो को और मन को अपने अधीन बना लिया हो जो इन्द्रियो और मन पर पूर्ण आधिपत्य रखता हो। इन्द्रिया जिसे फुसला नही सकती, मन जिसे विचलित नही कर सकता। ऐसा अखड ब्रह्मचारी ब्रह्म का शीघ्र साक्षात्कार कर सकता है। अखड ब्रह्मचारी की शक्ति अजब-गजब की होती है।

अपूर्ण ब्रह्मचर्य केवल वीर्यरक्षा को कहते है। वीर्य वह वस्तु है जिसके सहारे सारा शरीर टिका हुआ है। यह शरीर वीर्य से बना भी है। अतएव आखे वीर्य है, कान वीर्य है, नासिका वीर्य है, हाथ-पैर वीर्य है- सारा शरीर वीर्य है। जिस वीर्य से सारे शरीर का निर्माण होता है उसकी शक्ति क्या साधारण कही जा सकती है ? किसी ने ठीक ही कहा है-

मरण विन्दुपातेन जीवन विन्दुधारणात्।

अर्थात् वीर्य के आधार पर ही जीवन टिका है। वीर्यनाश का फल मृत्यु है।

जो वीर्य रूपी राजा को अपने काबू मे कर लेता है वह सारे ससार पर अपना दावा रख सकता है। उसके मुख-मडल पर विचित्र तेज चमकता है। उसके नेत्रो से अद्‌भुत ज्योति टपकती है। उसमे एक प्रकार की अनोखी क्षमता होती है। वह प्रसन्न, नीरोग और प्रमोदमय जीवन का धनी होता है। उसके इस धन के सामने चादी-सोने के टुकडे किसी गिनती मे नही है।

जिस वीर्य के प्रताप से तुम्हारे पूर्वजो ने विश्व भर मे अपनी कीर्त्ति-कोमुदी फैलाई थी, उस वीर्य का तुम अपमान करोगे ?

वीर्य का अपमान न करने से मेरा आशय यह नही है कि आप विवाह ही न करे। मे गृहस्थ धर्म का निषेध नही करता। गृहस्थ को अपनी पत्नी के साथ मर्यादा के अनुसार ही रहना चाहिए। वीर्य का अपमान करने का अर्थ है-गृहस्थ-धर्म की मर्यादा का उल्लघन करके पर-स्त्री के मोह मे पडना, वेश्यागामी होना अथवा अप्राकृतिक कुचेष्टाएँ करके वीर्य का नाश करना। भीष्म पितामह ने आजीवन ब्रह्मचर्य पाला था। आप उनका अनुकरण करके जीवनपर्यन्त ब्रह्मचर्य पाले तो खुशी की बात है। अगर आपसे यह नही हो सकता तो विधिपूर्वक लग्न करने की मनाही नही है। पर विवाहिता पत्नी के साथ भी सन्तानोत्पत्ति के सिवाय-वीर्य का नाश नही करना चाहिए। स्त्रियो को भी यह चाहिए कि वे अपने मोहक हाव-भाव से पति को विलासी बनाने का प्रयत्न न करे। जो स्त्री सन्तानोत्पत्ति की इच्छा के सिवाय केवल विलास के लिए अपने पति को विलास मे फसाती है वह स्त्री नही पिशाचिनी है। वह अपने पति के जीवन को चूसने वाली है।

ऐ भीष्म की सन्तानो! भीष्म ने आजीवन ब्रह्मचर्य पालन करके दुनिया के कानो मे ब्रह्मचर्य का पावन मत्र फूका था। आज उन्ही की सतान कहलाते हुए उन्ही के मत्र को तुम क्यो भूल रहे हो ?

ब्रह्मचर्य पालने वालो को अथवा जो ब्रह्मचर्य पालना चाहते है उन्हे विलास पूर्ण वस्त्रो से, आभूषणो से तथा आहार से सदेव बचना चाहिए। मस्तिष्क के कुविचारो का अकुर उत्पन्न करने वाले साहित्य को हाथ भी नही लगाना चाहिए।

पूज्यश्री का यह भाषण सुनकर अनेक श्रोताओं ने ब्रह्मचर्य की पतिज्ञा ग्रहण की।

चर्बी लगे वस्त्रो को पूज्यश्री धार्मिक, सामाजिक और राष्ट्रीय दृष्टि से अत्यन्त हेय समझते थे। जो श्रावक कीडो-मकोडो की दया पालते है उनके लिए ऐसे वस्त्र पहनना कहा तक शोभा दे सकता है? गो को माता मानने वाले हिन्दुओ के लिए तो गोवध कराने वाले वस्त्रो का स्पर्श करना भी अनुचित है। इन सब विषयो पर पूज्यश्री यदा-कदा विवेचन करते ही रहते थे। एक दिन विशेष रूप से इसी विषय पर आपका उपदेश हुआ और अनेक श्रोताओ ने चर्बी के वस्त्रो का त्याग करके खादी के अतिरिक्त अन्य वस्त्र न पहनने की पतिज्ञा ली। उसी दिन सेठ अमृतलाल रामचद झवेरी ने तार देकर पाच सौ रुपया की खादी बम्बई से मगवाई। वह आते ही बिक गई।

श्री श्वे. साधुमार्गी जैन हितकारिणी संस्था की स्थापना

खादी की इस उपयोगिता के साथ-साथ पूज्यश्री ने विधवाओ की दुर्दशा का भी रोमाचकारी वर्णन किया। श्रोताओ के हृदय सहानुभूति से भर गए। उसी समय बीकानेर तथा भीनासर के प्रमुख व्यक्तियो की एक सभा हुई और पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज के स्वर्गवास के अवसर पर गुरुकुल खोलने के लिए चदे के जो वचन प्राप्त हुए थे उन्हे सहायता, शिक्षा-प्रचार तथा खादी-प्रचार के कार्यो मे लगाने का निश्चय किया। इस कार्य के लिए विजयदशमी को 'श्री श्वे साधुमार्गी जैन हितकारिणी सस्था' के नाम से एक सभा की स्थापना हुई। इसके प्रथम सभापति श्रीमान् सेठ भैरोदान जी सेठिया और मत्री श्रीमान् कुवर जेठमलजी सेठिया निर्वाचित हुए। इसके पश्चात् इसके सभापति श्रीमान् सेठ मगनमलजी सा कोठारी हुए।

विचारो को कार्यरूप मे परिणत करने के लिए जिन-जिन सज्जनो ने वचन दिया था, सब से रुपया दे देने की पार्थना की गई। अभी तक जिसने जितना रुपया देने का वचन दिया था, उसी के यहा वह जमा था। उस बात को आठ वर्ष बीत गए थे।

अब उन विचारो को कार्य मे परिणत करने का अवसर आया। तब कितने ही सज्जनो ने अपने वचन के अनुसार रुपये दे दिये किन्तु कुछेक सज्जनो ने अपनी पूर्ववत् स्थिति रहते हुए भी रुपये नही दिये और कितने ही सज्जनो ने तो अपनी आगे वाली स्थिति न रहने की भावना की प्रबलता के कारण अपने वचनानुसार सस्था को रुपये दे दिये। परिणाम स्वरूप सवा दो लाख के वचनो मे से एक लाख से कुछ अधिक रकम जमा हुई। उससे श्रीमान् मदनमलजीसा बाठिया के हाथ से हुन्नर शाला' का उद्घाटन हुआ। इसके अवेतनिक मेनेजर के रूप मे श्रीमान् सूरजमलजी लोढा ने काम किया। इस सस्था के द्वारा विधवा बहने तथा दूसरे भाई सूत कातकर, कपडा बुनकर अथवा दूसरे किसी प्रकार का कार्य करके अपना भरण-पोषण करते थे। जो बहिने परदा या किसी दूसरे कारण से सस्था भवन मे कार्य करने नही आ सकती थी उन्हे घर पर ही चरखा दे दिया गया था और ऊन पहुचा दी जाती थी। कुछ दिनो मे सस्था का काय अच्छा चलने लगा। ऊनी आसन वस्त्र तथा दूसरी वस्तुओ के निर्माण के साथ-साथ बहुत-सी असमर्थ बहिनो तथा भाइयो को सहायता मिलने लगी।

खोलने का निश्चय किया। हितकारिणी सस्था का उद्देश्य किसी भी सम्प्रदाय के सघर्ष मे खडा होने का नही है। जब उसने देखा कि एक दूसरा समाज शिक्षाप्रचार के कार्य को अपने हाथ मे ले रहा है तो वहा की पाठशाला बन्द कर दी गई ओर सारुण्डे मे एक पाठशाला खोल दी गई। यह स्थान नोखामण्डी से २४ मील है। आस-पास मे कोई स्कूल नही है। सबसे नजदीक का स्टेशन नोखा ही है। इसी प्रकार सस्था आवश्यक स्थानो मे शिक्षा का प्रचार कर रही है।

सहायता विभाग के द्वारा कुछ असमर्थ बहिनो तथा भाइयो को सहायता दी जाती है।

उपरोक्त कार्यों मे सस्था के मूलधन का व्याज ही खर्च किया जाता है। एक लाख मे से सत्तर हजार का ब्याज शिक्षा-प्रचार मे और शेष सहायता-कार्य मे किया जाता है। समय-समय पर अन्य उपयोगी कार्य भी यह सस्था करती है। प्रस्तुत जीवन चरित्र तथा पूज्यश्री के अन्य साहित्य के प्रकाशन के निमित्त सस्था ने १२ हजार व्यय करना निश्चित किया है। सस्था का कार्य स्थायी और ठोस है।

विधवा बहिनें और सादगी

जीवन मे जब कृत्रिमता आती है तो जीवन का वास्तविक अभ्युदय रुक जाता है। मगर जिसे सयममय जीवन बिताना हो उसके लिए तो सादगी धारण करना और कृत्रिमता से बचना अनिवार्य है। पूज्यश्री अपने उपदेश मे सर्वसाधारण को और विशेषत विधवा बहिनो को सादे रहन-सहन की शिक्षा दिया करते थे। भडकीले और रगीन वस्त्र पहनना, जेवर पहनना या बारीक वस्त्रो का उपयोग करना ब्रह्मचारिणी के लिए शोभास्पद नही है। ब्रह्मचारी पुरुष या स्त्री को पवित्र श्वेत वस्त्रो के अतिरिक्त बहुरगी वस्त्र पहनना शोभा नही देता। पूज्यश्री इस विषय में प्रभावशाली पवचन किया करते थे। विधवाओ के प्रति किये जाने वाले दुर्व्यवहार को आप भयानक समझते थे और सद्व्यवहार करने की शिक्षा दिया करते थे। भीनासर के एक उपदेश के आपके शब्द कितने सबल हे-

'आपके घर मे विधवा बहिने शील-देविया है। इनका आदर करो। इन्हे पूज्य मानो। इन्हे खोटे दुखदायी शब्द मत कहो। यह शीलदेविया पवित्र हे, पावन है। मगलरूप हे। इसके शकुन अच्छे हे। शील की मूर्ति क्या कभी अमगलमयी हो सकती हे ?'

समाज की मूर्खता ने कुशीलवती को मगलवती और मगलवती को अमगला मान लिया हे। यह कैसी भ्रष्ट बुद्धि है।

याद रखो, अगर समय रहते न चेते और विधवाओ की मानरक्षा न की, उनका निरन्तर अपमान करते रहे, उन्हे ठुकराते रहे तो शीघ्र ही अधर्म फूट पडेगा। आपका आदर्श धूल मे मिल जायगा ओर आपको ससार के सामने नतमस्तक होना पडेगा।

बहिनो! शील आपका महान् धर्म हे। जिन्होने शील का पालन किया वे प्रात स्मरणीय बन गई। आप धर्म का पालन करेगी तो साक्षात् मगलमूर्ति बन जाएगी।

बहिनो! स्मरण रखो-तुम सती हो, सदाचारिणी हो, पवित्रता की प्रतिमा हो। तुम्हारे विचार उदार और उन्नत होने चाहिए। तुम्हारी दृष्टि पतन की ओर कभी नही जानी चाहिए। बहिनो! हिम्मत करो। धैर्य धारण करो। सच्ची धर्मचारिणी बहिन मे कायरता नही हो सकती। धर्म जिसका अमोघ कवच हे उसमे कायरता केसी ?'

खोलने का निश्चय किया। हितकारिणी सस्था का उद्देश्य किसी भी सम्प्रदाय के सघर्ष मे खडा होने का नही हे। जव उसने देखा कि एक दूसरा समाज शिक्षाप्रचार के कार्य को अपने हाथ मे ले रहा हे तो वहा की पाठशाला वन्द कर दी गई ओर सारुण्डे मे एक पाठशाला खोल दी गई। यह स्थान नोखामण्डी से २४ मील हे। आस-पास मे कोई स्कूल नही हे। सवसे नजदीक का स्टेशन नोखा ही हे। इसी प्रकार सस्था आवश्यक स्थानो मे शिक्षा का प्रचार कर रही हे।

सहायता विभाग के द्वारा कुछ असमर्थ वहिनो तथा भाइयो को सहायता दी जाती हे।

उपरोक्त कार्यों मे सस्था के मूलधन का व्याज ही खर्च किया जाता हे। एक लाख मे से सत्तर हजार का व्याज शिक्षा-प्रचार मे ओर शेष सहायता-कार्य मे किया जाता हे। समय-समय पर अन्य उपयोगी कार्य भी यह सस्था करती हे। प्रस्तुत जीवन चरित्र तथा पूज्यश्री के अन्य साहित्य के प्रकाशन के निमित्त सस्था ने १२ हजार व्यय करना निश्चित किया हे। सस्था का कार्य स्थायी ओर ठोस हे।

विधवा वहिनें और सादगी

जीवन मे जव कृत्रिमता आती हे तो जीवन का वास्तविक अभ्युदय रुक जाता हे। मगर जिसे सयममय जीवन विताना हो उसके लिए तो सादगी धारण करना ओर कृत्रिमता से वचना अनिवार्य हे। पूज्यश्री अपने उपदेश मे सर्वसाधारण को ओर विशेषत विधवा वहिनो को सादे रहन-सहन की शिक्षा दिया करते थे। भडकीले ओर रगीन वस्त्र पहनना, जेवर पहनना या वारीक वस्त्रो का उपयोग करना ब्रह्मचारिणी के लिए शोभास्पद नही हे। ब्रह्मचारी पुरुष या स्त्री को पवित्र श्वेत वस्त्रो के अतिरिक्त वहुरगी वस्त्र पहनना शोभा नही देता। पूज्यश्री इस विषय में प्रभावशाली प्रवचन किया करते थे। विधवाओ के प्रति किये जाने वाले दुर्व्यवहार को आप भयानक समझते थे ओर सद्व्यवहार करने की शिक्षा दिया करते थे। भीनासर के एक उपदेश के आपके शब्द कितने सवल ह-

'आपके घर मे विधवा वहिने शील-देविया हे। इनका आदर करो। इन्हे पूज्य मानो। इन्हे खोटे दुखदायी शव्द मत कहो। यह शीलदेविया पवित्र हे, पावन हे। मगलरूप हे। इसके शकुन अच्छे हे। शील की मूर्ति क्या कभी अमगलमयी हो सकती हे ?'

समाज की मूर्खता ने कुशीलवती को मगलवती ओर मगलवती को अमगला मान लिया हे। यह केसी भ्रष्ट वुद्धि हे।

याद रखो, अगर समय रहते न चेते ओर विधवाओ की मानरक्षा न की, उनका निरन्तर अपमान करते रहे, उन्हे ठुकराते रहे तो शीघ्र ही अधर्म फूट पडेगा। आपका आदर्श धूल मे मिल जायगा ओर आपको ससार के सामने नतमस्तक होना पडेगा।

वहिनो! शील आपका महान् धर्म हे। जिन्होने शील का पालन किया वे प्रात स्मरणीय वन गई। आप धर्म का पालन करेगी तो साक्षात् मगलमूर्ति वन जाएगी।

वहिनो! स्मरण रखो-तुम सती हो, सदाचारिणी हो, पवित्रता की प्रतिमा हो। तुम्हारे विचार उदार ओर उन्नत होने चाहिए। तुम्हारी दृष्टि पतन की ओर कभी नही जानी चाहिए। वहिनो! हिम्मत करो। धेर्य धारण करो। सच्ची धर्मचारिणी वहिन मे कायरता नही हो सकती। धर्म जिसका अमोघ कवच ह उसमे कायरता केसी ?'

बीकानेर का महिला समाज अशिक्षित और पिछडा हुआ माना जाता है। उसमे कुरीतियो का साम्राज्य है और पुराने विचारो से वह प्रभावित है। अगर कोई महिला अपने रूढ रहन-सहन मे किसी प्रकार का परिवर्तन करके आदर्श की ओर कदम बढाए तो उसे सत्कार नही तिरस्कार का पुरस्कार मिलता है। ऐसी स्थिति मे पूज्यश्री के उपदेशो को अमल मे लाना किसी महिला के लिए बडे साहस का काम था। फिर भी कुछ साहसी विधवा महिलाए निकल आईं और उन्होने तितली की तरह रग-विरगे वस्त्रो का तथा जेवरो का त्याग करके विना चर्बी के श्वेत वस्त्रो को ही धारण करने का निश्चय किया।

अ भा स्थानकवासी जैन कान्फ्रेस के अधिवेशन मे उन बहिनो को धन्यवाद देने का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ और दूसरो को उनके अनुकरण की प्रेरणा की गई।

कांफ्रेंस का अधिवेशन

भीनासर-चातुर्मास को एक विशेष घटना अखिल भारतीय श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कान्फ्रेस का आठवा अधिवेशन होना है। कान्फ्रेस के साथ ही भारत जैन महामण्डल का भी अधिवेशन था। दोनो के अध्यक्ष श्रीवाडीलाल मोतीलाल शाह थे। व्यापार प्रधान जैनसमाज मे सभापतित्व का गौरव प्राय श्रीमानो को प्राप्त होता है, मगर कान्फ्रेस के इतिहास मे यह पहली घटना थी कि केवल विद्वान् होने के कारण किसी व्यक्ति को सभापति चुना गया था। इस कारण शिक्षितवर्ग मे और नवयुवको मे अपूर्व उत्साह था।

पूज्यश्री ने अपने ओजस्वी उपदेशो द्वारा समाज की अनेक कुरूढियो की जड हिला दी थी। अधकार मे लोगों को प्रकाश की किरण दृष्टिगोचर होने लगी थी। आपने सामाजिक जीवन को ऊचा उठाने के लिए जनता मे साहस भर दिया था। क्षेत्र तैयार हो चुका था। इसी बीच कान्फ्रेस का अधिवेशन हुआ। लोगो को ऐसा प्रतीत होने लगा मानो समाज मे नवीन सूर्योदय का समय आ गया है। प्रात काल पूज्यश्री का उपदेश होता था। उनके उपदेशो मे जोश, जीवन और जागृति का सदेश रहता। वे उपदेश असीम स्फूर्ति, साहस और उत्साह का सचार करते। पूज्यश्री के प्राणप्रेरक प्रवचन प्रगति की प्रेरणा करते। मध्याह्न मे कान्फ्रेस का अधिवेशन होता और पूज्यश्री द्वारा प्रदर्शित पथ प्राय प्रस्तावो का रूप धारण कर लेता था।

वाडीलाल भाई अधिवेशन से कुछ दिन पहले पूज्यश्री से समाजहित के सबध मे विचार-विमर्श करने के उद्देश्य से आ गये थे और अधिवेशन के कुछ दिन बाद तक पूज्यश्री की सेवा मे रहे। आपने जैन साहित्य की उन्नति के लिए दस लाख की अपील की थी। बीकानेर के उत्साही उदार श्रीमानो ने दो लाख रुपया देने का वचन दिया था।

पूज्यश्री के उन दिनो के व्याख्यानो के विषय मे ३० अक्टूबर १९२७ के जैनप्रकाश मे इस प्रकार लिखा गया था-

यह व्याख्यान आदर्श तथा व्यवहार का सुन्दर तथा स्वाभाविक समन्वय करते है। निर्भीकता की भावना से ओतप्रोत है। उन्हे नियमित रूप से लिखने के लिए एक पडित रखा गया है। यह व्याख्यान जिस समय पुस्तक के रूप मे बाहर निकलेगे उस समय जनसमाज का [illegible] तथा [illegible]।

समझने के लिए जनता को सामग्री मिल जायगी। सघ, कान्फ्रेस तथा व्यक्ति की आन्तरिक दशाओ का चित्र खीचने मे तथा उनके स्वाभाविक तथा सुधार का पथप्रदर्शन करने मे आपकी आश्चर्यजनक शक्ति है। व्यक्तित्व के साथ-साथ देश तथा धर्म का अभिमान विकसित करते ही एक विशेषता होती है। वाह्य तथा आन्तर दृष्टि से पूज्यश्री बहुत-सी बातो का एक साथ स्पर्श कर सकते है। आपके मस्तिष्क मे पृथक्करण और समन्वय की क्रियाए एक साथ चलती रहती है। उनकी भाषा सस्कारी होने पर भी सादी है। उनके चेहरे पर आत्मगौरव तथा करुणा का सुन्दर सम्मिश्रण है। उनके व्याख्यान मे सूक्ष्म रूप से देखने पर भी कही कृत्रिमता नही दिखाई देती। वर्त्तमान समस्त जैन समाज मे धर्मज्ञान का इतना सुन्दर उपयोग करने की कला धारण करने वालो मे आपका स्थान सर्वश्रेष्ठ है।

प्रमुख साहेब (श्री वाडीलाल शाह) ने सवत्सरी, साधुवर्ग की एकता, जैन सीरीज आदि विषयो पर परामर्श करने के लिए आपसे विशेष वार्तालाप किया।''

यह पहले ही कहा जा चुका है, पूज्यश्री का हृदय यद्यपि विशाल था और विभिन्न धर्मों का समन्वय करने मे वे अत्यन्त कुशल थे, तथापि दया-दान जैसे धर्म के अत्यावश्यक अगो को एकान्त पाप की कोटि मे गिने जाते देखकर उनके हृदय को वडी चोट पहुचती थी। मनुष्य निर्दय और स्वार्थी वन जाय और धर्म उसकी निर्दयता और स्वार्थ का समर्थन करे तो ससार की क्या स्थिति हो ? ऐसा ससार नरक से क्या अच्छा होगा ? फिर भी जो भाई इस भयकर मान्यता के चक्कर मे पडकर स्व- पर का घोर अहित कर रहे है, उन पर पूज्यश्री को अत्यन्त दया थी। दयाभाव से प्रेरित होकर आपने दया-दान आदि का समर्थन करने के लिए 'सद्धर्ममण्डन' नामक ग्रथ इसी चौमासे मे लिखना आरभ किया। पूज्यश्री मध्याह्न मे एक से चार वजे तक 'सद्धर्ममण्डन' का कार्य करते थे। मुनि श्रीगणेशीलालजी महाराज तथा श्री जिनदासजी म लिखते और पूज्यश्री वोलते थे। इसी वीच इस सवध मे प्रश्नोत्तर भी होते थे।

इस प्रकार भीनासर का यह चातुर्मास न केवल आसपास वालो के लिए वरन् समस्त स्था जैन समाज के लिए विशेष तौर पर लाभदायक सिद्ध हुआ। पूज्यश्री यह स्मरणीय चातुर्मास समाप्त होने पर बीकानेर पधारे और वहा अठारह दिन विराजे। जैन-जैनेतर जनता ने खूब लाभ उठाया।

पूज्यश्री और सर मनुभाई मेहता

पूज्यश्री का व्यक्तित्व तो उच्च था ही, उनकी विद्वत्ता उससे भी उच्चतर श्रेणी की थी। शास्त्रो का उनका ज्ञान शब्दस्पर्शी नही मर्मस्पर्शी था। अत्यन्त गहराई मे उतरकर उन्होने धर्मतत्त्व की पर्यालोचना की थी। इसी कारण उन्हे धर्म के व्यापक स्वरूप की उपलब्धि हुई थी। मगर धर्मतत्त्व को उपलब्ध कर लेने पर भी साधारण विद्वान् उसे अपने व्यवहार मे नही ला पाता, जब कि पूज्यश्री ने उसे अपने जीवन व्यवहार मे भी पूरी तरह उतारा था। वे उस श्रेणी के महात्मा थे, जिनके विषय मे कहा है-

धर्मे स्वीयमनुष्ठानं कस्यचित्तु महात्मनः।

अर्थात्-'पर-उपदेश-कुशल बहुतेरे' होते है पर धर्म के अनुसार आचरण करनेवाले महात्मा भाग्य से विरले ही मिलते है!

इन्ही सब कारणो से पूज्यश्री का प्रभाव एक सम्प्रदाय तक सीमित न रहकर बहुत व्यापक हो गया था। महात्मा गाधी, लोकमान्य तिलक, पण्डित मदनमोहन मालवीय, सरदार पटेल, जैसी भारत

की विभूतियो के साथ आप परिचय मे आये और उनपर अपनी विशिष्ट छाप भी अकित करने मे समर्थ हो सके थे।

यो तो भारत-विख्यात अनेक राजनीतिज्ञो के साथ आपका परिचय हुआ और यत्र-तत्र उसका उल्लेख भी किया गया है और आगे किया जायगा मगर उनमे सर मनुभाई मेहता का स्थान विशेषता रखता है। सर मेहता भारत के यशस्वी प्रधान मन्त्रियो मे से एक है। पहले आप बडौदा रियासत के प्रधानमत्री थे और फिर बीकानेर रियासत के प्रधानमत्री होकर आये। बीकानेर मे जब पूज्यश्री पधारे तो अनेक बार आप व्याख्यान मे सम्मिलित हुए। आप पूज्यश्री के उपदेश से इतने प्रभावित हुए कि कई बार अपने समस्त परिवार के साथ बीकानेर और भीनासर उपदेश सुनने आये। आप पूज्यश्री के विशिष्ट अनुरागी हो गये।

एक बार सर मनुभाई की उपस्थिति मे पूज्यश्री ने बाल-विवाह और वृद्ध-विवाह के विरुद्ध बडा ही प्रभावशाली भाषण दिया।'[१] सर मेहता पर उसका इतना प्रभाव पडा कि थोडे ही दिनो बाद आपने बाल-वृद्ध-विवाह निषेध बिल बीकानेर-असेम्बली मे उपस्थित किया। उस पर भाषण करते हुए आपने पूज्यश्री के उपदेश का भी उल्लेख किया। बिल असेम्बली मे स्वीकृत होकर कानून बन गया।

लदन मे होनेवाली पहली गोलमेज कॉन्फरेस मे सम्मिलित होने के लिए सर मनुभाई मेहता जब विलायत जाने लगे तब आप पूज्यश्री के दर्शनार्थ आये। उस समय पूज्यश्री ने उन्हे जो उपदेश दिया था, उससे पूज्यश्री के स्पष्ट वक्तृत्व एव राष्ट्रहित की भावना का भली-भाति पता चलता है। आपके कथन का सक्षिप्त सार ही यहा दिया जाता है -

आज मेरा और सर मनुभाई मेहता का यह मिलन एक महत्त्वपूर्ण अवसर पर हो रहा है। सर मेहता विलायत का प्रवास करने वाले है। आपका यह प्रवास अपने किसी निजी प्रयोजन या बीकानेर सरकार के किसी कार्य के लिए नही है। आज जो विकट समस्या केवल भारत मे ही नही, सारे ससार मे व्याप्त हो रही है, उसे सुलझाने मे सहयोग देने के लिए आप जा रहे है। दूसरे शब्दो मे, भारत के भाग्य का निपटारा करने जा रहे है।

इस अवसर पर मे अकिचन अनगार उन्हे जो भेट दे सकता हू, वह उपदेश ही है। साधुओ पर भी राजा का उपचार है। साधु-जीवन की रक्षा के लिए जो पाच वस्तुए सहायक मानी गई है, उनमे तीसरा सहायक राजा है। राजा द्वारा धर्म की रक्षा होती है। राजा द्वारा राष्ट्रीय स्वतत्रता की रक्षा होती है। प्रजा मे शान्ति, सुव्यवस्था और अमन चेन रहने पर ही धर्म की आराधना की जा सकती है। जहा परतत्रता है, जहा अराजकता है, जहा परतत्रता के कारण हाहाकार मचा होता है, वहा धर्म को कोन पूछता है ?

सर मेहता की यह चोथी अवस्था सन्यास के योग्य है। एक कर्मयोगी सन्यासी का जो कर्त्तव्य है, आप वही कर रहे है। इसी के लिए विलायत जा रहे है। धर्म की रक्षा करने का आपको यह अपूर्व अवसर मिला है।

---

१ व्याख्यान देखो, तीसरी किरणावली।

सर मनुभाई यद्यपि अनभिज्ञ नही है, फिर भी मे इस अवसर पर खासतोर से स्मरण करा देना चाहता हू कि धर्म को लक्ष्य बनाकर जो निर्णय किया जाता है, वही निर्णय जगत् के लिए आशीर्वाद रूप हो सकता है। धर्म की व्याख्या ही यह है कि वह मगलमय कल्याणकारी हो। 'धम्मो मगल मुक्किट्ठ।' अर्थात् जो उत्कृष्ट मगलकारी है, वही धर्म है।

कोई यह न सोचे कि धर्म का सबध केवल व्यक्ति से है। राउण्ड टेबल कान्फ्रेस मे, जिसके लिए मेहताजी जा रहे है, धर्म का प्रश्न ही क्या है ? मे पहले ही कह चुका हू कि गुलाम ओर अत्याचार पीडित प्रजा मे वास्तविक धर्म का विकास नही हो सकता। धार्मिक विकास के लिए स्वातन्त्र्य अनिवार्य है, और इसी समस्या का समाधान करने के लिए लदन मे कान्फ्रेस की जा रही है।

श्रेष्ठ पुरुष अपने उत्तरदायित्त्व का भली-भाति ध्यान रखते है ओर गभीर सोच-विचार करके, धर्म और नीति को सामने रखकर ऐसा निर्णय करते है, जिससे सबका कल्याण हो। ऐसा निर्णय ही सर्वमान्य होता है। जन कल्याण के लिए नीति-मर्यादा का विधान करने वालो को अगर 'विधाता' या 'मनु' का पद दिया जाय तो इसमे अनोचित्य ही क्या है।

सर मनुभाई स्वय विवेकशील है, बुद्धिमान् है फिर भी हम परमात्मा से प्रार्थना करते है कि इन्हे ऐसी सद्बुद्धि प्राप्त हो जिससे वे सत्य के पथ पर डटे रहे। नाजुक से नाजुक प्रसग उपस्थित होने पर भी वे सत्य से इच मात्र भी विचलित न हो। सत्य एक ईश्वरीय शक्ति है जो विजयिनी हुए बिना नही रह सकती। चाहे सारा ससार उलट-पलट जाय, मगर सत्य अटल रहेगा। सत्य को कोई बदल नही सकता। प्रत्येक मनुष्य की जीवन लीला एक दिन समाप्त हो जायगी, ऐश्वर्य बिखर जायगा, परन्तु सत्य की सेवा के लिए किया गया उत्सर्ग अमर रहेगा। सत्य पर अटल रहने वालो का वेभव स्थायी रहेगा।

साधु के नाते मे सर मनुभाई को यही उपदेश देना चाहता हू कि दूसरे के असत्यमय विचारो के प्रभाव से दूर रह कर शुद्ध मस्तिष्क से सत्य विचार करना। चाहे विश्व की समस्त शक्तिया सगठित होकर विरोध मे खडी हो तब भी सत्य को न छोडना। किसी के असत्य विचारो की परछाई अपने ऊपर न पडने देना। शास्त्रानुसार और अपने अन्तरतर के सकेत के अनुसार जो सत्य है, उसी को विजयी बनाना। सत्य की विजय मे ही सच्चा कल्याण है।

कार्य करने के लिए व्यक्ति कानून कायदे तथा बहुमत आदि का आश्रय लेता है। किन्तु यह सब परतत्रता है। प्रत्येक व्यक्ति ईश्वर का पुत्र है। प्रत्येक मे बुद्धि है ओर उसकी जागृति भी है। जिसने सासारिक लोभ मे पडकर उस पर परदा डाल दिया है उसकी बोद्धिक शक्ति अवश्य छिप गई है। किन्तु जिसने अपनी बुद्धि से स्वार्थ का परदा हटा दिया है, वह तुच्छ से तुच्छ आत्मा भी महान बन गया है। इसी नि स्वार्थ विचार शक्ति के प्रभाव से वाल्मीकि ओर प्रण्व चोर महर्षि के पद पर पहुच गए। स्वार्थ के किवाड लगाकर विचार-शक्ति को रोक देना उचित नही है। अपनी बुद्धि को, विचार-शक्ति को सब प्रकार के विकारो से दूर रखकर जो निर्णय किया जाता है, वही उत्तम होता है।

जीवन व्यवहार के साधारण कार्य, जेसे खाना, पीना, चलना-फिरना आदि ज्ञानी भी करते है ओर अज्ञानी भी करते है। कार्यो मे इस प्रकार समानता होने पर भी बडा भेद है। अज्ञानी पुरुष अज्ञानपूर्वक, बिना किसी विशेष उद्देश्य के काम करता है। ज्ञानी पुरुष छोटे-से-छोटा ओर

वडे-से-वडा व्यवहार गम्भीर ध्येय से, निष्काम भावना से, वासना हीन होकर यज्ञ के लिए करता हे। शास्त्रकारो ने यज्ञ के लिए काम करना पाप नही माना है। किन्तु प्रश्न यह हे कि वास्तविक यज्ञ किसे कहना चाहिए। इसके लिए गीता मे कहा हे-

द्रव्ययज्ञा स्तपोयज्ञा, योगयज्ञास्तथाऽपरे।

स्वाध्याय ज्ञान यज्ञाश्च, यतय सशित व्रत्त ॥ अ ४० श्लोक २

यज्ञ अनेक प्रकार के होते है। किसी को द्रव्ययज्ञ करना हे तो धन पर से अपनी सत्ता उठाले और कहे 'इद न मम।' अर्थात् यह मेरा नहीं है। बस यज्ञ हो गया।

ससार मे जो गडवडी मची हुई है, उसका मूल कारण सग्रह बुद्धि है। सग्रह बुद्धि से सग्रहशीलता उत्पन्न हुई और सग्रहशीलता ने समाज मे वेषम्य का विष पैदा कर दिया। इस वेषम्य ने आज समाज की शाति का सर्वनाश कर दिया है। इस विषमता को दूर करने का एक सफल उपाय हे-यज्ञ करना। अगर आप लोग अपने द्रव्य का यज्ञ कर डाले, 'इद न मम' कहकर उसका उत्सर्ग कर दे तो सारी गडवड आज ही शान्त हो जायगी।

द्रव्ययज्ञ के पश्चात् तपोयज्ञ आता हे। तप करना उतना कठिन नही हे, जितना तप का यज्ञ करना कठिन हे। वहुत से लोग तप करते है किन्तु उनकी अमुक फल प्राप्त करने की आकाक्षा बनी रहती हे। किसी प्रकार की आकाक्षा वाला तप एक प्रकार का सौदा बन जाता है। वह तप रूप नही रहता। तप करके उससे फल की कामना न करे और 'इद न मम' कहकर उसका यज्ञ कर दे तो तप अधिक फलदायक होता हे।

मे सर मनुभाई मेहता को सम्मति देता हू कि वे प्रधानमत्री के अधिकारो का यज्ञ कर दे।

मेरा तात्पर्य यह हे कि अगर सच्चे कल्याण की चाहना हे तो सब वस्तुओ पर से अपना ममत्व हटा ले। यह मेरा हे' इस बुद्धि से ही पाप की उत्पत्ति होती है। इस दुर्बुद्धि के कारण ही लोग ईश्वर का अस्तित्व भूले हुए हे। 'इद न मम' कहकर अपने सर्वस्व का यज्ञ कर देने से अहकार का विलय हो जायगा और आत्मा मे अपूर्व आभा का उदय होगा।

वे योगी, जो यज्ञ नही करते उपहास के पात्र बनते है। योगियो! अपना किया हुआ स्वाध्याय, प्राप्त किया हुआ विविध भाषाओ का ज्ञान, आचरित तप आदि समस्त अनुष्ठान ईश्वर को समर्पित कर दो। अगर तुमने सभी कुछ ईश्वर को अर्पित कर दिया तो तुम्हारे सिर का बोझ हल्का हो जायगा। कामनाए तुम्हे सता न सकेगी। बुद्धि गभीर होगी। अपना कुछ मत रखो। किसी वस्तु को अपनी वनाई नहीं कि पाप ने आकर घेरा नही।

भाइयो! आप सव लोग भी हृदय मे ऐसी भावना लाइए कि सर मनुभाई मेहता को ऐसी शक्ति प्राप्त हो जिससे वे इग्लेड जाकर गोलमेज कान्फ्रेस मे अपूर्व साहस का परिचय दे। मेरी हार्दिक भावना हे कि सव प्राणी कल्याण के भाजन वने।

सर मनुभाई मेहता का पूज्यश्री पर कितना अनुराग था, यह वात उनके द्वारा पूज्यश्री के प्रति अर्पित की गई श्रद्धाञ्जलि से भी स्पष्ट हो जाती हे।

पूज्यश्री जब दया-दान का प्रचार करने के लिए थली की ओर प्रस्थान करने लगे तब रियासत के प्रधानमत्री की हेसियत से आपने राजकर्मचारियो को कुछ आवश्यक आदेश भेज दिये थे। वे आदेश इस प्रकार थे-

(१) पूज्यश्री के व्याख्यान में कोई गडवडी न डालने पावे।

(२) प्रश्नोत्तर के समय किसी प्रकार की असभ्यता न होने पावे।

(३) पूज्यश्री के धर्म-प्रचार मे किसी प्रकार की वाधा न आने पावे।

इन आदेशो के अनुसार प्रत्येक तहसील में पूज्यश्री के पधारने से पहले ही स्थानीय राज्याधिकारी यह घोपणा कर देते थे कि वाईस टोलो के पूज्यश्री पधार रहे हे। उनके प्रति कोई किसी प्रकार की गडवड न करे, नही तो वाजाव्ता कार्रवाई की जायगी।

इस राजकीय आदेश के कारण पूज्यश्री शान्ति के साथ थली मे दया ओर दान का प्रचार करने मे समर्थ हो सके। इसका विवरण पाठक अगले पृष्ठो मे पढ सकेगे।

मालवीयजी का आगमन

जिन दिनो पूज्यश्री थली की ओर प्रस्थान करने वाले थे, उन्ही दिनो प मदनमोहन मालवीय हिन्दू विश्वविद्यालय के सिलसिले मे वीकानेर पधारे। पण्डितजी, पूज्यश्री के विपय मे पहले ही सुन चुके थे। अत आप पूज्यश्री के व्याख्यान मे पधारे। पूज्यश्री ने समयोचित भाषण देते हुए फर्माया कि पुराण के अनुसार गोवर्धन पर्वत तो कृष्णजी ने उठाया ही था मगर दूसरे ग्वालो ने भी अपना सहयोग प्रदर्शित करने के लिए लाठिया तान ली थी। इसी प्रकार मालवीयजी ने भारतीय सस्कृति की रक्षा ओर उन्नति के हेतु हिन्दू-विश्वविद्यालय रूपी गोवर्धन पर्वत का भार अपने कन्धो पर उठाया हे तो श्रीमानो को भी उसमे यथोचित सहकार प्रकट करना चाहिए। पूज्यश्री का यह भाषण काफी विस्तृत ओर महत्त्वपूर्ण हुआ था, मगर खेद हे कि वह लिखा हुआ न होने के कारण यहा नही दिया जा सका।

अन्त मे मालवीयजी वोले। आपने पूज्यश्री के प्रभावशाली भाषण की मुक्त कठ से प्रशसा करते हुए पूज्यश्री के प्रति हार्दिक सद्‌भाव प्रकट किया।

थली की ओर प्रस्थान

पिछले प्रकरणो से पाठक भली-भाति जान गये होगे कि पूज्यश्री अनेक वार तेरापथी भाइयो के सम्पर्क मे आये थे। उन्होने उनकी निराली ओर धर्म से असगत मान्यताओ मे सुधार करने के लिए यथासम्भव प्रयत्न भी किया था। वालोतरा ओर जयतारण में शास्त्रार्थ करके तथा व्याख्यानो म उपदेश देकर उन्हे सन्मार्ग पर ले जाने का प्रयत्न किया था। जब आप भीनासर मे विराजमान थे, वहुत स तेरापन्थी भाई शका-समाधान करने आते थे। पूज्यश्री उनकी अधश्रद्धा देखकर चकित रह जाते थे। भाव-रोग से पीडित इन भाइयो पर उन्हे करुणा आती थी। पूज्यश्री का नवनीत के समान कोमल हृदय दया-दान के विरोधी भाइयो की अज्ञानता देखकर द्रवित हो गया। उन्होने इनके उद्धार का विचार किया। मगर यह उद्धार-कार्य सरल नही था। उसके लिए अनेक कष्ट सहन करके प्रवल प्रयत्न करने की आवश्यकता थी। सर्वसाधारण को धर्म का मर्म समझाना आवश्यक था।

थली तेरापथियो की रगस्थली हे। वह उनका दुर्भेद्य दुर्ग हे। पूज्यश्री बखूबी जानते थे। कि इस किले मे प्रवेश करने पर विविध कठिनाइया झेलनी पडेगी। फिर भी जन-कल्याण की कामना से पेरित होकर उन्होने थली मे प्रवेश करना निश्चित कर लिया।

एक बार भगवान् महावीर ने अनार्य क्षेत्र में विहार किया था। विश्व-कल्याण की भावना वाले महापुरुष अपने सुख–दु ख की चिन्ता छोडकर पर सुख के लिए ही प्रयास करते हे। थली यद्यपि अनार्य देश नही है तथापि वहा के बहुत–से मनुष्य दया, दान, परोपकार और परसेवा आदि सिद्धान्तो को अधर्म मानते हे। पूज्यश्री इन बहुमूल्य गुणो का बहिष्कार करने वाले धर्म ओर धरा का कलक धो डालना चाहते थे। थली के कुछ धर्मप्रेमी भाइयो का भी आग्रह था। सरदारशहर के सेठ खूबचदजी चडालिया, तनसुखदासजी दूगड तथा चूरू के सेठ मूलचदजी कोठारी आदि ने भीनासर आकर पूज्यश्री से थली मे पधारने की प्रार्थना की थी। इन कारणो से पूज्यश्री ने थली की ओर पधारने का निश्चय कर लिया।

मार्गशीर्ष शुक्ला तृतीया सवत् १९८४ को पूज्यश्री ने प मुनिश्री घासीलालजी, प मुनिश्री गणेशीलालजी आदि २९ सतो के साथ थली की ओर प्रस्थान कर दिया। उदासर, गाढवाला, नापासर, सीथल, बेलासर, तेजरासर, नाहरसीसर, देरासर, दुलचासर, सूडसर, बेनीसर, भोजासर, हेमासर आदि होकर आप डूगरगढ पधारे। डूगरगढ मे चार व्याख्यान हुए। तहसीलदार आदि राज्यकर्मचारी भी व्याख्यान सुनने आये। पूज्यश्री रायबहादुर सेठ आशारामजी झवर की बगीची मे उतरे थे। सेठ आशारामजी जाति के माहेश्वरी है। बडे उदारचित्त ओर धर्मनिष्ठ व्यक्ति हे। आपने अत्यन्त तन्मयता के साथ पूज्यश्री की भक्ति की। 'यस्य देवस्य गन्तव्य स देवो गृहमागत ' अर्थात् जिस देव के पास चलकर जाना चाहिए वह स्वय घर आ पहुचा! ऐसा समझकर झवरजी ने पूज्यश्री की सेवा का अच्छा लाभ लिया। पूज्यश्री ने तेला की तपस्या करके डूगरगढ मे पदार्पण किया था। वहा पहुचने पर आपका पारणा हुआ। चार दिन डूगरगढ विराज कर आप सरदारशहर की ओर अग्रसर हुए।

पूज्यश्री की इस विहारयात्रा की कठिनाइयो की कल्पना उन्हे नही हो सकती जिन्होने कभी इस रेगिस्तान के दर्शन नही किये हे। चारो ओर असीम फेली हुई बालुकाराशि शीतकाल के प्रात काल मे ओलो की तरह ठडी पड जाती है। कभी मध्यम ओर कभी प्रबल वेग से बहने वाली वायु के ठडे-ठडे झाके सीधे कलेजे तक पहुचकर प्राणो को भी स्पदनहीन बनाने के लिए यत्नशील रहते हे। मार्ग मे कोई वृक्ष नही जिसकी आड मे पथिक क्षण भर सतोष की सास ले सके। सर्वत्र अप्रतिहत वायु ओर अपरिमित बालुकापुज उस मरुभूमि के पथिक का स्वागत करते हे।

मध्याह्न मे मरुभूमि मानो अपना रूप पलट लेती हे। सूर्य की अनावृत धूप के स्पर्श से बालुका उत्तप्त हो जाती हे ओर अपना सारा उत्ताप पथिक के पेरो मे भर देना चाहती ह। पथिक अगर पूज्यश्री की भाति नगे पेर हुआ तो फिर कहना ही क्या है! खुले सिर पर ऊपर आसमान से बरसने वाला सूर्य का प्रचड सताप ओर नीचे भाड की भाति जलती हुई बालुका! दोनो ओर का यह दुस्सह सताप पथिक की प्राण-परीक्षा लेता हे।

ऐसे विकराल पथ पर तीव्र स्वार्थसाधना के लिए चलने वाले तो बहुत मिल सकते हे मगर [illegible] परमार्थ-बुद्धि से विचरण करने वाले महात्मा पूज्यश्री सरीखे विरले ही होगे। पूज्यश्री प्रात काल के [illegible] को अपने तप की अग्नि से निवारण करते हुए ओर मध्याह्न के घोर सताप का [illegible]

रूपी शीतल निर्झर से दूर करते हुए मरुभूमि मे अग्रसर होते गये। पूज्यश्री जिन जीवो का उद्धार करने के हेतु यह सव सहन करते हुए विहार कर रहे थे, उनकी ओर से पद-पद पर उनेक प्रकार की असुविधाए उत्पन्न की जाती थी। आहार-पानी एव स्थान आदि की सव असुविधाए पूज्यश्री के लिए तुच्छ थी। दया-दान के विरोधी लोगो का विपरीत व्यवहार देखकर पृज्यश्री का हृदय दया से अधिकाधिक द्रवित होता जाता था। अज्ञानी जीव की वाल दशा ज्ञानी पुरुप के विपाद का कारण वन जाती हे। ज्ञानी पुरुप उनकी वालदशा देखकर ही उनके उद्गार का सकल्प करते हे। अतएव पूज्यश्री के पथ मे ज्यो-ज्यो वाधाए उपस्थित की गईं त्या-त्यो उनका सकल्प दृढ से दृढतर होता गया।

दया-दान का प्रचार करने ओर दया-दान के विरोधियो को सन्मार्ग पर लाने के सुदृढ सकल्प के साथ विचरते हुए पूज्यश्री सरदारशहर पधारे।

सरदारशहर तेरापथियो का सबसे वडा केन्द्र हे। यहा ओसवालो के वारह सो घर हे। अधिकाश घर तेरापथियो के हे। उन दिनो तेरापथ सम्प्रदाय के पूज्य कालूरामजी स्वामी वही मौजूद थे।

ज्यो ही पूज्यश्री सरदारशहर पधारे त्यो ही तेरापथियो मे खलवली-सी मच गई। सामना करने की अनेक योजनाए बनाई गईं, मगर खेद हे कि उनमे एक भी ऐसी योजना न थी जिसका सभ्य ससार अनुमोदन कर सके। उचित तो यह था कि आत्म-पर-कल्याण की सच्ची इच्छा से दोनो आचार्य मिलकर परस्पर तत्त्वनिर्णय करते ओर वीतराग भगवान के मार्ग का निश्चय करके अज्ञान जनता को मार्ग पर लाते। मगर तेरापथ के आचार्य ऐसा करके अपनी जमी दुकान उजाडना पसन्द नही करते थे। इसमे उन्हे अपनी प्रतिष्ठा के भग हो जाने का भय था। उन्होने ऐसा नही किया। वल्कि उनके शिष्यो ने दूसरा ही रास्ता अख्तियार किया। वे पूज्यश्री को तथा उनके सतो को परेशान करके मेदान मारने की सोचने लगे। पूज्यश्री के सत साधुधर्म के अनुसार भिक्षा लाने मे किसी प्रकार का भेद-भाव नही करते थे। जिस भाव से दूसरो के यहा भिक्षा के लिए जाते उसी भाव से तेरापथी गृहस्थो के घर भी जाते। मगर कई एक पापाणहृदय गृहस्थो ने सतो के पात्र मे आहार के वदले पाषाण रख दिये। इसी प्रकार की ओर भी जघन्य चेष्टाए की गईं जिनका उल्लेख करने मे मनुष्यता लजाती हे ओर सभ्यता भी शर्मिन्दा होती हे। इन भाइयो ने अपनी चेष्टाओ से यह जाहिर कर दिया कि हम वचन से ही दया-दान के विरोधी नही अपितु व्यवहार मे भी दया ओर दान के कट्टर दुश्मन हे।

पूज्यश्री के जीवन की पिछली घटनाए वतलाती हे कि आप एक वार जो सत्सकल्प कर लेते थे, लाख वाधाए भी उससे उन्हे विचलित नही कर सकती थी। आचार्य प्रभाचन्द्र कहते हे।

त्यजति न विदधान कार्यमुद्विज्य धीमान्,

खलजनपरिवृत्ते स्पर्धते किन्तु तेन।

खलजनो की चेष्टाओ से घवराकर बुद्धिमान् पुरुष अपने आरम्भ किये हुए कार्य को त्याग नही वेठता, वरन् उनसे स्पर्धा करता हे। अर्थात् जसे खल अपनी चेष्टाओ से वाज नही आता उसी प्रकार ज्ञानी पुरुप भी अपने कार्य को पूरा किये विना नही मानता।

थली की इस विहारयात्रा के समय पृज्यश्री ने भाति-भाति के कष्ट सहन किये। कष्टो का उन्होने जिस शान्ति ओर प्रसन्नता के साथ सहन किया उससे पृज्यश्री के अनेक छिपे हुए सद्गुण जनता मे

प्रकाशित हो गये। इससे मध्यस्थ जनता का पूज्यश्री के पति अधिक आकर्षण हो गया। इसका श्रेय अवश्य ही उन विरोधी भाइयो के हिस्से मे जाना चाहिए। महाकवि हरिचन्द कहते हे-

खल विधात्रा सृजता प्रयतात्,
कि सज्जनस्योपकृत न तेन ?
ऋते तमासि द्युमणिर्मणिर्वा-
बिना न काचे स्वगुण व्यनक्ति॥

अर्थात्- विधाता ने बडा भारी पयत्न करके खल की रचना की हे, मगर उसने इस रचना से क्या सज्जन पुरुष का उपकार नही किया ? अवश्य किया है। अधकार के बिना सूर्य का महत्त्व समझ नही आता और काच के अभाव मे मणि का मूल्य नही समझा जा सकता।

तात्पर्य यह हे कि जैसे अधकार के बदौलत सूर्य की महिमा बढती हे और काच के कारण मणि का महत्त्व बढ जाता है, उसी प्रकार खल जनो के कारण सत पुरुषो की महिमा बढती हे।

पूज्यश्री के विषय मे यह सूक्ति पूरी तरह चरितार्थ होती हुई नजर आती हे। कुछ लोगो ने अवाछनीय व्यवहार किया और पूज्यश्री ने अपने सत-स्वभाव के अनुसार उसे साधारण भाव से सहन किया। परिणाम यह हुआ कि थली की सरलहृदय जनता ने पूज्यश्री का महत्त्व आक लिया। लोग उनके उपदेशो की ओर आकर्षित होने लगे। उनके आचार विचार की सराहना करने लगे।

जिस महापुरुष ने भारतवर्ष के प्रसिद्ध विद्वानो और नेताओ के समक्ष अपनी तेजस्विता प्रकट की थी जिसके प्रवचनो से जैनधर्म का गौरव बढा था, जिसके आदर्श चरित के सामने बड-बडे विद्वान् नतमस्तक हो जाते थे, वही महापुरुष आज करुणा के स्रोत मे बहकर थली प्रात मे जा पहुचा था और एक बडे जनसमूह को अधकार से निकालकर प्रकाश मे लाने के लिए तपश्चर्या कर रहा था। वह असभ्य शब्दावली को अपनी स्तुति समझता था और परीषहो को जीवन साधना का अग मानता था।

पाठक यह न समझे कि वहा सभी एक-से थे। लका मे सभी रावण नही थे। कुछ लोग वहा सरलहृदय भी थे। पूज्यश्री के कुछ ही व्याख्यान हुए थे कि जनता प्रभावित होने लगी। अनेक तेरापथी भाई प्रकाश मे आये। करीव पचास भाइयो ने जेनधर्म की सच्ची श्रद्धा ग्रहण की।

सरदारशहर के अग्रवाल, माहेश्वरी, ब्राह्मण, स्वर्णकार ओर दर्जी आदि जेनेतर भाइयो ने पूज्यश्री के मुख से जेनधर्म का स्वरूप सुना तो वे चकित रह गये। वे अभी तक समझते थे कि तेरापथ ओर जेनधर्म एक ही चीज हे ओर जैनधर्म, तेरापथी साधुओ के सिवाय औरो को दान देने मे तथा मरते जीव को वचाने मे पाप वतलाता हे। पूज्यश्री ने जेनधर्म के अनुसार जब दया ओर दान का प्रतिपादन किया तो लोगो को सचाई का पता चला। सेकडो श्रोता व्याख्यान सुनने आने लगे। कई आपके भक्त बन गये। पूज्यश्री के व्याख्यान मे आने वाले स्वर्णकार तथा दर्जी आदि भाइयो पर तेरापथी भाइयो की कोपदृष्टि थी। जो लोग सरल भाव से पूज्यश्री के व्याख्यान सुनने आते थे, उनका वे वहिष्कार करने से भी न चूके। उन्हे काम देना-दिलाना वन्द करके उनकी आजीविका का उच्छेद किया। फिर भी उन्होने व्याख्यान सुनना वन्द न किया ओर भक्ति-पूर्वक व्याख्यान सुनते रहे। वहा आपके कई जाहिर व्याख्यान हुए। अनेक जेनेतर भाई भी पूज्यश्री के

भक्त वने। मध्याह्न मे सेठ वृद्धिचन्दजी गोठी आदि शकासमाधान करने आते और निरुत्तर होकर जाते थे।[1]

जब पूज्यश्री सरदारशहर मे विराजमान थे, आवू वाले वावा परमानन्दजी वहा आये। वावाजी पूज्यश्री से मिले। उन्होने तेरापथियो के सिद्धान्त सुने और तेरापथियो से शास्त्रार्थ करने के लिए कहा। मगर तेरापथी शास्त्रार्थ के लिए तैयार न हुए। पूज्यश्री ने भी कई वार तेरापथी पूज्य कालूरामजी स्वामी को शास्त्रार्थ के लिए आह्वान किया मगर वे सामने न आये।

सरदारशहर मे चूरु के सुप्रसिद्ध धनिक सेठ मूलचन्दजी कोठारी पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुए। उन्होने चूरू पधारने की प्रार्थना की। पूज्यश्री ने प्रार्थना स्वीकार कर ली और माघ कृष्ण एकादशी को विहार कर तेले की तपस्या के साथ चूरू मे प्रवेश किया। आपके चूरू मे पहुचने से पहले ही आपकी कीर्ति वहा पहुच चुकी थी। सेकडो की सख्या मे जनता ने आपकी भक्तिभाव-पूर्ण अगवानी की। वडे समारोह के साथ आपने नगर मे प्रवेश किया।

उन दिनो चूरु मे तेरापथियो के माघ महोत्सव की तैयारिया हो रही थीं। सेकडो साधु-साध्विया और हजारो गृहस्थ इकट्ठे हो रहे थे। यहा भी उपद्रव करने की अनेक प्रकार की चेष्टाये की गईं मगर, तमाम चेष्टाये विफल हुईं।

चूरू मे भी बहुत-से तेरापथी भाई शका-समाधान के लिए आते थे। पूज्यश्री आगमो के प्रमाणो के साथ युक्ति पूर्वक शकाओ का समाधान करते। फल यह हुआ कि वहुत-से व्यक्तियो की तेरापथ से श्रद्धा हट गई। सेठ धनपतिसिहजी और गुणचन्दजी कोठारी-दोनो भाइयो ने पूज्यश्री से सम्यक्त्व ग्रहण किया। जेनेतर जनता मे भी पूज्यश्री का प्रभाव खूब वढा। श्रीशुभकरणजी सुराणा आदि भी शका-समाधान के लिए आये।

वायुकाय और साध्वी संयोग

फाल्गुन कृष्णा द्वादशी को पूज्यश्री ने चूरू से विहार किया। सेकडो व्यक्ति विदा देने के लिए आये। चूरू की जेनेतर जनता ने पूज्यश्री से चातुर्मास की प्रार्थना की किन्तु पूज्यश्री समग्र थली प्रान्त मे विहार करके ऐसे स्थान पर चातुर्मास करना चाहते थे, जहा धर्म की विशेष उन्नति हो। अतएव चूरू की जनता की प्रार्थना स्वीकृत न हो सकी।

चूरू से विहार करके आप फाल्गुन शुक्ला प्रतिपद् को, तेला की तपस्या के साथ रतनगढ पधारे। रतनगढ मे सस्कृत-विद्या का अच्छा प्रचार हे। इसे वीकानेर राज्य की काशी कहा जा सकता हे। रतनगढ मे ऋषिकुल नामक सस्था वडी सुन्दर हे। पूज्यश्री जव वहा पहुचे तो ऋषिकुल के ब्रह्मचारियो ने वेदिक मत्रो से आपका स्वागत किया। रतनगढ के वहुत-से विद्वान् आपके सम्पर्क मे आये और जेनधर्म के सवध मे उनकी जो विपरीत धारणाए, तेरापथी सम्प्रदाय के प्रचार के कारण वन गई थी, उनका निराकरण किया। यहा के हनुमान पुस्तकालय मे पूज्यश्री का सार्वजनिक भाषण हुआ। व्याख्यान में तेरापथी भाइयो ने कुछ उपद्रव मचाया। उनके और अन्य सज्जनो के प्रश्न तथा पूज्यश्री के उत्तर अलग परिशिष्ट मे दिये जाएगे। उस समय वहा तहसीलदार उपस्थित न थे। वे पीछे से आये और अपनी

---

१ उनके और अन्य सज्जनो के प्रश्न तथा पूज्यश्री के उत्तर अलग परिशिष्ट मे दिये जाएगे।

असावधानी के लिए पूज्यश्री से क्षमायाचना करने लगे। पूज्यश्री ने उदार हृदय से तहसीलदार साहब को क्षमा पदान की।

रतनगढ मे सेठ सूरजमलजी नागरमलजी तथा श्रीयुत् विलासरायजी तापडिया आदि सज्जनो ने पूज्यश्री के प्रति गहरा भक्ति-भाव प्रदर्शित किया। सत-समागम का उन्हे खूब लाभ मिला।

जब रतनगढ मे पूज्यश्री विराजमान थे तभी वहा से आपने श्रीसूरजमलजी म , श्रीसुन्दरलालजी म , श्रीभीमराजजी म , श्री सिरेमलजी म , श्री जेठमलजी म ठाणा ५ का विहार सुजानगढ की ओर करा दिया था।

कलई खुल गई

यहा से विहार करके पूज्यश्री पडिहारा पधारे।

पडिहारा मे विदित हुआ कि जिन पाच सन्तो ने अलग विहार किया था, उन पर कुछ तेरापथियो ने रणदीसर गाव मे कुण्ड से सचित्त पानी निकलवाकर पीने का आरोप लगाया है। पूज्यश्री के सन्त जब भिक्षा के लिए पधारे तो तेरापथी साधुओ ने उनसे कहा- आपके साधुओ ने सचित्त पानी पीया है। आपका और हमारा वेष एक सरीखा है। आपके कामो से हमारी भी बदनामी होती है। क्यो इस वेष को लजाते हो! इत्यादि। पूज्यश्री को जब इस आरोप का पता लगा तो उन्होने मौन साधन करना उचित न समझा। प्रथम तो तेरापथी साधुओ से, साथ चलकर जाच-पडताल करके आरोप की सत्यता-असत्यता की परीक्षा करने के लिए कहा गया। मगर तेरापथियो को परीक्षा करना अभीष्ट नही था, क्योकि वे अपने आरोपो की असत्यता और मन-गढन्ता भली-भाति समझते थे। असत्य परीक्षा को सहन नही कर सकता।

इतना ही नही, पडिहारा के मुखिया तेरापथी सेठ भैरोदानजी सुराणा को जब मालूम हुआ कि इस घटना की जाच होने वाली है तो उन्हे अपने सम्प्रदाय वालों की ओर विशेष तोर से अपने साधुओ की कलई खुल जाने की चिन्ता हुई। उन्होने चादिया नामक एक नाई को गणेगाव मे रहनेवाली नाथी नामक एक बाई को बुलाने भेजा। नाथी बाई उस दिन रणदीसर के उस कुण्ड पर मौजूद थी। वे अपने नकदनारायण के बल पर सत्य और धर्म को खरीदने की चेष्टा करने लगे।

चादिया नाई गणेगाव पहुचा। नाथी बाई नही गई। वह नाथी बाई के काका कानदासजी वेरागी को ऊट पर बिठलाकर पडिहारा लाया। पडिहारा आने पर भैरोदानजी सुराणा ने उसे बहुत समझाया कि-भाई! हमारी तरफ से लोगो ने बाईस टोला के साधुओ के कच्चा पानी पीने की बात कह दी है। अब यह हमारी इज्जत का प्रश्न बन गया है। हमारी इज्जत रखना तुम्हारे हाथ मे है। नाथी बाई उस कुण्ड पर थी। किसी भी तरह उससे यह कहला दो कि बाईस टोला के साधुओ ने कच्चा पानी पीया है। इतना कह देने से हमारी इज्जत रह जायगी।

कानदास देहाती आदमी था। वह निर्धन और अशिक्षित था। मगर उसका हृदय पाप से डर गया। उसने स्पष्ट कहा- सेठजी, असत्य बात कहकर निर्दोष साधुओ को कलक लगाना घोर पाप है। मै यह पाप नही कर सकता। चाहे मेरी जीभ ही क्यो न काट ली जाय मगर मै साधुओ को झूठा कलक लगाकर पाप का भागी नही बनूगा। बहुत कुछ कहने-सुनने पर भी जब कानदासजी झूठ [illegible]

हुए तो सेठजी को निराशा हुई। तव उनकी सेठानीजी आगे आई। उन्होने कानदासजी को वुलाकर मुह मागी रकम देने का लोभ दिया। सेठानी ने सोचा-रुपया लेकर एक झूठ वोलना कोन वडी वात हे। गरीब आदमी रुपयो के लोभ मे फस जायगा। मगर कानदासजी ने धर्म को रुपये से वडा समझा ओर असत्य वोलने से साफ इन्कार कर दिया।

पूज्यश्री को विश्वास था कि हमारे साधु सचित्त पानी ग्रहण नही कर सकते, तथापि लोकापवाद मिटाने के लिए वे रणदीसर जाने को तेयार हुए। उस समय कुछ सन्त, तेरापथी साधुओ के पास गये ओर उनसे कहा-हम लोग रणदीसर जाकर कच्चा पानी पीने की घटना की जाच करने जा रहे हे, आप लोग भी साथ चलिए, ताकि सत्यासत्य का निर्णय हो जाए। मगर उनका हृदय तो सत्य को समझता ही था अतएव वे साथ जाने को तेयार नही हुए। वोले-'थे जाणो थाका काम जाणे।'

आखिर पूज्यश्री रणदीसर पधारे। घटना की जाच की तो मालूम हुआ कि यह सव तेरापथियो की करतूत हे। वास्तव मे किसी भी साधु ने कच्चा पानी ग्रहण नही किया हे। पूज्यश्री ने गाव के मुखिया लोगो से पचनामा लिख देने के लिए कहा तो सभी लोग सहर्ष तेयार हो गए। पचनामा लिखा जाने लगा।

जब पचनामा लिखा जा रहा था, तव छापर की ओर जाते हुए कुछ तेरापथी साधु रणदीसर के पास से निकले। पूज्यश्री के एक सन्त से उनका साक्षात्कार हो गया। सन्त ने उनसे कहा- गाव मे पचनामा लिखा जा रहा हे। आप लोग चलकर देख क्यो नही लेते ? तब उन साधुओ ने कहा-हमे इस प्रपञ्च मे पडने की क्या आवश्यकता हे ? ओर मन ही मन लज्जित होते हुए वे चुपचाप आगे चल दिये।

अन्तत पचनामा लेकर पूज्यश्री छापर पधार गये। कुछ सन्तो ने तेरापथी साधुओ के पास जाकर कहा-रणदीसर के पचो ने पचनामा लिख दिया हे ओर कच्चे पानी की वात जाच करने पर मिथ्या सिद्ध हो गई।

तेरापथी साधु वोले- तो हम क्या करे ? हमारे पास वात वाजार भाव आई ओर हमने वाजार भाव वाट दी। इसमें हमारा क्या! उत्तर मे कहा गया-ठीक हे, तो जेसे पानी लेने की बात बाजार भाव बाट दी थी उसी प्रकार यह बात भी बाजार भाव बाट दीजिएगा। पचनामे की नकल इस प्रकार हे -

श्री रामजी

गाव रणदीसर का नीचे सई करने वाला सगला पँच ई बात की गवाई देवा, हा, के, माका गाव मे २२ टोला रा ५साधु मिती चेत वदी १४ साजका चलका दिन थका मारा मन्दीर मे आया जि वखत केसरवाइ जेकुदासजी साधु गाव जेगनिया वाला की वेटी अठे उरो नानेरो हे वा यहा ही हे वोने साधाने उत्तरबारी आना दी अर विणने मा सन्ना के साम्हने कहयो के वासाधा कने गाव पडियारा से लीयोडो पानी उणे साथ मे छो अठे पानी उवा साजरो लियो नही अर परवातरा साधाऐ पेमाजी जाट उनो पानी खारा कुवारो वेरायो वो लेकर साधु चल्या गया मारा गाव मे कुँड को काचा पानी साधाऐ वेरीयो कहयो सो झूठ हे मारा गाव मे कूँड रो पानी रे ताला लगीयो रेवे ह मिन्दर का पुजारी सुखदासजी कने कुँजी रेवे हे पुजारी ने भी मा सव जण पूछ लियो पुजारी कयो के कूँची मारा कने थी, मे कूँची कोई ने दीवी नही मारी भानजी नाथी हे काचो पाणी कुन्ड से निकालने पाच साधाने देवारो कहयो सो झूठी वात

हे कूँची मारा कने ही तो नाथी कुँडरो पानी दियो कठा सूँ, सो, मा, सब झना आप आपना धर्म से कहा के म्हारा गाव मे बाईसटोलारा पाच साधा मे से कोई साधु ने काचो पानी दिनो नही साधा लिया नही ओर हम सब जना नाथी को पानी देवा को झूठो नाम गाव पडियारा का माजन कहयो करके सुनियो जद मा नाथी उठा सूँ उवा पीयर गाव जेगनिये गई परी जिको सूँ हमा पिरोयत धनजी ने गाव जेगनिये भेजकर नाथी से पूछाय लियो इने माने ध्यायकर कयो के नाथी साफ कहयो के मे पानी कुण्ड को साधा ने दियो नही मारो नाम झूठो लेबे छै या बात सन्नी साधा ने काचो पानी वेरावा, को, नाम ले वाका झूठा छे ओर हमारे पचो के सामने गाव जेगनीया का कानदासजी साधु अठे आय गया वा हमारे सामने इसी तरह कहयो के मारे गाव जेगनिया मे गाव पडियारा सूँ चाँदा नाई ने भेरूदान जी सुराना को भेज्यो थको मने अर मारा माई की लडकी नाथी ने ऊँटपर चढकर लेवा को आये सो मे उरे साथे गयो अर, नाथी, न गई जेगनिया मे बूजकर गाव पडियारे गयो उठे भैरूदान की हवेली मे जठे वाका साधु उतरया हा वठे मने लेयगा उठे बारा साधु और गण, भाजना, के सामने मासू भेरूदान जी पूछीयों के थे जिन दिन बाईस टोलारा पाच साधु साजरा वखत रणदीसर आया था उस दिन ये रणदीसर मे था ओर छोटा भाई की बेटी नाथी भी उठेई थी मे कयों के मे ओर नाथी उन दिन उठेई था पीछे भेरूदान जी पूछियो के था बाईस टोला का पाच साधु मे से कोई साधु ने कुँड रो काचोपानी दियो जद मा कयो के मे तो पाच साधा मे से कोई ने भी काचो पानी पायो नही दियो नही पछे ओर पूछियो के थारी नाथी साधा कूँ काचो पानी दियो जद मे कयो के मे नाथी से पूछकर आयो हू ओर थाहरो भेज्योडो चादयो नाई भी मारे सामने नाथी ने पूछलियो उनने साफ कहयो के मे काचो पानी कूँड को पाच साधा मे से कोई ने भी दीयो नही पायो नही जद मने भेरूदान जी री बहु और उन चादियो नाई से रातको मने बहुत समझायो के थने केवे जितना रूपीया दे देवा ने सूँया बात कै दे के मे काचो पानी साधा ने वेरायो जद मे कयो के मारी जीभ कट जाय मे तो झूठ नही बोलूँ जद फेर कयो के नाथी को नाम लेले के नाथी कूँड को काचो पानी साधा ने दियो जद मे कयो कि नाथी भी काचो पानी साधा ने दियो नही झूँठो नाम मे केवूँ नही जद सेठानी कयो कि मारी बात था गमाय दीं मै तो तीन गाँव मे या बात चलाय दी के बाईस टोलारा साधा काचो पानी लिदो ने पीधो जद मे कयो के था इसी बात झूठी क्यूँ चलाई थाँरी थे भुगतो मे तो झूँठ नही बोलूँ अँगूठारी निशानी कानदास सामीरी छे ब जवर

या बात कानदासजी मा सब पचो रे सामने कही वे पडियारा सूँ उठे आ गया था जिकासूँ हमने वेरा पडगया ओर हमारा गाव रणदीसर का जागीरदार ओर चौधरी सारा पच मुकनराम जी माजन साराजीना मिलकरने उह कागद लिखकर पूज्यश्री जुवारीलालजी ने दीनो स १९८५ मिती चेत सुदी १२ दीतवार श्री ठाकुरजी का मन्दीर मे लिखियो पीरोयत सलजीरा कलम खुद-

१ सलजीपुरोहितरीसही	१सई, दीपचन्दपोकरना की	१ सई खेमजी पुरोईतरी
१ सई सुखदासपुजारी	१ सई भगवसजी पुरोईतरी	१ सई विसनजीपुरोईतरी
१ सई असज पुरोईतरी	१ सई मुकनरामजीमाजन	कनीराम हाथरा
१ सई पेमा जाटरी	१ बादरसिगजी पुरोईतरी	१ सइ मोतीसिगरी [illegible]
१ द जवर जी परोत	१ सई पुरुषो डुडोकी	१ सइ चा[illegible] [illegible]

सैंतीसवां चातुर्मास (वि. सं. १९८५)

सरदारशहर श्रीसघ के सज्जनो के आग्रह से स १९८५ का चातुर्मास सरदारशहर मे हुआ। प र मुनि श्रीगणेशीलालजी महाराज का चातुर्मास चूरू मे हुआ। इस प्रकार थली पान्त के दो प्रधान क्षेत्रो मे दोनो महापुरुष दया-दान-धर्म का प्रचार करने लगे। सरदारशहर मे प्रात काल पहले मुनिश्री हर्षचन्दजी म 'प्रश्नकाकरण' सूत्र का व्याख्यान करते थे। उसके पश्चात् पूज्यश्री 'सुखविपाक' सूत्र के आधार पर अपनी ओजस्विनी वाणी उच्चारते थे। प्रासगिक विवेचन करते हुए आप शास्त्रीय प्रमाण उपस्थित करके अत्यन्त प्रभावशाली शब्दो मे दया और दान का समर्थन करते थे। मध्याह्न मे तेरापथी भाई तथा दूसरे लोग शका-समाधान करने आते थे। पूज्यश्री प्रमाणपूर्वक उनकी शकाओ का समाधान करते थे।

इस अवसर पर तपस्वी मुनिश्री मागीलालजी महाराज ने उष्ण जल के आधार पर ४५ उपवास किये। तपस्वी श्री केसरीमलजी महाराज ने धोवन और गर्मजल के आधार पर ७१ दिन का तप किया।

सरदारशहर के सेठ श्रीमान् फूसराजजी दूगड तेरापथियो के माने हुए कट्टर श्रावक थे। पूज्यश्री के व्याख्यानो से प्रभावित होकर वे शका-समाधान के लिए आने लगे। कुछ दिनो समागम करने से उनका समस्त भ्रम दूर हो गया और वे पूज्यश्री के भक्त बन गये। इस उदाहरण का प्रभाव दूसरो पर भी पडे बिना न रहा। थली मे सेकडो लखपती ओर कई करोडपति सेठ हे। तेरापथी श्रद्धा के कारण वे दया-दान मे पाप मानते हे। बाढ या दुर्भिक्षआदि प्राकृतिक प्रकोपो से पीडित मनुष्यो ओर पशुओ की सहायता करना वे पाप समझते हे। एक मनुष्य, दूसरे मनुष्य की सहायता करना अधर्म मानता हे। उनके धर्मगुरु उन्हे ऐसा ही पाठ पढाते हे। धर्म का यह केसा भयानक विकार हे। धर्म की सफेद चादर ओढे स्वार्थ की इस कालिमा का नग्न स्वरूप दिखलाने के उद्देश्य से ही पूज्यश्री ने यह प्रवास किया था। थाली लोगो मे से एक भी व्यक्ति अगर दया ओर दान मे धर्म मानने लगे तो कितने ही प्राणियो का भला हो सकता हे। सेठ फूसराजजी दूगड के साथ उनकी पतिपरायण पत्नी ने भी अपना भ्रम दूर कर दिया। वह दया-दान मे धर्म मानने लगे।

द्वितीय श्रावण कृष्णा १४ के दिन तपस्वी मुनिश्री मागीलालजी म की तपस्या का पूर था। उस दिन बहुत से तेरापथियो ने पूज्यश्री के चरण-कमलो मे उपस्थित होकर सम्यक्त्व ग्रहण की ओर अपना जीवन धन्य बनाया।

सवत्सरी के दिन बाजार ओर कसाईखाना बन्द रखा गया। तेरापथी भाई पूज्यश्री के बढते हुए प्रभाव को सहन न कर सके। उन्होने उस दिन दुकाने खुलवाने का बहुत प्रयत्न किया। दुकान बन्द रखने वालो का बष्किार करने की धमकी दी मगर सारे शहर मे ८-९ दुकानो के अतिरिक्त सभी दुकाने बन्द रही। उस दिन तेलियो ने घानी नही चलाई। यह सब पृज्यश्री के उपदेशो का ही प्रभाव था।

इस निष्फलता को देखकर तेरापथी भाई ओर चौकन्ने हो गये। उन्होने देखा- अब हमारे किले की ईंटे धीरे-धीरे खिसकती जा रही हे। वे उसकी रक्षा के लिए व्यग्र हो उठे। आहार-पानी सबधी अडचन डालकर भी वे कुछ कामयाब न हुए तो उनके साधुओ ने अपने श्रावको और श्राविकाओ को स्थानकवासियो के व्याख्यान सुनने का त्याग कराना आरम्भ कर दिया। इस पद्धति से व्याख्यान सुनने वालो की सख्या अलबत्ता कुछ कम हो गई किन्तु भीतर ही भीतर लोगो की जिज्ञासा बढने लगी। मानव

स्वभाव गोपनीय वस्तु की ओर स्वभावत अधिक आकृष्ट होता हे। कइयो ने प्रेरणा करके पूज्यश्री के जाहिर व्याख्यान करवाये। बाजार मे तथा चोधरियो की धर्मशाला मे आम व्याख्यान हुए। तेरापथी और अन्य लोगो पर व्याख्यानो का बहुत प्रभाव पडा। इस प्रकार चार मास पर्यन्त पूज्यश्री धर्म का उद्घोष करते रहे।

सरदारशहर का विजयी चातुर्मास पूरा होने आया तो चूरू के कोठारीजी ने पूज्यश्री से चूरू पधारने की प्रार्थना की। प्रार्थना स्वीकार कर पूज्यश्री ने चातुर्मास समाप्त होने पर चूरू की ओर विहार कर दिया। विहार के समय का दृश्य बडा ही करुणापूर्ण और द्रावक था। सरदारशहर की जनता ने उमडते हुए हृदय से ओर धर्म-प्रेम के कारण भीगी हुई आखो से पूज्यश्री को विदाई दी। सैकडो की सख्या मे लोग आपको पहुचाने गये। बहुत-से व्यक्तियो ने विदाई के अवसर पर भी शुद्ध श्रद्धा ग्रहण की। इस बार चूरू मे श्रीमालचदजी तथा श्री चम्पालालजी कोठारी ने पूज्यश्री से विविध प्रश्नोत्तर किये। पूज्यश्री के उत्तरो से सतुष्ट होकर उन्होने सम्यक्त्व ग्रहण किया।

कुछ दिनो चूरू विराजकर आप ठेलासर होते हुए 'रामगढ' पधारे। रामगढ लक्ष्मी ओर सरस्वती का गढ ही समझिए। यहा बडे-बडे सम्पत्तिशाली श्रीमान् भी है और धुरधर विद्वान् भी हे। यहा की जनता मे बडी गुणग्राहकता हे। सभी ने हृदय से पूज्यश्री का स्वागत किया। यहा विद्वन्मडली होने के कारण तेरापथियो को फिर शास्त्रार्थ के लिए आह्वान किया गया किन्तु किसी ने सामने आने का साहस न किया। राजवैद्य प नाथूरामजी ने एक विज्ञप्ति प्रकाशित करके तेरापथियो को शास्त्रार्थ के लिए आमन्त्रित किया और अजेन विद्वानो एव श्रीमानो को मध्यस्थ बनाने की सलाह दी। फिर भी तेरापथी भाइयो ने शास्त्रार्थ करना स्वीकार नही किया।

रामगढ मे विहार कर पूज्यश्री फतहपुर पधारे। फतहपुर मे श्रीयुत रामनरेश त्रिपाठी ने पूज्यश्री से मिलकर सतसमागम का लाभ उठाया। यहा कुछ दिन तक धर्म-प्रचार करके आप पुन रामगढ होते हुए चूरू पधार गये। चूरू मे दो दीक्षाए होने वाली थी।

चूरू में दीक्षामहोत्सव

गगाशहर निवासी वैरागी रेखचदजी ससार से विरक्त होकर पूज्यश्री के निकट दीक्षा ग्रहण करना चाहते थे। कोठारी तथा अन्य सद्गृहस्थो के आग्रह से पूज्यश्री ने चूरू में दीक्षा प्रदान करने की स्वीकृति दे दी। फाल्गुन कृष्णा नवमी को धूमधाम के साथ वैरागी की सवारी निकली और धर्मशाला मे पहुँची। दीक्षा के लिए यही स्थान नियत किया गया था। ५-६ हजार व्यक्तियो की भीड जमा थी। बाहर से भी बहुत-से गृहस्थ आये थे। ३९ साधु और २० आर्यिकाए उपस्थित थी।

इसी अवसर पर तेरापथी साधु हमीरमलजी ने वहा खडे होकर कहा- 'मेने तेरहपथी सम्प्रदाय मे दीक्षा ली हे। मगर उस सम्प्रदाय के अनेक साधु दोषी हे। मैने अपने पूज्यश्री से उनकी शुद्धि के लिए कहा, मगर वहा सुनवाई नही हुई। अतएव मने तेरहपथ का परित्याग कर दिया ह। साथ ही जीवरक्षा और दया-दान विषयक शास्त्रो का परिचय प्राप्त करके मने समाधान प्राप्त कर लिया ह। मने आत्म-कल्याण के लिए घर छोडा ह। ऐसी स्थिति मे जानबूझकर असत्य मार्ग पर नही चलना चाहता। जीवरक्षा, दया-दान और परोपकार शास्त्रविहित ह, यह बात पूज्यश्री ने स्पष्ट करके बतला दी ह। मै सब भाइयो की साक्षी से पूज्यश्री को गुरु मानकर दीक्षा लेना चाहता हू। पूज्यश्री मुझपर कृपा करे।'

पूज्यश्री ने कोठारीजी तथा दूसरे प्रमुख व्यक्तियो की सम्मति से हमीरमलजी को भी दीक्षा दे दी।

हमीरमलजी ने अभी तक तेरापथी सम्प्रदाय की दीक्षा पाली थी। उन्हे स्थानकवासी सम्प्रदाय के साधुओ की कठोर चर्या का भी पता नही था। इन साधुओ के सयम की कठोरता, आहार-पानी की नीरसता आदि देखकर हमीरमलजी १५ दिनो मे ही साधुत्व के पालन मे अपने को असमर्थ अनुभव करने लगे। मगर लोक-लाज के कारण वह खुलकर बोल नही सकते थे। नतीजा यह हुआ कि एक दिन आहार करते समय करडा धोवन पीना पडा। तब वह बोले-'इसो धोवण पीणो करता तो मरणोई चोखो।' और उसी रात्रि को वह चुपचाप उठकर चल दिये।

दीक्षा-प्रसग पर चूरू के कोठारी-परिवार ने जो उत्साह दिखलाया वह प्रशसनीय ओर आदर्श था। सभी के स्वागत के लिए आपने सुप्रबध किया था। पूज्यश्री, सेठ मालचदजी साहब की कोठी मे ठहरे थे। उसी समय श्रीचम्पालालजी कोठारी तथा श्रीमालचदजी कोठारी ने कई दिनो तक चर्चा करने के पश्चात् शुद्ध श्रद्धा ग्रहण की।

'जेनधर्म कायरो का नही, वीरो का धर्म हे' इस विषय पर पूज्यश्री का अत्यन्त प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। महाराज भैरोंसिहजी साहब के सी आई ई , जज, वकील तथा अन्य राज्याधिकारी उपस्थित थे। अजैन जनता भी बडी सख्या मे व्याख्यान सुनने आई थी।

चूरू से विहार करके पूज्यश्री रतनगढ, सुजानगढ, राजलदेसर, बीदासर आदि स्थानो मे दया-दान का प्रचार करते हुए आषाढ शुक्ला ८ को फिर चूरू पधारे। मार्ग मे कई स्थलो पर तेरापथी पूज्य कालूरामजी स्वामी को शास्त्रार्थ के लिए चुनोती दी गई, किन्तु वे सामने न आये। बहुत-से तेरापथी भाई भी व्याख्यान सुनने आते थे। तेरापथी साधु जगह-जगह घूमकर पूज्यश्री का व्याख्यान सुनने का अपने श्रावको को त्याग करवाते थे, फिर भी कुछ सुलभबोधि ओर जिज्ञासु व्यक्ति व्याख्यान सुनने आ ही जाते थे।

इसी विहार मे पूज्यश्री ने अनुकम्पा की ढालो की रचना की, जिनमे तेरापथियो की युक्तियो का खडन करके शास्त्रीय प्रमाणो द्वारा अनुकम्पा का प्रबल समर्थन किया गया हे। तेरापथियो ने साधारण जनता को भ्रम मे डालने के लिए थली प्रान्त की बोली मे ऐसी कुछ ढाले बना रखी हे जिनमे दया-दान का निषेध किया गया हे। पूज्यश्री ने भी उसी बोली मे उन ढालो का खण्डन करते हुए दया-दान का समर्थन किया हे। पूज्यश्री का जन्म मालवा मे हुआ ओर थली प्रान्त की बोली से वह प्रारभ मे परिचित नही थे, तथापि अल्प काल के परिचय से ही वे उस बोली मे ढाले रचने मे सफल हो सके। यह उनकी प्रखर प्रतिभा का परिचायक हे। इसी समय मे पूज्यश्री ने एक वृहत् ग्रथ की रचना भी की, जिसका नाम 'सद्धर्म-मण्डन' है। यह ग्रथरत्न सरदारशहर, चूरू ओर बीकानेर के चोमासो मे लिखा जाता रहा। तेरापथियो के 'भ्रम-विध्वसन' नामक ग्रथ मे जेनागम के विपरीत जिन कपोल कल्पित बातो का समर्थन किया गया हे, उन बातो की सद्धर्ममडन मे बडी कुशलता ओर सावधानी के साथ परीक्षा की गई हे ओर तेरापथ की मान्यताओ को जिनागम विरुद्ध सिद्ध किया गया हे। इस सबध का यह अद्वितीय ओर प्रामाणिक ग्रथ हे। इसके अध्ययन से जहा तेरापथ की मान्यताओ की कल्पितता विदित हो जाती हे

वहा पूज्यश्री की तीक्ष्ण समीक्षा शक्ति, अगाध सिद्धान्त-ज्ञान और प्रखर प्रतिभा का भी सहज ही पता चल जाता है।

अड़तीसवॉ चातुर्मास (सं. १९८६)

वि स १९८६ का चौमासा पूज्यश्री ने चूरू मे किया। यहा विराजने से अन्यतीर्थिको पर बहुत अच्छा प्रभाव पडा। सिर्फ दो घर श्रद्धालु थे, फिर भी सेकडो की सख्या मे बहुत श्रोता व्याख्यान का लाभ लेते थे। जो लोग जैनधर्म को दया-दान परोपकार आदि का निषेधक समझकर उसे घृणा की दृष्टि से देखते थे, उनके दिल मे भी उसके प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो गई। श्रीयुत मूलचदजी कोठारी ने धनतेरस के दिन अपने अनेक साथियो के साथ पूज्यश्री से श्रद्धा ग्रहण कर ली। श्रद्धा ग्रहण करते समय आपने धोषणा की- 'मै सत्य समझ कर यह श्रद्धा ग्रहण कर रहा हू। इसमे मुझे लेश-मात्र भी सशय नही है। हा, अगर किसी को सदेह हो तो दोनो आचार्य आपस मे शास्त्रार्थ करे। अगर मेरा पक्ष पराजित हुआ तो मै एक लाख रुपया गोशाला के निमित्त दान दूगा। अगर तेरापथी पक्ष पराजित हो जाय तो वह भले ही कुछ भी न दे।' कोठारी जी की यह ठोस चुनोती भी निरर्थक हुई। उसे किसी ने स्वीकार करने की हिम्मत न दिखलाई।

चोमासा समाप्त होने पर पूज्य ने चूरू से विहार किया और सरदारशहर पधारे। सरदारशहर मे आपके आम व्याख्यान हुए। नेमिचदजी छाजेड ओर मोहनलालजी दूगड आदि कई भाइयो ने यहा पर भी तेरापथी सम्प्रदाय का परित्याग कर पूज्यश्री से सम्यक्त्व ग्रहण किया।

सरदारशहर से विहार करके अनेक स्थानो पर धर्म का उद्योत करते हुए पूज्यश्री बीकानेर पधारे।

माघ शुक्ला सप्तमी को सुजानगढ मे तेरापथियो का माघ-महोत्सव होने वाला था। इस उत्सव के अवसर पर उस सम्प्रदाय के प्राय सभी साधु ओर साध्विया एकत्र होते हे। हजारो गृहस्थ दर्शन के निमित्त इकट्ठे होते हे। इस अवसर पर दया ओर दान का प्रचार करने के निमित्त वहा की धर्मशील जनता के विशेष आग्रह से पूज्यश्री फिर सुजानगढ पधारे। तेरापथियो का जमघट होने पर भी जेनेतर जनता वडी सख्या मे पूज्यश्री के उपदेशो का लाभ उठाती थी। जनता की प्रबल इच्छा थी कि इस अवसर पर दोनो आचार्यों का शास्त्रार्थ हो ओर दया-दान सबधी विवादग्रस्त विषय प्रकाश मे आजाए, मगर तेरापथी पूज्यश्री कालूरामजी भूल करके भी शास्त्रार्थ के फदे मे नही फँसना चाहते थे।

तेरापथी सम्प्रदाय के आचार्य को बारम्बार शास्त्रार्थ के लिए मध्यस्थ जनता ने उकसाया परन्तु वे सामना करने का साहस न कर सके। स्वभावत जनता इस दुर्बलता को समझ गई थी ओर उनके अनुयायी भी इस सचाई को मन ही मन समझ रहे थे। अपनी इस दुर्बलता को छिपाने का कोइ उपाय करना उनके लिए आवश्यक हो गया। आखिर एक उपाय ऐसा निकल आया जिससे साप मरे न लाठी टूटे। अर्थात्-शास्त्रार्थ की पराजय से भी वचा जा सके और दुर्बलता का अपवाद भी कुछ अंशो मे दूर हो जाय। एक जाट पडित नेमिनाथ को वे कही से पकड लाए और उसे अगुवा करके शका-समाधान के लिए तयार किया। इस शका-समाधान मे जाट पडित को किस प्रकार निरुत्तर होना पडा और क्या-क्या शका-समाधान हुए इत्यादि सभी बाते सुजानगढ चर्चा नामक पुस्तक मे विस्तार पूर्वक प्रकाशित हो चुकी है। जिज्ञासु पाठक परिशिष्ट मे देख सकते है।

यद्यपि तेरापथी पूज्य स्वय सामने नही आये तथापि इस शका-समाधान का प्रभाव बहुत सुन्दर हुआ। लोगो को बहुत अशो मे सत्य का भान हो गया। पूज्यश्री की योग्यता से वहा की जनता पहले ही परिचित थी, इस शका-समाधान के पश्चात् तो आपका लोहा मानने लगी। श्री रामनदजी ने तथा जेनेतर जनता ने अत्यन्त श्रद्धाभाव से चोमासा करने का बहुत आग्रह किया किन्तु पूज्यश्री ने उस समय कोई निश्चित उत्तर नही दिया।

सुजानगढ से विहार करके पूज्यश्री छापर, पडिहारा, रतनगढ, राजलदेसर आदि स्थानो को पावन करते हुए भीनासर पधार गये। रतनगढ मे सेठ श्रीसूरजमलजी नागरमलजी का तथा अन्यत्र अनेक भाइयो का प्रबल आग्रह टालते हुए तपस्वी श्री बालचदजी महाराज के सथारे के कारण पूज्यश्री शीघ्र ही गगाशहर पधार गये।

तपस्वीराज श्रीबालचन्दजी महाराज का स्वर्गवास

घोर तपस्या और उत्कृष्ट चारित्र के लिहाज से पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज के सम्प्रदाय का स्थान बहुत ऊचा रहा हे। पूज्यश्री स्वय बहुत बडे तपस्वी थे। उन्होने २१ वर्ष तक बेले-बेले पारणा किया था। उत्कृष्ट चारित्र, सरलता, विद्वत्ता आदि अनेक गुणो के कारण विरोधी भी उनके भक्त बन गये थे। उनके पश्चात् दूसरे आचार्यों के समय भी अनेक घोर तपस्वी ओर उग्र सयमी मुनिराज होते रहे हे। पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज के समय भी यह परम्परा अक्षुण्ण रही। मुनिश्री बालचन्दजी महाराज का उग्र सयमी ओर तपस्वी मुनियो मे एक विशिष्ट स्थान था। दीक्षा लेने के बाद तपस्या मे तत्परता से प्रवृत्त हुए। ७० वर्ष की आयु तक आप बराबर छोटी-वडी तपस्याए करते रहे। दीक्षित अवस्था का हिसाब लगाया जाय तो दीक्षित होने के बाद आपका अधिकाश समय तपस्या मे ही बीता।

सवत् १९८७ के चैत्र मे आपको यह प्रतीत होने लगा कि इस जीवन का अतिम समय अव सन्निकट आ गया है। आपकी आयु उस समय ७० वर्ष की थी। आपने उसी समय निराहार रहने की प्रतिज्ञा कर ली। पानी के अतिरिक्त सभी आहारो का त्याग करके तिविहार सथारा ले लिया। पूज्यश्री तपस्वीजी को दर्शन देने के लिये गगाशहर पधार गये। तपस्वीराज ने आचार्य महाराज के दर्शन करके अपने को कृतकृत्य माना ओर पानी का भी त्याग कर देने का विचार प्रकट किया। आपकी परिणामधारा उत्तरोत्तर उत्कृष्ट होती जाती थी। आपने शरीर का ओर जीवन का मोह त्याग दिया था। पूज्यश्री ने द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव देखकर उस समय पानी का त्याग कराना उचित नही समझा। तपस्वीजी किसी दिन पानी का सेवन कर लेते और किसी दिन नही भी सेवन करते थे।

ज्येष्ठ कृष्ण ४ की रात्रि को ९ बजे तपस्वीजी ने ओदारिक शरीर त्याग दिया। अन्तिम समय तक आपके मुख पर एक प्रकार की अनुपम शान्ति ओर तेजस्विता विराजमान रही। अतिम समय मे आपने अनेक श्रावको ओर श्राविकाओं को अनेक प्रकार के त्याग-प्रत्याख्यान करवाए। दूसरे दिन वडी धूमधाम के साथ आपका अतिम सस्कार किया गया।

ज्येष्ठ बदी ५ को पूज्यश्री भीनासर पधार गये।

उनतालीसवां चातुर्मास (सं. १९८७)

वीकानेर की जनता चातक की तरह पूज्यश्री की प्रतीक्षा कर रही थी। उसकी आकाक्षा वडी

प्रबल थी कि इस बार का चोमासा बीकानेर मे ही किया जाय। तदनुसार पूज्यश्री के प्रति आग्रहपूर्ण प्रार्थना की गई ओर वह स्वीकृत हो गई। चोमासे की स्वीकृति से बीकानेर की साधु मार्गी जेन जनता मे उत्साह की लहर दोड गई।

आपाढ शुक्ला १० को पूज्यश्री १५ ठाणो से चोमासा करने के निमित्त बीकानेर पधार गये। उसी वर्ष श्रीनन्दकुवरजी महाराज के सम्प्रदाय की महासती श्रीकिसनाजी ने १६ ठाणो से तथा श्रीरगूजी महाराज के सम्प्रदाय की महासती श्री गुलाबकुवरजी ने ठाणा ९ से बीकानेर मे चोमासा किया।

इस चातुर्मास मे तपस्वी मुनि श्री फौजमलजी म ने धोवन के आधार पर ६८ दिन की तपस्या की। ७४ वर्ष की वृद्धावस्था होने पर भी आप एक दिन धोवन पीते थे ओर दूसरे दिन चोविहार उपवास करते थे। आपके अतिरिक्त अन्य सन्तो और सतियो ने भी विविध प्रकार की तपस्याए कीं। पूज्यश्री ने स्वय ७ दिन की थोक तथा प्रकीर्णक तपस्या की।

आसोज वदि ११ को तपस्वी मुनि श्रीफौजमलजी महाराज की तपस्या का पूर था। उस दिन राज्य की ओर से कसाई खाना बन्द रखा गया और स्थानीय श्रीसघ की प्रेरणा से ठठेरो, लुहारों, भटियारो तथा तेलियो ने अपना धन्धा बन्द रखा। जीव-दया आदि अनेक उपकार हुए। आसोज वदि १२ को तपस्वीजी का पारणा निर्विघ्न हुआ। आप अन्त समय तक प्रसन्न रहे और प्रतिदिन व्याख्यान मे उपस्थित होते रहे।

इस चातुर्मास मे मन्दिरमार्गी भाइयो की ओर से कुछ प्रश्न किये गये जिनका उत्तर पूज्यश्री की ओर से दे दिया गया । वे प्रश्नोत्तर छप चुके है, अत उन्हे यहा देने की आवश्यकता नही हे।

पूज्यश्री का व्याख्यान सुनने के लिए हजारो की सख्या मे श्रोता उपस्थित होते थे। राज्याधिकारी, व्यापारी, जेन, जेनेतर सभी श्रेणियो के श्रोता व्याख्यान से लाभ उठाते थे।

हिन्दी के प्रतिष्ठित लेख श्रीरामनरेश त्रिपाठी पूज्यश्री के दर्शनार्थ उपस्थित हुए। आपने पूज्यश्री के अनेक व्याख्यान सुने। तत्पश्चात् श्रीत्रिपाठीजी ने प्रयाग की मासिक पत्रिका सरस्वती मे एक लेख प्रकाशित किया, जिसका अश इस प्रकार हे -

मेरी बीकानेर यात्रा

अब मे एक बात की चर्चा ओर करने वाला हू, जो राजपूताने से भिन्न प्रान्त-प्रान्त वालो के लिये नई ही नही, कौतूहलजनक भी हे। बीकानेर मे जैनधर्मावलम्बी ओसवाल वेश्यो की सख्या अधिक हे। ये लोग कलकत्ते- बम्बई मे बडा-बडा व्यापार करते है और बडे ही धनी होते हे। इनमे दो सम्प्रदाय ह एक के आचार्य श्री कालूरामजी हे जो तेरापथी कहलाते है, दूसरे के आचार्य श्रीजवाहरलालजी महाराज ह जो बाइस पथ कहलाता हे। गतवर्ष फतहपुर मे जवाहरलालजी महाराज से मेरा साक्षात्कार हुआ था। उनका चरित बहुत ही अच्छा, पवित्र और तपस्या से पूर्ण हे। वे अच्छे विद्वान् निरभिमानी, उदार, सहृदय ओर निस्पृह हे। चोमासे मे वे किसी एक स्थान मे ठहर कर चामासा करते ह आर जनता को अपने व्याख्यानामृत से तृप्त करके सन्मार्ग पर ले चलते ह। उनके व्याख्यान म सामयिकता रहती ह। ओर देश की प्रगति का भी उन्हे काफी ज्ञान ह। वे इतिहास से सत्पुरुषो के जीवन चरित्र म [illegible] बाते लेकर अपने भक्तो को देने मे कभी आलस्य आर सकोच नही करत। इस वर्ष [illegible] चामासा

वीकानेर मे था। मे प्राय प्रतिदिन उनके व्याख्यान मे जाया करता था। कई वार उन्होने श्रीमुख से मेरी चर्चा भी की। इससे उनके भक्तो का मे प्रिय पात्र हो गया ओर वे लोग मेरे साथ वडा प्रेम-प्रदर्शन करने लगे। आचार्यजी के भापणो का प्रभाव उनके सम्प्रदाय के स्त्री-पुरुप दोनो पर वहुत अच्छा पड रहा हे।

वे वडे निर्भय वक्ता हे, पर अप्रियतावादी नही। उनका व्याख्यान सुनने के लिये वीकानेर के राजपदाधिकारी तथा अन्य मत-मतान्तरो के खास-खास लोग भी आते थे।

कोतूहल-जनक वात दूसरे सम्प्रदाय की हे जिसके आचार्य श्रीकालूरामजी महाराज हे। ये भी चोमासा करते हे। उनके भी भक्तो की सख्या अधिक हे। आचार्य कालूरामजी की शिक्षा का कोतूहल-जनक अश यह है- किसी के गले मे फासी लगी हुई हो तो उसे काट देना पाप हे। गायो के वाडे मे आग लगी हो तो उसे बुझा देना या दरवाजा खोलकर गायो को वाहर निकाल देना पाप हे। किसी दीन-दुखी पर दया करना या दान देना पाप हे। कोई किसी निर्दोष वच्चे के पेट मे छुरी खोसता हो तो उसे वचाना पाप है। कोई क्रोधावेश मे गड्ढे मे या कुए मे गिरने जा रहा हो तो उसे वचाना पाप हे। इत्यादि इसी प्रकार की कोतूहल जनक अनेक बाते हे। जो श्रोताओ को समझाई जाती हे ओर उनका प्रभाव भी पडता हे। इस सम्प्रदाय मे धनियो की सख्या वहुत हे पर शिक्षितो की सख्या अत्यन्त कम। क्योंकि शिक्षा के लिये दान देना भी पाप हे। हा खाने, पीने, पहनने मे ये लोग किफायत नही करते। आचार्यजी का उपदेश भी ऐसा ही हे। इस सम्प्रदायवाले भक्त आचार्य कालूरामजी को ही ईश्वर तुल्य मानते हे। ओर उनके साथी साधुओ की सेवा तन-मन-धन से करते हे। अच्छी-से-अच्छी चीजे खिलाते हे। वढिया-से-वढिया वस्त्र पहनाते हे ओर उत्तम-से-उत्तम स्थान मे ठहराते हे। स्त्रियो को रात के पहले ओर पिछले पहर मे आचार्यजी का व्याख्यान सुनने की स्वतन्त्रता रहती हे। इस सम्प्रदाय के लोग खूब मोज की जिन्दगी विताते है। सुनते हे कि राजपूताने मे इस सम्प्रदाय वालो की सख्या साठ हजार के लगभग हे। साठ हजार लोग बीसवीं सदी मे ऐसी भयानक शिक्षा के शिकार हो रहे हे, क्या यह कम आश्चर्य की वात है?

'सरस्वती' रामनरेश त्रिपाठी

जनवरी, १९३१

सरदारशहर के सेठ तनसुखरामजी दूगड तथा अन्य सज्जनो ने सरदारशहर पधारने की प्रार्थना की। पूज्यश्री ने साधुभापा मे समुचित आश्वासन दिया।

वीकानेर का यशस्वी चोमासा समाप्त होने पर पूज्यश्री गगाशहर, भीनासर होते हुए मार्ग-शीर्ष कृष्णा १३ को देशनोक पधारे। २९ दिन तक विराजमान रहे। जेन जेनेतर जनता ने आपके उपदेशो से खूव लाभ उठाया। देशनोक के चारणो तथा दूसरे लोगो पर आपका वहुत प्रभाव पडा। आपके सदुपदेशो के प्रभाव से वहा निम्नलिखित सुधार हुए -

(१) यहा के ओसवाल नुकते के समय रात्रि मे भोजन बनवाते थे। उसमे जीव-हिसा वहुत अधिक होती थी। पूज्यश्री के उपदेश से सव भाइयो ने रात्रि मे रसोई वनाने-वनवाने का त्याग कर दिया।

(२) यहा के चारण जागीरदारो मे दो वर्ष से पारस्परिक उग्र वेमनस्य के फलस्वरूप एक आदमी के प्राण भी चले गये थे। पूज्यश्री के प्रभावक उपदेश से वेमनस्य की ज्वालाए शात हो गईं ओर प्रेम की धारा बहने लगीं।

(३) चारण, खत्री, सुनार आदि ने मास, मदिरा, बीडी, तमाखू आदि अभक्ष ओर मादक द्रव्यो तथा वृक्ष काटने का त्याग किया।

(४) खूब तपस्या हुई। तीन पचरगिया हुईं।

(५) अनेक अजैनो ने, तेरापथी तथा मदिरमार्गी भाइयो ने पूज्यश्री से सम्यक्त्व ग्रहण किया।

(६) देशनोक तथा आसपास के जेनो का सगठन करने के लिए 'श्रीसाधुमार्गी जेन सभा' स्थापित हुई।

(७) बहुत से लोगो ने कन्या-विक्रय करने तथा चर्बी लगे वस्त्र पहनने का त्याग किया।

देशनोक से विहार करके पूज्यश्री रासीसर पधारे। यहा चार तेरापथी भाइयो ने सम्यक्त्व ग्रहण किया। सूरपुरा मे तीन भाइयो ने सम्यक्त्व लिया। नारवा मे बीस सुलभवोधि भाइयो को सम्यक्त्व दिया। पूज्यश्री नारवा से पाचू पधारे। वहा ७० तेरापथियो ने शुद्ध श्रद्धा ग्रहण की। पाचू मे शिथिल साधुमार्गी भाइयो को उपदेश देकर आपने दृढ धर्मी बनाया। तत्पश्चात् पूज्यश्री का सरदारशहर मे पदार्पण हुआ। यहा शेष काल विराजे। दो बाइयो ने दीक्षा ग्रहण कर अपना जीवन सार्थक किया। सरदारशहर से आप चूरू पधारे। चूरू मे शानदार स्वागत किया गया। कुछ दिन यहा बिराजने के अनन्तर ता १२-३-३१ को आप राजगढ पधारे। ग्राम से बाहर शान्त एकान्त वातावरण मे धर्मशाला मे विराजमान हुए। पूज्यश्री के विहार का सवाद पाकर एक दिन पहले ही वहा तेरापथी साधु भी आ पहुचे थे। पूज्यश्री का प्रभावशाली स्वागत हुआ। ता १३-३ को बाजार मे आपने आम जनता को लाभ पहुचाने के लिए सुन्दर उपदेश दिया। समस्त राज्याधिकारी ओर एक हजार के लगभग अन्य श्रोता उपस्थित थे। यहा के तेरापथी वन्धु सरल और भद्र थे। जनता पूज्यश्री के दर्शन से तथा उपदेश से अत्यन्त प्रसन्न और प्रभावित हुई। सभी लोग मुक्त कठ से व्याख्यान की प्रशसा करने लगे।

सेठ अमृतलाल रामचन्द जौहरी, श्री आनन्दराजजी सुराणा और बीकानेर के अनेक श्रावक पूज्यश्री के दर्शनार्थ आये। तेरापथी भाई प्रश्नोत्तर के लिए अकसर आते रहते थे। प्रभाव बहुत सुन्दर पडा। ता २० को यहा के प्रसिद्ध तेरापथी श्री भीखमचन्दजी सरावगी ने अपने सुयोग्य पुत्र के साथ पूज्यश्री से सम्यक्त्व ग्रहण किया। इस घटना ने ओसवालो मे–तेरापथियो मे हलचल–सी मचा दी।

यहा हासी ओर हिसार के श्रावक पूज्यश्री से अपने नगरो मे पधारने की प्रार्थना करने के लिए उपस्थित हुए। उनका आग्रह इतना प्रबल था कि पूज्यश्री के लिए टालना अशक्य हो गया।

राजगढ मे धार्मिक जागृति ओर विशेषत दया-दान के प्रति प्रबल श्रद्धा उत्पन्न करके पूज्यश्री ने विहार किया। यद्यपि पूज्यश्री हिसार की ओर पधारना चाहते थे मगर भादरा के सेठ पूनमचन्दजी नाहरा ओर खूबराम सर्राफ के अनिवार्य आग्रह के कारण आप भादरा की ओर पधारे। ता [illegible]-[illegible]-३१ को आप भादरा पधारे। लगभग २५० अग्रवाल भाइयो ने डेढ मील सामने आकर पूज्यश्री का स्वागत किया। व्याख्यान मे खासी उपस्थिति होती थी। राज्याधिकारी वर्ग ने खूब लाभ उठाया। यहा सेठ

पूनमचदजी नाहरा पूज्यश्री के विशेष भक्त थे। सेठ खूबरामजी सर्राफ पूज्यश्री के उपदेशो से प्रभावित होकर पूज्यश्री के अनुरागी बने। तेरापथी साधु अपने श्रावको को सभाले रहने के उद्देश्य से यहा भी आ पहुचे थे।

भादरा की भद्र-हृदय जनता को भव्य उपदेश देकर, भव-भ्रमण से छूटने का पथ प्रदर्शित करके पूज्यश्री विचरते हुए हिसार पधारे। यहा जाहिर व्याख्यान हुए। आर्यसमाज ओर दिगम्बर भाइयो के साथ प्रश्नोत्तर हुए। अच्छा प्रभाव पडा। हिसार के अनन्तर हासी मे भी आपके आम व्याख्यान हुए। तेरापथी भाई प्रश्नोत्तर के लिए आये। देहली श्रीसघ की ओर से कुछ प्रमुख सज्जन देहली मे आगामी चोमासा करने की प्रार्थना करने आये। यहा प मुनिश्री मदनलालजी महाराज से भी मुलाकात हुई। आप जेनशास्त्रो के अच्छे ज्ञाता हे। पूज्यश्री पर आपकी गाढी श्रद्धा थी। परस्पर प्रेमपूर्ण व्यवहार रहा।

पूज्यश्री भिवानी भी पधारे। यहा भी आपके जाहिर व्याख्यान हुए। यहा के तेरापथी भाइयो ने अनेक प्रकार से विरुद्ध प्रचार करना आरम्भ किया। मगर पूज्यश्री की विद्वत्तापूर्ण वाणी और उत्कृष्ट सयम के सामने विरोधी प्रचार टिक न सका। आर्यसमाजी ओर दिगम्बर जेन भाइयो के कारण वह प्रचार एकदम ठडा पड गया।

भिवानी से विहार कर पूज्यश्री रोहतक पधारे। देहली के श्रीसघ की ओर से पुन चोमासे की प्रार्थना की गई। पूज्यश्री ने श्रीसघ का आग्रह अनिवार्य-सा समझकर साधुभाषा मे समुचित आश्वासन दे दिया। आपने देहली की ओर ही प्रस्थान किया।

दादरी मे पूज्यश्री मनोहरदासजी महाराज के सम्प्रदाय के मुनि श्रीमोतीलालजी महाराज तथा मुनिश्री पृथ्वीदासजी महाराज जो बाद मे आचार्य-पद पर आसीन हुए-तथा कविवर मुनिश्री अमरचन्दजी महाराज विराजमान थे। पूज्यश्री का इन सतो से प्रेमपूर्ण समागम हुआ। इन्ही दिनो कान्फ्रेस की ओर से एक सवत्सरी करने के लिए सभी मुनियो के पास विज्ञप्ति भेजी गई थी। पूज्यश्री ने तथा वहा विराजमान अन्य सतो ने उदारतापूर्वक कॉन्फ्रेस के निश्चयानुसार सवत्सरी करने की स्वीकृति फरमाई।

चालीसवां चातुर्मास (१९८८)

रोहतक से विहार करके पूज्यश्री ता ११-७-३१ को ठाणा १२ से देहली पधारे। देहली का श्रीसघ चिरकाल से पूज्यश्री के लिए लालायित था। भक्ति मे असीम शक्ति हे। भक्त के हृदय की प्रबल भावना भक्तिपात्र को आकर्षित किये विना नही रहती। तदनुसार पूज्यश्री देहली पधार गये ओर वहा ता १७-७-३१ के दिन चोमासा करने की स्वीकृति दे दी। देहली के श्रीसघ के लिए पूज्यश्री की स्वीकृति अत्यन्त उत्साह ओर आनन्द देने वाली सिद्ध हुई। सघ मे एक प्रकार की नई जागृति आ गई। उल्लास का वातावरण फेल गया।

भारतवर्ष के इतिहास मे देहली, दिल्ली या इन्द्रप्रस्थ का नाम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हे। भारत का इतिहास बनाने मे दिल्ली ने जो भाग लिया हे वह किसी दूसरे नगर ने नही लिया। अत्यन्त प्राचीन काल से दिल्ली राजनीतिक हलचलो का केन्द्र रहा हे। दिल्ली ने भारतीय वीरो की वीरता देखी हे, मुगलो का वेभव-विलास देखा हे ओर फिरगियो की कूटनीति देखी हे। देहली भारत का शासक हे। भारतवर्ष के लिए राजशासनादेश दिल्ली से जारी होते रहे हे।

ऐसे नगर मे पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज जैसे महान् धर्मोपदेशक का चोमासा होना भी एक विशेष धटना हे। दिल्ली नगर भारत का राजनीतिक शासक हे तो पूज्यश्री धर्मशासक थे। जेसे दिल्ली के आदेशो की प्रतीक्षा उत्सुकतापूर्वक की जाती हे उसी प्रकार पूज्यश्री के आदेशो ओर उपदेशो की प्रतीक्षा लाखो व्यक्ति करते थे।

भारत की राजधानी मे पूज्यश्री का यह चातुर्मास कई दृष्टियो से महत्त्वपूर्ण रहा। पूज्यश्री देहली के प्रधान और दर्शनीय बाजार चादनी चौक मे, महावीरभवन मे ठहरे थे। आपके व्याख्यानो मे जेन-जैनेतर जनता की भीड लगी रहती थी। व्याख्यान इतने प्रभावशाली होते थे कि देहली जेसे विशाल नगर मे भी उनकी कीर्ति फैलते देर न लगी। अनेक हिन्दू ओर मुस्लिम राष्ट्रीय नेता आपके विचारो से स्फूर्ति लेने के लिए व्याख्यान मे आते थे। काग्रेस के तत्कालीन प्रसिद्ध नेता शेख अताउल्लाशाह बुखारी और उनके भाई हबीबुल्ला शाह बुखारी आदि अनेक सज्जनो ने पूज्यश्री के व्याख्यान मे सम्मिलित होकर नवीन प्रेरणा प्राप्त की। श्रीबुखारी ने सक्षिप्त भाषण करते हुए मुक्त कठ से पूज्यश्री के उपदेशो की प्रशसा की ओर विदेशी तथा मिल के वस्त्र त्यागने की जनता को प्रेरणा की। काका कालेलकर जेसे विचारक विद्वान् भी पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुए। आपने राष्ट्रोन्नति के विपय मे पूज्यश्री के विचार सुने। काका साहव ने अन्त मे वडी प्रसन्नता प्रकट की।

ई सन् १९३१ भारतवर्ष के स्वतत्रता-सग्राम मे वडा ही गोरवपूर्ण समय हे। उस समय भारत मे एक छोर से दूसरे छोर तक क्राति की लहरे लहरा रही थी। महात्मा गाधी के नेतृत्त्व मे असहयोग ओर सत्याग्रह-आन्दोलन अत्यन्त सफलता के साथ चल रहा था। पूज्यश्री इस अहिंसात्मक आन्दोलन का महत्त्व भली-भाति समझते थे। उन्हे विदित था कि यह अहिंसा की खरी कसोटी हे। इसकी सफलता ओर असफलता पर अहिंसा की प्रतिष्ठा ओर अप्रतिष्ठा निर्भर हे। अगर यह आन्दोलन सफल होता हे तो यह अहिंसा धर्म की अभूतपूर्व विजय होगी। जेन धर्म अहिंसा का प्रतिपादक ओर जेन-समाज अहिसा का समर्थक आर पोषक हे। उसे अहिंसा की प्रतिष्ठा के लिए होने वाले इस विशुद्ध सघर्ष मे अपना समुचित भाग अदा करना चाहिए। ऐसा करके वे अहिंसा की महान्-से-महान् सेवा वजा सकेगे। यही कारण था कि पूज्यश्री अपने प्रवचनो मे राष्ट्रधर्म का अत्यन्त प्रभावजनक शब्दो मे प्रतिपादन करते थे। देहली-चातुर्मास के कतिपय व्याख्यान जवाहरकिरणावली' के प्रथम ओर द्वितीय भाग मे प्रकाशित हो चुके हे।[1] उन्हे देखने से स्पष्ट हो जाता है कि पूज्यश्री ने अहिसाधर्म के प्रचार का अनुकूल अवसर पहचान कर कितनी खूबी के साथ उपयोग किया है। आचार्य महोदय की युगदर्शक तीक्ष्ण दृष्टि का इससे भली-भाति पता चल जाता हे। उस समय के आपके उपदेश किसी भी राष्ट्रीय नेता के उपदेशो से कम प्रभावशाली नही हे, फिर भी तारीफ यह हे कि आपने अपनी साधुभाषा का कही उल्लघन नही किया हे आर उन उपदेशो मे धार्मिकता उसी प्रकार व्याप्त हे जेसे दूध मे मिठास व्याप्त रहती हे। निस्सदह आपके यह अमर उपेदश जनता को चिरकाल तक पथ प्रदशित करते रहेगे।

जसे समग्र राष्ट्र मे नवीन चेतना दोड रही थी उसी प्रकार स्थानकवासी समाज म भी जागृति की नइ लहर उठ रही थी। सारे समाज का सगठन करने के लिए अखिल भारतीय साधु सम्मेलन करने की धूम थी। धर्मवीर सेठ दुर्लभजी त्रिभुवन जाहरी तथा दूसरे सज्जन [illegible]

---

१ यह पुस्तके श्रीमान् सेठ [illegible]

थे। समाज का प्रतिनिधिमडल प्रधान-प्रधान मुनिराजो से मिल रहा था ओर आशाजनक आश्वासन प्राप्त कर रहा था।

ता ११-१०-३१ को दिल्ली मे स्थानकवासी जेन काफ्रेस की जनरल कमेटी का अधिवेशन हुआ। मुख्य विचारणीय विषय साधु सम्मेलन था। प्राय सभी प्रातो के ओर सभी सम्प्रदायो के प्रधान श्रावक उपस्थित थे। पूज्यश्री के इस विषय के उपयोगी, सुन्दर ओर महत्त्वपूर्ण विचार सुनकर सभी श्रोता गद्‌गद् हो उठते ओर उनमे नवीन उत्साह आ जाता था। साधु-सम्मेलन के सिलसिले मे एक दिन पूज्यश्री ने फरमाया-

पूज्यश्री का भाषण-ब्रह्मचारी वर्ग

आज निर्ग्रन्थवर्ग की स्थिति कुछ विषम-सी हो रही हे। साधु-समाज और साध्वी-समाज में निरकुशता फेलती जाती हे। इसका कारण, किस प्रकार के पुरुष ओर किस प्रकार की महिला को दीक्षा देनी चाहिए, इस बात का पूरी तरह से विचार नही किया जाता रहा हे। दीक्षा सवधी नियमो का पालन बहुत कम हो रहा हे। इस नियमहीनता का दुष्परिणाम यहा तक हुआ है कि अपनी जेन सम्प्रदाय से भिन्न जेन सम्प्रदाय मे दीक्षा लेने के कारण मुकदमेवाजी तक हो जाती हे।

साधु-समाज के निरकुश होने ओर साधुता के नियमो मे शिथिलता आ जाने के कारणो मे से एक कारण हे-साधुओ के हाथ मे समाज-सुधार का काम होना। आज सामाजिक लेख लिखने, वाद-विवाद करने और इस प्रकार समाज-सुधार करने का भार साधुओ पर डाल दिया गया हे। समाज-सुधार करने का कार्य दूसरा कोई वर्ग अपने हाथ मे नहीं ले रहा हे। अतएव यह काम भी कई-एक साधुओ को अपने हाथ मे लेना पडा हे। इसलिए प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप मे साधुओ द्वारा ऐसे-ऐसे काम हो जाते हे जो साधुता के लिए शोभास्पद नही कहे जा सकते।

यदि समाज-सुधार का काम साधु-वर्ग अपने ऊपर नही लेता तो समाज विगडता हे ओर जो समाज लोकिक व्यवहार मे ही बिगडा हुआ होंगा उसमे धर्म की स्थिरता किस प्रकार रह सकेगी। व्यवहार से गया-गुजरा समाज धर्म की मर्यादा को किस प्रकार कायम रख सकेगा। इस दृष्टि से समाज-सुधार का प्रश्न भी उपेक्षणीय नही हे।

साधु-वर्ग पर जब समाज-सुधार का भार भी होगा तव उनके चारित्र के नियम-परम्परा मे वाधा पहुचने से चारित्र मे न्यूनता आ जाना स्वाभाविक हे। इस प्रकार आज का साधु समाज वडी विषम अवस्था मे पडा हुआ है। एक ओर कुआ, दूसरी ओर खाई-सी दिखाई पडती हे।

समाज-सुधार का भार साधुओ पर पडने का परिणाम क्या हो सकता हे, यह समझने के लिए यति-समाज का उदाहरण मोजूद हे। पहले का यति-समाज आज सरीखा नही था। लेकिन उसे समाज-सुधार का कार्य अपने हाथ मे लेना पडा। इसका परिणाम धीरे-धीरे यह हुआ कि सामाजिकता की ओर अग्रसर होते-होते उनकी प्रवृत्ति यहा तक वढी कि वे स्वय की पालकी आदि परिग्रह के धारक वन गये। यदि वर्त्तमान साधुओ को समाज-सुधार का भार सोपा गया ओर उनमे सामाजिकता की वृद्धि हुई तो उनकी भी ऐसी ही-यतियो जेसी-दशा होना सभव हे। अतएव साधु-समाज के ऊपर-समाज का वोझ न होना ही उत्तम हे। साधुओ का अपना एक अलग ही कार्यक्षेत्र हे। उससे वाहर निकल कर भिन्न क्षेत्र भी अत्यन्त विस्तृत ओर महत्त्वपूर्ण हे।

अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि ऐसा कौन-सा उपाय है, जिससे समाज-सुधार का आवश्यक और उपयोगी काम भी हो सके और साधुओ को समाज-सुधार मे पडना न पडे ?

हमारे समाज मे मुख्य दो वर्ग है- साधु-वर्ग और श्रावक-वर्ग। पर उक्त बोझ पडने से क्या हानिया हो सकती है, यह बात सामान्य रूप से मैं बतला चुका हू। रहा श्रावक-वर्ग, सो इसी वर्ग को समाज-सुधार की प्रवृत्ति करनी चाहिए। मगर हमारा श्रावक वर्ग दुनियादारी के पचडो मे इतना अधिक फसा रहता है और उसमे शिक्षा का भी इतना अभाव है कि वह समाज-सुधार की प्रवृत्ति को यथावत् सचालित नही कर सकता। श्रावको मे धर्म-सबधी ज्ञान भी इतना पर्याप्त नही है, जिससे वे धर्म का लक्ष्य रखकर धर्म-मर्यादा को अक्षुण्ण बनाये रखकर, तदनुकूल समाज-सुधार कर सके। कदाचित् कोई विद्वान् श्रावक मिलता भी है तो उसमे श्रावक के योग्य आदर्श चरित्र और कर्त्तव्यनिष्ठा की भावना पर्याप्त रूप मे नही पाई जाती। वह गृहस्थी के पचडो मे पडा हुआ होता है, अतएव उसकी आवश्यकताए प्राय अन्य सामान्य गृहस्थो के समान ही होती है। ऐसी स्थिति मे वह अर्थ के धरातल से ऊपर नही उठ पाता और जो व्यक्ति अर्थ के धरातल से ऊपर नही उठा है, उसमे निस्पृह, निरपेक्ष भाव के साथ समाज-सुधार के आदर्श कार्य को करने की पूर्ण योग्यता नही आती। उसे अपनी आवश्यकताए पूर्ण करने के लिए श्रीमानो की ओर ताकना पडता है, उनके समाज-हित-विरोधी कार्यों को सहन करना पडता है। इसके अतिरिक्त त्याग की मात्रा अधिक न होने से समाज में उसका पर्याप्त प्रभाव भी नही रहता। इस स्थिति मे किस उपाय का अवलम्बन करना चाहिए, जिससे समाज-सुधार के कार्य मे रुकावट न आवे और साधुओ को भी इस कार्य से अलहदा रखा जा सके ? आज यही प्रश्न हमारे सामने उपस्थित है और उसे हल करना अत्यावश्यक है।

मेरी सम्मति के अनुसार इस समस्या का हल ऐसे तीसरे वर्ग की स्थापना करने से ही हो सकता है, जो साधुओं और श्रावको के मध्य का हो। यह वर्ग न तो साधुओ मे ही परिगणित किया जाय और न गृह-कार्य करने वाले साधारण श्रावको मे ही। इस वर्ग मे वे ही व्यक्ति समाविष्ट किये जाए जो ब्रह्मचर्य का अनिवार्य रूप से पालन करे और अकिचन् हो अर्थात् अपने लिए धन-सग्रह न करे। वे लोग समाज की साक्षी से, धर्माचार्य के समक्ष इन दोनो व्रतो को ग्रहण करे। इस प्रकार के तीसरे त्यागी श्रावक-वर्ग से समाज-सुधार की समस्या भी हल हो जायगी और धर्म का भी विशेष प्रचार हो सकेगा। साथ ही निर्ग्रन्थवर्ग भी दूषित होने से बच जायगा।

इस तीसरे वर्ग से समाज-सुधार के अतिरिक्त धर्म को क्या लाभ पहुँचेगा, यह बात सक्षेप मे बतला देना आवश्यक है।

मान लीजिए कोई व्यक्ति धर्म के विषय मे लिखित उत्तर चाहता है। साधु अपनी मर्यादा के विरुद्ध किसी को कुछ लिखकर नही दे सकता। अतएव ऐसी स्थिति मे लिखित उत्तर न देने के कारण धर्म पर आक्षेप रह जाता है। अगर यह तीसरा वर्ग स्थापित कर लिया जाय तो वह लिखित उत्तर भी दे सकेगा।

इसी प्रकार अगर अमेरिका या अन्य किसी विदेश मे सर्वधर्म-सम्मेलन होता है, वहा सभी धर्मों के अनुयायी अपने-अपने धर्म की श्रेष्ठता का प्रतिपादन करते है। ऐसे सम्मेलनो मे मुनि सम्मिलित नही हो सकते अतएव धर्म-प्रभावना का कार्य रुक पडता है। यह तीसरा वर्ग ऐसे-ऐसे अवसरो पर उपस्थित

होकर जेनधर्म की वास्तविक उत्तमता का निरूपण करके धर्म की वहुत कुछ सेवा वजा सकता है। आजकल ऐसे सम्मेलनो मे वहुधा जेनधर्म के प्रतिनिधि की अनुपस्थिति रहती हे ओर इससे जेनधर्म के विपय मे इतर सहानुभूतिशील व्यक्तियो मे भी उतना उच्च विचार उत्पन्न नही हो पाता। वे जेनधर्म के गरिमा-ज्ञान से वचित रहते हे। तीसरा वर्ग ऐसे सभी अवसरो पर उपयोगी होगा। इससे धर्म की प्रभावना होगी।

इसके अतिरिक्त ओर भी वहुतेरे कार्य हे, जा सच्चे सेवा भावी ओर त्यागपरायण तृतीय वर्ग की स्थापना से सरलतापूर्वक सम्पन्न किये जा सकेगे, जेसे साहित्य-प्रकाशन ओर शिक्षा आदि। आज यह सव कार्य व्यवस्थित रूप से नही हो रहे हे। इनमे व्यवस्था लाने के लिए भी तीसरे वर्ग की आवश्यकता हे।

तीसरे वर्ग के होने से धार्मिक कार्यों मे वडी सहायता मिलेगी। यह वर्ग न तो साधुपद की मर्यादा मे वधा रहेगा ओर न गृहस्थी के झझटो मे ही फसा होगा। अतएव यह वर्ग धर्म-प्रचार मे उसी प्रकार सहायता पहुँचा सकेगा, जेसे चित्त प्रधान ने पहुँचाई थी। तात्पर्य यह हे कि तीसरे वर्ग की स्थापना से ऐसे अनेक कार्य सम्पन्न हो सकेगे, जो न साधुओ द्वारा होने चाहिए ओर न (साधारण) श्रावको द्वारा हो सकते हे।

तीसरे वर्ग के होने से एक लाभ ओर भी हे। आज अनेक व्यक्ति ऐसे हे, जिनसे न तो साधुता का भली-भाति पालन होता हे ओर न साधुता का ढोग ही छूटता है। वे साधु का वेष धारण किये हुए साधु की मर्यादा के भीतर नही रहते। तीसरे वर्ग की स्थापना से ऐसे व्यक्ति इस वर्ग मे सम्मिलित हो सकेगे ओर साधुत्व के ढोग के पाप से वच जाएगे। लोग असाधु को साधु समझने के दोष से वच सकेगे।

तीसरे वर्ग की स्थापना से यद्यपि साधुओ की सख्या घटने की सम्भावना हे ओर यह भी सम्भव है कि भविष्य मे अनेक पुरुष साधु होने के वदले इसी वर्ग मे प्रविष्ट हो, लेकिन इससे घवडाने की आवश्यकता नही हे। साधुता की महत्ता सख्या की विपुलता मे नही हे, वरन् चारित्र की उच्चता ओर त्याग की गम्भीरता मे हे। उच्च चारित्रवान् ओर सच्चे त्यागी मुनि अल्प-सख्यक हो तो भी वे साधु-पद की गुरुता का सरक्षण कर सकेगे। वहुसख्यक शिथिलाचारी मुनि उस पद के गोरव को वढाने के वदले घटाएगे ही। अतएव मध्यमवर्ग की स्थापना का परिणाम यह भी होगा कि जो पूर्ण त्यागी ओर पूर्ण विरक्त होगे वही साधु वनेगे ओर सच्चे लोग मध्यम वर्ग मे सम्मिलित हो जाएगे। इस प्रकार साधुओ की सख्या कदाचित् घटेगी तो भी उनकी महत्ता वढेगी। जो लोग साधुता का पालन पूर्णरूपेण नही कर सकते या जिन लोगो के हृदय मे साधु वनने की उत्कठा नही हे, वे लोग किसी कारण विशेष से, वेप धारण करके साधु का नाम धारण कर भी ले तो उनसे साधुता के कलकित होने के अतिरिक्त ओर क्या लाभ हो सकता हे ? इसलिए ऐसे लोगो का मध्यम वर्ग मे रहना ही उपयोगी ओर श्रेयस्कर हे। इन सव दृष्टियो से विचार करने पर समाज मे तीसरे वर्ग की विशेप आवश्यकता प्रतीत होती हे।'

पूज्यश्री ने ब्रह्मचारी वर्ग की स्थापना की जो योजना कान्फ्रेस के सदस्यो के समक्ष उपस्थित की थी, आज भी विचार करने पर वह अत्यन्त उपयोगी हे। पूज्यश्री की इस योजना को लोगो ने वहुत पसन्द किया। कान्फ्रेस के अगले अजमेर अधिवेशन मे वह स्वीकृत भी की गई ओर धर्मवीर श्रीदुर्लभजी भाई जोहरी ने उसी समय उसमे प्रविष्ट होने की पहली घोषणा भी की मगर खेद हे कि वह योजना

कार्यान्वित नही हुई। वह चाहे आज कार्यान्वित न हो सके मगर एक दिन आएगा जब उसे अमल मे लाना अनिवार्य हो जायगा। अतएव पूज्यश्री की यह योजना अमर हे ओर उसे काम मे लाये बिना सघ का श्रेयस सध नही सकता।

देहली चातुर्मास मे तपस्वी मुनिश्री केसरीमलजी म ने ४१दिन का उपवास केवल उष्ण जल के आधार पर किया। पूर के दिन गरीबो को अन्न बाटा गया, दूध की प्याऊ लगाई गई ओर जीव-दया के अन्य अनेक कार्य हुए।

पदवी-प्रदान

देहली की जनता पूज्यश्री के व्याख्यानो को मत्र-मुग्ध होकर सुनती थी। आपकी विद्वत्ता ओर सयम निष्ठा से प्रभावित होकर देहली श्रीसघ ने निम्नलिखित मानपत्र पूज्यश्री की सेवा मे समर्पित किया

श्रीमान् भगवान् महावीर परम्परागत श्री स्थानकवासी जेनाचार्य पूज्यश्री १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज की पवित्र सेवा मे सविनय समर्पित-

अभिनन्दन पत्र

मिथ्यात्विमत करिकुलकुहेतु कुम्भविदारण केसरिणम्।
पूज्य जवाहरलाल जेनाचार्यं स्मरामि सद्भक्त्या॥
प्रतिभाजित वाचस्पतिरिति कृत्वा मुग्धमानसा नित्यम्।
निवसति धन्यमन्या कठे देवी सरस्वती यस्य॥

पूज्यवर!

हमे आपके रोचक, मर्मस्पर्शी, हृदयग्राही, एव महत्त्वपूर्ण व्याख्यान सुनने का सोभाग्य प्राप्त हुआ। आप अपने व्याख्यान मे जेन साहित्य का जो न्यायसगत दिग्दर्शन कराते हे, उसे तथा आपके त्याग, वेराग्य ओर क्षमा शान्ति आदि गुणो को देखते हुए हम इस निश्चय पर पहुचे हे कि आप जेन साहित्य तथा जेन न्याय के प्रतिभाशाली विद्वान् ओर वक्ता है। हमे अपने आचार्य के गुण,विद्वत्ता, बुद्धिमत्ता ओर गम्भीरता पर गर्व हे। आपकी अलोकिक प्रतिभा ओर विद्वत्ता हमे विवश कर रही हे कि हम अपने आचार्य को कुछ भेट करे। लेकिन क्या भेट करे! धन-सम्पत्ति को तो आपने स्वय त्याग दिया हे, इसलिए उसे आपकी भेट करना आपका सम्मान नही कहला सकता। अत हम आपकी सेवा मे अपनी श्रद्धा ओर भक्ति का परिचय देने के लिए केवल 'जेन साहित्य चिन्तामणि' ओर 'जेनन्याय दिवाकर' ये दो उपाधिया भेट करते हे। आशा हे कि आप हमारी तुच्छ भेट को स्वीकार करके हमे कृतार्थ करेगे। इति शुभम्।

हम हे आपके सेवक गण
श्री स्थानकवासी जेन श्रीसघ
देहली

पूज्यश्री की अस्वीकृति

जीवन मे एक ऐसी अवस्था होती हे जब मनुष्य को पदवियो की प्रबल लालसा रहती हे। मगर जब वह अवस्था व्यतीत हो जाती हे तब उपाधिया व्याधिया प्रतीत होने लगती हे। [illegible] जीवन का

स्तर वास्तव मे ऊचा उठ जाता है- जो अपनी आत्मा को ही ऊपर उठा लेता है, वह उपाधिया लेकर क्या करेगा ? ऊपर से जोडी हुई उपाधि वास्तविक व्यक्ति की हीनता की सूचक है। जव जीवन हीनता से ऊपर उठ गया तो उसे उपाधियो की कोई आवश्यकता नही रही। जेसे वालक सुन्दर वस्त्र ओर आभूपण पहनकर ख़ुशी के मारे उछलने लगता है उसी प्रकार हीन व्यक्तित्व वाला पुरुप अपने नाम के आगे-पीछे उपाधि लगी देखकर फूला नही समाता। पूज्यश्री इस कोटि के पुरुप नही थे। उनका व्यक्तित्व स्वत इतना उच्चतर था कि वह उपाधियो से परे पहुच चुका था। उपाधिया उनके जीवन की ऊचाई तक पहुच भी नही सकती थी तो उनकी क्या महत्ता वढाती ?

इसके अतिरिक्त अवस्थासूचक पदवी के अतिरिक्त गुणो को व्यक्त करने वाली पदविया एक प्रकार का आन्तरिक परिग्रह हे। जो महात्मा वाह्य परिग्रह को भी नही सहन कर सकता वह आन्तरिक परिग्रह को केसे स्वीकार कर सकता है ?

पूज्यश्री ने देहली श्रीसघ द्वारा दी जाने वाली पदवियो को स्वीकार नही किया। श्रीसघ ने यद्यपि अपनी प्रशसनीय गुणग्राहकता का परिचय दिया था फिरभी पूज्यश्री ने धन्यवाद के साथ पदविया अस्वीकार कर दी। इस अस्वीकृति के मूल मे शायद एक कारण भी था कि यह परम्परा आगे चलकर गलत रूप धारण कर सकती थी ओर साधुओ को पदवी के प्रलोभन मे डाल सकती थी। पूज्यश्री ने पदविया अस्वीकार करके साधु-समूह के सामने एक सुन्दर आदर्श खडा किया।

मुनियों की परीक्षा

इस चातुर्मास मे मुनिश्री श्रीमलजी महाराज तथा प मुनिश्री जेठमलजी म का सस्कृत भाषा अध्ययन चालू था। आप वडे परिश्रम से अध्ययन करते रहते थे। एक वार कुछ श्रावको ने कहा- मुनिश्री कितना ओर केसा अभ्यास कर रहे हे, इस वात का पता तो हमे भी चलना चाहिए ? तव कलकत्ता विश्वविद्यालय के सस्कृत भाषा के लेक्चरार प सकलनारायण शर्मा ने मुनि महाराज की परीक्षा ली। सस्कृत की परीक्षाएँ यो तो अनेक जगह होती हे परन्तु उन सवमे बनारस की परीक्षाओ का वहुत महत्त्व हे ओर वनारस की परीक्षाएँ अच्छी योग्यता वाले ही उत्तीर्ण कर पाते हे।

प्रोफेसर शर्मा ने मुनिश्री की सस्कृत-व्याकरण की मध्यमा परीक्षा के ग्रथो मे परीक्षा ली थी। हर्ष का विषय हे कि मुनिश्री ने प्रथम श्रेणी के अक प्राप्त करके अपनी कुशलता का परिचय दिया। परीक्षक अत्यन्त प्रसन्न हुए। उन्होंने निम्नलिखित प्रमाणपत्र दिया-

अस्माभि श्रीमुनिवर जवाहरलाल शिष्य श्री श्रीमल्ल श्वेताम्वरीयो मुनिर्वाराणसीस्थ राजकीय सस्कृत व्याकरणमध्यमापरीक्षापाठ्यग्रन्थे परीक्षित । योग्यता चास्य समीचीनाऽऽस्ते। अनेन प्रथमश्रेण्या उत्तीर्णाङ्का लब्धा। वय परीक्षापाटवप्रदर्शनेन प्रीता प्रमाणपत्रमुत्तीर्णतासूचक मस्मै प्रयच्छाम ।

सकलनारायणशर्मणाम्।

कलकत्ता-विश्वविद्यालय व्याकरण व्याख्यातृणाम।

यद्यपि साधुओ को परीक्षा देने को कोई आवश्यकता नही होती, तथापि उनके अध्ययन के लिए समाज का जो व्यय होता है, वह सार्थक हो रहा है या नही, ओर पढने वाले मुनि कही प्रमाद तो नही

करते, यह जानने के लिए परीक्षा ही उपयोगी उपाय है। पूज्यश्री जब अपने शिष्यो को अध्ययन कराते थे तो वे इस बात की बडी सावधानी रखते थे।

इसी प्रकार मुनिश्री जेठमलजी म सा ने भी सफलता के साथ उत्तीर्णता प्राप्त की। खेद है कि आप अल्प वय मे ही स्वर्गवासी हो गये।

देहली का चौमासा बडी शान्ति से व्यतीत हुआ। चौमासे मे अनेक उपकार के कार्य भी हुए। बगाल के बाढ-पीडितो की दयनीय दशा का पूज्यश्री ने हृदयद्रावक शब्दो मे वर्णन किया। श्रोताओ पर गहरा प्रभाव पडा और देहली श्रीसघ की ओर से अच्छी सहायता पहुचाई गई।

चौमासे मे श्रीमणिलाल कोठारी पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुए। पूज्यश्री उन दिनो भी खादी के सबध मे प्रभावशाली वक्तृता दिया करते थे। कोठारीजी पूज्यश्री से अत्यन्त प्रभावित हुए। एक दिन उन्होने कहा- 'मैने अपने जीवन मे साधुओ मे से सिर्फ गाधीजी और पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज को तथा नरेन्द्रो मे मेवाड के महाराणा फतहसिहजी साहब को ही सिर झुकाया है। मेरा मस्तक और किसी के सामने नही झुका।'

श्रीमणिलाल कोठारी ने खादी के सबध मे एक अपील भी की और देहली के श्रावको ने पर्याप्त खादी खरीद कर उनकी अपील का समुचित उत्तर दिया।

पूज्यश्री के सदुपदेश से बन्दरो के प्राणो की भी रक्षा हुई।

इस प्रकार दिल्ली चोमासा बडी शानदार सफलता के साथ समाप्त हुआ।

जमुना पारः गिरफ्तारी की आशंका

जिस समय पूज्यश्री दिल्ली मे विराजमान थे, यमुना पार के बहुत से सज्जन सेवा मे उपस्थित हुए। उन्होंने अपने क्षेत्र मे पधारने की आग्रहपूर्ण प्रार्थना की। पूज्यश्री ने प्रार्थना स्वीकार कर ली और चातुर्मास समाप्त होने पर उस ओर विहार कर दिया।

यह पहले ही कहा जा चुका है कि उन दिनो राष्ट्रीय आन्दोलन जोरो पर था। प्राय सभी नेता जेल के सीखचो मे बद कर दिये गये थे। पूज्यश्री के व्याख्यान धार्मिकता से सगत किन्तु राष्ट्रीयता के रग मे रगे होते थे। श्रोताओ मे जेन-अजेन का भेद-भाव लगभग उठ गया था। सभी प्रकार की जनता आप का व्याख्यान सुनने के लिए टूट पडती थी। शुद्ध खद्दर के वस्त्र, राष्ट्रीयता से सनी हुई ओजस्विनी वाणी अपार जनता के हृदयो पर जादू-सा प्रभाव आदि देखकर सरकार भयभीत हो गई। धर्माचार्य के रूप मे यह नया राष्ट्रीय नेता सरकार की आखो मे खटकने लगा। सरकारी गुप्तचर पूज्यश्री के पीछे-पीछे फिरने लगे।

जब श्रावको को इस परिस्थिति का पता चला तो उनका चिन्तित होना स्वाभाविक था। श्रावको को पूज्यश्री की गिरफ्तारी का भय होने लगा। कुछ श्रावको ने पूज्यश्री से प्रार्थना की- आप अपने व्याख्यान को धर्म तक ही सीमित रखे। राष्ट्रीय बातो के आने से सरकार को सदेह हो रहा है। कही ऐसा न हो कि आप गिरफ्तार कर लिये जाए और सारे समाज को नीचा देखना पडे।'

पूज्यश्री का सिंहनाद

पूज्यश्री ने उत्तर दिया- 'मे अपना कर्त्तव्य भली-भाति समझता हू। मुझे अपने उत्तरदायित्त्व का भी पूरा भान हे। मै जानता हू कि धर्म क्या हे ? मे साधु हू। अधर्म के मार्ग पर नही जा सकता। किंतु परतत्रता पाप हे। परतत्र व्यक्ति ठीक तरह धर्म की आराधना नही कर सकता। मे अपने व्याख्यान में प्रत्येक बात सोच-समझ कर तथा मर्यादा के भीतर रहकर कहता हूँ। इस पर यदि राजसत्ता हमे गिरफ्तार करती हे तो हमे डरने की क्या आवश्यकता हे ? कर्त्तव्य-पालन मे डर केसा ? साधु को सभी उपसर्ग व परीषह सहने चाहिए, अपने कर्त्तव्य से विचलित नहीं होना चाहिए। सभी परिस्थितियो मे धर्म की रक्षा का मार्ग मुझे मालूम हे। यदि कर्त्तव्य का पालन करते हुए जेन-समाज का आचार्य गिरफ्तार हो जाता हे तो इसमे जेन-समाज के लिए किसी प्रकार के अपमान की बात नही हे। इसमे तो अत्याचारी का अत्याचार सभी के सामने आ जाता हे।'

पूज्यश्री के दृढतापूर्ण और वीरतापूर्ण उत्तर को सुनकर प्रार्थना करने वाले श्रावक चुप रह गये। आपके व्याख्यानो की धारा निर्बाध-रूप से उसी प्रकार प्रवाहित होती रही।

विहार ओर प्रचार

देहली से विहार करके पूज्यश्री सदर, शहादरा, विनोली, बडोत, शिरसली, एलम, निसार, काधला, छपरोली आदि अनेक स्थानो मे विचरे। पूज्यश्री के व्याख्यानो का वहा के किसानो पर बहुत प्रभाव पडा। बहुतेरे किसान सर्दी के दिनो मे, प्रात काल उठकर पाच-पाच कोस की दूरी तक आकर पूज्यश्री के व्याख्यानों मे सम्मिलित होते थे। हजारो किसान चातक की भाति आपके व्याख्यानो के लिए उत्कठित रहते थे। जहा आपका व्याख्यान होता वही अपार भीड इकट्ठी हो जाती थी। पूज्यश्री थोडे ही दिनो का कार्यक्रम बनाकर उस ओर पधारे थे किन्तु कृषक जनता के भक्तिमय आग्रह से काफी दिन लग गये। किसानो मे इस प्रकार धर्म ओर राष्ट्रीयता का प्रचार करने वाले आप प्रथम उपदेशक थे।

आपके उपदेशो से बहुत-से लोगो ने पुरानी अदावते छोडी, बीडी, सिगरेट, शराब, मास आदि हानिकारक पदार्थों के सेवन का त्याग किया ओर अनेक प्रकार के अनाचारो का त्याग किया।

खेखडा ग्राम मे दिगम्बर समाज ने हृदय से आपका स्वागत किया।

खट्टा गाव मे तमाखू का बहुत प्रचार था। आपके उपदेश से प्राय सभी ने उसका त्याग कर दिया। पूज्यश्री खट्टा से लोहासराय पधार रहे थे तब मार्ग मे जमींदारो ने आपको घेर लिया ओर व्याख्यान देने की विनीत प्रार्थना की। पूज्यश्री को रुकना पडा। व्याख्यान हुआ। श्रोताओ ने हुक्का तथा विदेशी वस्त्रो आदि का त्याग किया। इसी प्रकार बडोत मे भी हुक्का ओर चर्बी के वस्त्रो का त्याग कराया गया। शिरसली मे पचो मे आपस मे वेमनस्य था। आपके प्रभाव से वेमनस्य दूर हो गया। जमींदारो ने हुक्के का तथा अमावस्या के दिन बेल जोतने का त्याग किया। नामनोली मे पुराना झगडा मिट गया। जमींदारो ने अनेक प्रकार के त्याग किये। ईश्वर-भजन करने का नियम लिया।

इस प्रकार पूज्यश्री के उदात्त चरित्र तथा तेजस्वी व्यक्तित्व ओर प्रभावशाली वक्तृत्व से इस प्रात मे असीम उपकार हुआ।

इस ओर जेन साधुओ का विहार बहुत कम होता हे। यहा की जनता ने चोमासा करने की प्रार्थना की-अत्यधिक आग्रह भी किया किन्तु कई आवश्यक कारणो से आपको मारवाड की ओर पधारना था, अतएव आपने यह प्रार्थना स्वीकार नही की। पूज्यश्री छपरोली होते हुए यमुना के इस पार पधार गये। वहा से भिवानी, हासी, हिसार, राजगढ आदि क्षेत्रो को पवित्र करते हुए चूरू पधार गये। चूरू मे जोधपुर से श्रीचदनमलजी कोचर आये। आपने जोधपुर मे चोमासा करने की प्रार्थना की। मगर पूज्यश्री ने सिर्फ नागोर की ओर विहार करने के भाव व्यक्त किये।

पूज्यश्री ने साधु-सम्मेलन तथा समाचारी आदि आवश्यक विषयो पर विचार करने के लिए मुख्य-मुख्य मुनिराजो को नागौर मे एकत्र होने का आदेश दिया था। तदनुसार मुनि श्री मोडीलालजी महाराज, मुनिश्री चादमलजी महाराज, मुनि श्रीहर्षचन्दजी महाराज, प मुनि श्री गणेशीलालजी महाराज, (वर्त्तमान आचार्य) आदि प्रधान मुनि वहा एकत्र हुए। पूज्यश्री ने मार्ग मे ही 'श्रीवर्द्धमान सघ' की योजना तेयार की थी। यह योजना मुनियो के समक्ष पढी गई ओर सवने स्वीकार की। योजना साधु-सम्मेलन के प्रकरण मे दी जायगी।

नागार मे जोधपुर श्रीसघ की ओर से चौमासा करने की पुन प्रार्थना की गई। इस वार पूज्यश्री ने प्रार्थना स्वीकार कर ली। ता १२-५-३२ को आप नागोर से विहार कर गोगोलाव पधारे। वहा तथा मार्ग मे सर्वत्र धर्मोपदेश देते हुए ओर यथाशक्य त्याग-प्रत्याख्यान कराते हुए आपाढ शुक्ला १ को आप जोधपुर पधार गये।

एकतालीसवां चातुर्मास (सं. १९८९)

विक्रम सवत् १९८९ का चोमासा पूज्यश्री ने ठाणा १३ से जोधपुर मे व्यतीत किया।

आपके धर्मोपदेश से जोधपुर मे बहुत उपकार हुआ। सेकडो व्यक्तियो ने मास, मदिरा, बीडी, सिगरेट, चर्वी लगे वस्त्र आदि जीवन को पतित करने वाले पदार्थों का परित्याग कर उद्धार-मार्ग की ओर कदम रखा। कई व्यक्तियो ने आजन्म ब्रह्मचर्य जेसा दुरूह व्रत अगीकार किया। राज्याधिकारियो ने तथा अन्य जेनेतर जनता ने भी खूब लाभ उठाया। महाराज श्रीफतहसिहजी सा होम मिनिस्टर, रा व रावराजा श्री नरपतसिहजी मिनिस्टर, महाराज श्री विजयसिहजी आदि विशिष्ट सज्जनो ने पूज्यश्री का उपदेश श्रवण किया। धर्म-चर्चा की ओर खूब प्रभावित हुए। जोधपुर के युवकरत्न श्रीइन्द्रनाथजी मोदी आर श्री जसवतराजजी मेहता जेसे सज्जनो के हृदय मे पूज्यश्री ने धर्म के प्रति विशिष्ट अनुराग का भाव उत्पन्न कर दिया।

जोधपुर मे निमलिखित सतो ने तपस्या की -

(१) श्रीसूरजमलजी महाराज ३१ दिन

(२) श्रीभीमराजजी महाराज ६ का थोक

(३) श्रीजटमलजी महाराज ६ दिन

(४) श्रीधनराजजी महाराज ५ का थोक

(५) श्रीसुगनचदजी महाराज ६ दिन

(६) [illegible] महाराज [illegible]

इनके अतिरिक्त कतिपय महासतियो ने भी अच्छी तपस्या की। इस चातुर्मास मे जोधपुर श्रीसघ ने लोगो की टीका-टिप्पणी की परवाह न करके आगत दर्शनार्थी भाइयो का सादे भोजन से स्वागत किया। श्रीसघ का यह साहस सराहनीय था। जोधपुर के श्रीसघ ने अन्य श्रीसघो के सामने अच्छा आदर्श उपस्थित किया और छोटे श्रीसघो को इससे राहत मिली।

साधु सम्मेलन का प्रतिनिधि मण्डल

कार्तिक शुक्ला ११ को साधु-सम्मेलन का शिष्टमण्डल पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुआ। उसमे स्थानकवासी जेन समाज के निम्नलिखित प्रधान पुरुप सम्मिलित थे -

(१) श्रीमान् राजाबहादुर एस ज्वालाप्रसादजी हेदरावाद

(२) श्रीमान् वेलजी लखमसी नप्पू, वी ए एल एल वी वम्वई

(३) श्रीमान् राय सा ला टेकचन्दजी झडियाला

(४) श्रीमान् लाला रतनचन्दजी, अमृतसर

(५) श्रीमान् ला त्रिभुवननाथजी, कपूरथला

(६) श्रीमान् सेठ दुर्लभजी त्रिभुवन जोहरी, जयपुर

(७) श्रीमान् श्रीधीरजलाल केशवलाल तुरखिया

(८) श्रीमान् सेठ वर्द्धमानजी पीतलिया, रतलाम

उक्त सज्जनो के अतिरिक्त अजमेर मे साधु-सम्मेलन को आमन्त्रित करने वाले चार सज्जन और उपस्थित हो गये थे। शिष्टमण्डल ने पूज्यश्री से साधु-सम्मेलन के विषय मे बातचीत की। उस समय मुख्य प्रश्न थे- 'साधु-सम्मेलन किया जाय या नही ?' किया जाये तो कब और कहा ? साधु-सम्मेलन मे किन-किन बातो पर विचार किया जाय ? सभापति किसे बनाया जाय ? सगठन किस प्रकार किया जाय ? समस्त सम्प्रदायो का आचार्य एक हो या अनेक ?

इन प्रश्नो पर पूज्यश्री ने वडी गभीरता के साथ अपने बहुमूल्य विचार व्यक्त किये। शिष्टमडल को इससे उत्साह और प्रेरणा प्राप्त हुई। पूज्यश्री के विचार सक्षेप मे इस प्रकार थे-

(१) इस सम्मेलन का नाम 'जेन-साधु-सम्मेलन' रखा जाय। यहा पर साधु शब्द मे उन्ही का समावेश किया जाय जो मुख पर मुखनासिका बाधते हो, रजोहरण एव प्रमाणोकेत श्वेत वस्त्र धारण करते हो तथा धातुरहित काष्ठादि के पात्र रखते हो।

साधु का उपरोक्त लक्षण बताने का तात्पर्य यह है कि शास्त्र मे साधु के वाह्य और आभ्यन्तर दो लक्षण बताए गए है। उनमे से महाव्रतादि साधु-धर्म का पालन अन्तरग लक्षण है। यह लक्षण अलोकिक है, क्योंकि बाह्यरूप मे दिखाई नही देता। अतएव ससार मे साधु की पहिचान के लिए बाह्यलक्षण होना अत्यावश्यक है। यह बात उत्तराध्ययन सूत्र के २३ वे अध्ययन म आई है। वह पाठ यह है 'लोगे लिगप्पओयण''। टीका-लोके लिगस्य प्रयोजनम्। साधुवेशस्य प्रवर्तनम् यत्तीर्थ करैरुक्त तल्लोकस्य प्रत्ययार्थम्, लोकस्य गृहस्थस्य प्रत्ययार्थम्।'' तीर्थंकरो ने लिगधारण करने का प्रयोजन बताते हुए कहा

हे कि जिससे गृहस्थो को पता लग जाय कि यह साधु हे। इसलिए लिगधारण करने की आवश्यकता हे। इसी सिद्धान्त को लेकर 'जेन-साधु-सम्मेलन' मे आने वाले साधुओ के लिए हमने खास तौर पर वाह्यलिग (वेश) पर जोर दिया हे। उपरोक्त लक्षण वाला साधु अर्थात् मुख पर मुखवस्त्रिका बाधना, आदि लिग रखने वाला साधु बाईस सम्प्रदाय का हो, तेरापथ सम्प्रदाय का हो, शुद्ध श्रद्धा वाला हो या विपरीत श्रद्धावाला हो, उग्रविहारी हो या दासत्थविहारी हो गच्छविहारी हो या एकलविहारी हो, मोटी पक्ष हो या छोटी पक्ष का हो, इस सम्मेलन मे सम्मिलित न हो तो यह बात दूसरी हे। सम्मेलन का द्वार उक्त चिह्न वाले प्रत्येक के लिए खुला होना चाहिए।

इस सम्मेलन मे सम्मिलित होना किसी तरह के सम्भोग या आदर-सम्मान की प्राप्ति के लिए नही हे किन्तु भूत और भविष्य के सम्यक् ज्ञान, दर्शन, चारित्र आदि गुणो की शुद्धि और वृद्धि के लिए हे। इसमे सभी महानुभावो को निष्पक्ष होकर परस्पर प्रेमपूर्वक मिलकर एक समाचारी के लिए अपनी-अपनी स्वतत्र सम्मति भेजनी चाहिए। साधु-सम्मेलन मे उसी समाचारी पर शान्तिपूर्वक शास्त्रीय ऊहापोह के साथ विचार होना चाहिए। इसी मे साधु-सम्मेलन की सफलता हे और इसी के लिए सभी को सम्मिलित होना चाहिए। शास्त्रीय प्रमाणपूर्वक सच्चे हृदय से अपने विचार प्रकट करने के लिए सम्मेलन मे प्रत्येक मुनि को भाग लेना चाहिए, किसी को सकोच न करना चाहिए। साधु-सम्मेलन से किसी मान्यता को धक्का पहुँचने का भय नहीं हे। किसी की परम्परा को इससे बाधा नही पहुचती। धर्म-चर्चा द्वारा धार्मिक उन्नति करने के लिए एक स्थान पर सम्मिलित होना सभी सम्प्रदायो को सम्मत हे।

किसी की प्रतिष्ठा को धक्का न पहुचे, इसलिए सभी महानुभावो की बेठक भूमि पर समान रूप से गोलाकार रहनी चाहिए। इसलिए मेरा यह अभिप्राय हे कि सभी महानुभाव नि सकोच वृत्ति से इस जेन-साधु-सम्मेलन मे पधारे।

सम्मेलन मे प्रेमालाप द्वारा जो सच्चा और शास्त्रोक्त सुधार होगा, उस सुधार को जिन महात्माओ का जी चाहेगा वे अपनाएगे और उस सुधार को अपनाने वाले महात्मा ही आपस मे सभाग आदि एक करने की योजना बनाएगे। उस सुधार से जो असहमत होगे अर्थात् उस सुधार मे सम्मिलित न होगे वे उस सुधार-सघ से अलग समझे जाएगे।'

इसके साथ ही आपने एक अत्यन्त दूरदर्शितापूर्ण सुझाव शिष्टमडल के समक्ष उपस्थित किया था। वह यह था कि सामान्य साधु-सम्मेलन करने से पहले विभिन्न सम्प्रदायो के मुख्य-मुख्य मुनिराजो का सम्मेलन करना बहुत उपयोगी होगा। उसमे समस्त योजनाए निश्चित कर ली जाए। उसके पश्चात् सामान्य (General) साधु-सम्मेलन किया जाय तो लाभ होगा।'

पूज्यश्री का यह सुझाव अत्यन्त व्यवहार्य, सुविधाजनक, कार्य को सरलता से सम्पन्न करने वाला और उपयोगी था। साधारणतया विशाल सम्मेलन से पहले चुने हुए प्रधान पुरुष कार्य की दिशा निश्चित कर लेते हे और ऐसा करने से ही कार्य सुकर बनता हे। साधु-सम्मेलन के सबध मे यह सुझाव अमल मे न आ सका और इसी कारण लम्बे समय तक खटके करना पडा फिर भी जिस सुन्दर परिणाम की आशा की गई थी वह प्राप्त न हो सका। शिष्टमडल की प्रार्थना पर पूज्यश्री ने अजमेर पधारने की स्वीकृति दे दी।

दीक्षा-समारोह

जोधपुर-चातुर्मास के समय पूज्यश्री की सेवा मे तेलकूडगाव (दक्षिण) निवासी श्रीमान् चुन्नीलालजी गूगलिया ओर उनके भतीजे श्रीगोकुलचदजी उपस्थित हुए। इसी धर्मपरायण परिवार मे से पहले श्रीभीमराजजी ओर श्रीमल्लजी दीक्षित हो चुके थे। यह दोनो सज्जन मुनि श्रीभीमराजजी महाराज के ससारपक्ष के पुत्र ओर पौत्र थे। अपने पारिवारिक सुसस्कारो के कारण आपको ससार के प्रति विरक्त हुई और दीक्षा लेने के उद्देश्य से पूज्यश्री के चरण-कमलो में उपस्थित हुए। पूज्यश्री इस परिवार से भली-भाति परिचित थे। आपने योग्य पात्र समझकर दोनो विरक्त सज्जनो को दीक्षा की अनुमति दे दी।

दीक्षा के समय वेरागियों के श्तिेदार वहा उपस्थित थे। रिश्तेदारो की आखो मे स्नेह के आसू थे और हृदय में प्रमोद एव गोरव का भाव था। पूज्यश्री ने जब उनसे दीक्षा की अनुमति मागी तव उनकी स्थिति अनिर्वचनीय-सी थी। आखो मे आसू छलछला आये मगर दृढतापूर्वक अनुमति दे दी। पूज्यश्री ने स्वय वेरागियो को दीक्षा देकर उनका उद्धार किया।

दीक्षा देने के बाद पूज्यश्री ने सक्षिप्त किन्तु सारगर्भित प्रवचन किया। तत्पश्चात् भगवान महावीर और पूज्यश्री के यशोगान हुए। दीक्षा का समस्त व्ययभार जलगाव-निवासी सेठ लछमनदासजी श्री श्रीपाल ने उठाया।

चातुर्मास समाप्त होने पर मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपद् को पूज्यश्री ने विहार किया। जोधपुर की जनता ने आखो मे आसू भर कर गद्गद् हृदय होकर विदाई दी। राजपूताना के ओसवाल समाज मे जोधपुर शिक्षा के क्षेत्र मे अग्रणी हे। वहा के समाज में उत्साह हे, कार्य करने की क्षमता हे ओर लगन भी हे। पूज्यश्री के आकर्षक व्यक्तित्व, उच्च चारित्र ओर प्राभाविक प्रवचन से वहा की जनता वडी प्रभावित हुई थी। यही कारण था कि आज विदाई की वेला मे उसे वियोग की व्यथा साल रही थी।

पूज्यश्री विहार करके सरदारपुरा पधारे। पुष्टिकर हाई स्कूल ओर सरदार हाई स्कूल मे आपका उपदेश हुआ[1] यहा से विहार करके आप महामदिर पधारे। यहा अनेक प्रकार के त्याग-प्रत्याख्यान हुए। यहा से आप नागोरी वेरा पधारे। श्रीयुत हरनाथजी पुरोहित उर्फ टल्लूजी जो पुष्टिकर ब्राह्मण-समाज के नेता हे ओर माली जाति के प्रमुख नेता तथा फरासखाने के सुपरिंटेडेट श्रीनेनूरामजी पूज्यश्री से वहुत प्रभावित हुए। पूज्यश्री जोधपुर से विहार करके मडोर के समीप माली भाइयो की वस्ती मे पहुचे तव श्रीनेनूरामजी ने सेकडो मालियो को आमत्रण देकर व्याख्यान का लाभ दिलाया तथा आस-पास से आने वाली तीन हजार जनता के ठहरने की जगल मे समुचित व्यवस्था की। माली भाइयो की पूज्यश्री पर इतनी अधिक श्रद्धा वढी कि उन्होने तीन दिन तक पूज्यश्री को विहार नही करने दिया। पूज्यश्री भी भक्ति के आग्रह को टाल न सके। यह स्थान जोधपुर से करीव ६ मील दूर हे। रेलवे कम्पनी की ओर से यहा तक के लिए स्पेशल ट्रेने चलने की व्यवस्था की गई। हजारो व्यक्ति पूज्यश्री के व्याख्यान सुनने के लिए जमा हो गए। अनेक राज्याधिकारी, ठाकुर साहवान, जागीरदार ओर शिक्षित मडल उपस्थित थे। उस समय का दृश्य वडा ही भव्य ओर सुहावना था। पूज्यश्री के स्थान के पास ऐसा जान पडता था मानो यहा स्टेशन वन गया हे। करीव चार हजार व्यक्ति उपस्थित हुए। श्रीसघ की ओर से आगत सज्जनो के भोजन की व्यवस्था की गई। श्रोताओ ने मास-मदिरा आदि का त्याग किया।

१ यह व्याख्यान 'जवाहरकिरणावली' के चौथे भाग में प्रकाशित हे।

पूज्यश्री यहा से विहार करके मथानिया, लोहावट तथा खिचन होते हुए फलोदी पधारे। यहा के पुष्करणा भाइयो पर बहुत अच्छा प्रभाव पडा। मथानिया मे आपके उपदेश से जागीरदारो ने करणीजी के मदिर मे होने वाली हिंसा बद कर दी। अछूतो ने मास-मदिरा का त्याग किया।

फलोदी से विहार का पूज्यश्री लोहावट आदि होते हुए फिर मथानिया पधारे। यहा दो-तीन दिन विराजकर रीया, पीपाड आदि में विविध उपकार करते हुए ता २९-१-३३ को जयतारण पधारे।

जयतारण में दीक्षा-समारोह

जयतारण मे पूज्यश्री ने श्रीमान् मोतीलालजी कोटेचा को दीक्षा प्रदान की। आप मलकापुर (खानदेश) के रईस थे। लाखो की सम्पत्ति के स्वामी थे। अखिल भारतीय श्वे स्थानकवासी कान्फ्रेस में छठे मलकापुर- अधिवेशन मे आप ही स्वागताध्यक्ष निर्वाचित हुए थे। उस समय भी आप कान्फ्रेस के एक सेक्रेटरी थे। पाच भाई, तीन सन्तान, पत्नी आदि करीव सो आदमियो का परिवार छोडकर उत्कट वेराग्य के साथ आपने दीक्षा लेने का निश्चय किया। उस समय आपकी भावना का वर्णन इस प्रकार किया जा सकता हे-

> दारा परिभवकारा, वन्धुजनो वन्धन विप विपया।
> कोऽय जनस्य मोहो, ये रिपवस्तेपु सुहृदाशा॥

अर्थात्- पत्नी की बदौलत पर भव मे परिभव प्राप्त होता है, वन्धु-वाधव वन्धन रूप हे ओर इद्रियो के विषय वास्तव मे विष हैं। फिर भी न जाने मनुष्य का केसा मोह हे कि वह शत्रुओ मे मित्र की बुद्धि रखता हे!

इस प्रकार ससार से विरक्त होकर आप पूज्यश्री के चरण-शरण मे आये। कुछ समय तक पूज्यश्री के साथ रहकर आपने मुनि-जीवन की चर्या सीखी।

माघ शुक्ला दशमी, ता ४ फरवरी सन् १९३३ को जयतारण मे वडे समारोह के साथ आपका दीक्षा-महोत्सव मनाया गया। दीक्षा के अवसर पर आपके लगभग सभी कुटुम्बीजन उपस्थित हुए। पूज्यश्री ने स्वय दीक्षा देकर उनका जीवन सफल किया।

दूसरे दिन जयतारण से विहार करके फाल्गुन कृष्णा द्वितीया को पूज्यश्री का व्यावर म पदार्पण हुआ। अजमेर मे होने वाले साधु-सम्मेलन मे सम्मिलित होने से पहले आप अपने सम्प्रदाय के मुनियो का सम्मेलन कर लेना चाहते थे। इस सम्मेलन के लिए व्यावर स्थान उपयुक्त समझा गया। सभी मुनियो को व्यावर पहुचने के लिए समाचार भेज दिये गये थे। पूज्यश्री के व्यावर पहुचने तक ८२ साधु सम्मिलित हो चुके थे। अतएव जब पूज्यश्री ने व्यावर नगर मे ८२ सतो के साथ पदार्पण किया तो भगवान् महावीर के समय का दृश्य लोगों को याद आने लगा। अहा! कितना भव्य दृश्य रहा होगा वह जब पूज्यश्री जैसे महान् धर्मनेता के नेतृत्व मे इतने मुनियो ने एक साथ प्रवेश किया होगा ? उस समय ऐसा जान पडता था मानो धर्म इन मुनियो का वेष धारण करके व्यावर मे सजीव हो रहा है!

व्यावर की जनता का क्या पूछना! उसके हृदय की उमग हृदय म समाती नही थी। [illegible] उल्लास [illegible] मनुष्यो के मानस-सरोवर म उमड रहा था। [illegible] था। [illegible] ने बडी उत्कठा और उत्सुकता के साथ पूज्यश्री [illegible] [illegible]।

कुछ दिनो मे ब्यावर मे ४५ सन्त एकत्र हो गये। मुनिश्री मोडीलालजी महाराज, मुनिश्री चादमलजी महाराज, मुनिश्री हरखचन्दजी महाराज, मुनिश्री (वडे) गव्बूलालजी महाराज, प र मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज आदि साधु प्रमुख थे।

ब्यावर मे पूज्यश्री ने सम्प्रदाय के प्रमुख मुनियो के साथ सम्मेलन के सवध मे, सम्प्रदाय के विषय मे तथा अन्य आवश्यक विषयो पर विचार किया।

पूज्यश्री ने सम्मेलन में प्रतिनिधि के रूप मे सम्मिलित होने के लिए अपनी ओर से पाच नाम निर्वाचित किये - (१) मुनिश्री मोडीलालजी महाराज (२) मुनिश्री चादमलजी महाराज (३) मुनिश्री हर्षचन्दजी महाराज (४) प मुनिश्री घासीलालजी महाराज[१] और (५) प मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज।

किन्तु मुनिराजो ने पूज्यश्री के बिना सम्मेलन मे सम्मिलित होना उचित नही समझा। पूज्यश्री से प्रार्थना की-'आप हमारे नायक हे। आपका पथ-प्रदर्शन ही हमारे लिए मगलमय होगा। आपके सम्मिलित होने से सम्प्रदाय की भी शोभा बढेगी ओर साधु सम्मेलन की भी। अतएव कृपा कर आप अवश्य पधारे।' इस प्रकार मुनिराजो के आग्रह को देखकर पूज्यश्री ने फरमाया- 'आप सबका मुझपर पूर्ण विश्वास है और आप मुझे सम्मेलन मे सम्मिलित होने का आग्रह करते हे तो फिर उचित यह होगा कि मै अकेला ही सम्मेलन मे जाऊ।'

पूज्यश्री का यह कथन समस्त मुनिराजो ने सहर्ष अगीकार किया।

जैसे इग्लैण्ड मे होने वाली राउण्ड टेबिल कान्फ्रेस के लिए राष्ट्रीय महासभा (काग्रेस) की ओर से एकमात्र प्रतिनिधि महात्मा गाधी चुने गये थे, उसी प्रकार अजमेर के अ भा स्था जेन साधु-सम्मेलन के लिए पूज्यश्री एकमात्र प्रतिनिधि निर्वाचित किये गये। सम्प्रदाय के सभी साधुओ ने नीचे लिखे अनुसार प्रतिनिधि पत्र लिखकर पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित किया था-

श्रीमान् निज-परशास्त्र सिद्धान्ततत्त्वरत्नाकर, विद्वन्मुकुट चिन्तामणि, भव्यजनमानसराजहस, भक्तगणकमलविकासन प्रभाकर, वाणीसुधासुधाकर, गाम्भीर्य-धेर्य-माधुर्य-ओदार्य-शान्ति-दया-दाक्षिण्यादि सद्गुणगण परिपूर्ण, रमणीय विशालभवन, ऐक्येच्छुकशिरोमणि, ज्ञानादिरत्नत्रय-सरक्षक, सिरताज जेनाचार्य पूज्यपाद श्री १००८ श्री श्री श्री जवाहरलालजी महाराज के चरण कमलो मे सर्वसभोगी मुनिमण्डल की यह सविनय प्रार्थना हे कि आप जिनशासन के उत्थान के लिए जेन-साधु-सम्मेलन, अजमेर मे पधारकर जो कार्य करेगे, हमें सर्वथा मान्य होगा। सम्वत् १९८९ माघ शुक्ला ९, शनिवार।

(सभी उपस्थित साधुओ के हस्ताक्षर)

---

१ मुनिश्री घासीलालजी महाराज उस समय ब्यावर मे उपस्थित नही थे, अतएव उन्हे बुलाने के लिए पहले सघ की ओर से पत्र दिया गया। किन्तु न वे आये और न पत्र का समुचित उत्तर ही दिया। तव ब्यावर के मा उग्रसिहजी उनके पास गये और उन्होने कहा—सम्मेलन के समय सभी सम्प्रदायो के सन्त अजमेर पधार रहे है तो आपको भी अवश्य उपस्थित होना चाहिए, ऐसा पूज्यश्री का फर्माना हे। अत आप ब्यावर की ओर पधारे। मगर फिर भी मुनिश्री घासीलालजी म नही पधारे। अन्त में पूज्यश्री ने मुनिश्री गव्बूलालजी म तथा श्री मोहनलालजी म को उन्हे लाने के लिए भेजा। मगर खेद है कि फिर भी उन्होने पूज्यश्री की आज्ञा का पालन न किया ओर वे इधर न आये।

श्री रगूजी महाराज की सम्प्रदाय की पवर्तिनी श्री आनन्द कुवरजी म , श्री खेतूजी महाराज की सम्प्रदाय की प्रवर्त्तिनी श्री केशर कुवरजी म के तथा मोजूदा सब सतियो के भी इस प्रतिनिधिपत्र पर हस्ताक्षर हुए। इस पत्र द्वारा पूज्यश्री १९३ साधु-साध्वियो के प्रतिनिधि नियत हुए थे।

ब्यावर मे मुनि-मण्डल से आवश्यक विचार-विनिमय करके पूज्यश्री ने ता २८ फरवरी को विहार कर दिया। साधु-सम्मेलन का समय सन्निकट होने से तथा सम्मेलन मे सम्मिलित होने वाले अन्य मुनिराजो से विचार-विमर्श करने के हेतु आप ब्यावर के आस-पास विचरने लगे। आपका होली-चातुर्मास बावरा ग्राम मे हुआ।

युवाचार्य श्रीकाशीरामजी महाराज से भेंट

बावरा से विहार करके पूज्यश्री जेठाणा पधारे। उधर से पजाब केसरी युवाचार्य श्रीकाशीरामजी महाराज भी सम्मेलन मे सम्मिलित होने के लिए पधार रहे थे। जेठाना मे दोनो महानुभावो की भेट हुई। दोनो बडे प्रेम से मिले ओर सम्मेलन तथा समाज-सुधार सबधी बातचीत की। दोनो ने साधु-सम्मेलन में विचारणीय विषयो की एक सूची तेयार की। वह नीचे लिखे अनुसार थी-

(१) पक्खी, सवत्सरी आदि पर्वाराधन सारे सम्प्रदायो का एक ही समय मे होना चाहिए। पर्वों का निर्णय केवल पचागो के आधार पर न करना चाहिए। अग्रेजी महीनो में जिस प्रकार तारीखे निश्चित हे ओर सभी कार्य नियमित रूप से निश्चित तारीख पर होते ह उसी प्रकार पर्वाराधन के लिए तारीखे निश्चित करके साधारण नियम बना दिए जाय। जिससे सभी सम्प्रदाय तथा सभी प्रान्तो म एक ही तिथि पर पर्वाराधन हो ओर पचाग की परतत्रता ओर उससे होने वाले मतभेद न हो।

(२) मुनि विहार का कल्प, चातुर्मास ओर शेषकाल के नियम भी बना लिए जाय जिससे कोई भी मुनि कल्प-मर्यादा को तोडकर न रह सके।

(३) आवश्यक विधि (प्रतिक्रमणादि) का समय, पचम आवश्यक मे लोगस्स' का ध्यान तथा देवसी, रायसी, पक्खी, चोमासी, ओर सम्वतसरी मे भी 'लोगस्स' का ध्यान सभी सम्प्रदायो का एक रूप मे होना चाहिए।

(४) शय्यातर किसे किस समय से समझना, इसका निर्णय।

(५) प्रतिदिन एक घर से बिना कारण आहार पानी ले सकते हे या नही ? यदि ले सकते ह तो एक दिन मे कितनी बार।

(६) केले आदि पके हुए फल कल्प्य हे या अकल्प्य ?

(७) दर्शनार्थ आये हुए का आहार-पानी कितने दिन बाद ले सकते ह ?

(८) विहार मे साथ रहने वाले गृहस्थो से आहार-पानी ले सकते ह या नही ?

(९) श्रावक प्रतिक्रमण मे श्रावकसूत्र गिनना या श्रमणसूत्र भी ?

(१०) दीक्षा लेने वालो की उम्र ओर जाति का निर्णय।

(११) अपनी-अपनी सम्प्रदाय मे आचार्य ओर [illegible] [illegible] रहना चाहिए।

(१२) सारे शिष्य ओर शास्त्र सम्प्रदाय के आचार्य की नेश्राय मे हो। आचार्य होने पर प्रवर्त्त
अथवा मुख्य साधु की नेश्राय मे हो। साध्विनी मे प्रवर्तिनी अथवा मुख्य साध्वी की नेश्राय मे ही शिष्या
तथा शास्तृ हो। दूसरे की नेश्राय मे न हो।

(१३) बिना कारण ३ से कम साधु ओर ४ से कम साध्विया न विचरे।

(१४) गोचरी के काल के सिवाय गृहस्थ के घर मे दो से कम साधु या साध्विया प्रवेश न करे

(१५) दीक्षा के समय वेरागी या वेरागिन से नीचे लिखा प्रतिज्ञापत्र लिखा लिया जाय- "
सयम पालन करता हुआ आचार्य ओर उसके अभाव मे प्रवर्त्तक, मुखिया सन्त या प्रवर्तिनी की आज्ञ
में रहूगा। आज्ञा बिना कोई भी काम नही करूगा। मेरे पास की पुस्तक, पन्ने, शास्त्र आदि सभी वस्तुए
आचार्य की नेश्राय की हे। कदाचित् मै मोहवश सम्प्रदाय छोड कर जाऊ तो शास्त्रादि उपाधि आचार्य
श्री की नेश्राय मे होने से मे नहीं ले जाऊगा।"

(१६) दीक्षा लेने वाले को वस्त्र-पात्र आदि उपकरण जितने चाहिए, उससे ज्यादा दीक्षा पर
न रखने चाहिए।

(१७) ऊन और सूत के सिवाय किसी भी प्रकार के वस्त्र न रखने चाहिए।

(१८) प्रतिवर्ष चातुर्मास के लिए साधुओ का परिवर्तन किया जावे। उसमे आचार्य (यदि आचार्य
न हो तो प्रवर्त्तक या मुखिया साधु) जेसा उचित समझे वेसा परिवर्तन करे। साथ चातुर्मास करने वाले
साधु कारण विशेष के लिए परिवर्तन करने वाले से प्रार्थना कर सकते हे, लेकिन आचार्य ओर उसके
अभाव मे प्रवर्त्तक या मुखिया साधु की आज्ञा अन्तिम तथा मान्य होगी।

(१९) दीक्षा देने का अधिकार आचार्य (उसके अभाव मे प्रवर्त्तक या मुखिया साधु) को रहे।
यदि कारणवश या अवसर देखकर वे स्वय दीक्षा न दे सके तो उनकी आज्ञा से दूसरे साधु भी दीक्षा
दे सकते है।

(२०) मुनि-वेश मे रहकर जिसने चोथा व्रत नष्ट किया हे, उसे सम्प्रदाय से बाहर किया जावे।
उसे दुबारा दीक्षा न दी जाय।

(२१) दूसरे गच्छा से आए हुए साधु-साध्वी को पुन समझा कर उसी गच्छ मे लोटा दे। यदि
उस गच्छ के मालिक की आज्ञा आ जावे ओर योग्यता आदि देखकर उचित समझा जावे तो अपनी
मर्यादा के अनुसार गच्छा मे मिला सकते हे।

(२२) दीक्षा छोडकर जो साधु-साध्वी चला जावे ओर फिर दीक्षा लेना चाहे तो सम्प्रदाय के
मुख्य श्रावको की राय बिना दीक्षा न दी जावे। तीसरी बार तो दी ही नहीं जानी चाहिए।

(२३) साधु-साध्वी अपनी नेश्राय के भण्डोपकर गृहस्थ की नेश्राय मे न रखे, न उनसे किसी
भी समय उपकरण आदि उठवावे। गृहस्थ की लाई हुई कोई वस्तु अपने काम मे न लावे।

(२४) पुस्तक, पाने, शास्त्र आदि उपाधि के लिए गृहस्थ के रुपए इकट्ठे नहीं करवावे।

(२५) किसी तरह का कागज या चिट्ठी लिखकर गृहस्थ को न देवे।

(२६) आचार्य के सिवा चार साधु से ज्यादा न विचरे, न चातुर्मास आदि करे। ठाणा पति साधु
की बात अलग हे।

(२७) साधु-साध्वी को स्थिरवास रहने की जब जरूरत पडे तो आचार्य की आज्ञानुसार रहे। आचार्य भी जहा तक सम्भव हो, अलग-अलग क्षेत्र न रोके। वेयावच के लिए रखे गए साधुओ का भी परिवर्तन किया जाय।

(२८) प्रत्येक सम्प्रदाय के सब साधु-साध्वी एक या दो वर्ष मे एक समय अपने आचार्य से मिलकर सम्प्रदाय की भावी उन्नति का और साधु-आचार का विचार दृढ करे।

(२९) सुखे समाधे सारे साधुओ को सभी प्रातो मे विचरना चाहिए।

(३०) कोई साधु सम्प्रदाय मे नया परिवर्तन आचार्य की स्वीकृति के विना न करे।

(३१) श्रमण सूत्र सीखे विना वैरागी को दीक्षा न दी जाय।

(३२) साधु-साध्वी गृहस्थ को अपने दर्शनो का नियम न करावे।

(३३) किसी गृहस्थ को दीक्षा लेने से पहले मुनि-वेश पहिनने की सम्मति नही देना, सहायता भी नही करना, 'स्वय दीक्षा लेलो' यह सम्मति भी वारिस की आज्ञा विना न देना, वह अपनी इच्छा से स्वय दीक्षा लेले तो उसे अपने साथ नही रखना, अपने उतरने के मकान मे नही ठहराना, आहार-पानी न स्वय देना न दिलाना। यदि कोई साधु-साध्वी ऐसा करे तो उसे शिष्यहरण का प्रायश्चित्त लेना होगा।

(३४) साध्वियो को साधु के स्थान पर और साधु को साध्वियो के स्थान पर विना कारण नही जाना व बेठना। यदि आवश्यकता हो तो पुरुष-स्त्री की साक्षी विना न बैठे।

(३५) साधु-साध्वी अपना फोटो नही खिचवावे।

(३६) सारी सम्प्रदाय की श्रद्धा प्ररूपणा एक ही रहनी चाहिए।

(३७) उत्सर्ग मार्ग मे साधु-साध्वी को स्वदेशी वस्त्र ही रखने चाहिए, दूसरे नही।

(३८) प्रत्येक साधु-साध्वी को चारो काल स्वाध्याय करना चाहिए। चारो समय का स्वाध्याय कम से कम १०० श्लोक का होना चाहिए। यदि किसी को शास्त्र न आता हो तो नवकार मन्त्र का जाप करे।

(३९) विना कारण साबुन से कपडे नही धोने चाहिए।

(४०) आचार्य अथवा सम्प्रदाय के मुख्य सन्त की आज्ञा बाहर विचरने वाले साधु-साध्वी का व्याख्यान सघ के श्रावक-श्राविका और साधु-साध्वी नही सुने। उसका किसी तरह पक्ष भी न करे और साधु को की जाने वाली विधिवन्दना आदर-सत्कार आदि भी नही करे। अन्नादि देने का निषेध नही है।

(४१) व्याख्यान के सिवाय साधुओ के मकान मे स्त्रियो को और साध्वियो के मकान मे पुरुषो को नही आना चाहिए। किसी कारण से आना पडे तो स्त्री-पुरुष की साक्षी विना न आवे।

(४२) सारे साधु-सम्प्रदाय मे आचार्य की और साध्वी-सम्प्रदाय मे प्रवर्तिनी की स्थापना की जावे।

अजमेर साधु-सम्मेलन

जिस महान् आयोजन के लिए चिरकाल से तैयारिया हो रही थी, उसका समय निकट आ पहुचा। ता ५ एप्रिल १९३३ मिति चैत्र कृष्ण दशमी का दिन साधु-सम्मेलन प्रारम्भ करने के लिए शुभ माना गया था। चारो तरफ से मुनिराज अजमेर मे एकत्रित होने लगे। पजाव, गुजरात, काठियावाड, मारवाड, मेवाड, मालवा आदि विभिन्न प्रातो मे विचरने वाले साधुओ का एक जगह इकट्ठे होना जैन-समाज के लिए बिलकुल नई बात थी। भगवान् महावीर स्वामी के वाद अढाई हजार वर्षों मे पहले तीन बार साधु इकट्ठे हुए थे। पहले पटना मे, दूसरी बार लगभग ३०० वर्ष पश्चात् मथुरा मे ओर तीसरी बार वीरसवत् ९८० मे दवर्द्धिगाणि शमा श्रयम के प्रयत्न से वल्लभीपुर मे। अन्तिम सम्मेलन को हुए १५०० वर्ष वीत चुके थे। पूर्वोक्त सभी सम्मेलन शास्त्रो के उद्धार के लिये हुए थे।

वर्तमान परिस्थिति को देखते हुए समाज के अग्रणी इस बात का अनुभव कर रहे थे कि साधुओ मे ज्ञान, दर्शन ओर चारित्र की उन्नति के लिए तथा साधु-समाज का पुन सगठन करने के लिए एक साधु सम्मेलन करने की अत्यन्त आवश्यकता है। दो वर्ष से इस कार्य के लिए डेपुटेशन घूम रहा था। धर्मवीर सेठ दुर्लभजी त्रिभुवन झावेरी इस आयोजन के विधाता थे ओर महान् परिश्रम कर रहे थे।

अन्त मे वह प्रयत्न सफल हुआ। आठ-आठ सो मील का लम्वा विहार करके, सरदी-गरमी तथा दूसरे परीषहो की परवाह न करके मुनिराज अजमेर के प्राङ्गण मे पधार गए। ५ एप्रिल को प्रात काल पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज ने अपने सन्तों के साथ अजमेर मे पदार्पण किया। २६ सम्प्रदायो के २४० साधु एकत्र हो गए।

पाच एप्रिल को सुबह नो बजे ममैयो के नोहरे मे सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। प्रथम दिन प्रात काल की कार्रवाई खुले रूप मे करने का निश्चय हुआ था। इसलिए दर्शनार्थी हजारो की सख्या मे पहले से ही जमा हो गए। जनता तथा साधुओ मे अपूर्व उत्साह था। सभी के हृदय मे समाजोन्नति की भावना थी। वाहर से इतने दर्शनार्थी आए थे कि अजमेर मे स्थान मिलना मुश्किल हो गया था। स्वागत समिति ने तम्बू तथा दूसरी व्यवस्थाए विशाल परिमाण मे की थी।

सभी साधु एक ही पक्ति मे समान भूमि पर विराजे थे। छोटे-वडे का भेद-भाव भुला दिया था। श्रावको को सभी के दर्शनो का एक साथ लाभ मिल रहा था।

सवा नो बजे कार्य प्रारम्भ हुआ। पूज्यश्री मुन्नालालजी महाराज ने नवकार मत्र द्वारा मगलाचरण किया। इसके वाद शतावधानीजी, कविश्री नानचन्दजी महाराज तथा पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज ने प्रार्थना की। इसके वाद पूज्यश्री हस्तीमलजी महाराज ने सम्मेलन की सफलता के लिए सस्कृत पद्य उच्चारण किये।

इसके बाद शतावधानीजी तथा कविश्री नानचन्दजी महाराज को सम्मेलन की कार्रवाई के लिए निर्देशक (डायरेक्टर) चुना गया। विभिन्न मुनिराजो ने सम्मेलन की सफलता के लिए अपनी कविताए तथा सदेश सुनाए। इसके बाद श्री दुर्लभजी भाई ने अखिल भारतीय श्रीसघ की ओर से मुनियो का आभार माना।

पूज्यश्री का स्पष्टीकरण

साधु-सम्मेलन समिति का प्रतिनिधिमडल जब जोधपुर मे पूज्यश्री की सेवा में उपस्थित हुआ था, तभी पूज्यश्री ने उसे अपने उपयोगी विचार दर्शा दिये थे। पूज्यश्री ने स्पष्ट शब्दो मे बतला दिया था कि सम्मेलन से पहले मुख्य-मुख्य मुनिराजो का एक सम्मेलन हो जाना आवश्यक हे, जिससे महत्त्वपूर्ण और विवादग्रस्त विषयो पर विचार-विमर्श हो जाय और निर्णय करने मे सुविधा रहे। किन्तु सम्मेलन का समय इतना सन्निकट रखा गया था कि यह सुझाव अमल मे नही आ सका। मगर इसके बिना सम्मेलन की वास्तविक सफलता सदिग्ध ही थी।

इसके अतिरिक्त गुजरात-काठियावाड के छोटी पक्ष के सन्त-सम्मेलन मे सम्मिलित नही हुए थे। साथ ही सम्मेलन से पहले मुख्य-मुख्य मुनिराजो से पूज्यश्री का जो वार्तालाप हुआ था, उससे पूज्यश्री को समझने मे देरी नही लगी कि अभी तक विभिन्न सम्प्रदायो के मुनिराज सघ-श्रेयस् के लिए यथोचित त्याग करने के लिए उद्यत नही हे। अपनी-अपनी सम्प्रदाय का सभी को आग्रह हे और सब एक गच्छ मे सम्मिलित होकर एकता का सूत्रपात नही करना चाहते।

ऐसी परिस्थितियो मे पूज्यश्री की तीक्ष्ण दृष्टि मे सम्मेलन का भविष्य साफ दिखाई देने लगा। अतएव अजमेर पधार करके भी आपने सम्मेलन मे, प्रतिनिधि के रूप मे सम्मिलित न होने का निर्णय किया।

जब सम्मेलन आरम्भ होने लगा तो पूज्यश्री ने प्रतिनिधि मुनियो के समक्ष अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए कहा-

मे एक बात स्पष्ट कर देना चाहता हू। मेरे सम्प्रदाय के समस्त मुनियो ने तथा मुझ पर पूज्य भाव रखने वाली सभी सतियो ने मुझे अपनी ओर से एक मात्र प्रतिनिधि निर्वाचित किया है। मगर कतिपय कारणो से मेने प्रतिनिधि रूप मे सम्मिलित न होने का निश्चय किया हे। म एक दर्शक के रूप मे यहा उपस्थित हुआ हूँ। अगर इस सभा मे सिर्फ प्रतिनिधि ही सम्मिलित हो सकते हो तो मुझे चले जाने मे किंचित भी सकोच नही हे।

यह स्पष्ट कर देना आवश्यक समझता हूँ कि सम्मेलन के प्रति मेरा विरोधी भाव नही है। जब तक सम्मेलन जारी रहेगा तब तक म अजमेर मे ही ठहरने की इच्छा रखता हू और आप चाहेगे तो यथायोग्य सलाह-सूचना आपको देता रहूँगा। ऐसा करने मे मुझे कोई आपत्ति नही है। आप शास्त्रानुसार जो नियम-उपनियम बनाएँगे, उन्हे म सहर्ष लेकर अपने सन्तो ओर सतियो मे बाट दूगा।

पूज्यश्री के इस वक्तव्य को सुनकर प्रतिनिधि मुनियो ने आप से बैठक मे ही विराजने की प्रार्थना की। और सलाहकार के रूप मे योगदान करने का आग्रह किया। तदनुसार आप साधु-सम्मेलन मे सलाहकार के रूप मे सम्मिलित हुए और महत्त्वपूर्ण प्रश्नो पर अपनी सम्मति प्रकट करके सम्मेलन का मार्ग-प्रदर्शन किया।

पूज्यश्री ने वर्द्धमान सघ की महत्त्वपूर्ण योजना सम्मेलन में रखी। सब मुनिराजो ने योजना का हार्दिक स्वागत किया मगर अमल मे लाने मे अपनी असमर्थता प्रकट की।

वास्तव मे पूज्यश्री द्वारा प्रस्तुत योजना अत्यन्त उपयोगी थी ओर उसे काम मे लाये बिना सघ का यथोचित अभ्युदय होना कठिन हे। पाठको की जानकारी के लिए योजना यहा दी जा रही हे।

श्री वर्द्धमान संघ योजना

वर्तमान कालीन सम्प्रदायो की प्रवृत्ति भिन्न-भिन्न प्रणाली से चल पडने से शासन सगठन अस्त-व्यस्त हो गया है। इससे श्रद्धा प्ररूपणा ओर आचार व्यवस्था की प्ररूपणा एकमुखी होने के बदले शतमुखी हो गई है। इस आपत्ति को मिटाने का सरल ओर सीधा उपाय हे कि एक ऐसा सघ निर्माण किया जावे, जिसमे सम्मिलित होकर आत्मार्थी मुनिगण एक प्रणाली मे चल सके। इसके लिए 'वर्द्धमान सघ' की स्थापना करना उचित होगा। क्योकि जब तक शास्त्र-सम्मत नाम वाला सघ न स्थापित किया जाय, तब तक किसी भी सम्प्रदाय के मुनिगण अपनी सम्प्रदाय को छोडकर दूसरे की सम्प्रदाय मे सम्मिलित न हो सकेगे। इस आपत्ति को मिटाने के लिए 'वर्द्धमान सघ' नाम के सघ की स्थापना करन। उचित होगा। यह नाम रखने से किसी भी सम्प्रदाय के मुनियो को यह खयाल न होगा कि मे अपनी सम्प्रदाय को दोडकर दूसरे की सम्प्रदाय मे क्यो जाऊ। प्रत्युत यह खयाल आना स्वाभाविक हे कि जब समस्त सम्प्रदायो के कल्याणार्थ ओर भविष्य मे चिरकाल तक सघ मजबूत रीति से चलता रहे, इसके लिए एक शास्त्र सम्मत सघ का निर्माण होता है ओर उसमे किसी का पक्ष नही हे। तो फिर ऐसे सघ मे सम्मिलित होने से हमारा भी गौरव बढता हे ओर जेन शासन का भी गोरव बढता हे।

अपना ओर पराए का कल्याण करना ही मुनि-समुदाय का परम कर्त्तव्य हे। किन्तु जब तक समस्त मुनि-महात्माओ की श्रद्धा प्ररूपणा आदि एक न हो, तब तक विद्वान् मुनि महाराज अपना कल्याण तो किसी प्रकार कर भी सकते हे, परन्तु साधारण स्थितिवाले मुनिगण एव साध्वी-समुदाय ओर श्रावक-श्राविकाओ की, जब तक श्रद्धा प्ररूपणा तथा व्यवहार समाचारी एक न हो, कल्याण सधना अत्यन्त कठिन हे। ऐसी अवस्था मे ऐसे कोन मुनि महात्मा होगे, जो पक्ष को छोडकर-सबके कल्याण मे अपना कल्याण हे, इस बात को मान नवनिर्मित वर्द्धमान सघ मे सम्मिलित होने से इन्कार करेगे। अपितु सभी मुनि-महात्मा इस सघ मे सम्मिलित होगे।

''वर्द्धमान सघ'' यह नाम ही महान् कल्याणकारी हे। इस नाम पर श्रीमान् चरम तीर्थंकर श्री वर्द्धमान जिन, जिन का यह शासन हे, के नाम की छाप लगी हुई हे। इसके सिवाय इस सङ्घ का नाम किसी व्यक्ति या सम्प्रदाय विशेष के नाम पर नही हे। इसलिए इस नाम के विषय मे किसी प्रकार के तर्क-वितर्क को स्थान नहीं हे।

वर्द्धमान संघ के नियम

(१) इस सङ्घ का जातिकुल सम्पन्न, द्रव्य क्षेत्र काल ओर भाव का ज्ञाता, आचारादि मुनिक्रिया मे निष्णात और नवीन सङ्घ का भार उठाने मे समर्थ ऐसा एक सर्वमान्य मुख्याचार्य स्थापित करना चाहिए।

(२) मुख्याचार्य की अधीनता मे उपरोक्त गुण युक्त अनेक उपाचार्य, उपाध्याय, प्रवर्त्तक, गणावच्छेदक, आदि स्थापित किये जाय ओर इनकी अधीनता मे यथायोग्य मुनियो को कार्यकर्त्ता स्थापित कर कार्यभाग सोप दिया जावे। अपनी अधीनता के मुनि-महात्माओ की देखरेख ओर आचार-

विचार ज्ञान-ध्यान आदि की साल सम्भाल वडे मुनि-महात्मा करे और अधीनस्थ मुनि-महात्मा, जिनकी अधीनता मे हे उनकी आज्ञानुसार विनय-भक्ति-व्यावच आदि समस्त कार्य करे।

(३) साध्वी-समुदाय मे मुख्य प्रवर्तिनी और प्रवर्तिनी के नीचे गणावच्छेदिनी आदि स्थापित की जाय।

(४) मुख्याचार्य जिन साधु-साध्वियो का सघाडा बाध देवे, उन साधु-साध्वियो को उस सघाडे मे रहना होगा।

(५) देश-विदेश भेजने या चातुर्मास कराने के लिए जो सघाडे बाधे जावे, उनमे साधुओ के एक सघाडे मे ३ से कम साधु और साध्वियो के एक सघाडे मे ४ से कम साध्विया न होनी चाहिए।

(६) चातुर्मास या पूर्ण शेष काल में साधु और साध्वी-किसी एक ही ग्राम मे मुख्याचार्य की आज्ञा बिना न रह सकेगे।

(७) आचार्य के समीप उस ग्राम नगर मे साध्विया मर्यादापूर्वक रह सकती हे।

(८) जहा तक हो सके प्रवर्तिनी उसी ग्राम या नगर मे चातुर्मास करे, जहा मुख्याचार्य का चातुर्मास हो।

(९) वर्द्धमान सघ की जो समाचारी तेयार की जावे, सभी साधु-साध्वियो को तदनुसार वर्तना होगा। यदि कोई साधु-साध्वी मोहवश उस समाचारी का उल्लघन करे तो खोट वातो का प्रायश्चित्त उपाचार्य गणावच्छेदक, प्रवर्त्तक, प्रवर्तिनी आदि से लेना होगा ओर वडा प्रायश्चित्त छेद या मूल देना हो तो ऐसा प्रायश्चित्त देने का अधिकार उपाचार्य आदि को भी रहेगा, परन्तु उस दोप की आलोचना मुख्याचार्य को सुनानी होगी। आलोचना सुनने और प्रायश्चित्त मे कम ज्यादा करने का अधिकार मुख्याचार्य को पूर्णरीति से होगा।

(१०) इस सघ के साधु-साध्वी जिसे भी श्रद्धा दें उसे वर्द्धमान सघ के नाम से श्रद्धा देवे। वर्द्धमान सघ के मुख्याचार्य को धर्माचार्य (गुरु) श्रद्धवे और श्रावक-श्राविकाओ को उन्ही की श्रद्धा मे करे।

(११) जिस पुरुष-स्त्री को दीक्षा देनी होगी, उसकी आयु, प्रकृति, शिक्षा, जाति, कुल, वैराग्य और सम्बन्धियो की आज्ञा आदि की जाच जब तक मुख्याचार्य स्वय या किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा न करा ले और दीक्षा देने की आज्ञा न दे दे तब तक कोई साधु-साध्वी किसी को दीक्षा न दे सकेगे। प्रत्येक दीक्षा मुख्याचार्य की स्वीकृति से ही होगी।

(१२) शिठ्य मुख्याचार्य की ओर से शिठ्या प्रवत्तिनी की नेश्राय मे की जावे, जिससे खीचातानी और सघ के टुकडे न हो।

(१३) साधु-साध्वियो को शास्त्र-साहित्य पढाने और उपदेश की शिक्षा देकर योग्यता उत्पन्न करने के लिए मुख्याचार्य प्रबन्ध करे, जिससे विद्वान् साधु और विदुषी साध्विया बन सके। यदि मुख्याचार्य उचित समझे तो इस विषय मे उपाचार्य उपाध्याय आदि का भी [illegible]।

(१४) हस्तलिखित शास्त्र-पुस्तक पाने आदि मुख्याचार्य की नेश्राय मे रहे और [illegible] साधु-साध्वियो को पढने के लिए दे दे। [illegible] अपने साथ ले जाने का अधिकार न [illegible]।

(१५) शास्त्र आदि लिखने वाले साधु-साध्वी भी तेयार किए जावे, जिससे शुद्ध ओर सुन्दर लिपि के शास्त्र एव साहित्य की वृद्धि हो।

(१६) साध्वियो से विना कारण आहार-पानी लेना-देना आदि शास्त्र मे वर्जित हे, इसलिए आहार-पानी का सभोग न किया जावे।

(१७) इस गच्छ मे प्रवेश होने के लिए आलोचला का एक खरडा तेयार किया जाय ओर उस मुआफिक प्रत्येक साधु-साध्वी को प्रतिज्ञापूर्वक सच्चे दिल से पूर्वानिश्चित मुख्य-मुख्य महात्माओ के पास आलोचना कराकर, उस आलोचना मे यदि व्रतो मे त्रुटि न हो तो जिस दिन सर्वप्रथम दीक्षा ली हे, उसी दिन को दीक्षामिति कायम किया जाय और उसी मुआफिक छोटे बडे का दर्जा समझा जाय। इस खरडे के मुताबिक कार्य हो जाने पर ही साधु-साध्वियो को सघ मे सम्मिलित किया जावेगा, अन्यथा नही।

(१८) मुख्याचार्य जिस साधु-साध्वी को अयोग्य समझेगे वह इस सघ मे प्रविष्ट न हो सकेगा।

(१९) वर्द्धमान सघ के मुख्य आचार्य जिस साधु-साध्वी को अलग कर दे, उसके लिए सर्वसङ्घ को चाहिए कि वह उसे साधु-साध्वी न माने ओर साधु-साध्वी को की जाने वाली विधि वन्दना भी उसे न करे। यह नियम तभी तक हे, जवतक वह मुख्याचार्य से प्रायश्चित्त लेकर सघ मे सम्मिलित न हो जावे।

(२०) किसी साधु-साध्वी को दोष के कारण सघ से अलग करने का समय आवे तो उसे मुख्याचार्य की परवानगी लेकर ही अलग किया जावे। हा, मुख्याचार्य की स्वीकृति के विना जिनके साथ वह साधु-साध्वी हे, वे साधु-साध्वी आहार-पानी वन्दन आदि सभोगवृत्ति न करे, परन्तु जव तक मुख्याचार्य की आज्ञा न हो उस साधु-साध्वी को अपने पास से न तो अलग ही किया जावे न उसे अलग करने के विषय की कोई घोषणा ही सघ मे की जावे। यदि जाहर व्यवहार विगड गया हो तो सघ मे यह प्रकट करे कि इस विषय की सब सूचना मुख्याचार्य को दे दी गई हे ओर उनका हुक्म जव तक न आ जावे, तव तक इसके साथ सम्भोग न रखते हुए भी हम इसे अपने पास रखते हे। मुख्याचार्य का हुक्म आने पर उनकी आज्ञानुसार कार्य किया जावेगा।

(२१) कोई साधु-साध्वी छन्द या कविता वनावे तो मुख्याचार्य को या मुख्याचार्य जिसके लिए कहे उसे वताए विना ओर मुख्याचार्य की स्वीकृति लिए विना लोगो मे प्रसिद्ध न करे। केवल स्तुति-रूप बोलने की वात अलग हे, परन्तु उसमे सघ की श्रद्धा के विपरीत वात न आनी चाहिए। ओर आचार्य के पास रजू करने पर उनके कथनानुसार फेर-फार करना होगा।

(२२) वर्द्धमान-सघ के साधु-साध्वियो की श्रद्धा प्ररूपणा एक रहनी चाहिए। जो मुख्याचार्य श्रद्धे, पुरुपे, वेसा ही सव साधु-साध्वियो को श्रद्धना प्ररूपणा चाहिए। यदि किसी को कोई तर्क उत्पन्न हो ओर वह तर्क सघ परम्परा के विरुद्ध हो तो जव तक मुख्याचार्य से उसका समाधान न हो जावे तव तक प्रसिद्ध रूप मे किसी के पास प्ररूपणा नही करे। मुख्याचार्य के पास निवेदन करने पर भी यदि उन्हे वह तर्क ठीक जचे तो उसके मुआफिक श्रद्धा प्ररूपणा करने का मुख्याचार्य को अधिकार हे। ओर उनसे पास हो जाने पर सवकी श्रद्धा प्ररूपणा उसी मुआफिक रहे।

(२३) वर्द्धमान-सघ की जो समाचारी तेयार की जावे वह शास्त्रसम्मत और द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव को देखकर होनी चाहिए। जिन बातो का शास्त्र मे निषेध हे। किन्तु अपवाद मार्ग में विधान शास्त्रसम्मत हे, ऐसी बातो को ध्यान मे रखकर तथा लोकिक लोकोत्तर से अविरुद्ध जिताचार से समाचारी बाधने की आवश्यकता है। उस समाचारी मे समय-समय पर देश कालानुसार फेरफार करने का मुख्याचार्य को पूर्ण अधिकार रहेगा।

(२४) पाटपरम्परा के विषय मे वर्द्धमान-सघ की यह धारणा रहेगी कि भगवान् महावीर स्वामी का सघ भगवती सून्य २० शतक के उद्देश्य ८ के पाठानुसार इक्कीस हजार वर्ष तक अविच्छिन्न रहेगा। उसमे चतुर्विध सघ शुद्ध श्रद्धा प्ररूपणा वाला रहा हे ओर रहेगा। इसके अनुसार उन सब महानुभाव आचार्यों को यह सघ प्रमाण रूप मानता हुआ यह पाटपरम्परा कायम करता है कि अब से पाटपरम्परा वर्द्धमान-सघ के मुख्याचार्य से ही मानी जावेगी। क्योंकि वर्तमान काल मे अलग-अलग सम्प्रदाय में अलग-अलग पाटपरम्परा की पाटावलिया हे। इसलिए आगे एक परम्परा कायम करने के लिए उपरोक्त पाटपरम्परा कायम की जाती हे।

(२५) वर्द्धमान-सघ की पाटावली मे शास्त्रोक्त सर्वमान्य आचार्यों का उल्लेख करके बाद मे वर्द्धमान-सघ के आचार्यो से पाटपरम्परा लिखी जावे। भिन्न-भिन्न सम्प्रदायो के भिन्न आचार्यो का नामोल्लेख न किया जावे। जिससे एकता कायम करने में किसी प्रकार की बाधा उपस्थित न हो।

शुद्धिपत्र

जो मुनि 'वर्द्धमान-सघ' मे प्रविष्ट होना चाहे उन्हे अपनी शुद्धि के लिए अरिहन्त, सिद्ध तथा अपनी आत्मा की साक्षी से सत्य को सिर पर रख कर नीचे मुताबिक आलोचना करनी चाहिए।

ज्ञान- ११ अग, १२ उपाग, ४ मूल, ४ वेद तथा आवश्यक इन ३२ शास्त्रो के मूल पाठ को अक्षरश प्रमाणस्वरूप सत्य-रूप न माना हो तथा उक्त शास्त्रो से अविरोधी वचनो को छोड कर शेष ग्रन्थो को प्रमाण भूत माना हो।

दर्शन- १८ दोष रहित वीतराग देव, तथा उनकी आज्ञा मे विचरने वाले निर्ग्रन्थ गुरु, एव सर्वज्ञप्रमीत निरारम्भ निष्परिग्रह स्वरूप वाला अहिंसामय धर्म इन तीन तत्त्वो सत्य-स्वरूप न श्रद्धा हो तथा इनके विपरीत अर्थात् कुदेव, कुगुरु, कुधर्म को देव, गुरु, धर्म श्रद्धा हो। एव आरम्भ परिग्रह मूर्ति मदिर आदि सखघ कार्यों मे धर्म श्रद्धा प्ररूपा हो, धोवण आदि अचित्त पदार्थों मे जीव की शका की हो, धान्यादि बीज मे जीव न श्रद्धे हो, अनुकम्पादान मे एकान्त पाप श्रद्धा हो तथा मिथ्यात्वी की करणी को वीतराग की आज्ञा-स्वरूप मोक्ष का मार्ग श्रद्धा हो।

चारित्र- (१) जानबूझ कर प्राणियो की हिसा की हो।

(२) झूठ बोला हो।

(३) स्वधर्मी या परधर्मी का अदत्त लिया हो। शिष्य, वस्त्र पात्र, पुस्तक आदि का [illegible] की हो।

(४) जानबूझ कर विषय-विकार के लिए मनुष्यणी या [illegible] का [illegible] [illegible] आधार सेवा हो [illegible]-मधुन किया हो। [illegible]

अन्य पुरुष के साथ हस्त-मैथुन किया हो या अन्योऽन्य मैथुन-कर्म किया हो या अन्य किसी तरह की कुचेष्टा की हो, ऐसे ही साध्वी ने किसी अन्य स्त्री के साथ दुर्व्यवहार किया हो।

(५) जानबूझकर पैसा, रुपया, मोहर, सोना, चादी, जेवर, धातु, नोट, कार्ड, लिफाफे, टिकिट आदि परिग्रह रखा हो।

(६) जानबूझकर अस्त्र, पान, खादिम, स्वादिय, ओषध, सूघने या मसलने की चीजे रात्रि मे रखी हो, या भोगी हो, तथा प्रथम प्रहर की उपरोक्त चीजे सुखे समाधे चतुर्थ प्रहर मे भोगी हो।

(७) जानबूझकर आधाकर्मी तथा मोल का आहार, वस्त्र, पात्र आदि भोगे हो।

(८) जानबूझकर आधाकर्मी मकानो मे उतरे हो।

(९) जानबूझकर सचित्त पानी, बीज, हरित, फल, फूल आदि भोगे हो।

(१०) क्रोधवश किसी पर लाठी, मुक्की, थप्पड, आदि से प्रहार किया हो।

(११) यन्त्र-मन्त्र, टूना, टोटका, यज्ञ, होम आदि सखघ कार्य किए हो या कराए हो। गृहस्थ को इस लोक के वास्ते यन्त्र मन्त्रादि सिखाए हो।

तप–आहार करके अनशन की प्रसिद्धि की हो।

श्रावक–श्राविकाओं के संगठन के लिए श्रावक समाचारी

(१) वर्द्धमान-सघ की स्थापना हो जाने पर, वर्द्धमान सघ के मुख्याचार्य को ही सब श्रावक-श्राविका अपना धर्माचार्य माने। अर्थात् गुरु आम्नाय श्रद्धा प्ररूपणा उन्ही की रखे। किन्तु उनके सिवा दूसरे साधुओ की अलग गुरु आम्ना स्वीकार नही करे।

(२) मुख्याचार्य स्थापित हो जाने पर भूतकाल मे जो गुरु आम्नाय श्रावक-श्राविका ने ले रखी हे,उसे परिवर्तन करके वर्द्धमान-सघ के मुख्याचार्य की गुरु आम्ना स्वीकार करे। (खुलासा)

इसका मतलव यह नही हे कि पूर्व गुरुओ को अगुरु समझ कर यह परिवर्तन किया। किन्तु पूर्व के सदाचारी गुरुओ का उपकार मानते हुए, जेसे भगवान पार्श्वनाथ के सन्तानिक साधु भगवान महावीर के शासन मे प्रवेश होने के समय मे अपने पूर्व-गुरु तथा प्रवर्ज्या को शुद्ध मानते हुए शासन-सगठन के महान् उद्देश्य को लेकर प्रविष्ट होते हे, उसमे उन महामुनियो की भावना सघ मे एकता वढाने की ही होती हे। इसी तरह इस नव निर्मित वर्द्धमान-सघ के आचार्य की गुरु आम्नाय धारण करने के श्रावक-श्राविकाओ की पूर्व आचरित श्रद्धा मे कोई दोष नही आता हे। ओर न दोष समझ कर ही गुरु आमाय वदली जाती हे। किन्तु सघ-सगठन रूप महान् उद्देश्य को लेकर गुरु आम्नाय का परिवर्तन किया जाता हे। इसलिए कोई भी श्रावक-श्राविका यह सन्देह न करे कि इतने काल तक पालन की हुई हमारी श्रद्धा वेकार गई। किन्तु यह सरलता धारण करनी चाहिए कि जब अनेक सम्प्रदाय के साधु-साध्वी अपने-अपने गच्छ का परिवर्तन करके नूतन वर्द्धमान-सघ के मुख्याचार्य की आज्ञा स्वीकार करते हे ओर उन्ही की नेश्राय मे रहते हे, तो फिर हम श्रावक-श्राविकाओ को वर्द्धमान-सघ के मुख्याचार्य की आज्ञा धारण करने में कोई हानि नहीं, किन्तु लाभ ही हे।

(३) वर्द्धमान-सघ के मुख्याचार्य की नेश्राय बिना आज्ञा वाहर स्वछन्दता के विचरने वाले साधु-साध्वियो को गुरु समझ कर वन्दन-सत्कार आदि क्रिया न करे, किन्तु अनुकम्पा करके अन्नादि देने का निषेध न समझे।

(४) जिन साधु-साध्वियो को मुख्याचार्य अपनी आज्ञा से वाहर करदे, और फिर जव तक उनको सङ्घ मे सम्मिलित न करे, तब तक उनके साथ किसी प्रकार का पक्षपात श्रावक-श्राविका न करे। उनको मदद न देवे, वन्दनादि सत्कार भी नही करे, और न उनका व्याख्यानादि ही सुने।

(५) वर्द्धमान-सङ्घ के मुख्याचार्य की समाचारी के विरुद्ध यदि कोई साधु-साध्वी प्रवृत्ति करे, तो उसकी सूचना मुख्याचार्य को श्रावक-श्राविका करे। जिससे मुख्याचार्य विपरीत प्रवृत्ति करने वाले साधु का उचित प्रबन्ध करे या किसी साधु को आज्ञा देकर कराए।

(६) धर्म-क्रिया तथा व्यवहार-क्रिया के लिए जो मकान श्रावक लोग खरीदे, अथवा नया तेयार करावे उसमे साधु-साध्वियो का भाव न मिलावे, जिस से उस मकान मे उतरने मे साधु-साध्वियो को दोष न लगे। साधु-साध्वियो को उतारने के लिए बनवाया या खरीदा हुआ मकान हो तो उसमे साधु-साध्वियो को नही उतारे, न उतरने ही दे।

(७) वर्द्धमान-सङ्घ स्थापित होने से पहले जो मकान, धर्म-क्रिया के लिए वनाया या खरीदा हो, उन मकानो मे साधु का भाव न मिलने का निर्णय, वर्द्धमान-सङ्घ का मुख्याचार्य अथवा उनकी आज्ञा से अन्य कोई साधु जव तक न करले, तव तक उन मकानो मे साधु-साध्वी न उतरे। भाव न मिलने का निर्णय हो जाने पर मुख्याचार्य की आज्ञा से साधु-साध्वी उन मकानो मे उतर सकते है।

(८) वस्त्र, पात्र, पुस्तक, अन्नादि उत्सर्ग अपवाद मार्ग मे कल्पने वाली वस्तु जो साधु कल्प के विरुद्ध हो, उन वस्तुओ को कोई भी समझदार श्रावक-श्राविका, साधु-साध्वियो को न दे। और आमन्त्रित भी न करे। कल्पाकल्प का निर्णय नही जानने वाले भोले श्रावक-श्राविकाए यदि उक्त प्रवृत्ति करे तो समझदार श्रावक-श्राविका उन्हे रोके और साधु-साध्वियो को वे चीज न लेने की अर्ज करे।

(९) साधु-साध्वी के नेश्राय के वस्त्र, पात्र, पुस्तकादि श्रावक-श्राविका अपने घर तथा अपनी देख-रेख मे न रखे। यदि कोई अनजान श्रावक-श्राविका ऐसा करे, तो समझदार श्रावक-श्राविका उपाधि रखने वालो को रोके और मुख्याचार्य को तुरन्त सूचित करे। जिससे कि मुख्याचार्य उस प्रवृत्ति करने वाले साधु-साध्वी को रोके और उन्हे प्रायश्चित्त लेकर शुद्ध करे।

(१०) साधु के कल्पा-कल्प की जो समाचारी वर्द्धमान-सङ्घ के मुख्याचार्य की आज्ञा से तैयार हो, उसको प्रत्येक ग्राम-नगर का श्रावक-सङ्घ अपने सङ्घ मे फैलाने की कोशिश करे। जिससे सर्व-साधारण को कल्पा-कल्प का ज्ञान रहे। यदि उस समाचारी मे मुख्याचार्य की आज्ञा से कुछ फेर-फार हो तो वह भी सर्वसाधारण को समझाए जिससे सङ्घ मे दोष की ओर से विशुद्धि रहे। तथा पारस्परिक मन-भेद एव फूट न फैलने पाए।

(११) प्रतिक्रमण की वन्दना मे धर्माचार्य के स्थान पर वर्द्धमान-सङ्घ के मुख्याचार्य और उनकी आज्ञा मे रहने वाले साधु-साध्वियो को वन्दना करे तथा [illegible]

अजमेर से विहार

साधु-सम्मेलन की कार्रवाई पूर्ण होने के पश्चात् पूज्यश्री ने अजमेर से विहार किया और मार्गवर्त्ती स्थानो मे धर्मजागरण करते हुए ठा २२ से बगडी-सज्जनपुर पधारे। बगडी मे आपके व्याख्यान सुनने के लिए वहा के ठाकुर साहब भी आते थे और हरिजन भाई भी आते थे। आपके उपदेश मनुष्य-मात्र के लिए थे। श्रोताओ पर आपकी वाणी का अच्छा प्रभाव पडा। मुसालिया मे दो तेरहपथी भाइयो ने सम्यक्त्व ग्रहण किया।

बगडी से विहार कर पूज्यश्री देवगढ, गगापुर, साहाडा, लाखोला, पोटला, आरणी आदि स्थानो में धर्मोपदेश करते हुए राशमी पधारे। पोटला मे बहुत-से तेरहपथी भाइयो ने भी पूज्यश्री के उपदेशो से लाभ उठाया। आरणी मे जेनेतरो ने माताजी के मदिर मे होने वाली बलि बद कर दी।

यहा से पूज्यश्री कपासन पधारे। कपासन के माहेश्वरी भाइयो मे तडबदी थी और वह भी साधारण नही बल्कि सो घरो मे नो धडे थे। धडे भी बहुत पुराने पड गए थे। सवत् १९२२ से चले आते थे। पूज्यश्री के उपदेशामृत की वर्षा से सारा वेमनस्य साफ हो गया। धडाधड धडे टूटने प्रारम्भ हुए। पूज्यश्री सिर्फ तीन दिन यहाँ विराजे और इतने अल्पकाल मे ही सब धडे टूट गये। ओसवालो और ब्राह्मणो का मन-मुटाव भी मिट गया। इस प्रकार चिरकाल से चली आई अशान्ति पूज्यश्री के उपदेश से शान्ति के रूप मे परिणत हो गई।

चित्तोड आदि अनेक स्थानो के करीब हजार-आठ सो भाई पूज्यश्री के दर्शनार्थ उपस्थित हुए। पूज्यश्री ने उन्हे भी प्रेम और एकता का उपदेश दिया।

पूज्यश्री कपासन से सनवाड और फिर मावली और उँटासा पधारे। यहाँ आपको पूज्यश्री मुन्नालालजी महाराज के स्वर्गवास के समाचार मिले। समाचार मिलते ही आपने ध्यान किया। जयध्वनि और गीतो का गाना बद करके स्वर्गीय महात्मा के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट की। पूज्यश्री ने तथा युवाचार्य प मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज आदि सतो ने उपवास किया।

कुछ दिन वहाँ विराजकर मावली पधारे। मावली मे मुनि श्रीघासीलालजी महाराज पूज्यश्री स मिले। इस विषय का वर्णन आगे किया जायगा।

उदयपुर का श्रीसङ्घ अपने नगर मे पूज्यश्री का चोमासा कराने के लिए अत्यन्त उत्कंठित था। अनेक बार श्रावकगण प्रार्थना करने के लिए पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुए थे। इस बार अनुकूल सयोग होने से उनकी प्रार्थना स्वीकृत हुई। पूज्यश्री कई स्थानो मे धर्म का प्रचार करते हुए चोमासे आरभ होने के समीप उदयपुर पधार गये।।

एकतालीसवा चातुर्मास (संवत् १९९०)

पूज्यश्री ने सवत् १९९० का चातुर्मास ठा १३ से मेवाड की राजधानी उदयपुर मे व्यतीत किया। उदयपुर की धर्मामृत-पिपासु जनता को इससे कितना हर्ष हुआ यह कोन कह सकता है? उसकी चिरकालीन लालसा पूरी हुई। आनन्द छा गया।

पूज्यश्री के व्याख्यानो मे हजारो श्रोताओ की उपस्थिति होना, उच्चतम पदाधिकारियो का आना और उन पर प्रभाव पडना तो साधारण बात थी। वह सब यहा भी हुआ।

तपस्वी मुनिश्री किशनलालजी महाराज ने ४१ दिन की ओर तपस्वी श्रीकेसरीमलजी महाराज ने ६० की तपस्या गर्म जल के आधार पर की। गोगुन्दा निवासी श्रावक श्रीगणेशलालजी ने ४५ दिन के उपवास किये।

साधु-सम्मेलन के नियमानुसार पूर के उपलक्ष्य मे बाहर कही आमन्त्रणपत्रिकाए नही भेजी गईं। सवत्सरी के दिन श्रीकेसरीमलजी महाराज के तप का पूर था। उस दिन लगभग ७०० पोषध हुए।

उन्ही दिनो उदयपुर मे 'जैन-नवयुवक-मडल' की स्थापना हुई। पूज्यश्री के उपदेश से कई स्थानो की तडबदिया मिट गईं और परस्पर प्रेम का सचार हुआ।

एक बहुत बडी और उल्लेखनीय घटना यहा यह हुई कि पूज्यश्री के एक ही उपदेश से स्थानीय तथा किसी जातीय प्रसग पर बाहर से आये हुए करीब दो हजार चमारो ने मास, मदिरा और परस्त्री-गमन का त्याग कर यह सिद्ध कर दिया कि शूद्र कहलाने वाले भाई भी उपेक्षा के पात्र नही। उच्च कुलीन लोग तो अपने कुलक्रम से आगत सस्कारो की बदौलत अभक्ष्यभक्षण आदि अनेक दोषो से प्राय बचे रहते हे और इस दृष्टि से उन्हे उपदेश की उतनी आवश्यकता नही रहती जितनी निम्नश्रेणी के कहे जाने वाले भाइयो को रहती है। इसी कारण पूज्यश्री के व्याख्यान मे आने की किसी का कोई रुकावट नही थी। कदाचित् कोई उच्च कुलाभिमानी किसी प्रकार की रुकावट डालता भी तो पूज्यश्री उसे सहन नही करते थे।

एक बार पूज्यश्री ने इस विषय मे बडी ही दृढता और तेजस्विता से परिपूर्ण वाणी उच्चारण की थी।

रतलाम मे पूज्यश्री ने फरमाया था -

जब समाज व्यवस्था आरभ हुई तब एक वर्ग को सेवा का कार्य सौंपा गया। वह वर्ग अगर सेवा करता हे तो क्या कुछ बुरा करता हे ? एक ओर चँवर-छत्र धारण किये कोई महिला हो और दूसरी ओर मेहतरानी हो तो इन दोनो मे जन साधारण के लिए उपयोगी कौन है ? सोने की डडी वाले चँवर तो किसी विरले पर ही ढोरे जा सकते हे तथा उनके अभाव में किसी का कोई काम भी नही रुकता, लेकिन मेहतरानी तो जन-साधारण के लिए उपयोगी हे। ऐसा होते हुए भी अगर आपको चामर-छत्रधारिणी ही अच्छी लगती है तो कहना चाहिए कि आप वास्तविकता से दूर हट रहे है। अभी आपको ज्ञान नही है। मेहतरानी गटर साफ करती हे और नगर की जनता को रोगों से बचाती है। वह नगर की जनता के प्राणो की रक्षिका हे। उसकी सेवा अत्यन्त उपयोगी और अनुपम है। फिर भी चँवर वाली को बडी समझना और मुकाबिले मे मेहतरानी को नीच मानना भूल है, अज्ञान है और कृतघ्नता से विरुद्ध है। क्या आपमे इतनी उदारता नही आ सकती कि आप इस प्रकार की सेवा करने वालो को भी मनुष्यता की दृष्टि से देखकर उनके साथ मनुष्योचित ही व्यवहार करे ?

आज उल्टी ही स्थिति दिखाई दे रही है। लोग उन्हे अछूत या अस्पृश्य कहकर उनके प्रति [illegible] हीनतापूर्ण व्यवहार करते है मानो वह मनुष्य ही नही है। [illegible] से दूर और [illegible] बुद्धि से उनके साथ अपने इस कर्तव्य को तुलना करके देखा [illegible] जाएगी।

'जेनधर्म कहता हे कि चाण्डाल कुल मे उत्पन्न व्यक्ति भी मुनि हो सकता हे ओर मुनि होने पर वह महान्-से-महान् धर्म का ब्राह्मणो को भी उपदेश दे सकता हे।'

पूज्यश्री के उपदेश से प्रतिवोध पाकर इन हीन कहे जाने वाले सरल हृदय भाइयो का असीम उपकार हुआ। उन्होने उपदेश श्रवण सार्थक किया।

हेमचन्द भाई का आगमन

श्री श्वे स्था जेन काफ्रेस के इतिहास मे अजमेर का नवा अधिवेशन अभूतपूर्व था। साधु-सम्मेलन के कारण उसमे लगभग पचास हजार जनता इकट्ठी हो गई थी। समाज-सगठन तथा पुनर्निमाण के लिए इसमे कई योजनाए वनाई गईं। इस अधिवेशन के सभापति भावनगर स्टेट रेलवे के चीफ इजीनियर श्री हेमचन्द रामजी भाई मेहता थे। काफ्रेस मे पास हुए प्रस्तावो को कार्यरूप मे परिणत करने के लिए उन्होने समाज के अग्रणी व्यक्तियो के साथ एक दौरा करने का निश्चय किया। उसी सिलसिले मे जव आप उदयपुर पधारे, पूज्यश्री वही विराजते थे। उस समय पूज्यश्री तथा हेमचन्द भाई ने जो उद्‌गार प्रकट किए उनका साराश यहा दिया जाता हे। काफ्रेस का डेपुटेशन उदयपुर मे दो दिन ठहरा था। उस अवसर पर पूज्यश्री ने नीचे लिखे विचार प्रकट किये।

प्रथम व्याख्यान

ता ९-९-३३

अभी कुछ ही दिन पूर्व आत्म-धर्म, साधु-धर्म ओर चारित्र-धर्म की शुद्धि के लिए साधु व श्रावको ने वडा परिश्रम किया हे। इसी के लिए अजमेर मे सम्मेलन भी हुआ था। जिन लोगो या महात्माओ का केवल नाम ही सुना था, या नही भी सुना था, अजमेर मे उन सभी का सम्मेलन हुआ। इसी प्रकार श्रावक भी वहुत से एकत्रित हुए। यदि श्रावको मे साधुओ के प्रति भक्ति न होती तो क्या काफ्रेस क किसी ओर अधिवेशन के समय भी इतने आदमी इकट्ठे हुए थे ? जो लोग अजमेर मे एकत्रित हुए थे, वे लोग केसे कष्ट मे रहे होगे, इस वात को तो वे ही जानते होंगे, लेकिन यह तो स्पष्ट हे कि लोगो की नसो मे साधु-भक्ति हे। इसी से लोगो ने अपना सब काम छोडकर, खर्च उठाकर ओर कष्ट सहकर भी इस कार्य मे भाग लिया।

चारित्र की शुद्धि केसे हो, इस वात का निर्णय ओर ऊहापोह करने मे साधु-सम्मेलन के समय, किसी ने कोई कसर नही रखी। परन्तु जव तक वाडी नही हे तव तक रखवाली की चिन्ता नही होती। परन्तु वोने के वाद यदि वाडी सूनी छोड दी जाय तो वन्दर आदि उसे खा जावेगे, या नष्ट कर डालेगे। यही वात साधु-सम्मेलन के लिए भी हे। दुर्लभजी भाई ने साधु-सम्मेलन के लिए ही सेकडो कोस का दौरा किया था। अव प्रेसिडेण्ट साहेव ने सारा वोझा अपने पर उठा लिया। इस प्रकार के परिश्रम से लगाई हुई वाडी को सूनी छोड देना ठीक नही हे, यह जानकर ही प्रेसिडेण्ट साहेव ने प्रवास का यह कष्ट किया हे।

प्रेसिडेण्ट साहेव का काफ्रेस के समय दिया हुआ सारा भाषण तो मने नही पढा, परन्तु उसका कुछ अश मने पढा हे। प्रमुख साहेव ने अपने भाषण मे यह वतलाया हे कि मुझ इन्जीनियर को काफ्रेस का प्रमुख क्यो चुना ? काफ्रेस के प्रमुख साहेव ने तो इस विषय मे कुछ कहा ही, लेकिन मने कुछ दूसरी

ही कल्पना की है। एक गाडी दोडती हुई जा रही हे। उसके भीतर इन्जीनियर शाति से बेठा है। फिर भी शक्ति-गाडी की वडी है या इन्जीनियर की ?

इन्जीनियर की

यद्यपि इजीनियर गाडी से छोटा है। गाडी का एक पुर्जा भी यदि इजीनियर पर गिर जावे तो इजीनियर को दवा सकता है। दूसरी तरफ गाडी ऐसी ताकतवाली है कि इजीनियर को भी जहा चाहे वहा ले जा सकती है। फिर भी गाडी की शक्ति वडी नही है, किन्तु इजीनियरी की शक्ति बडी है। क्योकि एजिन मे पुर्जे इजीनियर ही लगाता है। साधारण आदमी ओर इजीनियर मे यह अन्तर है कि गाडी के विषय मे इजीनियर जो कुछ कर सकता हे, साधारण आदमी वेसा नही कर सकता। इजीनियर मे यह शक्ति है कि वह जोर भर दौडती हुई गाडी को रोक सकता है। रुकी हुई गाडी को चला सकता है। इसी प्रकार एजिन से डिव्वे को अलग भी कर देता है ओर जोड भी देता है। इन्जीनियर टूटे फूटे लोहे को भी एजिन के रूप मे परिणत कर देता है। यद्यपि अग्नि ओर पानी मे शक्ति है, फिर भी उस शक्ति से काम लेना सब कोई नही जानते। लेकिन इजीनियर उससे काम ले लेता है। इस पकार इजीनियर पाचो भृतो पर मालिकी करता है, लेकिन देखना यह हे कि इजीनियर जो कुछ भी करता है, वह शरीर की स्थूल शक्ति से करता हे या ज्ञान-शक्ति से ?

ज्ञान-शक्ति से

यदि ऐसा करने वाले इजीनियर मे से ज्ञान-शक्ति निकाल ली जावे, तो इजीनियर मे क्या वाकी रहेगा ? यह कहने का अभिप्राय यह है कि हम प्रेसिडेण्ट सा को स्थूल शरीर के रूप मे ही नही देखना चाहते। किन्तु ज्ञान-शक्ति के रूप मे देखना चाहते है।

गाडी दोड रही है ओर इजीनियर उसमे शक्ति से बेठा हे। फिर भी इजीनियर कहता है कि यह गाडी का दोडना तो मेरा एक खेल है। मे जब चाहू तब इस दोडती हुई गाडी को रोक सकता हू। क्योकि मेरी ज्ञान-शक्ति इस गाडी की दोड से बहुत बढी हुई है।

एक चीटी चल रही हे आर एक गाडी दोड रही है। इन दोनो मे वडा कोन है ? यस तो गाडी के नीचे नित्य ही अनेक चीटिया दब मरती होगी फिर भी चीटी वडी है, क्योकि चीटी चेतन आर स्वतत्र है। चीटी अपनी शक्ति से एक खडे पत्थर पर भी चढ सकती हे परन्तु रेल नही चढ सकती है। जब साधारण श्रेणी के जीव कीडो मे भी यह शक्ति है। कीडी भी गाडी से वढी हुई है तो मनुष्य आर मनुष्य मे भी इजीनियर की शक्ति का तो कहना ही क्या। इस प्रकार इजीनियर की शक्ति साधारण मुनष्यो से वढी हुई होती है। इसी कारण समाज ने इजीनियर को अपना नेता चुना है।

यदि इजीनियर की शक्ति केवल रेलगाडी चलाने तक ही सीमित रह जावे तब तो एसे बहुत से इजीनियर हुए है। उनका कोई नाम भी नही लेता। यहा तो उस इजीनियर की बात है जो समाज की चलती हुई गाडी के लिए इस बात का विचार रखे कि इस गाडी को किधर चलाकर [illegible] से निकाल ले जाय। ये हेमचन्द भाई गृहस्थ समाज के प्रमुख है। यदि ये समाज-रूप गाडी [illegible] और सोते ही रहे तो हानि के विषय मे किस की जवाबदारी [illegible] रूपी गाडी के ड्राइवर है [illegible] इसलिए समाज रूपी गाडी की जवाबदारी [illegible]

निभाना आपका काम हे। इस गाडी के विषय मे प्रमुख साहेव को रात-दिन चिन्ता रहती होगी। लेकिन गाडी के चलाने मे अकेला इजीनियर कुछ भी नही कर सकता। इजीनियर गाडी तभी चला सकता हे जब पुर्जे ओर कोयला-पानी आदि सव सामग्री की सहायता वरावर प्राप्त हो। यदि पुर्जे न हो, कोयलेवाला कोयले न दे ओर पानी के लिए कुआ जवाव दे दे तो इजीनियर क्या करेगा ? इसलिए यदि समाज की इस गाडी को सुव्यवस्थित रूप से चलाना हे तो सवको अपनी-अपनी जिम्मेदारी समझकर उसके अनुसार कार्य करना होगा।

समाज की गाडी तभी चल सकती हे जव इजीनियर अपना काम करे, पुर्जे वाला अपना काम करे ओर पानी कोयले वाले अपना काम करे। ऐसा होने पर ही यह समाज की गाडी यथास्थान यानी निश्चित ध्येय पर पहुच सकती हे। समाज के किसी भी आदमी को यह समझकर कभी निश्चिन्त नही होना चाहिए कि हमने समाज के लिए प्रमुख चुन लिया है। वे ही इजीनियर की तरह इस समाज की गाडी को चलावेगे। क्योंकि समाज के प्रमुख होने के कारण प्रमुख साहेब पर तो समाज की गाडी चलाने का भार हे ही, लेकिन प्रमुख साहेब को प्रमुख पद के लिए समाज के लोगो ने ही चुना हे। इसीलिए प्रमुख साहेब को चुनने वालो पर क्या जिम्मेदारी नही हे ? चुनने वालो पर भी जिम्मेदारी हे। ऐसा होते हुए भी यदि कोई आदमी यह कहे, कि समाज की गाडी कही भी जावे, हमारा क्या ? तो ऐसा कहना कृतघ्नता है। प्रमुख साहेब को आप ही ने अपना प्रमुख चुना हे ओर हाथी पर बेठा कर उनका जुलूस निकाला हे। क्या आपने ऐसा प्रमुख साहेब का अपमान करने के लिए किया हे ? यदि अपमान के लिए न हो, किन्तु सम्मान के लिए किया हे तो फिर आप अपना कर्त्तव्य समझो।

सीता ने राम के गले मे हार डाला था। तो वह जब राम वन जाने लगे तब उनके साथ वन को गई थी या घर रही थी ? साथ वन गई थी।

इसी प्रकार आपने प्रमुख साहेव का स्वागत किया हे ओर इनके गले मे हार डाला हे। अव आपको भी सीता की तरह ककर-पत्थर की ठोकरो के समान कष्टो से डरना उचित नही हे। कार्य के समय घर मे सो रहने से या कष्टो से भीत हो जाने से कदापि प्रशसा नही होती। सीता की प्रशसा राम के गले मे हार डालने से ही नही है। किन्तु हार डालने के साथ ही राम के साथ वन जाने से हे। हा, यदि राम वन को न जाते ओर अकेली सीता को ही वन भेजते तथा उस समय सीता वन को न जाती तव तो वात अलग थी लेकिन जव राम स्वय वन को जा रहे हे तब सीता का कर्त्तव्य क्या हे ? उस समय तो राम सीता को घर रहने के लिए भी कहते हे। परन्तु ऐसे समय मे सीता घर रहेगी या वन को जाएगी।

सीता कहती थी, कुछ भी हो। जव राम अपना कर्त्तव्य पाल रहे हे तव मुझे भी अपना कर्त्तव्य पालना ही चाहिए। इसी प्रकार जव समाज के प्रमुख अपने कर्त्तव्य का पालन कर रहे हे, तब समाज का भी कर्त्तव्य प्रमुख का साथ देना हे। यदि प्रमुख को प्रमुख चुन कर भी समाज प्रमुख का साथ न दे ओर अपनी जिम्मेवारी को भूल जावे तो जैसे समाज अपने कर्त्तव्य को ही भूल गया।

यह वात तो समाज ओर प्रमुख साहेव के सवध की हुई। अव मै अपने सम्वन्ध की वात कहता हू। प्रमुख साहेब ने या समाज ने साधु-सम्मेलन का ओर काफ्रेस का सम्वन्ध जोडा हे। यदि साधु-सम्मेलन का ओर काफ्रेस का सम्वन्ध न जोडा जाता जव तो शायद इन दोनो का जो महत्त्व समझ रहे हे वह महत्त्व न समझते। साधु-सम्मेलन ओर काफ्रेस के सम्वन्ध का आकडा इस तरह हे कि साधु-सम्मेलन

मे सन्तो ने मिल कर कई ठहराव सर्वानुमति से ओर वहुमत से पास करके काफ्रेस के प्रमुख साहेब को दिए। प्रमुख साहेब ने उन्हे समाज के सामने प्रकट किया। यद्यपि साधु-सम्मेलन की रिपोर्ट मे जल्दी आदि कई कारणो से अपूर्णता एव भूल रह गई है। फिर भी मे इस समय इस बात को गोण करके ही वोल रहा हू। मै साधु-सम्मेलन मे किसी नियम से गया होऊ लेकिन प्रमुख साहेब ने यह ठहराव पास किया कि-

' यहा हाजिर या गैरहाजिर और इन ठहरावो को मानने पर साधु-सम्मेलन के ठहराव बन्धनकारक है।''

प्रमुख साहेब ने ऐसा ठहराव तो कर दिया लेकिन हम साधु लोग प्रमुख साहेब के ठहरावो को न माने ओर साधु-सम्मेलन के ठहरावो का पालन न करे तो पालन कराने की जिम्मेवारी किस पर है ?

प्रमुख साहेब ने उत्तर दिया- ठहराव करने वाले पर।

अर्थात् प्रमुख साहेब पर। क्योकि प्रमुख साहेव ही काफ्रेस ह और काफेस ही पमुख साहेव ह। इसलिए प्रमुख साहेव को यह ही मानना पडेगा कि हमारे ठहराव का पालन कराने की जिम्मेवारी हम पर हे।

प्रमुख साहेव ने या काफ्रेस ने साधु-सम्मेलन के ठहराव हाजिर, गर हाजिर आदि सभी सन्तो के लिए वन्धन कारक ठहराए। तब साधुओ का कर्त्तव्य क्या ह ? इस पुकार का ठहराव सघ का हुआ ह। सघ के हुक्म को साधु के लिए मानना आवश्यक है या नही ?

कभी कोई प्रश्न करे कि सघ का हुक्म साधु पर भी चल सकता ह ? तो इसका उत्तर यह हे कि इस नियम मे, कथा मे एक वात मिलती हे। कथा मे वताया हे कि भद्रवाहु स्वामी एकान्त मे योगसाधन कर रहे थे। उन्ही दिनो सघ मे ऐसा विग्रह फेला कि महापुरुष के विना उस विग्रह का निणय नही हो सकता था। सघ ने परामर्श करके दो साधुओ को भद्रबाहु स्वामी के पास भेजा और प्राथना की कि आप जल्दी से पधारे। आपके पधारे बिना सघ मे शाति नही हो सकती। साधु भद्रबाहु स्वामी क पास गये। उन्होने सघ की प्रार्थना के उत्तर मे कहा कि म खाली नही हू, योगसाधन में लगा हुआ हू। मरे आने से योगसाधन मे कमी रहेगी। इसलिए म आने में असमर्थ हू।

साधुओ ने वापिस आकर भद्रबाहु स्वामी का उत्तर सघ को सुना दिया। सघ न साधुओ को फिर उनके पास भेजा आर कहलवाया-सघ की आज्ञा वडी ह या योग वडा हे ? यदि सघ की आज्ञा बडी है तो आपको शीघ्र आना चाहिए। यदि योग बडा ह तो सघ का आपसे कोई सम्बन्ध नही ह। साधुओ ने सारी बात भद्रबाहु स्वामी से कही। उसके मन मे आया कि सघ की आज्ञा वडी ह, योग बडा नही है और सघ मे विग्रह होने देना कर्म बाधना ह।

ठाणाग सूत्र मे आठ आज्ञाए देकर कहा ह कि इन आज्ञाओ का पालन करने म कभी प्रमाद नही करना। उनमे आठवी आज्ञा इस प्रकार ह-

अर्थात् जब सार्धी में कलह हो तव किसी का पक्ष न लेकर उपशान्त हो यह देखना कि न्याय किधर है। ऐसे समय मे मध्यस्थ वन यह निश्चय करना कि मे किसी का नही हू। न्याय का हू। चाहे कोई मेरा मित्र हो या शत्रु, मे सत्य वात ही कहूगा। इस प्रकार के भाव रख कर जो सहधर्मी का कष्ट मिटाता हे, भगवान् कहते हे, उसे महानिर्जरा होती हे। उत्कृष्ट रस आने पर वह तीर्थंकर गोल भी बाधता हे। इस कार्य के करने मे जितना आत्म-कल्याण हो सकता हे उतना आत्म-कल्याण किसी दूसरे कार्य से नही होता।

जव सङ्घ मे शान्ति कराने से महानिर्जरा होती हे तो अशान्ति कराने से महापाप होगा ही। मेरी पूछ हो, इसलिए सङ्घ मे अशान्ति कराने से महाचिकने कर्म बँधते हे।

भद्रबाहु स्वामी ने विचार किया कि मे योग साधूँ या न साधूँ, इससे तो एक ही व्यक्ति के हानि-लाभ का सम्बन्ध हे। परन्तु सङ्घ के विगडने पर परम्परा ही विगड जाएगी। एक फल विगडना दूसरी बात है ओर वृक्ष की जड ही विगड जाना दूसरी बात हे। मूल विगड जाने से तो सभी फल विगड जाएगे। इसलिए न्याय धर्म किधर हे, यह देखकर न्याय-धर्म रूपी मूल को ही सीचना चाहिए। यदि वृक्ष की ओर डाले सूख गई हो, केवल एक ही डाली हरी हो तब भी वृक्ष का मूल सीचने से सारा वृक्ष पुन हरा होना सम्भव है। परन्तु मूल काटने पर तो सारा हरा वृक्ष भी नष्ट हो जावेगा।

भद्रबाहु स्वामी सङ्घ की आज्ञा मानकर सङ्घ के पास आए ओर सङ्घ से क्षमा माग कर उसका काम किया।

मतलब यह हे कि "सङ्घ की शक्ति जबर्दस्त हे।"

इस बात पर विश्वास रखकर सङ्घ की आज्ञा मानना सभी का कर्त्तव्य हे।

किसी बात से हमारा मत-भेद हो यह वात अलग हे। परन्तु सत्य ओर यथार्थ बात के लिए यदि हम सदा तैयार नही तो फिर सङ्घ मे जाने से ही क्या ? हमारा ध्येय सदा से यही है कि सङ्घ मे शान्ति रहे। इतने पर भी हम यही कहते हे, हम सरीखा एक व्यक्ति सङ्घ मे शामिल हो या न हो, सङ्घ मे शान्ति रहे, ऐसे उपाय करते रहना उचित हे।

सङ्घ की शक्ति वडी है। प्रमुख साहेब ने साधु-सम्मेलन के ठहराव सब साधुओ पर वन्धन कारक किस शक्ति से ठहराए हे ?

'संघ शक्ति से।'

सघ ने साधुओ पर जो प्रतिबन्ध लगाया हे, साधुओ को उसे मान देना पडेगा। लेकिन हमारा कहना यह हे कि यदि साधु सङ्घ के लगाए हुए प्रतिबन्ध तोडे तो सङ्घ साधुओ की खुशामद न करे। यदि सघ ने खुशामद की तो साधु सङ्घ के ठहरावो को केवल कागजी ठहराव कहेगे ओर ऐसा होने पर यह होगा कि-

तू न कहे मेरी, मे न कहूँ तेरी।
पोल पाल मे चलने दे, यह मजेदार हथफेरी॥

पोल-पाल रखने से काम न चलेगा। इसलिए आप मेरी या और किसी की खुशामद मे मत पडो। जिसमे त्रुटि हो उसके साथ रियायत मत करो।

अन्त मे मैं पमुख साहेब से यही कहता हू कि आप आए हे ओर हमसे सम्मेलन सम्बन्धी बातचीत की हे। हम से सम्मेलन का ठहराव टूटा है या नही ओर सम्मेलन के ठहरावो का पालन करने मे हमसे कोई त्रुटि हुई है या नही, इस बात का सर्टिफिकेट आप को हमारे लिए देना होगा। हमने त्रुटि की हे या नही इस वात की आप हमारी जाच करे और दूसरे की भी जाच करे। इस प्रकार जाच करने से ही सघ की आज्ञा का पालन हो सकता है और सघ की आज्ञा का पालन करने से ही कल्याण हो सकता हे।

द्वितीय व्याख्यान

ता १०-९-३३

इजीनियर की शक्ति हजारो ट्रेनो से अधिक होती हे, और इसी कारण ट्रेन की जिम्मेवारी इजीनियर पर रहती हे। आप लोगो ने इस समाज-रूपी गाडी की जिम्मेवारी प्रमुख साहेब को दी हे, तो इस गाडी पर नियन्त्रण रखने एव इसे चलाने की शक्ति भी प्रमुख साहेब को आप से मिलनी चाहिए। मे तो यह कहता हू कि इजीनियर मे वहुत शक्ति होती है। लेकिन प्रमुख साहेब मेरे लिए कहते हे कि 'आप मे वडी शक्ति हे।' यदि प्रमुख साहेव की दृष्टि से मेरे मे वडी शक्ति हे तो मे वह शक्ति प्रमुख साहेब को देता हू। प्रमुख साहेव इस शक्ति को अपने में लेकर देखे कि यह शक्ति केसी आनन्ददायिनी हे।

अव इस समय आप लोग क्या करेगे। केवल प्रमुख साहेव के शरीर के सत्कार मे ही रहोगे या प्रमुख साहेब के वनाए हुए नियमो का भी सत्कार करोगे ? उदयपुर के श्रीसघ की तरफ से प्रमुख साहेब का स्वागत किस उद्देश्य से किया गया हे ? हम साधु हे। हम प्रमुख साहेव का स्वागत किस तरह करे। हमारे पास वरमाला भी नही है जो हम प्रमुख साहेव के गले मे डाले। लेकिन आप लोगो ने तो प्रमुख साहेव के गले मे वरमाला डाली हे ओर प्रमुख साहेव के सत्कार का प्रदर्शन किया हे। किन्तु यह प्रदर्शन खाली तो नही हे।

कल प्रमुख साहेब स्थूल शरीर से तो शायद आप लोगो से जुदा हो जाएगे। परन्तु स्थूल शरीर दूर जाना ही जुदाई हे या जुदाई अन्त करण से होती हे ? प्रमुख साहेव का स्थूल शरीर यदि यहा से चला भी जावे तव भी अन्त करण मे भेद नही हे तो जुदाई भी नही हे।

आप लोगो को यह न समझना चाहिए कि प्रमुख साहेव यहा आए, हमने इनका स्वागत किया आर अव यहा से वे जाते हे। इसलिए हमारी जवावदारी पूरी हो गई। अव दूसरो पर जवावदारी हे। अन्त करण का मिलन ओर हिन्दुस्तानी लगन एक बार जुडने के वाद नही टूटते। प्रमुख साहेव से क्या आपने यूरोपीय लग सम्बन्ध जोडा हे जो आज किया ओर कल टूट जावे ? ऐसा लग्न भारतीय नही करते। आर्यवाला अपने लग मे सच्ची प्रीति रखती हे आर एक वार प्रीति कर लेने के वाद फिर नही तोडती। प्रीति दूध मिश्री की तरह होनी चाहिए। इसलिए प्रमुख साहेब यहा से चले भी जावे तव भी आप लोग प्रमुख साहेब के अन्त करण मे जो सम्बन्ध जोड चुके ह, वह तोडना उचित न होगा।

मै अपने लिए कहता हू कि मेरे विषय की वात के लिए वाहर ही वाहर गडवड करने से, कुछ लाभ नही। वैसे तो मुझ से सच्ची बात एक वच्चा भी कह सकता ह आर मै मान सकता हू। परन्तु यह नही हो सकता कि कोइ कहे आर मै मान ही लू। यदि इस प्रकार मानने लगू तो मै आचार्य क्या रहा, मिट्टी का पुतला रहा। हा यदि सच्ची वात मै न मानू तो मुझे कोइ भी टोक सकता ह। मै वार-वार यही

कहता हू कि मेरे विषय की जो भी बात हो, मेरे पास लाओ। मेरे पास न लाकर वाहर ही वाहर गडवड करने से चिकने कर्म वधेगे। मे यही कहता हू, वाहरी गडवड करके धर्म की व्यवस्था को मत विगाडो। वादशाह के रत्नखचित दुपट्टे को खीचकर चीथडे मत वनाओ। इस धर्म की वहुत महिमा हे। इस धर्म का भाग्य कम हे इसी से वह आपकी गोद आया हे। लेकिन आपका भाग्य तो इस धर्म के मिलने से बडा ही हे। गडबड करके इस धर्म के चिन्दे मत उडाओ। एक कवि कहता हे-

पुरा सरसि मानसे विकचसारसाली स्खलत्,
परागसुरभीकृते पयसि यस्य यात वय।
स पल्वल जलेऽधुना मिलदनेक भेका कुले,
मराल कुल नायक! कथय रे कथ वर्तताम्॥

एक राहजस तलेया पर बेठा था। वह तलाई भी छोटी थी। पानी कम था, कीचड अधिक थी। मेढक टर्राते हुए फुदक रहे थे। एक कवि वहा आया। राजहस को देखकर कहने लगा-

हे राजहस! तेरी यह क्या दशा आई हे ? तू मानसरोवर मे रहता था। खिले हुए कमलो की पराग से सुगन्धित पानी को पीता था। मोती चुगता था। आज तू इस तलाई पर क्यो बेठा हे ? तेरे भाग्य मन्द हे। किन्तु हे तलाई। तेरे भाग्य तो बडे हे। तेरे यहा ऐसा मेहमान आया हे। तू अपने मेढको को रोक ले। उन्हे कह कि वे इस तरह उछल-कूद न करे। वह मानसरोवर का हस समय का मारा हुआ ही तेरे यहा आया हे। लेकिन तेरा भाग्य तो वडा ही हे।

तलाई को इस प्रकार कह कर वह कवि राजहस से कहता हे, हे राजहस! तू अपने पुराने दिन याद करके दु ख मत कर। यद्यपि इस तलाई पर तुम्हे मानसरोवर-सा आनन्द न मिलेगा किन्तु जीवन-निर्वाह तो हो जाएगा। आज तुम्हे मानसरोवर का जल नही मिल रहा है। यदि तुम इस तलेया का जल नही पीओगे तो मर जाओगे। यदि धेर्य धारण करोगे तो मानसरोवर भी पहुच सकोगे।

यह अन्योक्ति अलकार है। इसके कहने का तात्पर्य यह हे कि धर्म राजहस-सा हे। सिद्धान्त मे कहा है-

चइत्ता भारह वास चक्कवट्टी मइड्डिओ,
सन्ती सन्ति करे लोए पत्तो गइ मणुत्तर॥

हे धर्मरूपी राजहस! तू जगत् पर शासन करने वाले चक्रवर्ती रूपी मानसरोवर की गोद मे रहने वाला था। बडे-बडे चक्रवर्ती तुझे धारण करते थे ओर अपनी प्रतिष्ठा रखते थे। गोतमस्वामी ओर सुधर्मस्वामी सरीखे महापुरुषो ने तुझे धारण किया था। उस समय तुझे किसी छोटे आदमी की खुशामद नही करनी पडती थी, परन्तु आज वही धर्म अपने यहा आकर पडा हे। अपने लोग ठहरे तलाई के समान ओर धर्म मानसरोवर के समान चक्रवर्ती की गोद मे रहने वाला ठहरा। आपको यह समझ कर आनन्द होना चाहिए कि हमारे यहा धर्मरूपी राजहस आया हे, परन्तु बीच मे प्रकृतिरूपी मेंढक कूद-फाद कर रहे हे। अपनी प्रकृति के मेढको को शान्त करो।

इसी प्रकार हे धर्म! तुम अपने पिछले दिन याद करके दु ख मत करो। गर्मी के दिनो में माली वृक्षो को लोटा-लोटा जल पिलाकर जीवित रखता हे। फिर वर्षा ऋतु म खूब पानी गिर जाता हे। फिर

भी वर्षा की अपेक्षा माली के जल का मूल्य अधिक है। क्योकि माली के जल ने ही जीवन रखा है। इसीलिए यह कहा जाता है कि इस वृक्ष को माली ने सीचा है और इसके फल का अधिकारी वह माली ही है। इसी प्रकार हे धर्म! तेरे को रखने वाले वर्षा के जल के समान चक्रवर्ती आज नही है। परन्तु इन्हे गर्मी के दिन समझ कर धैर्य रख! आज जिनकी गोद मे तू पडा है उन्हे लोटे का जल समझ कर सन्तोष रख! यद्यपि लोटे का जल वर्षा के जल की अपेक्षा बहुत थोडा है, फिर भी जीवन रखने के लिए इसी का सहारा है। गर्मी के दिनों मे जीवन बना रहेगा तो वर्षा ऋतु भी देखने को मिलेगी।

मित्रो! इस धर्म पर ग्रीष्म ऋतु के से दिन है। इसलिए इस बात का ध्यान रखो कि यह धर्म रूपी वृक्ष कुम्हला न जावे। यदि इस की रक्षा करोगे तो आप भी यशस्वी फल प्राप्त करोगे। धर्म के विषय मे न्याय की बात समझो, समझाओ और भूल मिटाओ। तलेया मे मेढको की तरह कूदा-फादी मत करो। ऐसा करने से आपका भी सम्मान न रहेगा। धर्म पर दृढ रहो।

छोडो न धर्म अपना यदि प्राण तन से निकले।
त्यागो न कर्म अपना यदि प्राण तन से निकले॥
जीना धरम को लेकर मरना धरम को लेकर।
जाना धरम को लेकर जब प्राण तन से निकले॥
आपत्तियो के भय से मुह मोडना न हरगिज।
मत छोडना धरम को यदि जान तन से निकले॥
हो जाओगे अमर तुम, मरकर रहोगे जिन्दा।
हो धर्म पर निछावर यदि प्राण तन से निकले॥
जिसने नही किया कुछ, अपना सुधार जग मे।
जिन्दा रहा तो क्या है, चाहे जान तन से निकले॥
है भावना हमारी, हे दीनबन्धु वत्सल!
रहकर धरम मे कायम, यह जान तन से निकले॥

पद की कडिया कैसी भी हो, परन्तु जब बात समझाई जाती है तब अपूर्व हो जाती है। इस पद्य का अर्थ समझाने को समय नही है, इसलिए इसका अर्थ थोडे मे ही कहता हू कि अपना धर्म न छोडना।

इस पद मे अपना धर्म न छोडने को तो कहा, किन्तु अपना धर्म कौन-सा है? जैन, वैष्णव, मुसलमान, ईसाई आदि सभी अपना-अपना धर्म कहते है। शास्त्र भी कहता है कि अपना धर्म नही छोडना चाहिए। किन्तु धर्म किसे कहना चाहिए? इसका उत्तर यह है कि जिस से अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य आदि की स्थापना हो और झूठ आदि पापो का निराकरण हो, वही धर्म है। चाहे ऐसे धर्म का नाम कुछ भी हो। केवल जैन नाम धराने से ही कुछ नही होता किन्तु उसमे ऊपर वाली विशेषताए होनी चाहिए। जिस धर्म मे ये गुण है उसके लिए यदि प्राण भी देना पडे तो बुरा नही है। पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज फरमाया करते थे कि कभी धर्म और धन दोनो मे से एक के जाने का समय आवे तब यह भावना हो कि धन भले ही जावे किन्तु धर्म न जावे। ऐसे ही धर्म और प्राण जाने का समय आवे तो प्राण जाय परन्तु धर्म न जावे यह भावना रखना। इस प्रकार की दृढ़ता रखने से ही धर्म का पालन होता है। श्री प्रभुदास साहेब से मेरा यही कहना है।

पूज्यश्री के भापण के वाद प्रमुख साहेव ने नीचे लिखे शव्द कहे-

पूज्य महाराज, मुनिराज, वन्धुओ ओर वहिनो!

पूज्यश्री के जो व्याख्यान दो दिन सुने हे, उसके वाद कहने की कुछ आवश्यकता नही रहती। आप वडे भाग्यवान हे कि पूज्यश्री का चातुर्मास आपके यहा हे ओर आप नित्य व्याख्यान सुनते हे। यद्यपि मेरी इच्छा भी यहा ठहरकर व्याख्यान सुनने की हे परन्तु मेरा प्रोग्राम वन चुका हे, इसलिए मे नही रह सकता। भाग्य से अवसर मिला तो किसी दूसरे चातुर्मास मे मे पूज्यश्री के व्याख्यानो का लाभ ले सकूगा।

मुझे अब से पहले माटुगा मे पूज्यश्री के दर्शन प्राप्त हुए थे। मे उस समय वम्वई मे केवल एक ही दिन रुका था।इसलिए पूज्यश्री की सेवा का लाभ केवल आध घन्टा ले सका। माटुगा मे जव में पूज्यश्री के दर्शन करके बेठा तो उन्होंने प्रश्न किया- आप पेसेजरो को इधर-उधर पहुचाने के लिए रेल सडक तो वनाते हे, परन्तु ऊपर (मोक्ष) जाने के लिए सडक बनाते हे या नही ? पूज्यश्री के प्रश्न के उत्तर मे मेने उस समय क्या कहा था यह तो मुझे याद नही हे, लेकिन मेने ऊपर जाने के लिए अब तक भी सडक नही बाधी हे। अव मे इसके लिए प्रयत्न करता हू ओर इसीलिए मुझे श्रीसघ से सहायता पाने की आवश्यकता पडी हे। यदि मुझे श्रीसघ की पूर्ण सहायता प्राप्त हुई तो शायद मे ऐसी सडक भी वाध सकू।

पूज्यश्री ने मेरा परिचय इन्जीनियर के रूप मे कराते हुए इन्जीनियर पद के लिए बहुत वडी जिम्मेवारी बताई है। लेकिन मेरी समझ से मेरी इजीनियरी के अपेक्षा कुदरत की इजीनियरी बहुत वडी हे। प्रकृति दिन-रात तोड-फोड किया ही करती हे। जो निरुपयोगी को बिगाडकर नया उपयोगी वनावे वह सृष्टा प्रकृति ही हे। यद्यपि जेनशास्त्र ओर आधुनिक विज्ञान के अनुसार किसी वस्तु का नाश नही होता, केवल रूपान्तर होता हे। फिर भी प्रकृति को जेसा अच्छा लगता हे, वेसा होता हे।

मुझे उदयपुर श्रीसघ के सम्मुख कहने के लिए अवसर मिला हे, इसके लिए मे उदयपुर श्रीसघ का उपकार मानता हू। वेसे तो जहा जाना होता हे उस स्थल का नाम लेना ही पडता हे, लेकिन यदि वहा जाने के लिए सडक बनी हुई हो तो वहा सहूलियत से पहुचा जा सकता हे। ऊपर अर्थात् मोक्ष गति के लिए श्रीसघ सडक हे। लेकिन किसी भी सडक को कोई एक व्यक्ति नही वना सकता। सवके सहयोग से ही सडक बन सकती है ओर तभी उस सडक पर से मुसाफिरी की जा सकती हे। आप सडक को देखकर यह जान सकते हे कि यह सडक केसे कष्ट से बनी हे ओर एक बार कष्ट सहकर सडक बना देने से प्रवास किस प्रकार सुखदायी हुआ हे। जिस प्रकार मुसाफिरी की सडक सहयोग ओर कष्ट-सहन द्वारा बनती हे उसी प्रकार सघ की सडक भी सहयोग ओर कष्ट-सहन द्वारा ही वन सकती हे। किसी से धन की, किसी से विचारो की ओर किसी से शारीरिक परिश्रम की सहायता प्राप्त हो, तभी सघ की सडक वन सकती हे ओर छोटे-वडे सभी के लिए सुखदायिनी हो सकती हे।

सघ की सडक वनाने ओर उसके लिए सहयोग प्राप्त करने के वास्ते ऐक्य-वल की आवश्यकता हे। सडक वनाते यदि नदी आ जावे ओर नदी के किनारे अप्रयत्नशील वनकर वेठ जावे तो नदी के दूसरे किनारे कदापि नही जा सकते। वहा ऐक्यवल से पुल वाधना ही पडता हे, तभी पार जा सकते हे। इसी प्रकार सघ की सडक को वनाते समय, नदी की तरह कोई बात आ जावे तो उसे भी ऐक्य-

वल से पुल वनाकर पार करना चाहिए। आगे, फिर कोई न समझने वाला व्यक्ति रूपी पहाड मिला तो उस समय अपना कर्त्तव्य क्या होगा ? क्या उस पहाड को देखकर चुप हो जाना चाहिए ? रेल की सडक वनाते समय यदि कोई छोटा पहाड आ जाता है। तब तो चक्कर देकर भी सडक निकाल लेते हे। लेकिन यदि कोई वडा पहाड होता हे ओर चक्कर खाकर भी सडक नही बना सकते तो सुरग लगाकर आवश्यक मार्ग निकालना पडता है। यदि उस पहाड पर दया करके वेठ जावे तो सडक नही बना सकते। इसी प्रकार सघ की सडक बनाते समय पहाड की तरह कोई न समझने वाला व्यक्ति मिले, परन्तु वह हो छोटे पहाड की तरह, तब तो चक्कर खाकर भी सडक निकाल लेनी चाहिए। लेकिन यदि विरोध बडे पहाड के समान हो ओर चक्कर लगाने पर भी मार्ग न निकल सकता हो तो सुरग लगाकर मार्ग निकालने की तरह, अपने को जितना चाहिए उतना मार्ग उस विरोध-रूपी पहाड मे से निकाल लेना चाहिए। ऐसा करना ही अपना कर्त्तव्य हो सकता हे।

रेल की सडक तेयार करने मे सबसे पहले मिट्टी डालकर कच्ची सडक वनाई जाती हे। सघ की सडक वनाने के लिए अपन अभी इसी प्रकार की कच्ची सडक वनाने मे लगे हुए हे। रेल की सडक वनाने मे पहले कच्ची सडक मिट्टी डालकर वनाई जाती हे ओर फिर ककर डालकर उसे मजबूत किया गया जाता हे। जव ककर डालने से सडक मजवूत हो जाती ह तव उस पर पाटे डाले जाते हे। इस प्रकार जव सडक ऐसी मजवूत हो जाती है कि उस पर गाडी धम-धम करके चले, तव भी रेल के पाटे मिट्टी मे न घुसे, तभी गाडी चल सकती हे। इसी प्रकार सघ के नेता भी ऐसे दृढ हो कि सघ की गाडी उन पर केसे जोर से दोडे तव भी वे धसे नही, तभी सघ की गाडी चल सकती हे। सघ की गाडी चलन के लिए मुनि रेल के पाटे के समान हे। सघ के नेता पाटो के नीचे लगी रहने वाली लकडी के समान हे। इन दोनो की मजवूती पर ही सघ की गाडी का चलना निर्भर हे।

कभी सडक भी वन गई ओर ट्रेन भी चल गई, लेकिन यदि सामने से दूसरी ट्रेन आ जावे, तो दोनो ट्रेने आपस मे लड जाएगी, जिससे धन-जन की हानि भी सम्भव हे। इस हानि से वचने के लिए चोकीदार की तरह स्टेशन मास्टर रखने पडते हे। इसी प्रकार सघ की गाडी चलने के लिए सडक वन गई, फिर भी यदि विवेक से काम न लिया जावे तो काम बिगड जावेगा। जिस प्रकार स्टेशन-मास्टर गाडी को मार्ग वताता हे उसी प्रकार अपनी गाडी को मार्ग वताने वाला भी रखना होगा। जहाज जव समुद्र मे चक्कर लगाता ह तव उसे बत्ती बताई जाती हे। यद्यपि यह वत्ती जहाज को शक्ति नही देती, फिर भी मार्ग अवश्य वताती हे। इसी प्रकार सघ की गाडी को मार्ग वताने वाले की भी आवश्यकता हे।

सडक वन गई आर गाडी भी चलने लगी। लेकिन यदि गाडी मे एंजिन जोडकर उससे चलने के लिए कहा जावे तो एंजिन चलेगा ? वैल तो मारने से थोडा वहुत चल भी सकते ह, परन्तु एंजिन न चलेगा। एंजिन तो यही कहेगा कि मुझे खाने को चाहिए। खाने को भी थोडे कोयले चाहिए। इसी प्रकार सघ की गाडी का खीचने वाला एंजिन यह कान्फ्रेस ह। यदि आप भी कान्फ्रेस को सघ की [illegible] एंजिन समझते ह तो इस खाने को दीजिए। इसे भी वहुत थोडा खाने को चाहिए। [illegible] रुपये से बचा हुआ थोडा सा चन्दा रूपी कोयला इस कान्फ्रेस रूपी एंजिन को [illegible] सकेगा ? यह कान्फ्रेस किसी एक [illegible] संस्था नही है [illegible]।

एजिन को कोयले भी दे दिए और गाडी चल भी गई। चलने के पश्चात् अपने आप तभी रुकेगी जब या तो एजिन मे कोयले न रहे या गाडी पाटे से उतर जावे। यदि कोयले न मिलने से गाडी रुकी तो गाडी के लिए लगा हुआ पहले का सब पैसा व्यर्थ जाने देना धन्यवाद दिलाने वाली बात होगी या धिक्कार दिलाने वाली बात होगी, इसे आप ही विचारे।

कोयले मिलने के बाद यदि गाडी यह कहे कि मे दिल्ली नही जाऊगी। आगरा जाऊगी, तो गाडी से यही कहा जाएगा कि तेरा काम चलना है। चलाना तो ड्राइवर का काम है। ड्राइवर जहा ले जाना उचित समझेगा, वही ले जावेगा। ड्राइवर गाडी को वही ले जावेगा, जहा ले जाने के लिए प्रबन्धक उसे आज्ञा देगे। इसी प्रकार सघ की गाडी का ड्राइवर प्रेसीडेण्ट है। परन्तु प्रेसीडेण्ट रूपी ड्राइवर गाडी को वही ले जावेगा, जहा ले जाने के लिए उसे प्रबन्ध कमिटी आज्ञा देगी। अर्थात् प्रेसीडेट कान्फ्रेस को चलाने वाला है फिर वह उसे उसी तरह चलावेगा जिस तरह चलाने के लिए प्रबन्ध-कमिटी प्रेसीडेट को आज्ञा देगी। प्रबन्ध-कमिटी की आज्ञा होने पर भी गाडी को चलाने मे ड्राइवर को सावधानी से काम लेना होगा। जैसे किसी गाडी को ऊपर चढाने के लिए प्रबन्ध-कमिटी की आज्ञा है। ड्राइवर ने गाडी चलाई और वह ऊपर चढने लगी। निश्चित स्थान केवल एक ही मील दूर रहा कि गाडी थक गई और फक-फक करने लगी। यदि उस समय ड्राइवर होशियार हो, तब तो वह गाडी को नीचे न गिरने देगा। अन्यथा गाडी ऊपर न जावेगी और नीचे गिर जाएगी।

गाडी के लिए होशियार ड्राइवर भी मिल गया लेकिन गाडी तभी सकुशल यथास्थान पहुचती है, जब डिब्बे मजबूत साकल से आपस मे जुडे रहते है। यदि किसी चढाई को पार करते समय जोडने वाली साकल टूट जावे तो आधे डिब्बे ऊपर पहुच जावेगे और आधे नीचे गिर जावेगे। गाडी के पीछे गार्ड रहता है। गाडी के अगले ओर की जिम्मेदारी ड्राइवर पर होती है और पिछले ओर की जिम्मेदारी गार्ड की होती है। जिन डिब्बो की जजीर टूट गई है, उनको यदि गार्ड होशियार हुआ तब तो रोक लेगा, अन्यथा वे डिब्बे नीचे आते हुए उलट जावेगे। इसलिए चाहे छोटी गाडी भी हो, परन्तु उसमे लगे हुए डिब्बे को जोडने वाली जजीर मजबूत होनी चाहिए।

गाडी जब चलती है तब उसमे बैठे हुए मुसाफिर सोते या खेलते रहते है, परन्तु ड्राइवर और गार्ड जागते रहते है। ड्राइवर और गार्ड के भरोसे पर ही गाडी के मुसाफिर निश्चित रहते है। परन्तु इन दोनो के भरोसे तभी निश्चिन्त रह सकते है जब सारा प्रबन्ध ठीक हो। इसी प्रकार आप इस कान्फ्रेस की गाडी मे प्रेसीडेट के भरोसे पर निश्चिन्त होना चाहते है, तो पहले सब प्रबन्ध कर लीजिए। सब प्रबन्ध ठीक कर देने के पश्चात् ही आप प्रेसीडेट के भरोसे पर निश्चिन्त हो सकते है। सम्वत् १९५३-५८ मे रेलगाडी के एजिन छोटे-छोटे थे। आज के-से राक्षसी एजिन न थे। इस कारण गाडी कभी-कभी चलती हुई रुक भी जाती थी। ऐसे समय मे गाडी मे बैठे हुए मुसाफिर गाडी से उतरकर उसे धकेलते थे। ड्राइवर या गार्ड से यह नही कहते थे कि तुमने गाडी रोक दी या खराब कर दी। अपनी कान्फ्रेस भी अभी छोटे एजिन के रूप मे ही है। इस कान्फ्रेस की गाडी को धकेलने के लिए कभी-कभी आपको अपना स्थान छोडकर उतरना भी पडेगा। यदि इस तकलीफ से बचना हो तो प्रबन्ध और राक्षसी एजिन की जरूरत है। राक्षसी एजिन एव कोयले आदि का प्रबन्ध तथा चौकीदार आदि की व्यवस्था करने के पश्चात् आप कान्फ्रेस की गाडी मे प्रेसीडेट के भरोसे पर निश्चित रह सकते है।

अब मे इस बात पर प्रकाश डालता हू कि इस स्थिति मे काफ्रेस की आवश्यकता क्या हे। गाडी आदि सब ठीक होने पर भी विना पेसे दिए क्या आप मुसाफिरी कर सकते हे ? कदाचित आप यह कहे कि गाडी के बनाने मे हमने सहायता दी हे, यानी गाडी हमारी बनाई हुई हे, तव भी आपको यही उत्तर मिलेगा कि आपको गाडी का किराया देना पडेगा। क्योकि गाडी सभी लोगो ने मिलकर बनाई हे ओर सभी लोग बिना किराया दिए मुसाफिरी करने लगे तो काम केसे चल सकता हे ? इसी प्रकार इस काफ्रेस की ट्रेन के लिए भी समझिए। काफ्रेस को यदि प्रति कुटुम्ब प्रति दिवस एक ही पाई दी जावे तव भी एक वर्ष मे डेढ-दो लाख रुपया होता हे। यदि सव लोग एक पाई रोज किराया देने लगे तो काफ्रेस का कितना काम हो!

मे यहा की शिक्षण सस्था, विद्या-भवन मे गया था। वहा मेने लडको से गणित का यह हिसाव पूछा कि एक ओर एक कितने होते हे। यही प्रश्न मे यहा भी करता हू। साधारण आदमी तो एक ओर एक दो ही कहेगा लेकिन बुद्धिमान होगा वह एक ओर एक के बीच सम्वन्ध यानी चिह्न पर ध्यान देगा।

एक ओर एक के बीच मे यदि वाकी का निशान होगा तो परिणाम शून्य निकलेगा। यदि जोड का चिह्न होगा तो एक ओर एक दो होगे। यदि एक ओर एक के बीच मे गुणा का चिह्न होगा तो गुणन फल एक आवेगा और यदि भाग का चिह्न होगा तो भागफल भी एक ही आवेगा। इस प्रकार एक ओर एक के बीच मे किसी प्रकार का भेद रहने पर एक ओर एक दो से अधिक न होगे। परन्तु यदि एक ओर एक के बीच का भेद निकाल दिया जावे तो एक ओर एक ग्यारह होगे। यदि तीन एक ओर विना भेद-भाव के होगे तो १११ हो जावेगे तथा विना भेद के चार एक ११११ होगे। इसी प्रकार यदि भेदरहित बीस एक हो तो केसी वडी शक्तिशाली सख्या हो जावेगी इसे आप सरलता से समझ सकते हे। इसलिए मे आप लोगो से यही कहूगा कि आप लोग काफ्रेस की शक्ति वढाने के लिए बीच मे भेद को मिटाना सीखे। अन्यथा एक-एक होने पर भी परिणाम एक, दो या शून्य ही होगा।

घासीलालजी का पृथक्करण

पडित रत मुनि श्री घासीलालजी महाराज पूज्यश्री की सम्प्रदाय के प्रमुख साधु थे। पूज्यश्री ने उन्हे अपने हाथों से दीक्षा दी थी ओर पढा-सिखाकर विद्वान् बनाया था। पूज्यश्री उनकी प्रत्येक दृष्टि से उन्नति चाहते थे। फिर भी सहज ईर्ष्या के कारण वे खिचे-से रहने लगे। कई ऐसे कार्य पूज्यश्री से विना पूछे करने लगे जिसमे आचार्य की आज्ञा अत्यावश्यक मानी गई हे। कुछ वातो मे आज्ञा का उल्लघन भी किया। पूज्यश्री का हृदय जहा करुणापूर्ण था वहा बुद्धि कठोर अनुशासन चाहती थी। घासीलालजी की यह प्रवृत्ति पूज्यश्री को अनुशासन भग के रूप मे मालूम पडी। उन्होने चेतावनी दी किन्तु सन्तोषजनक परिणाम न निकला। अन्त मे कार्तिक कृष्णा १ बुधवार ता ४ अक्टूबर १९३३ को उदयपुर मे श्रीसघ के सामने आपने नीचे लिखा ऐलान किया।

गव्वूलालजी ओर मोहनलालजी इन दोनो सन्तो को लिखित पत्र देकर मेवाड भेजा और घासीलालजी को साधु-सम्मेलन के समय अजमेर आने के लिए सूचना दी। परन्तु घासीलालजी ने मेरी आज्ञा का उल्लघन किया ओर वे अजमेर नही आए। केवल मनोहरलालजी व तपस्वी सुन्दरलालजी, जिनको मैने कुछ ही समय घासीलालजी के पास रहने की आज्ञा दी थी, नवदीक्षित मागीलालजी को साथ लेकर साधु-सम्मेलन के मोके पर अजमेर मे मुझसे मिले। इन दोनो सन्तो ने उस पत्र पर हस्ताक्षर भी किए जिस पत्र मे सम्प्रदाय के सन्तो ने मुझे यह लिखकर दिया था कि अजमेर साधु-सम्मेलन मे आप जो कुछ करेगे वह हम सवको स्वीकार होगा।

अजमेर मे पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज की दोनो सम्प्रदायो को एक करने के विषय मे पच सन्तो ने भविष्य विपयक जो फैसला दिया था, उस फेसले को स्वीकार करना या नही इस विषय मे मेने मुझ सहित उपस्थित ४२ सन्तो से पृथक्-पृथक् राय ली तो सवने यही सम्मति दी कि फेसला स्वीकार कर लेना चाहिए। उस समय मनोहरलालजी एव तपस्वी सुन्दरलालजी ने भी सव सतो के समान फेसला स्वीकार कर लेने की राय दी थी। तव मेने पचो का दिया हुआ भविष्य विपयक फेसला स्वीकार कर लिया और पूज्यश्री मुन्नालालजी महाराज के साथ ही फेसले की स्वीकृति के हस्ताक्षर किए तथा परस्पर सम्भोग किया। पश्चात् मेवाड के भूतपूर्व दीवान कोठारी जी सा बलवन्तसिहजी के द्वारा मेवाड मे मुझसे मिलने का वायदा करके मनोहरलालजी और सुन्दरलालजी विहार कर गए। लेकिन मे जव मेवाड मे पहुचा तो सुन्दरलालजी मेरे पास नही आए। वे देलवाडा ही रह गए। घासीलालजी मनोहरलालजी तथा कन्हेयालालजी मुझसे मावली गाव मे मिले।

मावली में उदयपुर के नगर सेठ नन्दलालजी और मेवाड के भूतपूर्व दीवान कोठारी बलवन्तसिह सरीखे समाज-हितेपी श्रावको ने और मेने घासीलालजी तथा मनोहरलालजी को सम्प्रदाय के नियमानुसार वर्ताव करने के लिए वहुत समझाया। परन्तु उन्होने सम्मेलन के प्रस्ताव तथा कान्फ्रेस द्वारा स्वीकृत पचो के फेसले को भी मानने से इन्कार कर दिया। कई वार पूछने पर भी उन्होने मेरे सामने ऐसी कोई वात नही रखी जो विचारणीय हो। वल्कि मेने उनके सामने कई ऐसी बाते रखीं जो न्यायानुसार उन्हे अवश्य स्वीकार कर लेनी चाहिए थी। परन्तु उन्होने एक भी वात स्वीकार नही की। तव मेरा विचार उसी समय उन्हे सम्प्रदाय एव मेरी आज्ञा से वाहर घोषित करने का था। परन्तु कोठारीजी सा तथा नगर सेठ साहेव की प्रार्थना से मेने वह विचार कुछ दिन के लिए स्थगित रखा। आखिर घासीलालजी मुझसे चोमासे की आज्ञा मागे विना ही मावली से चले गए।

मे उदयपुर आया। उदयपुर से सूरजमलजी तथा मोतीलालजी (मलकापुर वाले) इन दोनो सन्तो को मेने पत्र देकर सेमल भेजा और घासीलालजी को कहलवाया कि सम्मेलन के नियमानुसार एक स्थान पर पाच सतो से अधिक चातुर्मास न करे। आठ सन्तो मे से तपस्वी सुन्दरलालजी, समीरमलजी और किसी तीसरे सन्त को मेरे पास भेज दे। लेकिन उन्होने मेरी आज्ञा की अवहेलना की और सन्तो को ऐसा उत्तर दिया, जिससे वे निराश होकर मेरे पास लोट आए। मेने यह भी सूचना कराई थी कि सम्मेलन के नियमानुसार धोवन-पानी की तपस्या अनशन के नाम से प्रसिद्ध न की जावे। परन्तु उन्होने इस नियम को भी तोड दिया और धोवन-पानी की तपस्या भी प्रसिद्ध कर दी। तपस्या महोत्सव मनाने में उपदेश द्वारा भी रुकावट नही डाली इस प्रकार पक्खी के ८, चोमासी के १२ और सवत्सरी के २० लोगस्स

के ध्यान विषय मे साधु-सम्मेलन के ठहराव का पालन नही किया। इससे मुझे यह प्रतीत हुआ कि घासीलालजी ने मावली के पचो का फेसला ओर साधु-सम्मेलन के ठहरावो को नही पालने का जो कहा था उसे कार्य-रूप मे भी परिणत कर दिया। इतना होने पर सेठ वर्द्धमान आदि की प्रार्थना से मेने उनका 'आज वाहर' करने की घोषणा कुछ समय के लिए ओर स्थगित रखी।

पश्चात् सेमल से सन्देश आने पर उदयपुर के श्रावक मेघराजजी खिवसरा, पन्नालालजी धर्मावत ओर मोतीलाल हीगड सेमल गए। उन्होने घासीलालजी को समझाने का वहुत प्रयत्न किया, किन्तु घासीलालजी ने अपने विचार नही वदले। तत्पश्चात् राय साहेब सेठ मोतीलालजी मुथा, सतारा वाले तथा जोहरी अमृतलाल भाई, वम्वई वाले भी उदयपुर आए ओर उन्हे समझाने सेमल गए। परन्तु उनके समझाने पर भी वे नही समझे ओर कहा- हमने कमिटी के नाम से काफ्रेस के प्रेसीडेट के पास एक चिट्ठी भिजवा दी है। उन्होने अमृतलाल भाई ओर मोतीलालजी को उक्त चिट्ठी की नकल भी दी, जिसमे लिखा था कि हमने आयन्दा के लिए पूज्यश्री की आज्ञा मगवाना भी वन्द कर दिया हे, इत्यादि। वह नकल लेकर ओर निराश होकर मोतीलालजी ओर अमृतलाल भाई उदयपुर मे मुझसे मिले ओर नकल मुझे दिखाई। उस नकल को देखकर मुझे वहुत खेद हुआ ओर मेरा कर्त्तव्य हो पडा कि अव मे अविलम्व उनके लिए 'सम्प्रदाय तथा आज्ञा वाहर' की घोपणा कर दू। लेकिन उसी समय प्रेसीडेट हेमचन्द भाई मय डेपुटेशन के उदयपुर आए। मैने घासीलाल जी सम्वन्धी सारी हकीकत उन्हे सुनाई। काफ्रेस के रेजीडेण्ट जनरल सेक्रेटरी सेठ मोतीलाल जी तथा अमृतलाल भाई ने घासीलालजी के पत्र की नकल भी अपने हस्ताक्षरो के साथ प्रेसीडेट साहेव को दी। इस पर प्रेसीडेट साहेव ने भी मुझे यह सम्मति दी कि आप सम्मेलन के ठहराव के अनसुार उनके साथ वर्ताव कर सकते ह। लेकिन रात को उदयपुर के कुछ भाइयो की प्रार्थना पर प्रेसीडेट साहेब ने मुझसे कहा कि म अपनी तरफ से एक चिट्ठी सेमल देता हू आर घासीलालजी महाराज को समझाने की कोशिश करता हू। अतएव आप आश्विन शु पूर्णिमा तक उनको 'आज्ञा वाहर' करने की घोषणा न करे।

मेने प्रेसीडेट की इस प्रार्थना को मान देकर उनकी वात स्वीकार कर ली। प्रेसीडेट साहेव ने एक पत्र सेमल भेजा, वह घासीलालजी को मिल गया। उसके वाद उदयपुर के श्रावक थावरचदजी वाफणा तथा रणजीतसिह हीगड ने सेमल जाकर घासीलालजी को समझाने की पूरी कोशिश की। परन्तु उनका प्रयत्न भी निष्फल हुआ। इन दोनो के लोट आने पर उदयपुर से मदनसिह कावडिया, जोरावरसिहजी भादव्या ओर मोहनलालजी तलेसरा सेमल गए। किन्तु घासीलालजी को समझाने मे ये तीनो भी सफल न हुए। अर्थात् घासीलालजी ने किसी की कोई वात नही मानी।

काफ्रेस के प्रेसीडेट साहेव की दी हुई अवधि (आश्विन शु १५) समाप्त हो चुकी लेकिन घासीलालजी ने मेरी आज्ञा ओर सम्प्रदाय मे रहने सम्वन्धी कोइ वात स्वीकार नही की। इसलिए निरुपाय होकर उदयपुर के श्रीसघ की सम्मति प्राप्त करने के पश्चात् म श्रीसघ के सामने यह घोषणा करता हू कि-

(२) घासीलालजी के पास रहे हुए मनोहरलालजी, सुन्दरलालजी, समीरमलजी आदि भी शीघ्र मेरे पास चले आवे। उनके पास रहने की मेरी आज्ञा नही है। मेरी आज्ञा को न मानकर उन्हीं के पास रहने वाले मेरी आज्ञा के वाहर समझे जावेगे।

(३) चतुर्विध श्रीसघ का भी कर्त्तव्य है कि जेन प्रकाश ता ७-५-३३ के पृष्ठ ४५८ मे प्रकाशित ठहराव न ४ 'साधु सम्मेलन द्वारा निर्णीत नियमो के उपयोगी सार की कलम न २५ के अनुसार इनके साथ वर्ताव करेगे।

पुनश्च - यदि घासीलालजी अपने आज पर्यन्त के कृत्यो की प्रायश्चित विधि से शुद्धि तथा सम्प्रदाय आज्ञा के आज तक के नियमो को पालना स्वीकार करके सम्प्रदाय मे शामिल होना चाहे, तो नियम पूर्वक सम्प्रदाय मे शामिल करने को मे हर समय तेयार हू ?

उदयपुर मेवाड

ता ४-१०-१९३३

कार्तिक कृ १ स १९९०

पूज्यश्री की घोषणा के अनुसार काफ्रेस के प्रेसीडेट की ओर से नीचे लिखी सूचना प्रकाशित हुई-

आवश्यक सूचना

पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज साहेब ने अपने शिष्य घासीलालजी महाराज को अपनी सम्प्रदाय ओर आज्ञा के विरुद्ध कार्य करने के कारण, अपनी आज्ञा के बिना जहा चाहे चातुर्मास करने से, अपनी आज्ञा के बिना दीक्षा देने से श्री साधु-सम्मेलन के नियम-जेसे-धोवन पानी की तपस्या को अनशन के नाम से प्रसिद्ध न करना, पक्खी, चोमासी ओर सवत्सरी के दिवस ठहराई हुई लोगस्स की सख्या, पाच साधु से अधिक एक ही जगह चातुर्मास न करना- आदि के भग करने से श्री साधु-सम्मेलन के प्रस्ताव न ४ के अनुसार (देखो जेन प्रकाश ता ७-५-३३ पृ ४५८) हुक्मीचन्दजी म साहेब की सम्प्रदाय ओर आज्ञा के वाहर आसोज वदी (मारवाडी कार्तिक वदी १) से कर दिया है। ऐसी खवर श्री साधुमार्गी जेन पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज के सम्प्रदाय के हितेच्छु श्रावक मण्डल, रतलाम कि जिसके प्रेसीडेट श्री वर्द्धमान पीतलियाजी साहेव हे, उनकी तरफ से तथा उदयपुर श्रीसघ की तरफ से लिखकर भेजा गया हे। जिसके ऊपर से यह खवर हिन्द के स्थानकवासी जेन के श्री चतुर्विध-सघ को दी जाती हे, जिससे कि साधु-सम्मेलन ओर काफ्रेस के धाराधोरण के अनुसार व्यवहार किया जा सके।

हेमचन्द रामजी भाई मेहता

प्रमुख, श्री श्वे स्था जेन काफ्रेस

तेरहपंथी भाइयों का विफल प्रयास

साधु-जीवन का मुख्यतम उद्देश्य अभ्युदय साधन करना है। जगत् के जजालो का त्याग कर व्यक्ति इस लिए साधु वनता है कि वह सभी प्रकार के सभोगो से विमुक्त होकर आत्मा की चरम उन्नति

कर सके। अतएव साधु-जीवन अगीकार करने वाला अगर दुनिया से अपनी पीठ फेर ले और परकीय श्रेयस् अश्रेयस् की चिन्ता छोड कर, एकाग्र होकर अपनी ही साधना मे लीन हो जाय तो वह अपना अधिक हित सम्पादन कर सकता है। इससे उसकी साधना मे किसी प्रकार की अपूर्णता नही आ सकती, वरन् पूर्णता ही आएगी। फिर भी साधु अपनी आध्यात्मिक आराधना के साथ जगत् के जीवो का कल्याण करने मे भी योग देते है। इसका क्या कारण है ?

हमारी समझ मे इसका प्रधान कारण यह है कि स्वभाव से परम दयालु मुनि जगत् के मूढ जीवो को जब अहित मार्ग मे जाते देखते है तो उनका हृदय दया से द्रवित हो जाता है और वे उन्हे कुमार्ग से हटाकर सन्मार्ग पर लाने का समुचित प्रयत्न करते है। शास्त्र मे साधु को 'सव्वभूअप्पभूअस्स' विशेषण दिया गया है। यह सर्वभूत-आत्मभूतभाव अर्थात् समस्त प्राणियो को अपने आत्मा के समान समझने का भाव सतो मे काफी उग्र हो जाता है। गीता के शब्दो मे इसे 'आत्मौपम्यबुद्धि' कह सकते है। इस आत्मौपम्य बुद्धि के कारण साधु दूसरे जीवो के कल्याण साधन मे प्रवृत्त होते है।

इस सहज दयालुता तथा आत्मौपम्य के कारण ही पूज्यश्री ने थली प्रान्त मे विहार किया था और धर्म मानकर घोर अधर्म मे फसे हुए तेरापथी भाइयो के उद्धार की चेष्टा की थी। मरु-भूमि का कष्टकर विहार तथा सर्दी-गर्मी, आहार-पानी आदि की असुविधाए सहने का और कोई कारण नही था। अपने ध्यान मौन आदि मे किचित् अन्तराय सहन करके भी आप इन भाइयो के उद्धार के लिए तैयार हुए थे। मगर अधिकाश तेरापथियो ने पूज्यश्री के इस परम पुनीत और प्रशस्त प्रयास का मूल्य नही समझा। उन्हे उचित तो यह था कि वे इस अवसर से लाभ उठाते। सत्य को सर्वोपरि समझकर, अपने आग्रह को थोडी देर के लिए भुलाकर अपने विवेक को आगे करते और पूज्यश्री के कथन को सुन समझकर शास्त्रो से उसका मिलान करते। मगर उन्होने विवेक का मार्ग न अपनाकर दूसरा ही मार्ग अख्तियार किया। उन्होने सत्य को गौण और कदाग्रह को प्रधान स्थान दिया उसका किंचित वर्णन पहले किया जा चुका है।

पूज्यश्री जब थली से विहार कर उदयपुर पधार गये तो तेरापथी भाइयो ने एक और स्तुत्य (!) करतूत की।

पूज्यश्री ने तेरापथी सम्प्रदाय की आलोचना करने के लिए 'सद्धर्ममण्डन' और 'अनुकम्पा विचार' नामक दो ग्रथो का निर्माण किया था। इनमे तेरहपथियो के मान्य-ग्रन्थ 'भ्रमविध्वसन' का और उनकी अनुकम्पा की ढालो का खण्डन करके दया, दान आदि को एकान्त पाप मानने का विरोध किया था। इन ग्रथो मे शास्त्रीय विचार करने के अतिरिक्त और कोई आक्षेपजनक बात नही है। लेकिन तेरहपथी सम्प्रदाय के अनुयायी इन ग्रथो से ऐसे कुछ घबराये जैसे आजकल लोग अणुबम से घबराते है। उन्होने बीकानेर राज्य की ओर से दोनो ग्रथ जब्त कराने के चक्र चलाने शुरू किये। इसके लिए उन्होने एडी से चोटी तक पसीना बहाया, मगर उनकी तकदीर मे निराशा ही बदी थी और अन्त मे उन्हे [illegible] पडी। बीकानेर रियासत के तत्कालीन स्थानापन्न प्रधानमत्री ठाकुर [illegible] ने दोनो पक्षो की बात सुनकर जो न्यायपूर्ण निर्णय दिया वह इस प्रकार है -

५-९-३३ मिसल मुकदमा जरिए रोवकार महकमा कोसिल ता २०-३-३३ दरवारे इसके कि एक किताव जिसका नाम 'चित्रमय अनुकम्पाविचार' हे, वाइस टोला सम्प्रदाय की तरफ से छपाई गई हे व तेरहपथी समाज के चित्त को दुखने वाली जाहिर की गई हे। सेठ फूसराज वगेरह से दर्याफ्त होवे कि यह किताव जव्त क्यो न की जावे ? ओर किताब 'सद्धर्ममण्डन' नामकी भी जिसके लिए ता २०-३-३३ को भी अलग दर्याफ्त किया हे, क्यो नहीं जव्त की जावे ? सीगा मुनफर्रकात माल।' मिन जुमले दूसरी कितावो के कि जिनका काविल ऐतराज पाए जाने पर वीकानेर की सीमा के अन्दर दाखिल होना मना किया गया हे, दो कितावे जिनका नाम 'चित्रमय अनुकम्पाविचार' ओर 'सद्धर्म मण्डनम्' हे, तेरहपथियो ने पेश करके जाहिर किया हे कि इनको भी जव्त किया जाना चाहिए। मगर इनकी निस्वत पूरी तहकीकात किए वगेर कोई हुक्म देना मुनासिव ख्याल न किया जाकर वाईस टोला सम्प्रदाय के मुअज्जिज शख्सो मे से सेठ फूसराज दूगड साकिन सरदार शहर से, सेठ भेरोदान जी सेठी बीकानेर, सेठ मूलचन्दजी कोठारी साकिन चूरू ओर सेठ कनीराम बांठिया साकिन भीनासर से दरियाफ्त किया गया कि बतलाया जावे कि इन कितावो को क्यो न जब्त किया जावे। चुनाचे सेठ फूसराज वगेरह ने हाजिर होकर अपने जवाब के साथ-साथ किताबे 'भ्रमविध्वसनम्' ओर 'शिशुहित शिक्षा द्वितीय भाग' नाम की पेश की जो तेरहपथियो की ओर से छपाई हुई ओर जाहिर किया कि यह इन तेरहपथियो की बनाई हुई किताबो के जवाव मे हमारे पूज्यश्री महाराज ने इसलिए बनाई हे कि दूसरी सम्प्रदाय की तरफ से जेनधर्म की मान्यता के प्रति जो झूठे आक्षेप भ्रम मे पडकर कर रहे हे न करे। ओर 'शिशुहितशिक्षा' ओर 'भ्रमविध्वसनम्' नामक पुस्तको को पढकर अपने धर्म के सम्बन्ध मे कोई भ्रम न हो जावे। इससे केवल हमारा व्यक्तिगत सम्वन्ध नही है। वल्कि कुल स्थानकवासी सम्प्रदाय से हे। साथ ही इस जवाव के फूसराज वगेरह ने एक लिस्ट उन अपमानजनक शव्दो की तेयार करके पेश की हे कि जो इन तेरहपथियो की वनाई हुई किताबो मे दर्ज हे। ऐसा होते हुए भी एक सम्प्रदाय की पुस्तको का जव्त करना ओर दूसरो का प्रचार करना गवर्नमेण्ट वीकानेर के सहन करने योग्य नही हे ओर न ही इनमे किसी के मान-हानि कारक व अश्लील शब्दो का प्रयोग किया गया हे। हमने इन दोनो किताबो को देखा तो जाहिर हे कि ये कितावे जिनको तेरहपथी जव्त करने की चेष्टा मे हे उनकी 'भ्रमविध्वसनम्' ओर 'शिशुहित शिक्षा द्वितीय भाग' नामक कितावो के जवाब मे वाईस टोला सम्प्रदाय वालो की तरफ से छपाई गई हे कि जिसको गवर्नमेण्ट बीकानेर के नजदीक जब्त किया जाना मुनासिब नही हे। लिहाजा कागजात हाजा दाखिल दफ्तर होवे। ता ५-९-३३

द ठाकुर शादूलसिहजी

एक्टिग प्राइममिनिस्टर ६-९-३३

चातुर्मास के पश्चात्

उदयपुर का चोमासा समाप्त होने पर पूज्यश्री देलवाडा, नाथद्वारा, मोटागाव आदि स्थानो मे धर्मदेशना करते हुए निम्बाहेडा पधारे। यहा बाहर से वहुत-से दर्शनार्थी आपके दर्शन और आपके उपदेश से लाभ उठाने के लिए उपस्थित हो गये थे। अनेक राज्यकर्मचारी भी पूज्यश्री के व्याख्यान सुनकर आनन्दित होते थे।

अजमेर के साधु-सम्मेलन के अवसर पर पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज के दोनो सम्प्रदायो मे एकता स्थापित हो गई थी। इस सबध मे पच मुनिराजो ने जो निर्णय दिया था उसके अनुसार पूज्यश्री मुन्नालालजी महाराज के स्वर्गवास के पश्चात् पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज ही दोनो वर्गों के आचार्य हो चुके थे। मगर सघ का दुर्दैव ही समझिए कि अनेक उलझनो के बाद जो एकता हुई थी वह स्थायी नही रही और निम्बाहेडा मे उस एकता की इतिश्री हो गई। एकता-भग के कारणो मे यहा उतरने की आवश्यकता नही है क्योकि तत्कालीन पत्रो मे सारा विवरण प्रकाशित हो चुका है।

निम्बाहेडा से विहार करके अनेक स्थानो को पवित्र करते हुए पूज्यश्री २३ ठाणा से जावद पधारे। भावी युवाचार्य पण्डित-प्रवर मुनि श्रीगणेशीलालजी महाराज भी साथ थे। यहा पूज्यश्री के व्याख्यानो मे जैन, जैनेतर और राजकीय कर्मचारियो की बडी भीड रहती थी। पूज्यश्री मृत्युभोज की प्रथा के विरुद्ध समय-समय पर उपदेश दिया करते थे। मृत्युभोज करने से मृतात्मा को शाति प्राप्त होती है, यह धारणा तो मिथ्यात्त्वपूर्ण है ही, लोकिक दृष्टि से भी मृत्युभोज करने की बुराइया असह्य है। मृत्युभोज के सम्बन्ध मे पूज्यश्री के निम्नलिखित वाक्य माननीय है-

'मोसर (मृत्युभोज) का भोजन महाराक्षसी भोजन है। वह गरीबो को अधिक गरीब बनाने वाला और धनवानो को दयाहीन बनाने वाला है।'

इस कुरीति ने अनेक गरीबो का सत्यानाश कर डाला है। धनवान् लोगो के पास पैसे की कमी नही। वे इस प्रसग पर पैसा लुटाते है और गरीबो पर ताने कसते है। बेचारे गरीब जाति मे अपनी प्रतिष्ठा कायम रखने के लिए धनवानो का अनुकरण करते है। जाति मे धनवानो की प्रधानता होती है और प्रतिष्ठा की कसोटी इस प्रकार की बना रखी है। पर याद रखना चाहिए, सच्चा जाति-हितैषी वह है जो अपने व्यवहार से गरीबो की प्रतिष्ठा बढाता है, जो अपने गरीब जाति-भाइयो की सहूलियत देखकर स्वय बर्ताव करता है, जो उनकी प्रतिष्ठा मे ही अपनी प्रतिष्ठा मानता है। सच्चा जाति-हितैषी अपने बडप्पन की रक्षा गरीबो के बडप्पन की रक्षा करने मे ही मानता है।

मित्रो! जरा विचार करो-क्या एक-दो दिन तक भोज मे जीमने से आप मोटे-ताजे हो जाएगे? अगर ऐसा नही है तो 'मोसर' मे खर्च होने वाला धन किसी धर्मकार्य मे, जाति-भाइयो की भलाई मे, खर्च करना क्या उचित नही है? आपके अनेक जाति भाई वृथा भटकते फिरते है। उन्हे कही से कोई सहायता नही मिलती। अगर उनकी सहायता मे आप कुछ व्यय करे तो क्या आपका धन व्यर्थ चला जायगा? यदि मोसर करने से नाम होता है तो क्या इससे नाम न होगा?'

मित्रो! ससार की विषम स्थिति की ओर दृष्टि डालो। जिसके घर आप मोसर जीमने जाते है उसके घर की, बाल-बच्चो की और उसके घर की महिलाओ की स्थिति देखो तो मालूम होगा कि मोसर जीम कर कैसा राक्षसी कृत्य किया जा रहा है।'

आपके इस प्रकार के उपदेश से बहुत-से श्रोताओ पर अच्छा प्रभाव पडा। कइयो ने मोसर करना त्याग दिया और कइयो ने मोसर मे जीमने का त्याग कर दिया।

जावद से विहार करके वडी सादडी आदि अनेक स्थानो मे उपदेश की लोकोत्तर गगा वहाते हुए पूज्यश्री ता २६-१-३४ को कानोड पधारे। आपके पदार्पण के उपलक्ष्य मे कानोड के राजवी श्रीकेसरीसिहजी ने ढिढोरा पिटवाकर अगता पलवाया। यहा आपके चार व्याख्यान हुए। दो व्याख्यानो मे रावजी साहव पधारे ओर पूज्यश्री के मार्मिक व्याख्यानो से अत्यन्त प्रभावित हुए। ठाकुर अमरसिहजी, ठाकुर मानसिहजी, ठाकुर नाहरसिहजी ओर ठाकुर उम्मेदसिहजी ने हिसा करने का आशिक त्याग किया। ता २७ का विहार करके आप भिडर पधारे। यहा से डूगरा होकर आपने जावद पधारने की इच्छा प्रकट की।

युवाचार्य पद-महोत्सव

अजमेर-सम्मेलन मे पण्डितप्रवर मुनि-श्रीगणेशीलालजी महाराज को फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा से पहले-पहल युवाचार्य-पदवी प्रदान करने का निश्चय हुआ था। पूज्यश्री सम्मेलन के निर्णय के अनुसार किसी योग्य स्थान पर ओर प्रशस्त मुहूर्त्त मे यह कार्य सम्पन्न करना चाहते थे। इस समारोह के लिए जावद-श्रीसघ की आग्रहपूर्ण प्रार्थना थी। पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज के सम्प्रदाय के लिए जावद भी एक महत्त्वपूर्ण स्थान रहा हे। पूज्यश्री शिवलालजी महाराज आदि अनेक महापुरुषो का युवाचार्य-पद-महोत्सव तथा आचार्य-पद-महोत्सव वनाने का सोभाग्य इसी नगर को प्राप्त हुआ हे।

इस प्रकार ऐतिहासिक महत्त्व रखने वाले जावद नगर के गोरव को फिर ताजा करने के लिए पूज्यश्री ने यहा के श्रीसघ की प्रार्थना स्वीकार कर ली। फाल्गुन शुक्ला तृतीया पदवी-प्रदान के लिए शुभ मुहूर्त्त निश्चित किया गया।

जावद के उत्साही श्रीसघ ने भारत के सभी प्रान्तो मे आमत्रणपत्रिकाए भेजी। सभी सन्तो ओर सतियो को सूचना दी गई। अपने भावी धर्म-नोका के खिवेया का युवाचार्य-पद-महोत्सव देखने ओर अपनी श्रद्धा-भक्ति प्रकट करने के लिए चारो तीर्थ जावद मे जमा होने लगे। फाल्गुन कृष्ण द्वादशी के दिन पूज्यश्री युवाचार्यजी आदि सतो के साथ जावद पधारे। सहस्रो श्रावको ओर श्राविकाओ ने अपूर्व उमग ओर उत्साह के साथ सामने जाकर पूज्यश्री तथा युवाचार्यश्री का हार्दिक स्वागत किया। दर्शन-लाभ करके अपने नेत्र सार्थक किये। महाप्रभु महावीर ओर जेनधर्म के जयघोष के साथ जावद नगर मे प्रवेश हुआ।

उसी समय श्रीमोताजी महाराज के सम्प्रदाय की महासती श्रीसुन्दर कुवरजी ठा ४ का शुभागमन हुआ ओर आप भी प्रवेश के समय सम्मिलित हो गई। मुनिश्री चादमलजी महाराज (वडे), मुनिश्री हरसचन्दजी महाराज आदि ठा ५, श्री रगूजी महाराज के सम्प्रदाय की महासती श्रीनाथाजी म ठाणा ७ ओर श्रीमोताजी म के सम्प्रदाय की महासती श्रीभूराजी ठा ३ से पहले ही पधार चुके थे। यह सव सत ओर सतियाजी भी पूज्यश्री के स्वागत मे सम्मिलित थे। इस प्रकार चारो तीर्थों के विशाल जनसमूह के साथ पूज्यश्री ने जावद में प्रवेश किया। पूज्यश्री ज्ञानमलजी चोधरी के दरीखाने में ठहरने वाले थे। आप सीधे वही पधारे। वहा आपका छोटा-सा भाषण हुआ। आपने फरमाया-

मे डेढ महीना पहले जावद आया था ओर आज फिर यहा आया हू। पहले आया तव हेमन्त ऋतु थी ओर अव वसन्त का आरम्भ हे। हेमन्त ऋतु अपने प्रखर शीत से वृक्षो के पत्तो जला देती हे।

वसन्त ऋतु आकर उन उजडे हुए वृक्षो को नवीन पल्लव प्रदान करती और द्विगुणित शोभायुक्त वना देती है। वसन्त के आगमन से जैसे वृक्षो मे नये पल्लव और अकुर उत्पन्न होते है, उसी प्रकार आप लोगो मे भी नया उत्साह उत्पन्न होगा और आप जैन शासन को उन्नत वनाने मे प्रयत्नशील होगे, ऐसा विश्वास है।

पूज्यश्री का यह सदेश और मगल-वचन सुनकर जनता वहा से विदा हुई। कुछ देर के पश्चात् प्रवर्त्तिनी महासती श्रीआनन्दकुवरजी महाराज ठा ९ से पधार गईं। प्रवर्त्तिनी श्रीकेसरकुवरजी महाराज भी ठा ३ से पधार गईं।

इस तरह सतो और सतियो के आगमन का ताता लगा ही रहा। फाल्गुन शुक्ला द्वितीया को सन्तो की सख्या ३० और सतियो की सख्या ३५ हो गई। दर्शनार्थी श्रावक भी करीव ७००० की सख्या मे एकत्र हुए। जावद श्रीसघ के उत्साह का पार नही था। वडी स्फूर्ति और तत्परता के साथ आगत अतिथियो का सत्कार किया गया।

उस समय नीचे लिखे सन्त विराजमान थे।

१ जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज।

२ मुनिश्री चादमलजी महाराज।

३ मुनिश्री हर्षचन्दजी महाराज।

४ मुनिश्री मागीलालजी महाराज।

५ मुनिश्री धूलचन्दजी महाराज।

६ मुनिश्री शान्तिलालजी महाराज।

७ मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज।

८ मुनिश्री सरदारमलजी महाराज।

९ मुनिश्री हजारीमलजी महाराज।

१० मुनिश्री पन्नालालजी महाराज।

११ मुनिश्री शोभालालजी महाराज।

१२ मुनिश्री श्रीचन्दजी महाराज।

१३ मुनिश्री मोतीलालजी महाराज।

१४ मुनिश्री वख्तावरमलजी महाराज।

१५ मुनिश्री गब्बूलालजी महाराज।

१६ मुनिश्री कपूरचन्दजी महाराज।

१७ मुनिश्री हेमराजजी महाराज।

१८ मुनिश्री रूपचन्दजी महाराज।

१९ मुनिश्री हमीरलालजी महाराज।

२० मुनिश्री नन्दलालजी महाराज।

२१ मुनिश्री भूरालालजी महाराज।

२२ मुनिश्री जीवनमलजी महाराज।

२३ मुनिश्री जेठमलजी महाराज।

२४ मुनिश्री चादमलजी महाराज।

२५ मुनिश्री सुभालचन्दजी महाराज।

२६ मुनिश्री घासीलालजी महाराज।

२७ मुनिश्री जवरीमलजी महाराज।

२८ मुनिश्री चतुरसिहजी महाराज।

२९ मुनिश्री अम्बालालजी महाराज।

३० मुनिश्री मोतीलालजी महाराज।

श्रीरगूजी महाराज की सम्प्रदाय की महासती प्रवर्त्तिनी श्री आनन्दकुवरजी महाराज ठा २५।

श्री मोताजी महाराज की सम्प्रदाय की महासती प्रवर्त्तिनी श्री केसरकुवरजी ठाना १०।
कुल सन्त-सती ६५ उपस्थित थे।

युवाचार्य का संक्षिप्त परिचय

उदयपुर मे ओसवाल कुलभूषण श्रीसाहवलालजी मारू रहते थे। आप मेवाड रियासत के प्रामाणिक कर्मचारियो मे से एक थे। फोजदारी महकमे मे खजाची थे। आपकी धर्मशीला धर्म पत्नी श्रीमती इन्द्रावाई की कोख से श्रावण कृष्णा ३, शनिवार सवत् १९४६ के दिन एक पुत्र-रत्न का जन्म हुआ। जेसे श्रावण मास पृथ्वी को हरा भरा, सम्पन्न ओर शोभामय वना देता हे उसी प्रकार उस पुत्र ने अपन माता-पिता ओर पारिवारिक जनो के हृदय को हरा-भरा, आनन्दमय ओर उल्लास से परिपूर्ण कर दिया। ग्रीष्म के ताप से तपी पृथ्वी श्रावण की वर्षा से शीतल हो जाती हे उसी प्रकार पुत्ररत्न की प्राप्ति से माता-पिता की चिरकालीन अभिलाषा पूर्ण होने के कारण उनका हृदय शीतल हो गया। यही पुत्र-रत्न आज साधु-रत्न हे, जिसे युवाचार्य-पद पर प्रतिष्ठित करने की जावद मे तेयारी हो रही हे।

कोन जाने यह एक अकस्मात् था या विद्वान् ज्योतिषी की दीर्घ दृष्टि का परिणाम था कि वालक का नाम 'गणेशीलाल' रखा गया। कुछ भी हो मगर 'गणेशीलाल' नाम सार्थक सिद्ध हुआ। उस समय वालक सिर्फ नामनिक्षेप से ही 'गणेश' था, अव युवाचार्य वन कर-साधुओं के गणसमूह का ईश वनकर भावनिक्षेप से भी गणेश' वना।

श्रीगणेशीलालजी ने अपने वचपन मे हिन्दी ओर अगरेजी भापा के साथ-साथ विशेप रूप से उर्दू भापा की शिक्षा प्राप्त की थी। चोदह वर्प की अवस्था मे आपका विवाह हो गया ओर आप अपने पिताजी के साथ कचहरी का काम-काज सीखने लगे। जब आप १५ वर्प के हुए तो अचानक ही आप

पर वज्रपात-सा हुआ। माता ओर पिता-दोनो स्वर्ग सिधार गए। कुछ ही दिनो बाद आपकी पत्नी ने भी अपने सास-ससुर का अनुगमन किया। इस प्रकार प्रकृति ने लगभग एक साथ ही आपको सव प्रकार के वन्धनो से मुक्त कर दिया।

जव गणेशीलालजी का वचपन ही था, तव आप अपने पिताजी के साथ स्व पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज की सेवा मे गये थे। पूज्यश्री ने उस समय दीक्षा लेने का उपदेश दिया था ओर आपके पिताजी से कहा था- 'यदि आप अपने वालक को सयम दिला दे तो इससे धर्म की वहुत उन्नत होगी। यह वालक वहुत होनहार हे।' पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज मनुष्य को परखने मे कितने कुशल थे, यह बात इस घटना से सहज ही जानी जा सकती हे। मगर पूज्यश्री के यह फरमाने पर भी आपके पिताश्री ने पुत्रवात्सल्य के कारण दीक्षा न दिलाई। वल्कि ससार मे अधिक जकड रखने के लिए आपको विवाह-वन्धन मे वाध दिया। फिर भी जिसके भाग्य मे आत्मोन्नति का प्रवल योग हो उसे निमित्त मिल ही जाते हे। माता-पिता और पत्नी के स्वर्गवास के पश्चात् आप सब तरह से वन्धन-मुक्त हो गए। यद्यपि आपकी एक सगी वहिन थी परन्तु पिताजी उनका विवाह पहले की कर चुके थे। आपको किसी किस्म की कोटुम्बिक चिन्ता नही थी।

सयोगवश उसी वर्ष तपस्वी मुनिश्री मोतीलालजी महाराज का ओर पृज्यश्री जवाहरलालजी म का उदयपुर में चातुर्मास हुआ। पूज्यश्री ने आपको ससार का असार स्वरूप समझाया ओर सयम की उत्कृष्टता वतलाई। आपका मन ससार से विरक्त तो हो ही गया था, पूज्यश्री के उपदेश से विरक्ति आर वढ गई। मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपद् सवत् १९६२ के दिन आपको मुनि श्रीमोतीलालजी महाराज की नेश्राय मे पूज्यश्री ने स्वय दीक्षा दी। इस प्रकार आपने सयम ग्रहण करके अपने जीवन के असली अभ्युदय के पथ पर प्रयाण किया।

मुनिव्रत धारण करने के बाद आपने अनेक थोकडे ओर शास्त्र लिखे। इसके पश्चात् आप पूज्यश्री के साथ दक्षिण प्रान्त मे पधारे और वहा सस्कृत, व्याकरण, साहित्य तथा न्याय-शास्त्र आदि का विशिष्ट अध्ययन किया। आपने जिस तत्परता के साथ इन सब विषयो का अध्ययन किया, उसका वर्णन पहले किया जा चुका हे।

आप प्राय पूज्यश्री के साथ ही विचरते रहे हे। अतएव दिन-प्रतिदिन आपकी प्रतिभा का विकास होता गया। सवत् १९७६-७७ मे जब पूज्यश्री मालक, मारवाड पधारे तब आपने चीचवड और सतारा मे चातुमास किये।

पूज्यश्री के प्रति आपकी भक्ति वडी प्रगाढ थी। आपने सदेव मनोयोग के साथ पृज्यश्री की सेवा की। सवत् १९८१ म, जलगाव-चातुर्मास के समय जब पूज्यश्री के हाथ मे भयकर फोडा हो गया था, आपने वडी ही तत्परता से सेवा की। उन दिनो एक वार पृज्यश्री की अवस्था चिन्ताजनक हो गई थी। उस समय सेठ वर्द्धमानजी पोतलिया, सेठ वहादुरमलजी वाठिया तथा सेठ [illegible] आदि सम्प्रदाय के मुख्य श्रावक वहा मोजूद थे। उनकी तथा वहा उपस्थित [illegible] की [illegible] हरिजादीमल म , श्री हीरालालजी म आदि अन्यत्र विराजमान सन्तो की सम्मति [illegible] को आपको युवाचार्य पदवी प्रदान कर दी गयी। [illegible]

हो गया, अत युवाचार्य पदवी देने की शीघ्रता नही रही। पूज्यश्री और मुनिश्री दोनो अनेक स्थानो पर विचरते हुए उपदेशामृत की वर्षा करने लगे।

सवत् १९८३ का चातुर्मास आपने जलगाव मे व्यतीत किया। उस समय वहा महाभाग मुनिश्री मोतीलालजी महाराज बीमार थे। आपने जलगाव मे उपदेश-अमृत बरसाते हुए अपने गुरुवर्य की तन-मन से अविश्रान्त सेवा की। तपस्वी महाराज चातुर्मास के पश्चात् भी अस्वस्थ रहे और फाल्गुन वदि ११ को स्वर्ग सिधार गए।

गुरुदेव के स्वर्गवास के अनन्तर आपने जलगाव से विहार किया और मालवा, मारवाड होते हुए सवत् १९८४ मे पूज्यश्री की सेवा मे भीनासर पहुचे। सवत् १९८५ मे पूज्यश्री का चौमासा सरदारशहर हुआ, जब कि आपने चूरू मे चातुर्मास करके दया-दान आदि का प्रचार किया। आपके व्याख्यानो का जनता पर खूब प्रभाव पडा। आपने सवत् १९८७ का चातुर्मास व्यावर मे १९८८ का फलोदी मे किया। आपके सदुपदेश से माहुलियाजी मे प्रतिवर्ष होने वाली सात-आठ सौ वकरो की वलि वद हो गई। आपके उपदेश क्षेत्रो में विविध प्रकार के उपकार हुए।

आप स्वभाव से सरल, भद्र और सेवाभावी है। अपने साथ के छोटे-से-छोटे सत को किसी प्रकार की तकलीफ हो जाय तो आप भोजन करना तक भूल जाते है। अपने शरीर की उतनी चिन्ता नही करते मगर मुनियो के लिए व्यग्र हो जाते है। मुनियो के साथ आपका व्यवहार अत्यन्त मधुर होता है मगर सयम-पालन के विषय मे अत्यन्त कठोर भी है। सयम की मर्यादा का भग होना आपको असह्य है। यों आप क्षमा के सागर है। मगर असयम को आप तनिक भी क्षमा नही कर सकते।

अजमेर-साधु-सम्मेलन मे पच मुनियो ने जो निर्णय दिया था उसमे एक बात यह भी थी कि 'मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज को युवाचार्य बनाया जाय।' उस निर्णय में यह भी प्रतिपादन किया गया था कि निर्णय की सभी बाते फाल्गुनी पूर्णिमा से पहले ही अमल मे आ जानी चाहिए।

इस निर्णय के अनुसार फाल्गुन शुक्ला तृतीया को युवाचार्य पदवी देने का निश्चय हुआ। पदवी प्रदान के समारोह के लिए एक विशाल मैदान चुना गया। वही प्रतिदिन व्याख्यान होता था। प्रतिपद् के दिन युवाचार्य का भाषण हुआ। तदनन्तर पूज्यश्री ने प्रभावशाली एव रोचक व्याख्यान फरमाया। आपने कहा -

''जिस समय सूर्य अपनी सहस्र किरणो से प्रकाश फैला रहा हो उस समय लोगो को दीपक की सहायता की आवश्यकता नही रहती। परन्तु सूर्य के अभाव मे यदि सासारिक लोग दीपक की सहायता न ले तो उनका कार्य व्यवहार सुविधापूर्वक कैसे हो सके ? इसीलिए सूर्य के अभाव मे दीपक की सहायता ली जाती है। सूर्य और दीपक मे यह अन्तर अवश्य है कि सूर्य स्वय पकाशमय है उसे किसी की अपेक्षा नही रखनी पडती। उसका प्रकाश प्रशस्त है। लेकिन दीपक स्वय प्रकाशमय नही है। उसका प्रकाश सापेक्ष एव अप्रशस्त है। सापेक्ष होने के कारण दीपक से प्रकाश लेने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि उसमे तेल दिया जाय और बत्ती रखी जावे और बत्ती को अग्नि लगाई जावे।

भगवान् तीर्थंकर सूर्य के समान ह। वल्कि उनकी समता करोडो सूर्यों से भी नहीं हो सकती। वे केवल ज्ञानी, अन्तर्यामी, और घट-घट के भावो के जानने वाले होते है। उनका ज्ञान पूर्ण होता है।

लेकिन वर्तमान समय मे भगवान् तीर्थंकर भारतवर्ष मे विद्यमान नही है। इसलिए उनके अभाव मे चतुर्विध-सघ के लिए आचार्यादिक ही आधार है। भगवान् तीर्थंकर मे और आचार्यादिक मे वैसा ही अन्तर है, जैसा सूर्य और दीपक मे है। अर्थात् एक सापेक्ष है और दूसरा निरपेक्ष। पूर्ण ज्ञानी होने के कारण भगवान् तीर्थंकर को किसी की अपेक्षा नही है, न किसी की सहायता की ही आवश्यकता रहती है। लेकिन आचार्य, तीर्थंकर के समान पूर्ण-ज्ञानी नही होते। इसलिए आचार्य को चतुर्विध-सघ की अपेक्षा रहती है। चतुर्विध-सघ की सहायता होने पर ही आचार्य चतुर्विध-सघ के आधार-रूप हो सकते है। अन्यथा जिस प्रकार तेल बत्ती रहित दीपक प्रकाश नही दे सकता, उसी प्रकार चतुर्विध सघ की सहायता विना आचार्य भी आचार्य-पद की जिम्मेवारी पूरी नही कर सकते।

आचार्य का काम चतुर्विध-सघ मे साश्या, वारणा धारणा और चोयणा, पचोयणा करना है। इन कामो के लिए यदि चतुर्विध-सघ सहायता न दे तो आचार्य को कठिनाई मे पड जाना पडे तथा आचार्य पद का गौरव भी न रहे। उदाहरण के लिए गच्छ के किसी रोगी, ग्लान या तपस्वी साधु की सेवा का प्रबन्ध करना है। यदि इस कार्य मे श्रमण-सघ की सहायता प्राप्त न हो तो अकेला आचार्य किस-किस सन्त की सेवा-सुश्रूषा कर सकता है? इस कार्य के लिए श्रमण-सघ का सहकार आवश्यक है। इसी प्रकार आचार्य ने किसी उद्दण्ड सन्त को उद्दण्डता करने से रोका, शिक्षा दी, या सघ-धर्म की रक्षा के लिए उसे सङ्घ से पृथक् कर दिया। सम्भव है कि अलग किया हुआ या दण्ड पाया हुआ व्यक्ति आचार्य पर अपवाद लगावे और आचार्य के विषय मे झूठी-सच्ची बाते कहकर हो-हल्ला मचावे। ऐसे समय मे यदि सघ की ओर से ऐसे अपवाद का निराकरण न किया जावे तो आचार्य-पद का गौरव न रहेगा। उस समय सङ्घ का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह सत्य और न्याय को दृष्टि मे रखकर उस अपवाद का निराकरण करे और आचार्य के गौरव की रक्षा करे। छद्मस्थ होने के कारण यदि आचार्य से कोई भूल हुई हो तो आचार्य को उनकी भूल सुझाकर न्याय-पथ पर लाना उचित है, लेकिन इस ओर से उपेक्षित रहना सर्वथा अनुचित है। मेरे कथन का अभिप्राय यह नही है कि थप्पड का बदला थप्पड से दिया जावे। लेकिन कायरता को क्षमा का रूप देना ठीक नही। झूठी और क्षणिक शाति के नाम पर असत्य एव अनुचित प्रचार होने देना धर्म और आचार्य का गौरव घटाना है।'

चादर-प्रदान-दिवस

फाल्गुन शु ३ सम्वत् १९९० को ग्यारह बजे से १ बजे तक का समय युवाचार्य-पदवी प्रदान करने के लिए शुभ माना गया था। उस दिन प्रात काल सात बजे दीवान बहादुर श्रीमान् सेठ मोतीलालजी मूथा के नेतृत्व मे एक जुलूस निकाला गया। जावद के तहसीलदार तथा दूसरे राज्याधिकारी भी उसमे उत्साहपूर्वक सम्मिलित हुए। बैण्ड, डका, निश्तन, कोतल घोडे, चवर छत्र आदि से सुसज्जित होकर पाच हजार नर-नारियो के साथ जुलूस सुखदेवजी खूबचन्दजी के नोहरे से निकला। सारे शहर मे घूमकर नौ बजे फिर उसी स्थान पर आ गया। मुनिराजो का दर्शन करके श्रावक-श्राविकाए अपने स्थान पर चले गए।

दस बजे के लगभग सरकारी स्कूल का विशाल मैदान भरने लगा। आध घण्टे मे हजारो प्रेक्षक एकत्र हो गए और मैदान ठसाठस भर गया। साढे दस बजे सन्त-सतिया तथा युवाचार्यश्री के साथ पूज्यश्री पधारे। जनता ने जयध्वनि के साथ अपने वर्तमान तथा भावी आचार्य का स्वागत किया।

ग्यारह वजे पूज्यश्री तथा सभी सन्तो ने मिलकर नवकार मत्र का पाठ किया और भगवान् शान्तिनाथ की प्रार्थना की। मगलाचरण के वाद पूज्यश्री ने व्याख्यान प्रारभ किया। आपने फरमाया-

यह वात तो चतुर्विध-सघ को विदित हो चुकी हे कि आज मिति फाल्गुन शुदि ३ सम्वत् १९९० का दिन परम आनन्द का ओर जीवन मे पुन पुन स्मरण करने योग्य हे। क्योकि आज युवाचार्य गणेशीलालजी को युवाचार्य-पद की चादर दी जाने वाली है। यह विदित होने के कारण ही चतुर्विध-सघ एकत्रित हुआ हे। चादर की क्रिया करने से पूर्व मे महापुरुषो के अनुभूत प्रवचन आप लोगो को सुनाता हू।

चतुर्विध-सङ्घ मे साधु ओर साध्वी पूर्ण त्यागी कहे गए हे। श्रावक तथा श्राविका आशिक त्यागी हे। इन दो पूर्ण और आशिक त्यागियो का समूह ही चतुर्विध-सङ्घ कहलाता हे ओर यह चतुर्विध-सङ्घ ही भावतीर्थ भी हे। चतुर्विध-सङ्घ मे वताए गए श्रमण सङ्घ के अन्तर्गत भगवान् अरिहन्त का भी समावेश हो जाता हे क्योकि भगवान् अरिहन्त साधु से भिन्न नही हे।

यह प्रश्न हो सकता हे कि अरिहन्त भगवान् तो अभी साधु ही हे, साधक हे ओर इनके चार कर्म भी शेष हे, लेकिन सिद्ध भगवान् के लिए साधना शेष नही हे, वे कुलकृत्य हो चुके हे तथा उनके आठो कर्म नष्ट हो चुके हे। ऐसा होते हुए भी नमस्कार मत्र मे भगवान् अरिहन्त को पहले ओर भगवान् सिद्ध को फिर नमस्कार क्यो किया जाता हे ? इस प्रश्न का उत्तर यह हे कि सिद्ध भगवान् की पहचान कराने वाले अरिहन्त भगवान ही हे। उपकारी को पहले नमस्कार करना कर्त्तव्य हे। इसीलिए भगवान् अरिहन्त को पहले नमस्कार किया जाता हे।

कहा जा सकता है कि सिद्ध भगवान् की पहिचान कराने के कारण ही यदि अरिहन्त भगवान् को पहले नमस्कार किया जाता हे तो फिर अरिहन्त को नमस्कार करने से पहले आचार्य को नमस्कार क्यो नहीं किया जाता ? जिस प्रकार सिद्ध भगवान् की पहिचान कराने वाले भगवान् हे उसी प्रकार अरिहन्त भगवान् की पहचान कराने वाले आचार्य हे। इसलिए अरिहन्त से पहले आचार्य को नमस्कार करना चाहिए। इस प्रश्न का उत्तर यह हे कि आचार्य, उपाध्याय ओर साधु तीनो अरिहन्त भगवान् की परिषद मे हे। भगवान् अरिहन्त उस परिषद के नायक हे। पहले सभा के नायक को ही नमस्कार किया जाता हे, न कि सभासदो को। इसी कारण आचार्य से पहले भगवान् अरिहन्त को नमस्कार किया जाता हे।

आचार्य, उपाध्याय, साधु वही हो सकते हे जो भगवान् अरिहन्त की आज्ञा मे चलते हो। जो अरिहन्त की आज्ञा के वाहर हे वह न तो आचार्य हे, न उपाध्याय ओर न साधु ही। किस प्रकार का आचरण करने वाले आचार्य, उपाध्याय ओर साधु भगवान् अरिहन्त की आज्ञा मे हे, इस की व्याख्या शास्त्रो मे भली-भाति की गई है। यहा भावी आचार्य का ही प्रसग हे, इसलिए उपाध्याय ओर साधु के विषय में कुछ न कहकर आचार्य के ही विषय मे थोडा-सा कहता हू।

श्री स्थानाग सूत्र के तीसरे स्थान मे तीन प्रकार के आचार्य वताए गए हे- कलाचार्य, शिल्पाचार्य ओर धर्माचार्य। कलाचार्य और शिल्पाचार्य का यहा कोई सम्वन्ध नही हे। यहा तो धर्माचार्य से ही सम्वन्ध हे। इसलिए धर्माचार्य की व्याख्या की जाती हे।

धर्माचार्य की आराधना भगवान् अरिहन्त की आराधना है। स्थानाग सूत्र के चोथे स्थान में धर्माचार्य के चार भेद वताए गए है- नामाचार्य, स्थापनाचार्य, द्रव्याचार्य और भावाचार्य। भावाचार्य के लिए तो शास्त्र मे यहा तक कहा हे-

'तत्थणं जे ते भावामरिया ते तित्थदरसया।'

अर्थात् जो भावाचार्य है, वह तीर्थंकर के समान हे।

कोई भी व्यक्ति दीक्षा लेने मात्र से ही धर्माचार्य नही हो जाता। धर्माचार्य पद चतुर्विध-सघ द्वारा सस्कार किया हुआ व्यक्ति ही पा सकता है। चतुर्विध-सघ मिलकर जिस व्यक्ति को धर्माचार्य-पद पर स्थापित करे वही व्यक्ति धर्माचार्य है। अपने मन से कोई भी व्यक्ति धर्माचार्य नही हो सकता। जिस पकार राजा-योग्य गुणो से युक्त तथा राज्य- व्यवस्था मे निपुण व्यक्ति का राज्यसिहासन पर अभिषेक किया जाता हे ओर जिसका राज्याभिषेक हुआ हे वही व्यक्ति राजा कहलाता है, प्रत्येक व्यक्ति राजा नही कहला सकता, उसी प्रकार चतुर्विध-सघ द्वारा बनाया हुआ व्यक्ति ही धर्माचार्य हो सकता है। प्रत्येक व्यक्ति धर्माचार्य नही हो सकता। राजनीति मे वल प्रयोग हो सकता हे मगर धर्म-नीति मे वलात्कार सभव नही हे। यहा कोई जबर्दस्ती आचार्य नही वन सकता।

शास्त्रानुसार धर्माचार्य मे तीन गुणो का होना आवश्यक हे। वे तीन गुण ये ह- गीतार्थ, अप्रमादी और सारणा-वारणा करने वाला। अर्थात् जो सूत्रार्थ को जानने वाला हो, प्रमाद रहित हो और सघ की व्यवस्था करने वाला हो। अर्थात् सयम-मार्ग मे सिदाते हुए की रक्षा करने, उदण्ड की दण्ड आज्ञा मे चलाने या गच्छा वाहर करने ओर सबकी साल-सम्हाल रखने वाला ही सुयोग्य आचार्य हे।

आचार्य-पद देने के समय तो किसी मे ये तीनो गुण नजर आए, परन्तु आचार्य-पद पाने के पश्चात् वह व्यक्ति मान-अभिमान में पडकर मनमानी करने लग जावे, प्रमादी वन जावे, शास्त्रस्वाध्याय करना छोड दे ओर सघ की उचित व्यवस्था न करे तो शास्त्र मे ऐसे व्यक्ति को आचार्य-पद से पृथक कर देने का विधान हे। ऐसे व्यक्ति को आचार्य-पद से पृथक् करने का विधान करते हुए शास्त्र मे तीन दृष्टान्त दिये गए ह। पहला दृष्टान्त यह है-

किसी क्षेत्र मे दुष्काल पडा। पीने का पानी तथा खाने को अन्न मिलना मुश्किल हो गया। महामारी आदि रोग फल गए। जिस प्रकार वह क्षेत्र तत्काल त्याज्य हे उसी प्रकार अगीतार्थ आचार्य भी त्याज्य ह।

दूसरा दृष्टान्त यह दिया गया हे- कोई राजा राजसिहासन पाने के पश्चात् मद्य, मास, परस्त्री-गमन आदि दुर्व्यसनो मे पड जावे तो जिस प्रकार ऐसा राजा त्याज्य ह उसी प्रकार वह आचार्य भी त्याज्य हे जो आचार्य-पद पाने के पश्चात् पूजा-प्रतिष्ठा का लोभी वनकर खाने-पीने आदि के पदार्थो के धाम मे पड जाए और साता का इच्छुक, रस लोलुप तथा बुद्धि का अभिमानी बन जावे।

इस प्रकार का विधान करते हुए शास्त्र मे यह भी कहा है कि सघ-द्वारा आचार्य-पद से पृथक् कर दिए जाने पर भी यदि कोई व्यक्ति आचार्य-पद को न त्यागे तो उतने ही दिन का दण्ड या छेद आता है जितने दिन उसने सघ-द्वारा पृथक् कर दिए जाने पर भी आचार्य-पद नही त्यागा।

मतलव यह है कि उक्त तीन गुणो से युक्त व्यक्ति ही आचार्य वनाया जा सकता है। जिस म य तीन गुण नही हैं वह आचार्य नही हो सकता और कदाचित आचार्य-पद देने के समय किसी व्यक्ति मे ये तीन गुण नजर आवे, लेकिन आचार्यपद देने के पश्चात् ये न रहे तो ऐसे व्यक्ति को आचार्यपद से पृथक् भी किया जा सकता है।

स्वर्गीय पूज्यश्री श्रीलाल जी महाराज फरमाया करते थे कि आचार्य पत्थर-सा कठोर भी न हो और पानी जेसा नर्म भी न हो। किन्तु वीकानेरी मिश्री के कूजे की तरह हो। अर्थात् जिस प्रकार वीकानेर का मिश्री का कूजा सिर पर मारने से तो सिर फोड देता और मुह मे रखने पर मुह मीठा कर देता है। उसी प्रकार आचार्य भी अन्याय का प्रतिकार करने के लिए कठोर से कठोर रहे और सत्य तथा न्याय के लिए मुह मे रखी हुई मिश्री के समान मीठा और नम्र रहे।

भगवान् महावीर ने अपना अधिकार श्री सुधर्मास्वामी को दिया था। श्री सुधर्मास्वामी के पास जम्वूस्वामी ने दीक्षा ली थी। दीक्षा लेते समय श्री जम्वूस्वामी को यह पता नही था कि मे सुधर्मास्वामी के पाट का अधिकारी होऊगा। लेकिन सुधर्मास्वामी की कृपा से जम्वूस्वामी गुण निधान बन कर सुधर्मास्वामी के पाट के अधिकारी बने। यह उन्ही की चलती हुई परम्परा है। इस परम्परा मे अग्रविहारी तपोधनी और आत्मा का उत्थान करने वाले श्रीहुक्मीमुनी हुए। हुक्ममुनी जव गच्छा छोड कर निकल तव उनका अनादर भी हुआ। फिर भी वे अपने गुरु लालचन्दजी महाराज का उपकार ही मानते रह और उनकी प्रशसा करते रहे। तप आदि कारणो से हुक्ममुनी महाराज की आत्मा मे दिव्य-शक्ति उत्पन्न हुई। उन्होने यह नही चाहा था कि मेरे नाम से सम्प्रदाय चले। फिर भी उनके नाम से सम्प्रदाय चल रहा है। वेठा हुआ मुनि मण्डल उन्ही की तपस्या का प्रसाद है।

पूज्यश्री हुक्मीचन्द जी महाराज का इसी जावद शहर मे स्वर्गवास हुआ था। उनके पीछ श्रीशिवलालजी महाराज की पूज्य-पदवी भी इसी शहर मे हुई थी। उन्होने ३३ वर्ष तक एकान्तर तप किया था। उनका स्वर्गवास भी जावद शहर मे हुआ था। पूज्यश्री शिवलालजी महाराज के पश्चात् पूज्यश्री उदयसागरजी महाराज की पूज्य-पदवी भी जावद मे ही हुई थी। पूज्यश्री उदयसागरजी महाराज वहुत तेजस्वी और प्रभावशाली थे। उनके भक्तो मे वडे-वडे राजा- महाराजा भी थे। पूज्यश्री उदयसागरजी महाराज ने इसी जावद शहर मे विराजे हुए पूज्यश्री चोथमलजी महाराज को अपना युवाचार्य नियुक्त किया था और रतलाम से चादर भेजी थी। पूज्यश्री उदयसागरजी महाराज का स्वर्गवास रतलाम म हुआ। पूज्यश्री उदयसागर जी महाराज के वहुत समय तक विराजने से ही रतलाम नगर रत्नपुरी कहलाया। पूज्यश्री उदयसागरजी महाराज के पश्चात् होने वाले पूज्यश्री चोथमलजी महाराज का स्वर्गवास भी रतलाम मे ही हुआ था। रतलाम मे ही पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज की पूज्य-पदवी हुई थी। पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज से आप मे से वहुत से लोग परिचित है। अत उनका परिचय देने की आवश्यकता नही है। पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज ने अपने कर-कमलो से मुझे रतलाम मे युवाचार्य पद की चादर प्रदान की थी और जयतारण मे वे स्वर्ग सिधारे थे।

कुछ काल से इस-पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज की- सम्प्रदाय के दो विभाग हो गए थे। ऐसा होने के कारण से तो आप लोग परिचित ही हे। गतवर्ष अजमेर मे होने वाले साधु-सम्मेलन के अवसर पर सम्प्रदाय के दोनो विभागो को एक करने के लिए मुझे और पूज्यश्री मुन्नालालजी महाराज को छठे पाट पर मानकर पच मुनियो ने सातवे पाट पर श्रीगणेशीलालजी को युवाचार्य बनाने का फेसला दिया।

पच मुनियो ने सातवे पाट पर गणेशीलालजी को युवाचार्य बनाने आदि का जो ठहराव दिया था, उसका समर्थन इस समाज की कान्फ्रेस ने भी किया और कान्फ्रेस के प्रेसीडेट तथा सोलह सदस्य, इस प्रकार १७ व्यक्तियो के डेपुटेशन ने मेरी व पूज्यश्री मुन्नालालजी महाराज की स्वीकृति से यह ठहराव दिया कि युवाचार्य पद की चादर फाल्गुन सुदि १५ से पहले करने का निश्चय किया जाता हे। इस प्रकार युवाचार्य पद के लिए गणेशीलालजी का चुनाव केवल मेरे या इसी सम्प्रदाय के सघ द्वारा नही हुआ हे वरन् भारतवर्ष के समस्त चतुर्विध सघ द्वारा हुआ हे। तदनुसार ही आज युवाचार्य पद की चादर देने का कार्य किया जा रहा है।

अजमेर मे पच मुनियो द्वारा दिए गए फेसले के अनुसार गणेशीलालजी को युवाचार्य पद की चादर देने के साथ खूवचन्दजी को उपाध्याय पद की चादर भी देनी चाहिए थी। इसके लिए मेने खूवचन्द को जावद आने के लिए प्रार्थना भी की थी, लेकिन वे नही आए। यदि खूवचन्दजी आ जाते तो युवाचार्य पद की चादर देने के साथ ही उपाध्याय पद की चादर देने की क्रिया भी कर दी जाती। वे नही आए, इसलिए युवाचार्य पद की चादर देने की एक ही क्रिया की जा रही हे।'

पृज्यश्री का व्याख्यान समाप्त होने पर मुनिश्री वडे चादमलजी महाराज, मुनिश्री हरखचन्दजी महाराज और मुनिश्री वडे पन्नालालजी महाराज (सादडी वाले) ने पूज्यश्री के व्याख्यान और मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज को युवाचार्य पद की चादर देने का समर्थन किया। शेप सन्तो की ओर स मुनिश्री छोटे गव्वूलालजी महाराज ने समर्थन किया। इसी प्रकार प्रवर्त्तिनी श्रीआनदकुवरजी महाराज तथा प्रवर्त्तिनी श्री केसरकुवरजी महाराज ने भी अनुमोदन किया।

इसके वाद वाहर स शुभकामना व सदेश के रूप मे आये हुए तार तथा पत्र पढकर सुनाए गए। उनमे नीचे लिखे नाम विशेष उल्लेखनीय हे-

(१) व्यावर- पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय मे सवसे वडे दीक्षा स्थविर मुनिश्री प्यारचन्दजी महाराज।

(२) वालोतरा- मुनिश्री मोडीलालजी महाराज और मुनिश्री वडे गव्वूलालजी महाराज।

(३) सरसा (पजाब) तपस्वी मुनिश्री विनयचन्दजी महाराज। पजाव के स्व पूज्यश्री श्रीचन्दजी महाराज के सत जो इस सम्प्रदाय की आज्ञा मे विचरते ह।

(४) व्यावर- महासती श्रीलालाजी महाराज।

(५) भीनासर- महासती श्रीराजकुवरजी महाराज।

(७) वम्वई- श्रीमान् डाह्यालाल मणिलाल मेहता, सम्पादक ''जेन जागृति।

(८) उदयपुर- प प्यारेकिशनजी कोल, मेम्बर काउसिल।

(९) जयपुर- धर्मवीर श्रीमान् सेठ दुर्लभजी त्रिभुवन जोहरी।

(१०) जयपुर- श्रीमान् केसरीमलजी चोरडिया।

(११) अहमदनगर- श्रीमान् वावू कुन्दनमलजी फिरोजिया वी ए एल एल वी

(१२) चीचवड (पूना) श्रीमान् रामचन्दजी पूनमचन्दजी लूकड अध्यक्ष श्रीफतहचन्द जेन विद्यालय चीचवड।

(१३) चीचवड (पूना) श्रीमान् नवलमलजी खींवराजजी पारख अधिपति, गराडा ट्रस्ट।

(१४) वोदवड (खानदेश) श्रीमान् सेठ लालचन्दजी रघुनाथदासजी।

(१५) जोधपुर- श्रीमान् सेठ लच्छीरामजी साड।

(१६) जोधपुर- पूज्यश्री रत्नचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय का हितेषी मडल, जोधपुर।

(१७) पचकूला- प श्रीकृष्णचन्द्रजी, सस्थापक श्रीजेनेन्द्र गुरुकुल, पचकूला।

(१८) प्रतिभाशाली आचार्य पूज्यश्री हस्तीमलजी महाराज ने नीचे लिखा सन्देश भेजा-

'वडा ही हर्ष का विषय हे कि पूज्य श्रीहुक्मीचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय के भावी आचार्य का पद शान्त, दान्त, गम्भीर, मधुर वक्ता गणेशीलालजी महाराज को दिया जा रहा हे। वेरागी, प्रपच त्यागी गणेशीलालजी महाराज जेसे भावितात्मा अनगार मे आचार्य पद रूप मणि को रखकर पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज ने शुद्ध स्वर्ण मे मणि को जडने वाले जोहरी के समान अपनी परीक्षा-वुद्धि का परिचय दिया हे। आशा हे कि भावी पूज्य गणेशीलालजी महाराज अपने शुद्ध व उदार विचारो से जन-मानस को पवित्र वनाते हुए महावीर के शासन को दिपाने मे समर्थ होगे।'

वाहर के सन्देश पढे जाने के वाद नीचे लिखे श्रीसघ के प्रधान पुरुषो ने युवाचार्य पद प्रदान का समर्थन किया-

(१) वम्वई- श्रीमान् सेठ अमृतलाल भाई झवेरी।

(२) दक्षिण- दीवान वहादुर सेठ मोतीलालजी मूथा, सतारा।

(३) वीकानेर- श्रीमान् सेठ वहादुरमलजी वाठिया, भीनासर।

(४) मद्रास- श्रीमान् सेठ ताराचन्दजी गेलडा

(५) मारवाड- श्रीमान् वावू उभयराजजी मुणोत, जोधपुर।

(६) मेवाड- श्रीमान् नगरसेठ नन्दलालजी, उदयपुर।

(७) मालवा- श्रीहीरालालजी नादेचा, खाचरोद।

(८) दिल्ली- श्रीमान् लाला कपूरचन्दजी जोहरी।

(९) खानदेश- श्रीमान् रावसाहव सेठ लक्ष्मणदासजी, जलगाव।

(१०) कोटा हाडोती- श्रीमान् सेठ वसन्तीलालजी नाहर, रामपुर।

(११) नीमच व जावद- श्रीमान् पन्नालालजी चोधरी, नीमच। इसी प्रकार अनेक श्राविकाओ ने भी समर्थन किया

चादर प्रदान

चतुर्विध-सघ का अनुमोदन हो जाने पर युवाचार्यजी, पूज्यश्री के सामने खडे हुए। पूज्यश्री ने नन्दी सूत्र का पाठ किया और अपनी चादर उतारकर युवाचार्यश्री को ओढा दी। चादर ओढाते समय दूसरे सन्तो ने भी चादर के पल्ले पकड कर अपने सहयोग का प्रदर्शन किया। सवा वारह वजे यह कार्य सम्पन्न हो गया। जनता ने जयनाद के साथ अभिनन्दन किया। पूज्यश्री ने चादर ओढाकर नवकारमन्त्र सुनाया। चतुर्विध-सघ ने युवाचार्यश्री की वन्दना की। उसके वाद पूज्यश्री ने छोटा-सा प्रवचन दिया। आपने फरमाया-

श्रीमज्जैनाचार्य पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज के सातवे पाट पर श्री गणेशीलालजी आचार्य नियुक्त हुए है। ये मेरे युवाचार्य है। चतुर्विध-सघ का कर्त्तव्य है कि इनके वचनो को 'सद्दहामि, पत्तयामि, रोइयामि' रूप से स्वीकार करे। युवाचार्यजी का भी कर्त्तव्य है कि धर्म मार्ग मे सदा जागृत रहते हुए आस्था और विवेकपूर्वक चतुर्विध-सघ को धर्ममार्ग मे प्रवृत्त करते रहे। मुझे विश्वास है कि युवाचार्यजी इस पद की जिम्मेवारी को दक्षता पूर्वक निभावेगे। इनका नाम गण+ईश= गणेश है। यह नाम इस पद के कारण सार्थक हुआ है। आशा है, ये उत्तरोत्तर सघ की उन्नति करेगे।

एक वात मे ओर स्पष्ट कर देना उचित समझता हू। मेरी आज्ञा से वाहर किए हुए घासीलालजी आदि ईर्ष्या-द्वेष के कारण युवाचार्यजी मे दोष वताते हे, परन्तु मे अपनी जानकारी के आधार पर निश्चयपूर्वक कहता हू कि युवाचार्यजी मे कोई दोष नही हे। इस पर भी मुझे किसी प्रकार का पक्षपात नहीं हे। यदि विश्वस्त रूप से किसी भी समय यह मालूम होगा कि युवाचार्यजी मे दोष हे ता मे इनको उसी समय दण्ड देने के लिए तेयार हू। लेकिन द्वेषपूर्ण वात पर ध्यान देना किसी को भी उचित नही हे।"

पृज्यश्री का प्रवचन समाप्त होने पर युवाचार्यजी ने नीचे लिखे अनुसार फरमाया-

अकामी यो भृत्वा निखिल मनुजेच्छा गमयति।
मुमुक्ष ससाराम्वुनिधितरि वत्तारय विनो।।
महाराग द्वेषादि कलह मल हारिन्नामृतदाम्।
सुवुद्धि मह्य हे जिन! गणपते! देहि सततम्॥

पूज्यश्री के साथ ही सन्तो ने हाथ लगा कर मुझे जो चादर प्रदान की है, वह चादर तन्तुओ की वनी हुई है। सस्कृत मे तन्तु का दूसरा नाम गुण है। अर्थात् यह चादर गुणमयी है। मुझे आशा है कि इस गुणमयी चादर के साथ ही मुझे गुणो की भी प्राप्ति होगी, जिससे मे इसकी रक्षा करने मे समर्थ होऊँ। यद्यपि यह गुणमयी चादर मेरी रक्षा करने मे समर्थ है, तथापि इस चादर की रक्षा होना भी आवश्यक है। मुझे यह चादर आचार्य महाराज सहित सव सन्तो ने प्रदान की है और चतुर्विध-सघ ने इसका अनुमोदन किया है। इस कारण मुझे विश्वास है कि चतुर्विध-सघ इसका रक्षक है। चतुर्विध-सघ ऐक्य-वल से इसकी रक्षा करता रहेगा तभी इस चादर का गोरव सुरक्षित रहेगा ओर तभी यह सघ की उन्नति करने मे भी समर्थ होगी। मे शासननायक ओर गुरु महाराज से यही भिक्षा मागता हू कि इस चादर के गोरव की रक्षा करने की शक्ति मुझे प्राप्त हो।

भूकम्पपीड़ितों की सहायता

उन दिनो विहार प्रान्त मे भयकर भूकम्प के कारण हजारो व्यक्ति वेघरवार होकर घोर कष्ट का अनुभव कर रहे थे। हजारो के प्राण चले गये थे ओर शायद हजारो जीवित रहते हुए भी मृत्यु का कष्ट भुगत रहे थे। वहा की दशा अत्यन्त हृदयद्रावक भी। पर दु खकातर पूज्यश्री विहार की इस करुणाजनक स्थिति को सुनकर वहुत क्षुब्ध थे। उत्सव के समय उसे केसे भूल सकते थे ? महापुरुष महोत्सव के समय दुखियो का करुण-क्रन्दन भूल नही सकते। समुचित अवसर पाकर पूज्यश्री ने विहार प्रान्त की कष्ट-कथा उपस्थित श्रावको को सुनाई ओर उन्हे अपने कर्त्तव्य का स्मरण दिलाया। पूज्यश्री ने फरमाया-

'इस प्रकार के शुभ अवसरो पर श्रावकगण सेकडो जीवो को अभयदान देते हे। इस समय भारत मे भूकम्प आया हे ओर विहार मे उसने प्रलय की याद दिला दी हे। हजारो मनुष्यो के प्राण चले गये हे ओर लाखो अन्न तथा वस्त्र के अभाव मे कष्ट पा रहे हे। मुनष्य-शरीर ईश्वर की सजीव प्रतिमा हे। मनुष्य, ईश्वर का प्रतिनिधि ओर सर्वोत्कृष्ट प्राणी हे। इस कारण मनुष्य की रक्षा करना प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य हे। भूकम्प के कारण करोडो की सम्पत्ति भूमि के गर्भ मे विलीन हो गई हे। जो लोग मरने से वच गये हे, वे भयकर सकट मे हे, आश्रयहीन हे। उनकी सहायता का भार उन लोगो पर हे जिन्हे इस प्रकार की आपत्ति का सामना नही करना पडा हे। मनुष्य परस्पर सम्वन्धित हे, इस पर भी आप इस प्रकारद्ध की आपत्ति का सामाना नही करना पडा। हे। मनुष्य परस्पर सम्वन्धित हे, इस पर भी आप जेन हे। जेनधर्म का नअुयायी अपने–आपको कष्ट मे डालकर भी दूसरे की रक्षा ओर सहायता करता है। सकटग्रस्त प्राणी की रक्षा करना मनुष्य का कर्त्तव्य हे। इस कर्त्तव्य को कभी भूलना नही चाहिए। दूसरो की सेवा सहायता मे ही आपके सामर्थ्य ओर द्रव्य की सार्थकता हे।

इसी समय स्व श्रीमान् नथमलजी चोरडिया ने प्रस्तुत समारोह के उपलक्ष्य मे 'काग्रेस भूकम्प रिलीफ फण्ड' खोलने ओर उसमे यथाशक्ति चन्दा देने की अपील की। परिणामस्वरूप उस थोडे से समय मे ही लगभग दो हजार रुपया एकत्र हो गया।

धन्यवाद तथा विभिन्न सन्तो ओर सतियो के उद्‌गारो के वाद तीन वजे सभा विसर्जित हो गई। वीकानेर से आये हुए सज्जनो की ओर से पभावना वाटी गई।

कुछ दिनो बाद पूज्यश्री ने ठा १२ से बेगू (मेवाड) की ओर तथा युवाचार्यजी ने ठा ६ से रामपुरा की ओर विहार किया। पूज्यश्री भी कदवासा, सीगोली, ढीकेन, कुकडेश्वर होते हुए रामपुरा पधार गये। मुनिश्री बडे चादमलजी म , श्री हर्षचन्दजी म तथा युवाचार्यजी ठा १० से वहा पहले ही विराजमान थे। यहा की जेन ओर जेनेतर जनता ने विशाल सख्या मे उपस्थित होकर पूज्यश्री के उपदेशो से लाभ उठाया। जनता ने पूज्यश्री से चोमासा करने की प्रार्थना की। उत्तर म आपने फरमाया- आपका क्षेत्र खाली नही रहेगा। यथावसर देखा जायगा। मेरा चातुर्मास न भी हो सका तो किसी अन्य सत को भेजने का भाव हे। रतलाम ओर कपासन मे चातुर्मास करने के लिए भी वहा के श्रीसघो की ओर से प्रार्थनाए की गई। पूज्यश्री ने युवाचार्यजी का रतलाम मे चोमासा निश्चित कर दिया।

यहा से विहार कर पूज्यश्री विविध स्थानो को पावन करते हुए युवाचार्यजी के साथ ठा १० से मदसोर पधारे। यहा बाहर से बहुत से सज्जन दर्शनार्थ उपस्थित हुए। पूज्यश्री के व्याख्यानो का जेन-जेनेतर जनता को लाभ मिला। यहा से आप कपासन पधारे। कपासन के भाइयो का अतीव आग्रह टाल न सकने के कारण पूज्यश्री ने वहा चोमासा करना स्वीकार कर लिया। पूज्यश्री की इस स्वीकृति से कपासन के श्रीसघ मे आनन्द छा गया।

बयालीसवां चातुर्मास (सं. १९९१)

कपासन-श्रीसघ के पुण्योदय की सराहना करनी चाहिए कि पूज्यश्री जेसे महान् सत का उन्हे सुयोग प्राप्त हुआ। पूज्यश्री ने ठा ९ से विक्रम सवत् १९९१ का चोमासा मेवाड के इस छोटे से किन्तु महत्त्वपूर्ण कस्बे मे किया। प्रवर्त्तिनी श्रीकेसरकुवरजी म ठा ३ से तथा श्रीजसकुवरजी म ठा ५ वहीं विराजमान थी।

पूज्यश्री की प्रकृष्ट प्रतिभा तथा अमृतवाणी से यहा की जनता परिचित ही थी। हजारो की सख्या मे श्रोताओ का जमघट होने लगा। बाहर से भी दर्शनार्थी श्रावको का ताता लग गया। यहा के जेन और अन्य भाइयो ने बडे उत्साह के साथ आगन्तुक श्रावको का स्वागत किया। सब लोगो ने सराहनीय उदारता प्रदर्शित की। आस-पास के ग्रामो से आये हुए लोगो की इतनी भीड होने लगी कि प्रतिदिन पचास मन आटे की पूड़िया तेयार करनी पडती थी। अच्छे-अच्छे घरों के नवयुवक अपने कधे पर पानी के घडे उठाकर लाते किन्तु अतिथियो को असुविधा नही देना चाहते थे। सेवा का प्रत्येक कार्य स्वय करने मे उन्होने अपना गौरव समझा।

पूज्यश्री के भक्तो मे एक बुढिया खातिन उल्लेखनीय है। उस भाग्यशालिनी बुढिया का नाम तो मालूम नही, मगर वह बहुत अधिक वृद्धा हो गई थी। फिर भी बहुत दूर से चलकर वह पूज्यश्री का व्याख्यान सुनने आती। चातुर्मास से पहले उसने पूज्यश्री को अपने गाव मे एक दिन ठहराया था और दर्शनार्थी जनता की सम्पूर्ण व्यवस्था की थी। विदुर के घर जाकर श्रीकृष्णजी के हर्ष का पार नहीं रहा था उसी प्रकार इस धर्मशीला वृद्धा के गाव मे पहुँच कर और उसकी भक्ति को देखकर पूज्यश्री भी प्रसन्न हो गये। वृद्धा खातिन पूज्यश्री को अपना आराध्य देव समझती थी।

पूज्यश्री के साथ ही सन्तो ने हाथ लगा कर मुझे जो चादर प्रदान की है, वह चादर तन्तुओ की वनी हुई है। सस्कृत मे तन्तु का दूसरा नाम गुण है। अर्थात् यह चादर गुणमयी है। मुझे आशा है कि इस गुणमयी चादर के साथ ही मुझे गुणो की भी प्राप्ति होगी, जिससे मै इसकी रक्षा करने मे समर्थ होऊँ। यद्यपि यह गुणमयी चादर मेरी रक्षा करने मे समर्थ है, तथापि इस चादर की रक्षा होना भी आवश्यक है। मुझे यह चादर आचार्य महाराज सहित सव सन्तो ने प्रदान की है ओर चतुर्विध-सघ ने इसका अनुमोदन किया है। इस कारण मुझे विश्वास है कि चतुर्विध-सघ इसका रक्षक है। चतुर्विध-सघ ऐक्य-वल से इसकी रक्षा करता रहेगा तभी इस चादर का गोरव सुरक्षित रहेगा ओर तभी यह सघ की उन्नति करने मे भी समर्थ होगी। मै शासननायक ओर गुरु महाराज से यही भिक्षा मागता हू कि इस चादर के गौरव की रक्षा करने की शक्ति मुझे प्राप्त हो।

भूकम्पपीड़ितों की सहायता

उन दिनो बिहार प्रान्त मे भयकर भूकम्प के कारण हजारो व्यक्ति बेघरवार होकर घोर कष्ट का अनुभव कर रहे थे। हजारो के प्राण चले गये थे और शायद हजारो जीवित रहते हुए भी मृत्यु का कष्ट भुगत रहे थे। वहा की दशा अत्यन्त हृदयद्रावक भी। पर दु खकातर पूज्यश्री विहार की इस करुणाजनक स्थिति को सुनकर बहुत क्षुब्ध थे। उत्सव के समय उसे केसे भूल सकते थे? महापुरुष महोत्सव के समय दुखियो का करुण-क्रन्दन भूल नही सकते। समुचित अवसर पाकर पूज्यश्री ने विहार प्रान्त की कष्ट-कथा उपस्थित श्रावको को सुनाई ओर उन्हे अपने कर्त्तव्य का स्मरण दिलाया। पूज्यश्री ने फरमाया-

'इस प्रकार के शुभ अवसरो पर श्रावकगण सेकडो जीवो को अभयदान देते है। इस समय भारत मे भूकम्प आया हे और विहार मे उसने प्रलय की याद दिला दी है। हजारो मनुष्यो के प्राण चले गये हे और लाखो अन्न तथा वस्त्र के अभाव मे कष्ट पा रहे है। मुनष्य-शरीर ईश्वर की सजीव प्रतिमा है। मनुष्य, ईश्वर का प्रतिनिधि ओर सर्वोत्कृष्ट प्राणी है। इस कारण मनुष्य की रक्षा करना प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है। भूकम्प के कारण करोडो की सम्पत्ति भूमि के गर्भ मे विलीन हो गई है। जो लोग मरन से वच गये है, वे भयकर सकट मे है, आश्रयहीन है। उनकी सहायता का भार उन लोगो पर है जिन्हे इस प्रकार की आपत्ति का सामना नही करना पडा है। मनुष्य परस्पर सम्बन्धित है, इस पर भी आप इस प्रकारद्र की आपत्ति का सामाना नही करना पडा। हे। मनुष्य परस्पर सम्वन्धित हे, इस पर भी आप जेन है। जेनधर्म का नअुयायी अपने-आपको कष्ट मे डालकर भी दूसरे की रक्षा ओर सहायता करता है। सकटग्रस्त प्राणी की रक्षा करना मनुष्य का कर्त्तव्य है। इस कर्त्तव्य को कभी भूलना नही चाहिए। दूसरों की सेवा सहायता मे ही आपके सामर्थ्य ओर द्रव्य की सार्थकता है।

इसी समय स्व श्रीमान् नथमलजी चोरडिया ने प्रस्तुत समारोह के उपलक्ष्य मे 'कांग्रेस भूकम्प रिलीफ फण्ड' खोलने और उसमे यथाशक्ति चन्दा देने की अपील की। परिणामस्वरूप उस थोडे से समय मे ही लगभग दो हजार रुपया एकत्र हो गया।

धन्यवाद तथा विभिन्न सन्तो ओर सतियो के उद्गारो के वाद तीन वजे सभा विसर्जित हो गई। वीकानेर से आये हुए सज्जनो की ओर से प्रभावना वाटी गई।

कुछ दिनो बाद पूज्यश्री ने ठा १२ से वेगू (मेवाड) की ओर तथा युवाचार्यजी ने ठा ६ से रामपुरा की ओर विहार किया। पूज्यश्री भी कदवासा, सीगोली, ढीकेन, कुकडेश्वर होते हुए रामपुरा पधार गये। मुनिश्री बडे चादमलजी म , श्री हर्षचन्दजी म तथा युवाचार्यजी ठा १० से वहा पहले ही विराजमान थे। यहा की जेन ओर जेनेतर जनता ने विशाल सख्या मे उपस्थित होकर पूज्यश्री के उपदेशो से लाभ उठाया। जनता ने पूज्यश्री से चोमासा करने की प्रार्थना की। उत्तर मे आपने फरमाया- आपका क्षेत्र खाली नही रहेगा। यथावसर देखा जायगा। मेरा चातुर्मास न भी हो सका तो किसी अन्य सत को भेजने का भाव है। रतलाम और कपासन मे चातुर्मास करने के लिए भी वहा के श्रीसघो की ओर से प्रार्थनाए की गईं। पूज्यश्री ने युवाचार्यजी का रतलाम मे चौमासा निश्चित कर दिया।

यहा से विहार कर पूज्यश्री विविध स्थानो को पावन करते हुए युवाचार्यजी के साथ ठा १० से मदसौर पधारे। यहा बाहर से बहुत से सज्जन दर्शनार्थ उपस्थित हुए। पूज्यश्री के व्याख्यानो का जेन-जैनेतर जनता को लाभ मिला। यहा से आप कपासन पधारे। कपासन के भाइयो का अतीव आग्रह टाल न सकने के कारण पूज्यश्री ने वहा चौमासा करना स्वीकार कर लिया। पूज्यश्री की इस स्वीकृति से कपासन के श्रीसघ मे आनन्द छा गया।

बयालीसवां चातुर्मास (सं. १९९१)

कपासन-श्रीसघ के पुण्योदय की सराहना करनी चाहिए कि पूज्यश्री जैसे महान् सत का उन्हे सुयोग प्राप्त हुआ। पूज्यश्री ने ठा ९ से विक्रम सवत् १९९१ का चौमासा मेवाड के इस छोटे से किन्तु महत्त्वपूर्ण कस्बे मे किया। प्रवर्त्तिनी श्रीकेसरकुवरजी म ठा ३ से तथा श्रीजसकुवरजी म ठा ५ वही विराजमान थी।

पूज्यश्री की प्रकृष्ट प्रतिभा तथा अमृतवाणी से यहा की जनता परिचित ही थी। हजारो की सख्या मे श्रोताओ का जमघट होने लगा। बाहर से भी दर्शनार्थी श्रावको का ताता लग गया। यहा के जेन ओर अन्य भाइयो ने बडे उत्साह के साथ आगन्तुक श्रावको का स्वागत किया। सब लोगो ने सराहनीय उदारता प्रदर्शित की। आस-पास के ग्रामो से आये हुए लोगो की इतनी भीड होने लगी कि प्रतिदिन पचास मन आटे की पूडिया तैयार करनी पडती थी। अच्छे-अच्छे घरों के नवयुवक अपने कधे पर पानी के घडे उठाकर लाते किन्तु अतिथियो को असुविधा नही देना चाहते थे। सेवा का प्रत्येक कार्य स्वय करने मे उन्होने अपना गौरव समझा।

पूज्यश्री के भक्तो मे एक बुढिया खातिन उल्लेखनीय है। उस भाग्यशालिनी बुढिया का नाम तो मालूम नही, मगर वह बहुत अधिक वृद्धा हो गई थी। फिर भी बहुत दूर से चलकर वह पूज्यश्री का व्याख्यान सुनने आती। चातुर्मास से पहले उसने पूज्यश्री को अपने गाव मे एक दिन ठहराया था और दार्शनार्थी जनता की सम्पूर्ण व्यवस्था की थी। विदुर के घर जाकर श्रीकृष्णजी के हर्ष का पार नही रहा था उसी प्रकार इस धर्मशीला वृद्धा के गाव में पहुँच कर ओर उसकी भक्ति की प्रवलता देखकर पूज्यश्री भी प्रसन्न हो गये। वृद्धा खातिन पूज्यश्री को अपना आराधनीय देव समझती थी।

चातुर्मास से पहले पूज्यश्री के शरीर मे कुछ अशान्ति उत्पन्न हो गई थी। धीरे-धीरे अशान्ति दूर हो गई ओर श्रावण कृष्णा ५ से आपने उपदेश आरभ कर दिया।

पर्युषण के अवसर पर खूब तपस्या हुई। सवत्सरी के दिन ७१९ पोषध हुए। समाज सुधार के कई महत्त्वपूर्ण कार्य भी हुए। वहा की जनता ने निम्नलिखित निर्णय किये -

(१) जहा कन्या-विक्रय हुआ हो उस विवाह मे भोजन न करना।

(२) मृत्युभोज में मिठाई न खाना, न बनाना। मृत्युभोज न करना या उसमें न जीमना।

(३) वर-विक्रय रोकने के लिए पहले से 'तिलक' का निश्चय न करना।

(४) भाई, भाई के विरुद्ध कचहरी मे फरियाद न करे।

गोगुदा के श्रावक श्रीयुत गणेशलालजी ने गर्म पानी के आधार पर ४३ उपवास किये। दलित जातियो के उत्थान पर नैतिक विकास के लिए पूज्यश्री बहुत जोर दिया करते थे। बहुत-से अछूत आपका व्याख्यान सुनने आया करते थे। कार्तिक महीने मे चार सो रेगरो ने आपके उपदेश से प्रभावित होकर मदिरा ओर मास के सेवन का त्याग कर दिया।

यहीं श्रीयुत फूलचन्दजी वुड (मेवाड) के निवासी ने दीक्षा धारण की।

राजकोट श्रीसंघ की प्रार्थना

पूज्यश्री ने अपने साधु-जीवन मे विभिन्न प्रान्तो मे दूर-दूर तक विहार किया था। दक्षिण-महाराष्ट्र मे आपने कई चातुर्मास व्यतीत किये थे। मेवाड, मालवा, मारवाड तो आपके मुख्य विहार स्थल थे ही। देहली ओर पजाब मे भी आपका पदार्पण हो चुका था। सिर्फ गुजरात-काठियावाड को अभी तक पूज्यश्री के विहार का सौभाग्य प्राप्त नही हुआ था। पूज्यश्री की भारतव्यापी कीर्त्ति अवश्य ही वहा तक जा पहुची थी। उस कीर्ति और वाणी की तेजस्विता ने गुजरात-काठियावाड की धर्मप्रेमी जनता को पूज्यश्री के दर्शन और उपदेश-श्रवण के लिए लालायित बना रखा था। धर्मवीर श्रीदुर्लभजी भाई जोहरी भी इसके लिए विशेष उत्सुक थे। अपनी जन्म भूमि मोरवी मे पूज्यश्री का एक चोमासा अवश्य कराना चाहते थे।

जिस प्रान्त ने धर्मवीर लोकाशाह जैसे महान् सुधारक पुरुष को जन्म दिया, जिस प्रान्त मे लवजी ऋषि, धर्मसिहजी, धर्मदासजी आदि महान् सत हुए, उस प्रान्त मे एक बार भी पूज्यश्री जेसे महान् पुरुष के चरण-कमल न पडे, यह बात भला केसे बनती ?

अन्तत श्रीदुर्लभजी भाई के साथ गुजरात-काठियावाड के श्रीसङ्घ के निम्नलिखित प्रमुख व्यक्ति २० अक्टूबर, १९३४ को पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुए -

(१) श्रीचुन्नीलाल नागजी वोरा, सेक्रेटरी श्रीसङ्घ

(२) राव साहब ठाकरसी भाई मकनजी घीया

(३) श्रीप्राणजीवन मोरारजी एज्यूकेशन इस्पेक्टर, राजकोट

(४) सेठ गोपालजी लवजी मेहता

(५) सेठ गुलाबचन्दजी मेहता

(६) सेठ प्रेमजी वसनजी

(७) श्रीदुर्लभजी त्रि जोहरी

शिष्टमण्डल के इन प्रतिष्ठित सदस्यो ने अत्यन्त आग्रहपूर्वक काठियावाड मे पधारने की प्रार्थना की। पूज्यश्री तत्काल कोई निश्चित उत्तर न दे सके। आपने अवसर देखकर निश्चय करने के लिए कहा।

पूज्यश्री के विराजने से कपासन की अजैन जनता अत्यन्त प्रभावित हुई। ता १९-११-३४ को एक सार्वजनिक सभा करके वहा की जनता ने पूज्यश्री के पति अपनी कृतज्ञता प्रकट की। सभा में उपस्थित लगभग २५०० जनता ने सर्वसम्मति से निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकार किया।

'श्रीमज्जैनाचार्य पूज्य श्रीजवाहरलालजी महाराज साहब का चातुर्मास यहा (कपासन में) होने से धर्म का उपदेश प्राप्त हुआ है और साथ ही अनेक प्रकार के पापो तथा दुर्व्यसनो का त्याग हुआ है, जिससे जनता को बहुत लाभ हुआ। पूज्यश्री ने कपासन की जनता का यह उपकार किया है, उसके लिए कपासन की जनता पूज्यश्री की चिरऋणी है। तथा पूज्यश्री का चातुर्मास कपासन मे कराया हे, इसके लिए यह सभा कपासन के जैन सङ्घ को धन्यवाद देती है।

चातुर्मास की पूर्ति के समय बाहर की करीब ५००० जनता उपस्थित थी। मार्गशीर्ष कृ १ को पूज्यश्री ने विहार किया। पूज्यश्री की विदाई का दृश्य बडा ही भावपूर्ण रहा। सब मिलकर सात हजार नर-नारी आपकी विदाई मे सम्मिलित हुए।

कपासन से पूज्यश्री ने उदयपुर की ओर विहार किया। मार्ग के छोटे-छोटे ग्रामो मे आपके उपदेश का बहुत प्रभाव पडा। मुख्य रूप से जैनेतर जातियो ने व्याख्यान का लाभ उठाया। जासमा मे श्रीयुत अमीन जफरहुसेन ने, जो एक बडे प्रसिद्ध शिकारी थे, जीवन भर के लिए शिकार करने का त्याग कर दिया। नाथद्वारा मे लाला डूगरसिहजी ने साधु-दीक्षा अगीकार की। आप बडे ही सरल हृदय ओर सेवाभावी सत है। वडे धैर्य के साथ ठाणापति सतो की प्रेमपूर्वक सेवा कर रहे है। आपका सेवा भाव सचमुच अन्य साधुओ के लिए अनुकरणीय है। राजा खुमानसिहजी पर पूज्यश्री के उपदेशो का बहुत प्रभाव पडा। उन्होने अपने परिवार के साथ मद्य-मांस-सेवन का तथा शिकार खेलने का त्याग कर दिया। पूज्यश्री गढवारा पधारे। यह प्राय चारणो की बस्ती है। नवरात्रि के दिनो मे यहा करणीजी के मन्दिर मे बलिदान होता था। पूज्यश्री के उपदेशो से वह बद हो गया। पचास-साठ राजपूत सरदारो ने शराब, मास, जीव-हिंसा और तमाखू आदि का त्याग कर दिया। यहा से गुरडी होते हुए मगसिर शु १४ को पूज्यश्री उदयपुर पधार गए।

उदयपुर की जैन-जैनेतर जनता ने आपका हार्दिक अभिनन्दन और स्वागत किया। जनता हजारो की सख्या मे अगवानी के लिए सामने आई। आपके व्याख्यानों का इतना व्यापक प्रभाव हुआ कि प प्यारेकिशनजी कौल (भूतपूर्व दीवान सैलाना स्टेट) मेम्बर स्टेट काउसिल, प गोपीनाथजी ओझा, मेम्बर स्टेट काउसिल, हाकिम मोहनचन्दजी आदि उच्च श्रेणी के राज्याधिकारियो ने विशेष रूप से प्रार्थना करके चार व्याख्यान और ज्यादा करवाए। यह सब सज्जन अपनी मित्र-मण्डली को साथ लेकर व्याख्यान मे उपस्थित होते थे और पूज्यश्री की सुधास्राविणी वाणी का लाभ उठाते थे।

पूज्यश्री के उपदेश से कन्या-विक्रय, वर-विक्रय, मद्य-मास सेवन तथा परस्त्री-गमन आदि अनेक पापो का श्रोताओ ने त्याग किया। कई सज्जनो ने ब्रह्मचर्य-व्रत अगीकार किया। इस अवसर पर स्थानीय जेन शिक्षण सस्था को तथा अन्य सस्थाओ को आर्थिक सहायता मिली।

पूज्यश्री पतित-पावन थे और आपकी वाणी मे उग्र सयम का ऐसा तेज अन्तर्निहित रहता था कि श्रोता प्रभावित हुए विना नही रहते थे। उदयपुर के श्रोतावर्ग मे जहा रियासत के उच्च से उच्च पदाधिकारी और प्रतिष्ठित नागरिक जन थे, वहा उदयपुर की प्रसिद्ध वेश्या मुमताजवाई भी थी। पूज्यश्री का उपदेश सवके लिए समान हितकर था और उसे सुनने के लिए मनुष्य मात्र के लिए द्वार खुला था। इस लिहाज से पूज्यश्री किसी वर्ग विशेष या जाति विशेष के नही, सभी के थे। वह जगत् की अनमोल सपदा थे और सारा जगत् उसका अपना था। मुमताजवाई ने पूज्यश्री का उपदेश सुना। उपदेश उसके अन्तर तक पहुचा और उसका जीवनव्यापी कलुष धुल गया। उस बाई ने जीवन भर के लिए वेश्या-वृत्ति का परित्याग कर दिया और मास-मदिरा के सेवन का भी त्याग कर दिया। उसके त्याग का वडा प्रभाव पडा। स्थानीय कन्या-विद्यालय की मुख्याध्यापिका ने मुमताजवाई को गले लगाया तथा वहिन कहकर उसे सम्वोधन किया। प प्यारेकिशनजी कोल ने उस वहिन की शुद्धि के लिए पूज्यश्री का आभार माना और मार्मिक शव्दो मे उसके प्रति सहानुभूति प्रकट की। मुमताजवाई ने यह सिद्ध कर दिया कि पतित समझे जाने वाले व्यक्तियो मे भी उज्ज्वल आत्मा विद्यमान रहती हे। चाहिए कोई पूज्यश्री सरीखा प्रभावशाली और सहानुभूतिशील सन्त, जो उस आत्मा को जगा सके, उठा सके। दुर-दुराने वाले दूसरो की भलाई नही कर सकते।

पोषकृष्ण दशमी को पूज्यश्री ने विहार किया। प प्यारेकिशनजी, प गोपीनाथजी, प गगारामजी मोहले आदि के साथ हजारो नर-नारियो ने उमडते दिल से पूज्यश्री को विदाई दी।

उस दिन पूज्यश्री देहली दरवाजे के वाहर कोठारी बलवन्तसिह जी साहव की बगीची म विराजमान हुए। बगीची और आहिड गाव में एक-एक दिन विराजने की इच्छा होने पर भी जनता के अनिवार्य आग्रह से दोनो जगह तीन-तीन दिन ठहरना पडा। महाराज खुमानसिहजी, दक्षिण प्रान्त से आये हुए दर्शनार्थी और रेलवे-कर्मचारियो का विशेष आग्रह था, आपके उपदेश से अनेक श्रोताआ ने मास, मदिरा तथा हिंसा आदि का त्याग किया।

यहा से ववोडा और कानोड होते हुए आप वडीसादडी पधारे। आपके पदार्पण के उपलक्ष्य म एक दिन अगता पलवाया गया। जेन भाइयो के अतिरिक्त यहा के राजराणा श्रीदूलहसिहजी, उनके सुपुत्र कल्याणसिहजी, ठाकुर सामन्तसिहजी तथा दीवान गणेशरामजी आदि ने व्याख्यानो का अच्छा लाभ लिया। अनेक व्यक्तियो ने हिंसा आदि पापो का परित्याग किया।

यहा से विहार करके आप छोटी सादडी, नीमच, जीरण, मन्दसोर, नगरी होते हुए फाल्गुन शुक्ला चतुर्थी के दिन जावरा पधारे। उस समय युवाचार्यजी महाराज, मुनिश्री वडे चादमलजी महाराज आदि सन्त सम्मिलित हो गए थे। इस प्रकार ठा १९ से आपने जावरा मे पदार्पण किया। यहा भी दया, त्याग प्रत्याख्यान आदि अनेक धर्म-कार्य हुए।

होली के दूसरे दिन जावरा से विहार करके आप सरसी, सेमलिया, नामली आदि होते हुए चैत्र कृष्णा ५ को ठाणा १३ से रतलाम पधारे। जनता ने सोत्साह और अपूर्व स्वागत किया। हितेच्छु श्रावक मडल की वठक के कारण वाहर से अनेक सज्जन आए हुए थे। सभी ने इस अवसर से अच्छा लाभ उठाया।

रतलाम श्रीसघ ने अत्यन्त आग्रह के साथ इस बार रतलाम मे ही चातुर्मास व्यतीत करने की प्रार्थना की। पूज्यश्री ने अवसर देखकर अपनी मर्यादा के अनुसार स्वीकृति दे दी। इस स्वीकृति से जनता के हर्ष का पार न रहा।

चेत्र शुक्ला ९ को पूज्यश्री ने झम्मुबाई तथा सम्पतबाई को दीक्षा दी।

पूज्यश्री खाचरौद पधारे। सोलह वर्ष बाद यहा आपका शुभागमन हुआ था, इस कारण जनता मे अपूर्व उत्साह था। आपके व्याख्यान प्राय खुले बाजार मे होते थे। सभी प्रकार की जनता बडी सख्या मे लाभ उठाती थी।

बैसाख कृष्ण ६ के दिन श्रीवीरचन्दजी की पौत्री गुलाबबाई को पूज्यश्री ने प्रवर्त्तिनी श्रीआनन्दकुवरजी महासती की नेश्राय मे दीक्षित किया।

यहा से विहार कर आप जब बरडावदा पधारे तो महागढ के श्रावको ने अपने यहा पधारने की प्रार्थना की। महागढ मे बैसाख शुक्ला ७ को श्रीरतनलालजी वीराणी की दीक्षा होने वाली थी। वहा के श्रीसघ की प्रबल इच्छा थी कि दीक्षाविधि पूज्यश्री के कर-कमलो द्वारा ही सम्पन्न हो। पूज्यश्री ने प्रार्थना स्वीकार कर ली ओर महागढ पधारे। दीक्षाकार्य सम्पन्न करके आप ठा ९ से नीमच और मन्दसौर पधार गये। मन्दसौर मे आपके अनेक व्याख्यान हुए। तदनन्तर आप नदावला, करजू ओर जावरा होते हुए रतलाम पधार गये। यहा मुनिश्री श्रीचन्दजी म ठा २ से पहले ही विराजमान थे। इस प्रकार दस ठाणा हो गए।

तयालीसवां चातुर्मास (वि. सं. १९९२)

वि सम्वत् १९९२ का चातुर्मास पूज्यश्री ने रतलाम मे व्यतीत किया। अनेक उपकार हुए। श्रीहुक्मीचन्दजी कटारिया तथा मास्टर ओकारलालजी ने आजन्म ब्रह्मचर्य-व्रत अगीकार किया। पूज्यश्री ने सात दिन का उपवास किया। तपस्वी श्रीमागीलालजी महाराज ने महीने की तपस्या की। अन्य सन्तो ने यथायोग्य तपस्या की।

मुनियो की तपस्या के पूर पर सङ्घ द्वारा आमत्रणपत्रिकाए भेजने की प्रथा पूज्यश्री ने पसन्द नही की। यहा तक कि आपने पारणे के दिन की घोषणा तक नही की। आपने सिर्फ इतना फरमाया कि तुम किसी भी दिन त्याग-तपस्या आदि करके तपस्वी मुनियो के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट कर सकते हो। परिणामस्वरूप श्रावण शुक्ला १४ को श्रावको ने विशेष रूप से त्याग तथा तपस्या करके मुनियो के प्रति अपनी श्रद्धाजलि प्रकट की।

पंजाव केसरी पूज्यश्री सोहनलालजी महाराज का स्वर्गवास

पूज्यश्री सोहनलालजी महाराज स्थानकवासी सम्प्रदाय के एक वयोवृद्ध, विद्वान् ओर अनुभवी आचार्य थे। ता ६ जुलाई १९३५ को आपका दु खद स्वर्गवास हो गया। आपके पजाव केसरी का विरुद था ओर पजाव के स्था जेन श्रीसघ के आप मुख्य धर्माधार थे। अतएव आपके स्वर्गवास से न केवल पजाव के वरन् सम्पूर्ण भारतवर्ष के स्था जेन समाज को प्रवल आघात पहुचा।

पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज को जव यह समाचार विदित हुआ तो आपने वहुत ही खेद प्रकट किया। स्वर्गस्थ महापुरुष की पुण्यस्मृति मे ता ८ जुलाई को व्याख्यान वद रखा गया और शोकसभा की गई।

पूज्यश्री का वह मोन-दिवस था, फिर भी आपने स्वर्गस्थ आत्मा का गुणानुवाद करते हुए फरमाया-

'महापुरुषो की मृत्यु भी समाधियुक्त होती हे, इसी कारण इसे पण्डितमरण कहते हे। ज्ञानी पुरुष ऐसी मृत्यु को महोत्सव मानते हे। यह एक प्रकार से निर्वाण कल्याणक हे। कायोत्सर्ग, त्याग, प्रत्याख्यान आदि के द्वारा उस समय उत्तम भावनाओ में रमण करने का शास्त्रो मे उपदेश दिया गया है। पूज्य श्रीसोहनलालजी महाराज ने भी ऐसी ही मृत्यु प्राप्त की हे।

उनके उत्तराधिकारी पूज्य काशीरामजी महाराज'[1] से भी हमे पूरी आशा हे कि वे दर्शन ओर चारित्र की उन्नति करते हुए जिन शासन को दिपाएगे।'

अल्पारंभ- महारंभ

पूज्यश्री रूढियो के पक्षपाती नही थे। रूढियो से चिपटे रहना विवेकहीनता या मानसिक दुर्वलता का चिह्न हे। जो व्यक्ति अपने विवेक से उचित अनुचित एव कल्याण-अकल्याण का निश्चय करता हे वह सिर्फ परम्परागत रूढि के कारण अकल्याण को कल्याण मानने के लिए उद्यत नहीं हो सकता। वह अपनी विवेक वुद्धि से निर्णय करता है ओर आगम का वल पाकर निर्भयता के साथ अपने निर्णय की घोषणा करता है। ऐसा करते हुए वह हिचकता नही। ऐसा विवेक विभूषित पुरुष ही जगत का पथ-प्रदर्शक वन सकता हे। उसी को नेता कहा जा सकता हे।

पूज्यश्री मे मोलिक विचार करने की आश्चर्यजनक क्षमता थी। आगम उनके आदर्श थे ओर उनमे से मक्खन निकाल लेने मे वे वडे ही दक्ष थे।

हिंसा-अहिंसा या महारभ ओर अल्पारभ के विषय में आप विवेक ओर यतना को प्रधानता देते थे। मगर समाज में एक ऐसी रूढि प्रचलित थी ओर अव भी हे कि लोग दूसरे से काम कराने की अपेक्षा अपना काम आप करने मे अधिक पाप मानते हे। वे प्रत्यक्ष की अल्प हिंसा के सामने वडी-से-वडी अप्रत्यक्ष हिंसा को नगण्य समझते हे। पूज्यश्री ने इस विषय मे गभीर चिन्तन किया ओर अप्रत्यक्ष की घोर हिंसा को टालने का उपदेश दिया। आपने वतलाया- 'चर्खा कातने की अपेक्षा चर्वी-लगे वस्त्र पहनने मे अधिक पाप हे। स्वय यतना रखकर रसोई वनाने की अपेक्षा हलवाई से पूडिया खरीदकर खाने मे अधिक पाप हे, क्योकि हलवाई उतनी यतना नही रखता।'

इस प्रकार का वुद्धिगम्य उपदेश भी, सिर्फ रूढि के विरुद्ध होने के कारण वहुत-से श्रावकों ओर साधुओं को जॅचा नही। कई लोगों ने तो इस वात को लक्ष्य करके पूज्यश्री के विचारों का विरोध करने का भी प्रयास किया। ऐसे सव भाइयो को समझाने के लिए एक दिन पूज्यश्री ने निम्नलिखित व्याख्यान दिया-

---

१ खेद है कि इस समय पूज्यश्री काशीरामजी म भी विद्यमान नही है। आप भी स्वर्ग सिधार गये हे। आपके उत्तराधिकारी इस समय पूज्यश्री आत्मारामजी म है, जो उत्कृष्ट विद्वान् हे, शास्त्रज्ञ और अनुभवी है।

अल्पारम्भ-महारम्भ पर विवेचन

शास्त्रनीति तथा व्यवहार सभी मे विवेक को बडा माना है। विवेक के बिना कोई काम अच्छा नही होता। ऐसी दशा मे धर्म मे विवेक न रहने पर धर्म की दशा केसे ठीक हो सकती हे ? अविवेक के कारण धर्म की बात भी अधर्म का रूप ले लेती है विवेक से अधर्म का काम भी धर्म के रूप मे परिणत किया जा सकता है। सुबुद्धि प्रधानमन्त्री ने गन्दे पानी को भी विवेक से अच्छा वना लिया था ओर राजा को प्रतिबोध देकर धर्मात्मा बना लिया था। इसी तरह अविवेक से अच्छी वस्तु भी बुरी बन सकती है। प्रत्येक काम मे विवेक की आवश्यकता है। धर्म मे भी विवेक ही प्रधान है।

अल्पपाप और महापाप के विषय मे यहा और बाहर कई गावो के लोग मुझसे कहते हे और पत्रो मे भी इसकी चर्चा चलती है। इससे कई गृहस्थो ने मुझे पूछा कि आपकी मान्यता क्या है ? जेसा कि हाल मे भाई रतनलालजी नाहर, बरेली-निवासी ने कहा। इसलिए आज मे अपनी मान्यता प्रकट करता हू।

कई लोग प्रश्न करते हैं कि हलवाई के यहा से सीधी चीजे लाकर खाने मे कम पाप है या घर मे बनाकर खाने मे ? इसी तरह कपडे और मकान के लिए भी प्रश्न करते है। वे यहा तकपूछ बेठते हे कि हाथ से चमडा चीरकर जूता बनाकर पहिनना ठीक है या सीधा खरीद कर ?

कई लोग तो मेरे विवेक विषयक विचार कथन मे यह रूप देते है कि महाराज तो हाथ से रोटी बनाकर खाने का उपदेश देते है। और इस प्रकार बात बिगाडकर मुझ पर सावध उपदेश देने का दोष लगाते है।लोग पाप से बचना चाहते है और समाज मे सावध उपदेश देने वाले को साधु नही माना जाता। इस प्रकार के कथन का उद्देश्य तो यही हो सकता है कि लोगो का मन मेरी ओर से हट जाय। फिर भी आप लोगो का चित्त मेरी ओर से नही हट रहा है। यह पूर्वजो का प्रभाव है। फिर भी मै आप से अनुरोध करता हू कि मन मे किसी प्रकार की शका न रहने दीजिए। शास्त्र मे शका काक्षा आदि को समकित का अतिचार माना है और इन्हे 'पयाला' शव्द देकर और व्रतो के अतिचारो की अपेक्षा बडा माना है।

सङ्कोच, अवकाश न मिलना, प्रकट करने की सामर्थ्य न होना आदि कारणो से चित्त मे शका रह जाती है। किन्तु गीता मे कहा है- 'सशयात्मा विलक्ष्यति।'

श्रद्धा को सवने महत्त्व दिया है और कहा हे- 'श्रद्धयमोऽय पुरुष यो मनछद्ध स एव स ।' अर्थात् पुरुष श्रद्धामय हे। जैसी श्रद्धा होती है वैसा ही वह वन जाता है। इस प्रकार श्रद्धा को सव ने बडा माना है। शका से श्रद्धा मे दोष आता है।श्रद्धा मे दोष आने के बाद कुछ नही वचता। इसलिए शका मिटाते समय सङ्कोच न करना चाहिए। शका बनी रहने पर हानि होती है।

अल्पारम्भ और महारम्भ का प्रश्न उन्ही के लिए हो सकता हे जो सम्यकदृष्टि और व्रती ह। मिथ्यात्वी के लिए नही हो सकता। जेसे जहा वडा कर्ज लदा हुआ हे वहा छोटे कर्ज की गिनती नही होती। जैसे १२३५ मे से वडी सख्या दस हजार की हे। जिस पर १० हजार रुपए का कर्ज हे, वहा पाच या पतालीस के लेन-देन की वात नही होती।

जो मिथ्यावादी हे उसके लिए दूसरी वात करने की आवश्यकता नही रहती। किन्तु जो सम्यकदृष्टि हे उसे इस वात का विचार रखना ही चाहिए कि अल्पपाप ओर महापाप कहाँ केसे होता

हे ? मे निश्चय से नही कह सकता कि यह काम अल्पपाप का है या यह महापाप का। मे तो यह कहता हू कि जहा विवेक हे वहा अल्पपाप हे, जहा विवेक नही हे वहा महापाप हे। मेने सदा यही कहा है कि पाप की न्यूनाधिकता विवेक पर अवलम्वित हे।

जो काम महारम्भ से होता हे वही काम विवेक से अल्पारम्भ वाला भी हो सकता हे। इसी प्रकार अल्पारम्भ वाला कार्य अविवेक के कारण महारम्भ वाला वन जाता हे।

जव मेरी आयु १० वर्ष की थी उस समय की वात हे। हमारे गाँव के कुछ लोगो ने गोठ करने का निश्चिय किया। उसमे मक्की के भुजिए वनाये गए। उसमे मेरे मामाजी भी सम्मिलित थे। वे धर्म का विचार रखते थे। चोविहार करते थे। नित्य प्रतिक्रमण करते थे। मेरे हृदय मे उनके प्रति श्रद्धा थी। माता-पिता का देहान्त हो जाने के कारण मे उन्हे पिता की तरह मानता था।

कुछ लोगो ने भाग के भुजिए वनाने की सोची। मामाजी ने मुझे भाग की पत्तिया लाने के लिए कहा। मे दौडा गया ओर लगभग सेर पत्तिया तोड लाया। यह पत्तिया लाते देखकर उन्होने मुझसे कहा- "थोडी भाग काफी थी, इतनी पत्तिया क्यों तोड लाए ?" उनके हृदय मे धर्म का विचार आया ओर मुझे कोसने लगे। मै बच्चा था, विवेकशून्य था। इसलिए ऐसा हुआ। समझदार होता तो उतनी ही पत्तिया तोडता जितनी आवश्यक थी। मामाजी ने भी पहले मुझे यह शिक्षा नही दी। इसलिए उस महारम्भ का कारण अविवेक हुआ। यदि वे स्वय जाते तो थोडी पत्तिया लाते। इसलिए उनके करने के वजाय कराने मे अधिक पाप हुआ। सेठ वरदभाणजी कहते थे कि जब मे शोच गया तो नोकर से पानी लाने के लिए कहा। वह लीलन फूलन आदि रोदता हुआ गया ओर जल्दी से अनछना पानी भर लाया। यह अधिक पाप किसको हुआ ? क्या इस पाप की जिम्मेवारी कराने वाले पर भी नही हे ? यदि सेठजी स्वय पानी भरने जाते ओर विवेक से काम लेते तो कितना आरम्भ टाल सकते थे। उन्होने नोकर को भेजा इसलिए क्या सेठजी को पाप नही हुआ ? इसी प्रकार के अनेक उदाहरण दिए जा सकते हे जिन से यह स्पष्ट हो जाता हे कि स्वय करने की अपेक्षा कराने मे अधिक पाप हो सकता हे। यदि किसी भाई के मन म शका हो तो वह जिज्ञासु-वृत्ति से पूछ सकता हे।

इस धर्म के उत्पादक क्षत्रिय थे। उन्होने वडे-वडे राज्य किए थे। उदायन सोलह देशो का राजा था। फिर भी वह अल्पारम्भी था या महारम्भी ? इतना वडा राज्य होने पर भी विवेक के कारण वह अल्पारम्भी वना रहा। भगवान् ने विवेक मे धर्म वताया हे। यदि विवेक मे धर्म न होता तो यह धर्म क्षत्रियो के पालने योग्य न रहता। विवेक रखकर एक राजा वडे-से-वडे राज्य को चला सकता हे ओर अल्पारम्भी बना रह सकता हे।

कभी करने मे ज्यादा पाप होता हे, कभी कराने मे ओर कभी अनुमोदन मे। विवेक न रखने पर जितना अनुमोदना मे पाप हो जाता हे उतना करने ओर कराने मे नही होता।

एक राजा के सामने ऐसा अपराधी आया जो फासी का अधिकारी था। राजा सोचने लगा कि म इसके प्राण नही लेना चाहता, किन्तु यदि दण्ड न दिया गया तो न्याय का उल्लघन होगा ओर अव्यवस्था फेल जायगी। न्याय की रक्षा के लिए राजा ने वडे सकोच के साथ उसे फासी का हुक्म दे दिया। फासी लगाने वाले उस अपराधी को ले चले ओर सोचने लगे इस प्रकार दूसरो के प्राण लेने का काम वहुत

बुरा है। लेकिन राजाज्ञा माननी ही पडेगी। वे अपनी विवशता और लाचारी पर पश्चात्ताप कर रहे थे। इस प्रकार सोचते हुए वे अपराधी को फासी के स्थान पर ले गए।

वधस्थान पर एक और आदमी खडा था। वह उस व्यक्ति को फासी चढते देखकर बडा खुश हुआ और मन ही मन अनुमोदना करने लगा।

राजा और जल्लाद काम करने पर भी मन मे अच्छे विचार होने के कारण अल्पारम्भी है। वह व्यक्ति कुछ न करने पर भी अपराधी है। इस पकार अनुमोदना से भी महारम्भ हो सकता हे। इन सब मे विवेक ही प्रधान है।

फासी लगाने की जगह पर और लोग भी थे। कुछ लोगो को उस पर दया आ रही थी और वे सोच रहे थे यदि इसने पाप न किया होता तो ऐसा परिणाम क्यो होता ? हमे पाप से बचना चाहिए। कुछ लोग खुश हो रहे थे। वे उसकी मृत्यु पर हर्ष मना रहे थे। इन दोनो विचार वाले दर्शको मे महापापी कौन और अल्पपापी कौन है ?

मै यह नही कहता कि करने से ही पाप होता है या कराने से ही होता है। मे तो सिर्फ यह कहता हूँ, जहा अविवेक है, वहा महापाप है। जहा विवेक है, वहा अल्पपाप है।

एक और उदाहरण लीजिए। एक डाक्टर चीर-फाड का काम जानता है। लेकिन वह कहता हे कि मुझे घृणा आती है, इसलिए मै ऑपरेशन नही करता। वह अनाडी कम्पाउडर से ऑपरेशन करने के लिए कहता हे। ऐसी दशा मे उस डाक्टर को स्वय करने की अपेक्षा कराने मे अधिक पाप है। एक डाक्टर स्वय ऑपरेशन करना नही जानता, वह यदि जानने वाले से कहता है कि तुम ऑपरेशन कर दो तो इस कराने मे अल्पपाप हे। कराना दोनो जगह समान होने पर भी एक जगह अल्पपाप है दूसरी जगह महापाप। स्वय न जाननेवाला यदि जानने वाले को रोक कर स्वय ऑपरेशन करता हे तो ऐसा करना महापाप हे। ऐसे आदमी का किया हुआ ऑपरेशन यदि सफल भी हो जाय तो भी सरकार उसे अपराधी मानेगी। पहले डाक्टर के काराने पर महापाप लगा, दूसरे के कराने पर अल्पपाप। तीसरे के करने पर भी महापाप। तीनो का अन्तर विवेक पर निर्भर है। इस प्रकार धर्म मे विवेक की परम आवश्यकता है।

एक और उदाहरण है। एक बहिन विवेकवाली है और दूसरी विवेकशून्य। विवेकवाली बहिन सोचती हे कि रोटी बनाने मे पाप है किन्तु अपना तथा परिवार वालो का पेट भरना ही पडता हे। इसलिए वह विवेकशून्य बाई को रसोई के कार्य मे लगा देती है। असावधानी के कारण उसे आग लग गई ओर उसकी मृत्यु हो गई। उसके मरने पर विवेकशील बहिन क्या यह सोच सकती हे कि मे पाप से बच गई ? वह सोचेगी यदि मै स्वय कार्य करती तो इतना अनर्थ न होता। इस प्रकार कराने मे अधिक पाप हुआ। यदि विवेकशून्य वहिन स्वय करने बैठ जाती हे और विवेक वाली बहिन को नही करने देती तो उस करने मे अधिक पाप है।

स्वय करने की अपेक्षा कराने और अनुमोदन करने मे एक दूसरी दृष्टि से भी अधिक पाप हे। स्वय हाथ से कार्य करने पर कोई कितना भी करे, फिर भी मर्यादित रहेगा। कराने पर लाखो-करोडो व्यक्तियो से कहा जा सकता हे। करने मे दो ही हाथ रह सकते ह। कराने मे लाखो-करोडो हाथ लग

सकते हे। करने का समय भी मर्यादित ही होगा। कराने मे अपरिमित समय रह सकता हे। करने का क्षेत्र भी मर्यादित ही होगा। कराने के क्षेत्र मे कोई मर्यादा नही हे। इस तरह करने मे द्रव्य, क्षेत्र और काल तीनो मर्यादित रहते हे। कराने मे सभी विस्तृत हो जाते है। इस प्रकार स्वय करने या कराने के लिए व्यक्ति आदि साधनो की आवश्यकता होती हे। किन्तु घर वेठे ही सारे ससार के कार्यों का अनुमादन किया जा सकता हे। व्यक्ति ने आवश्यकता के लिए महल वनवाया किन्तु उसकी सराहना नहीं की। देखने वाले ने उसकी वडी सराहना की। तो महल वनाने वाला अल्पपापी रहा ओर अनुमोदन करने वाला महापापी।

विलायती कपडा यहा नही वनता, किन्तु यहा वेठे ही उसका अनुमोदन हो सकता हे। विज्ञापन देखकर कह सकते हो कि यह कपडा वहुत वढिया हे। यह हमे मिल जाता तो कितना अच्छा होता। इस प्रकार विलायत मे होने वाली हिंसा का यहा वेठे अनुमोदन हो जाता हे। इस प्रकार अनुमोदन के द्रव्य, क्षेत्र ओर काल करने एव कराने से वहुत अधिक हे। अनुमोदन का पाप ऐसा है कि विना कुछ किए ही महारम्भ हो जाता हे।

भगवती सूत्र के २४वे शतक मे तन्दुल मत्स्य की कथा आई हे। वह वडे मगरमच्छ की पलकों पर रहता हे ओर इतना छोटा होता हे कि किसी जीव को नही मार सकता। फिर भी वह मर कर सातवे नरक मे जाता हे। इसका कारण अनुमोदन या विचार हे। वडे मगर के मुह मे घुसती हुई ओर नि श्वास के साथ निकलती हुई मछलियो को जव वह देखता हे तो सोचता है यह मत्स्य वडा मूर्ख हे जो इतनी मछलियो को वापिस जाने देता हे। मे होता तो एक भी मछली को न निकलने देता। इसी प्रकार हिंसामय अनुमोदन से वह सातवे नरक मे जाता है। करने या कराने की उसमे कुछ भी सामर्थ्य नही हे।

पूज्यश्री उदयसागरजी महाराज एक स्तवन फर्माया करते थे-

जीवडा मत मेलो रे मो मन मोकलो, मन मोकलडे रे हाण।
जिण हीज नयाणेरे निरखे सुन्दरी तिनहीज वेनड जाण॥
पुण्य तणे परिणामे विचरता मोटी निपजेरे हाम। जीवडा।

एक व्यक्ति जिन आखो से अपनी वहिन को देखता हे, उन्ही आखो से पत्नी को देखता हे, किन्तु दोनो दृष्टियो मे महान् अन्तर है। आखे किसी को वहिन या स्त्री नही वनातीं। यह सारा काम मन का हे। जो स्त्रिया कामी पुरुष को विलासिनिया दिखाई देती हे वे ही महापुरुष के पास पहुचने पर वहिने वन जाती ह। मन से पाप भी होता हे ओर पुण्य भी। "मन एव मनुष्याणा कारण बन्धमो क्षयो।"

कोई कह सकता है कि जेनशास्त्रो मे तो मन, वचन ओर काय तीनो को कर्मवन्ध का कारण माना हे। यह ठीक हे, किन्तु मन पर वहुत कुछ निर्भर हे। वहिन ओर स्त्री दोनो को देखना समान होने पर भी मन के कारण पुण्य ओर पाप वन जाता हे। विल्ली अपने वच्चो को जव एक स्थान से दूसरे स्थान ले जाना चाहती हे तो मुह मे दवा कर ले जाती हे। इसी प्रकार वह चूहों को भी ले जाती हे। आप चूहे को छुडाने के लिए दोडते ह किन्तु वच्चो को नहीं छुडाते। इसका कारण यही हे कि दोनों जगह विल्ली की भावना मे फरक ह। एक जगह हिसा की भावना हे दूसरी जगह प्रेम की। विल्ली सव चूहों को नहीं मार सकती पर वह सब की वेरिन मानी जाती ह। इसका कारण यही हे कि उसके मन मे सभी चूहों के विनाश की भावना समाई हुई हे। अत मन ही पाप का प्रधान कारण हे।

मै सच्ची प्ररूपणा कर रहा हूँ। इसमे मुझे किसी प्रकार का भय नहीं है। चाहे ऐसा करने मे प्राण जावे। सत्य के लिए प्राण देने से बढकर खुशी का अवसर मेरे लिए क्या हो सकता हे? मै कोई ात नही कह रहा हू। शास्त्र ओर परम्परा के अनुसार ही कह रहा हू। पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज उदयसागरजी महाराज भी ऐसा ही फर्माते थे। लेकिन आज यह कहा जा रहा हे कि मे पूर्वजो ारुद्ध प्ररूपणा कर रहा हू। कहने वालो का मुह नही पकडा जा सकता, किन्तु आप लोगो को सत्य नेर्णय कर लेना चाहिए। मन मे किसी प्रकार की शका नही रखनी चाहिए।

यह प्रश्न हो सकता हे कि यदि कराने वाला और जिससे कराया जाय दोनो विवेकी हो तो कार्य ्वय न करके दूसरे से कराने मे क्या हानि है? उस दशा मे तो कराने मे ज्यादा पाप न होगा? ा उत्तर यह है कि विवेक की अपेक्षा से तो कराने मे अधिक पाप नही है। किंतु यदि कराने का , क्षेत्र ओर काल अधिक होवे तो ज्यादा पाप लग सकता हे। इस विषय मे विवेक तथा मन के ा से अधिक जाना जा सकता है।

एक और प्रश्न होता है कि सामायिक मे करने और कराने का ही त्याग किया जाता है। जब मोदन मे पाप ज्यादा हे तो उसका त्याग क्यो नही किया जाता! बडे पाप का त्याग तो पहले करना ए। इसका उत्तर यह है कि अनुमोदना का त्याग करने की शक्ति नही होती। इसलिए उसका त्याग कराया जाता। प्रत्येक कार्य शक्ति के अनुसार ही करना ठीक होता है। एक जगह छोटी ओर बडी प्रकार की मोगरी पडी हुई है। छोटा बालक बडी मोगरी नही उठा सकता, इसलिए उसे छोटी मोगरी ने के लिए कहा जाता है। इसका अर्थ यह नही कि बडी मोगरिया छोटी मोगरिया हो गईं और छोटी । भगवान् ने शक्ति देखकर त्याग कराने का विधान किया है। उन्होने श्रावक मे इतनी ही शक्ति ा कि वह करने और कराने का ही त्याग कर सकता हे, अनुमोदना का नही। तदनुसार करने और ाने के त्याग का ही विधान है। इसका अर्थ यह नही कि करने और कराने के पाप से अनुमोदना पाप छोटा है। आप गृहस्थ होने के कारण अनुमोदना के पाप से बच भी नही सकते। जिस समय ा सामायिक मे बेठते है उस समय स्वय करने ओर कराने का त्याग तो करके बैठते हे किन्तु घर, ान, कारखाने आदि मे जो काम हो रहा हे उसका त्याग नही करते। इसलिए अनुमोदन तो हो ही ता हे।

उत्तराध्ययन सूत्र के ५वे अध्ययन की २०वी गाथा मे बताया है कि सब श्रावक एक तरफ जाय ओर एक साधु दूसरी तरफ, तो उनमे साधु ही बडा है। इसका कारण यही है कि साधु के ुमोदना का भी त्याग होता हे। श्रावक के करने ओर कराने का त्याग होने पर भी अनुमोदन का ग नही होता। इसलिए अनुमोदना का पाप बडा है।

(भाद्रपद शु ३ सम्वत् १९९२)

रतलाम मे पूज्यश्री के विराजने से बहुत उपकार हुआ। दो सज्जनो ने पत्नी सहित ब्रह्मचर्य-व्रत ीकार किया। इसी प्रकार परस्त्री गमन, मादक वस्तुओ के तथा चर्बी वाले वस्त्र, रेशमी वस्त्र, आदि भी बहुत से त्याग हुए। दया, पोषा उपवास आदि बडी सख्या मे हुए। साधु ओर श्रावको ने विविध ार की तपस्या की। गोगुदा वाले श्रावक गणेशमलजी ने ४५ तथा कानोड वाले श्रावक माणकचन्दजी २२ उपवास एक साथ किए। अन्य छोटी-मोटी तपस्याए भी हुईं।

युवाचार्यश्री को अधिकार प्रदान

पाठक यह जान ही चुके हे कि पूज्यश्री ने जावद मे मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज को युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित कर दिया था, किन्तु सम्प्रदाय की देखरेख और व्यवस्था का भार अब तक आप स्वय सँभालते थे। कुछ दिनो के पश्चात् पूज्यश्री ने विचार किया- 'अपनी मोजूदगी मे ही युवाचार्यजी को साम्प्रदायिक व्यवस्था का भार सोप देने से अनेक लाभ होगे। प्रथम तो मे निश्चित होकर एकाग्र भाव से आत्मसाधना मे लीन हो सकूगा, दूसरे युवाचार्यजी को विशेष अनुभव हो जाएगा ओर आगे चलकर उन्हे सुविधा रहेगी।

इस प्रकार विचार करके आश्विन कृष्णा ११, सोमवार, ता २३ सितम्बर १९३५ को आचार्यश्री ने व्याख्यान मे उक्त विचार की घोषणा कर दी और युवाचार्य को अधिकार पत्र प्रदान कर दिया। आपने फर्माया -

मे दक्षिण मे, पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज से दूर था। लेकिन पूज्यश्री ने, न मालूम मेरे हृदय को केसे जाना ? उन्होने कोन जाने क्या अनुभव किया ? उदयपुर मे उन्होने सम्प्रदाय का भार मुझे सोपना तय कर लिया। मे दूर दक्षिण मे था ओर वे उदयपुर मे थे। सम्प्रदाय का भार मेरे ऊपर रखना साधारण बात नही थी। यह उनके विशाल अनुभव ओर विचारशीलता की हद हे। पूज्यश्री को विश्वास था कि मे जो कुछ कहूगा उसे वह (पूज्यश्री जवाहलाल जी म) अवश्य मान लेगा। इसी विश्वास के आधार पर रतलाम मे सब तेयारी कर ली गई। मे पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुआ। मेने लिखित प्रार्थना की कि मुझ पर भार डालने पर भी सारा कार्य आपको ही करना होगा। पूज्यश्री ने मेरी प्रार्थना स्वीकार कर ली। मे यह पद स्वीकार करने को विवश हो गया। कुछ समय तक पूज्यश्री कार्य सभालते रहे। तत्पश्चात् एक दिन उन्होने फर्माया-'अब चोमासे नियत करने आदि का कार्य तुम्ही करो। मेरा चोमासा भी तुम्ही निश्चित करो। जब तुम मेरा भी चोमासा निश्चित करोगे तो मे प्रत्येक कार्य के लिए सबसे यही कहूगा कि सब कुछ जवाहरलालजी जाने।' पूज्यश्री ने यह फर्माया सही मगर मे ऐसा न कर सका। पूज्यश्री की विद्यमानता मे मे अपने हाथ मे सब कार्य न ले सका। यह किसे मालूम था कि मुझे उत्तरदायित्व सोपने के कुछ ही समय बाद पूज्यश्री स्वर्ग सिधार जाएगे ? पूज्यश्री जयतारण मे स्वर्ग पधार गये। उस समय मै वहा मोजूद न था। अचानक सम्प्रदाय का समस्त भार मेरे माथे आ पडा। मे तब अनुभव करने लगा कि अगर पूज्यश्री की मोजूदगी मे ही मे कार्य करने लगा होता तो यह अचानक आया हुआ भार मुझे दुस्सह न जान पडता।

इसी अनुभव को लेकर मेरी वृद्धावस्था ने मुझे प्रेरित किया हे कि जो अवसर मिला हे उसका उचित उपयोग कर लिया जाय। तदनुसार सम्प्रदाय का कार्यभार, जेसे-दण्ड-प्रायश्चित देना, चोमासे निश्चित करना, सम्प्रदाय के अन्य कार्यों का सभालना आदि, मे युवाचार्य गणेशीलालजी को सोपता हूँ।

कई भाइयो का खयाल हे कि मे व्याख्यान देना बद करके मोन ग्रहण कर लूगा। लेकिन सम्प्रदाय का भार सोपने ओर व्याख्यान देने के कार्य का ऐसा कोई सबध नही हे। यह कार्य अलग हे। मे सम्प्रदाय के कार्य का भार युवाचार्यजी को सोप रहा हूँ।

युवाचार्यजी को सम्पदाय के कार्य का भार सौपने के सबध मे मेने जो पत्र लिखा हे, वह इस प्रकार है। (पूज्यश्री के आदेश से मुनिश्री जौहरीमलजी महाराज ने पढकर सुनाया)।

अधिकारपत्र

सम्प्रदाय के आज्ञावर्त्ती सन्तश्री बडे प्यारचदजी महाराज आदि सब सन्तो, रगूजी महासतीजी की सम्प्रदाय की प्रवर्त्तिनीजी आनन्दकुवरजी आदि आज्ञावर्ती सतिया, मोताजी महासतीजी की सम्प्रदाय की प्रवर्त्तिनीजी केसरकुवरजी, महताबकुवरजी, आदि उनकी सब सतिया, एव खेताजी महासतीजी की सम्प्रदाय की प्रवर्त्तिनीजी राजकुवरजी आदि उनकी सब सतिया, इसी तरह पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय के हितेच्छ सब श्रावको और श्राविकाओ से मेरी यह सूचना हे कि-

(१) अखिल भारतवर्षीय श्रीसघ और मैने श्रीगणेशीलालजी को सम्प्रदाय के युवाचार्य पद पर स्थापित कर ही दिया है।

(२) अब मै अपनी वृद्धावस्था व आन्तरिक इच्छा से प्रेरित होकर आपको सूचित करता हू कि मेरे पर जो सम्प्रदाय की जिम्मेवारी है, अर्थात् सारणा वारणा करना, सब सन्त व सतियो को आज्ञा मे चलाना, सम्प्रदाय-सम्बन्धी कार्यों की योजना करना एव सम्प्रदाय सम्बन्धी नियमो का पालन करने के लिए सघ को प्रेरित करना आदि यह सब कार्यभार अब मै युवाचार्य श्रीगणेशीलालजी के ऊपर रखता हूँ। अत आप चतुर्विध-सघ आज से सम्प्रदाय के कुल कार्य की देखरेख, पूछ-ताछ, आज्ञा लेना आदि सब कार्य उन्हीं से लेवे। मै आज से सम्प्रदाय का पूर्ण अधिकार उन्ही को देता हूँ। केवल मेरी सेवा मे जिन्हे उचित समझूगा, उन सन्तो को अपने पास रखूगा और उन सन्तो पर मेरी देख-रेख रहेगी।

(३) आप श्रीसघ ने मेरी आणा, धारणा मानकर जैसा मेरा गौरव रखा है वैसा ही युवाचार्य श्रीगणेशीलालजी का भी रखेगे, यह मेरे को पूर्ण विश्वास है। युवाचार्य श्रीगणेशीलालजी भी श्रीसघ के विश्वास-पात्र हे। अतएव श्रीसघ ने उन्हे युवाचार्य-पद प्रदान किया है। इसलिए इस विषय मे मुझको विशेष कुछ कहने की आवश्यकता नहीं हे।

(४) युवाचार्य श्रीगणेशीलालजी के प्रति मेरी हार्दिक सूचना है कि अब आप सम्प्रदाय के पूर्वजो के गोरव को ध्यान मे रखते हुए सम्प्रदाय का और श्रीसघ का कार्य विवेक के साथ इस प्रकार करे कि जिससे श्रीसघ सन्तुष्ट होकर किसी प्रकार की त्रुटि का अनुभव न करे।

श्री शासनाधीश श्रमण भगवत महावीर स्वामी, एव शासन श्रेयस्कर श्रीमान् हुक्ममुनि आदि पूज्यपाद महानुभावो के तपोमय तेज प्रताप से श्री युवाचार्य गणेशीलालजी इस विशाल गच्छ को सुचारु रीति से चलाकर पूर्वजो के यश शरीर की रक्षा करते हुए शोभा बढावेगे, ऐसा मेरा ही नही श्रीसघ का भी पूर्ण विश्वास हे।

ॐ शान्ति शान्ति शान्ति

काठियावाड़ की प्रार्थना

एक लम्बे अर्से से गुजरात ओर काठियावाड की धर्मप्रिय जनता पूज्यश्री के दर्शन ओर उपदेश-श्रवण के लिए उत्कठित थी। काठियावाड प्रज्ञान्त के कतिपय प्रधान श्रावको ने कपासन-चातुर्मास के

समय वहा आकर पूज्यश्री से काठियावाड पधारने की प्रार्थना की। रतलाम मे फिर १५ प्रमुख सज्जनो का एक शिष्टमडल उपस्थित हुआ। मोरवी, जूनागढ, गड्ढा, अमरेली आदि के श्रीसघो ने तारो और पत्रो द्वारा शिष्टमडल की प्रार्थना मे सहकार दिया। अहमदावाद श्रीसघ और वहा विराजे हुए मुनिमडल ने भी उस ओर पधारने की आग्रहपूर्ण प्रार्थना की। इस सवल और व्यापक आग्रह को टालना पूज्यश्री के लिए कठिन हो गया। शरीर वृद्ध था और काठियावाड का कष्टकर लम्वा प्रवास करना था।

पूज्यश्री ने युवाचार्यजी से परामर्श किया और द्रव्य, क्षेत्र, काल-भाव के अनुसार उत्तर देने का आश्वासन दिया।

श्रीहेमचन्द भाई का आगमन

उन्ही दिनो श्री श्वे स्था जेन कान्फ्रेस का प्रचार करते हुए उसके अध्यक्ष श्री हेमचन्द रामजी भाई मेहता ता १६ अक्टूबर १९३५ को रतलाम पधारे। उस समय श्रावको और साधुओ का पारस्परिक सम्वन्ध प्रकट करते हुए पूज्यश्री ने व्याख्यान मे फर्माया -

भगवान् महावीर स्वामी ने श्रावको को साधुओ के लिए 'अम्मा-पियर' वतलाया हे। इस प्रकार प्रभु ने हम साधुओ को श्रावको की गोद में रखा हे। आपकी गोद मे रखते समय भगवान् ने यह लिहाज नही किया कि साधु महाव्रत-धारी और श्रावक अणुव्रत-धारी ही होता है। उन्होने सिर्फ यह ध्यान रखा कि जिस प्रकार माता-पिता पुत्र का पालन करते हे, उसी प्रकार श्रावक सघ का पालन करता हे, अतएव वह साधु के लिए भी माता-पिता के समान हे। भगवान का तो यह फर्मान हे। अव आप श्रावक लोग हम साधुओ सुधारोगे या विगाडोगे ? हमारी भूल की उपेक्षा करके हमे फिर भूल करने के लिए प्रोत्साहन देना हमे विगाडना हे। एक वार आदत विगडने के बाद फिर सुधार होना सरल नही रहता।'

यही वात पूज्यश्री ने नाना दृष्टान्त आदि देकर वडी सुन्दरता के साथ समझाई और श्रावकवर्ग को अपने उत्तरदायित्त्व का भान कराया।

रतलाम-नरेश का आगमन

रतलाम के महाराजा कई वार पूज्यश्री के परिचय मे आ चुके थे। वे पूज्यश्री की ओजस्विनी वाणी, प्रखर प्रतिभा, उत्कृष्ट सयम आदि गुणो से परिचित थे। पूज्यश्री पर उनकी वडी श्रद्धा थी। पूज्यश्री जिन दिनो थली-प्रान्त मे विचरते थे, रतलाम-नरेश उनके विषय मे अकसर पूछते रहते थे। रतलाम मे चातुर्मास होने के सवाद से उन्हे अत्यन्त प्रसन्नता हुई।

कार्तिक शुक्ला नवमी, ता ५ नवम्बर १९३५ को रतलाम-नरेश पूज्यश्री के दर्शनार्थ एव उपदेश-श्रवण के लिए पधारे। महाराजकुमार, मेजर शिवजी साहेब, कमिश्नर, डाक्टर आदि रियासत के प्राय सभी उच्च पदाधिकारी भी उस दिन वहा मौजूद थ। पूज्यश्री ने राजा और प्रजा के पारस्परिक सम्वन्ध एव कर्त्तव्य पर वडा ही प्रभावशाली उपदेश दिया। रतलाम-नरेश उत्कठा के साथ पूज्यश्री के मुखचन्द्र से झरने वाले अमृत का पान करते रहे। जव उपदेश समाप्त हुआ तो पुन सेवा मे उपस्थित होने की इच्छा प्रदर्शित करते हुए गये। जाते समय नरेश का मुखमडल ऐसा प्रसन्न था मानो उन्होंने कोई अनमोल और दुर्लभ वस्तु पाई हो।

और जनता ? जनता की प्रसन्नता का पार न था। जहा-तहा 'धन्य-धन्य' की ध्वनि गूज रही थी।
ामर्थ और प्रभावशाली पथ-पदर्शक अगर कुछ अधिक होते तो प्रजा और राजा के बीच जो गहरी पड गई है वह न पडी होती। अवाछनीय सघर्ष का यह अवसर न आया होता। राजा अपने को प्रजा वक समझता और पजा, राजा को अपना सरक्षक समझती। दोनो का सम्मिलित स्वार्थ होता। एक ख दूसरे का सुख और एक का दुख दूसरे का दुख होता। प्राचीन भारतवर्ष की परम्परा-रूपी स्वच्छ मे जो अनेक मैले धब्बे लग गये है वे न लगे होते। मगर इस विशाल देश मे एक निस्पृह उपदेशक र सकता है, उससे कही बहुत अधिक पूज्यश्री ने कर दिखाया। उन्होने नरेशो के नेत्र खोले, प्रजा ातिबोध दिया और दोनो मे नीति और धर्म को पतिष्ठित करने का प्रशस्त प्रयास किया।

बीकानेर की विनति

इसी अवसर पर बीकानेर-श्रीसघ के पमुख श्रावक पूज्यश्री से बीकानेर की ओर पधारने की ना करने आये। पूज्यश्री के समक्ष काठियावाड का प्रश्न उपस्थित था। अतएव पूज्यश्री ने उत्तर में या- 'यदि मै काठियावाड न गया तो बीकानेर फरसे बिना कही की विनति स्वीकार नही गा।'

विहार

चातुर्मास समाप्त होने पर पूज्यश्री ठा १० से सैलाना पधारे। वहा आपके तीन-चार व्याख्यान । जनता तथा राज्याधिकारियो की प्रार्थना स्वीकार करके मृगशिर कृष्णा ७ को आपका एक विशिष्ट ख्यान हुआ। इस व्याख्यान की प्रशसा सुनकर नवमी को सैलाना-नरेश ने व्याख्यान सुनने की नलाषा प्रकट की। मगर अष्टमी की रात्रि को अचानक पूज्यश्री के कान मे दर्द हो उठा अत दूसरे आपका व्याख्यान न हो सका। दो-तीन दिनो तक इलाज करने के पश्चात् भी दर्द कम नही हुआ। एव छोटे ग्रामो मे घूमने का कार्यक्रम स्थगित करके आप अमावस्या को रतलाम पधार गये।

कुछ दिनो पश्चात् युवाचार्यश्री भी पूज्यश्री की सेवा मे पधार गये। इलाज तथा सयम से पूज्यश्री कान का दर्द कुछ कम हो गया। पौष शुक्ला दशमी को आप ठा १४ से जावरा की ओर पधार ।

कुछ दिन जावरा विराजकर पूज्यश्री निम्बाहेडा, चितौड, भीलवाडा, आसीन, गुलाबपुरा, ायनगर, बदनोर आदि स्थानो को पवित्र करते हुए चैत्र कृ १४ को ब्यावर पधारे।

दो आचार्यो का सम्मिलन

पूज्यश्री हस्तीमल महाराज ने मारवाड मे विचरते हुए पूज्यश्री से मिलने की इच्छा प्रकट की । तदनुसार अजमेर की ओर आपका विहार भी हो चुका था। पूज्यश्री हस्तीमलजी महाराज चैत्र शुक्ला मगलवार को प्रात काल जेठाणा पधार गये। उसी दिन सायकाल पूज्यश्री भी युवाचार्यजी के साथ ठाणो से जेठाणा पधारे।

दोनो आचार्य प्रेम और वात्सल्य के साथ परस्पर मिले। दो दिन एक ही जगह व्याख्यान हुआ। नो आचार्यो का एक ही स्थान पर विराजमान होने का सवाद पाकर जोधपुर, अजमेर, मालवा,

मेवाड, मारवाड, काठियावाड आदि से सेकडो श्रावक दर्शनार्थ आ पहुँचे। जोधपुर ओर अजमेर के श्रीसघ ने अपने-अपने यहा दोनो आचार्यों से इकट्ठा चातुर्मास करने की प्रार्थना की। उधर काठियावाड की ओर से चुन्नीलाल नागजी वोरा राजकोट-निवासी ने काठियावाड की ओर पदार्पण करने की प्रार्थना की। व्यावर, वीकानेर ओर चित्तोड के श्रीसघो ने भी आग्रह किया।

ऐसे प्रसग बडे विकट होते हे। सदय हृदय किसे निराश करे ? ओर ओदारिक शरीर से एक साथ अनेक जगह पहुचे भी केसे ? अतएव पूज्यश्री ने युवाचार्यजी तथा प्रधान श्रावको के साथ इस विषय पर विचार-विमर्श किया। अन्त मे काठियावाड की ओर पधारना निश्चित हुआ। पूज्यश्री ने ता २९-३-३६ को निम्नलिलिखित अभिप्राय व्यक्त किया -

द्रव्य, क्षेत्र, काल ओर भाव की अनुकूलता हो ओर हम दोनो को साथ रहने का अवसर मिले, यह हम दोनो चाहते हे। परन्तु पूज्य हस्तीमलजी ने जयपुर फरसने की वहा के श्रीसघ को आशा बधाई हे, अतएव उन्हे जयपुर पधारना होगा, हम दोनो के मिलाप से आनन्द हुआ हे। प्रेम की वृद्धि हुई। आशा हे यह प्रेम भविष्य मे बढता ही रहेगा।

मेने वीकानेर-श्रीसघ को यह वचन दिया हे कि काठियावाड न गया तो बीकानेर फरसे विना अन्यत्र चोमासे की स्वीकृति देने का भाव नही हे। अतएव बीकानेर जाऊँ तो अजमेर भी पहुचने का समय नही हे ओर न इतनी शारीरिक शक्ति ही शेष हे। काठियावाडी भाइयो का बहुत समय से तीव्र आग्रह है ओर इनके कथन से मालूम होता हे कि उधर जाने से विशेष उपकार होगा। मुख्य मुनियो ओर श्रावको के साथ विचार-विनिमय करने के बाद मै कहता हू-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के अनुसार छूट रखकर, काई साम्प्रदायिक मामला हो ओर बीच मे रुकावट आ पडे तो बात अलग, वर्ना सुख-समाधे राजकोट-चातुर्मास के लिए काठियावाड की ओर विहार करने का भाव हे। रुकावट का कारण उपस्थित होने पर राजकोट-श्रीसघ को सूचना दी जाय तो वह उदारतापूर्वक मुझे छुट्टी दे दे।'

काठियावाड को लक्ष्य करके पूज्यश्री, युवाचार्यजी के साथ ब्यावर पधार गए। ब्यावर से पाली की ओर विहार हुआ। वेसाख कृष्णा ६ को पूज्यश्री १६ ठाणे से पाली पधार गये। एकादशी को वहा से विहार किया और साडेराव पधारे। यहा वह युवाचार्यजी आदि सत साथ रहे। इसके बाद युवाचार्यजी ने सादडी तथा मेवाड की ओर विहार किया ओर पूज्यश्री ने, प मुनि श्रीसिरेमलजी महाराज आदि ने ठा ९ से काठियावाड की ओर प्रस्थान किया।

गुजरात के प्रांगण में

गुजरात ओर काठियावाड की जेन जनता पूज्यश्री की ऐसी प्रतिक्षा कर रही थी जेसा पपीहा मेघ की प्रतीक्षा करता है। भले ही पूज्यश्री प्रथम ही वार इस प्रान्त में पदार्पण कर रहे थे मगर आपकी कीर्ति तो भारतवर्ष के कोने-कोने मे व्याप चुकी थी। आपके यश के सोरभ से कोन प्रात वचित रहा था ? आपके असाधारण तेज की प्रखर किरणावली सभी दिशाओ को आलोकित कर चुकी थी। यही कारण था कि ज्यो ही आपने गुजरात की सीमा मे प्रवेश किया कि उस प्रान्त के श्रद्धाशील ओर भावुक भक्त श्रावक आपके दर्शनो के लिए उमड पडे। यहा की सुवोध जनता को देखकर पूज्यश्री का भी विशाल हर्ष हुआ। सुयोग्य पात्र पाकर उपदेशक को हर्ष होना स्वाभाविक था। इस प्रदेश मे आकर पूज्यश्री ने जनता की सुविधा के लिए गुजराती भाषा मे उपदेश देना आरभ किया।

वैसाख शुक्ला १५ को आप पालनपुर पधारे। उधर अहमदाबाद की ओर से मुनिश्री बडे चादमलजी महाराज तथा मुनि श्रीगब्बूलालजी महाराज ठा ५ पधार गये। ज्येष्ठ कृष्णा ९ तक पालनपुर विराजमान रहकर मेहसाणा होते हुए आचार्य महाराज वीरमगाम पधारे।

काठियावाड़ में

पूज्यश्री जब वीरमगाम पधारे तो वहा की जनता मे अपूर्व उत्साह का वातावरण फैल गया। जनता ने बडी दूर तक सामने जाकर पूज्यश्री का स्वागत किया और चिरकाल से हृदय मे जो भावना रही हुई थी उसे सफल किया। सेठ हठी भाई सोभाग्यचद की धर्मशाला में पूज्यश्री का प्रवचन हुआ। मूर्तिपूजक जैन तथा जेनेतर भाई भी पर्याप्त सख्या मे उपस्थित हुए। अहमदाबाद के सेठ मणि भाई जैसिह भाई आदि प्रमुख गृहस्थ एव राजकोट के प्रतिनिधि भी दर्शनार्थ उपस्थित हुए।

ता ३१-५-३६ को वीरमगाम से विहार करके पूज्यश्री ता ४-६-३६ को सायकाल बढवाण शहर मे पधारे। शहर तथा छावनी की जनता विपुल-सख्या मे पूज्यश्री के स्वागतार्थ दूर तक सामने गई। दूसरे दिन महाजनवाडी मे विशाल जनसमूह के समक्ष पूज्यश्री का प्रवचन हुआ। पूज्यश्री ने परमात्मा की महिमा भावमयी वाणी मे समझाई और जीवनोपयोगी विषयो पर व्याख्यान फरमाया।

इस व्याख्यान में राजकोट-सघ तथा युवक-सङ्घ के प्रमुख व्यक्ति उपस्थित थे। मध्याह्न मे युवक-सङ्घ के प्रतिनिधि पूज्यश्री की सेवा मे आये। उस समय जैन समाज की परिस्थिति, उपदेश के विषय, प्रजा और राजा का अस्तित्व, युवको का कर्त्तव्य इत्यादि विषयो पर वार्त्तालाप हुआ। राजकोट मे होने वाली काठियावाड जैन-युवक-परिषद् के विषय मे भी चर्चा हुई।

बढवाण शहर मे दूसरा व्याख्यान फरमाया आप बढवाण कैट पधार गये। यहा राजकोट से आई बहुसख्यक जनता भी मौजूद भी। पूज्यश्री से अपने-अपने क्षेत्रो में पधारने की प्रार्थना करने के लिए वोटाद तथा लाठी आदि सङ्घो के प्रतिनिधि भी यहा उपस्थित हुए। रविवार को बढवाण छावनी मे उपदेश फरमाकर पूज्यश्री मूली, चोटीला आदि होते हुए ता १७-६-३६ को राजकोट पधार गये।

सासारिक स्वार्थो के आधार पर जगत् मे जितने भी वर्ग खडे है, पूज्यश्री उन सबसे ऊचे उठे हुए महापुरुष थे। वे किसी एक वर्ग के नही थे फिर भी, और शायद इसीलिए सभी वर्ग के थे। वे सभी को समान दृष्टि से देखते थे ओर इसलिए सभी वर्ग उन्हे समान श्रद्धा-भाव से झुकते थे। राजा-प्रजा, अमीर-गरीब आदि का कोई भी भेद-भाव उनके लिए नही था। अतएव इस विहार मे भी चोटीला आदि के साहवान ने भी पूज्यश्री के दर्शन ओर उपदेश-श्रवण का लाभ लिया। मूली के ठाकुर साहब श्री हरिश्चन्द्रसिहजी, कुमार सुरेन्द्रसिहजी तथा जयेन्द्रसिह जी एव वहा के दीवान साहब आदि ने उपदेश सुनकर अत्यन्त प्रसन्नता प्रकट की।

राजकोट-प्रवेश

ता १७-६-३६ के शुभ मुहूर्त्त मे पूज्यश्री ने राजकोट मे पदार्पण किया। राजकोट मे उस दिन असीम उल्लास का प्रसार था। वनवास की अवधि समाप्त करके रामचन्द्रजी जव पुन अयोध्या मे आये होगे ओर अयोध्यावासियो के हृदय मे जो आनन्द उमडा होगा, राजकोट के नर-नारियो को देखकर उसकी कल्पना साकार-सी हो उठती थी। जिधर देखो उधर चहल-पहल ही दृष्टिगोचर होती थी।

पूज्यश्री अमोलकऋषिजी म. का स्वर्गवास

ता ७. ८ २ ३६ को धूलिया मे पूज्यश्री अमोलकऋषि जी महाराज का स्वर्गवास हो गया। यह संवाद जब पूज्यश्री के पास पहुचा तो आपको अत्यन्त खेद हुआ। राजकोट श्रीसंघ मे शोक छा गया। उनकी स्मृति मे व्याख्यान बन्द रखा गया और चार 'लोगस्स' का ध्यान किया गया। उसी समय जीव-दया के निमित्त चन्दा इकट्ठा किया गया। पूज्यश्री अमोलकऋषिजी महाराज के स्वर्गवास से जैन-संघ मे जो कमी हुई है इसके लिए पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज ने व्याख्यान मे दु ख प्रकट किया।

महात्मा गांधी से भेंट

पूज्यश्री जब राजकोट मे विराजमान थे, तब २९ अक्टूबर को महात्मा गाधी भी कार्यवश राजकोट आये। पूज्यश्री की उपदेश शैली से, उत्कृष्ट और उदार विचारो तथा उनकी उच्च श्रेणी की संयमपरायणता से महात्माजी पहले ही परिचित थे। अहमदाबाद से रवाना होते समय ही आपको मालूम हो गया था कि पूज्यश्री राजकोट मे विराजमान है और उसी समय आपने पूज्यश्री से भेट करने का विचार भी कर लिया था।

महात्माजी का इधर-उधर निकलना बडा कठिन होता है। जनता को मालूम हो जाय कि गाधीजी अमुक समय अमुक जगह जाने वाले है तो वहा हजारो की भीड इकट्ठी हो जाती है। इसी भय से गाधीजी ने अपना इरादा किसी पर प्रकट नही किया। जिस दिन राजकोट से विदा होने वाले थे उस दिन सध्या से कुछ पहले ही आपने पूज्यश्री के पास आने का समय कहला दिया। तदनुसार गाधीजी आ पहुचे। जनता को पता नही चल सका अतएव बडी शान्ति से दोनो महापुरुष मिले।

गाधीजी ने कहा- जब मै अहमदाबाद से रवाना हुआ, तभी से आप से मिलने की इच्छा थी। मै राजकोट आऊँ और आप से बिना मिले चला जाऊँ, यह सभव ही नही था। मेरी इच्छा तो आपके उपदेश मे आने की थी मगर लोग व्याख्यान सुनने नही देते। क्या किया जाय ?

इस प्रकार प्रारम्भिक वार्त्तालाप के बाद पूज्यश्री ने फरमाया- 'देखिए, यह सामने घडी टॅगी है। इसकी दोनो सुइया चल रही है, यह बात तो सभी जानते है, पर सुइयो को चलाने वाली मशीनरी इसके भीतर है। उसे कितने लोग जानते है? असल चीज तो मशीनरी ही है।

गाधीजी ने सोम्य मुस्कराहट मे उत्तर दिया।

इसी प्रकार की कुछ और बातचीत के बाद गाधीजी रवाना हो गए।

आगामी चौमासे के लिए विनतियां

पूज्यश्री के चातुर्मास का सारे काठियावाड प्रान्त पर बहुत अधिक प्रभाव पडा। वहा की जनता ने पूज्यश्री के विषय मे जो प्रशसात्मक बाते सुनी थी, वे सब उन्हे हीनोक्तिया प्रतीत हुई। पूज्यश्री के अगाध सिद्धान्तज्ञान, द्रव्य, क्षेत्र-काल-भाव को परखने का अद्भुत कौशल, चमत्कारपूर्ण वक्तृत्व शैली, विशाल प्रकृतिपर्यवेक्षण आदि गुणो के कारण आपका प्रभाव इतना अधिक पडा कि सारा काठियावाड आपके समागम के लिए उत्कंठित हो उठा। राजकोट का यह चातुर्मास समाप्त भी न होने पाया था कि काठियावाड के भाई आगामी चातुर्मास की प्रार्थना करने लगे। मोरवी, पोरबदर और जामनगर के

श्रीसघो ने भी चौमासे के लिए प्रार्थना की। यह प्रार्थना अत्यन्त भावमय, आग्रहपूर्ण और उत्साहप्रेरक थी। उसमे कहा गया था-

'यह दास आपकी सेवा मे आज अपने हृदय की बहुत दिनों की अभिलाषा को प्रार्थना के रूप मे प्रकट कर रहा है। इस प्रयत्न मे धृष्टता और उद्दण्डता भी सभव है, लेकिन जिस प्रकार पुत्र अपने श्रद्धाभाजन पिता से कुछ चाहने की धृष्टता और उद्दण्डता करता है, मेरी धृष्टता और उद्दण्डता भी उसी सीमा की है, इसलिए सर्वथा क्षम्य है।'

'इस दास को उन स्वर्गीय पूज्यश्री १००८ श्री श्रीलालजी महाराज की सेवा का भी सुयोग प्राप्त है, जिनका जैन-ससार चिर ऋणी है। आचार्यश्री के गुणो, आचार्यश्री की प्रतिभा और शास्त्र-कुशलता से प्राय सभी लोग परिचित है। ऐसे आचार्यश्री की सेवा का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है। लेकिन दुर्भाग्यवश मेरी यह अभिलाषा- जो मै आपकी सेवा मे निवेदन करना चाहता हूँ- अपूर्ण ही रही। आचार्यश्री ने श्रीमान् को जब युवाचार्य-पद दिया और वे साम्प्रदायिक कार्य मे आशिक मुक्त हुए, उस समय मेरी भावना थी कि अब थोडे ही काल मे अनुनय-विनय-पूर्वक मै आचार्यश्री को जलगाव ले आऊँगा और आचार्यश्री की वृद्धावस्था मे अन्त तक सेवा का लाभ लूँगा। मै अपनी इस भावना को प्रकट भी नही कर सका और आचार्यश्री असमय मे ही स्वर्ग सिधार गए। '

'श्रीमान् का शरीर अब वृद्धावस्था को प्राप्त हुआ है। श्रीमान् ने सम्प्रदाय का कार्यभार तक विद्वान एव सुयोग्य युवाचार्य श्री १००८ श्रीगणेशीलालजी महाराज को सौप दिया है। साम्प्रदायिक कार्य से अब आप श्रीमान् बहुत कुछ निवृत्त है। वृद्धत्व भी पहले की तरह उग्र विहार करने से रोकता है। श्रीमान् का शरीर अब किसी एक स्थान पर रहकर शान्ति चाहता है। इसलिए मे निवेदन करता हू कि श्रीमान् जलगाव पधार पर सदा के लिए वही विराजे।

जलगाव मे श्रीमान् के विराजने से मेरे श्रावक भाइयो को भी सब प्रकार से सुभीता रहेगा। जलगाव भारत के मध्य मे है। इसलिए पजाब और मद्रास तथा कलकता और सिध के लोगो को समान दूर पडेगा।'

अन्त मे मेरा यही निवेदन है कि आप श्रीमान् वृद्ध हुए हे और मे भी वृद्ध हुआ हू। इसलिए आप जलगाव मे विराजकर मुझको तथा अन्य दक्षिण-निवासियो को अपनी सेवा का लाभ देने की कृपा कीजिए। आपके द्वारा उत्तर भारत का बहुत उपकार हुआ है, अब दक्षिण भारत को भी पावन कीजिए।'

रावसाहब की प्रार्थना लम्बी थी। उसके कतिपय अश ही यहा उद्धृत किये गये हे। इस प्रार्थना से उनकी मनोभावना ओर पूज्यश्री की सेवा की उत्कठा टपकी पडती है। आपने पूज्यश्री से साहित्योद्धार के कार्य के लिए भी प्रार्थना की थी ओर उसमे आवश्यक रकम लगाने का भी विचार प्रकट किया था।

यह सब प्रार्थनाए सुनकर पूज्यश्री ने ४-१०-३६ को व्याख्यान मे निम्नलिखित उत्तर फर्माया -

मेरे समक्ष मोरवी, पोरवदर ओर जामनगर के श्रीसघ की विनति आई है। एक विनति सेठ लक्ष्मणदासजी जलगाव वालो की हे। वह विनति विवेक से भरी हे कि जब मै काठियावाड छोड़ूँ तव जलगाव ठहरू ओर शास्त्रो का उद्धार करू। उनकी प्रार्थना की शक्ति ऐसी हे कि वह जिसे चाहे, अपनी

[illegible] सकती है। धनवान तो बहुत है किन्तु धन का सदुपयोग करने की उदारता रखने वाले कम [illegible], [illegible] ने शास्त्रीय कार्य के लिए जो उदारता दिखाई है वह कार्य चाहे कभी भी हो, और मैं अपने को [illegible] समर्थ भी नहीं मानता, लेकिन इन्होंने तो विनति करके पुण्य कमा ही लिया और अपने [illegible] उत्तराधिकारी को खड़ा करके बता दिया कि यह मेरा पुत्र केवल मेरे धन का उत्तराधिकारी नहीं है किन्तु मेरे धर्म का भी उत्तराधिकारी है। सेठजी ने तो इस तरह उदारता दिखाई। आपको भी इनका अनुमोदन तो करना ही चाहिए।

समाज की स्थिति उसके साहित्य से ही है। मैंने एक पुस्तक में पढ़ा था- हमारा और चाहे सब-कुछ चला जाए लेकिन यदि हमारा साहित्य बचा रहेगा तो हम सब-कुछ कर सकते हैं। वास्तव में जिस समाज का साहित्य अच्छा है वही समाज उन्नत हो सकता है। इसलिए आप अनुमोदन करके तो सुकृत उपार्जन कर ही सकते हैं।

इन सब विनतियों का उत्तर देने से पहले मैंने अपने संतों और खास-खास श्रावकों से परामर्श किया। सभी की यह सम्मति है कि अभी एक वर्ष और काठियावाड़ में विचरना ठीक होगा। यह सम्मति होने पर भी मुझे अपनी आत्मा से विचार करना है। आगामी चौमासा कहां किया जाय, यह तो अभी कह ही नहीं सकता, लेकिन एक वर्ष काठियावाड़ में ही विचरने की बात निश्चित रूप से कहना भी कठिन है। अतएव यही कहता हूं कि यदि मेरा एक वर्ष या कम-ज्यादा काठियावाड़ में रहना हुआ तो मैं दूसरी रीति से विहार करूंगा और यदि जाना हुआ तो सबकी प्रेमभरी प्रार्थना मेरे ध्यान में है और सेठ लक्ष्मणदासजी की प्रार्थना भी ध्यान में रहेगी। द्रव्य-क्षेत्र काल-भाव के अनुसार जैसा अवसर होगा, किया जायगा।

कार्तिकी पूर्णिमा के दिन बीकानेर-श्रीसंघ ने भी प्रार्थना की, किन्तु उसे भी कोई निश्चित उत्तर नहीं मिल सका।

सरदार पटेल का आगमन

ता. १३ अक्टूबर को तीन बजे सरदार वल्लभभाई पटेल पूज्यश्री के दर्शनार्थ पधारे। सरदार का आगमन सुनकर दूसरी जनता भी बड़ी संख्या में एकत्रित हो गई। उन दिनों गांधी-सप्ताह चल रहा था। अतएव आगत जनता को पूज्यश्री ने गांधी सप्ताह के संबंध में अपना संदेश दिया- महात्मा गांधी के मौखिक यशोगान मात्र से गांधी-सप्ताह नहीं मनाया जाता, परन्तु महात्माजी ने जिस खादी को अपनाकर देश को समृद्ध बनाने का सुन्दर उपाय खोज निकाला है और गरीबों के भरण-पोषण का द्वार खोल दिया है, उसे अपनाने से ही सच्चा गांधी-सप्ताह मनाया जा सकता है। ऐसा करने से महारंभ से बचाव होता है, इसलिए धर्म की भी आराधना होती है। इस प्रकार कहते हुए आपने देश-सेवा और धर्म-सेवा का समन्वय करते हुए संक्षिप्त किंतु सारगर्भित भाषण दिया।[1]

सरदार पटेल ने जनता को संबोधन करते हुए कहा- आप लोग धन्य हैं, [illegible] व्याख्यान सुनने को मिलते हैं। मगर यह सुनना तभी सफल है [illegible] में उतारा जाय। इत्यादि संक्षिप्त भाषण करने के पश्चात सरदार पटेल ने पूज्यश्री से विदाई ली।

---

[1] [illegible]

कार्तिक शुक्ला चतुर्थी के दिन पूज्यश्री की जयन्ती थी। अत्यन्त उत्साह और प्रगाढ श्रद्धा के साथ सघ ने जयन्ती-समारोह मनाया। उसी दिन श्रीसूयगडागसूत्र के प्रकाशन का निश्चय किया गया, जो पूज्यश्री की देखरेख मे प अम्बिकादत्तजी ने तैयार किया था। इसके निमित्त सुप्रसिद्ध दानवीर सेठ छगनमलजी मूथा बलुदा, श्रीचुन्नीलाल नागजी वोरा आदि सज्जनो ने अच्छी रकमे प्रदान कीं।

चातुर्मास के पश्चात्

राजकोट का चिरस्मरणीय चातुर्मास पूर्ण हुआ और पूज्यश्री ने मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपद् को विहार कर दिया। आप सदर मे पधारे। अष्टमी तक आप यहा विराजे। राजकोट दशाश्रीमाली बोर्डिंग के कार्यकर्त्ताओ के अनुरोध पर आपका एक व्याख्यान छात्रालय मे हुआ। पोरबन्दर के भाई लक्ष्मीदासजी ने ५००) रु तथा श्रीचुन्नीलाल नागजी वोरा ने १००) छात्रावास को भेट किये। पूज्यश्री ने काठियावाड निराश्रित बालाश्रम का भी निरीक्षण किया। बहुत-से अजेन विद्वान् पूज्यश्री के परिचय मे आये।

सदर से जब आपका विहार हुआ तो करीब १० हजार जनता आपको पहुचाने आई। विहार करके कोठारिया पधारे। राजकोट की जनता यहा भी हजारो की सख्या मे उपस्थित हुई। पूज्यश्री का व्याख्यान हुआ। राजकोट श्रीसघ ने सारे कोठारिया ग्राम को प्रीति-भोज दिया, यहा तक कि ग्राम के सब पशुओ को भी मिठाई आदि खिलाई गई। यहा वृक्षो की सघन छाया मे पूज्यश्री का व्याख्यान हुआ। राजकोट तथा अन्य स्थानो से आये यात्रियो की मोटरों, तागो आदि का ताता-सा लग गया। सारा मार्ग सवारियो से व्याप्त हो गया। जनता की भक्ति अपूर्व थी और विदाई की वेला वह और प्रबल हो उठी थी। कोठारिया के ठाकुर साहब ने व्याख्यान का लाभ उठाया और पूज्यश्री के प्रति अत्यन्त श्रद्धा प्रकट की।

कोठारिया से विहार करके मार्ग के ग्रामो मे एक-एक दिन रुकते हुए पूज्यश्री गोंडल पधारे। यहा सिर्फ एक सप्ताह ही रुकने का कार्यक्रम था मगर श्रीसघ के अनिवार्य आग्रह से बारह दिन रुकना पडा। सभी प्रकार की जनता ने आपके उपदेशो से लाभ उठाया। दो विशिष्ट व्याख्यान भी हुए।

गोडल से वीरपुर पधारे। यद्यपि आप दो ही दिन वीरपुर मे ठहरे मगर वीरपुर-नरेश ने इतने समय मे ही पूज्यश्री के समागम से अच्छा लाभ लिया। पूज्यश्री के उपदेश से आपके ऊपर गो-सेवा विषयक अच्छा प्रभाव पडा और वह प्रभाव सिर्फ हृदय की भावना मे ही नही रहा। उन्होने उसे कार्यान्वित भी किया।

वीरपुर से विहार कर एक दिन पीठडिया विराजकर जेतपुर पधार गए। जेतपुर मे पूज्यश्री का अभिनन्दन करने के लिए पाच हजार नर-नारी एकत्रित थे। गोडल सम्प्रदाय के मुनिश्री पुरुषोत्तमजी महाराज तथा मुनिश्री प्राणलालजी महाराज आदि साधु तथा साध्विया धारेश्वर तक आपके सामने पधारे। पूज्यश्री जेतपुर मे दो सप्ताह विराजे। पहले-पहल तो व्याख्यान मे जेनो की वहुतायत होती थी, धीरे-धीरे अजेनो की सख्या इतनी वढी कि जेनो से भी अधिक हो गई। शास्त्रीय विषयों के साथ पूज्यश्री कुरीति-निवारण पर भी सुन्दर प्रवचन करते थे। परिणाम यह हुआ कि वहुत-सी कुरीतिया समाप्त हो गईं। चार सज्जनो ने पत्नी सहित ब्रह्मचर्य-व्रत अगीकार किया। और भी अनेक व्रत-नियम ग्रहण किय

गए। मुनि श्री [illegible]लालजी म. और अन्य संतो एव सतियो ने खूब प्रेम-वात्सल्य प्रकट किया, जो [illegible] कहा जा सकता है। पूज्यश्री ने भी साधु-सम्मेलन और कान्फ्रेंस के नियमो के पालन, संघबल तथा [illegible] के कर्तव्य पर प्रकाश डाला। भावनगर-जनरल-कमेटी से लौटकर कान्फ्रेंस के अनेक सदस्य पूज्यश्री के दर्शनार्थ आये। साधु-सम्मेलन और कान्फ्रेंस के विषय मे वार्त्तालाप हुआ।

जेतपुर की एक बात का उल्लेख करना आवश्यक है। अस्पृश्य कहलाने वाले भाइयो के विषय मे पूज्यश्री का मन्तव्य पहले ही दिया जा चुका है। यहा अस्पृश्य भाई भी आपका उपदेश श्रवण करने आये। उन्हे व्याख्यान-पीठ से काफी दूर बिठलाया गया। पूज्यश्री को यह व्यवहार अन्यायपूर्ण प्रतीत हुआ। उन्होने श्रावको को प्रभावशाली शब्दो मे उपदेश दिया। नतीजा यह हुआ कि दूसरे दिन उन्हे आगे बैठने का स्थान दिया गया। अस्पृश्य जाति की महिलाएँ भी उपदेश-श्रवण के लिए उपस्थित हुई थी। पूज्यश्री के उपदेश से अस्पृश्य भाइयो और उनकी महिलाओ ने मास-मदिरा का त्याग किया।

जेतपुर मे अमृत वर्षा करके पूज्यश्री जेतलसर और धोराजी होते हुए ता. २०-१-३७ को मध्याह्न के समय जूनागढ पधारे। आपके साथ रावसाहब टाकरसी भाई घीया भी थे, जिन्होने काठियावाड प्रवास मे पूज्यश्री के साथ ही पैदल भ्रमण करने का निश्चय किया था और उसे पूरा भी किया।

यहा के भाइयो, बहिनो और बालको ने तीन मील तक सामने आकर पूज्यश्री का स्वागत किया। पूज्यश्री स्थानकवासी जैन-संघ के स्थान मे उतरे थे। उसी के विशाल मैदान मे व्याख्यान मण्डप बना था। पूज्यश्री का उपदेश सुनने के लिए जैनो के अतिरिक्त सैकडो हिन्दू-मुस्लिम भाई उपस्थित होते थे। अनेक विद्वानो ने भी लाभ उठाया। पूज्यश्री की सरल और हृदयस्पर्शी वाणी ने श्रोताओ का हृदय इतना आकर्षित कर लिया था कि प्रतिदिन श्रोताओ की संख्या बढती जाती थी। अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य, वीरता, आधुनिक विज्ञान और जडवाद, इन्द्रियो और आत्मा की भिन्नता, आत्मा की अनन्त शक्ति आदि गंभीर विषयो पर पूज्यश्री ने ऐसी सुगम और सुन्दर भाषा में विवेचन किया कि जनता मन्त्रमुग्ध-सी हो गई।

पूज्यश्री के उपदेश से प्रेरित होकर यहा के स्थानकवासी श्रीसंघ ने मृत्यु हो जाने पर रोने-पीटने की रिवाज मे सुधार करने का प्रस्ताव किया। काठियावाड स्थानकवासी जैन-समाज के संगठन और सुधार के लिए सात गृहस्थो की एक समिति बनाई गई। अन्य श्रीसंघो से भी इसी प्रकार की समितिया बनाने की अपील की गई।

मध्याह्न और रात्रि के समय पूज्यश्री धार्मिक विषयो पर चर्चा-वार्ता, शंका-समाधान किया करते थे। उस समय भी जैनेतर विद्वान् राज्याधिकारी और मुस्लिम भाई उपस्थित होते और पूज्यश्री की अनुभव भरी विवेचनाओ से लाभ उठाते थे। पूज्यश्री के उच्चतर तप-त्याग तथा विद्वत्ता पर जैन और जैनेतर समान भाव से मुग्ध थे। इस प्रकार जूनागढ मे धार्मिक भावना का एक नवीन [illegible] करके पूज्यश्री ने विहार किया। बहुसंख्यक जनता आपको विदाई देने आई।

[illegible], खडिया, बिलखा, मदरडा, वरावल, मागरोल, राजवाड आदि स्थानो मे [illegible] [illegible] को पोरबदर पधारे। बिलखा दरबार ने पूज्यश्री के उपदेश से प्रभावित होकर

रियासत मे हिंसाबन्दी का ऐलान किया।* मेदरडा मे पूज्यश्री आलिधा दरबार श्री अमरामोका के दरबारगढ मे ठहरे थे और भोजनशाला मे बनाये गये पडाल मे आपका उपदेश होता था। आसपास के करीब पच्चीस ग्रामो के लोग आपका उपदेश सुनने इकट्ठे होते थे। दरबार श्रीनाजावाला वगैरह भी उपदेश श्रवण करके हर्षित हुए। प्रजा, राज्याधिकारी, हिन्दू, मुसलमान आदि सभी भाई उपदेशो से लाभ उठाते थे। आपका एक व्याख्यान बालमदिर मे भी हुआ। सेठ नथुभाई मूलजी की अध्यक्षता मे पोरबन्दर का शिष्टमडल पूज्यश्री से पोरबदर पधारने की प्रार्थना करने आया। वेरावल मे पूज्यश्री का एक व्याख्यान हरिजन-निवास मे हुआ। अनेक हरिजनो ने मास-मदिरा का त्यागकर अपना जीवन सुधारा।

पोरबदर मे पूज्यश्री के स्वागत के लिए सैकडो स्त्री-पुरुष माधवपुर तक गए। पूज्यश्री जब ओडगर गाव मे पधारे तो लगभग ४०० व्यक्ति दर्शनार्थ उपस्थित हो गए। दूर-दूर से आपका भावमय स्वागत करने आये हुए भावुक नर-नारियो का समूह इकट्ठा था। वह दृश्य अतिशय भव्य और अपूर्व प्रतीत होता था।

पोरबन्दर रियासत के मत्री श्रीप्रतापसिहजी भी पूज्यश्री के दर्शन और स्वागत के लिए सामने गए। पूज्यश्री के पदार्पण के समय ऐसा लगता था मानो कोई बडा-सा धार्मिक मेला भरा हो! आपके उपदेश दशाश्रीमाली महाजनवाडी मे होते थे। यहा के दीवान श्रीत्रिभुवनदास जे राजा तथा राज्यरत्न सेठ भाणजी लवजी, राज्यरत्न सेठ मचरशाह हीरजी भाई वाडिया आदि की पूज्यश्री के प्रति प्रगाढ श्रद्धा थी। स्थानीय सघपति सेठ नथुभाई मूलजी ने आपका सार्वजनिक रूप से स्वागत किया। गोडल

---

* प्रतिलिपि इस प्रकार है –

मोहर — Naj Manzil,

बिलखा दरबार — Bilkha (Kathiawar)

बी स्टे ओ ओ न २७

ओफीस आर्डर

अमारा स्वस्थानमा दारु तथा शीकारनो प्रतिबध छे। अने ते माटे कायदाओ अस्तित्त्वमा छे।

अहीना प्रजाजनो अने अमारी विनती तथा आग्रहने मान आपी विद्वद्वर्य पूज्य स्वामी श्रीजवाहरलालजी महाराज पधारता ते ओश्रीना उपदेशनो लाभ प्रजाजनोए सपूर्ण रीते लीधेल छे। तेओश्रीना अही पधारवाना मानमा आज रोज एम ठराववामा आवे छे के अमारा राज्यमा दरशाल महावीर जयन्तीना रोज एकादशी तथा अमावस्या माफक अगतो पालवो। दुधवाला प्राणीओनी कायम माटे अमारी मजूरी सीवाय नीकाश करवी नही।

आ ओफीस ओर्डरनी खबर लागता वलगताओ तरफ आपनी अने एक नकल पूज्यपाद महाराज श्रीजवाहरलालजी महाराज तरफ सादर मोकलवी। बीलखा ता ५–२–१९३७

(Sd) Rawatvala

वीलखा दरवार

[illegible] ने भी पूज्यश्री के प्रति बहुत भक्ति प्रकट की। श्रीसंघ में उत्साह का पूर आ गया। [illegible] मानव-दया आदि विषयों पर आपके प्रभावशाली व्याख्यान हुए।

ता. [illegible] को पोरबंदर के राणासाहब श्रीनटवरसिंहजी, दीवान साहब, उच्च राज्याधिकारी तथा समस्त मान्य व्यक्ति पूज्यश्री के उपदेश में सम्मिलित हुए। पूज्यश्री के समागम से राणा साहब अत्यन्त प्रभावित हुए। आपने पूज्यश्री से यहीं चौमासा करने की प्रार्थना की और सब प्रकार के समुचित सहयोग का आश्वासन दिया। मगर पूज्यश्री उस प्रार्थना को स्वीकार न कर सके। यहां मांगरोल, राजकोट, जूनागढ़, अमरेली, मोरबी, जेतपुर आदि से आये हुए दर्शनार्थियों की भीड़ लगी। जो साधक पूज्यश्री की अमृत-वाणी का रसास्वादन कर चुके थे और जिन्होंने उनकी तप-तेज से विराजमान मुखमुद्रा की सुषमा का पान किया था। उन्हें पूज्यश्री के दर्शन और उपदेश-श्रवण की उत्कंठा व्यग्र कर देती थी। उस अलौकिक विभूति को विस्मरण कर देना सहज बात नहीं थी। ऐसे महान् संत का समागम उत्तम पुण्ययोग से मिलता है। जब वह सुलभ हो तो कौन अपने को धन्य नहीं बनाना चाहेगा?

श्री पट्टाभी सीतारामय्या का आगमन

डाक्टर पट्टाभी सीतारामय्या भारतीय राजनीतिक संग्राम के एक प्रसिद्ध लड़वैया हैं। विद्वान्, वाग्प्रवाद वक्ता और गंभीर विचारक हैं। जिन दिनों पूज्यश्री पोरबंदर में विराजमान थे। आप भी वहां आये। पूज्यश्री की पुण्य-प्रशस्ति कहां-कहां नहीं पहुंच चुकी थी? आपने पूज्यश्री की प्रशंसा सुनी तो दर्शनार्थ आये।

पूज्यश्री से मिलकर और वार्तालाप करके डाक्टर पट्टाभी अत्यन्त प्रसन्न हुए। खादी के विषय में आपने जनता के समक्ष संक्षिप्त भाषण भी किया।

पूज्यश्री की सेवा में मोरबी तथा जूनागढ़ से चातुर्मास की प्रार्थना करने के लिए प्रतिनिधि मंडल आये थे। आपने मोरबी वालों को यह वचन दिया था कि अवसर होता तो मोरबी स्पर्श किये बिना अन्य स्थान की चातुर्मास की प्रार्थना स्वीकार नहीं की जायगी। मगर तारीख ८-४-३७ के दिन पोरबंदर श्रीसंघ ने चौमासे के लिए बहुत जोरदार प्रार्थना की। वहां के दीवान साहब भी प्रार्थना में सम्मिलित थे। उन्होंने भी बहुत आग्रह किया। मगर पूज्यश्री मोरबी वालों को जो वचन दे चुके थे वह टल नहीं सकता था। अतएव उस समय चौमासे के विषय में कोई निर्णय न हो सका।

ता. १५-४-३७ को पोरबंदर की महारानी साहिबा पूज्यश्री का उपदेश सुनने आईं। आपने भी चौमासे के लिए विनति की।

मासकल्प विराजकर चैत्र शुक्ला ६ को पूज्यश्री ने जामनगर की ओर विहार किया। [illegible] नर-नारियों ने दुःख पूर्ण हृदय से पूज्यश्री को विदाई दी। विदाई का दृश्य बड़ा ही करुणापूर्ण था। महात्मा [illegible] की इस जन्मभूमि में इस महापुरुष के पदार्पण से बहुत उपकार हुआ।

चैत्री पूर्णिमा को पूज्यश्री भाणवड़ पधारे। वहां हरिजन भाइयों ने भी व्याख्यान का लाभ उठाया। [illegible] जनता ने उनके साथ प्रेममय व्यवहार किया। वहां से विहार कर जाम जोधपुर, [illegible], [illegible] [illegible] होते हुए वैशाख पूर्णिमा के दिन आप उपलेटा पधारे। पूज्यश्री के पधारने से [illegible] [illegible] [illegible] पधारने पर [illegible] जनता का पहुंचना रह जाता था। [illegible]

गया था। अत जीव-दया पर पूज्यश्री का सयत भाषण हुआ। वहा के दयाप्रेमी सज्जनों ने मछलियो के लिये पानी ओर गोओ के लिए घास की समुचित और शक्य व्यवस्था की। दोनो कार्यों के लिए अच्छा फण्ड इकट्ठा हो गया। जाम जोधपुर मे श्री गोवर्धनदास मोरारजी वकील की अध्यक्षता में एक डेपुटेशन पूज्यश्री से जामनगर पधारने की पार्थना करने के लिए आया। पूज्यश्री ने सुखे-समाधे जामनगर पहुचने का आश्वासन दिया। सेठ नथुभाई मूलजी तथा सेठ लक्ष्मीदास पीताम्बर के साथ सो आदमी आपके दर्शनार्थ आये। धाफा मे वहुत-से गरासी भी पूज्यश्री का उपदेश सुनने आये। उन्होंने मास ओर मदिरा का त्याग किया। सभी स्थानो पर पूज्यश्री का हार्दिक स्वागत किया गया।

उपलेटा से कालावाड के रास्ते जामनगर की ओर विहार हुआ। खण्टेरा गाव मे अचानक आपके दाए पेर मे वात का पकोप हो गया। तकलीफ इतनी बढ गई कि विहार होना कठिन हो गया। साथ के सत अपने कष्टो की चिन्ता न करके आपको डोली मे बिठलाकर जामनगर तक लाए।

जामनगर के श्रीसघ मे भी अपूर्व उत्साह था। नगर से दो मील दूर सामने जाकर श्रीसघ ने पूज्यश्री का स्वागत किया। उपचार करने से पैर का दर्द कम हो गया। जामनगर श्रीसघ ने चातुर्मास के लिए अत्यन्त आग्रह किया। अन्य स्थानो से भी प्रार्थनाएँ की गईं। किन्तु मोरबी फरसने का वचन दिया जा चुका था, अतएव किसी प्रकार का निर्णय न हो सका।

अव चातुर्मास का समय समीप आ चुका था। अतएव जल्दी मोरबी पहुचने की इच्छा से पूज्यश्री ने १६ जून को जामनगर से विहार कर दिया। अभी आप तीन मील ही चले थे कि पेर मे फिर दर्द बढ गया। फिर भी विहार जारी रहा। पाच मील पहुचते-पहुचते पैर सूज गया और चलना कठिन हो गया। साथ के सतो ने पूज्यश्री को डोली मे मोरबी तक ले चलने का विचार किया। किन्तु जामनगर श्रीसघ और अनुभवी श्रावको ने इस अवस्था मे आगे बढना वाछनीय न समझा। डाक्टर प्राणजीवनदास ने वतलाया कि देर तक इसी प्रकार रुकने से बीमारी बढ जाने का खतरा हे। अन्तत मोरबी श्रीसघ को तार दिया गया। वहा से धर्मवीर श्रीदुर्लभजी आदि पाच गृहस्थ आ पहुचे। वर्षा आरम्भ हो चुकी थी और मार्ग की कठिनाई बेहद बढ गई थी। सारी परिस्थिति पर विचार करने के बाद अन्त मे यही विचार किया गया कि इस चातुर्मास मे पूज्यश्री जामनगर ही विराजे।

यहा यह उल्लेख कर देना अनुचित न होगा कि पोरबदर-नरेश ने पूज्यश्री से पोरबदर मे चोमासा करने की अत्यन्त आग्रहपूर्ण विनति की थी। पूज्यश्री ने जब मोरबी-श्रीसघ को दिये वचन की बात कही तो नरेश ने मोरवी की स्वीकृति मगा लेने की कोशिश की। उन्होने समझा कि मोरबी का श्रीसघ इतनी वात तो मान ही जायगा। मगर मोरबी-सघ पूज्यश्री के दर्शन के लिए कितना व्यग्र और उत्कठित था। चिरकाल से पूज्यश्री के दर्शन की अभिलाषा-रूपी अकुर को वह प्राणो की तरह से-रहा था। अकुर जव फल देने को तेयार हुआ तो पोरबदर-नरेश ने उसे हस्तगत कर लेने की चेष्टा की। मोरवी सघ और तो सब कुछ त्याग सकता था मगर यह त्याग उसके लिए असभव बन गया। उसने स्वीकृति नही दी ओर पूज्यश्री ने अपना वचन निवाहने के लिए मोरवी की ओर प्रस्थान किया। किन्तु एकाएक पेर मे दर्द उठ आने से पूज्यश्री मोरवी न पहुच सके। इस आकस्मिक घटना से मोरवी-सघ को कितना सख्त आघात पहुचा होगा, इसकी कल्पना नही की जा सकती। जामनगर के महाराज के पिताश्री दाजी वापू साहव ने पहले ही चातुर्मास की आग्रहपूर्ण प्रार्थना की थी। मगर वह उस समय स्वीकृत नहीं हुई थी।

इस घटना से अनायास ही उनका मनोरथ पूर्ण हो गया। इस से उन्हे असीम आनन्द हुआ। एक ही घटना लोगो के भिन्न भावना के अनुसार कितना विभिन्न प्रभाव उत्पन्न करती है।

ता २१-६-३६ को नौ वजे पूज्यश्री डोली मे जामनगर पधार गए। सब से आगे संत पूज्यश्री को डोली मे उठाये जा रहे थे और पीछे सैकडो स्त्री-पुरुष चल रहे थे। उस समय नामदार जामसाहब विलायत मे थे। उनके पिता श्री दाजी बापू प्रातःकाल पाच मील चलकर पूज्यश्री के पास आये और धर्मोपदेश सुनकर प्रसन्न हुए।

पैर के दर्द कारण पूज्यश्री शिष्य मण्डली के साथ बेडी दरवाजे के बाहर दडिया बिल्डिंग में ठहरे थे। व्याख्यान फरमाने के लिए पण्डित मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज नगर मे पधारते थे और लोकागच्छ के उपाश्रय मे आपका मधुर व्याख्यान होता था। पूज्यश्री के स्वास्थ्य मे पैर-दर्द के अतिरिक्त और कोई खास खराबी नही थी। आषाढ शुक्ला तृतीया को पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज की जयन्ती होने के कारण आप शहर मे पधार गए। जयन्ती के दिन करीब सौ पोषधव्रत हुए। उसी दिन से आपने व्याख्यान फरमाना आरम्भ कर दिया।

पैंतालीसवां चातुर्मास

(स १९९४)

मोरवी न पहुच सकने के कारण स १९९४ का चातुर्मास पूज्यश्री ने जामनगर मे किया। पूज्यश्री के विराजने से सब मे खूब धर्म-जागृति हुई। बाहर के दर्शनार्थी भी बडी संख्या मे आने लगे। आषाढी चौमासी पक्खी के दिन ३५० पोषध हुए। तीन हजार नर-नारियो ने आपका व्याख्यान सुना। अत्यन्त उपकार हुआ।

ता १५-८-३७ को जाम साहब के पिताजी, महाराज श्रीजघानसिहजी साहब, खानबहादुर दीवान सा मेहरबानजी पेस्तनजी तथा राज्य के अन्याय अधिकारी और नगर के गण्य-मान्य प्रतिष्ठित लोग पूज्यश्री का उपदेश सुनने के लिए उपस्थित हुए। व्याख्यान-भवन मे तिल धरने की जगह न रही। जैनेतर भाई तथा मुसलमान सज्जन भी बडी संख्या मे आये थे। पूज्यश्री ने जब वचनामृत की वर्षा आरभ की तो श्रोताओ के श्रोत्र, अन्तःकरण और आत्मा मे शीतलता व्याप गई। सब पर बडा ही सुन्दर प्रभाव पडा।

ता २९-८-३७ को जन्माष्टमी थी। उस अवसर पर आपके लोकागच्छ के उपाश्रय मे 'कृष्ण जीवन' पर विशिष्ट व्याख्यान हुआ। व्याख्यान मे जाम साहब के पिताश्री, दीवान साहब, पोलिटिकल सेक्रेटरी राज-परिवार, राज्याधिकारी और अन्य जैन-जैनेतर श्रोता मौजूद थे। करीब अढाई हजार श्रोताओ की भीड थी। व्याख्यान-भवन खचाखच भरा था। फिर भी अत्यन्त शांति थी। तीन घंटे तक पूज्यश्री का व्याख्यान चलता रहा। श्रीकृष्णजी की जीवनी पर आपने बहुत सुन्दर विवेचन किया। जन्म से लेकर अन्तिम समय तक की उनकी प्रवृत्तियो का रहस्य खोलकर समझाया। ऐसा लगता था मानो पूज्यश्री ने कृष्ण-जीवनी का आपरेशन करके उसका अग-अग सामने रखकर दिखला दिया हो। पूज्यश्री के व्याख्यान के पश्चात् स्थानीय वकील श्रीगोवर्धनदास भाई ने पूज्यश्री के पवित्र जीवन का श्रोताओ को परिचय दिया। तत्पश्चात् पोलिटिकल सेक्रेटरी श्रीद्वारिकादास सरैया ने भी कृष्णजीवन पर भाषण

दिया। पूज्यश्री के उदार विचारो का तथा आकर्षक एव सारगर्भित व्याख्यान का जनता पर बहुत प्रभाव पडा।

सवत्सरी के दिन बहुत पात काल ही व्याख्यान-भवन भर गया। उस दिन मेघ जल-वर्षा कर रहे थे। कौन जाने वे पर्युषण महापर्व का स्वागत कर रहे थे या पूज्यश्री की अमृत-वर्षा की प्रतिस्पर्धा करने को तेयार हुए थे। कुछ भी हो, जनता को जल-वर्षा से सतोष नही हुआ ओर वे पूज्यश्री द्वारा होने वाली अमृत-वर्षा की लालसा से खिचे आए। पूज्यश्री ने धर्मप्राण लौकाशाह, पूज्यश्री लवजी स्वामी, पूज्यश्री धर्मदासजी महाराज, पूज्यश्री धर्मसिहजी महाराज आदि के जीवन पर प्रकाश डाला ओर उनके द्वारा हुए धर्मोद्धार का वर्णन किया। इसके पश्चात् काफ्रेस के निर्णयानुसार २० लोगस्स का ध्यान करने की याद दिलाई।

पर्युषण मे अनेक पकार के तप-त्याग हुए। पूज्यश्री ने छह उपवास स्वय किये। मुनिश्री फूलचन्दजी महाराज ने १८ का थोक किया। सोलह वर्षीय बालक बाबूलाल चुन्नीलाल नागनिया ने आठ उपवास किये। ता १०-९-३७ को दोनो का पारणा हुआ। जलगाव के सेठ लक्ष्मणदासजी ने और भीनासर (बीकानेर) के सेठ बहादुरमलजी तथा सेठ चम्पामलजी साहब बाठिया ने अपने-अपने स्थानो पर स्थिरवास करने की प्रार्थना की।

पूज्यश्री के पैर का दर्द अभी तक बिलकुल ठीक नही हुआ था। दर्शनार्थ श्रीहेमचन्द भाई मेहता, दीवान बहादुर सेठ मोतीलालजी मूथा, सेठ वर्धमानजी सा पीतलिया, उदयपुर के भूतपूर्व दीवान ए ए कोठारी श्रीबलवन्तसिहजी आदि प्रतिष्ठित सज्जन उपस्थित हुए थे। मारवाड, मेवाड, मालवा, गुजरात, काठियावाड, दक्षिण आदि सभी प्रान्तो से अनेक सद्गृहस्थ भी आये थे।

ता २६-९-३७ को पूज्यश्री का 'अहिंसा ओर समाजसेवा' विषय पर प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। इस दिन भी उच्च पदाधिकारी, वकील, डाक्टर तथा अन्य प्रतिष्ठित पुरुष उपस्थित थे।

ता ४-१०-३७ को श्री ठक्कर बापा तथा श्रीमती रामेश्वरी नेहरू ने पूज्यश्री के दर्शन किये। आधा घटे तक पूज्यश्री से हरिजनोद्धार सबधी वार्त्तालाप करके बहुत प्रसन्न हुए।

ता १४-१०-३७ को श्री हरखचद मूलजी एव ता १९-१०-३७ को श्रीरतनसी कानजी पुनातर वकील ने पत्नी सहित ब्रह्मचर्य-व्रत अगीकार किया।

गाधी-जयन्ती के दिन श्रीनारायणदास गाधी राजकोट से जामनगर आये थे। उन्हे ५५१) रु सार्वजनिक हित के लिए भेट किये गये। स्थानीय अस्पताल को, अपाहिजो को तथा घाटकोपर जीवदया खाते को भी आर्थिक सहायता प्रदान की गई।

समाज मे फैली हुई कुरीतिया जीवन को ऐसा गदला बनाये हुए है कि उनके कारण वास्तविक धार्मिकता पनपने नही पाती। जीवन की तह मे कुरीतिया चट्टान की भाति जमी है, जिन पर धर्म का अकुर वढ नही सकता। जब तक इस चट्टान को उखाड कर न फेक दिया जाय तब तक धर्म-वृद्धि के लिये किये जाने वाले प्रयत्न प्राय निरर्थक-से हो जाते हे। पूज्यश्री इस तथ्य को भली-भाति समझते थे ओर इसी कारण वे सर्वत्र कुरीतियो के विरुद्ध उपदेश दिया करते थे। मृत्यु के वाद रोने-पीटने की प्रथा घोर आर्त्तध्यान रूप हे। राजकोट-चातुर्मास से ही पूज्यश्री ने इसके विरुद्ध उपदेश देना आरभ कर

दिया था। राजकोट-संघ ने प्रस्ताव करके उसे बन्द भी कर दिया था। जेतपुर-संघ ने भी राजकोट का अनुकरण किया था। अब जामनगर-संघ ने भी इसी प्रकार का प्रस्ताव किया। इस प्रकार पूज्यश्री के उपदेश से यह रूढ़ि लगभग खत्म-सी हो गई।

ता १५-११-३७ को धर्मप्राण लोकाशाह की जयन्ती थी। पूज्यश्री ने श्रीलोकाशाह के जीवन पर प्रकाश डालते हुए निंदा, क्लेश आदि दुर्गुणो का त्याग करके एकता साधने का उपदेश दिया। करीब २०० पोषध उस दिन हुए।

सूर्य-किरण-चिकित्सा

सूर्य-किरण-चिकित्सा के विशेषज्ञ डाक्टर प्राणजीवन मेहता जामनगर के चीफ मेडिकल ऑफिसर थे। पूज्यश्री पर उनकी अगाध श्रद्धा-भक्ति हो गई थी। उन्होने अपने सूर्यगृह मे पूज्यश्री का उपचार आरम्भ किया। पूज्यश्री के विनीत संत आपको सूर्यगृह तक उठाकर ले जाते थे। दो मास तक उपचार चला। इस उपचार से पूज्यश्री को धीरे-धीरे कुछ लाभ हुआ।

यद्यपि आप साधारणतया चल-फिर सकते थे परन्तु लम्बे विहार का सामर्थ्य अभी तक नही आया था। परीक्षा करने के लिए पूज्यश्री ने एक दिन पाच-छह मील का भ्रमण किया। भ्रमण से कुछ दर्द मालूम हुआ। डाक्टर ने कुछ दिन और विश्राम कर इलाज कराने की सम्मति दी। अतएव चातुर्मास के पश्चात भी पूज्यश्री को कुछ दिन और ठहरना पडा।

बीकानेर-श्रीसंघ की ओर से सेठ वदनमलजी बाठिया और सेठ सतीदासजी तातेड ने पूज्यश्री से बीकानेर पधारने की विनति की। पूज्यश्री ने फरमाया- 'द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव की अनुकूलता का ध्यान रखते हुए मारवाड फरसने का भाव है।'

धीरे-धीरे पैर का दर्द कुछ ठीक हो गया और पूज्यश्री ने विहार करने का निश्चय कर लिया।

जवाहर-जयन्ती

कार्तिक शुक्ला ३ को पूज्यश्री का जन्म-दिवस था। उस दिन पं. र. मुनिश्री श्रीमलजी महाराज ने एक घंटे तक पूज्यश्री के जीवन पर बडे ही श्रद्धापूर्ण और सुन्दर शब्दो मे प्रकाश डाला। फिर डा. प्राणजीवन मेहता, श्रीगोवर्धन भाई वकील आदि भाइयो ने अपने उद्गार प्रकट किये।

जैन और जैनेतर भाइयो ने आपके गुणो की मुक्तकंठ से प्रशंसा की और चातुर्मास मे उपदेश देकर कृतार्थ करने के लिए आभार माना। जब सब लोग अपने-अपने उद्गार प्रकट कर चुके, तब पूज्यश्री ने फरमाया-

मैने इतना समय दक्षिण, मालवा, मेवाड और मारवाड मे बिताया। मै दिल्ली की तरफ भी गया था। मगर गुजरात-काठियावाड बाकी था। इस प्रदेश मे पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज पधारे थे और यहां की धर्म-श्रद्धा और सरलता के विषय मे मैने बहुत कुछ सुना था। अतएव यहां की जनता के लिए मुझे आकर्षण था।

पहले तो मेरा विचार बीकानेर की ओर जाने का था, मगर आप लोगो का आग्रह बहुत प्रबल [illegible] श्रीमदनी [illegible] आदि संतों ने भी मुझे इस ओर आने के लिए बहुत

उत्साहित किया। कहा-'जीवन का कोई भरोसा नही अत श्रावको का आग्रह पूरा करना चाहिए।
मै काठियावाड आ गया।

आप सबने अभी जो कहा है, उस पर विचार करते हुए मुझे बेठे-बेठे खयाल आ गया। उपनिषद् मे एक वाक्य है-

यानि अस्माक सुचरितानि तानि त्वया पालनीयानि।

गुरु, शिष्य से कहता है- हे शिष्य! मुझमे जो सुचरित्र हो, उसी की तू उपासना कर। मुझ मे जो बात प्रपच भरी जान पडे उसे तू मत ग्रहण करना।

यही बात मै तुमसे कहा हू। आप लोगो ने मेरी प्रशसा मे जो कुछ कहा है, वह मेरे लिए भार स्वरूप है। वास्तव मे मुझे भाषा का भी पूरा ज्ञान नही। गुरु चरणो के प्रताप से जो वस्तु मुझे विरासत मे मिली है, वही तुम्हे सुनाता हू और उसी के द्वारा सब के अन्त करण को सतुष्ट करने का प्रयत्न करता हू। वह बात सुनाने मे मुझे भूल होती हो या जिसे आपकी आत्मा स्वीकार न करे, उसे आप न मानो। जिसे आपकी आत्मा स्वीकार करे, उसी को मानो।

मै अपनी उम्र के ६२ वर्ष पूर्ण करके त्रेसठवे वर्ष में प्रवेश कर रहा हू। हालाकि मेरी इच्छा यह थी कि मै सदैव अपनी आत्मा के कल्याण करने मे ही लगा रहा हू। और किसी भी दूसरे प्रपच मे न पड़ू। मगर नही कहा जा सकता, वह सुअवसर कब प्राप्त होगा! फिर भी मेरी भावना तो यही रहती है। मेरे विषय मे आपने जो कुछ कहा है, उसे सुनकर मुझे अभिमान नही करना चाहिए। मुझे यह विचार करना चाहिए कि मुझमे जो गुण बतलाये गये है, वे अभी तक मुझ मे नही आए है ओर उन्हे प्राप्त करने का मुझे प्रयत्न करना है। परमात्मा से यही प्रार्थना हे कि मुझे सद्बुद्धि प्राप्त हो ओर सद्भावना की वृद्धि करके स्व-पर का कल्याण साधन करू।

मै तुम्हारे समक्ष जो कुछ कहता हू, उसे विचार कर ग्रहण करो। ठीक हो सो ग्रहण करो, ठीक न हो उसे छोड दो। मैने अपने गुरु के समीप जो प्राप्त किया है, उसका यथावत् पालन करने मे अभी तक मुझे पूर्णता प्राप्त नही हुई। मुझमे अभी तक बहुत-सी अपूर्णताए हे। जैसे हस मोती चुगता है वेसे आप मेरे कथन मे से अच्छी बाते चुन लो और ग्रहण करो। समुद्र मे लहरें तो बहुत आती हे मगर सभी लहरो मे मोती नही आते। लेकिन मोती चुगने वाला हस लहरो मे से मोती चुन ही लेता है।

डाक्टर प्राणजीवन मेहता

इस चातुर्मास मे तथा उससे पहले और बाद मे भी डाक्टर प्राणजीवन मेहता की पूज्यश्री के प्रति सराहनीय सेवा रही। डाक्टर मेहता सूर्य-किरण-चिकित्सा के विशेषज्ञ है ओर जामनगर रियासत के चीफ मेडिकल ऑफिसर हे। आपने तीव्र लगन और सच्चे सेवा-भाव से पूज्यश्री की चिकित्सा की। पूज्यश्री जब तक जामनगर के आसपास विचरते रहे, आप प्रतिदिन मोटरकार से सेवा मे पहुचते रहे और पूज्यश्री के स्वास्थ्य की देखभाल करते रहे। उन्ही के परिश्रम, लगन ओर सत सेवा से पूज्यश्री को स्वास्थ्य लाभ हुआ। उनके हृदय मे पूज्यश्री के प्रति असीम श्रद्धा ओर अपार भक्ति हे।

जामनगर से विहार

ता २८-१२-३७ का पूज्यश्री ने विहार करने का अतिम रूप से निश्चय कर लिया था। अत्यन्त सर्दी होन पर भी प्रात काल स ही सैकडा स्त्री-पुरुष लोकागच्छ के उपाश्रय मे एकत्र हो गए। उपाश्रय उचाउच भर गया। ९ बजे पूज्यश्री ने विहार किया। भक्तिपूर्ण हृदय से जनता ने दूर तक साथ चलकर विदाई दी। पूज्यश्री न विदाई-सन्देश देते हुए फर्माया-जैसे सुगन्धित फूल अपनी सुगन्ध अधिकाधिक फैलाता है उसी प्रकार मेन सात महीनो म जो उपदेश दिया है, उसकी सुगन्ध आप लोग फैलाना। बालको को जैसे व्यावहारिक शिक्षा दते हो उसी प्रकार धार्मिक शिक्षा भी अवश्य देना। उगते हुए बालक रूपी पौधा पर उपदेश रूपी जल अवश्य सीचना। अगर आप ऐसा करेगे और हम सुनेगे तो हमारा हृदय प्रफुल्ल होगा।

श्रीयुत मानसिह मगलजी मेहता ने कहा-श्रीमान् का किसी कारण मन दुखा हो या सघ की ओर स कोई त्रुटि हुई हो तो हम क्षमाप्रार्थी है। आप क्षमा के सागर है। क्षमा प्रदान कीजिए।

पूज्यश्री न प्रतिदिन घटा, आधा घटा, बीस मिनट, दस या पाच मिनट तक भगवान् महावीर के नाम का जाप करन का उपदेश दिया। बहुत-से भाइयो और बहिनो ने यह नियम अगीकार किया। तब पूज्यश्री न कहा- प्रस्थान के समय यही हमारा पाथेय है।'

पूज्यश्री उसी दिन हपा पहुच गए। वहा से विहार करके अलीपावाडा पहुचे। यहा ता २६-१२-३७ का जामनगर सघ स्पेशियल ट्रेन से दर्शनार्थ आया। विशाल मैदान मे पूज्यश्री का व्याख्यान हुआ। आपन राम-वनवास और भरत के दु ख का रोमाचकारी वर्णन किया। जामनगर के वकील गोवर्धनदासजी मुरारजी न सघ की ओर से हुई त्रुटियो के लिए क्षमायाचना की। वह दृश्य बडा ही करुण था। प्रत्येक व्यक्ति की आखो म आसू छलछला आए। पूज्यश्री अब जामनगर से दूर होते जा रहे थ और इस कारण जामनगर की जनता का विषाद उग्र से उग्रतर होता जा रहा था। अन्त मे पूज्यश्री न सत्य के विषय म एक कथा कहकर व्याख्यान समाप्त किया। जनता ने उस दिन प्रीतिभोज किया, जिसमे १५०० व्यक्ति सम्मिलित हुए। पूज्यश्री ने ध्रोल के रास्ते मोरबी की ओर विहार किया।

मोरबी में पदार्पण

माघ कृष्ण ६, ता २१-१-३८ को प्रात काल १० बजे पूज्यश्री मोरबी पधार गए। मोरबी की जनता पूज्यश्री के दर्शन के लिए चिरकाल से उत्कठित थी। श्रीदुर्लभजी भाई झवेरी तो कई वर्षो स अपनी जन्मभूमि म आपको लाने के लिए प्रयत्नशील थे। अचानक पैर-दर्द के कारण आपका चौमासा मोरबी म न हो सका और मोरबी को बडी निराशा हुई। मगर निराशा के बाद की आशा, उत्सुकता और प्रतीक्षा का आनन्द अद्भुत ही होता है।

जामनगर स विहार करके पूज्यश्री जब वालभा पधारे तब मोरबी के मुखिया श्रावक पूज्यश्री की सेवा म उपस्थित हुए और मोरबी पधारने की प्रार्थना की। उसके बाद तो मोरबी के धर्म प्रेमी लोगो का आगमन होता ही रहा। ता २०-१-३८ को चार बजे पूज्यश्री शनाला पधारे। उस समय से तो सैकडो लोग दर्शनार्थ आने लगे। रात को नौ बजे तक ताता लगा रहा। ता २१-१-३८ को बहुत सुबह ही लोगो ने शनाला की तरफ जाना आरम्भ कर दिया। शनैः कण्टा से निकलने वाले नरनारी के साथ

ही पूज्यश्री ने मोरबी की ओर प्रस्थान किया। मोरबी पहुचते-पहुचते भीड बेशुमार हो गई। स्वागत मे उत्साहपूर्वक भाग लिया। दृश्य बडा ही भावमय, सात्विक और सुन्दर रहा।

पूज्यश्री भोजनशाला के विशाल भवन मे उतरे। प्रात काल ८॥ बजे से ९ बजे तक मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज व्याख्यान बाचते ओर फिर १० बजे तक पूज्यश्री पीयूष-वर्षा करते। सारी भोजनशाला श्रोताओ से खचाखच भर जाती, फिर भी खूब शाति रहती। बाहर से अनेक सज्जन पूज्यश्री के दर्शनार्थ आए।

ता २३-१-३८ को कान्फ्रेस के अध्यक्ष श्री हेमचन्द भाई आए। उसी दिन धर्मवीर सेठ दुर्लभजी भाई ने तथा अन्य तीन सज्जनो ने सपत्नीक-व्रत अगीकार किया। चार जोडो के साथ ब्रह्मचर्य-व्रत ग्रहण करने की यह घटना मोरबी मे पहली ही थी। श्रीहेमचन्द भाई ने चारो सज्जनो को दुशाले ओर चारो बहिनो को साडिया भेंटकर उनका सत्कार किया। तत्पश्चात् पूज्यश्री ने ब्रह्मचर्य की महिमा पर सुन्दर और मननीय प्रवचन किया और बतलाया कि जो पूर्ण ब्रह्मचर्य नही पाल सकते उन्हे एक पत्नीव्रत का पालन अवश्य करना चाहिए। पूज्यश्री ने अपने जीवन मे ब्रह्मचर्य की अलौकिक महिमा का चमत्कार साक्षात् अनुभव किया था। यही कारण था कि आप अत्यन्त तेजस्वी वाणी मे, अधिकारपूर्ण शैली से ब्रह्मचर्य की महिमा का प्रतिपादन किया करते थे। आप अकसर फर्माया करते थे-'अखड ब्रह्मचारी अकेला सारे ब्रह्माण्ड को हिला सकता है।'

इस व्रतग्रहण के प्रसग पर श्रीदुर्लभजी भाई झवेरी ने विधि सस्थाओ को २५०४) रुपये का दान दिया।

मोरवी-नरेश का आगमन: जौहरी जी का दान

ता ५-१-३८ को प्रात काल मोरबी के नामदार महाराज साहब पूज्यश्री के दर्शनार्थ पधारे। महाराज साहब अभी बीमारी से उठे थे और आपका शरीर काफी कमजोर था, मगर पूज्यश्री का आगमन सुन अपने- आपको रोक नही सके। चिरकालीन आशा फलवती हुई। वे पूज्यश्री के दर्शन करके बडे प्रसन्न हुए। जब आप पधारे तो उस समय राज्याधिकारी और जनता विशाल सख्या मे उपस्थित थी। उस समय धर्मवीर श्रीदुर्लभजी भाई जौहरी ने कहा- महाराजा साहब मोरबी मे कलाभवन स्थापित करना चाहते हे। इस सबध मे बडोदा से पूछताछ भी की गई थी। इसी बीच महाराजा साहब की तबीयत खराब हो गई ओर वह योजना अभी तक यो ही रही है। अब महाराजा साहब स्वस्थ होकर यहा पधारे हे। हम उनके दीर्घजीवन के लिए प्रार्थना करते हे। कलाभवन के लिए मेने भाजपुर मे तथा उसके पीछे वाली अपनी दस हजार फुट जमीन पट्टे लिख दी है। अब उस जमीन मे भवन बनवाने के लिए पाँच हजार रुपया भी भेट करता हू। कुल मिलाकर आपने १५०००) रु का दान दिया।

रविवार के रोज मोरवी-श्रीसघ ने पूज्यश्री से चातुर्मास की प्रार्थना की। पूज्यश्री ने फरमाया- मेरे पूर्ववर्त्ती आचार्य पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज ने काठियावाड मे दो चातुर्मास किये थे। मे भी दो चातुर्मास कर चुका हू। फिर भी सङ्घ की विनति मेरे ध्यान मे हे।

वीकानेर का सङ्घ भी चातुर्मास की प्रार्थना करने आया। मगर साम्प्रदायिक नियम के अनुसार होलिका से पहले चातुर्मास का निर्णय नही हो सकता था।

पूज्यश्री उत्तमचन्द्रजी महाराज का मिलाप

दरियापुरी सम्प्रदाय के पूज्यश्री उत्तमचन्द्रजी महाराज वृद्ध होने पर भी आपसे मिलने के लिए पधारे। श्रीसङ्घ ने सामने जाकर उनका हार्दिक स्वागत किया। दोनो पूज्यो का सस्नेह समागम हर्ष बरसान वाला था। पूज्यश्री के संतो ने नवागत आचार्यश्री का स्वागत और सम्मान किया। दोनो आचार्य हार्दिक प्रेम के साथ मिले। श्रीसङ्घ के श्रेयस के लिए बातचीत की। साधु-सम्मेलन के प्रस्ताव के अनुसार दोनो के सम्मिलित व्याख्यान के लिए प्रार्थना की गई। किन्तु दरियापुरी सम्प्रदाय के आचार्यश्री ने फरमाया- 'हम सुनने आये है सुनाने के लिए नही आये। हमे पूज्यश्री से मारवाड, मालवा, मेवाड और दक्षिण आदि के अनुभव जानने है।'

प्रातःकाल और मध्याह्न मे दोनो पूज्य वार्तालाप करके स्नेह एव हर्ष की वृद्धि करते थे। श्रावक-समाज भी यह देखकर अपना साम्प्रदायिक दायरा भूल रहा था।

सोमवार के दिन मोरवी-महाराजा फिर उपदेश-श्रवण करने उपस्थित हुए। पौन घण्टा बैठने के बाद आपने पूज्यश्री से निवेदन किया- 'गत वर्ष का चौमासा आकस्मिक बीमारी के कारण यहा नही हो सका। इस वर्ष हमे अवश्य लाभ मिलना चाहिए। धर्म के प्रताप से अच्छे कार्य होगे।

सोमवार ता. १७-२-३८ को महाराजा साहब फिर तीसरी बार पधारे। इस बार आपने एक घंटे तक उपदेशामृत का पान किया। जैनशाला तथा कन्याशाला के बालको को आपने पारितोषिक वितरण किया।

मोरवी-नरेश जब चौथी बार उपदेश सुनने आये तो आप भी मोरवी-सङ्घ द्वारा चातुर्मास के लिए की गई पुनः प्रार्थना मे सम्मिलित हुए। मकान, उतारा आदि सभी प्रकार की राजकीय सहायता के लिए आपने सब का वचन दिया। समवसरण सरीखे इस अवर्णनीय प्रसग पर पूज्यश्री ने मोरवी महाराजा की धर्म-भावना और सत-समागम की अभिलाषा का अभिनदन किया, किन्तु सम्मेलन के नियमानुसार चातुर्मास के विषय मे कोई वचन नही दिया।

इधर मोरवी महाराजा तथा वहा की धर्मप्रिय जनता पूज्यश्री के चातुर्मास के लिए प्रयत्नशील थी और उधर अन्य स्थानो के विवेकशील श्रावक भी सावधान हो गए थे। चातुर्मास का समय सन्निकट आ रहा था और लोग सोचते थे कि पहले चेतने वाला जीतेगा। तदनुसार काठियावाड मे सर्वत्र चौमासा कराने की हलचल आरम्भ होने लगी। मगर गुजरात कब पीछे रहने वाला था? वहा के केन्द्रस्थान अहमदाबाद मे भी चातुर्मास-चर्चा आरभ हो गई। इसी सिलसिले मे ता. ३०-१-३८ के 'स्थानकवासी जैन' पत्र के सम्पादक ने एक टिप्पणी इस प्रकार लिखी-

परमपूज्य जैनाचार्य श्रीजवाहरलालजी महाराज सा. नी व्याख्यान श्रेणी काठियावाडनी भूमि ने पावनकर्ता बनी छे। एटलुज नहि पण काठियावाडनी जनताए शक्तिना प्रमाणमा स्वलक्ष्मीनो सद्व्यय करी पूज्यना गुरुदेवोनु उचित सन्मान कर्यु छे। स्थले-स्थले धर्मभक्ति, परोपकार, साहित्यविकास, [illegible] आदि गुणोनी वृद्धि थई छे अने ए रीत प्रस्तुत जैन मुनिओनो काठियावाडना प्रवास उभयने [illegible] नीवड्यो छे। जो के ते ओश्रीए हजु तो काठियावाडनो एक भाग स्पर्श्यो छे अने भावनगर [illegible] स्पर्शवानो बाकी छे। साथे-साथे पूज्यश्री शरीरिक स्थितिबराबर न होवा थी मारवाड

तरफना,स्वधर्मी उदार भक्तो पूज्यश्रीनु कायमी निवास पोताना प्रदेश मे तात्कालिक करावना इच्छे छे, ज्यारे बीजी तरफ काठियावाड नो जे भाग पूज्यश्री नी व्याख्यान वाणी थी वचित छे ते भाग ते ओ श्री नो लाभ लेवा उत्कट इच्छा धरावे छो।

आजे स्थानकवासी जैनो नु कार्य प्रदेश अने धर्म श्रद्धा केटलेक अशे उज्जड जेवा बनी गया छो, तेवे प्रसगे विद्वान् कार्यदक्ष मुनि महाराजना बोधनी अत्यन्त आवश्यकता छे। आथी अमे इच्छीए छीए के पूज्यश्री काठियावाड ना बीजा भागना घणा खरा क्षेत्रो स्पर्शी ल्ये, तो उने श्री ने अहमदाबाद पधारता घणो समय-यतीत थई जाय ते स्वाभाविक छे अते पछी चातुर्मास के कायमी निवास माटे मारवाड तरफ पडोची शयाम पण नही अने ए रीते स्थिति साधारण रीते विचारात्मक बने। आथी अमे अमदाबादनी धर्म प्रेमी जनता जेओ पूज्यश्री ने शेषकाल माटे पधारवानो आमन्त्रण मूकी चुकी छे, एटलु ज नही पण थोडा ज दिवसो या रूबरू आमन्त्रण करवा माटे एक डेपुटेशन मोरबी मुकामे जनार थे, ते ओ ने अमे विनत्ति करीर के पूज्यश्रीनुआ चातुर्मास पोताने आगणे (अमदाबाद) मा थाय एवा प्रयत्नो करे अने ए रीते अमदाबाद की समस्त स्था जेन प्रजा ने पूज्यश्री की अद्भुत वाणी नो लाभ मली शके। साथे-साथे अन्य स्थलो मा पण ते ओ श्री ठीक ठीक समय सुधी रोकाई ने अन्य क्षेत्रो मा धर्म ना सुदृढ सस्कारो रेडी शके।

अहमदाबाद का शिष्टमंडल

पूज्यश्री से अहमदाबाद मे चौमासा करने की विनति करने के लिए गुजरात के अन्य सघो का भी प्रतिनिधित्व करने वाला एक शिष्ट मण्डल ता ७-२-३८ को पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुआ। पूज्यश्री के व्याख्यान के अनन्तर श्रीदुर्लभजी भाई ने शिष्टमण्डल का स्वागत करते हुए कहा- अहमदाबाद गुजरात का पाटनगर हे और व्यापार का प्रधान केन्द्र है। किन्तु स्थानकवासी समाज के धर्मप्राण लोकाशाह द्वारा किये गये क्रियोद्दार का आदि स्थान होने के कारण उसे और भी अधिक गौरव प्राप्त हे। सूत्रो का टब्बा लिखने की प्रथा चलाने वाले पूज्यश्री धर्मसिहजी महाराज की दरियापुरी सम्प्रदाय का यह पवित्र धाम हे। श्रीधर्मदासजी, और श्रीलवजी ऋषि जेसे आद्य प्रचारको ने यही से अपना धर्म-प्रचार आरभ किया था ओर सेकडो वर्ष पहले पैदल विहार करके काश्मीर तक क्रियोद्धार की ज्योति जगाई थी। आज भी काश्मीर के मुख्य नगर जम्मू मे साधुओ के चातुर्मास होते हे। भक्तशिरोमणि नरसिह मेहता और दुनिया के सर्वश्रेष्ठ महापुरुष महात्मा गाधी की निवास भूमि तथा क्रियोद्धार की कर्मभूमि मे पूज्यश्री अवश्य नई प्रेरणा प्राप्त करेगे ओर उसका फल हमे मिलेगा।

इसके बाद एक एम डी डाक्टर का नीचे लिखा पत्र पढा-

भगवान् महावीर का पुनीत वेषधारी

पूज्यश्री म्हारा भावपूर्वक वदन करशो अने कहेशो के हजी म्हारा सत-समागमना अतराय ओछा थया नथी, आपश्रीनी वाणीनो सदुपदेश गले उतरे छे पण हजी रगोरगमा उतरतो नथी, त्या सुधी अमर आत्मानी प्रवृत्ति मूकी नाशवत देहनी प्रवृत्तिया रच्यापच्या रहीए छीए, क्षण भर श्मशान- वेराग्य सभी ससारिनी प्रवृत्ति रोकना अभिलाष थाप छे, पण बीजी क्षणे ससार-समुद्र मे क्या घसडाई जईए छीए तेनी खबर पण पडती नथी। धोलने पादर झाड नीचे छेल्लो उपदेश आयी हसते चेहरे महाराज साहेब

[illegible] अवलोकन करवाना प्रसंग आ वखते मल्यो, साधुदशामा शरीरने शु कष्ट होसे-होसे देवाय तेनो ख्याल आव्यो [illegible] ज्यादा पग चालीन विहार करवो, भिक्षा मांगी समयनु माप जालवी जे मले तेपर [illegible] आधार काइ वला न पण मले!

रहवाना स्थाननी अगवडता, टाढ, तडका, मच्छर विगेरे जीवातनो परिषह, कोई साधन नहि, [illegible] नहि आ तो देहनी परम अजब जीतज गणाय। देहने जे आटलो कावूमा राखीशके तेने देह तावेदार वन छे जे देहने फुलावी-फुलावी ने पोसे छे ते देहनो तावेदार छे, देह नोकर वने तो आत्मा मुक्त वन छे देह धणी थाम छे तो आत्मा एटलोज वधु वधाय छे।'

शिष्टमण्डल की ओर से श्रीचन्दूलाल अचरजलाल शाह ने पूज्यश्री से अहमदावाद पधारने की प्रार्थना की।

पूज्यश्री ने उत्तर दिया- नामदार मोरवी महाराज साहेव तथा मोरवी-सङ्घ की प्रार्थना होने पर भी शारीरिक कारणो से मै आगे वढने की इच्छा रखता हू। साम्प्रदायिक मर्यादानुसार होली से पहले चातुर्मास के विषय मे निर्णय नही किया जा सकता। फिर भी शेष काल के लिए अहमदावाद फरसने की भावना है।

शिष्ट-मडल के उत्सुक सदस्य पूज्यश्री के इस आश्वासन से अत्यन्त प्रसन्न हुए। अहमदावाद की जनता पूज्यश्री के चातुर्मास के लिए बहुत उत्कठित थी। इस उत्तर से सभी को सान्त्वना मिली।

पूज्यश्री बुधवार को मोरवी से विहार करना चाहते थे किन्तु मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज तथा श्रीमोतीलालजी महाराज की अस्वस्थता के कारण आपको कुछ दिन और ठहरना पडा। अन्तत ता २६-२-३८ के दिन तीन सतो को मोरवी छोडकर पूज्यश्री ने विहार कर दिया। सनाला, लजाई, टकारा होते हुए फाल्गुन शुक्ला सप्तमी को आप वाकानेर पधार गए। लजाई गाव मे मोरवी-नरेश आपके दर्शन और उपदेश-श्रवण के लिए पधारे और चौमासा मोरवी मे न हो सकने की सम्भावना पर खेद-खिन्न हुए। कुछ दिनो वाद पीछे रहे तीनो सन्त मुनिराज भी वाकानेर पधार गए।

जहा कही पूज्यश्री पधारे वहा व्याख्यान मे श्रोताओ की क्षेत्र की मर्यादा के अनुसार, अपूर्व भीड इकट्ठी होती थी। यह घटना तो एक सामान्य वात वन गई थी। तदनुसार वाकानेर मे भी वेशुमार भीड इकट्ठी होती थी। चातुर्मास का समय होने के कारण अहमदावाद और मोरवी आदि के अगुवा श्रावक उपस्थित थे। पूज्यश्री ने अहमदावाद फरसने की स्वीकृति पहले ही दे दी थी, इस वार सुख-समाधि चौमासा करने की भी स्वीकृति दे दी।

स्थानीय युवकमण्डली की प्रार्थना पर पूज्यश्री ने 'समाज-व्यवस्था' विषय पर विशिष्ट व्याख्यान दिया। [illegible] जनता भी बहुत वडी सख्या मे उपस्थित थी। ता १४-३-३८ को जब वाकानेर-नरेश पूज्यश्री का उपदेश सुनने के लिए अपने तीनो कुमारो और अमात्यवर्ग के साथ पधारे तो पूज्यश्री ने [illegible] पर डेढ घण्टे तक अपूर्व वाणी-धारा प्रवाहित की। उपदेश के वाद महाराज [illegible] ने अपनी प्रसन्नता प्रकट की और इस [illegible] की प्राप्ति के लिए अपने-आपको धन्य समझा।

फिर राजकोट में

कुछ दिनो तक बाकानेर विराजकर पूज्यश्री राजकोट पधारे। पूज्यश्री की महिमा से यहा की जनता भली-भाति परिचित हो चुकी थी, अतएव जब आप दोबारा राजकोट पधारे तो नगर मे उत्साह और उल्लास फैल गया। आपके साथ इस बार बोटाद सम्प्रदाय के वयोवृद्ध मुनि माणिकचन्द्रजी महाराज तथा दरियापुरी सम्प्रदाय के वयोवृद्ध आचार्य पूज्यश्री उत्तमचन्द्रजी महाराज भी थे। तीनो महापुरुषो का राजकोट मे आना ऐसा मालूम होता था मानो, ज्ञान, दर्शन और चारित्र रूप रत्न-त्रय का आगमन हुआ हो! तीनो महानुभाव जब व्याख्यान मडप मे विराजते तो अपूर्व शोभा मालूम होती, जेसे त्रिवेणी-सगम हुआ हो! प्रतापी पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज के व्याख्यानामृत का पान करने के लिए जनता आतुर रहती थी। जैन और जैनेतर सभी लाभ उठाते थे। पर्युषण पर्व जैसा आनन्द-मङ्गल छा रहा था। पूज्यश्री के दर्शन और उपदेश का लाभ उठाने के लिए कोठारिया एव सरदारगढ के दरबार तथा मोरबी-नरेश के भाई कुमार रणजीतसिह जी दो बार आए और दोनो बार प्रसन्नता प्रकट करके विदा हुए।

मोरबी-महाराजा की प्रार्थना

बाकानेर मे अहमदाबाद के शिष्टमडल को अहमदाबाद-चातुर्मास का आश्वासन पूज्यश्री दे चुके थे। आपने अपने विहार का क्रम भी इसी के अुनसार निश्चित किया था। जब पूज्यश्री राजकोट पधारे तो डाक्टर प्राणजीवन मेहता पूज्यश्री के दर्शनार्थ आये। जब उन्हे पता चला कि पूज्यश्री अहमदाबाद पधार रहे हे तो उन्होने मनसुखभाई को एक पत्र लिखा। ता २६ को मोरबी के महाराजा साहब तथा अन्य प्रतिष्ठित सज्जन मोरबी मे चौमासा करने की प्रार्थना के लिए आ पहुचे। पूज्यश्री ने कहा-'मै अहमदाबाद श्रीसङ्घ को आश्वासन दे चुका हूँ। अब सङ्घ की बात मानने के लिए बाध्य हूँ। उसके बाद मोरबी-नरेश ने जो विनति की उसकी विगत इस प्रकार है -

ता २६-३-३८ शनिवार को सायकाल, साढे चार बजे नामदार मोरबी-नरेश पूज्यश्री के दर्शन के लिए दशाश्रीमाली वणिक् भोजनशाला के भवन मे पधारे। उनके साथ मोरबी स्टेट रेलवे के ट्राफिक सुपरिंटेडेट श्रीमनसुखलाल भाई भी थे। मोटर से उतरते ही वे वणिक दवाखाने के हाल मे प्रविष्ट हुए। श्रीसङ्घ के अग्रगण्य व्यक्तियो ने आपका स्वागत किया। तदनन्तर आप पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुए। पूज्यश्री से सुख-साता की पृच्छा करने के पश्चात् नरेश ने कहा-मनसुखलाल ने मुझे कहा कि 'पूज्यश्री का यह चातुर्मास अहमदाबाद मे होगा ओर चातुर्मास समाप्त होने के पश्चात् पूज्यश्री मोरबी पधारेगे। तब मेने कहा- 'यह केसे हो सकता है ? अहमदाबाद जाने के बाद मोरबी पधारना तो उलटी गङ्गा वहाना है। मारवाड जाते समय तो अहमदाबाद बीच मे आएगा ही। अतएव यह चातुर्मास पूरा करके मारवाड जाते समय अहमदाबाद जाना सीधी-सादी बात हे।'

मेने मनसुखभाई से फिर कहा- 'तुमने भी खूब कही! मालूम होता हे, तुमने काल को जीत लिया हे। मुझे भी भीम की तरह घोषणा करनी पडेगी कि मेने काल को जीत लिया हे! आगामी चातुर्मास तक कितनी घटनाए घटेगी, इसका क्या पता हे!' अतएव इस वर्ष का चौमासा तो मोरवी मे ही होना चाहिए। ऐसी सीधी-सादी बात मे किसी को हठ नही होना चाहिए। अहमदाबाद के भाई हठ करे तो आप कह दीजिएगा कि मारवी के ठाकुर आये ओर मुझे ले गए मे क्या करता।'

दूसरी बात यह है कि अहमदाबाद जाने के बाद फिर मोरवी बुलाने का कष्ट मै आपको नही देना चाहता। इसलिए मेरी प्रार्थना है कि यह आगामी चातुर्मास मोरवी मे कीजिए और फिर अहमदाबाद जाइए। अहमदाबाद के भाइयो का कहलाने आदि के विषय मे जो कुछ करना हो वह अपनी रीति के अनुसार कर लीजिए।

इसके बाद उठते समय मोरवी-महाराज ने हँसते हुए कहा- 'अब मै मानता हूँ कि अगला चातुर्मास मोरवी मे ही होगा। मै तो पक्का करके जाता हूँ। इस पर भी आप नही आएँगे तो मानूगा कि आपके विचार ढीले है।

महाराजा साहब ने मागलिक सुना और पूज्यश्री ने फरमाया-'आपकी विनति मेरे ध्यान मे रहेगी और यथावसर देखा जायगा।'

पूज्यश्री उलझन में

सासारिक वैभव को निस्सार समझकर तज देने वाले अकिचन अनगार भिक्षु की दृष्टि मे राजा-रक समान है। सिर्फ राजा होने के कारण कोई पुरुष उनके लिए महिमाशाली नही बन जाता और रक होने के कारण उपेक्षणीय नही हो जाता। फिर भी श्रद्धालु की श्रद्धा और भक्त का भक्तिभाव उन्हे आकर्षित किये बिना नही रहता। मोरवी-नरेश ने जिस अविचल विश्वास के साथ मोरवी मे चौमासा करने की बात कही उसने पूज्यश्री के मृदु अन्त करण को स्पर्श कर लिया। मोरवी-नरेश की भावना को ठेस पहुचाना पूज्यश्री को उचित प्रतीत नही हुआ।

मोरवी की ओर आकर्षित होने का दूसरा कारण भी हो सकता है। आपके पूर्ववर्ती आचार्य पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज ने मोरवी मे चौमासा किया था और आप उन्हीं के चरण-चिह्नो पर चलना चाहते थे। मोरवी-चातुर्मास का पहले निश्चय हो गया था, लेकिन आकस्मिक बीमारी के कारण उसमें परिवर्तन हो गया। यह परिवर्त्तन यद्यपि मोरवी-सघ की स्वीकृति से ही किया गया था तथापि मोरवी-सघ का वह परिवर्त्तन अभीष्ट नही था। इस परिवर्त्तन के कारण उसे दु ख हुआ था। पूज्यश्री यह अनुभव करते थे और इस कारण इस सघ के प्रति उनके हृदय मे सहानुभूति थी।

तीसरा कारण धार्मिक प्रचार सबधी हो सकता है। पूज्यश्री की क्षत्रिय वश के प्रति गौरवपूर्ण भावना थी। आपके यह विचार ध्यान देने योग्य है-

एक समय ऐसा था जब क्षत्रियो ने अपने धर्म का पालन करके ससार को इस प्रकार प्रकाशित कर दिया था जैसे सूर्य अपने प्रखर प्रताप से विश्व को आलोकित कर देता है। बडे-बडे राजो-महाराजो ने और ऋषि-महर्षियो ने धर्म के तेज को धारण करके पाप के अधकार को विलीन-सा कर दिया था। उन तेजस्वी पुरुषो की जीवन-कथा आज भी हमे उनके पदानुसरण के लिए प्रेरित और उत्साहित करती है। प्राचीन काल मे क्षत्रियो ने अपना क्षात्र-धर्म किस प्रकार दिखाया था, इसका उल्लेख इतिहास के पन्नो पर सुवर्ण-वर्णो मे हुआ है।'

धर्म को प्रकाशित करने के लिए वीर क्षत्रियो ने अपने प्राण न्योछावर कर दिये।'

'बहादुर क्षत्रिय जिस प्रकार अन्य अन्यायो को सहन नही कर सकते थे, उसी प्रकार रमणियो के आर्त्तनाद को भी सुन नही सकते थे। वे स्त्रियो की गोद मे पडा रहना पसन्द नही करते थे।'

'मित्रो! तुम-ओसवाल भाई-पहले वीर क्षत्रिय थे। तुम्हारे विचारो मे बनियापन बाद मे आया है। अपने इन बनियापन के विचारो को हृदय से निकाल दो। तुम्हारे शरीर मे शुद्ध क्षत्रिय-रक्त दोड रहा है। उठो! तुम्हारे उठे बिना बेचारा रक्त भी क्या करेगा ?'

मोरबी-महाराजा साधारण क्षत्रिय नही, एक नरेश है। उन्हे धर्म का प्रतिबोध देने से प्रजा का विशेष कल्याण होने की सभावना थी।

सभवत इन्ही सब कारणो से पूज्यश्री का झुकाव मोरबी की ओर हो गया तो क्या आश्चर्य हे ? मगर यह सब होते हुए भी अहमदाबाद-सघ के प्रति वे वचनबद्ध हो चुके थे। कुछ भी हो मगर साधु अपने विचार से मुकर नही सकते। जब तक अहमदाबाद के श्रीसङ्घ की स्वीकृति न मिल जाय तब तक पूज्यश्री अहमदाबाद जाने के लिए बाध्य है। पूज्यश्री के सामने यही उलझन उपस्थित थी।

चातुर्मास के निश्चय में परिवर्त्तन

पूज्यश्री ने समाज के अनुभवी और प्रमुख व्यक्तियो से परामर्श किया। यह निर्णय हुआ कि अहमदाबाद श्रीसङ्घ के सामने सारी परिस्थिति रख दी जाय और उसी से अतिम निर्णय करा लिया जाय। इस निश्चय के अनुसार सात सज्ज्नो का एक डेप्यूटेशन अहमदाबाद गया, जिसमे धर्मवीर श्रीदुर्लभजी भाई, रा ब मणिलाल वनमालीदास, राय साहब ठाकरसी भाई आदि मोरबी और राजकोट के प्रमुख व्यक्ति थे।

मुलाकात के वाद ९॥ बजे सारगपुर दोलतखाने के उपाश्रय में एक आम सभा का आयोजन किया गया। उस समय श्रीकालीदास जसकरण झवेरी ने कहा -

दो वर्षों से पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज काठियावाड की भूमि को पवित्र कर रहे है। मुझे एक अवसर पर रतलाम जाना पडा। वहा पूज्यश्री के व्याख्यान सुनकर मुझे लगा कि आपके व्याख्यान समय के अनुसार ओर उच्च कोटि के है। इसलिए मैने उस समय उन्हे गुजरात पधारने की प्रार्थना की। काठियावाडी भाइयो के आग्रह से उन्होने राजकोट तथा जामनगर मे चातुर्मास किये। इसी बीच मुझे समाचार मिला कि पूज्यश्री इसके बाद बाकानेर पधार जायेगे। उस समय मेने सोचा-उनका सीधे पधार जाना ठीक नही है। वे गुजरात मे पधारे तो ठीक रहे। यह बात मैने दूसरे भाइयो से कही। उसके बाद डाक्टर पी पी सेठ के सभापतित्व मे एक सभा की गई और चौमासा कराने का निश्चय किया गया। तत्पश्चात् १५-१७ भाइयो का डेप्यूटेशन मोरबी गया। उसमे मारवाडी भाई भी सम्मिलित थे। हम मोरबी मे पूज्यश्री से मिले, विनति की। उसमे श्रीदुर्लभजी भाई ने भी हमारी तरफ से वकालत की। अहमदाबाद को मुनि श्रीधर्मसिहजी का धाम बताया। उससे पूज्यश्री का मन आकृष्ट हुआ। उसके बाद हम फिर बाकानेर गए। उस समय भी राजकोट तथा वाकानेर के भाइयो ने हमे आश्वासन दिया। श्रीचिमनलाल भाई वकील और श्रीगुलावचद सधाणी वही रुक गए और निश्चय करके आए कि पूज्यश्री जेठ मे यहाँ पधारेगे और चातुर्मास यही करेगे। हम लोग उतरे तथा व्यवस्था सवन्धी बातो का विचार करने लगे। पूज्यश्री राजकोट

न ग न । मा - ड का मोरवी-नरेश पधार और उन्होन अपन नगर मे चातुर्मास करने की पूज्यश्री से प्रार्थना का। इस सबध म विशेष विवरण हम डेप्यूटेशन के सभ्यो से सुनने को मिलेगा।'

तत्पश्चात राजकोट के श्रीमणिलाल भाई ने राजकोट मे डाक्टर प्राणजीवन मेहता से आने से पहले तमाम हकीकत सुनाई। इसके बाद कहा–स्व पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज को मोरवी के स्वर्गस्थ नरेश श्री सर वाघजी साहब न पधारने की विनति की थी। उन्ही की प्रेरणा से मोरवी मे स्थानकवासी जैनधर्म हुइ था। राजा लोगो की विनति का हमारे सामने यह पहला उदाहरण है। इससे धर्म का लाभ होने की आशा है। अहमदाबाद मारवाड के रास्ते मे आता है, इसलिए उसे तो लाभ मिलेगा ही। इसलिए मै आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप मोरवी की विनति मजूर करे।

इसके बाद श्रीदुर्लभजी भाई ने कहा- अहमदाबाद लोकाशाह की जन्मभूमि है। क्रियोद्धार का महाधाम है। स्था सङ्घ की गद्दी का गाव है। स्था जैन धर्म पालने वाली पाच लाख जनता अहमदाबाद को ऋणी है। हम मोरवी सङ्घ की तरफ से नम्रतापूर्वक प्रार्थना करते है कि मोरवी मे चातुर्मास के लिए स्वीकृति दीजिए। भविष्य का अधिकार कायम रखते हुए मोरबी चातुर्मास से अपनी महासभा का भी हित होने की सम्भावना है। धर्म का भी उद्योत होगा। इन सारी हित-दृष्टियो को सामने रखकर मै आपसे कहता हूं।

इसके बाद श्री पी एन शाह ने आचार्यश्री की प्रशसा तथा डेप्यूटेशन का सत्कार करते हुए विनति मान लेने की अपील की।

इसके बाद श्रीत्रिकमलाल वकील ने कहा- मेरा आग्रह था कि पूज्यश्री का चातुर्मास यहाँ हो तो अच्छा। किन्तु सारी बात जानने के बाद मे अपना विचार मोरबी के लिए प्रकट करता हू। जो विरुद्ध हो व यहाँ बोल सकते है। किसी ने विरुद्ध मत नही बताया। मोरवी की विनति मजूर हो गई।

डेप्यूटेशन ने वापिस आकर अहमदाबार श्रीसङ्घ का निर्णय बताया। तदनुसार पूज्यश्री ने मोरबी चातुर्मास का निश्चय कर लिया।

जैन गुरुकुल पाठशाला की स्थापना

पूज्यश्री समाज मे विद्या के प्रचार पर बहुत जोर दिया करते थे। उन्ही के सदुपदेश से चातुर्मास के समय राजकोट मे 'श्रीमहावीर जैन ज्ञानोदय सोसाइटी' को पुनर्जीवन दिया गया था और धार्मिक साहित्य के प्रचार के निमित्त ८०००) रुपये एकत्र हो गये थे।

इस बार श्रीमहावीर जयन्ती के दिन गुजरात-काठियावाड मे धार्मिक शिक्षा के प्रचार के हेतु जैन गुरुकुल-पाठशाला स्थापित करने का निश्चय हुआ। उत्साह के साथ धनवानो ने धनदान दिया। निश्चय के बाद ही अठारह हजार रुपये इकट्ठे हो गए। महिला-समाज ने भी अच्छी रकम देकर अपना सहयोग प्रदर्शित कर दिया।

के अनुसार सातो भाइयो को पोशाक भेट की गई। श्रीचुन्नीलाल भाई नागजी वोरा की धर्मपती श्रीसाकली बहिन ने सबको चादी के प्याले भेट किए।

वेसाख कृष्णा द्वितीया के दिन पूज्यश्री ने सरधार की ओर विहार किया। वहा से बिछिया होते हुए वोटाद पधारे। वोटाद मे काठियावाड जैन गुरुकुल पाठशाला की व्यवस्था के लिए एक मीटिग हुई, जिसमे काठियावाड के मुख्य-मुख्य सभी स्थलो के प्रमुख सज्जन एकत्र हुए। उसी समय लीबडी-श्रीसघ ने पूज्यश्री से लीबडी पधारने की प्रार्थना की। किन्तु समयाभाव के कारण वह स्वीकृत न हो सकी। यहा एक बात रह गई हे और वह यह कि पूज्यश्री जब वोटाद पधार रहे थे उस समय सापला-ठाकुर साहव के गद्दी पर विराजने का सस्कार हो रहा था। इस प्रसग पर बहुत-से ठाकुर साहब वहा उपस्थित हुए थे। जब उन्हे पता चला कि पूज्यश्री उधर होकर पधार रहे है तो कई ठाकुर साहब पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुए ओर अत्यन्त आग्रह के साथ आपको सापला ले गए। वहा पूज्यश्री का महत्त्वपूर्ण व्याख्यान हुआ। वीरपुर के दरबार भी वहा उपस्थित थे। इन सब नरेशो का भक्तिभाव देखकर पूज्यश्री बहुत प्रभावित हुए।

पूज्यश्री जब चोटीला होते हुए थान पधारे तो थाने के थानेदार ने पत्नी सहित ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया और अनेक त्याग-प्रत्याख्यान हुए। छोटे-छोटे ग्रामो मे भी पूज्यश्री के प्रति परम भक्ति थी। यहा बहुत से जागीरदार आपके दर्शनार्थ आए और आपके उपदेश से कइयो ने बीडी-शराब तथा पर-स्त्री-गमन का त्याग किया।

इस प्रकार जगह-जगह धर्मोपदेश करते हुए तथा अनेक जनो को सन्मार्ग पर लगाते हुए पूज्यश्री आषाढ कृष्णा १४ को मोरबी पधारे। कुछ दिनो तक आप नगर के बाहर विराजमान रहे। आषाढ शुक्ला ३ के दिन आपने नगर मे प्रवेश किया। मोरबी की जनता ने चातुर्मास के लिए बहुत परिश्रम किया था। अनेक कठिनाइयो के बाद अपने श्रम को सार्थक होते देख वहा की जनता हर्ष-विभोर हो रही थी। राजा और प्रजा मे सर्वत्र उत्साह ही उत्साह नजर आता था। अत्यन्त भक्ति, श्रद्धा ओर सद्भावना के साथ जनता ने पूज्यश्री का स्वागत किया। मोरबी-नरेश भी पधारे बहुत देर तक वार्त्तालाप की।

छयालीसवां चातुर्मास

(स १९९५)

श्री श्वे स्थानकवासी जैन काफ्रेस की जन्म-भूमि मोरबी मे पूज्यश्री ने स १९९५ का चातुर्मास किया। पूज्यश्री दशाश्रीमाली-भोजनशाला के विशाल भवन मे ठहरे थे, किन्तु व्याख्यान मे इतनी भीड इकट्ठी होती थी कि वह भवन भी तग पडता था। अतएव विशेष अवसरो पर अन्य स्थानो मे व्याख्यान का आयोजन करना पडता था।

पूज्यश्री के चातुर्मास के सबध मे वहा के नगरसेठ श्रीयुत वीकमचद अमृतलाल ने समाचार पत्रो मे निम्नलिखित विज्ञप्ति प्रकाशित की-

मोरबीनुं आदर्श चातुर्मास

प्रसिद्ध पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराजना काठियावाड प्रवासे अनेते ओश्रीना समयोचित व्याख्यानोए श्रोताओ पर आदर्श असर करी छे काठियावाडी मुनिओ माटे मार्गदर्शन, सिवन करेल छे जेने पोषवा-पालवानु काम हवे कालजी थी तो ए वी वहेली तके पागलशे।

धार्मिक सामाजिक अने व्यावहारिक विटवनाओनो तेओश्रीए सचोट, अहिंसक उपायो सूचवी छ्या छे. कग छ वनो अक नटला लाभ लुटी लवा जाइए, वृद्ध शरीरे पण सिंहनी पेठे गर्जना करता – आचार्यश्रीना अमृतवाणी हृदय सोसरी उतरी जाय छे, दर्शने आववा माटे सवार अने साझनी गाडी ... छ रातनी गाडामा मुश्कली रहे छे. मोरवी श्रीसंघे स्वागत समितिओ नीमी छे।

राजकोट की स्पेशियल ट्रेन

ता ५-८-३८ का राजकोट से लगभग ८०० व्यक्ति स्पेशियल ट्रेन द्वारा पूज्यश्री के दर्शनार्थ आए। मोरवी के प्रमुख श्रावक तथा वोर्डिंग के विद्यार्थी उनके स्वागत के लिए स्टेशन पर उपस्थित थे। सभी आगत और स्वागतार्थ उपस्थित जनसमूह नगरकीर्तन करता हुआ पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुआ। वह दृश्य कितना सुहावना, कितना भव्य, कितना प्रेरक और मनोहर रहा होगा! इस दृश्य के निर्माता और दर्शक दोनो ही धन्य है और इन सबसे बढकर धन्य है पूज्यश्री की उज्ज्वल आत्मा, जिसने जनता मे एक नवीन स्फूर्ति भर दी!

राजकोट-संघ ने मोरवी-संघ को प्रीतिभोज दिया। ४००० व्यक्ति सम्मिलित हुए।

व्याख्यान में महाराजा और राजकुमार

मोरवी-महाराजा साहब पूज्यश्री का उपदेश सुनने अकसर आते ही रहते थे। उन्होने जिस उत्साह के साथ चातुर्मास करवाया था उसी उत्साह के साथ सेवा का भी लाभ ले रहे थे। इस बार वे सायला के ठाकुर साहब और वीरपुर के पाटवी राजकुमार को साथ लाए। मोरवी के पाटवी राजकुमार तथा अन्य राजकुमार व्याख्यान मे आते रहते थे। इनके अतिरिक्त राजकीय अतिथि, अधिकारी और अन्य राजवर्गीय सज्जन भी पूज्यश्री के उपदेशो से लाभ उठाते थे। वीरपुर-नरेश तो व्याख्यान सुनने के निमित्त ही आए थे। यह सब दृश्य देखकर जैनधर्म के प्राचीन क्षत्रिय युग की याद आ जाती थी, जब भारतवर्ष के राजा-महाराजा और सम्राट् अनगारो के चरणो मे मस्तक झुकाकर धर्म की विजय-घोषणा करते थे।

जोधपुर बीकानेर, ब्यावर, अजमेर, राजनादगाव आदि दूर-दूर के प्रदेशो से भी सैकडो दर्शनार्थी आते थे। राजकोट-गुरुकुल के विद्यार्थी भी पूज्यश्री का अशीर्वाद लेने आये थे। संघ की ओर से सब के स्वागत की समुचित व्यवस्था थी। मोरवी की जैन-जैनेतर प्रजा स्वागत मे समान रूप से भाग लेती थी। भोजनशाला का भवन व्याख्यान के लिए छोटा पडने लगा तो दरबारगढ मे व्याख्यान की व्यवस्था की गई। मकान और मोटरो आदि की सुविधाएं राज्य की ओर से प्रस्तुत थीं।

जूए की बन्दी

इस व्याख्यान का फल यह हुआ कि मोरबी के नामदार महाराजा साहब ने कानून बना कर जूए को बद कर दिया। जूए के ठेके से हजारो रुपया वार्षिक की आमदनी रियासत को होती थी। महाराजा साहब ने इस हानि की परवाह न की ओर प्रजा के नैतिक विकास को ही अधिक मूल्यवान् माना।

डा. प्राणजीवन मेहता का सत्कार

आश्विन कृष्णा ११-१२ को हितेच्छु श्रावक मडल, रतलाम का सत्तरहवा वार्षिक अधिवेशन हुआ। समाज के पमुख व्यक्ति इस अधिवेशन मे सम्मिलित हुए। अधिवेशन मे दूसरी कार्रवाई के साथ जामनगर मे पूज्यश्री की सेवा करने वाले धर्म-प्रेमी डा प्राणजीवन मेहता को अभिनन्दन पत्र अर्पित किया गया।

डाक्टर साहब ने अभिनन्दन पत्र के उत्तर मे कहा-'मण्डल ने अभिनन्दन पत्र देने का निश्चय किया और श्रीदुर्लभजी भाई ने मुझे स्वीकार करने के लिए बाध्य किया। किन्तु मेरे खयाल से ऐसा कुछ भी करने की आवश्यकता नही थी। पूज्यश्री के पैर मे दर्द हुआ। यह उनके असातावेदनीय का उदय था, लेकिन मुझे तो प्रत्येक दृष्टि से लाभ ही हुआ। पाश्चात्य सस्कारो के दोष से जैनधर्म और साधुओ पर आस्था बहुत कम थी। पूज्यश्री के सम्पर्क मे आने पर, सेवा के लाभ के साथ ही मुझे तत्त्व-ज्ञान की खूबिया समझने का अवसर मिला। मैने जो उपचार किया सो अपना कर्त्तव्य-पालन किया है। इसमे विशेषता कुछ नही थी। फिर भी आपने मेरी सेवा की कद्र की, इसके लिए मै आपका आभार मानता हू।'

इसके पश्चात् आपने तत्त्व-ज्ञान सबधी अपना एक लेख पढा जो मननीय ओर रोचक था।

आश्विन शुक्ला १,२,३ को काठियावाड के दशा श्रीमाली भाइयो का जातीय सम्मेलन हुआ। समस्त काठियावाड के सैकडो प्रतिनिधि उपस्थित हुए। सभी ने पूज्यश्री के दर्शन किये, उपदेश सुना ओर जाति सुधार का सन्मार्ग पूज्यश्री के ससर्ग से प्राप्त किया।

श्रीफूलचद्रजी महाराज ने मासखमण तय किया।

मोरबी मे भावनगर, बीकानेर तथा बगडी के सङ्घ पूज्यश्री से अपने-अपने क्षेत्रो में पधारने की प्रार्थना करने आये।

कार्तिक शुक्ला ४ पूज्यश्री का जन्म दिन था। उस दिन मोरबी के नामदार महाराजा ने अपनी आन्तरिक प्रेरणा से दीन-हीन, गरीब लोगो को भोजन-दान दिया। पशुओ को भी उस दिन विशिष्ट भोजन दिया गया। इस प्रकार महाराजा साहब ने पूज्यश्री के प्रति अपनी आन्तरिक भक्ति का परिचय दिया।

मोरवी-चातुर्मास पूर्ण होने पर पूज्यश्री ने बाकानेर की ओर विहार किया। मोरवी-नरेश तथा हजारों नर-नारियो ने दु खपूर्ण हृदय से आपको विदाई दी। हजारो आदमी आपको दूर तक पहुँचाने गए। वहुत-से लोग तो सनाला ग्राम तक भी साथ-साथ गए। विदाई का दृश्य अत्यन्त करुणापूर्ण ओर भावमय था।

वीच के ग्रामो को पवित्र करते हुए आप बाकानेर पधारे। यहाँ राजकोट पधारने की प्रार्थना करने सघ आया। तदनुसार आप राजकोट पधारे।

काठियावाड़ जैन गुरुकुल में

गनकोट श्रीसघ की पार्थना से ता ८-१२-३८ को पूज्यश्री ने अपने चरणकमलो से गुरुकुल का पवित्र किया। राजकोट की भावुक जनता विशाल सख्या मे उपस्थित थी। शहर से दूर होने पर भी लगभग ८०० नर-नारी गुरुकुल भूमि मे उपस्थित थे। सबसे पहले गुरुकुल के एक छात्र ने मधुर कण्ठ म प्रार्थना-गायन किया। इसके बाद गुरुकुल के प्रिसिपल श्रीअमृतलाल सवचन्द गोपाणी एम ए ने प्रासगिक प्रवचन किया। आपने कहा-

जिस महापुरुष के समयोचित उपदेश से प्रेरित होकर समाज नेताओ ने गुरुकुल जैसी सर्वोच्च सस्था स्थापित की हे उस महापुरुष के चरणकमलो से हमारी इस सस्था को पवित्र होते देखकर हमें अपूर्व हर्ष हो रहा है। प्रत्येक धर्म ने अपनी सस्कृति, तद्गत मोलिकतत्त्व-ज्ञान ओर क्रिया-काण्ड को सुरक्षित रखने के अनेक प्रकार से अनेक प्रयत्न किए है। अब भी सभी प्रयत्न कर रहे है। सस्कृति को जीवित रखन के प्रवल साधनो मे साहित्य, सघ ओर सस्था, इन तीनो का मुख्य स्थान हे। प्राचीन समय म नालन्दा विश्व-विद्यालय तथा तक्षशिला विश्व-विद्यालय ने अपनी सस्कृति फेलाने मे प्रवल सहयोग किया था। एतिहासिक सत्य खोजा जाय तो 'सस्था' नाम का अग उपर्युक्त तीन अगो मे भी विशेष वल वाला है, एसा हम कह सकते हे। क्योंकि इस मे सेवा का आदर्श सुरक्षित रखने के लिए शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास के सुन्दर समन्वय की ओर व्यवहार्य ध्यान देने का पूरा अवकाश है। एसी सस्था म स आदर्श से ओत-प्रोत एक विभूति निकल जाय तो भी कम नही हे। ऐसी एक ही विभूति गुरुकुल जैसी अनेक आदर्श सस्थाए स्थान-स्थान पर स्थापित कर देगी। वह अनेक विभूतियो को उत्पन्न करगी तथा जगदुद्धारक, अहिसा-प्रधान, तथा विश्व-सस्कृति वनने योग्य जेन सस्कृति का सामाज्य स्थापित कर देगी।

वक्तव्य के वाद विद्दवर्य मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज ने ब्रह्मचारियो की सस्कृत, अर्धमागधी तथा धार्मिक विषयो की परीक्षा ली। चार महीने के अल्प समय मे गुरुकुल की प्रगति देखकर हर्ष प्रकट किया। पूज्यश्री के आदेश से मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज ने प्रसगोचित प्रवचन करते हुए छात्रो को उपयोगी उपदेश दिया। उस समय गुरुकुल को करीव ४००) रु भेट मिला।

दो उल्लेखनीय प्रसंग

राजकोट मे यो तो वहुत-से भाई पूज्यश्री के समागम के लिए आते-जाते रहते थे, मगर इनम दो प्रसग यहा उल्लेखनीय है-

एक दिन अहमदाबाद के करोडपति-परिवार की सदस्या श्रीमती मृदुला वेन पूज्यश्री की सेवा म उपस्थित हुई। पूज्यश्री की उदार ओर प्रभावक वाणी सुनकर उन्होने कहा-

साधुओ के विषय मे मेरा अनुभव वडा कटुक है। मेरा खयाल था कि साधु हमारे समाज के कलक है। पर आज पूज्यश्री का उपदेश सुनकर मुझे लगा कि मेरा खयाल भ्रमपूर्ण था। सब धान बाइस पसेरी नही होते- सभी साधु एक सरीखे नही है। मेरा भ्रम दूर करने के लिए मे पूज्य महाराज की बडी आभारी हू।

एक बोहरा सज्ञन थे-गाधीजी के कट्टर भक्त। गाधीजी के प्रति उन्हे प्रगाढ श्रद्धा थी। गाधीजी के सिवाय उनकी निगाह मे और कोई सत पुरुष था ही नही। अचानक वे अपने एक मित्र से मिलने के लिए राजकोट आये। उनके यह मित्र पूज्यश्री के व्याख्यानो का अमृत चख चुके थे। प्राय प्रतिदिन वे व्याख्यान सुनने आते थे। उन्होने अपने मेहमान मित्र से पूज्यश्री की प्रशसा की ओर व्याख्यान सुनने के लिए कहा।

मगर वह गाधी-अद्वैतवादी थे। कहने लगे- मै गाधीजी को छोड और किसी को साधु ही नही समझता और न किसी का उपदेश सुनता हू। मुझे माफ करो। मै नही चलूगा।

मेजबान अपने मेहमान का रुख देखकर, उनकी उचित व्यवस्था करके व्याख्यान सुनने चले गये। लौटकर जब घर पहुचे तो व्याख्यान की अपने मेहमान के सामने तारीफ करने लगे। मगर कट्टर मेहमान का मन आकर्षित नही हुआ।

दूसरे दिन भी बहुत कुछ कहने-सुनने पर भी वह बोहरा भाई व्याख्यान सुनने नही गया। लेकिन मेजबान से नहीं रहा गया। उसे एक दिन का नागा सहन नही हुआ। वह फिर अकेला व्याख्यान सुनने चला गया।

जब वह अकेला घर पर रह गया तो उसने सोचा- मै थोडे ही दिनो के लिए अपने मित्र से मिलने आया हू। मेरा मित्र मुझे छोडकर व्याख्यान सुनने चला जाता है। वह मुझे छोड सकता है मगर व्याख्यान सुनना नही छोड सकता! ऐसी क्या विशेषता है उस साधु मे ?

इस प्रकार विचारो की तरगो मे बोहरा भाई डूबता-उतराता था कि उसी समय व्याख्यान सुनकर उसका मित्र लोट आया। आज उसका मित्र और दिनो से अधिक प्रसन्न था। आते ही बोला-भाई, मेने तुम्हे मनाया था कि चलो व्याख्यान सुनने, मगर तुम नही माने। चलते तो आखे खुल जाती! कितना सरस और सुन्दर उपदेश था! कल तुम्हे साथ ले चले बिना नही रहूगा।

आखिर तीसरे दिन वह बोहरा सज्ञन अपने मित्र के साथ व्याख्यान सुनने को राजी हो गए। पूज्यश्री के उपदेश मे पहुचे। पूज्यश्री की दिल हिला देने वाली मार्मिक वाणी सुनकर गाधी-भक्त बोहरा चकित रह गया। बडी उत्कठा के साथ उसने सम्पूर्ण उपदेश सुना। जब पूज्यश्री का उपदेश समाप्त हो चुका और अन्य श्रोता उठ-उठकर जाने लगे तो वह पूज्यश्री के समीप आया। कहने लगा-महाराज, मे वडे घाटे मे आ गया! तीन दिन से राजकोट मे हू और आज ही उपदेश सुन पाया। दो दिन मेरे वृथा चले गये। अव इस घाटे की पूर्ति करनी होगी। और वह इस तरह कि आप मेरे साथ भावनगर पधारे। भावनगर की जनता को आपका लाभ दिलवाऊगा और मै भी लाभ लूगा। तव मेरा घाटा पूरा होगा।

पूज्यश्री ने हल्की-सी मुस्कराहट के साथ कहा-'मोका होगा तो देखा जायगा।'

बोहरा–मौका ही मोका हे। कल प्रात काल की ट्रेन से मे जा रहा हू। आप भी साथ ही पधारिये। वहा अपकी समस्त आवश्यक व्यवस्था हो जायगी। किसी किस्म का खयाल मत कीजिए।

पास मे खडे एक श्रावक भाई वीच मे ही वोले- महाराज तो ट्रेन मे नही चलते, पेदल ही भ्रमण करते हे।

बोहरा भाई इस प्रकार चकित रह गये, मानो किसी ने ठग लिया हो। फिर भी उन्होंने कहा- न फिर पधारना सही। मगर एक बार भावनगर पधारना ही पडेगा। आप सरीखे संत बडे भाग्य से मिलते है। मैं अच्छी तकदीर लेकर आया था कि आप के दर्शन हो गए।

पूज्यश्री ने फिर वही उत्तर दिया। बोहरा सज्जन भक्ति से गद्‌गद् होकर लौट गये।

राजकोट का सत्याग्रह

पूज्यश्री जब राजकोट पधारे तब राजकोट का प्रसिद्ध सत्याग्रह चालू था। प्रजा मे असतोष की ज्वाला धधक रही थी। सैकडो प्रजा-सेवक जेल मे ठूसे जा रहे थे और उन्हे नाना पकार के कष्ट दिये जा रहे थे। राजा और प्रजा का यह सघर्ष घोर अशान्ति का कारण बना हुआ था।

पूज्यश्री ने उस समय शान्त और त्यागमय जीवन बिताने की प्रेरणा की। साथ ही जब तक सत्याग्रही भाई-बहिन कारावास की यातनाएँ भोग रहे है तब तक पक्वान्न खाने, ब्रह्मचर्य पालने आदि के नियम रखने का अनुरोध किया। जैन और जैनेतर जनता ने आपके उपदेश को आदेश की तरह पालन किया।

पूज्यश्री ने सत्याग्रह के अवसर पर जनता को यह उपदेश दिया है, इसे पढ-सुनकर साधारण बुद्धि वाला कह सकता है कि इन बातो से सत्याग्रह का क्या सबध है ? मगर सूक्ष्म बुद्धि से विचार किया जाय तो इनका भारी महत्त्व मालूम होगा। गाधीजी ने राजनीतिक क्षेत्र मे सर्व प्रथम अहिसा का प्रयोग किया मगर पूज्यश्री का तो समग्र जीवन की साधना अहिसा ही थी। उन्होने अहिंसा की बारीकियो को, अहिसा के तेज को अहिंसा की अमोघता को न केवल समझा ही था, वरन् अपने प्रत्येक व्यवहार मे उसका अनुसरण किया था। यही कारण है कि वे अहिसात्मक उपायो द्वारा ही सत्याग्रह मे योग देने की प्रेरणा कर सकते थे। उन्होने तप-त्याग का जो उपदेश दिया है, इससे सत्याग्रह के प्रति सहयोग की भावना और सत्याग्रहियो के साथ सहानुभूति की भावना उत्पन्न होती है। और प्रजा की सहानुभूति ही सत्याग्रही का सर्वोत्तम बल है। इस प्रकार प्रजा के मानस मे सत्याग्रह और सत्याग्रहियो के प्रति सहानुभूति उत्पन्न करके पूज्यश्री ने सत्याग्रहियो को बलवान् और सत्याग्रह को प्रभावशाली बनाने का महत्त्वपूर्ण, कौशलपूर्ण, और व्यवहार्य उपाय खोज निकाला है। पूज्यश्री ने यह उपदेश देकर साधारण राजनीतिज्ञ की बुद्धि से भी परे की राजनीतिपटुता प्रकट की है। यह उनकी प्रतिभाशालिता का प्रमाण है।

सत्याग्रह के विषय मे पूज्यश्री की धारणा मनन करने योग्य है। आपके यह शब्द कितने प्रभावशाली है -

सत्याग्रह के बल की तुलना कोई बल नही कर सकता। इस बल के सामने, मनुष्यशक्ति तो क्या देवशक्ति भी हार मान जाती है। कामदेव श्रावक पर देवता ने अपनी सारी शक्ति का प्रयोग किया, लेकिन कामदेव ने अपनी रक्षा के लिए किसी अन्य शक्ति का आश्रय न लेकर केवल सत्योपासना के बल से ही उस देवता की सारी शक्ति को परास्त कर दिया।

प्रह्लाद के जीवन का इतिहास भी सत्याग्रह का महत्त्वपूर्ण दृष्टान्त है। प्रह्लाद ने अपने पिता की अनुचित आज्ञा नहीं मानी। इस कारण उस पर कितने ही अत्याचार किये गए, लेकिन अन्त मे सत्याग्रह के सामने हिरण्यकशिपु को ही परास्त होना पड़ा।

भगवान् महावीर ने सत्याग्रह का प्रयोग पहले अपने ऊपर कर लिया था। इससे वे चण्ड कौशिक ऐसे विषधर सर्प के स्थान पर, लोगो के मना करने पर भी निर्भयतापूर्वक चले गए।'

जिस प्रकार धर्म-सिद्धान्त के लिए मनुष्य को असहयोग करना आवश्यक हे, उसी प्रकार लोकिक नीतिमय व्यवहारो मे राज्यशासन की ओर से अन्याय मिलता हो तो ऐसी दशा मे राज्य-भक्ति युक्त सविनय असहकार-असहयोग करना प्रजा का मुख्य धर्म है। वह प्रजा नपुसक हे जो चुपचाप अन्याय को सहन कर लेती है ओर उसके विरुद्ध चू तक नही करती। ऐसी प्रजा अपना ही नाश नही करती परन्तु उस राजा के नाश का भी कारण बनती हे, जिसकी वह प्रजा है। जिस प्रजा मे अन्याय के प्रतिकार का सामर्थ्य नही हे, उसे कम-से-कम इतना तो प्रकट कर ही देना चाहिए कि अमुक कानून या कार्य हमे हितकर नही हे और हम उसे नापसद करते है।'

अन्याय के प्रति असहयोग न करने से बडा भारी अनर्थ हो जाता है। इस कथन की पुष्टि के लिए महाभारत के युद्ध पर ही दृष्टि डालिए। अगर भीष्म और द्रोण आदि महारथियो ने कोरवो से असहयोग कर दिया होता तो इतना भीषण रक्तपात न होता ओर इस देश के अध पतन का आरभ भी न होता। अन्याय से असहयोग न करने के कारण रक्त की नदियाँ बही ओर देश को इतनी भीषण क्षति पहुँची की सदियाँ व्यतीत हो जाने पर भी वह सभल न सका।'

राजकोट के सत्याग्रह मे पूज्यश्री का धर्मोपेत योगदान बहुत सहायक रहा। पूज्यश्री के उपदेश के कारण सर्वसाधारण जनता मे उसका मान और भी अधिक बढ गया।

मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी को राजकोट से विहार करके पूज्यश्री चोटीला आदि स्थानो की जनता को धर्म का अमृतपान कराते हुए माघ कृष्णा १४ को राणपुर पधारे। यहाँ भावनगर, लीबडी आदि अनेक सघो ने विनति की किन्तु आपने शीघ्र अहमदाबाद पधारने का विचार प्रकट किया। धुधुका होते हुए आप सुदामडा पधारे। यहाँ दो भाइयो ने ब्रह्मचर्य-व्रत अगीकार किया। सेजकपुर मे आपके उपदेश से श्रावको का पारस्परिक वेमनस्य हट गया।

पूज्यश्री ने वृद्धावस्था और अस्वस्थता होने पर भी काठियावाड मे स १९९३ मे ४१७ मील का और स ९४ मे ३२८ मील का लबा प्रवास किया और धर्म की अपूर्व प्रभावना की। तत्पश्चात् आप गुजरात पधारे।

अहमदाबाद में पदार्पण

ता १७-२-३९ को पूज्यश्री अपनी शिष्य मण्डली के साथ अहमदाबाद पधारने वाले थे। आपके आगमन की सूचना एक पत्रिका द्वारा नगर मे फेला दी गई थी। आपके स्वागत के लिए नगर मे अपूर्व उत्साह नजर आ रहा था। हजारो नर-नारी प्रात काल ही एलिस ब्रिज की ओर चले जा रहे थे। विक्टोरिया गार्डन से जुलूस बनाकर पूज्यश्री को नगर मे लाने का निश्चय किया गया था। अतएव सब को विक्टोरिया गार्डन के पास रोक लिया गया। कुछ आगेवान व्यक्ति मोटरो से प्रीतमनगर, पालडी और सरखेज तक पहुच गए।

लगभग साढे आठ बजे पूज्यश्री विक्टोरिया गार्डन के पास पधारे। पूज्यश्री के जयनाद से आकाश गूज उठा ओर जनता जुलूस के रूप मे परिणत हो गई थी। सबसे आगे राष्ट्रीय ध्वजा लिए स्थानकवासी

जैन बोर्डिंग के विद्यार्थी चल रहे थे। उनके पीछे छोटे-छोटे बालकों का समूह था। बालकों के हाथ में [illegible] वाद्य सुशोभित हो रहे थे। भगवान् महावीर तथा पूज्यश्री की जयध्वनि से बीच-बीच में दिशाएं गूंज उठती थीं। उनके पीछे पूज्यश्री अन्य मुनियों के साथ अपनी गंभीर एवं तेजोमय मुखमुद्रा के साथ चल रहे थे। पीछे श्रीसंघ के आगेवान नेता थे। सब के पीछे महिलामण्डल था। महिलाएं मांगलिक गीत गाती हुई उत्साह के साथ चल रही थीं।

जुलूस नगर के प्रधान मार्गों से होता हुआ घीकांटा रोड पर आ पहुँचा। फिर दिल्ली दरवाजे से निकल कर माधवपुरा में समाप्त हुआ। वहीं पूज्यश्री ठहरने वाले थे। समस्त नर-नारियों के बैठ जाने पर पूज्यश्री ने मंगलप्रार्थना की। और फिर पन्द्रह मिनिट भाषण दिया। अन्त में सब लोग विदा हुए। दूसरे सम्प्रदाय के संतों और सतियों ने भी आपके स्वागत में स्नेहपूर्वक भाग लिया था। दरियापुरी सम्प्रदाय के संतों के साथ, जो वहाँ मौजूद थे, पारस्परिक वात्सल्य रहा।

पूज्यश्री माधवपुरा में ठहरे थे किन्तु व्याख्यान देने के लिए जैन बोर्डिंग के समीप, एम. वाडीलाल के नवीन विशाल भवन में पधारते थे। प्रथम तो अहमदाबाद नगर ही काफी बड़ा है और फिर वहाँ पूज्यश्री जैसे महान प्रभावक महापुरुष का पधारना हुआ। ऐसी स्थिति में भीड़ का क्या ठिकाना था! मूर्तिपूजक भाई तथा जैनेतर बन्धु भी बड़ी संख्या में उपस्थित होते थे। व्याख्यान के अन्त में लोग तमाखू, बीड़ी, चाय आदि का त्याग करते थे। बाहर के दर्शनार्थियों की भीड़ रहती थी। फिर भी अहमदाबाद श्रीसंघ उत्साह के साथ सबका स्वागत करता था।

विविध विषयों पर पूज्यश्री का प्रवचन होता था। आपके प्रवचन श्रोताओं के अन्तःकरण पर गहरी छाप लगा देते थे। अपूर्व भक्ति और अद्भुत श्रद्धा का वातावरण था।

अहमदाबाद में पूज्यश्री का चातुर्मास कराने के लिए वहाँ की जनता बहुत अर्से से प्रयत्नशील और उत्सुक थी। शेष काल के लिए पधारने पर वहाँ के श्रावकों ने फिर प्रार्थना की। पूज्यश्री ने फरमाया- सम्प्रदाय के नियमानुसार द्रव्य,क्षेत्र, काल, भाव अनुकूल होगा तो इस वर्ष चातुर्मास अहमदाबाद में करने का भाव है।

पूज्यश्री की इस स्वीकृति से जनता के हर्ष का पार न रहा। पूज्यश्री विहार करके, नगर के बाहर एलिसब्रिज में श्रीत्रीभुवनलाल वकील की कोठी में विराजे।

फिर विहार

एलिसब्रिज से पूज्यश्री ने ता. ६ से विहार किया। अस्वास्थ्य के कारण शेष संत अहमदाबाद में ही रह गए। अहमदाबाद से आप अनुक्रम से आकर बड़ौदा पधारे। मारवाड़ से आकर दो संतों के मिल जाने के कारण आप ८ ठाणा हो गए।

पूज्यश्री पहली बार ही बड़ौदा पधारे थे। वहाँ स्थानकवासी जैनों की संख्या बहुत अधिक नहीं है। [illegible] आपकी [illegible] कांति और व्याख्यानशैली से प्रभावित होकर श्रोताओं की विशाल संख्या इकट्ठी हो जाती थी। वहाँ की विद्वान् जनता पर भी पूज्यश्री का अच्छा प्रभाव पड़ा। वहाँ आप करीब [illegible] दिन ठहर कर क्रमशः विचरते हुए [illegible] पधारे। स्थान छोटा था और इस कारण [illegible] [illegible] पूज्यश्री का यह स्थान [illegible] प्रतीत हुआ। आप वहाँ आठ दिन ठहरे।

गाव वालो के मानो भाग्य खुल गये। उन्होने अतीव विनम्रता के साथ पूज्यश्री की सेवा की। वीसलपुर से मौरैया साणन्द होते हुए फिर एलिसब्रिज पधारे और श्रीत्रीकमलाल वकील की कोठी मे विराजमान हुए। आषाढ शुक्ला सप्तमी को नगर मे प्रवेश किया।

२५ मई से घोर तपस्वी श्रीकेसरीमलजी महाराज ने तपस्या आरभ कर दी। पूज्यश्री ने भी पाच उपवास किए। आषाढ शु ९ को आपका पारणा हुआ।

सैंतालीसवां चातुर्मास (१९९६)

सवत् १९९६ का चातुर्मास पूज्यश्री ने ठा १० से अहमदाबाद मे किया। अहमदाबाद व्यावहारिक दृष्टि से व्यापार का बडा केन्द्र है। वस्त्र व्यवसाय का तो भारत में वह सर्वप्रधान केन्द्र है। मगर उसका विशिष्ट महत्त्व तो इस बात मे है कि वह अनेक महापुरुषो की तपोभूमि और कर्मभूमि है।

अहमदाबाद मे पूज्यश्री कुछ अस्वस्थ रहने लगे। बीच-बीच मे उपवास, वेला आदि तप करने से कुछ लाभ हुआ और तपस्या के बल पर आप अपने स्वास्थ्य को टिकाए रहे, फिर भी सुस्ती और कमजोरी बढती गई। इस कारण वैद्य की सलाह से आपने व्याख्यान देना बद कर दिया। विश्रान्ति लेना आवश्यक हो गया।

तपस्वी मुनि श्रीकेसरीमलजी महाराज ने ६७ उपवास गर्म जल के आधार पर किए। श्रावणी पूर्णिमा के दिन आपने पारणा किया। पक्खी के दिन आपकी तपस्या का पूर था। उस दिन के व्याख्यान मे अढाई हजार से भी अधिक जनता थी। अनेक व्रत-नियम लिए गये और करीब दो हजार रुपये जीव-दया के निमित्त इकट्ठे हुए। बाहर से बहुत से दर्शनार्थी आये।

कुछ दिनो बाद औषधोपचार से पूज्यश्री का स्वास्थ्य सुधर गया और आप फिर व्याख्यान फरमाने लगे। पर्युषण से पहले ही आपके व्याख्यान आरभ हो गए थे, अत अत्यन्त उत्साह और आनद के साथ पर्युषण पर्व व्यतीत हुआ। सवत्सरी के दिन आपने लगातार दो घटा तक व्याख्यान दिया। हजारो नर-नारी उपस्थित थे। बहुत लोगो ने तप और धर्मध्यान किया। पूज्यश्री के निर्देशानुसार सभी श्रावको ने काफ्रेस के नियम का पालन करते हुए एक प्रतिक्रमण तथा २० लोगस्स का ध्यान किया। प्रतिक्रमण कराने मे 'स्थानकवासी जैन' के सम्पादक श्रीजीवनलाल भाई सघवी ने मुख्य भाग लिया।

कुछ दिनो बाद पूज्यश्री की दाहिनी जाघ मे गाठ हो गई और आप फिर अस्वस्थ हो गए। व्याख्यान बद कर देना पडा किन्तु स्वस्थ होने पर फिर व्याख्यान आरभ हो गया।

पूज्यश्री की जन्म-भूमि थादला से शाहजी श्रीजोरावरसिहजी दर्शनार्थ उपस्थित हुए। २१ सितम्बर को उन्होने सपत्नीक ब्रह्मचर्य-व्रत अगीकार किया और चातुर्मास समाप्त होने के पश्चात् थादला की ओर पधारने की प्रार्थना की। इससे पहले भी थादला के भाइयो ने वहा पधारने की प्रार्थना की थी। रतलाम-चातुर्मास मे पूज्यश्री ने आश्वासन भी दिया था कि रतलाम से सीधा काठियावाड जाना होगा तो थादला फरसने का भाव है। किन्तु उस समय आप मारवाड की ओर पधार गए और वही से सीधे काठियावाड की ओर। आपको थादला गये ३२ वर्ष हो चुके थे। यद्यपि जन्मभूमि होने के कारण थादला की याद आपको वहुत प्रिय थी, तथापि अस्वास्थ्य के कारण आप वहा पहुचने का वचन न दे सके। जोधपुर से करीब १५०-२०० श्रावक-श्राविकाए आपके दर्शनार्थ आए।

आश्विन कृष्णा १२ को गांधी जयन्ती के दिन पूज्यश्री ने चर्बी लगे वस्त्रो के त्याग, वर्गगत ऊच-नीच के भेद-भाव का त्याग नौकरो के साथ सद्व्यवहार आदि विषयो पर विवेचन करते हुए अहिसा का सच्चा स्वरूप बतलाया और उसके पालन की प्रेरणा की।

कार्तिक वदि मे पूज्यश्री फिर अस्वस्थ हो गए। जुकाम, खासी, बुखार तथा गले मे दर्द हो गया। बहुत दिनो से जघा के पिछले भाग मे एक मसा था। उसमे से खून आने लगा। दुर्बलता बढने लगी। औषध-सेवन से कुछ उपद्रव शान्त तो हुए किन्तु पहले जेसी अवस्था नही आई।

बीच-बीच की अस्वस्थता ने यह चोमासा कुछ फीका-सा कर दिया। पूज्यश्री मे अब पहले जेसा उत्साह वह गभीर गर्जना और वह विशिष्ट शक्ति न रह गई। प्रतीत होने लगा कि अब पूज्यश्री के वह दिन समीप आ रहे है जब विश्राम और स्थिरवास आवश्यक हो जाता हे।

घाटकोपर श्रीसघ ने पूज्यश्री को ठाणापति के रूप मे घाटकोपर मे विराजने के लिए अहमदावाद आकर प्रार्थना की। आगत दर्शनार्थी भाइयो के स्वागत के लिए ८० हजार के वचन भी वहाँ मिल चुके थे किन्तु जामनगर चातुर्मास के समय पूज्यश्री बीकानेर-श्रीसङ्घ को मारवाड ती तरफ विहार करने का आश्वासन दे चुके थे। तदनुसार चोमासा पूर्ण होते ही मारवाड की ओर आने का विचार था। मालवा की धर्मप्रेमी जनता का भी इससे वडी निराशा हुई। उनकी अभिलाषा थी कि पूज्यश्री मालवा-मेवाड होते हुए मारवाड पधारे। रतलाम, खाचरोद और थादला आदि मालवा के श्रीसङ्घो ने बहुत आग्रह किया किन्तु पूज्यश्री इतना चक्कर काटकर मारवाड तक पहुँचने मे अशक्त प्रतीत होते थे। रतलाम-श्रीसङ्घ ने चाहा कि अगर आप मारवाड न पधार सके तो रतलाम मे ही स्थिरवास करे। वहा सब प्रकार उन्हें शान्ति मिलेगा। मगर पूज्यश्री ने उस समय कोई निश्चित उत्तर नही दिया।

अहमदावाद से मारवाड़

मगसिर बदी १ को पूज्यश्री ने अहमदाबाद से विहार किया। हजारो नर-नारी आपको श्रद्धा के साथ विदाई देने आए। माधवपुरा से विहार करके आप जमालपुर दरवाजे के बाहर पधारे। यहाँ से एलिसब्रिज होते हुए ता २-१२-३९ को ८ ठाणो से वीसलपुर पधारे।

वीसलपुर का जल-वायु अनुकूल होने के कारण वहाँ आपका स्वास्थ्य कुछ ठीक रहा। सङ्घ ने बहुत भक्ति की। २० दिन वहाँ विराजकर ता २२ दिसम्बर को कलोल की ओर विहार किया। १५ दिन कलोल मे विराजमान रहे और फिर महसाणा की ओर पधारे। तदनन्तर सिद्धपुर, ऊम्भा और फिर पालनपुर पधार गए।

अनेक स्थानो को पावन करते हुए पूज्यश्री फाल्गुन शुक्ला १ को सादडी (मारवाड) पधार गए। फाल्गुन शुक्ला १३ को युवाचार्यश्री भी पूज्यश्री की सेवा मे सादडी पधारे। धर्म का ठाठ लगा रहा।

सादडी से विहार हुआ और चैत्र कृ ७ को आप ठा ९ से राणावास पधारे। दो दिन यहाँ विराजे। देवगढ से १५० श्रावक-श्राविकाएँ आपके दर्शनार्थ उपस्थित हुए। एक श्रावक ने सपत्नीक ब्रह्मचर्य-व्रत अगीकार किया। यहा से विहार करके सिरियारी, सारण होते हुए पूज्यश्री बगडी पधार गए। युवाचार्यश्री पहले दिन प्रात काल ही बगडी पधार चुके थे।

बगडी के सुपसिद्ध सेठ लक्ष्मीचदजी धाडीवाल, उनकी धर्मपत्नी सो श्रीमती लक्ष्मीबाई तथा समस्त श्रीसङ्घ की उत्कट अभिलाषा थी कि पूज्यश्री का एक चौमासा बगडी मे होना चाहिए। कई बार प्रार्थना की गई थी। पूज्यश्री ने मारवाड की ओर पधारने पर बगडी फरसने का आश्वासन भी दिया था। तदनुसार आप बगडी पधारे।

बगडी पधारने पर श्रीसङ्घ ने और वहाँ के कुवर साहब ने चातुर्मास के लिए प्रार्थना की। पूज्यश्री ने अत्यन्त आग्रह देख अपनी मर्यादा के अनुसार चातुर्मास करने की स्वीकृति दे दी।

ब्यावर मे

पूज्यश्री जव सादडी विराजमान थे, ब्यावर के कई श्रावको ने पूज्यश्री की सेवा में उपस्थित होकर ब्यावर पधारने की आग्रहभरी प्रार्थना की थी। ब्यावर मे मण्डल का अधिवेशन होने वाला था और साम्प्रदायिक विषयो पर अन्य मुनियो के साथ विचार-विनिमय भी करना था। अत पूज्यश्री ने ब्यावर पधारने की स्वीकृति दे दी थी। तदनुसार ता १२-४-४० को आप १७ ठाणो से ब्यावर पधारे। युवाचार्यश्री साथ ही थे। लगभग २००० नर-नारियो ने दूर तक सामने जाकर पूज्यश्री का हार्दिक स्वागत किया। पूज्यश्री ने जय-घोषो के साथ ब्यावर मे प्रवेश किया।

पूज्यश्री के पधारने से आसपास विचरने वाले सत भी ब्यावर पधार गए। २९ साधु एकत्रित हो गए। ७३ सतिया भी वहा पधार गईं। इनके अतिरिक्त श्रीनन्दकुवरजी महाराज तथा पूज्यश्री हस्तीमलजी महाराज के सम्प्रदाय की सतिया भी वही विराजमान थी।

इतने सतो और महासतियो के एकत्र दर्शन करने के निमित्त बाहर की जनता का आना स्वाभाविक ही था। तिस पर पूज्यश्री लम्बे अर्से बाद गुजरात-काठियावाड की तरफ से पधारे थे और इस प्रात की जनता आपके दर्शनो की प्यासी थी। सैकडो भाई बाहर से आए। बीकानेर और भीनासर के भक्त दर्शनार्थी अधिक सख्या मे थे। उस समय ब्यावर का क्या कहना! वह एक तीर्थ-धाम-प्रतीत होता था। वडी उमग, असीम उत्साह और उत्कृष्ट धर्मप्रेम देखकर हृदय प्रफुल्लित हो उठता था। अव की बार विशेषता यह थी कि सभी सम्प्रदायो के श्रावक समान भाव से व्याख्यान मे आते थे। झगडे की झोपडी ने शान्ति-कुटी का रूप धारण कर लिया था। करीब ५ हजार जनता व्याख्यान मे उपस्थित होती थी।

युवाचार्यश्री ही प्राय व्याख्यान फरमाते थे और कभी-कभी पडित-मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज भी। पूज्यश्री के मुखारविंद से निकलने वाली वाणी सुनने की लोगो की उत्कट अभिलाषा थी। उसके विना लोगो के हृदय मे एक प्रकार की असतुष्टि-सी रहती थी। किन्तु कमजोरी के कारण पूज्यश्री

व्याख्यान न फरमा सके। महावीर जयन्ती के दिन अत्यन्त आग्रह होने से पूज्यश्री ने व्याख्यान आरभ किया किन्तु आप प्रार्थना भी पूरी न कर सके और व्याख्यान स्थगित करना पडा।

मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज के व्याख्यानो से ब्यावर का युवक-समाज बहुत प्रभावित हुआ। आपका व्याख्यान सामयिक और सरस होता था। निरन्तर पूज्यश्री की सेवा मे रहने से उनके विचारो मे पूज्यश्री के विचारों की छाप दिखाई देने लगी थी। ता १४ को जनता के आग्रह से आपने व्याख्यान फरमाया। श्रोता बहुत प्रभावित हुए। दूसरे दिन व्याख्यान का स्थान खचाखच भर गया। आपने सादगी, देशभक्ति, धर्मप्रेम आदि पर सुन्दर प्रकाश डाला। नवयुवक-समाज आपके व्याख्यानो के लिए उत्कठित रहने लगा।

अजमेर के प्रसिद्ध सेठ गाढमलजी लोढा ने ब्यावर आकर पूज्यश्री से अजमेर पधारने की आग्रहपूर्ण प्रार्थना की। पूज्यश्री, युवाचार्यश्री के साथ ता ९-५-४० को अजमेर पधारे। आपके पधारने से अजमेर मे काफी धर्मजागृति हुई। ता १० को अक्षय-तृतीया के दिन, युवाचार्यश्री ने भगवान् ऋषभदेव के पारणा का सरस वर्णन करते हुए भगवान् के जीवन पर प्रभावक प्रकाश डाला। ता ११-५-४० को युवाचार्यश्री ने वृद्ध-विवाह की हानिया बतलाते हुए हृदयस्पर्शी व्याख्यान फरमाया। बहुत-से भाइयो ने ४० वर्ष से अधिक उम्र वाले की शादी मे सम्मिलित न होने और बाइया ने गदे गीत न गाने की प्रतिज्ञा की। पूज्यश्री शेष काल अजमेर विराजे। उदयपुर, बीकानेर, टोक, ब्यावर आदि नगरो के बहुत-से दर्शनार्थी भाई पूज्यश्री की सेवा मे आए।

ता १०-६-४० को अजमेर से विहार करके ब्यावर और फिर नीमाज पधारे। यहा लोगो मे पार्टी-बन्दी हो रही थी। पूज्यश्री केउपदेश से वेमनस्य हट गया और प्रेम की प्रतिष्ठा हुई। श्रीचादमलजी फूलपगर ने सपत्नीक ब्रह्मचर्य-व्रत धारण किया। यहा से विहार कर आप आषाढ शु १ ता ५-७-४० को ठा ७ से बगडी पधारे। श्रीसघ ने अत्यन्त समारोह के साथ स्वागत किया और अपनी उत्कृष्ट भक्तिभावना प्रकट की।

अड़तालीसवां चातुर्मास (सं. १९९७)

वि स १९९७ का चातुर्मास पूज्यश्री ने ठा ८ से बगडी मे किया। यहा आपका स्वास्थ्य कुछ सुधर गया। कभी-कभी व्याख्यान भी फर्माने लगे। नित्य का व्याख्यान मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज फर्माते थे

प्रवर्तिनी महासती श्रीकेसरकुवरजी महाराज ने ठा १० से तथा प्र श्रीआनन्दकुवरजी महाराज के सम्प्रदाय की महासती कालीजी महाराज ने भी ठा ४ से बगडी मे चातुर्मास किया था। मुनि श्री[illegible]मलजी महाराज ने एकातर तप किया और महासती श्रीकालीजी ने १३ का थोक किया। पूज्यश्री के उपदेश और ब्यावर के खीवराजजी छाजेड के प्रयत्न से यहा के कसाई कासिमभाई ने जीव-हिंसा का त्याग कर दिया। श्रावण और भाद्रपद महीनो मे खूब तपस्या हुई। एक बाई ने [illegible] का थोक किया श्रीनानचन्दजी देवडा ने परिपूर्ण पोषध के साथ अठाई की। एक ३१ वर्ष के [illegible] भाई ने सपत्नीक ब्रह्मचर्य व्रत अगीकार किया और श्रद्धा ग्रहण की। १० और

५ की तपस्या तो बहुतो ने की। काफी तपस्या हुई। अठाई, वेला, तेला, पचरगिया थोक आदि भाइयो और बहिनो ने करके अपने कर्मों की निर्जरा की। खूब धर्मध्यान हुआ। पूज्यश्री का स्वास्थ्य साधारण तौर से ठीक रहा। पर्युषण के दिनो मे आधा घटा तक प्रवचन करते रहे। चातुर्मास के अत मे चार सज्जनो ने सपत्नीक ब्रह्मचर्य-व्रत अगीकार किया।

कार्तिक शुक्ला चतुर्थी के दिन यहा समारोह और उत्साह के साथ श्रीजवाहर-जयन्ती मनाई गई। प र मुनिश्री श्रीमलजी महाराज ने पूज्यश्री के प्रभावक चरित्र पर प्रकाश डाला और आपकी गुणगाथा गाई। अन्य भाइयो ने भी पूज्यश्री को श्रद्धाजलि अर्पित की। वहा के उत्साही भाइयो ने इस उपलक्ष्य मे 'जवाहर-ज्योति' (हिन्दी) पकाशित करने का निश्चय किया। बाद मे यह महत्त्वपूर्ण पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है।

बगडी का चातुर्मास समाप्त होने पर पूज्यश्री ने विहार किया। एक सप्ताह सेवाज ओर १०-१२ दिन सोजतरोड ठहर कर सोजत सिटी पधार गए। यहा अन्य सतो के पधार जाने से कुल सत ठा १७ हो गए।

जब पूज्यश्री चौमासे मे बगडी विराजते थे, उन्ही दिनो मोरबी की ओर भयकर अकाल पडा था। इस अकाल के समय मोरबी-नरेश ने किसानो को बैल आदि देकर तथा कुए खुदवाकर सराहनीय कार्य किया। हजारो-मनुष्यो को मरने से बचा लिया। मोरबी-नरेश ने श्रीविनयचद भाई जौहरी के साथ सदेश भेजा- यह सब पूज्यश्री का ही प्रताप हे कि मुझमे दुखियो के प्रति दया-भाव उत्पन्न हुआ है!

सौ. सेठानी लक्ष्मीबाईजी

बगडी-चातुर्मास के लिए वहा के सघ की प्रार्थना तो थी ही, मगर वहा के अग्रगण्य श्रावक सेठ लक्ष्मीचदजी धारीवाल का विशेष आग्रह था और कहना चाहिए कि सेठ साहब की अपेक्षा भी उनकी धर्मशीला और पतिपरायणा धर्मपत्नी श्रीमती लक्ष्मीबाई का और भी अधिक आग्रह था।

सेठानी लक्ष्मीबाईजी पहले तेरापथी सम्प्रदाय की अनुयायिनी थी। एक बार तेरहपथी पूज्यश्री कालूरामजी स्वामी बगडी मे आये। सेठानीजी पढी-लिखी और समझदार महिला हे। आपने कालूरामजी स्वामी से अनेक प्रश्न किये, जिनमे एक प्रश्न यह भी था कि-अगर कोई दुराचारी पुरुष किसी शीलवती महिला का शील भग करके अपनी पाशविक वृत्ति को तृप्त करना चाहता है और वह महिला शील की रक्षा के लिए पास के लोगो से सहायता की याचना करती हे। कहती है- भाइयो! तुम मेरे भाई और पिता के तुल्य हो। मेरे शील की रक्षा करो। दुराचारी पुरुष समझाने-बुझाने से नही मानता। ऐसी स्थिति मे अगर कोई दयालु धर्मप्रेमी उसे धक्का देकर अलग कर देता है तो उस शील के रक्षक पुरुष को धर्म होगा या पाप लगेगा ?'

महिलाओ के जीवन से सवध रखने के कारण यह प्रश्न बहुत महत्त्वपूर्ण था ओर कोई भी विवेकवती महिला इसका समाधान चाहे बिना सतुष्ट नही हो सकती। प्रश्न के उत्तर मे कालूरामजी स्वामी बोले- दुराचारी पुरुष को अलग हटा देने वाले को भोगान्तराया कर्म लगता हे।'

'सेठानीजी ने कहा- महिला शीलवती है। उसे भोग करने की लेश-मात्र भी आकाक्षा नही है, दुराचारी पुरुष बलात्कार करने की चेष्टा कर रहा है। ऐसी स्थिति मे शील की रक्षा मे सहायता करने वाला भोगान्तराय कर्म का बंध कैसे करेगा?'

[illegible]ामजी ने कहा- महिला की इच्छा नही है तो न सही, पुरुष की तो इच्छा है।

जब यह प्रश्नोत्तर हो रहे थे तो करीब १००-१५० साधु वहा एकत्र हो गए। सेठानीजी ने कहा- 'जिस मत में शील की रक्षा करना भी पाप बतलाया जाता है, वह मत कम-से-कम महिला समाज के लिए तो ग्राह्य नही हो सकता।' इतना कहकर वे वहा से चली आई और तभी से उन्होंने तेरापंथ त्याग दिया।

श्रीमती लक्ष्मीबाई विवेकशीला और धर्मनिष्ठा है। समाज मे ऐसी महिलाओ की बडी आवश्यकता है। इस चातुर्मास मे आपने बडे ही उत्साह से धर्म-सेवन किया।

❑

चौथा अध्याय

जीवन की संध्या

काठियावाड-प्रवास के पश्चात् ही पूज्यश्री के जीवन की सध्या का आरभ होता हे। दीक्षा लेने के कुछ ही दिनो बाद आप सूर्य के समान चमकने लगे। दक्षिण, मारवाड, मेवाड, मालवा, पूर्वीय पजाब तथा देहली प्रान्त को आपने अपनी प्रकृष्ट पतिभा से प्रभावित किया। थली के रजकणो पर भी आपने अपनी अमर छाप लगा दी। रेत के नीरस टीलो को दान-दया के अमृत-जल से सीच डाला। रेगिस्तान को हरे-भरे उद्यान के रूप मे परिणत कर दिया।

काठियावाड पधार कर पूज्यश्री ने जैन धर्म का जो गोरव बढाया, वह न केवल स्थानकवासी इतिहास मे बल्कि जेन समाज के इतिहास मे भी अमर रहेगा। मन्त्र-तन्त्र तथा ऐसी ही अन्य कार्रवाइयो से दूर रहकर सिर्फ शुद्ध आध्यात्मिकता और वाग्वैभव के द्वारा नरेशो के हृदय मे धर्म का बीज बोने वाले महानुभाव विरले ही हुए हे। समूचे धार्मिक इतिहास पर दृष्टिपात किया जाये तो भी ऐसे महात्मा उगलियो पर गिनने योग्य ही मिलेगे। पूज्यश्री ऐसे ही महान् पुरुषो मे से एक थे।

राजा, रक, विद्वान्, साधारण गृहस्थ, वैज्ञानिक ओर अध्यात्मवादी, शिक्षा सस्कार से सस्कृत और रूढिप्रिय वृद्ध सभी आपके उज्ज्वल और तेजोमय व्यक्तित्व से प्रभावित थे।

खादी, मादक-द्रव्य-निषेध, अस्पृश्यता निवारण, गो-रक्षा, कुरीति-निवारण आदि विषयो पर भी आपने धार्मिक दृष्टिकोण से सुन्दर-से-सुन्दर और प्रभावशाली-से-प्रभावशाली अनेक प्रवचन किये ओर धार्मिकता के साथ उनका समन्वय किया। यह देखकर उनकी सिद्धान्त-ज्ञान कुशलता का पता चलता हे ओर साथ ही उनकी दूरदर्शिता ओर व्यवहार पटुता की प्रतीति हुए बिना नही रहती।

जो लोग साम्प्रदायिकता को देश का अभिशाप समझते है, उन्हे पूज्यश्री ने अपने जीवन व्यवहार से ओर अपने प्रवचनो से करारा उत्तर दिया हे। एक रूढि चुस्त सम्प्रदाय का आचार्य होने पर भी इतने उदार विचार रखने वाला महात्मा शायद ही दूसरा कही मिल सकता हे। पूज्यश्री की साम्प्रदायिकता विशालता की विरोधिनी नही थी। उन्होने अपने जीवन व्यवहार द्वारा प्रकट कर दिया था कि कोई भी व्यक्ति सम्प्रदाय विशेष के प्रति पूरी तरह वफादार रहते हुए भी विश्व-हित ओर विश्व-प्रेम की ओर किस प्रकार अग्रसर हो सकता है! उनके अव तक के प्रवचनो का वारीक निगाह से ओर विवेचनात्मक बुद्धि से अध्ययन करने पर यह वात स्पष्ट प्रतीत होने लगती हे।

इन सब कारणो से पूज्यश्री अपने जीवन को सफल बनाने मे तो समर्थ हुए ही, साथ ही अनगिनत लोगो को भी सुमार्ग सुझा सके। काठियावाड के नरेशो के हृदय मे भी धर्म की महिमा अंकित करने मे वे समर्थ हुए। मगर अत्यन्त विषाद के साथ लिखना पडता है कि इस समय पूज्यश्री का शरीर शनै शनै क्षीण होने लग गया था।

जामनगर की बीमारी के बाद पूज्यश्री उत्तरोत्तर अशक्त होते गए। मारवी मे भी कई बार व्याख्यान बद करना पडा। अहमदाबाद की जनता को पूज्यश्री से तथा पूज्यश्री को अहमदाबाद की जनता से कुछ आशाए थी। किन्तु अहमदाबाद आने तक अनेक शारीरिक उपद्रव उठ खडे हुए। बीमारी ने धर दबाया।

यो तो साधुओ का जीवन सयममय ही होता है किन्तु पूज्यश्री अपने भोजन-पान मे बेहद सयमी थे। जलगाव मे हाथ के आपरेशन के बाद आपने अन्न का सेवन लगभग छोड दिया था। प्राय दूध और शाक पर ही रहते थे। जामनगर के बाद वह परहेज और बढ गया। अपने परहेज के कारण ही आप अहमदाबाद मे अपना स्वास्थ्य सभाल सके।

रोगो के साथ वृद्धावस्था अथवा वृद्धावस्था के साथ रोग प्रबल वेग से आक्रमण करने लगे थे। पूज्यश्री अपने जीवन के तिरेसठ वर्ष व्यतीत कर चुके थे। जनता जान गई थी कि आप अधिक विहार नही कर सकेगे।

बगडी छोटा गाव है। यद्यपि वहा स्थानकवासी सम्प्रदाय की जनसख्या काफी है और गाव के लिहाज से सम्पत्तिशाली लोग भी बहुत बडी सख्या मे है तथापि जनसख्या की दृष्टि से बगडी छोटा गाव है। पूज्यश्री के यौवन-काल के लिए स्थान इतना उपयुक्त न था। वहा आपकी शक्तियो का पूरी तरह उपयोग नही हो सकता था। मगर अब ऐसा ही स्थान उपयुक्त था जहा अधिक भीडभडक्का न हो जल-वायु अच्छा हो और शान्तिपूर्वक समय बिताया जा सके। इन दृष्टियो से बगडी स्थान उपयुक्त रहा।

बीकानेर की ओर

पूज्यश्री के लिए अब स्थिरवास का समय आ गया था। इसके लिए भीनासर, बीकानेर, अजमेर ब्यावर, रतलाम, उदयपुर और जलगाव आदि से बहुत आग्रह था। मगर भीनासर-बीकानेर की जनता चिरकाल से प्रार्थना कर रही थी। भीनासर-बीकानेर का अहोभाग्य था कि पूज्यश्री ने उसकी प्रार्थना स्वीकार करली तदनुसार उस ओर विहार कर दिया।

सोजत सिटी से आप जैतारण पधारे। वहा जोधपुर का एक डेप्युटेशन पूज्यश्री से जोधपुर पधारने की प्रार्थना करने आया। श्री जसवन्तराजजी मेहता, डिस्ट्रिक्ट सुपरिटेडेट जैन समाज की ओर से तथा श्री उमरावसिह जी कौसिल सेक्रेटरी तथा पुष्टिकर समाज के नेता श्री [illegible] तथा श्री [illegible] जैनेतर समाज की ओर से नेतृत्व कर रहे थे। शेष सभी जोधपुर के प्रतिष्ठित और गण्यमान्य सज्जन थे। इन आगत सज्जनो ने शेष काल तक जोधपुर पधार कर विराजने की आग्रहपूर्ण प्रार्थना की। पूज्यश्री ने फरमाया— मेरा शरीर अस्वस्थ है। चौमासे से पहले बीकानेर पहुचने का वचन दिया जा चुका है। जोधपुर होकर बीकानेर पहुचने मे समय ज्यादा लगेगा। इस अवस्था मे गर्मी मे मुझ से विहार नही हो सकता है। अतएव अब जोधपुर ले जाने का आग्रह आप न करे। मेरी स्थिति का ख्याल कीजिए।

बलुंदा में अस्वस्थता

जोधपुर के सज्जन वापस लोट गए और पूज्यश्री विहार करके बलुदा पधारे। हाथो मे ओर जाघ मे फुसियाँ निकलने के कारण आप फिर अस्वस्थ हो गए। कुछ दिनो के लिए विहार स्थगित कर देना पडा। अजमेर के सुप्रसिद्ध डाक्टर सूरजनारायणजी ने पूज्यश्री के शरीर की परीक्षा की ओर विहार कम करने की सलाह दी। पूज्यश्री के रुकने के कारण बलुदा मे आसपास के सैकडो दर्शनार्थी आने लगे। बलुदा के प्रसिद्ध दानवीर, उदार हृदय सेठ छगनमलजी साहेब मूथा ने पूज्यश्री की सब प्रकार से सभव सेवा बजाई, आगत अतिथियो का हार्दिक स्वागत किया। सब प्रकार की सुविधाएँ दी ओर अच्छा धर्मप्रेम प्रकट किया।

कुछ दिन बलुदा विराजकर, स्वास्थ्य कुछ ठीक होने पर मेडता होते हुए माघ शुक्ला ८ को कुचेरा पधारे। कुचेरा से नागौर, गोगोलाव और फिर नोखामडी पधार गए। नोखामडी मे कुछ तेरापथी भाई शका-समाधान के लिए आए। सात बहिनो ने दया-दान विरोधी श्रद्धा त्याग कर पूज्यश्री को अपना गुरु स्वीकार किया। पूज्यश्री के आगमन के उपलक्ष्य मे यहाँ 'श्रीजेन जवाहर लाइब्रेरी' की स्थापना हुई।

नोखा से विहार करके पूज्यश्री सूरपुरा, देशनोक होते हुए उदयरामसर पधारे। कुछ लोग देवी के मन्दिर मे बकरे की बलि चढाने के लिए तैयार खडे थे। युवाचार्यश्री ने मोके पर पहुच कर उन्हे ऐसी सुन्दरता से समझाया कि उन्होने बकरे को अभयदान दे दिया। वे लोग दूसरे दिन उपदेश सुनने आये। यहा त्याग-प्रत्याख्यान अच्छे हुए।

उदयरामसर से पूज्यश्री भीनासर पधारे। भीनासर का बाठिया-परिवार स्थानकवासी समाज मे समाज और धर्म की सेवा करने के लिए प्रख्यात है। पूज्यश्री के पधारने पर इस परिवार का तथा अन्य भाइयो का उत्साह अनुपम था। कुछ दिनो भीनासर विराजकर आप बीकानेर पधारे।

बीकानेर की जनता भी बहुत दिनो से चातक की तरह पूज्यश्री की प्रतीक्षा कर रही थी। उदयरामसर और भीनासर मे ही सैकडो दर्शनार्थी आने लगे थे। जिस दिन पूज्यश्री ने भीनासर से विहार किया, हजारो श्रावक और श्राविकाए सामने आईं। श्रावको के जयघोष ओर श्राविकाओ के मगल गीतो के साथ पूज्यश्री ने ठा १८ से बीकानेर मे पदार्पण किया। पूज्यश्री पहले तो बीकानेर के प्रसिद्ध दानवीर और शिक्षाप्रेमी सेठ अगरचदजी भैरोंदानजी की कोटडी में विराजे थे किन्तु गर्मी अधिक होने के कारण आप श्रीडागाजी की कोटडी मे पधार गए। फिर भी कभी-कभी आप इच्छानुसार दिन को सेठियाजी की कोटडी मे ओर रात को डागाजी की कोटडी मे विराजते थे। व्याख्यान युवाचार्यश्री फरमाते थे।

बीकानेर वडा नगर होने के कारण गर्मी अधिक थी। सफाई की व्यवस्था भी उतनी अच्छी नही थी। उधर भीनासर के बाठिया-परिवार की तथा समस्त श्रीसङ्घ की आग्रहपूर्ण प्रार्थना थी। अतएव पूज्यश्री ने भीनासर मे चातुर्मास करने के भाव प्रकट किए। साथ ही आपने यह भी फरमाया कि मे अपनी सुविधा के अनुसार बीकानेर, गगाशहर ओर भीनासर मे से कही भी रह सकता हू।

युवाचार्यश्री की इच्छा पूज्यश्री की सेवा मे रहने की थी, मगर सरदारशहर-सङ्घ के सत्याग्रह से पूज्यश्री के आदेशानुसार उन्हे सरदारशहर मे चोमासा करना पडा। पूज्यश्री के साथ प मुनिश्री

इन सव कारणो से पूज्यश्री अपने जीवन को सफल वनाने मे तो समर्थ हुए ही, साथ ही अनगिनत लोगो को भी सुमार्ग सुझा सके। काठियावाड के नरेशो के हृदय मे भी धर्म की महिमा अकित करने मे वे समर्थ हुए। मगर अत्यन्त विषाद के साथ लिखना पडता हे कि इस समय पूज्यश्री का शरीर शने शने क्षीण होने लग गया था।

जामनगर की वीमारी के वाद पूज्यश्री उत्तरोत्तर अशक्त होते गए। मोरवी मे भी कई वार व्याख्यान वद करना पडा। अहमदावाद की जनता को पूज्यश्री से तथा पूज्यश्री को अहमदावाद की जनता से कुछ आशाए थी। किन्तु अहमदावाद आने तक अनेक शारीरिक उपद्रव उठ खडे हुए। वीमारी ने धर दवाया।

यो तो साधुओ का जीवन सयममय ही होता हे किन्तु पूज्यश्री अपने भोजन-पान मे वेहद सयमी थे। जलगाव मे हाथ के आपरेशन के वाद आपने अन्न का सेवन लगभग छोड दिया था। प्राय दूध और शाक पर ही रहते थे। जामनगर के वाद वह परहेज और वढ गया। अपने परहेज के कारण ही आप अहमदावाद मे अपना स्वास्थ्य सभाल सके।

रोगो के साथ वृद्धावस्था अथवा वृद्धावस्था के साथ रोग प्रवल वेग से आक्रमण करने लगे थे। पूज्यश्री अपने जीवन के तिरेसठ वर्ष व्यतीत कर चुके थे। जनता जान गई थी कि आप अधिक विहार नहीं कर सकेगे।

बगडी छोटा गाव हे। यद्यपि वहा स्थानकवासी सम्प्रदाय की जनसख्या काफी हे ओर गाव के लिहाज से सम्पत्तिशाली लोग भी वहुत वडी सख्या मे हे तथापि जनसख्या की दृष्टि से बगडी छोटा गाव हे। पूज्यश्री के योवन-काल के लिए स्थान इतना उपयुक्त न था। वहा आपकी शक्तियो का पूरी तरह उपयोग नही हो सकता था। मगर अब ऐसा ही स्थान उपयुक्त था जहा अधिक भीडभडका न हो, जल-वायु अच्छा हो ओर शन्तिपूर्वक समय विताया जा सके। इन दृष्टियो से वगडी स्थान उपयुक्त रहा।

वीकानेर की ओर

पूज्यश्री के लिए अव स्थिरवास का समय आ गया था। इसके लिए भीनासर, वीकानेर, अजमेर, व्यावर, रतलाम, उदयपुर और जलगाव आदि से वहुत आग्रह था। मगर भीनासर-वीकानेर की जनता चिरकाल से प्रार्थना कर रही थी। भीनासर-बीकानेर का अहोभाग्य था कि पूज्यश्री ने उनकी प्रार्थना स्वीकार करली तदनुसार उस ओर विहार कर दिया।

सोजत सिटी से आप जयतारण पधारे। वहा जोधपुर का एक डेप्युटेशन पूज्यश्री से जोधपुर पधारने की प्रार्थना करने आया। श्रीजसवन्तराजजी मेहता, ट्रिब्यूट सुपरिंटेंडेट, जेन समाज की ओर से तथा श्री उमरावसिह जी कोंसिल सेक्रेटरी तथा पुष्टिकर समाज के नेता श्रीटल्लूजी तथा श्रीज्वालाप्रसादजी जेनेतर समाज की ओर से नेतृत्त्व कर रहे थे। शेप सभी जोधपुर के प्रतिष्ठित और गण्यमान्य सज्जन थे। इन आगत सज्जनो ने शेष काल तक जोधपुर पधार कर विराजने की आग्रहपूर्ण प्रार्थना की। पूज्यश्री ने फरमाया– 'मेरा शरीर अस्वस्थ हे। चोमासे से पहले वीकानेर पहुचने का वचन दिया जा चुका हे। जोधपुर होकर वीकानेर पहुचने मे समय ज्यादा लगेगा। इस अवस्था मे गर्मी मे मुझ से विहार होना कठिन हे। अतएव अव जोधपुर ले जाने का आग्रह आप न करे। मेरी स्थिति का खयाल कीजिए।'

बलुंदा में अस्वस्थता

जोधपुर के सज्जन वापस लौट गए और पूज्यश्री विहार करके बलुदा पधारे। हाथो मे ओर जाघ मे फुसियाँ निकलने के कारण आप फिर अस्वस्थ हो गए। कुछ दिनो के लिए विहार स्थगित कर देना पडा। अजमेर के सुप्रसिद्ध डाक्टर सूरजनारायणजी ने पूज्यश्री के शरीर की परीक्षा की ओर विहार कम करने की सलाह दी। पूज्यश्री के रुकने के कारण बलुदा मे आसपास के सैकडो दर्शनार्थी आने लगे। बलुदा के प्रसिद्ध दानवीर, उदार हृदय सेठ छगनमलजी साहेब मूथा ने पूज्यश्री की सब प्रकार से सभव सेवा बजाई, आगत अतिथियो का हार्दिक स्वागत किया। सब प्रकार की सुविधाएँ दी ओर अच्छा धर्मप्रेम पकट किया।

कुछ दिन बलुदा विराजकर, स्वास्थ्य कुछ ठीक होने पर मेडता होते हुए माघ शुक्ला ८ को कुचेरा पधारे। कुचेरा से नागौर, गोगोलाव और फिर नोखामडी पधार गए। नोखामडी मे कुछ तेरापथी भाई शका-समाधान के लिए आए। सात बहिनो ने दया-दान विरोधी श्रद्धा त्याग कर पूज्यश्री को अपना गुरु स्वीकार किया। पूज्यश्री के आगमन के उपलक्ष्य मे यहाँ 'श्रीजैन जवाहर लाइब्रेरी' की स्थापना हुई।

नोखा से विहार करके पूज्यश्री सूरपुरा, देशनोक होते हुए उदयरामसर पधारे। कुछ लोग देवी के मन्दिर मे बकरे की बलि चढाने के लिए तैयार खडे थे। युवाचार्यश्री ने मौके पर पहुच कर उन्हे ऐसी सुन्दरता से समझाया कि उन्होने बकरे को अभयदान दे दिया। वे लोग दूसरे दिन उपदेश सुनने आये। यहा त्याग-प्रत्याख्यान अच्छे हुए।

उदयरामसर से पूज्यश्री भीनासर पधारे। भीनासर का बाठिया-परिवार स्थानकवासी समाज मे समाज और धर्म की सेवा करने के लिए प्रख्यात है। पूज्यश्री के पधारने पर इस परिवार का तथा अन्य भाइयो का उत्साह अनुपम था। कुछ दिनो भीनासर विराजकर आप बीकानेर पधारे।

बीकानेर की जनता भी बहुत दिनो से चातक की तरह पूज्यश्री की प्रतीक्षा कर रही थी। उदयरामसर ओर भीनासर मे ही सैकडो दर्शनार्थी आने लगे थे। जिस दिन पूज्यश्री ने भीनासर से विहार किया, हजारो श्रावक और श्राविकाए सामने आईं। श्रावको के जयघोष ओर श्राविकाओ के मगल गीतो के साथ पूज्यश्री ने ठा १८ से बीकानेर मे पदार्पण किया। पूज्यश्री पहले तो बीकानेर के प्रसिद्ध दानवीर और शिक्षाप्रेमी सेठ अगरचदजी भैरोंदानजी की कोटडी में विराजे थे किन्तु गर्मी अधिक होने के कारण आप श्रीडागाजी की कोटडी मे पधार गए। फिर भी कभी-कभी आप इच्छानुसार दिन को सेठियाजी की कोटडी मे और रात को डागाजी की कोटडी मे विराजते थे। व्याख्यान युवाचार्यश्री फरमाते थे।

बीकानेर बडा नगर होने के कारण गर्मी अधिक थी। सफाई की व्यवस्था भी उतनी अच्छी नही थी। उधर भीनासर के बाठिया-परिवार की तथा समस्त श्रीसङ्घ की आग्रहपूर्ण प्रार्थना थी। अतएव पूज्यश्री ने भीनासर मे चातुर्मास करने के भाव प्रकट किए। साथ ही आपने यह भी फरमाया कि मे अपनी सुविधा के अनुसार बीकानेर, गगाशहर और भीनासर मे से कही भी रह सकता हू।

युवाचार्यश्री की इच्छा पूज्यश्री की सेवा मे रहने की थी, मगर सरदारशहर-सङ्घ के सत्याग्रह से पूज्यश्री के आदेशानुसार उन्हे सरदारशहर मे चोमासा करना पडा। पूज्यश्री के साथ प मुनिश्री

श्रीमल्लजी महाराज तथा प मुनिश्री जोहरीमलजी महाराज थे। आषाढ शुक्ला सप्तमी को पूज्यश्री चातुर्मास के लिए भीनासर पधार गए।

उनचासवां चातुर्मास (सं. १९९८)

सवत् १९९८ का चातुर्मास पूज्यश्री ने भीनासर में किया। भीनासर बीकानेर का उपनगर है। अतएव बीकानेर से प्रतिदिन सैकडो श्रावक दर्शन और व्याख्यान श्रवण के हेतु आते थे। मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज और मुनिश्री जोहरीमलजी महाराज व्याख्यान फरमाते थे। पूज्यश्री व्याख्यान भवन मे पधारते थे और विराजमान भी रहते थे, मगर अशक्ति के कारण व्याख्यान नही फरमाते थे।

महासती श्रीकालीजी महाराज ने ठा ७ तथा श्रीसुन्दरकुवरजी ने ठा ५ से भीनासर मे ही चातुर्मास किया।

पूज्यश्री के विराजने से बीकानेर, गगाशहर तथा भीनासर के श्रावको और श्राविकाओ मे धर्मोत्साह छा गया। सब ने यथाशक्ति खूब धर्म-ध्यान किया। मुनि श्रीकेशूलालजी म ने पचरगी की तपस्या की। ब्यावर से करीब १२५ श्रावक-श्राविकाओ का जत्था आया और उसने पूज्यश्री से ब्यावर पधारने की विनति की।

आसोज शुक्ला मे हितेच्छु श्रावकमडल की बैठक हुई। बबई, सतारा, रतलाम आदि के प्रतिष्ठित पुरुष सम्मिलित हुए। जैनरत्न विद्यालय, भोपालगढ को ६००) रुपये की सहायता प्राप्त हुई।

श्री जवाहर किरणावली का प्रकाशन

जिस भीनासर मे अनेक बार पूज्यश्री की गभीर गर्जना सुनाई पडी थी, वही भीनासर आज पूज्यश्री की वाणी से वचित था। सन् १९२७ मे पूज्यश्री का चातुर्मास भीनासर मे था। उस समय के अनेक व्याख्यान अत्यन्त गभीर और प्रभावशाली थे। यह देखकर वहा के अग्रगण्य उत्साही श्रीमान् सेठ चम्पालालजी बाठिया के हृदय मे यह विचार आया कि पूज्यश्री के वर्त्तमान व्याख्यानो के अभाव मे पहले के व्याख्यान क्यो न प्रकाशित किये जाए ? कोई भी शुभ विचार आना चाहिए, फिर बाठियाजी उसे अमल मे लाने के लिए कसर नही रखते। तदनुसार आपने उसी समय रतलाम, हितेच्छु श्रावक मडल से आज्ञा मगवाई और प श्रीशोभाचन्द्रजी भारिल्ल न्यायतीर्थ को व्याख्यानो के सम्पादन का कार्य सौप दिया। वे व्याख्यान 'श्रीजवाहर किरणावली' के रूप मे प्रकाशित हुए। यह किरणावली अभी तक चालू है।

श्रीजवाहर जयन्ती

सन्त पुरुष विश्व की अनमोल निधि है। सन्त पुरुष को 'निधि' कहना ठीक जचता नही किन्तु उनकी महिमा प्रकट करने योग्य और कोई उपयुक्त शब्द भी तो हमारे पास नही है। जिस निधि के लिए दुनिया मरी जाती है, लोग क्रूर-से-क्रूर कर्म करते नही हिचकते, अपने प्राप्त सुखो का, यहा तक कि प्राणो का भी उत्सर्ग कर देते है, उसी निधि को सहज भाव से ठुकरा देने वाले सत महात्मा को 'निधि' कहना कहा तक उचित होगा ?

सत की महिमा का किन शब्दो द्वारा वर्णन किया जाय ? सत पुरुष ससार के अकारण बन्धु है, निस्पृह सेवक है, मनुष्य की आकृति मे मनुष्यता का बीज बोने वाले कुशल माली है, नीति और

धर्म के महान् शिक्षक हे, लोकोत्तर पथ के पदर्शक हे। ससार के कल्याण के लिए रत रहते हे। कोन-सा ऐसा भीषण-से-भीषण कष्ट हे, जिसे वे जगत् के उद्धार के लिए सहन करने को तेयार नही रहते!

जगत् को उनकी देन असाधारण हे। सत पुरुषो के चरणो के प्रताप से ही जगत् स्थिर है। ससार की घोर अशाति मे अगर कही शान्ति का आभास होता हे तो उसका सम्पूर्ण श्रेय उन महान् सतो को ही है, जिन्होने मनुष्य की मनुष्यता को कायम रखने का अश्रान्त श्रम किया हे। सत पुरुष समय-समय पर हमारा पथ-प्रदर्शन न करते तो मनुष्य-समाज दुनिया के पशुओ की ही एक श्रेणी मे खडा होता! अतएव कहा जा सकता है कि मनुष्य का निर्माता कोई भी हो, मगर मनुष्यता का निर्माता तो सत ही हे।

कहते हे, सत पुरुष ससार से विरक्त होता है। वह दुनिया की ओर पीठ फेर लेता हे। मगर इससे क्या ? उसकी विरक्ति ही तो हमारे लिए अमोल वरदान है। महाकवि हरिचद भट्टारक के शब्द बडे सुन्दर हे-

पराङ् मुखोऽप्येष परोपकार व्यापारभारक्षम एव साधु ।
किं दत्तपृष्ठेऽपि गरिष्ठधात्री प्रोद्धार कर्म प्रवणो न कूर्म ?॥

साधु पुरुष विमुख होकर भी परोपकार का भार सहन करने मे समर्थ होता है। पुराणो के अनुसार कछुवा ने यद्यपि पृथ्वी की ओर पीठ कर रखी है, वह पृथ्वी से विमुख है, फिर भी क्या वह भारी से भारी धरती को ऊपर नही उठाए हे ? उसी की पीठ पर धरती टिकी है।

यह महाकवि की कल्पना हे! इसमे सत के स्वभाव का बडी सुन्दरता के साथ वर्णन किया है।

इस प्रकार ससार का अपार उपकार करने वाले सतो का ऋण केसे चुकाया जा सकता हे ? सारे ससार का वैभव एकत्र करके उनके चरणो मे अर्पित करने की चेष्टा की जाय तो वे हमारी इस बाल-चेष्टा पर कदाचित् मुस्करा देगे! वैभव की उन्हे चाहना नही। उन्होने ठुकरा दिया हे। पूजा-प्रतिष्ठा का उन्हे लोभ नही। फिर उनके उपकारो से उऋण होने का क्या उपाय हे ? वास्तव मे कोई उपाय नही कि हम उनसे बेबाक हो सके। मगर बहुत कुछ लेते ही लेते जाना और देना कुछ भी नही, यह दीवालिया की स्थिति स्वीकार करना भले आदमी को नही सोहता। अतएव हम उनके असीम उपकारो के बदले मे अपनी आन्तरिक श्रद्धा-भक्ति प्रकट करके और कृतज्ञताज्ञापन करके ही अपना कर्त्तव्य पालन कर सकते हे।

पूज्यश्री जेसे महान् सत ने आधी शताब्दी पर्यन्त भारत के विभिन्न भागो मे पेदल-भ्रमण करके जो अनिर्वचनीय उपकार किये थे, उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के उद्देश्य से, उनके अतिम जीवनकाल मे पूज्यश्री की जयन्ती और दीक्षा स्वर्ण जयन्ती मनाने का निर्णय किया गया। बीकानेर-भीनासर का श्रीसघ ओर विशेषत इसके आयोजनकर्त्ता सेठ चम्पालालजी बाठिया इस सूझ के लिए वधाई के पात्र हे।

पूज्यश्री की जयन्ती

कार्तिक शु चतुर्थी ता २४-१०-४१ को भीनासर मे पूज्यश्री का जन्मदिवस मनाया गया। सेठ चम्पालालजी बाठिया के बगीचे के विशाल भवन मे भीनासर, गगाशहर और बीकानेर के श्रावक-श्राविका विशाल सख्या मे उपस्थित थे। प्रात काल सवा आठ बजे प मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज ने व्याख्यान

आरम्भ किया। आपने पूज्यश्री के जन्मस्थान, वाल्यकाल, दीक्षा आदि का सक्षिप्त किन्तु सारगर्भित शव्दो मे विवेक किया। इसके वाद वाठिया कन्या-पाठशाला की वालिकाओ ने मधुर शव्दो मे पूज्यश्री का अभिनन्दन गीत गाया। वह इस प्रकार था-

सेवो सेवा रे भविजन मन से पूज्य जवाहलाल॥
सेवो भक्ति-भाव से भाई, भवभय भजन हारी।
कर्म महारिपु मेटन, भेटन शिव सुख जगतप्रतिपाल।। सेवो ॥
परम् तपस्वी उग्र विहारी, ज्ञान भानु साकार।
पाखण्डी मद मर्दन गुरुवर, कर्म महारिपु काल।। सेवो ॥
देश मालवा गाव थादला, नाथीवाई मात।
सोलह वर्ष मे भए मुनीवर, जीवराज के लाल।। सेवो ॥
दूर-दूर विचरे अव ठाए, भीनासर चोमास।
नरनारी नगर त्रयवासी, पाए मगल माल।। सेवो ॥
कन्याशाला की वालाए, करती यह अभिलाप।
युग-युग जीवे पूज्य जवाहर, मुनिमन मान मराल।। सेवो ॥

इसके वाद प घेवरचन्दजी वाठिया 'वीरपुत्र' न्याय व्याकरण तीर्थ, सिद्धान्तशास्त्री का भापण हुआ। जिसमे आपने वताया कि पूज्यश्री के उपदेशो के प्रभाव से घाटकोपर मे जीव-दया खाते की स्थापना हुई। जहा प्रतिवर्ष हजारो पशु मृत्यु के फन्दे से छुडाए जाते हे। राजकोट मे आप ही के प्रभाव से 'जेन गुरुकुल पाठशाला' की स्थापना हुई। भीनासर-गगाशहर ओर वीकानेर के श्रीसघो ने मिलकर 'श्रीसाधुमार्गी जेन हितकारिणी सस्था' की स्थापना की। जिसमे एक लाख से अधिक कोप हे। इसकी तरफ से नोखा गाव, नोखा मडी, सारूडा, भोजास, ऊदासर, रासीसर आदि स्थानो मे पाठशालाए चल रही हे। अन्त मे आपने हितकारिणी सस्था के सदस्यो से प्रेरणा की कि पूज्यश्री का जीवन-चरित्र प्रकाशित होना चाहिए। इसके वाद वावू केसरीचन्दजी सेठिया ने अपनी कविता सुनाई। वावू खेमचन्दजी सेठिया, सूरजमलजी वछावत, नेमिचन्दजी वछावत, श्यामलालजी जेन एम ए , इन्द्रचन्दजी शास्त्री शास्त्राचार्य न्यायतीर्थ, वेदान्तवारिधि एम ए के भाषण हुए। प मुनिश्री जवरीमलजी महाराज ने पूज्यश्री के जीवन पर प्रकाश डाला। आपने वताया कि ध्यान ओर प्रभु प्रार्थना मे कितनी शक्ति रही हुई हे। इन्ही दोनो वातो से पूज्यश्री का सारा जीवन ओत-प्रोत हे।

सेठ चम्पालालजी वाठिया ने जन्मदिवस के उपलक्ष्य मे जीव-दया के लिए दान करने की अपील की। उसी समय २३१५) रु की रकम लिखी गई। उसे धाटकोपर जीव-दया खाते मे भेज दिया गया।

वीकानेर श्रीसघ की ओर से श्रीभानमलजी दसाणी ने पूज्यश्री से वीकानेर पधारने की प्रार्थना की। पूज्यश्री ने फरमाया कि चातुर्मास के वाद सुखे-समाधे वीकानेर पहुचने के भाव हे। अन्त मे वालिकाओ ने एक गायन ओर गाया ओर पूज्य श्री के जयनाद के साथ सभा विसर्जित हुई।

भीनासर मे पूज्यश्री के विराजने से वहुत धर्मध्यान हुआ। अनेक सस्थाओ को सहायता प्राप्त हुई। चातुर्मास पूर्ण होने पर, १०-११-८१ को पूज्यश्री वीकानरे पधार गए।

दीक्षा स्वर्ण जयन्ती

मार्गशीर्ष शु २ ता १८ फरवरी १९४२ को पूज्यश्री अपनी दीक्षा का पचासवा वर्ष पूरा करके इक्यावनवे वर्ष मे प्रवेश कर रहे थे। उसके लिए 'श्री इन्द्र' ने जेन प्रकाश ता १-११-४१ मे नीचे लिखी विज्ञप्ति प्रकाशित की।

पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज का दीक्षा स्वर्ण महोत्सव

मार्गशीर्ष शु २ तदनुसार ता १८ फरवरी रविवार को पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज साहेब अपनी दीक्षा का पचासवा वर्ष पूरा करके इक्यावनवे वर्ष मे प्रवेश कर रहे हे। अपनी इस लम्बी साधना मे उन्होने आत्महित ओर समाजहित के लिए जो कुछ किया हे उससे स्थानकवासी समाज भली-भाति परिचित है। आचार्यश्री के कठोर सयम की गाथा भारतवर्ष के कोने-कोने मे गाई जाती हे। उनकी ओजस्विनी वाणी ने जेन तथा जेनेतर जनता के हृदय मे घर कर लिया हे। उनके उपदेश वेयक्तिक तथा सामाजिक समस्याओ को सुलझाने मे मार्ग प्रदर्शन का काम कर रहे है। उनका जीवन, उनकी चर्या और उनका प्रत्येक क्षण महान् आदर्श और शिक्षाओ से भरा है।

जिस व्यक्ति ने आचार्यश्री के एक बार दर्शन किए है या व्याख्यान सुना है वह अच्छी तरह जानता है कि आचार्यश्री की वाणी मे कैसा जादू है। अदम्य उत्साह, प्रखर प्रतिभा, गम्भीर तर्कशक्ति ओर मोहिनी वाणी को लेकर आपने जगह-जगह अहिंसा धर्म का प्रचार किया। भयङ्कर कष्ट ओर महान् कठिनाइयो का सामना करके आपने सच्चे धर्म को बताया ओर पाखण्डियो का किला तोड डाला।

मारवाड, मेवाड, मालवा, मध्यप्रान्त, गुजरात, काठियावाड, बम्बई, महाराष्ट्र आदि दूर-दूर के प्रान्त आपके उपदेशामृत का पान कर चुके हे। पूज्यश्री के आगमन पर अपनी प्रसन्नता दिखाने के लिए स्थानीय श्रीसघो ने ऐसे कार्य किए हे जिनका समाज को ऊँचा उठाने मे बहुत बडा हाथ हे। घाटकोपर जीव-दया फण्ड, श्रीश्वेताम्बर साधु मार्गी जैन हितकारिणी सस्था बीकानेर, राजकोट गुरुकुल आदि सस्थाए आप ही के उपदेशो का फल है।

महात्मा गान्धी, मालवीयजी, लोकमान्य तिलक, सरदार पटेल आदि देश के महान् नेताओ ने आपका व्याख्यान सुनकर परम सन्तोष प्रकट किया है। जेनेतर जनता के सामने जेन धर्म का वास्तविक स्वरूप रखकर आपने बडे-वडे विद्वानो को प्रभावित किया हे ओर स्याद्वाद का मस्तक ऊँचा किया हे।

अहिंसा, खादी-प्रचार आदि कर्त्तव्यो का राष्ट्रीय ओर धार्मिक दृष्टि से पूर्ण समर्थन करके आपने धर्म और राजनीति के कार्यक्षेत्र को एक बनाने मे महान् उद्योग किया है।

स्थानकवासी समाज, जेन जाति ओर अखिल भारतवर्ष आपके इन कार्यो के लिए सदा ऋणी रहेगा।

उनके इस उपकार के लिए कृतज्ञता प्रकाशित करना और इस स्वर्णमहोत्सव पर श्रद्धाजलि प्रकट करना प्रत्येक भारतीय का कर्त्तव्य हे।

स्थानकवासी समाज को तो उस दिन कोई ऐसा कार्य करके दिखाना चाहिए जिससे आचार्यश्री की स्मृति अमर हो जाय ओर साथ मे उनके उपदेश कार्यरूप मे परिणत हो जाये। ऐसा करने के लिए

त्याग की आवश्यकता हे किन्तु त्याग के विना किसी महापुरुष का उत्सव मनाया भी तो नही जा सकता। रतलाम, उदयपुर, जोधपुर, अजमेर, व्यावर, वीकानेर, वम्वई, सतारा, मद्रास आदि सभी नगरो के श्रीसघ यदि किसी फण्ड की स्थापना करके उसे समाजोन्नति के किसी उपयोगी कार्य मे लगावे तो समाज का भविष्य शीघ्र उज्ज्वल वन सकता हे।

स्थानकवासी समाज सव तरह से सम्पन्न है। अगर चाहे तो प्रत्येक श्रीसघ लाखो का चन्दा कर सकता हे ओर एक ही दिन मे विद्यापीठ ही नही विश्वविद्यालय की स्थापना हो सकती हे। इस प्रकार के परमप्रतापी आचार्य की दीक्षा का स्वर्णमहोत्वस सदिया वीतने पर भाग्य से ही प्राप्त होता हे। ऐसा अपूर्व अवसर स्थानकवासी समाज तथा प्रत्येक श्रीसघ को न चूकना चाहिए ओर कुछ ठोस कार्य करके दिखाना चाहिए। इस प्रकार के कार्य से ही आचार्यश्री के प्रति अपनी भक्ति का ठीक-ठीक प्रदर्शन हो सकता है।

आशा हे, स्थानकवासी समाज के अग्रणी इस वात पर ध्यान देगे ओर उस दिन कोई स्थायी कार्य करके आचार्यश्री के प्रति अपनी सच्ची श्रद्धा प्रकट करेगे।

इस पर हितेच्छु श्रावक मण्डल रतलाम के मत्री श्रीवालचन्दजी श्री श्रीमाल ने तथा दूसरे सज्जनो ने अपने-अपने विचार प्रकट किए। परिणाम स्वरूप महोत्सव के दिन भारतवर्ष मे अनेक स्थानो पर पूज्यश्री की स्वर्ण जयन्ती मनाई गई ओर विविध प्रकार के शुभ कार्य हुए। नीचे लिखे स्थानो की कार्रवाई उल्लेखनीय हे -

जैन गुरुकुल व्यावर

ता २०-११-४१ की रात्रि को ८ बजे परमप्रतापी पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज की पचास वर्ष जेसे सुदीर्घ समय तक सयम साधना की स्वर्णजयन्ती मनाने के उपलक्ष्य मे गुरुकुल परिवार की एक सभा गुरुकुल के कुलपति श्रीसरदारमलजी सा छाजेड के सभापतित्व मे की गई।

प्रारम्भ मे गुरुकुल के अधिष्ठाता श्रीधीरजलाल भाई ने पूज्यश्री के प्रभावोत्पादक साधक जीवन का परिचय देते हुए सारगर्भित व्याख्यान दिया। तत्पश्चात् प शोभाचन्द्रजी भारिल्ल, श्रीशान्तिलाल व सेठ प दुग्धनारायणजी शास्त्री, श्रीमुल्कराजजी लिग्गा B A L L B तथा श्रीमुनीन्द्र कुमार जेन इत्यादि ने पूज्यश्री के गुणगान करते हुए जीवन पर प्रकाश डाला। तत्पश्चात् निम्नलिखित प्रस्ताव सर्व सम्मति से पास हुए -

प्रस्ताव १ - जेन समाज के ज्योतिर्धर, जेन-सस्कृति के प्राण रक्षक ओर प्रचारक परमप्रतापी पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज की पचास वर्ष जेसे सुदीर्घ समय तक सयम साधना के उपलक्ष्य मे 'व्यावर जेन गुरुकुल' का परिवार हार्दिक प्रमोद अभिव्यक्त करता हे ओर शासन देव से प्रार्थना करता हे कि पूज्यश्री चिरकाल तक ससार को मार्ग प्रदर्शित करते रहे।

प्रस्ताव २ - पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज के उपदेश सार्वजनिक, मोलिक, शास्त्रीय रहस्यो से परिपूर्ण ओर युग के अनुकूल हे। उन मे आध्यात्म, धर्म ओर राष्ट्रीयता का असाधारण सगीत हे। ऐसे लोकोपयोगी साहित्य के प्रकाशन ओर प्रचार के लिए यह सभा श्री हितेच्छु श्रावक मण्डल रतलाम,

श्री श्वेताम्बर साधुमार्गी जैन हितकारिणी सस्था बीकानेर, श्री जैन ज्ञानोदय सोसायटी राजकोट तथा अन्य महानुभावो से अनुराध करती है।

प्रस्ताव ३ - यह सभा ऐसे महान् पभावक आचार्य और धर्मोपदेशक के जीवन चरित्र तथा अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन उनकी स्वर्णजयन्ती के उपलक्ष्य मे उपयोगी समझती है और रतलाम हितेच्छु श्रावक मण्डल से आग्रह करती है कि शीघ्र ही पूज्यश्री का जीवन प्रस्तुत किया जाये।

प्रस्ताव ४ - यह सभा जैन समाज की महान् विभूति, पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज के पचास वर्ष जैसे सुदीर्घकालीन साधक जीवन की स्वर्णजयन्ती के उपलक्ष्य मे कोई जीवन्त स्मारक रखने के लिए समाज से साग्रह अनुरोध करती है ओर समाज के कर्णधारो से प्रार्थना करती है कि इस शुभ अवसर पर कोई महान् कार्य अवश्य हाथ मे उठावे और उसे सफलीभूत बनावे।

प्रस्ताव ५ - उक्त प्रस्ताव रतलाम, बीकानेर, राजकोट तथा अखबारो मे भेजे जावे।

उक्त प्रस्ताव होने के बाद सभापतिजी का पूज्यश्री के जीवन पर सारगर्भित भाषण हुआ। इसी प्रकार जोधपुर, फलौदी आदि बहुत-से स्थानो मे महोत्सव मनाया गया।

घुटने में दर्द

बीकानेर मे पूज्यश्री के घुटने मे दर्द फिर आरम्भ हो गया। वृद्धावस्था ओर दुर्बलता के कारण औषधियो ने अपना प्रभाव कम कर दिया। बाहर आना-जाना स्थगित हो गया। दिनोदिन कमजोरी बढती गई और शारीरिक स्थिति बिगडती चली गई। प्रिस विजयसिहजी मेमोरियल हॉस्पिटल बीकानेर के मेडिकल ऑफिसर प्रसिद्ध डाक्टर वेनगार्टन ने चिकित्सा प्रारम्भ की।

कुछ दिनो बाद थली प्रान्त से युवाचार्यश्री, पूज्यश्री की सेवा मे पधार गए। कुछ दिन सेवा करके आपने झज्जू आदि ग्रामो को फरसने के लिए विहार किया।

बीकानेर की गर्मी महन न होने के कारण पूज्यश्री फिर भीनासर पधारे ओर श्रीबाठियाजी के विशाल मकान मे ठहरे।

पक्षाघात का आक्रमण

घुटने का दर्द तथा अशक्ति आदि ने पहले ही पूज्यश्री को घेर लिया था। डाक्टरो के इलाज का कोई विशेष प्रभाव नही दिखाई देता था। ऐसी स्थिति मे एक नई व्याधि और आ गई।

जेठ शुक्ला पूर्णिमा, ता ३०-५-४२ के दिन पूज्यश्री प्रतिदिन की भाति स्वाध्याय करने बेठे। उस समय तक कोई विशेष बात नही थी। जब आप स्वाध्याय करके उठने लगे तो आधे अग मे कुछ शिथिलता प्रतीत हुई। आप सहारा लेकर उठे ओर शौच पधारे। तदनन्तर अधिक शिथिलता प्रतीत होने लगी। सेठ चम्पालालजी बाठिया ने उसी समय डाक्टर बुलवाया ओर शरीर की परीक्षा करवाई। पूज्यश्री के दाहिने अगो मे पक्षाघात का आक्रमण हो गया था।

देशनोक मे विराजमान युवाचार्यश्री को सूचना दी गई ओर आप दो-तीन दिनो मे ही भीनासर आ पहुँचे।

डॉ वेनगार्टन की चिकित्सा आरम्भ हुई।

क्षमा का आदान-प्रदान

'विश्व के समस्त प्राणियो पर निर्वैरभाव रखना ओर विश्वमैत्री की भावना विकसित करना क्षमापणा का महान् आदर्श ओर उद्देश्य हे। मनुष्य के साथ मनुष्य का सवध अधिक रहता हे, अतएव मनुष्य-मनुष्य मे कलुषता की अधिक सम्भावना हे। अतएव मनुष्यो के प्रति निर्वैरवृत्ति धारण करने के लिए सर्वप्रथम अपने घर के लोगो के साथ, अगर उनके द्वारा कलुपता उत्पन्न हुई हो तो क्षमा का आदान-प्रदान करके विश्वमैत्री का शुभ समारभ करना चाहिए।

क्षमा का आदान-प्रदान करने से चित्त मे प्रसन्नता होती हे। चित्त की प्रसन्नता से भाव की विशुद्धि होती हे।'

'क्षमाधर्म की आराधना करने वाला सम्यग्दृष्टि इस वात का विचार नही करता कि दूसरे मुझसे क्षमायाचना करते हे या नहीं ? इस वात का विचार किये विना ही वह अपनी ओर से विनम्रभाव से प्रेरित होकर क्षमा की प्रार्थना करता हे। इस विषय मे वृहत्कल्पसूत्र के शव्द स्मरणीय हे। 'जो उवसम्मइ तस्स अरित्थ आराहणा, जो न उवसमइ तस्स नत्शि आराहणा' अर्थात् जिसके साथ तुम्हारी तकरार हुई हे वह तुम्हारा आदर करे या न करे। उसकी इच्छा हो तो वदन करे, इच्छा न हो तो वदन न करे। उसकी इच्छा हो तो तुम्हारे साथ भोजन करे, इच्छा न हो तो भोजन न करे। उसकी इच्छा हो तो तुम्हारे साथ रहे, इच्छा न हो तो न रहे। उसकी इच्छा हो तो तुम्हारे प्रति उपशान्त हो, इच्छा न हो तो उपशान्त न हो। तुम उसके इन कृत्यो को मत देखो। तुम अपने अपराध के लिए क्षमा माग लो ओर उसके अपराधा को अपनी ओर से क्षमा कर दो।'

जिन महापुरुष ने अपने अनुयायियो को इस प्रकार क्षमाधर्म का उपदेश दिया ओर उनके अन्त करण को निष्कषाय बनाने का उपाय वताया, वह स्वय उसका व्यवहार किये विना केसे रह सकता था ? पूज्यश्री ऐसे उपदेशक थे जो किसी भी सद्वृत्ति को अपने जीवन मे व्यवहृत करते थे ओर फिर दूसरो को उपदेश देते थे। उनका समस्त उपदेश उनके जीवन व्यवहार मे ओतप्रोत था। इसी कारण उनके उपदेश की प्रभावकता वहुत वढ गई थी।

पूज्यश्री के शरीर पर जव विविध व्याधियो का हमला होने लगा ओर शरीर उनका सामना करने मे असमर्थ प्रतीत होने लगा ओर लम्वे जीवन की सम्भावना न रही तव आपने प्राणी मात्र से क्षमायाचना कर लेना उचित समझा। कोन जाने, कब, क्या स्थिति हो ? क्षमायाचना का सुअवसर मिले या न मिले ? अतएव पहले ही अपना हृदय पूर्णरूप से विशुद्ध रखना उचित हे। इस प्रकार विचार करके पूज्यश्री ने ता १८-६-४२ के दिन नीचे लिखे आशय के उद्गार प्रकट किए -

(१) साधु, साध्वी, श्रावक ओर श्राविका रूप चतुर्विध श्रीसघ से मे अपने अपराधो के लिए अन्त करण पूर्वक क्षमायाचना करता हूँ।

(२) मेरा शरीर दिन प्रतिदिन क्षीण होता जा रहा हे। जीवन-शक्ति उत्तरोत्तर घट रही हे। इस वात का कोई भरोसा नही हे कि इस भौतिक शरीर को छोडकर प्राणपखेरू कव उड जाये। ऐसी दशा मे जव तक ज्ञान-शक्ति विद्यमान हे, भले-वुरे की पहचान हे तव तक ससार के सभी प्राणियो से, विशेषतया चतुर्विध श्रीसघ से क्षमा-याचना करके शुद्ध हो लेना चाहता हूँ। मेरी आप सभी से विनम्र प्रार्थना हे कि आप भी शुद्ध हृदय से मुझे क्षमा प्रदान करे।

(३) मेरी अवस्था ६७ वर्ष की हे। दीक्षा लिए पचास वर्ष से अधिक हो गए हे। इस समय मे मेरा चतुर्विध सघ से विशेष सम्पर्क रहा हे। स १९७५ से श्रीसङ्घ ने तथा पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज साहेब ने सम्प्रदाय के शासन का भार मेरे निर्बल कन्धो पर रख दिया था। पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज के समान पतापी महापुरुष के आसन पर बैठते हुए मुझे अपनी कमजोरियो का अनुभव हुआ था, फिर भी गुरु महाराज तथा श्रीसघ की आज्ञा का पालन करना अपना कर्त्तव्य समझकर मेने उस आसन को ग्रहण कर लिया। इसके बाद शासन की व्यवस्था के लिए मैने समयोचित बहुत-से परिवर्तन और परिवर्द्धन शास्त्रानुसार किए है। सम्भव हे उनमे से कुछ बाते किसी को गलत या बुरी लगी हो। मे उनके लिए सभी से क्षमा मागता हूँ।

(४) मे साधुवर्ग का विशेष क्षमाप्रार्थी हूँ। उनके साथ मेरा गुरु ओर शिष्य के रूप मे, शासक और शास्य के रूप मे, सेव्य ओर सेवक के रूप मे तथा दूसरे कई प्रकारो से घनिष्ठ सबध रहा हे। मैने शासनोन्नति के लिए ज्ञान, दशर्न और चारित्र की रक्षा के लिए, सगठनवृद्धि के लिए शास्त्रानुमोदित कई नियमोपनियम बनाए है, जिन्हे मुनियो ने सदा वरदान की तरह स्वीकार किया हे। फिर भी यदि मेरे किसी बर्ताव के कारण किसी मुनि के हृदय मे चोट लगी हो, उन्हे किसी प्रकार का कष्ट पहुँचा हो तो मै उसके लिए बार-बार क्षमा-याचना करता हूँ। मेरी आत्मा की शाति ओर निर्मलता के लिए वे मुझे क्षमा प्रदान करे। इसी तरह जो मेरे द्वारा क्षमा के उत्सुक है उन्हे मे भी अन्त करणपूर्वक क्षमा प्रदान करता हूँ। मैने अपनी आत्मा को स्वच्छ एव निर्वेर बना लिया हे।

(५) अपनी सम्प्रदाय का सचालन करने और सामाजिक व्यवस्था करने के लिए मुझे दूसरी सम्प्रदाय के आचार्य तथा बहुत से स्थविर मुनियो के सम्पर्क मे आना पडा हे। किसी-किसी बात पर मुझे उनका विरोध भी करना पडा है। उस समय बहुत सम्भव है, मुझसे कोई अनुचित या अविनय-युक्त व्यवहार हो गया हो। मे अपने उस व्यवहार के लिए उन सभी से क्षमा माँगता हूँ। मेरी प्रार्थना पर ध्यान देकर वे सभी आचार्य तथा स्थविर मुनि मुझे क्षमा प्रदान करने की कृपा करे।

(६) मे जिस बात को हृदय से सत्य मानता हूँ उसी का उपदेश देता रहा हूँ। बहुत-से व्यक्तियो से मेरा सेद्धान्तिक मत-भेद भी रहा है। सत्य का अन्वेषण करने की दृष्टि से उनके साथ चर्चा वार्ता करने का प्रसग भी बहुत बार आया है। यदि उस समय मेरे द्वारा किसी प्रकार प्रतिपक्षियो का मन दुखा हो, उन्हे मेरी कोई बात बुरी लगी हो तो उसके लिए मै हार्दिक क्षमा चाहता हूँ। मेरा उसके साथ केवल विचार-भेद ही रहा हे। वैयक्तिक रूप मे मेने उन्हे अपना मित्र समझा है। ओर अब भी समझ रहा हूँ। आशा है वे मुझे क्षमा प्रदान करेगे।

(७) मेने जो व्याख्यान दिए हे उनमे से मण्डल ने कई-कई चातुर्मासो के व्याख्यानो का सग्रह कराया हे। इस विषय मे मेरा कहना हे कि जिस समय जो-जो मेने कहा हे वह जेन आगमो ओर निर्ग्रन्थ प्रवचनो को दृष्टि मे रखकर ही कहा हे। यह बात दूसरी हे कि समय के परिवर्तन के साथ-साथ द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के अनुसार विचारो मे भी परिवर्तन होता रहा हे। फिर भी मे छद्मस्थ हूँ। मुझसे भूल हो सकती हे। मे सत्य का गवेषक हूँ। सभी को सत्य ही मानना चाहिए। असत्य के लिए मेरा आग्रह नही हे। मुझे अपनी बात की अपेक्षा सत्य अधिक प्रिय हे।

(८) मेरी शरीरिक अशक्ति के वाद और पहले जो साधु मेरी सेवा मे रहे है, उन्होने मेरी सेवा करने मे कुछ भी वाकी नही रहने दिया। अपने कष्टो को भूलकर वे प्रत्येक समय प्रत्येक प्रकार से मेरी सेवा मे तत्पर रहे है। स्वय सरदी, गरमी एव भूख-प्यास के परीपहो को सह कर भी उन्होने मेरी सेवा का ध्यान रखा है। इसके लिए मे उनकी सेवा का हार्दिक अनुमोदन करता हूँ। उनके द्वारा की गई सेवा का आदर्श नवदीक्षितो के लिए मार्गदर्शक वनेगा।

(९) लगभग आठ वर्ष से शारीरिक अशक्ति के कारण मैने साम्प्रदायिक शासन का भार युवाचार्यश्री गणेशीलालजी को सोप रखा है। उन्होने जिस योग्यता, परिश्रम ओर लगन के साथ इस कार्य को निभाया ओर निभा रहे है, वह आपके समक्ष है। मुझे इस वात का परम सन्तोप है कि युवाचार्यश्री गणेशीलालजी ने अपने को इस उत्तरदायित्वपूर्ण पद का पूर्ण अधिकारी प्रमाणित कर दिया है। ओर कार्य अच्छी तरह सभाल लिया है। साथ मे इस वात की भी मुझे प्रसन्नता है कि श्रीसघ ने भी इनको श्रद्धापूर्वक अपना आचार्य मान लिया है। इनके प्रति आपकी भक्ति तथा आप सभी का पारस्परिक प्रेम उत्तरोत्तर वृद्धिगत होता रहे ओर इसके द्वारा भव्य-प्राणियो का अधिकाधिक कल्याण हो, यही मेरी हार्दिक अभिलापा है।

(१०)सज्जनो! जिसने जन्म लिया है उसकी मृत्यु अवश्यम्भावी है। ससार मे जन्म-मरण का चक्र चलता ही रहता है। यह शरीर तो एक प्रकार का चोगा है। जिसे प्राणि स्वय माता के गर्भ मे तेयार करता है ओर पुराना होने पर छोड देता है। पुराने चोगे को छोडकर नए-नए चोगे पहिनते जाना जीवन के साथ अनादि काल से लगा हुआ है। इसमे हर्ष या विषाद की कोई बात नही है। हर्ष की वात तो हमारे लिए तब होगी जब इस चोगे को इस रूप मे छोडेगे कि फिर नया न धारण करना पडे। वास्तव मे नवीन चोगे का धारण करना ही बन्धन है ओर उसे उतारना छुटकारा है। जब यह चोगा हमेशा के लिए छूट जाएगा वही मोक्ष है। अत यह चोगा छूटने पर भी आत्म-समाधि कायम रहे, यही मेरी भावना है।

(११)अन्त मे मे यही चाहता हूँ कि मैने ससार त्याग करके भगवती दीक्षा स्वीकार की है। उसकी आराधना मे जो प्रयत्न अव तक किया है उसमे मेरी शारीरिक या मानसिक स्थिति केसी भी रहे, भग न हो। उसमे प्रतिदिन वृद्धि हो ओर मे आराधक बना रहूँ।

पूज्यश्री के यह उद्‌गार व्याख्यान मे सुनाए गए। श्रोताओ के हृदय गद्‌गद् हो उठे। अनेक आखो ने अश्रु वहाकर उनका अभिनन्दन किया। व्याख्यान-सभा मे अनोखी शान्ति छा गई। विषाद फेल गया। महान् सत की इस सात्विक वाक्यावली मे उनके जीवन की साधना का सार था। उन्होने क्षमायाचना करके जो आदर्श ओर उपदेश उपस्थित किया, वह उनके समस्त उपदेशो का कलश कहा जा सकता है। इस परोक्ष उपदेश मे जो शक्ति है, वह किसका हृदय नही हिला देती?

जीवन साधना की परीक्षा

पूज्यश्री ने अपने जीवन के अनमोल पचास वर्षों मे जो परम उच्च साधना की थी, उसका एकमात्र लक्ष्य आत्मशुद्धि था। अमर आत्मा के लिए आपने नाशवान् शरीर की ममता त्याग दी थी। आपने कहा था -

'अनादिकाल से जड का चेतन के साथ ससर्ग हो रहा है। जब तक चेतन्य के साथ जड के रहने का सिलसिला जारी हे तब तक आत्मा के दु ख का भी सिलसिला जारी रहेगा। जिस दिन जड-चेतन के ससर्ग का सिलसिला समाप्त हो जायेगा, उसी दिन दु ख भी समाप्त हो जायेगा ओर एकान्त सुख प्रकट हो जायेगा'।

पूज्यश्री ने इस ससर्ग के सिलसिले को खत्म करने मे ही अपना जीवन लगा दिया। उन्होने शरीर ओर आत्मा का भेद पहचान लिया था। इस पहचान को आपने इन शब्दो मे घोषित भी किया था -

जो तुम्हारा है, वह तुमसे कभी अलग नही हो सकता। जो वस्तु तुमसे विलग हो जाती या हो सकती है, वह तुम्हारी नही है। पर पदार्थों मे आत्मीयता का भाव स्थापित करना महान् भ्रम है। इस भ्रमपूर्ण आत्मीयता के कारण जगत् अनेक कष्टो से पीडित है। अगर 'मै' और 'मेरी' मिथ्या धारणा मिट जाय तो जीवन मे एक प्रकार की अलोकिक 'लघुता, निरुपम निस्पृहता ओर दिव्य शाति का उदय होगा'।

इस प्रकार पूज्यश्री ने आत्मा और शरीर आदि बाह्य वस्तुओ के भेद को समझा ओर समझाया था।

विद्यार्थी वर्ष भर पढता है और अन्त मे उसकी परीक्षा ली जाती है। पढाई विद्यार्थी की साधना हे। परीक्षा देकर वह अपनी साधना की सफलता से सतोष मानता है। जिसकी जितनी उत्कट साधना होती है, उसकी परीक्षा भी उतनी ही कठोर ली जाती है। जिसकी साधना ही कठोर न होगी, उसकी परीक्षा कठोर क्या ली जायेगी! इस नियम के अनुसार पूज्यश्री की परीक्षा प्रकृति ले रही थी। उनकी साधना बडी लम्बी और कठोर थी, अतएव परीक्षा भी लम्बी ओर कठोर हुई।

जहरी फोड़ा (Carbuncle)

लकवा की शिकायत पूरी तरह दूर भी नही हो पाई थी कि कमर के पीछे बाईं ओर कार्बंकल फोडा उठ आया। फोडे के कारण दुस्सह वेदना थी और इसी कारण बुखार भी हो आया था। फोडा भयकर रूप धारण कर रहा था। सभी को विश्वास हो गया कि अब आचार्य महाराज का अतिम समय सन्निकट आ गया।

बीकानेर के चीफ सर्जन डॉ एलन पूज्यश्री को देखने आए। उनकी सम्मति थी कि फोडे का आपरेशन न किया गया तो पूज्यश्री का बचना असभव है। साथ ही आपरेशन करने मे भी आधी जोखिम हे।

चीफ मेडिकल आफीसर को जब दूसरी बार पूज्यश्री को देखने के लिए बुलाया गया तो उसने आश्चर्य के साथ कहा- ओह! आचार्य अब तक जीवित हे! दवा नही, ईश्वर ही उनकी रक्षा कर रहा हे। बीमारी की ऐसी स्थिति मे साधारण मनुष्य बच नही सकता था!

अन्त मे फोडा बिना आपरेशन किये ही फूट गया। दुस्सह वेदना होने पर भी पूज्यश्री अत्यन्त शान्तभाव से सब कुछ सहन कर रहे थे। 'आत्मा जगत् के एक दु ख को दूर करने के प्रयास मे दूसरे अनेक दु खो का शिकार बन जाता हे। वह इस मूल तथ्य की ओर नही देखता कि- मे जिन कष्टो को

दूर करने के लिए व्यग्र हो रहा हूँ, उन कष्टो का उद्गम स्थान कहाँ है ? वह कष्ट क्यो और कहा से आए है ? ओर वे कष्ट किस प्रकार विनष्ट किये जा सकते है ?' यह वाक्य जिसके मुख से निकले थे वह महात्मा भला शारीरिक कष्ट आने पर केसे व्याकुल हो सकते थे ? उनकी सहनशक्ति ओर शान्ति अद्‌भुत थी, आश्चर्यजनक थी।

सघ के सौभाग्य से १०-१५ दिन बाद फोडे मे कुछ सुधार दिखाई दिया। गगाशहर स्टेट हॉस्पिटल के डाक्टर श्री अविनाशचन्द्र प्रतिदिन आकर फोडे मे से मवाद निकाल देते थे ओर मरहमपट्टी कर जाते थे।

छह महीने मे फोडा बिलकुल साफ हो गया किन्तु फोडे के दिनो मे लगतार लेटे रहने से पूज्यश्री के बाएँ अगो मे इतनी कमजोरी आ गई कि उठना-बेठना कठिन हो गया। यह अशक्ति अन्त तक बनी रही।

ता २५-७-४२ को राजकोट के डाक्टर रा सा लल्लू भाई पूज्यश्री के दर्शनार्थ आए। उन्होने पूज्यश्री के इलाज की सराहना की ओर स्वस्थ हो जाने की आशा प्रकट की।

पचासवॉ चातुर्मास (सं. १९९९)

बीमारी के कारण पूज्यश्री ने सवत् १९९९ का चातुर्मास भी भीनासर मे ही किया। युवाचार्य महाराज भी साथ थे और प मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज तो काठियावाड प्रवास ओर उसके बाद बराबर पूज्यश्री की सेवा मे ही थे । कुल १९ ठाणा थे।

पूज्यश्री के फोडे मे लाभ होते देख बीकानेर-श्रीसघ के अत्याग्रह से भाद्रपद कृष्णा ३ को युवाचार्यश्री बीकानेर पधार गए।

सेवा की सराहना

पूज्यश्री के दर्शनार्थ यों तो प्रतिवर्ष सेकडो-हजारो दर्शनार्थी आया करते थे किन्तु इस वर्ष बहुत बडी सख्या मे दर्शनार्थी आए। लोगो को प्रतीत होने लगा था कि सभवत यह दर्शन आपके अन्तिम होगे। अत दूर-दूर से दर्शनार्थियो की भीड लग गई। बाठिया बन्धु तथा भीनासर-गगाशहर सघ सभी अतिथियो का उत्साहपूर्वक स्वागत कर रहा था। पूज्यश्री की रुग्णावस्था मे बाठिया-परिवार ने तथा श्रीसघ ने जो सेवा बजाई वह अत्यन्त सराहनीय थी।

ता २९ दिसम्बर १९४२ को भीनासर मे हितेच्छुश्रावक मडल की बेठक हुई। स्थानीय सदस्यो के अतिरिक्त बाहर से भी अनेक सज्जन पधारे। बेठक मे बाठिया बधुओ ओर चिकित्सको के सबध मे निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकृत हुआ -

'श्रीमज्जेनाचार्य पूज्यवर्य १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज साहब के शरीर मे इस वर्ष भयकर पीडा हो गई थी, जिससे आपके जीवन विषयक आशका हो गई थी। किन्तु सघ के प्रबल पुण्योदय से श्रीमान् के शरीर मे शान्ति हो गई और फोडा बिलकुल साफ हो गया। इसके लिए मडल की यह सभा अपना अहोभाग्य मानती है ओर अत्यन्त हर्ष व्यक्त करती है। परन्तु फिर भी शरीर मे कमजोरी बढती जा रही है। इसके लिए यही कामना करती है कि पूज्यश्री का स्वास्थ्य शीघ्र ही सुधरे। साथ ही पूज्यश्री की पीडा के समय मे डाक्टर अविनाशचन्द्रजी ने पूज्यश्री की जो महती सेवा बजाई है, इसलिए मडल उनकी सेवाओ को लक्ष्य मे लेकर उनको अभिनन्दनपत्र देने का प्रस्ताव ठहराता है।

इसी तरह बीकानेर, गङ्गाशहर, भीनासर के सघ ने एव श्रीमान् सेठ कनीरामजी, बादरमलजी तथा चम्पालालजी साहब बाठिया ने विशेष रूप से पूज्यश्री की महती सेवा बजाई व बजा रहे है, उसके लिए यह मडल आपका अन्त करणपूर्वक आभार मानता हे तथा डाक्टर साहब श्रीमान् वेन गार्टन, पी एम ओ , डॉ सूरजनारायण जी आसोपा, वेद्य रामनारायणजी महन्त, स्वामी केवलरामजी, प भैरवदत्तजी आसोपा एव प रामरत्नजी ने भी बहुत सेवा बजाई है। इतना ही नही वेद्यवर्यों ने फीस भी नही ली। इसलिए मडल इन सब का आभार मानता हे।'

दो दीक्षाएँ

चौमासे के अनन्तर मार्गशीर्ष कृ ४ को श्रीईश्वरचदजी सुराणा देशनोक-निवासी ओर श्रीनेमीचदजी सेठिया गगाशहर (बीकानेर) निवासी की भीनासर मे दीक्षाएँ हुई। श्रीईश्वरचदजी सरदारशहर मे ही दीक्षा लेने का विचार कर रहे थे किन्तु माताजी की बीमारी के कारण विलम्ब हो गया। माताजी का स्वर्गवास होने के अनन्तर आपने बडे भाई की आज्ञा लेकर दीक्षा ग्रहण की। श्रीनेमीचदजी ने पहले सपत्नीक शीलव्रत खघ लिया और अपनी रुग्ण पत्नी की अम्लान-भाव से अच्छी सेवा की। कुछ समय पश्चात् पत्नी का देहान्त हो जाने पर आप दीक्षित हुए।

आप (नेमीचदजी सेठिया) अन्यत्र गोद गये थे। वहाँ प्रकृति न मिलने के कारण आप दिशावर चले गये और वहा कमाने लगे और इस प्रकार स्वावलम्बन का जीवन बिताने लगे। कुछ समय पश्चात् आप दिशावर से लोट आये। और आपके हृदय मे वैराग्य भाव जागृत हो गये। आपकी सोजायत माता की ओर से जो जेवर आपकी शादी मे चढाया गया था वह सब वापिस उन्हे सभलाकर उनके चित्त को सतुष्ट कर दिया। फिर उनसे दीक्षा की आज्ञा प्राप्त कर उत्कट वैराग्य के साथ दीक्षा धारण की। आपका दीक्षा-महोत्सव सुप्रसिद्ध दा वी सेठ भैरोदानजी सेठिया के दूसरे पुत्र श्रीयुत पानमलजी सेठिया की ओर से समारोहपूर्वक सम्पन्न हुआ।

उक्त दोनो वेरागियो को पूज्यश्री ने 'करेमि भते' का प्रत्याख्यान कराया।

पंजाबकेसरी की अभिलाषा अपूर्ण रही

पूज्यश्री की अस्वस्थता के समाचार सुनकर पजाबकेसरी पूज्यश्री काशीरामजी महाराज ने आपसे मिलने की इच्छा प्रकट की। आप जोधपुर मे चोमासा पूर्ण करके पीपाड तक पधारे, मगर अचानक छाती मे दर्द हो आने के कारण आगे विहार न कर सके। अतएव आपने अपने शिष्य कविवर मुनिश्री शुक्लचन्द्रजी महाराज को पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज की सेवा मे भेजा। पजाब-सम्प्रदाय के छह सत पजाब की ओर से पधार गए। पूज्यश्री के सत और श्रावक उनके स्वागतार्थ सामने गए। दोनो सम्प्रदायो मे सतो ने खूब प्रेमपूर्ण व्यवहार रहा। सम्मिलित व्याख्यान होता था। कुछ दिन तक पूज्यश्री की सेवा मे विराजकर पजावी सत विहार कर गए।

सूर्यास्त का समय

वज्र की वन जा लेखिनी! नही तो पूज्यश्री के अतिम जीवन का चित्र तू अकित न कर सकेगी। ओर हृदय! तू पाषाण की भाँति कठोर हो जा। अरे हाथ! तू थर्राता क्यो हे ?

जिस उत्तरोत्तर उमग के साथ और उछलते हुए उत्साह की तरगो पर चढकर, तुम सवने मिलकर एक महापुरुष की शाब्दिक आकृति खडी की है वह उमग भग हो गई और वह उत्साह समाप्त हो गया है। चित्रकार ने जो चित्र वडी श्रद्धा के साथ अकित किया था और जिस पर उसे वडा अभिमान था, अब उसी चित्रकार को अपने चित्र के विनाश का भी चित्र अकित करना पडेगा! हाय विडम्वना!

कर्त्तव्य कितना कठोर है! मगर उसे करना पडेगा। मन से, वेमन से, चाहे हँसते हुए, चाहे रोते हुए। वह अधूरा नही रहेगा।

फोडा ठीक हो जाने के वाद पूज्यश्री का स्वास्थ्य कुछ ठीक हो चला था। उस समय कोई खास बीमारी नही रही थी, यद्यपि वाया पैर वेकार हो गया था। सव सम्भव उपाय किये, वाठिया-वन्धुओ ने तन-मन-धन से प्रयत्न किया, मगर कोई उपाय और प्रयत्न कारगर न हुआ। जोलाई १९४३ के आरम्भ मे पूज्यश्री की गर्दन पर भयानक फोडा निकल आया। शरीर के दूसरे भागो पर भी उसी प्रकार के छोटे-छोटे फोडे उठ आये। डाक्टरो ने वहुत प्रयत्न किया मगर कोई लाभ होता नजर न आया। डाक्टर अपने करने योग्य कार्य ही करते थे और शेष ड्रेसिग आदि कार्य उनके शिष्यगण साधु ही करते थे। अन्त मे डाक्टर निराश हो गए।

उसी समय भारत के कोने-कोने मे तार द्वारा पूज्यश्री के चिन्ताजनक स्वास्थ्य के समाचार भेज दिये गए। अनेक स्थानो के अग्रणी श्रावक उपस्थित हो गए। का अ भा श्वे स्था जेन काफ्रेस की ओर से निम्न तार आया -

Conference, praying shashandev long live pujyashri May this Jawahar remain ever shining Secretaries

काफ्रेस पूज्यश्री की दीर्घायु के लिए शासनदेव से प्रार्थना करती है। यह 'जवाहर' सदा चमकता रहे यही कामना है।

आषाढ शुक्ला अष्टमी ता १०-७-४३ को पूज्यश्री की दशा अधिक निराशाजनक हो गई। युवाचार्यश्री ने पूज्यश्री के कथनानुसार अन्य मुनियो एव श्रीसघ की अनुमति से पोने वारह वजे तिविहार सथारा करा दिया।

उस समय प्रशस्त भावना उनके सोम्य, शान्त और सात्विक चेहरे पर प्रतिविम्वित हो रही थी। उनके मुखमण्डल पर एक अलौकिक आभा, अपूर्व ज्योति चमक रही थी।

युवाचार्य ने दूसरी वार एक वजे करीव चोविहार सथारा करा दिया। उसी दिन पाच वजे जवाहर रूपी भास्कर आत्मा ने दुर्वल शरीर वधन त्याग कर स्वर्ग की ओर प्रयाण कर दिया।

पूज्यश्री लगभग एक वर्ष पहले ही अपने समग्र साधु जीवन की आलेचना कर चुके थे। सिर्फ बीमारी की अवस्था मे ओषध आदि विषयक जो दोष लगे थे, उन्ही की आलेचना करना शेष था। आषाढ शुक्ला सप्तमी की रात्रि को लगभग ग्यारह वजे पूज्यश्री की नाडी मे कुछ गडवड देखकर युवाचार्य ने आप से वहा उपस्थित सब सन्तो के सामने आलोचना करने का निवेदन किया। पूज्यश्री ने दोषो की आलोचना की। तत्पश्चात् युवाचार्यश्री ने स्वय ही प्रायश्चित्त लेने के लिए कहा! तव पूज्यश्री ने फरमाया- क्या नवीन दीक्षा ले लू ? युवाचार्यश्री ने कहा- नवीन दीक्षा के योग्य कोई दोष तो आपको लगा नही

है। सिर्फ उत्तर गुणो मे साधारण दोष लगे है। उसके लिए यथोचित प्रायश्चित्त ले लीजिए। तब पूज्यश्री ने फरमाया- तुम्ही पायश्चित्त दे दो। अन्त मे छह महीने का छेद लेकर अपनी आत्मशुद्धि की। उसी समय प्रात काल तक के लिए सागारी अनशन भी धारण कर लिया।

अन्तिम दर्शन

पाण निकलते समय पूज्यश्री के मुख-मण्डल पर दिव्य शान्ति विराज रही थी। वेदना का विषाद कही लेशमात्र भी दृष्टिगोचर नही था। ऐसा जान पडता था, जेसे जीवन-सग्राम मे सफलता पाने के वाद वीर योद्धा सन्तोषपूर्वक विदाई ले रहा हो।

पूज्यश्री ने अन्त तक शाति का सेवन किया। घोर कष्ट के नाजुक प्रसग पर भी उनकी आत्मा मे पूर्ण समाधि रही। उनका समग्र जीवन आदर्श रहा और उनकी मृत्यु भी आदर्श रही। जीवन-व्यापिनी सयम-साधना की परीक्षा मे वे पूर्ण रूप से सफल हुए। उन्होने पडितमरण प्राप्त किया। उनका जीवन मनुष्य मात्र के लिए एक महान् कल्याणमय उपदेश था और उनकी मृत्यु एक आदर्श सन्देश दे गई।

जिन भाग्यशालियो ने पूज्यश्री की अन्तिम समय की छबि देखी, उनके नेत्रो मे वह सदा के लिए समा गई। कितनी सोमता! कितनी भव्यता। कैसी शान्ति! कैसी समाधि! निहारने वाले निहाल हो गए!

शोक-सागर लहराने लगा

पूज्यश्री के स्वर्गवास का समाचार बिजली की तरह सारे भारतवर्ष मे फेल गया। शोक के बादलो से आसू बरसने लगे। धरती और आकाश सभी रोने लगे। प्रकृति अपना हृदय न सभाल सकी। उसने भी आसू गिराकर उस दिव्य आत्मा के प्रति अपनी श्रद्धाजलि प्रकट की!

बीकानेर, गगाशहर, भीनासर, उदयरामसर आदि आसपास के स्थानो के तथा बाहर से आए हुए सहस्रो श्रावक हृदय को किसी प्रकार थामकर आते और पूज्यश्री के निष्प्राण शरीर का दर्शन करके, अश्रुधारा की श्रद्धाजलि भेट करते हुए चले जाते थे। भीनासर और बीकानेर के श्रीसघ को ऐसा लगा मानो उसने समूचे सघ की अनमोल धरोहर खो दी हो।

वालक-वृद्ध, नर-नारी, अमीर-गरीब, साक्षर-निरक्षर सभी के चेहरे पर अपूर्व गहरा विषाद दिखाई देता था। अकारण जगबन्धु का वियोग हृदय मे ऐसा चुभ रहा था, मानो किसी अत्यन्त स्नेहपात्र आत्मीय जन का वियोग हो गया हो! पूज्यश्री के वियोग से जैनो ने अपना जवाहर खोया, सन्तो ने सिरताज खोया, धर्म ने आधार खोया, पण्डितो ने पथ-प्रदर्शक खोया, पथभ्रष्ट पथिको ने प्रकाशस्तभ खोया, ज्ञान के पिपासुओ ने अमृत का स्रोत खोया।

देवताओ ने एक महात्मा को अपने बीच पाकर कौन जाने, किस श्रद्धा के साथ उसका स्वागत किया है। काश, हमारी दृष्टि वहा तक पहुच पाती!

श्मशान-यात्रा

भीनासर के सेठ चम्पालालजी वाठिया की पूज्यश्री के प्रति अनुपम भक्ति थी। पृज्यश्री जव तक भीनासर मे विराजमान रहे, आपने समस्त घरू काम-काज से छुटकारा लिया और अनन्य भाव से उन्ही की सेवा मे तल्लीन रहे। न दिन गिना, न रात। तन-मन-धन की तनिक भी परवाह नही की। पूज्यश्री

की चिकित्सा मे उन्होने कोई वात उठा न रखी। फिर भी जव पूज्यश्री की हालत निरन्तर गिरती ही चली गई तो उन्होने एक वर्ष पहले ही चादी का एक सुन्दर विमान वनवाकर तेयार करा लिया।

पूज्यश्री की श्मशान-यात्रा के लिए आषाढ शुक्ला ९ का प्रात काल निश्चित किया गया था। सूर्योदय के साथ-साथ हजारो की भीड भीनासर मे एकत्र होने लगी। सर्वप्रथम युवाचार्य श्रीगणेशीलालजी महाराज को चतुर्विध श्रीसघ के समक्ष आचार्य पद की चादर ओढाने की क्रिया विधि-पूर्वक की गई।

निश्चित समय पर पूज्यश्री का शव स्वर्ण मडित रजत-विमान मे विराजमान किया गया। पूज्यश्री के जयनाद के साथ श्मशान का जुलूस रवाना हुआ। आगे-आगे पूज्यश्री के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए राज्य की ओर से भेजे हुए नगाडा, निशान ओर वेड थे। उनके पीछे पूज्यश्री के यशोगीत गाती हुई भजन मडलिया चल रही थी। उसके वाद पूज्यश्री का विमान था। विमान के पीछे महिलाएँ गीत गाती हुई चल रही थी ओर फिर पुरुषो का विशाल समूह था। सवसे पीछे उछाल करने के लिए ऊँटो पर सवार चल रहे थे। श्रावको की पूज्यश्री के प्रति इतनी अधिक भक्ति थी कि करीव वीस हजार रुपया उछाला गया। धरती रुपयों से विछ गई। कई एक मेहतरो के हिस्से मे १००-१२५ रुपये आए।

थोडी-थोडी देर मे विशाल जन-समूह पूज्यश्री का जयघोप करता था। आकाश गूज उठता था।

भीनासर और गगाशहर मे घूमता हुआ जूलूस १२ वजे श्मशान मे पहुचा। चन्दन, घी, कपूर, खोपरा आदि सुगधित पदार्थों से विमान-सहित पूज्यश्री का अग्नि सस्कार किया गया।

बीकानेर मे आषाढ महीने मे घोर गर्मी रहती हे ओर धूप इतनी तेज कि चार कदम चलना कठिन हो जाता हे। मगर आज एक प्रकृतिविजयी महात्मा पुरुष की श्मशानयात्रा थी, अतएव प्रकृति ने अपना रूप पलट लिया। श्मशान यात्रा आरभ होने से पहले, प्रात काल ६ वजे ही उसने करीव आधा इच जल की वर्षा की ओर पृथ्वी शीतल हो गई। श्मशानयात्रा जव तक जारी रही तव तक मेघो ने सूर्य के आडे आकर धूप को रोके रखा। अलवत्ता जव पूज्यश्री के शव का चितारोहण किया गया तव मेघ हट गए ओर धूप चमकने लगी। सतो की महिमा अपार हे। प्रकृति भी उनकी तेजस्विता का लोहा मानती हे।

राज्य का सम्मान

पूज्यश्री के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के लिए राज्य ने डका, निशान, लवाजमा आदि तो भेजा ही, साथ ही पूज्यश्री के शोक मे आषाढ शुक्ला नवमी को राज्य भर मे छुट्टी भी घोषित की। सारे राज्य के स्कूल, कॉलेज तथा आफिस वद रखे गये। इसी प्रकार वाजार, कसाईखाने, भट्ठियाँ भी वद रखने की आज्ञा जारी की गई।

शोक सभाएं

पूज्यश्री के स्वर्गवास का समाचार विजली की तरह सारे भारतवर्ष मे फैल गया। इससे सारे जेन समाज मे शोक का समुद्र उमड आया। पूज्यश्री के प्रति श्रद्धाजलि अर्पित करने के लिए स्थान-स्थान पर सभाए हुईं। वाजार वन्द रखे गए ओर दूसरे प्रकारो से भक्ति एव श्रद्धा प्रकट की गई।

स्वर्गवास के समाचारो के वाद फिर दूसरा तार आया -

Conference extremely sorry to hear sad demise of Pujyashri and prays Almighty for eternal peace to his soul Irreparable loss to gain Community

अर्थात् पूज्यश्री के दु खद अवसान को सुनकर कान्फ्रेस को अत्यन्त दु ख हुआ। उनकी आत्मा की अनन्त शान्ति के लिए ईश्वर से प्रार्थना है। उस महान् जवाहर के वियोग से जेन समाज को ऐसी हानि हुई है जिसकी पूर्ति नही हो सकती।

बम्बई मे पूज्यश्री के पति सम्मान प्रदर्शित करने के लिए १२ तारीख को शेयर बाजार, दाणाबन्दर, बीया बाजार आदि बन्द रहे। इसी प्रकार कान्फ्रेस आफिस, रत्न-चिन्ता मणि स्कूल, तथा सूर्यकान्त प्रेस आदि भी बन्द रहे।

बम्बई में विशाल शोक सभा

बम्बई मे पूज्यश्री के स्वर्गवास का समाचार मिलते ही वहाँ के श्रीसघ ने शोक सभा का समय निश्चित कर समाचार पत्रो तथा हैण्डबिलो द्वारा सारे नगर मे घोषणा कर दी। तदनुसार ता १३-७-४३ को नप्पू हाल, माटुगा मे शोक सभा की गई। सभा का आयोजन अ भा श्वे स्थानकवासी जेन कान्फ्रेस, श्री स्थानकवासी जैन सकल सघ, बम्बई तथा रत्न-चिन्तामणि स्थानकवासी जैन मित्र मण्डल की तरफ से सम्मिलित रूप मे किया गया था। शोक सभा मे आत्मार्थी मुनिश्री मोहन ऋषिजी महाराज, प विनय ऋषिजी महाराज, विदुषी महासती श्री उज्ज्वल कुँवरजी महाराज आदि ठा ९ से उपस्थित थे। बम्बई तथा उपनगरो के भाई-बहिन भी अच्छी सख्या मे उपस्थित थे। सघ के प्रमुख श्रीयुत वेलजी भाई नप्पू बी ए एल एल बी ने प्रमुख का स्थान ग्रहण किया था।

सर्वप्रथम प मुनिश्री विनयऋषिजी महाराज ने सद्गत पूज्यश्री के प्रति श्रद्धाजलि प्रकट करते हुए उनकी विद्वत्ता व राष्ट्रीयता का वर्णन किया। अन्त मे आपने कहा- "उनके व्यक्तित्व की मेरे हृदय पर जो गहरी छाप पडी है, वह यह है कि अपने समाज मे धुरन्धर आचार्य हैं और होगे, लेकिन ऐसे आचार्य विरले ही होगे। पूर्वाचार्यों ने अपना समग्र-जीवन साहित्य-सेवा और प्रदर्शन के खण्डन-मण्डन मे लगाया है, जबकि पूज्यश्री का सम्पूर्ण जीवन राष्ट्रसेवा, जेनधर्म के सिद्धान्तो का प्रचार और प्राणिमात्र की रक्षा के उपदेश के पीछे खर्च हुआ है। उनका उपदेश हृदय की गहराई से निकलता था"।

इसके वाद आत्मार्थी मुनिश्री मोहनऋषिजी महाराज ने अपनी भावपूर्ण श्रद्धाजलि प्रकट करते हुए कहा- "पूज्यश्री द्रव्यमरण से मृत्यु पाने पर भी भाव जीवन से जीवित ही है। थोडे घटो पहले वे अपने जितने दूर थे, अव उतने ही निकट है। यह शोक सभा नही किन्तु शान्ति सभा है। पूज्यश्री २०वी सदी के अजोड आचार्य थे। भारत के लिए गाधीजी जितने उपकारक है उतने ही पूज्यश्री जैन समाज के लिए उपयोगी थे। खादी, गो-पालन, गृह-उद्योग और अल्पारम्भ महारम्भ के सम्वन्ध मे विशेष प्रकाश डालकर उन्होने समाज को दिव्यचक्षु का जो दान दिया है उसके लिए समाज उनका खास ऋणी रहेगा। जव दया और धर्म के नाम पर महा आरम्भ-जन्य उत्सव, सवर के स्थान पर आस्रव, वैराग्य के स्थान पर विलास, त्याग के स्थान पर भोग का समाज मे वोलवाला था तव पूज्यश्री ने अल्पारम्भ और महारम्भ की व्याख्या समाज को समझाकर उसे पवित्रता के पुनीत पथ पर प्रयाण करने का मार्ग प्रदर्शित किया। पूज्यश्री के साहित्य द्वारा समाज को नवचैतन्य मिला है। भविष्य की प्रजा को भी इस साहित्यरूपी नसीहत से प्रेरणा मिलती रहेगी"।

तत्पश्चात् महासती श्रीउज्ज्वलकुँवरजी महाराज ने श्रद्धाजलि अर्पित की। आपने मार्मिक शब्दो मे कहा-"पूज्यश्री के स्वर्गवास से जेन-समाज का सूर्य अस्त हो गया। इससे आन्तर-सृष्टि मे अन्धकार छा गया है। जहाँ सूर्य का प्रखर प्रकाश भी नही पहुँच सकता ऐसे अज्ञान तिमिराच्छादित हृदय पटलो को पूज्यश्री ने प्रकाशित किया था। दीर्घजीवन मे विशेषता नही हे। महत्त्व तो आदर्श जीवन का हे। पूज्यश्री का जीवन आदर्श था। जिस प्रकार यात्रा के जल, स्थल ओर आकाश तीन मार्ग हे ओर उनमे आकाश मार्ग सर्वोत्कृष्ट हे, इसी प्रकार जीवन यात्रा के भी तीन मार्ग हे- आधिभोतिक, आधिदेविक एव आध्यात्मिक। अध्यात्मिक मार्ग सर्वोत्तम हे। पूज्यश्री ने अपनी जीवन यात्रा इसी मार्ग से पूर्ण की। इसीलिए वे पूजे जा रहे हे और पूजे जाएँगे! समाज का दुर्भाग्य तो यह हे कि वह महापुरुषो के लिए फाफा मारता हे। मगर जब महापुरुष मिल जाता हे तो उसे पचा नही पाता। जेन समाज को महापुरुषो का पचाना सीखना होगा"।

पश्चात् कान्फ्रेस के मानद मत्री श्रीयुत चिमनलाल पोपटलाल शाह ने अन्त करण से शोक प्रदर्शित करते हुए नीचे लिखा शोक प्रस्ताव उपस्थित किया –

"श्री अखिल भारतवर्षीय श्वे स्थानकवासी जेन कान्फ्रेस, श्री श्वे स्था जेन सकल-सघ बम्बई और र चि जैन मित्र मडल बम्बई की तरफ से बुलाई गई यह आम सभा पूज्यश्री १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज साहेब के दुखद एव आकस्मिक स्वर्गवास के प्रति अपना हार्दिक शोक प्रकट करती है। पूज्यश्री जैन सिद्धान्तो के प्रकाण्ड विद्वान्, अहिंसा ओर सत्य के प्रखर प्रचारक एव जीव-दया, ग्रामोद्योग, खादी आदि राष्ट्रोद्धारक प्रवृत्तियो के हिमायती थे। ऐसे सयमी, चारित्रवान् ओर विद्वान् धर्मनायक के स्वर्गवास से जेन समाज ने तो सचमुच 'जवाहर' खोया हे। जेनेतर जनता को भी विश्वप्रेम, सत्य और सयम के निष्परिग्रही प्रचारक की अनिवार्य क्षति पहुँची हे। ऐसा यह सभा मानती हे। यह सभा पूज्यश्री गणेशीलालजी महाराज साहेब ओर उनके शिष्य-मडल तथा चतुर्विध स्थानकवासी जेन श्रीसघ के दुख मे अपनी हार्दिक सम्वेदना प्रकट करती हे ओर स्वर्गस्थ पवित्रात्मा को चिरस्थायी शान्ति प्राप्त हो, ऐसी भी शासनदेव से अन्त करणपूर्वक प्रार्थना करती हे"।

इसके बाद पूज्यश्री के जीवित स्मारक रूप घाटकोपर जीवदया खाते की स्थापना मे पूज्यश्री की प्रेरणा तथा उनके उपदेश का वर्णन करते हुए सहायता की अपील की गई। श्रीयुत गिरधरलाल भाई दफ्तरी के प्रयास से ४३००) की रकमे लिखी गईं।

श्रीयुत खीमचन्द भाई वोरा ने प्रस्ताव का समर्थन किया। इसके वाद श्री हीराणी ने अपनी कविताए सुनाईं। पूज्यश्री की आतमशान्ति के लिए ८ लोगस्स का ध्यान किया। मागलिक प्रवचन के वाद सभा की कार्रवाई पूर्ण हुई।

इसी प्रकार घाटकोपर तथा दूसरे स्थानो मे भी शोकसभाए हुईं। नीचे लिखे स्थानो पर पूज्यश्री के लिए शोक सभा होने के समाचार मिले -

१ अ भा श्वे स्था जेन कान्फ्रेस, बम्बई।

२ श्री श्वे स्थानकवासी जेन सङ्घ, वम्बई।

३ श्री रत्नचिन्तामणि स्था जेन मित्र-मडल, बम्वई।

४ श्री श्वे स्था जेन सङ्घ, घाटकोपर।
५ श्री सार्वजनिक जीवदया खाता, घाटकोपर।
६ प रत्नचन्द्रजी जेन कन्या पाठशाला, घाटकोपर।
७ श्री स्थानकवासी जैन-समाज सङ्घ, राजकोट।
८ दी ग्रेन मर्चेण्ट एसोसिएशन, बम्बई।
९ दी क्लोथ मार्केट एसोसिएशन, इन्दौर।
१० सराफा बाजार, इन्दौर।
११ श्री स्थानकवासी जैन सङ्घ, इन्दौर।
१२ श्री स्थानकवासी जैन सङ्घ, ब्यावर।
१३ श्री हितेच्छु श्रावक मण्डल, रतलाम।
१४ श्री धर्मदास जैन मित्र-मडल, खाचरोद।
१५ श्री स्था जैन बालचर सङ्घ, सादडी।
१६ श्री स्था जैन सङ्घ, जमुनिया।
१७ श्री श्वे साधुमार्गी शि सस्था, उदयपुर।
१८ श्री वर्द्धमान सेवाश्रम, उदयपुर।
१९ श्री जेन सभा, अमृतसर।
२० श्री स्थानकवासी सङ्घ, बडी सादडी।
२१ श्री श्वे स्थानकवासी सङ्घ, सादडी।
२२ श्री जवाहर मित्र-मडल, मन्दसोर।
२३ श्री श्वे स्था जैन वीर-मडल, केकडी।
२४ श्री जवाहर शोक सभा, बादेवड।
२५ श्री जवाहर शोक सभा, सीगापेसमल।
२६ श्री जेन गुरुकुल, ब्यावर।
२७ श्री तिलोकरत्न स्था जेन परीक्षा बोर्ड, पाथर्डी।
२८ श्री जैन रत्न पुस्तकालय, पाथर्डी।
२९ श्री अमोल जेन सिद्धान्त शाला, पाथर्डी।
३० श्री जाटर सभा, वीले पारले।
३१ श्री स्थानकवासी जेन सङ्घ, मालेगाव।
३२ श्री जेन वोर्डिङ्ग स्कूल, कुचेरा।
३३ श्री का शि ओसवाल बोर्डिङ्ग, जलगाव।
३४ श्री स्थानकवासी जेन सङ्घ, लुधियाना।
३५ श्री स्था जेन जवाहर हि श्रा मण्डल, उदयपुर।
३६ श्री जेन श्वे स्था सघ, कोटा।

३७ श्री शान्ति जेन पाठशाला, पाली।
३८ श्री जेनोदय प्रिटिग प्रेस, रतलाम।
३९ श्री स्था जेन श्रीसङ्घ, नीमच।
४० श्री स्था जेन श्रीसङ्घ, अहमदनगर।
४१ श्री स्था जेन श्रीसङ्घ, चित्तोडगढ।
४२ श्री जेन सभा, जम्मू।
४३ श्री महावीर जेन स्कूल, जम्मू।
४४ श्री विजय जेन स्कूल, कानोड।
४५ श्री सारा बाजार, कानोड।
४६ श्री सारा बाजार मालेगाव।
४७ श्री श्री जेनसङ्घ, जोधपुर।

इनके अतिरिक्त और बहुत से नगरो ओर ग्रामो मे शोक सभाए की गईं।

श्री जवाहर विद्यापीठ की स्थापना

आषाढ शुक्ला १० को प्रात काल ९ बजे बीकानेर, गगाशहर ओर भीनासर के चतुर्विध सघ की सम्मिलित शोक-सभा हुई। पूज्यश्री के प्रति अपनी श्रद्धाजलि प्रकट करने के बाद श्रीमान् लहरचदजी सेठिया ने अपील की। आपने कहा- 'स्वर्गस्थ पूज्यश्री के प्रति वास्तविक ओर स्थायी श्रद्धाभाव व्यक्त करने के लिए आवश्यक है कि एक अच्छा स्मारक फड कायम किया जाय ओर उसके द्वारा समाज-हित का कोई अच्छा कार्य किया जाय।' कई वक्ताओ ने इसका समर्थन किया। पूज्यश्री गणेशीलालजी महाराज ने भी अपनी मर्यादा के अनुसार, सघ के हित मे यथाशक्ति सहयोग देने की सूचना दी। पश्चात् अपील करने वाले लहरचद जी सेठिया ने सेठिया-बधुओ की ओर से ११०००) रुपये भेट करने का वचन दिया। उसी समय बाठिया-बधुओ ने भी ११०००) रुपये देने की घोषणा की। उसी समय चदा एक लाख के लगभग पहुँच गया।

स्व पूज्यश्री शिक्षा के प्रबल हिमायती थे ओर धार्मिक शिक्षा पर बहुत जोर दिया करते थे। अतएव आपकी स्मृति मे शिक्षा-सस्था की स्थापना करना उचित समझा गया। तदनुसार भीनासर मे 'श्रीजवाहर विद्यापीठ' के नाम से एक सस्था स्थापित की गई हे। यह सस्था अभी प्रारभिक रूप मे हे-शेशवकाल मे हे। सेठ चम्पालालजी साहब बाठिया के अतिथिगृह मे अभी चल रही हे। आशा हे भीनासर-बीकानेर-गगाशहर का सम्पन्न श्रीसङ्घ उसे विशाल और विराट रूप प्रदान करेगा।

❑

पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज साहिब

के प्रति

मुनियों, राजा-महाराजाओं

तथा

प्रतिष्ठित व्यक्तियों

की

श्रद्धाञ्जलियां

परिशिष्ट नं. 1

मुनियो की श्रद्धाञ्जलिया

राजन्य वर्ग की श्रद्धाञ्जलिया

प्रतिष्ठित व्यक्तियो की श्रद्धाञ्जलिया

पद्य मे श्रद्धाञ्जलियां

परिशिष्ट नं. 2

जवाहर विचार–बिन्दु

परिशिष्ट नं. 3

जयतारण शास्त्रार्थ

पूज्यश्री के प्रति मुनियों की श्रद्धाञ्जलियां

१ — प्रभावक पूज्यश्री

(ऋषि सम्प्रदाय के आचार्य प रत्न पूज्यश्री आनन्द ऋषि जी महाराज)

शास्त्रविशारद, जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज साधुमार्गी समाज मे जवाहर के समान चमक रहे है। आपकी व्याख्यान शक्ति बडी ओजस्विनी है। यद्यपि पूज्यश्री के साथ रहने का विशेष सौभाग्य नही मिला, फिर भी अजमेर मुनि सम्मेलन के अवसर पर आपके दर्शन हुए थे और वाणी सुनने का शुभ प्रसग भी प्राप्त हुआ। वे दिन मुझे याद आते है।

श्रमण सस्कृति की तरफ पूज्यश्री का लक्ष्य होने से लोगो के ऊपर अच्छी छाप पडती है, क्योंकि विद्वान् और क्रियावान् दोनो बाते क्वचित् ही मिलती है। यही कारण है कि पूज्यश्री ने काठियावाड की तरफ विहार करके कानजी मुनि (सोनगढ वाले)के पजे मे फँसने वाले अज्ञान श्रावक–श्राविकाओ को शुद्ध श्रद्धा मे कायम किया। इसी तरह जिस स्थली–प्रदेश मे श्री ऋषि सम्प्रदाय के ज्योति शास्त्र विशारद, पडित मुनि श्री दौलत ऋषिजी महाराज ने जाने के लिए प्रस्थान किया था, और जेनाचार्य स्वर्गीय पूज्यश्री श्रीलाल जी महाराज ने भी धर्म प्रचार करने की भावना से विहार किया था,परन्तु वे इष्टसिद्धि नही कर सके, उसी स्थली–प्रदेश मे पूज्यश्री ने तप सयम मे सुदृढ रहते हुए अपनी विद्वान् शिष्य मडली के साथ हिम्मत से जाकर चूरू, सरदार शहर आदि स्थानो मे जहाँ तेरहपथी समाज का विशेष प्राबल्य है, जो एक प्रकार के दुर्ग हे, उन मे प्रविष्ट होकर शुद्ध स्थानकवासी धर्म का प्रचार किया। उस प्रदेश के जेनेत्तर लोग जेन धर्म के रहस्य को नही जानते थे, उनके दिल पर भी प्रकाश डाला। यह कुछ साधारण बात नही हे।

पूज्यश्रीजी ने साहित्यिक सेवा भी उत्कृष्ट रीति से की हे। जो कि व्याख्यान-सग्रह मे से श्रावक का अहिसाव्रत, सत्यव्रत आदि बारह व्रतो पर स्पष्टीकरण हितेच्छु श्रावक मण्डल रतलाम ने प्रकाशित किया हे।उससे लोगो के अन्त करण मे धर्म भावना सुदृढ होती है। राजकोट व्याख्यान सग्रह, जामनगर व्याख्यान सग्रह, श्री सूयगडाग सूत्र का सविवेचन भाषान्तर आदि प्रयास विशेष प्रशसनीय हे।

तेरहपथी समाज की तरफ से अनुकम्पा की ढाले नामक पुस्तक छपी हे। भ्रमविध्वसन नामक ग्रथ जयाचार्य जी (जीतमलजी) विरचित हे। उस ग्रन्थ मे दया, दान, विनय रूप गुणरत्नो का खण्डन करने के लिए कुयुक्तिया लगाकर जनता की आँखो मे धूल फेकने का काम किया हे। उसमे अज्ञान जनता का फँस जाना स्वाभाविक हे। गुरुगम से रहित पढे लिखे व्यक्ति भी उस के चक्कर मे आ जाते

हे। ऐसे अज्ञान ओर सज्ञान लोगो की दया, दान, विनय की ओर प्रवृत्ति कराने के लिए सचोट शास्त्रीय प्रमाण देकर उनकी कुयुक्तियाँ वताते हुए, शुद्ध धर्म की श्रद्धा वढाने के लिए 'सद्धर्म मण्डन' नामक वृहत् पुस्तक की रचना की हे। उसी प्रकार अनुकपा विचार नामक पुस्तक भी दया भगवती की स्थापना करने के लिए उसी भाषा मे तेयार की। पूज्यश्री का यह कार्य भी आदर्श ओर अद्वितीय हे।

इस कार्य के करने से जेन धर्म ओर स्थानकवासी जेन सम्प्रदाय का मुख उज्ज्वल हुआ हे ऐसा कहने मे कोई अतिशयोक्ति नही हे।

पूज्यश्री जी के समान धुरधर, विद्वान्, प्रतिभासपन्न वक्तृत्व शक्ति धारक, सुपरिश्रमी ओर सुलेखक जवाहर अपने समाज मे अनेक उत्पन्न होकर जेन धर्म की उन्नति करे, ऐसी शुभाकाक्षा रखता हूँ।

२—पूज्य—परिचय

(पूज्यश्री रत्नचन्द्र जी महाराज की सप्रदाय के आचार्य पडितप्रवर पूज्य श्री हस्तीमलजी महाराज)

आज हमारे सामने तीर्थंकर या वेसे अन्य कोई अतिशय ज्ञानी नही हे जो सुनिश्चित रूप से धर्म का स्वरूप समझावे ओर मतभेद या शकाओ का निरसन कर सके। मात्र एक धर्माचार्य ही आज ससार के पथ प्रदर्शक रहे हे ओर यह आचार्य पद ही ऐसा हे जो तीर्थंकर के अभाव मे भी चतुर्विध सघ का धर्ममार्ग के उद्बोधन व सचालन आदि के द्वारा नेतृत्व कर सकता हे। इसीलिए धार्मिक मर्यादाओ मे योग्य परिवर्तन का अधिकार भी शास्त्रकार ने इन के हाथ मे दिया हे। इन आचार्यों के वहुमत से स्वीकृत नियमावली जीत व्यवहार समझी गई है। इस से निश्चित हे कि शास्त्र का सत्यरूप ससार को दिखाने वाले धर्माचार्य ही हे। मगर इस उल्लेख से पाठक यह नही समझ वेठे कि धर्माचार्य नामधारी सभी मे यह शक्ति होती है। क्योंकि योग्य धर्माचार्य ससार के तारक हे वेसे अयोग्य धर्माचार्य ससार के मारक भी होते हे। अतएव योग्य धर्माचार्य का सयोग प्राप्त करने के लिए पहले उनके योग्यता सूचक गुणो का परिचय करना आवश्यक हे। शास्त्र मे इन्द्रिय सयम आदि धर्माचार्य के ३६ गुण वताए हे, जो प्राय प्रसिद्ध हे। किन्तु दशा श्रुतस्कन्ध की चतुर्थ दशा मे उनका सक्षेप ८ दशाओ मे मिलता हे। जेसे- १ आचार विशुद्धि, २ शास्त्रो का विशिष्ट ओर तलस्पर्शी वाचन, ३ स्थिर सहनन ओर पूर्णेन्द्रियता ४ वचन की मधुरता तथा आदेयता आदि, ५ अस्खलित वाचना व मूल अर्थ की निर्वाहकता, ६ ग्रहण एव धारणा मति की विशिष्टता, ७ शास्त्रार्थ मे द्रव्य, क्षेत्र व शक्ति की अनुकूलता से प्रयोग करना, ८ समय के अनुसार साधुओ के सयम निर्वाहार्थ साधन सग्रह की कुशलता। इन आठ विशेषताओ के साथ निर्दोष चारित्र धर्म का पालन करना एव आश्रित सघ को ज्ञान क्रिया मे प्रोत्साहित करते रहना यह आचार्य की खास विशेषता हे।

मुझे आज जिन पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज का परिचय देने का प्रसग मिला हे, उन मे पाठको को इन विशेषताओ का अधिकाश दर्शन हो सकता हे। आप धीर-वीर ओर प्रभावक तथा प्रचीनता का न्याय युक्ति से शोधन करने वाले हे। आपकी उपदेश शैली स्था समाज में आदर्श समझी जाती हे। आपके प्रवचन क्रान्तिकारी एव सुधारणा के विचार को लिए रहते हे। इन उपदेशो ने जिस सम्प्रदाय के आप आचार्य हे उस मे ही नही किन्तु स्था समाज मे क्रान्ति की लहर उत्पन्न कर दी हे।

आज से ३०-३५ वर्ष पूर्व जो साधु-साध्वियो का पण्डित से शिक्षण लेना अधिकाश सम्प्रदायो मे (खासकर आपकी सम्प्रदाय में) निषिद्ध समझा जाता था, विरोध का सामना करके भी आपने उस प्रथा को आवश्यकतानुसार स्वीकार किया ओर आज जब प्रत्येक साधु-साध्वी पण्डित प्रथा को अपनी प्रतिष्ठा समझने लगे और उनके लिए गृहस्थो से चन्दा इकट्ठा करके फ़ड बनाने लगे तब उसके दुरुपयोग की आशका होते ही अपनी सम्पदाय मे उसका प्रतिबन्ध करके आपने अपवाद रूप से ही उसको अपनाने की छूट रखी है। यह पूज्यश्री की समयज्ञता है। इसके सिवाय चारित्र रक्षण की बाह्य मर्यादाओ मे भी निर्भीकता से आपने कई परिवर्तन किए हे। स्था समाज की विशाल शक्ति सगठित रूप मे आकर जगत को अपना अनुपम कार्य दिखा सके, इसके लिए मुनि-सम्मेलन अजमेर के खास मुनियो के समक्ष ''वर्धमान सघ'' की एक योजना भी रखी। किन्तु उस समय अनुकूल भूमिका के अभाव से वह योजना कार्य रूप मे नही आ सकी। अस्तु, जैसा समाज का भाग्य। उपरोक्त घटनाओ से आपकी प्रभावशालिता व उदार वृत्ति ज्ञात होती हे। बुद्धिपूर्वक स्वीकृत तत्त्व के आग्रह मे जैसे आप दृढ थे वेसे प्रेमानुराग मे आग्रह त्यागी अतिशय मृदु भी थे। सम्मेलन के सामान्य परिचय के सिवाय मेरा पूज्यश्री से दो ही बार समागम हुआ है। प्रथम सम्मेलन के पूर्व लीरी गाव मे और दूसरा जेठाने मे। उस समय के वे प्रेमल प्रसग आज भी स्मृति चिह्न बनाए हुए है। विहार के समय तो आपने प्रीति की अतिशयता कर दिखाई। प्रीत्यर्थ या मेरे आचार्यपद के सम्मानार्थ मुझे मागलिक सुनाने को फरमाया जो प्रेमावेश के बिना छोटे मुँह से बडी बात सुनना होता। मैने भी आपके अनुरोध से मोन खोलकर काठियावाड से पुनरावर्तन की कुशल कामना करते हुए मागलिक सुनाया। उस समय आपकी भावुकता व श्रद्धा का दृश्य दर्शनीय था। साम्प्रदायिक झझटो को भी आत्मरमण मे बाधक समझ कर पूज्यश्री ने कई वर्षों से अपना अधिकार युवाचार्य जी को दे दिया है। अपनी मौजूदगी मे ही युवाचार्य जी सघ-सचालन का पूर्ण अनुभव प्राप्त कर ले ओर अपने को आत्मरमण मे विशेष लाभ मिले इस दृष्टि से आपका यह कार्य भी आदर्श व दूरदर्शिता पूर्ण है। इस प्रकार आपकी विशेषताओ का सक्षिप्त परिचय है। विशेष परिचय पाठको को जीवन चरित्र से मिलेगा ही। शास्त्र मे कहा हे कि -

जह दीवो दीवसय, पइप्पए जसो दीवो।
दीवसमा आयरिया, दिव्वति पर च दीवति॥

अर्थात-आचार्य दीपक के समान है। जेसे दीप सेकडो दीपको को जलाता हे ओर खुद भी प्रकाशित रहता हे, ऐसे दीप के समान आचार्य स्वय ज्ञान आदि गुणो से दीपते और उपदेश दान आदि से दूसरों को भी दीपाते हे। अन्त मे यही सदिच्छा हे कि आप दीर्घायु लाभ करे ओर ''वर्धमान गच्छ'' जेसी योजना से समाज का दृढ हित साधने मे यशस्वी बने।

३—एक महान् ज्योतिर्धर

(जैनाचार्य पूज्यश्री पृथ्वीचन्द्रजी महाराज)

किसी का नाम अच्छा होता हे काम नही ओर किसी का काम अच्छा होता हे, नाम नही। अच्छा नाम आर अच्छा काम किसी विरली आत्मा को ही मिलता हे। हमारे सोभाग्य से पृज्य श्रीजवाहरलाल जी महाराज को दोनो प्राप्त हुए ह। जवाहर'' कितना सुन्दर, सरस एव महत्त्वसृचक नाम हे। ओर काम! वह तो आज जेन ससार के प्रत्येक स्त्री, पुरुष के समक्ष सृर्य के समान प्रकाशमान हे।

पूज्यश्री के जीवन का हर पहलू उज्ज्वल हे। उनका ज्ञान ऊँचा है, उनका दर्शन ऊँचा है, उनका चरित्र ऊँचा है, अतएव उनका रत्नत्रय ऊँचा है। उनके जीवन का प्रत्येक प्रगति-बिन्दु ऊँचा है।

पूज्यश्री का साहित्य "जीवन साहित्य" हे। उसने सुप्त-समाज मे जागरण पेदा किया हे। साधुधर्म और गृहस्थ-धर्म के पृथक्करण मे वास्तविक मार्ग का प्रदर्शन किया है। वर्तमान बीसवी शताब्दी मे, जेन आचार विचारो का महत्त्व यदि किसी ने नवीन दृष्टिकोण से ससार के सामने रखा हे ओर साथ ही पुरातन सस्कृति का भी सरक्षण किया है तो वह पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज हे। उन्हे जितना भूतकाल का पता है उतना ही वर्तमान काल का पता हे ओर इन सब से बढकर पता हे भविष्य काल का। अतएव आप समाज की प्रत्येक परिस्थिति का एक चतुर वेद्य की भाँति निदान करते हुए हमारे सामने उस परिस्थिति के उपचार और परिचालन का आदर्श उपस्थित करते हे। वर्तमान जेन समाज के पूज्यश्री बहुत बडे आध्यात्मिक वेद्य है, जिनकी चिकित्सा-प्रणाली अमोघ है। जिनके अहिंसा और सत्य के प्रयोगो से हजारो दुष्कर्म दूषित आत्माए आध्यात्मिक स्वास्थ्य प्राप्त कर चुकी हे।

पूज्यश्री का भक्तियोग बहुत ऊँची कोटि का है। व्याख्यान देने से पूर्व प्रार्थना के रूप मे जब गद्गद् हृदय से चौबीसी गान करते है तो साक्षात् मूर्तिमान भक्ति-रस सामने उपस्थित हो जाता हे। कट्टर से कट्टर नास्तिक हृदय भी एक बार भक्ति से झूम उठता हे। और जब प्रार्थना पर विवेचनात्मक प्रवचन होता है तब शान्त रस का समुद्र ठाठे मारने लगता हे। जीवन की उलझी हुई गुत्थियो का गहन जाल एक-एक करके सुलझने लगता हे। श्रोताओ के अन्तर्हृदय से अविश्वास एव मिथ्याविश्वास का चिरकाल लग्न पाप मल बाहर बह निकलता है।

पूज्यश्री के प्रकाण्ड पाण्डित्य का परिचय हमे 'सद्धर्ममडन' से मिलता हे। तेरा पथ समाज की युक्तियो का जाल बहुत विकट माना जाता हे। अच्छे-अच्छे दिग्गज विद्वान् भी कभी-कभी उनके कुतर्कों मे उलझ जाते है, परन्तु पूज्यश्री की प्रखर प्रतिभा के समक्ष 'भ्रमविध्वसन' की एक भी युक्ति सुरक्षित नही रह सकी। 'भ्रमविध्वसन' पर सद्धर्ममडन वह घातक चोट हे जिसकी चिकित्सा के लिए तेरापथ समाज के पास कोई औषधि नही हे।

जिनभद्रगणि का विशेषावश्यक भाष्य बहुत दुरूह माना जाता हे। किन्तु पूज्यश्री का उस पर कितना अधिकार हे, यह चरखी दादरी (जिद स्टेट) मे देखा जब आप शिष्यो को पढाते हुए उस पर मोलिक विवेचन करते थे तो जटिल से जटिल फक्किकाओ को सहज ही मे सुलझा डालते थे। आपका आगम ज्ञान भी बहुत उच्च कोटि का हे। इसका पता पाठको को आपके तत्त्वावधान मे सम्पादित होने वाले सूत्रकृताङ्ग के अनुपम सस्करण से मिलता हे।

पूज्यश्री की कोनसी विशेषताएँ वर्णन की जाये ओर कोनसी नही- यह चुनाव ही अटपटा जान पडता हे। आपके महान् जीवन की प्रत्येक विशेषता अक्षरो का रूप लेना चाहती हे, परन्तु महान् आत्माओ के सम्बन्ध मे ऐसा कभी नही हो सका हे। पूज्यश्री वर्तमान जेन ससार के महापुरुष हे, अत उनका महान् जीवन कलम के नीचे न अब आ सकता हे ओर न कभी आ सकेगा। यह तो आपके महान् व्यक्तित्व के प्रति साधारण-सा हार्दिक भावना का परिचय मात्र हे। आज आपकी ६२ वी जन्मजयन्ती के अवसर पर जेन जाति के प्रत्येक हृदय मे मगल सकल्प हे कि 'पूज्यश्री युग-युग चिरजीवी रहे'।

४—स्थानकवासी सम्प्रदायनो सितारो

(मुनिश्री प्राणलाल जी महाराज)

विश्व मा जेओ आत्माना दरेक गुणोने सम्पूर्ण खीलावी वीतराग ना स्वरूप बनी गया छे तेओ सम्पूर्ण गुणी याने अविकारी गुणवन्त आत्मा परमात्मा स्वरूप गणाया छे। ए सिवायना दरेक आत्मा अपूर्ण गणाय छे। चालु वर्तमान काल मा आ भारतवर्ष नो दरेक मानवी पण अपूर्ण गणाय छे छता जे मानवो सिद्धपद् प्राप्त करवाना लक्ष्य बिन्दुए साधक दशामा आत्मगुणोनो विकास करी रह्या छे तेवा अनेक साधको वर्तमान मा विद्यमान छे। ते साधक वर्गमाना पूज्यश्री पण आपणी दृष्टिए एक उत्तम कोटिना साधक गणाय छे। आ सुसाधक पूज्यश्रीए पोतानी आत्म-साधना उपरान्त अनेक आत्माने साधक दशा तरफ लाववानो सारो प्रयत्न कर्यो छे।

पूज्यश्री महान् पुण्यशाली अने प्रभावशाली छे एम ज्यारे तेओना समागम मा जेतपुर स्थाने महापुरुष शास्त्रज्ञ पुरुषोत्तम जी स्वामीनी साथ मा हुँ अने अन्य अमारा सन्तो आव्या हता त्यारे जोवायु हतु। तदुपरान्त पूज्यश्री स्वशास्त्र अने परशास्त्र मा पण घणाज कुशल छे एम चौद दिनना टुक समागम मा समज्यु छे।

पूज्यश्री नी व्याख्यान शैली पण उत्तम अने सुरसवाई थई जैन अने जेनेतर समाजने आकर्ष्या, ते सारी लाभदायक नीबडी छे।

विसेष शु लखु। पूज्यश्री स्थानकवासी समाजना एक सारा जोतरूप गणाया छे।

५—वोटाद सम्प्रदाय के आचार्य तरणतारण आत्मार्थी पूज्य मुनिश्री माणेकचन्दजी महाराज

प्रसिद्ध वक्ता, जैन शासन दिवाकर परम पूज्य महाराज श्री जवाहरलालजी महाराज श्रीए स १९९३ मा काठियावाड जेवी पवित्र भूमि मा तेओए पधारी राजकोट मुकामे प्रथम चोमासु कर्युं। अने एवा विशाल प्रदेश मा स्थले-स्थले विचरी जैन तेमज जैनेतर उपरान्त राजा महाराजाओ ने पोतानी अमूल्य अने सदुपदेशनी मीठी लहाण करी 'दयाधर्म' नी जगत जनो ना हृदय पट पर घणी छाप पाडी जे उपकार कर्यो छे ते अवर्णनीय छे।

स १९९४ मा अमे शेषकाल राजकोट हता ते बखते पू म श्री जवाहरलाल जी म श्री नो अमोने समागम थयो। अने तेमनी अमूल्य वाणीनो लाभ पण अमोने मल्यो अने ते बखते 'गुरुकुल' जेवी जे उत्तम सस्था अस्तित्व मा आवी ते पण पू म श्रीजवाहरलालजी महाराज श्री ना सदुपदेश ने ज आभारी छे। अमोने तेओनी साथे खूबज प्रेम वधायेल छे।

६—वादिमानमर्दन, शास्त्रार्थ विजयी, अजमेर साधु सम्मेलन के शान्तिरक्षक महास्थविर गणि श्री उदयचदजी महाराज

नि सन्देह पूज्यश्री जवाहरलालजी इस समय के आचार्यो मे एक श्रेष्ठ ओर माननीय आचार्य ह जिनके उपदेश से श्री जेन सघ मे वहुत-सी उन्नति हुई हे ओर इस समय जेन साहित्य मे जो सुन्दर-सुन्दर पुस्तके उपलब्ध हो रही हे उनका सारा यश इन्ही पूज्यश्री को हे।

७—आचार्य श्री जवाहरलाल जी महाराज का युगप्रधानत्व

(लेखक—साहित्य रत्न, जैन धर्म दिवाकर उपाध्याय श्री आत्माराम जी महाराज
तथा कविरत्न उपाध्याय श्री अमरचद जी महाराज)

आज भारत के एक कोने मे, मरुभूमि के सुन्दर नगर भीनासर मे जेन सस्कृति का एक महान् उज्ज्वल, समुज्ज्वल, अत्युज्ज्वल प्रकाशमान 'प्रतीक' विराजमान है। आजकल कितनी लेखनिया उन के उपकारो के गुरुभार से लदी हुई कागज के पथ पर दौड रही होगी, और उस सत्पुरुष के चरणो मे अपनी-अपनी भावभरी श्रद्धाजलिया अर्पण कर रही होगी! लेखक होने के नाते अपनी लेखनी को भी कुछ लिखने का अभ्यास हे, अत यह क्यो चुप वेठे। यह भी चल पडी है, मगल भावनामय मोतियो की लडिया अक्षरो के रूप मे अर्पण करने के लिए।

एक उपमा है। वर्षा की सुहावनी ऋतु हो। मेघाच्छन्न सुनील नभ से नन्ही-नन्ही जल-कणिकाए गिर रही हो। फलस्वरूप भूतल पर नानाविध वृक्षावलियो से परिमण्डित उपवन की शोभा को चार चाद लग रहे हो। चारो ओर रग-बिरगे फूलो की भीनी-भीनी सुगन्ध हवा के घोडे पर चढ कर सुदूर देश की यात्रा को जा रही हो। भृङ्गावलियाँ मधुर झनकार के साथ विदाई दे रही हो। भला कौन वह सहृदय सज्जन होगा, जो उपवन की प्रस्तुत मनमोहक सुषमा को देखने के लिए लालायित न हो। यह साधारण-सा उपमान है और उपमेय ? वह तो उपमान से अनन्त, अनन्त, अनन्तगुणा वढ-चढ कर हे। विद्या एव चारित्र से सपन्न, दीर्घदर्शी, अनुभवी, देशकालज्ञ, श्रमणसघ के एक मात्र आधार स्तम्भ, दूरातिदूर देशो मे अनेकान्त की जयपताका फहराने वाले कर्तव्य के पथ पर आचार्य पद जेसे महान् गौरव-मय पद को पूर्णतया चरितार्थ करने वाले, उत्सर्ग एव अपवाद मार्ग की जटिलतम गुत्थियो को सहज ही सुलझाने वाले आचार्य देव की अद्वितीय महिमा एव सुषमा को जानकर कौन प्रसन्न न हो ? और कौन होगा वह महाअभागा जो अपने इस भांति परमोपकारी सत्पुरुषो का गुण कीर्तन न करना चाहे।[1] "वाग्जन्य वैफल्यमसह्यशल्य, गुणाधिके वस्तुनि मोनिता चेत्"।

महामहनीय आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज उन महापुरुषो मे से हे जिन्होने अपने जीवन की अमर ज्योति जला कर जैन सस्कृति के महान् प्रकाश से ससार को प्रकाशित कर दिया हे। आप जिधर भी गए उधर ही ज्ञान दीपक का प्रकाश फैलाते गए, जनता के वुझे हुए हृदय दीपको मे ज्ञान प्रकाश का सचार करते हुए और शास्त्रोक्त "दीवसमा आयरिया" के सिद्धान्त को पूर्ण सत्य के रूप मे चमकाते गए। साधारण चन्द्र, सूर्य, तारा आदि का महत्त्व अपने चमकने मे ही है, किन्तु दीपक तथा आचार्य का महत्त्व अपने-सा प्रकाश स्वसवन्धित दूसरो मे उतारने के लिए हे। आचार्य-श्री ने अपने महान् व्यक्तित्व की छाया मे युवाचार्य श्री गणेशीलाल जी आदि वे महान् सन्त तेयार किए हे, जो भविष्य मे अधिकाधिक उद्भासित होते जाएगे। आचार्य के जीवन का महत्त्व अपने निर्माण करने तक ही सीमित नही हे, प्रत्युत उसके जीवन की सफलता पार्श्वचरो के जीवननिर्माण तक हे, इस दिशामे आचार्य-श्री जी की सफलता शतप्रतिशत अभिनन्दनीय हे।

---

१ अधिक गुणो वाली वस्तु को देखकर मौन रहना वाणी और जन्म को व्यर्थ खोना है। यह वात हृदय मे असह्य काटे के समान चुभती है।

आपकी भाषण शैली बडी ही चमत्कृति पूर्ण हे। जिस किसी भी विषय को उठाते हे, आदि से अन्त तक उसे ऐसा चित्रित करते हे कि जनता मत्रमुग्ध हो जाती हे। चार-चार, पाच-पाच हजार जनता के मध्य आप का गभीर स्वर गरजता रहता हे, और बिना किसी शोरोगुल के श्रोता दत्तचित्त-से एकटक ध्यान लगाए सुनते रहते है। बडी से बडी परिषद् पर आप कुछ ही क्षणो मे नियन्त्रण कर लेते हे। आप के श्रीमुख से वाणी का वह अखण्ड प्रवाह प्रवाहित होता हे कि बिना किसी विराम के, बिना किसी परिवर्तन के, बिना किसी खेद के, बिना किसी अरुचि के, निरन्तर अधिकाधिक ओजस्वी, गम्भीर, रहस्यमय एव पभावोत्पादक होता जाता है। व्याख्यान मे कही पर भी भाव और भाषा का सामजस्य टूटने नही पाता। पाचीन कथानको के वर्णन का ढग, आपका ऐसा अनुपम एव सुरुचि पूर्ण है कि हजार-हजार वर्षों के जीर्ण-शीर्ण कथानको मे नव जीवन पैदा हो जाता है। आप की विचार-धारा आध्यात्मिक, तीक्ष्ण, सूक्ष्म एव गभीर होती है। सहसा किसी व्यक्ति का साहस नही पडता कि आपके विचारो की गुरुता को किसी प्रकार हलका कर सके, या उसे छिन्न-भिन्न कर सके। आपका कल्पनाशील मस्तिष्क विचारो की इतनी अच्छी ऊर्वरा भूमि है कि प्रत्येक व्याख्यान मे नए से नए विचार, नए से नया आदर्श, नए से नया सकल्प उपस्थित करती है।

आप की साहित्य-सेवा भी कुछ कम श्लाघनीय नही है। श्रावक के बारह व्रतो का आपने जिस सुन्दर और अद्यतन शैली से वर्णन किया है, उस ने जेन आचार प्रणाली के महत्त्व को आकाश की भूमिका पर चढा दिया है। अहिंसा और सत्य आदि का हृदयस्पर्शी मर्मभरा वर्णन प्रत्येक भावुक हृदय को गद्‌गद् कर देने वाला है। आप की वर्णन पद्धति इतनी सचोट होती है कि पढने वाला सहसा आप के चरणो मे श्रद्धा अर्पण कर देता हे। धर्मव्याख्या' मे तो आपने कमाल ही कर दिखाया हे। स्थानागसूत्र के सक्षिप्त नाममात्र दस धर्मों को लेकर आपने वह अनुपम व्याख्या की हे कि जो युग-युग तक ग्राम, नगर, राष्ट्र और सघ आदि के गौरव को अक्षुण्ण रख सकेगी। धर्म के साथ राष्ट्र को और राष्ट्र के साथ धर्म को छूते रहने की आप जैसी अनूठी कला विरल ही किसी सौभाग्यशाली सत्पुरुष को मिलती हे। आप के हाथो यदि आगमो की टीका का निर्माण होता तो क्या ही अच्छा होता! भूत और वर्तमान का मेल बैठाने मे आप जैसा सिद्धहस्त और कौन मिलेगा ?

एक आप की सब से बढ कर अमर कृति और है। वह हे 'सद्धर्ममडन'' । तेरा पथ सप्रदाय के आचार्य श्री जीतमल जी ने 'भ्रम विध्वसन' नामक ग्रथ मे जैनधर्म के अहिंसा, दया, दान आदि सिद्धान्तो को बहुत विकृत रूप मे उपस्थित किया हे। आगमो के पाठो को तोड-मरोड कर ऐसा विकृत बना दिया है कि सहृदय पाठक सहसा जैन धर्म से घृणा करने लगता हे। आज तक भ्रमविध्वसन के कुतर्कों का इतना अच्छा स्पष्ट, अकाट्य सयुक्तिक उत्तर नही दिया गया था जैसा कि आपने सद्धर्ममडन मे दिया हे।

आगम पाठो एव युक्तियो को लेकर वह अभेद्य दुर्ग निर्माण किया गया है, जो युगयुगान्तर तक विपक्षियो की कुतर्कवाहिनी के लिये अजेय, सर्वथा अजेय बना रहेगा। सद्धर्ममडन की प्रत्येक पक्ति आप के गभीर आगमाभ्यास का प्रमाण हे। कही-कही तो आप इतनी सूक्ष्मता मे उतर गए ह कि बडे-बडे तर्क शास्त्री भी जहाँ पहुँच कर हतप्रभ हो जाते हे। आप केवल सद्धर्ममण्डन लिख कर ही सन्तुष्ट न हुए, प्रत्युत थली मे जाकर तेरापथ समाज से साक्षात् शास्त्रीय टक्करे भी ली। धर्मजिज्ञासु जनता जो मिथ्या प्रपच मे फँसी उलझ रही थी, आपके सत्यसमर्थक प्रचण्ड व्याख्यानो के प्रकाश से उद्‌बुद्ध हो

उठी ओर शीघ्र ही दया-दान रूप सत्य धर्म पर आरूढ हो गई। जानने वाले जानते हे कि तेरापथ समाज का सगठन कितना दृढ होता हे, उनके विरोध मे प्रचार करने वालो को किन रोमहर्पण कठिनाइयो का सामना करना होता हे। किन्तु आपके अदम्य साहस ने आपत्तियो की कोई परवाह न की। दृढता से कर्तव्यपथ पर अग्रसर होकर माया का जाल एक वार छिन्न-भिन्न कर ही तो दिया। आप का यह कार्य जेन इतिहास के उन सुनहरे पृष्ठो मे से हे, जो शत-शत वर्पों तक अध्ययन का प्रिय विपय वने रहेगे तथा समय-समय पर सम्यग्ज्ञान का विमल प्रकाश देते रहेगे।

मानव जीवन के उत्थान के दो पहलू हे- विचार ओर आचार। विचार के विना आचार निष्प्राण रहता हे और आचार के विना विचार। दोनो का समतुलन सोभाग्य से इनी गिनी आत्माओ मे ही दृष्टिगोचर होता हे। हर्ष हे कि पूज्यश्री दोनो ही पहलुओं से उन्नत हे। आपके आचार ओर विचार दोनो ही एक दूसरे के पूरक हे। आपकी आचार सम्वन्धी कडक काफी ख्यातिप्राप्त हे। जव से आपने आचार्यपद का गुरुतर भार सभाला हे, आज तक आप कर्तव्य के प्रति सतत जागरूक रहे हे। आगम मे सयमसमाचारी, तपसमाचारी, गणसमाचारी आदि जितनी भी समाचारियो का उल्लेख आया हे, आप ने सभी के महत्त्व को यथास्थान सुरक्षित रक्खा हे। अपनी शासन सवन्धी कठोर नीति के कारण आप के मार्ग मे बाधाए भी कुछ कम उपस्थित नही हुईं। किन्तु सब विघ्नवाधाओ को कुचलते हुए, सव की खरी-खोटी सुनते हुए, निर्भय निष्कप गजगति से अपने कर्तव्य पथ पर दृढता से वढते ही गए। दशवेकालिक सूत्र के "अणासए जो उ सहिज्ञ कटए, वईमए कन्नसरे सपुज्जो" के कथनानुसार सच्चे शव्दो मे आप पूज्यपद के अधिकारी हुए।

आप का विहार क्षेत्र अत्यधिक विशाल हे। आपने अपने पर्यटक जीवन मे मारवाड, मेवाड, मालवा, गुजरात, पजाव प्रान्त आदि दूर-दूर तक के प्रदेशो मे भ्रमण करके जेन सस्कृति का विशुद्ध रूप जनता के समक्ष उपस्थित किया हे ओर भगवान महावीर के शासन का गोरवगान गुजाया हे। जहाँ आप के पास साधारण से साधारण जनता पहुँची हे, वहाँ देश के धुरधर अधिनायक महात्मा गाँधी जेसे नेता भी श्रद्धा ओर स्नेह का अर्घ्य लिए पहुँचे हे। आज के युग मे गाँधी जी का महान् व्यक्तित्व भारत की सीमाओ को लाँघ कर दूर-दूर फेला हुआ हे। राष्ट्र के इस महान् नेता का आप जेसे सन्तो की सेवा मे पहुँचना वस्तुत श्रमण सस्कृति के लिए महान् गोरव की वात हे।

आपका महान् व्यक्तित्व अनेकानेक चमत्कारो से भरा पडा हे। जीवन का वहुमुखी होना ही युगप्रधानत्व के महान् गोरव का प्रतीक हे। आचार्यश्री सभी के आदरास्पद हे। जेन सस्कृति की महान् विभूति हे। उनकी सेवा मे श्रद्धाजलि अर्पण करना प्रत्येक सहयोगी का कर्तव्य हे। इसी कर्तव्य के नाते उपरोक्त पक्तिया लिखी गई हे। हम समझते हे कि आचार्यश्री की महत्ता इन अक्षरो मे आवद्ध नही हो सकती, फिर भी भापण ओर लेखन मनुष्य के आन्तरिक भावो के परिचय का आशिक किन्तु अनन्य सकेत हे। हृदय का पूर्ण चित्रण इसमे नही हो सकता।

आचार्यश्री के जेन सघ पर महान् उपकार हे, उन्हे स्मृतिपथ मे लाकर पजाव प्रान्त के सुदूर प्रदेश मे अवस्थित हमारा हृदय अतीव पुलकित हे, हर्पित हे, आनन्दित हे। 'चिरजीव महाभाग'।

आचार्यश्री के प्रति हम क्या मगल कामना करे! उनका महान् उत्कृष्ट जीवन ही मगलमय हे। जिसके लिए भगवान महावीर स्वामी ने भगवती सूत्र मे कथन किया हे -

आयरिय उवज्झाएण भते ? सविसयसि गण अगिलाए सगिण्हमाणे अगिलाए उवगिण्हमाणे कतिहिंभवग्गहणेहि सिज्झति जाव अत करेति ? गोयमा! अत्थेगतिए तेणेव भवग्गहणेण सिज्झति, अत्थेगतिए दोच्चेण भवग्गहणेण सिज्झति, तच्च पुण भवग्गहण णातिक्कमति।

(भगवती श ५,उ ६ सू २११)

'शुद्ध भावना से गच्छ की सार-सँभाल रखने वाला आचार्य तीसरे भव मे तो अवश्य ही मोक्ष प्राप्त करता हे। इससे बढकर जीवन की सफलता के सम्बन्ध मे और कोनसा मगल प्रमाण हो सकता हे ? परन्तु सक्षेप मे सपूर्ण जेन समाज की हार्दिक भावनाओ के साथ हम भी अन्त हृदय से भावना करते हे कि आचार्यश्री की जेन ससार मे अभी बडी आवश्यकता हे। उन जेसा अनुभवी, कार्यदक्ष एव प्रौढ विचार आचार्य मिलना कठिन हे। जेन ससार को आपकी पवित्र छत्रछाया चिरकाल तक मिलती रहे और उससे जेन समाज की दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक सर्वाङ्गीण उन्नति होती रहे। 'कि जीवन दोषविवर्जित यत्।'

८—एकज आचार्य

(योगनिष्ठ मुनिश्री त्रिलोकचन्द जी महाराज)

साधु पणु लेवु साव सहेलु छे, परन्तु साधुताना आदर्श ने पहुचवु अने तेने परिपूर्ण जिन्दगी सुधी पालवु ते बहुज विकट छे। सिद्धान्तवादी पुरुषोज आपणा जीवन मा मार्गदर्शक थई शके छे। एवा पुरुषो मा ना एक पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज ने हु पोते मानु छु।

तेओ श्रीनो अने मारो समागम बहु लाम्बो नथी। अमदाबाद माधवपुरा मा हु एमना दर्शन ना माटे हासोल गाम थी आवेलो। बे कलाक एकान्त बेठेला। योगविषय नी जिज्ञासा जाणी मने बहु आनन्द थयो। साठ थी सित्तेर वर्ष नी दीक्षा पर्याय होवा छता मनोनिग्रह करवानी अने कराववानी अशमात्र पण तमन्ना रहेती नथी। त्यारे तेओ श्रीए निर्विकल्प स्थितिमा रही शकाय याने मनोनिग्रह करी शकाय ए वस्तु नी चर्चा मारी साथे करी हती। हू तेओ श्रीने पूर्ण सतोष आपी शक्यो के नही ते तेओ श्री कही शके। परन्तु निर्विकल्प स्थितिनी प्राप्ति माटे एकात मा रहेवु होय तो पण तेओ श्रीए पोतानी तेयारी बतावी।

आपणा साधुसमाज मा द्रव्यानुयोगनो अभ्यास घणाज ओछा प्रमाण मा होय छे। कथानुयोग, चरणानुयोग, गणितानुयोग ए त्रण योग करता द्रव्यानुयोग जेन आगमनी इमारत उठावी शके छे। षट्द्रव्यो नु ज्ञान ए सूत्रधारी ने तेना शास्त्रो मा श्रुतकेवली गणाव्या छे। मने जे जे द्रव्यानुयोगना ज्ञाताओ मल्या छे अने चर्चाओ थई छे तेमाना केटलाकोए द्रव्योनुयोगना ज्ञाता तरीके पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज ने गणावी मुक्तकठे वखाण कर्या छे।

पचमकाल नी व्यापकता तो सर्व स्थले ओछावत्ता प्रमाण मा देखाय छे। एथी सघाडा-सघाडा वच्चे भाग्येज ऐक्य जोई शकाय छे। कोई महान् पुण्य नो उदय होय तो एक गच्छ ना आचार्य नी आज्ञाए एक गच्छ वर्ती शके छे। आवा तमाम गच्छ अगर सघाडा ना आचार्य मली ने पोताना नियामक तरीके एकज आचार्य ने निमवानो प्रसग उपस्थित थाय तो हुतो पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज ना तरफ अगुली निर्देश करी शकु।

९—जैन समाजना क्रान्तिकार आचार्य

(आत्मार्थी मुनिश्री मोहनऋषि जी महाराज)

जेम दारूडियो राजपथ त्यजीने कटक पथ स्वीकारे छे ने राजपथ वतावनार ने मूर्ख माने छे तेज स्थिति सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्र मा अनुभवाय छे ने तेमा जो कई सुधारनु आशामय किरण देखातु होय तो वर्तमानना आपणा परम प्रतापी धर्माचार्य पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराजनोज प्रताप छे। तेओ श्रीए समाज तथा सम्प्रदायना खुशामदखोरी नो खुशवोमय पुष्प पथ त्यजीने नग्न सत्यमय कटकमय पथ पोताना प्रयाण माटे आदर्यो ने तेमा तेओ श्रीने सफलता मली चुकी छे, वरी चुकी छे। तेओश्रीनु जीवन कथन सफलता ने वरेल छे।

धार्मिक तथा सामाजिक नियमोमा व्यापक अधाधुधी श्रीजीए अनुभवी। तेमनो अन्तरात्मा जेन शासन ना श्रावको ना दयामय जीवन जोई ने ककली उठ्यो। सावद्य जीवन, धधा, व्यवसाय , खानपान, वस्त्राभूषण आदि नो निर्णय ने निर्वद्य ने सावद्य, अल्पारभ ने महारभ, ने महारभ ने अल्पारभनी मान्यतानो प्रचार आ प्रमाणे व्यापक अनर्थ जोई श्रीजीए पोतानी प्रखर व्याख्यान धारा द्वारा समाज पर प्रकाश फेक्यो, जे प्रकाश ने समाज जोई न शकी। जेम घुवड सूर्यना प्रकाश ने न जीखी शके तेम श्रीजीना ज्ञान प्रकाश ने न जीखी शकी ने जेम घुवड सूर्यना प्रकाश ने अधकार माने छे तेम श्रीजीना उपदेशने सावद्य-पापमय मानवा लाग्या ने ते माटे जेनत्व थी अज्ञ ने सम्प्रदायाध साधु तथा श्रावकोए यदवा तदवा आलाप करवो शुरू कर्यो छता ते वाल जीवो ना प्रलाप पर ध्यान न आपता सत्य जेन धर्मनु स्परूप समजाव्यु ने तेनो असर समाजना मोटा भाग पर पडी पण सम्प्रदायाधो नी अज्ञ समाज पूर्ववत् वर्तमान मा पण घुवड दृष्टि ने लीधे कायम छे। ते बाल वर्ग श्रीजी ने अपमानित करवा अनेक प्रयत्नो कर्या, पण जेम सूर्य सामे घुवड पोतानी शक्ति प्रमाणे लाखो प्रयत्न करवा छता सूर्यना एक किरण ने पण दावी शकतो नथी, तेम सम्प्रदायान्धो निष्फल थया ने तेमनी निष्फलता अज्ञानता जेमनीतेम तेमनी वाल दशा ने लीधे कायम छे।

वर्तमान मा बीसमी सदी मा लोकाशाहना जमाना करता पण समाजनी सविशेष करुणापात्र ने विज्ञान ने लीधे यन्त्रवादी महारभी प्रवृत्ति अनुभवाई, जेथी श्रीजीए समाज मा अल्पारभ ने महारभनी व्याख्या नो वोध आपवो शुरू कर्यो।

समाजनी वाल समजना नमूना

श्रावक लीलोतरी वेची न शके पण विलायती दवा निर्भयता थी वेची शके ने तेमा पोतानु सन्मान समजे छे ने लीलोतरी वेचनार ने पापी ने दयापात्र माने छे, पोताने धर्मातमा मानी सतोष वेदे छे। धान्य नो वेपार न थाय पण मोतीनो व्यापार थई शके।

मीठु या माटी न बेचाय पण विलायती टाल, विलायती नलिया तथा चीनी ना कप रकावी आदि वेची शकाय, माटीना वासण न वेचाय पण धातुना वेचाय ने माटीना वासण करता धातुना वासण वेचवा मा ओछु पाप।

माटीना कोडीया न वेचाय विजली ना दीवा वेची शकाय, गेस ना दीवा वेची शकाय, दूध न वेचाय पण वेजीटेवल घी वेची शकाय, लाकडा न वेचाय, वास ना पखा न वेचाय, पण कोलसा वेचाय,

पण बिजली ना पखा वेचाय, बास न वेचाय पण लोढा ना गडर वेचाय। फूल न वेचाय पण अतर वेचाय, कपास न वेचाय पण चरबी ना तथा रेशम ना वस्त्र निष्पाप मानी निर्भयता थी वेचाय, घाणी न चलावाय पण तेल नी मील खोलाय, चर्खा नो धधो न कराय, मील खोली शकाय, गाडा न चलावाय न वेचाय पण मोटर वेचाय तथा चलावाय।

आदि व्यापार ना विषय माँ अधाधुध महारभ ने अल्पारभ ने महारभ, आवी समाजनी विपरीत समज माटे श्रीजीए प्रकाश पाड्यो ने समाज ने सम्यक् पथ बताव्यो के गृह उद्योग करता यत्रवाद मा सविशेष आरभ ने महापाप छे। जीवनोपयोगी वस्तुओ सिवायना तमाम अन्य विलासी श्रृगारो ने सोखना पदार्थों आत्मानु पतन करे छे। तेवा पदार्थो नो व्यापारी पोताना एक ना स्वार्थ माटे करोडो नु पतन करे छे। यत्रवाद थी लाखो मानव तथा करोडो पशुओ नी हिसा थाय छे, मील मालेक तेना वस्त्र वेचनार, खरीदनार, पहेरनार, सीवनार, धोनार ने खानार तमाम यत्रवादना महा पाप ने पोषण आपे छे। गृह उद्योग ते आर्य धधो छे, यन्त्रवादी साधनो ते अनार्य छे।

व्यापार नी आवक ने विलासी साधनो नो विनाश थतो होवा थी अध परम्पराए श्रीजीनो उपदेश सावद्य मान्यो ने ते माटे अनेक मिथ्या दलीलो ने कुतर्को करवा लाग्या। छता श्रीजी पोताना सत्य सिद्धान्त माटे आज सुधी अचल रह्या छे ने रहवा माटे, सर्व ने बोध आपे छे।

धर्मने नामे पण व्यापक अधाधुधी जोईने श्रीजी नो आत्मा विचार मग्न बन्यो, क्या प्रभुनो अहिंसा, सयम, सादगी ने रसना विजय नो मार्ग अने कया दया पालवा ना निमित्ते रात्रे तथा दिवसे कदोई नी भट्टिओ चलाववी ने विविध प्रकारनी नवी-नवी मीठाइओ मगाववी ने दया ना त्याग तप व्रत मा ठासी-ठासी ने खावानो रिवाज। *रसना ने वश थई ने विशेष खावानो स्वभाव ने पाचन न थवाथी शरीर मा* अनेक प्रकार ना रोगो नी उत्पत्ति तथा मनुष्यो ने अजीर्णना ने दस्त लागवनाना रोगनी गदकी अनुभवी, जेथी श्रीजीए दयाना व्रत या सादु भोजन करवानो उपदेश आप्यो ने कदोई ना त्यानी अयत्नामय मीठाईओ खरीदवाना महा पाप थी बचवा माटे समाज ने उपदेश आप्यो छे। दर्शनार्थे आवनार माटे पण विविध प्रकार नी मीठाइओ बनवा लागी तो तेनो पण विरोध कर्यो ने सादा भोजन थी सतोष मानवानो बोध आप्यो। आ उपदेश थी रसना लोलुपी रोषे भराया पण श्रीजीए पोतानो उपदेश प्रवाह चालु राख्यो ने समाज ने महारभ ना पापमाथी बचावी समाज पर परम उपकार करेल छे।

बाल लग्न, वृद्ध लग्न, कन्या विक्रय, वर विक्रय, लग्न तथा मरण पाछल थता जमणवारो आ प्रथा बध करवा माटे पण श्रीजीए पोतानो उपदेश प्रवाह वडे वडावी समाज पर महान उपकार कर्यो छे।

नाना काची उमर ना बलद या घोडा गाडी ने जोड्या होय ने तेमा वेसनार मानव दयालु न गणी शकाय तेम बाल लग्न मा भाग लेनार तो सविशेष दया, करुणा तथा मानवताहीन मानी शकाय। आवा प्रकारनी अकाट्य दलीलो थी समाज वस्तु स्वरूप समजती थई ने पूज्यश्री ना प्रवचन नी परम प्रशसक बनी।

आनद तथा कामदेव आदि श्रावको ४० हजार, ६० हजार ने ८० हजार सुधी गायो राखता हता, तेथी पशुओनी हिसा थती न होती, खेती ने पोषण मलतु। दुष्काल आदि नो भय न होतो त्यारे वर्तमान

नो श्रावक समाज गोपालन ने खेती करवा मा पाप मानवा लाग्यो ने वाजारू घी खावा मा ने व्याज नो धधो करी पोतानु पेट भरवा मा पोतानु जीवन पाप रहित ने धार्मिक मानना लाग्यो, आवी समाज नो विपरीत माटे पण पूज्यश्री ने प्रकाश नाखवानी फरज पडी । काची समज ने काची आकवाली समाज श्रीजीनो उपदेश पाचन न करी शकी, ने उपदेश नो विरोध थवा लाग्यो, छता श्रीजी सत्य सिद्धान्त मा परम दृढ रहया ने।

मुवई ना कसाईखाना नो अनुभव श्री जी ने थयो । नित्य हजारो पशुओ दूध माटे कपाता अनुभव्या आ प्रत्यक्ष देखाव थी वजारू दूध तो लोही करता विशेष पवित्र नज मानी शकाय तेवा दृढ निश्चय मा वृद्धि थई ने मुवई नी जनता ने बजारू दूध पीवानु परम पाप समजाव्यु। पशुओ प्रति पोतानी फरज समझावी जेथी त्याना विचारशील श्रावकोए कसाई खाने कपाता पशु अटके ने जनता ने अहिंसक शुद्ध दूध मले एवी योजना विचारी ने ते प्रमाणे श्रावकोए गोरक्षक सस्था नी स्थापना करी, जेना प्रताणे हजारो कतलखाना मा कपाता पशुओनी रक्षा थई ने नित्य हजारो मानवोने शुद्ध अहिंसक दूध मली रहेल छे।

समाज पण बजारू दूध ने हिंसक दूध मानवा लागी ने पशुओनी प्रतिपालना करी, अहिसाधर्म नी आराधना करवा लागी।

व्याजखाउ व्यापारीओ ने समजाव्यु के व्याजना लोभे वेपारीओ कसाई आदि ने पण पेसा धीर छे ने कीडी मकोडा नी दया पालनार पोताना पेसा थी व्याजना लोभे कसाई ना धधा ने उत्तेजन आपे छे, ते धधो परम पापनो छे।

कापडना वेपारी ने रुपीया व्याजे आपनार पण चरवीवाला तथा रेशमना पापमय व्यापार ने उत्तेजन आपे छे ने ते व्याजखाउ पण ते पापनो भागीदार बने छे।

व्याजनो धधो या सट्टा नो धधो तेने समाज पवित्र ने पापरहित मानती हती पण ते धधा सविशेष पापमय समजावी ते धधाना पाप थी बचावी श्रीजी समाज नी महान् रक्षा करी शक्या छे।

बेकमा व्याजे रुपीया आपनार ना रुपीया बेक तोप, बदूक, मशीनगन ने बोम्ब गोला बनाववाना कारखाना ने विशेष व्याजे आपे छे ने तेज बोम्ब गोला तथा बदूक नी गोलीओ बेक मा व्याजे मूकनारनी छाती मा वागे छे तो मरण पामे छे। तेना रुपीया बेक मा रही जाय छे।

मुसलमानो मा व्याज लेवानी प्रथा नथी। त्यारे साहूकारो व्याज वसूल करवा माटे कचेरी मा दावा करे छे ने गरीब ना घर, खेतर तथा पशु आदिनु निर्दयता थी लीलाम करावे छे।

कसाई मछलीमार या अन्य पापना धधा करनार ने पोतानी एज दुकान नु पाप लागे छे त्यारे व्याजखाऊ वेपारी व्याज वसूल करवा माटे तमाम कसाइयो तथा अन्य पाप ना व्यापारीओनी दुकान नी चिन्ता करे छे। कसाई नी दुकान सारी पेठे चाले तोज तेने व्याज टाइम पर मली शके, कसाई एकज दुकान चलावे छे त्यारे व्याजखाउ सेकडो कसाइओनी दुकानो चलावे छे। कसाई ने पोताना धधा माटे पश्चात्ताप थाय छे त्यारे व्याजखाउ ने पश्चात्ताप ने वदले विशेप व्याज मलवा थी प्रमोद अनुभवाय छे।

पूर्वना साहूकारो कुवा, वावडी ,धर्मशाला, ओपधालय ने सदाव्रतो माटे प्रतिवर्षे लाखो रुपीया दानमा खरचता हता त्यारे वर्तमान नो व्याजखाउ व्यापारी मक्खीचूस बनी व्याज द्वारा पाई पाई भेगी करी पोतानी पाप परपरा मा वृद्धि करे छे।

जेना हाथ पग न चलता होय तेवा लुला, लगडा, आधला, बहेरा ने मुगा माणसो व्यापार न करी शके तो तेवा आपत्ति काल समजी ने ब्याज थी, विधवा, अनाथ, स्त्री, वृद्ध पोतानु पेट भरी शके छे।

कोडी,पाई तथा पैसा थी जुगार रमनार सरकार नी सजाने पात्र थाय छे त्यारे नित्य सट्टा मा लाखो नी हार जीत करवा छता सरकार पोते तेने सन्मान आपे छे ने ते साहूकार मनाय छे आ थी विशेष आश्चर्य अन्य शु होई शके ?

चामडा नो व्यापारी तथा घी नो व्यापारी बन्ने नफा नी आशा राखे छे। सुकाल थाय तो पशु न मरे या पशु मा रोग फेलवा न पामे तोज चामडु मोघु थाय ने ते नफो मली शके छे त्यारे घी वाला ने दुष्काल पडे या पशु मा रोग फेलाय तोज घी मोघु थये नफो मली शके छे बन्ने नी भावना पर आधार छे।

धान्यना व्यापारी पण नफा नी आशाए व्यापार करे छे ने दुष्काल पडे तेज वर्ष तेमने माटे सारू गणाय छे। प्रजा मा रोग चारो वधे त्यारे डाक्टर कमावानी ऋतु माने छे। प्रजा मा क्लेश वधे त्यारे वकील कमावानी ऋतु माने छे।

लडाई मा तमाम पदार्थो ना भावो बमणा त्रणगणा थवा थी व्यापारी प्रसन्न थाय छे ने लडाई बध थवा थी भावो घटी गया थी व्यापारी खेद नो अनुभव करे छे। लडाई जल्दी पूरी थाये तेवी भावना लडनार राजाओ नी होय छे त्यारे व्यापारीओ लडाई विशेष लबाय तो विशेष लाभ मले तेवी भावना राखे छे जेथी लडनार राजाओ करता पण व्यापारी तदुल मच्छवत् विशेष मलीन भावना भावी पाप उपार्जन करे छे।

आवा प्रकार नी पूज्य श्री नी सचोट दलील थी श्रोताओ ना मन पर शीघ्र असर थवा पामे छे छता केटलाक मताग्रही पोतानी मिथ्या समज ने सत्य मानी तेवी समज नी स्थापना तथा प्ररूपणा करे छे ने पाप परपरा मा वृध्दि करे छे।

समाज नी समज नो प्रवाह अधपरपरा नो छे छता प्रवाह ने भेदी ने श्रीजीए समाज समीप सत्य तत्त्व मूकी ने समाज पर परम उपकार कर्यो छे।

धार्मिक विकृतिओ माटे पण श्रीजीए पूर्ण प्रकाश पाडेल छे।

दयाकरो ने लीलोतरी न खाय पण मेवा मीठाई खावामा पाप न माने।

आठम चौदस लीलोतरी न खाय पण झूठ बोलवाना या गरीब ने ठगवाना विशेष ब्याज या नफो न लेवाना त्याग न करी शके।

पर्वना दिवसे स्नान करवा मा पाप माने पण तेवु पाप चरवी ना, रेशमना आभूषण पहेरवा मा न माने।

दलवा खाडवा भरडवाना त्याग करे पण ते दिवसे रसास्वाद माटे विविध प्रकार नी वानीओ बनाववाना त्याग न करे।

रात्रि भोजन ना त्याग करे पण सीनेमा रात्रे जोवा न जवु तेवा त्याग भाग्येज करे।

एक वखतना जमवाना या आयबीलना त्याग करनार घणा छे, पण व्यापारादि मा मात्र एकज भाव बोलनार अल्प छे ने व्यापार मा असत्य बोलवा मा पाप मानवा मा भाग्येज आवे छे।

उपवास करवो सरल अनुभवाय छे, पण चाय, कपना त्याग करवा माटे ध्यान अपातु नथी।

नवकारसी या पोरसी करवानो रीवाज छे पण तेटला समय माटे सत्य या क्षमामय जीवन माटे भाग्येज ध्यान अपाय छे।

काचु पाणी पीवाना त्याग कराय छे, पण गरीवो पासे थी विशेप व्याज या विशेप नफो लेवा मा भाग्येज पाप मानवामा आवे छे।

आदि त्याग प्रत्याख्यान माटे ध्यान अपाय छे पण व्यापार मा सत्य नीति न्याय नों प्रमाणिकपणानो व्यवहार राखवा माटे भाग्येज लक्ष आपवा मा आवे छे। आ विपय पर प्रकाश पाडी ने श्रीजीए समाज ना व्यापार तथा व्यवहार मा सत्य नीति ने न्यायमय जीवन वीतावता माटे समाज ने सत्यवोध आपी जागृत करी छे।

धर्मना सत्य स्वरूप ना वोध ना अभावे धर्मना नामे मानव ज्या त्या फाफा मारतो अनुभवाय छे ने पोताने धर्मात्मा मानवानो ढोग करे छे ने जगत पासे थी धर्मात्मा नु प्रमाण पत्र मेलववा यत्न सेवे छे।

मोती नो व्यापार करे छे ने माछलाने ममरा नाखे छे।

रेशम नो व्यापार करे छे ने गरणा नी प्रभावना करे छे।

मील चलावे छे ने शरीर पर खादी धारण करे छे।

सघ जमाडे ने गरीवो ने मजूरी आपवा मा करकसर करे,अन्याय कर।

रोज सामायिक करे ने वजार मा एक पेसा माटे क्लेश झगडा ने गाला गाली करे।

रोज व्याख्यान साभले पण वचननो सयम न राखी शके ।प्रतिक्रमण नित्य करे पण प्रमाणिकतानु पालन न करी शके।

खानपान ना द्रव्यो नी मर्यादा करे पण द्रव्य कमावानी मर्यादा न करे।

पोपघ करे ने पारणु करी ने कचेरी मा झूठो दावो माडे।

हजारोनु दान आपे ने गरीवो थी लेवाय तेटलु विशेष व्याज ने विशेष नफो ले।व्यापार मा असत्य अनीति करे ने वारह व्रत नी पुस्तक छपावी प्रभावना करे।

पृथ्वी, पाणी, वनस्पति, नारकी, देवता, पशु तथा पक्षी साथे खमत खामणा कर पण मनुष्यो साथे वेर राखे।

आवा प्रकार ना सगवडीया नियमो ने धर्म ना नियमो मानी समाज धर्म ने मोक्ष मार्ग मानती हती त्यार श्रीजीए सत्य व्रत नियम ने प्रत्याख्यान नु स्वरूप समजावी सत्य वस्तु स्वरूप समाजावा माटे समाज ने नवीन प्रेरणा आपी छे।

वर्तमान मा श्रावको ना जीवन मा जेवी अधाधुधी जोवामा आवे छे तेथी विशेप दयापात्र स्थिति सादु समाजनी श्रीजी अनुभवी। शिष्य ना लोभी साधु आर्याओ योग्यता नो विचार कर्या सिवाय जेवा तेवाने या वेचाता छोकरा–छोकरी ने लेवरावीने दीक्षा आपवा लाग्या तेथी साधु समाज मा शिथिलाचार ने शासन तथा जेनागम विरोधी प्रवृत्ति श्रीजीए अनुभवी। साधु सस्थानी पामर ने पतित दशा जोई श्रीजीए

शासन नी उन्नति माटे सविशेष जागृत थवा ने अयोग्य दीक्षाओ अटकाववा माटे आचार्य सिवाय कोईए पोताना शिष्यो न बनाववा, नवा शिष्यो मात्र आचार्यनी नेश्राय मा करवा। आ नियमनु पालन थाय तो गमे तेवा जेवातेवा ने अयोग्य दीक्षा आपे छे ते अटकी जाय। आ पवित्र आशये अयोग्य दीक्षा पर प्रतिवध मूक्यो।

भिन्न-भिन्न सम्पदायो नी भिन्न-भिन्न मान्यता ने समाचारी जोई ऐक्यता माटे सगठन माटे, अजमेर सम्मेलन समये यत्न सेव्यो छता ते योजना अमल मा न आवी शकी ने निरकुशता नो पवन बधवा लाग्यो।

साधु साध्विओ वेचाता शिष्यो लेवा माटे, पडित राखवा माटे,पुस्तको छपाववा माटे पोताना मडल तथा समिति ने धनवान बनाववा माटे, पोताना नाम नी सस्थाओ खोलाववा माटे ,पोताना फोटू पडाववा माटे, तेना ब्लोक बनाववा ने प्रचार करवा माटे साथे मुनीमो, पण्डितो राखवा लग्या छे ने तेमनी द्वारा अनेक बहाना तले द्रव्य स्वहस्ते नही पण पर हस्ते लेवा लाग्या। पुस्तको छपाववी ग्राहको बनाववा, वेचवी पैसा एकत्र करवा ने पुन छपाववी आवी साधु समाज नी प्रवृति थी श्रीजीए वीर सघ या ब्रह्मचारी वर्ग नी मध्यम योजना विचारी जेथी साधु धर्म चरित्र धर्म नी मश्करी थवा न पामे। ते योजना हजीसुधी मूर्त स्वरूप मा आवी नथी, ने साधुता ने नामे असाधुता, दभ ने पाखड अनुभवाय छे, जेथी श्रीजीए सविशेष प्रकाश पाडी निवृत्ति धारण करी ने एकान्त आत्म साधना ना मार्ग ग्रहण करवानी पोता नी भावना सफल करी छे।

साधु सस्था मा पण्डित प्रथा नो पवन वधवा लाग्यो ने ते माटे महाव्रत नी मर्यादा ने मूकी ने केटलाक साधुओ गामोगाम फरी हजारो रुपीया एकत्र करवा लाग्या। पडितोना स्थायीत्व माटे पाप परपरा बधवा लागी ने साधुओ पंडितोना गुलाम बनी तेमनी खुशामद करवा लाग्या ने तेमनी प्रसन्नता माटे यत्न सेववा लाग्या। पण्डितो पासे पुस्तको लखावी पोताने नामे छपाववा लाग्या। पोताना यशोगान पडितो पासे लखावी छपाववा लाग्या। साहित्य छपाववा माटे तथा शिक्षण ना बहाने पडित प्रथा नो प्रचार वधवा लाग्यो। अजैन पडितोना ससर्ग थी साधु-साध्विओ मा शिथिलाचार वधतो श्रीजी ना साभलवामा आव्यो। पडितो पासे आर्याओ पण भणवा लागी ने जैनागमनो आदर्श नष्ट थतो अनुभव्यो जे थी श्रीजीए पोतानी सप्रदाय मा पगारदार पडितो न राखवानो नियम कर्यो ने पडित प्रथाना पाप थी पोतानी सप्रदाय ने बचावी। समाज समीप सयम मार्ग नो आदर्श राखी महान् उपकार करेल छे।

मेरूथी अनन्त उच्च ने समुद्र थी अनन्त विशाल जैन धर्म मा पण अस्पृश्यता नो प्रवेश थवा पाम्यो हतो ते अस्पृश्यता ना कलक ने दूर करवा माटे श्रीजीए पोतानी उपदेश धारा द्वारा प्रकाश पाड्यो ने पोताना व्याख्यान मा हरिजनो ने आवा माटे व्याख्यान साभलवा ने चर्चा करवा माटे सहर्ष धर्मस्थानना वध दरवाजा उघाडा कराव्या। ने पोतानी विशालता नो सर्व प्रथम परिचय आप्यो जेना परिणामे वर्तमान मा केटलाक गामोमा हरिजनो व्याख्यान श्रवण करे छे। सामाजिक पोषघ आदि धार्मिक क्रियाओ करे छे। केटलाक श्रावको हरिजनो ने पोताने त्या नोकर राख्या छे। केटलाक श्रावको हरिजन आश्रमो चलावे छे ने तन, मन ने धन थी तेमने मदद करे छे।

पूज्यश्रीए जे सम्प्रदाय ना आचार्य छे ते सम्प्रदायना श्रावको सविशेष पणे रूढिना पुजारी हता तेमनी सख्या पण घणी मोटी सख्या मा छे ने तेओनो मोटो भाग श्रीमन्त छे छता समाज नी खुशामद कर्या सिवाय पोताना तत्त्वचिन्तवन ने मनन मा जे सत्य अनुभव्यु तेनी प्ररूपणा करी। ते माटे स्व सम्प्रदाय

तथा पर सम्प्रदाय ना चारे तीर्थना अनेक विरोधो हिम्मत करी ने झील्या, पचाव्या ने पोतानी निर्भयता मा वृद्धि करी। समाज सामे सत्यताना प्रकाश किरणो फेकी, समाज ने अज्ञानान्धकार माथी काडी प्रकाशना पथना पथिक तरीके वनावा पोताना जीवन नी सफलता करी चुक्या छे। जे माटे समस्त समाज तेमनी परम ऋणी छे।

हाथे दलवाना, खाडवाना, भरडवाना, राधवाना, चर्खो चलाववाना वणववाना आदिना त्याग रूढी चुस्तो करावया लाग्या जेथी वकरी काढता ऊट पेसवा जेवो अनर्थ वधतो श्रीजीए अनुभव्यो। हाथे दलवाना त्याग थई आटानी मीलो ने उत्तेजन मलवा लाग्यु जेमा पाप वहेवारनो पार नही ते उपरान्त धान्य ना सत्वनो नाश ने शरीर मा रोगो नी उत्पत्ति आदि अनर्थो ने महारभनी उत्तेजना जोई श्रीजीए अल्पारभनी व्याख्या समजावी।

चर्खाना त्याग करावया थी मीलोनी उत्पत्ति वधवा लागी ने मीलो द्वारा मानवो नो शोषण ने पशुओ नी हिंसा थवा लागी जेथी अल्पारमी खादी नी पवित्रता श्रीजीए समजावी।

गोपालन ने खेती ना पण रूढी चुस्तो त्याग करावया लाग्या जेथी गोधन नो नाश, खेती नो नाश, आर्य धर्म नो नाश ने कसाईखाना ने उत्तेजना आदि पापथी बचाववा सत्योपदेश फरमायो ने रूढी चुस्तो द्वारा समाज नी चक्षुओ पर महारभ ना महापाप ना पाटा बाधवामा आव्या हता। ते महापापना पाटा करुणाभावे श्रीजीए छोडाव्या, ने समाज ने अल्पारभ महारभ गृहउद्योग ने यन्त्रवाद आदि नी व्याख्या समजावी ज्ञानचक्षु नु दान आपी समाज पर महान् उपकार कर्यो छे। छता केटलाक रूढी चुस्तो पोतानी आँखे महारभ ने यन्त्रवादना पापना पाटा वाँधी रहे छे। ने समाज ने वधावी रहेल छे। जेथी पाटा बाधनार तथा वधावनार उभय महाअज्ञानना खाडा मा पडी ने सम्यक् ज्ञान थई अनन्त काल माटे विमुख वनी दुर्लभ वोधी वनी रहेल छे।

श्रीजीना परम उपासको ने शास्त्र ना ज्ञाता श्रीमत श्रावको श्रीजीना दर्शनार्थे या व्याख्यान मा रेशम ना कोट, रेशमना खमीस, रेशमना धोतीया ने गला मा मोती ना हार पेहरी ने आवता। आवा श्रृङ्गारी वस्त्राभूषण थी श्रीजीनो आत्मा ककली उठ्यो, स्त्री समाजना वस्त्राभूषण ने श्रृङ्गार तो मर्यादा नी हद बाहर हतो छ्ता श्रीजीना पवित्र सदुपदेश ना परिणामे श्रीजीना अनुयायी श्रावक ने श्राविका वर्ग परम शुद्ध-पवित्र खादी धारक बन्या ने पवित्र सादगी प्रधान खादी धारण करवा थी आभूषणो नो मोह पण स्वाभाविक घटी गयो ने समाजमा सादगी ने सयम नी वृद्धि थवा लागी।

वर्तमान मा जेन समाज मा गोपालन, खादी स्वावलवी जीवन ने सादगी मय जीवन नी समाजमा प्रवृत्ति जोवामा आवती होय तो ते श्रीजीना प्रवचननोज पुण्य प्रभाव छे।

वर्तमान मा रूढी चुस्त साधुओ खादी पहेरवा मा विशेष पाप माने छे ने दलील करे छे के तेने धोवा मा पाणी ना जीवो नी हिंसा थाय छे आवी दलील करनारो ने भान नथी होतु के मीलना कपडा मा तो चरवी नु महापाप लागे छे। ते महापाप ने भूली ने कुतर्को करी पोते विपरीत पथे गमन कर छे। ने समाज ने पाप पथ ना पथिक वनावे छे।

सद्भाग्ये श्रीजीना सदुपदेश ने श्रावको समजवा लाग्या ने ते प्रमाणे पोताना जीवन मा शक्य सुधारा माटे पण यत्न सेवे छे।

जेम मासाहार दोष रहित मले तो पण मुनिराज या श्रावक पोताना पाणना भोगे पण न वापरी शके। तेवी रीते चरबी वाला कपडा दोष रहित मलता होय तो पण महाव्रतधारी मुनिराज या श्रावक ते नज वापरी शके। जेम खान पान मा वनस्पत्याहार नो आग्रह राखवा मा आवे छे तेवी रीते वस्त्रो माटे पण शुद्ध खादी नो आग्रह राखे तोज श्रावक या साधु पोताना अहिंसा व्रतनो पालन करी सके छे। अन्यथा तेमने अहिंसानु ज्ञान नथी ने जो तेमने ज्ञान होय तो ते पोताना व्रत केवी रीते पाली शके ने व्रतधारी तरीके नो वेष केवी रीते धारण करी शके। अनेकानेक पकार नी समाज नी मिथ्या समज पर श्रीजी पकाश पाडी महान् उपकार करेल छे। सूर्यना सामे धूल नाखनार पोतानी आखमाज धूल नाखे छे तेज स्थिति विरोधी रूढी चुस्तो नी थवा पामी छे। तेवाने पण सद्बुद्धि नी पाप्ति माटे श्रीजीनी भावना ने प्रार्थना चालुज छे।

पभु महावीर ना शासन तथा वीतराग धर्मना सत्य प्रचार माटे श्रीजीए मारवाड नी रेताल भूमि मा ने गुजरात तथा काठियावाड मा उग विहार करी सत्य धर्मनो ध्वज फरकाव्यो।

गमे ते धर्मवाला साथे धार्मिक चर्चा करवानो पसग उपस्थित थाय त्यारे गमे तेवा वादी ने पोताना कुशाग्र बुद्धि थी निरुत्तर करी देवानी प्राकृतिक बक्षीस श्रीजीनी छे। जेथी समस्त जेन समाज माटे गोरवनो विषय छे।

व्याख्यान शेली पण अलोकिक छे। तेमना जेवा वक्ता जेन समाज मा तो नही पण भारतवर्ष मा आगली ना टेरवे गणी शकाय जेटली सख्या मा भाग्येज हशे। जेथी वर्तमान पत्र ना सम्पादक श्री मेघाणीए श्रीजी माटे खास एडीटोरियल लेख लख्यो के भारतवर्ष मा एक नही पण बे जवाहर छे। एक राष्ट्र नेता छे त्यारे बीजा धर्मनेता छे। श्रीजीनी व्याख्यान शेली थी प्रो राममूर्ति, मदनमोहन मालवीय जी ने लोकमान्य तिलक आदि प्रसन थया हता ने महात्मा गाधी जी पण श्रीजीनी सुवास थी आकर्षाई समागम माटे आव्या हता।

पूज्यश्री ना व्याख्यान नो विशाल सग्रह समाज पासे छे। ते लोक भोग्य ने सर्व माटे समान उपयोगी छे। साधु साध्वी गण पोताना व्याख्यान मा आ सगहनो उपयोग करे तो ते समाज माटे विशेष उपकारी नीवडशे ने स्व तत्त्वज्ञ वा मो शाह नी पूज्यश्री ना व्याख्यान माटे नी जे भावना हती ते सफल थवा पामशे।

आ लेखक मा जे कई अल्प प्रमाण मा सत्य समज होय तो ते श्रीजीना साहित्य ने समागम नो ज प्रताप छे।

१०—पूज्यश्री की निखालसता

(गोडल सम्प्रदाय के पण्डितरत मुनि श्री पुरुपोत्तम जी महाराज)

अजमेर मा साधु सम्मेलन थयु त्यारे त्या मारी हाजरी न हती, परतु हूँ पालणपुर मा ते वखते हतो। त्या रही हु सम्मेलन मा शी शी प्रवृत्ति थई तेथी वाकेफ रहेलो। पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराजे लाउड स्पीकर ऊपर पवचन न कर्युं। तेमज तेओ सम्मेलन मा कोई नी शोर मा न दवाता पोताना मन्तव्य मा मक्कम रह्या। ए बे वावतो थी मारा अन्त करण मा ते श्रीना माटे छाप पडी अने पालणपुर व्याख्यान मा उपर्युक्त माहिती मलता नी साथेज त्या ना अगगण्य श्रावको हीराभाई, जीवा भाई भणसाली आदि समक्ष मारा मुख मा थी उद्गारो नीकली पडया के "शावास जवाहर"।

राजकोट सघ ना आगेवानो पूज्यश्री ने चातुर्मास नी वीनती करवा त्रण वखत मारवाड तरफ गयेल। ते त्रणे बखत मारी सम्मति थी गयेल अने मे पण हार्दिक सम्मति आपेली अने पूज्य श्री कठियावाड मा पधारवाना छे ए समाचारने हर्षपूर्वक वधावी लीधा हता।

काठियावाड मा त्रण चातुर्मास करी तेओ श्रीए पोतानी प्रतिभाशाली, व्याख्यान शेली गुजराती भाषा ऊपर नो काबू अने समाज ने योग्य रस्ते दोरवानी शक्ति वडे तेओए काठियावाड़ नी जेन अजैन जनता ऊपर जे प्रभाव पाड्यो छे अने जेन-शासन नी उन्नति मा जे प्रशसनीय फालो आप्यो छे ए वधु जोई ने जाणी ने मने खूबज आह्लाद उत्पन्न थयो छे।

राजकोट मा तेओ श्रीए चातुर्मास कर्यु त्यार थी तेओ श्री ने मलवानी मारा हृदय मा घणी उत्कण्ठा हती। अने राजकोट चातुर्मास पूर्ण थया पछी तेओ श्री जेतपुर पधार्या त्या तेओ श्री ना दर्शन नो लाभ मेलवी हु घणोज आनन्द पाम्यो। तेओ श्रीनी साथे शास्त्रीय चर्चा मा पण मने वहु रस उपजतो। विविध प्रकारना प्रश्नो मे तेमने पूछेला, तेना तेओ श्रीए शास्त्री शैली अने टीकाने आधारे यथा शक्ति खुलासा कर्या। आ चर्चा दरमियान "हु आचार्य छु के ज्ञानी छु" एवु वलण जरा पण जोवा मा न आव्यु। ऐ तेमनी निखालसता अने निरभिमानताए मारा हृदय ऊपर सुन्दर छाप पाडी।

पूज्यश्री नो अमारा ऊपर नो अगाध प्रेम भूलाय तेम नथी।

११—उज्ज्वल रत्न

(पूज्यश्री जयमल जी महाराज की सम्प्रदाय के पण्डितप्रवर
मुनि श्री मिश्रीमल्ल जी महाराज, न्याय—काव्यतीर्थ)

यद्यपि पूज्य श्री के साथ मेरा विशेष और गहरा परिचय नही रहा फिर भी ऐसी बात नही हे कि उनके तेजस्वी जीवन से मे अनभिज्ञ होऊँ।

पूज्यश्री के जीवन की महत्ता वहुत व्यापक हे। आपके जीवन इतिवृत्त से आपके प्रतिभाशाली व्यक्तित्व का अच्छा परिचय मिलता हे ओर व्यक्तित्व ही जीवन हे। व्यक्तित्वहीन जीवन किस काम का! वह तो निरा पामरपन हे।

पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज अपने समाज के उज्वल रत्न हे। आपके अध्ययन मे गम्भीरता हे, भावो मे विशदता है, विचारो मे विशालता हे। यही नही आपका वक्तृत्व भी प्रभावशाली, विशुद्ध, व्यापक ओर युगानुसारी है। भाषा मे सरलता, सयतता ओर अलकृति हे। शैली प्रवाहमयी, रसोद्भिन्न ओर प्रौढ हे।

पूज्यश्री के ससर्ग मे आने के दो प्रसग मुझे खूव याद हे। पहले प्रसग पर मेरे श्रद्धेय गुरु पूज्यश्री जोरावरमलजी महाराज भी विद्यमान थे। मेरे गुरु महाराज भी अपनी समाज के एक माने हुए मनीषी, मुनि, महात्मा थे। जेन शास्त्रो के समझाने मे आप अगाध पाण्डित्य रखते थे।

जब पूज्यश्री व्यावर का चोमासा पूर्ण करके वीकानेर की ओर विहार करते हुए कुचेरा पधारे उस समय मेरे गुरु महाराज भी वही विराज रहे थे। यह घटना सन् छव्वीस की हे। आप के ओर मेर गुरु महाराज के वीच वहुत अच्छा व्यवहार था। दोनो आचार्य वडे प्रेम के साथ मिला करते थे। वह सुन्दर दृश्य अव भी मेरे नेत्रों के सामने ज्यो का त्यो हे। दोनों आचार्य सूर्य निकलने के वाद जगल मे

पधारते ओर बहुत लम्बे समय तक प्रेमभीनी सात्विक चर्चा किया करते ।

दूसरी बार भी आप का सम्मेलन कुचेरा मे ही हुआ। यह घटना सन् चालीस की है, जब आप बगडी चातुर्मास के बाद वहा पधारे थे। सयोगवश उस समय भी मेरे वर्तमान पूज्य गुरु महाराज अर्थात् मेरे पूज्य बडे गुरु भ्राता शान्तस्वभावी प्रवर्तक मुनि श्री हजारीमलजी महाराज भी वहा विराजमान थे। आप भी एक उदार,आदर्श, प्रकृत्या भद्र और पवित्र मुनि महाराज है। इस बार भी दोनो महानुभावो मे कितना प्रेम रहा यह लिखा नही जा सकता। वास्तव मे वह प्रेम अपार था।

यद्यपि दोनो प्रेम प्रसगो पर मै आप से यथेष्ट लाभ न ले सका, क्योकि पहली बार मै नव दीक्षित और अल्पवयस्क था और दूसरी बार आप वय परिपाक और शारीरिक अस्वस्थता के कारण अधिकतर मौन रहते थे। फिर भी जितना आप से परिचय हुआ, उस से मुझे अधिक आनन्द का ही अनुभव हुआ है और उन के व्यक्तित्व की छाप हृदय पर अकित हुई है।

पूज्य श्री के विचारो और व्यवहार की उदारता प्रकट करने के लिए इतना लिखना ही पर्याप्त होगा कि आप को और आपकी सम्प्रदाय के दूसरे सन्त मुनिराजो को मैने अपने गुरु महाराज से सद्भावना और प्रेमपूर्वक पेश आते देखा है।

मै अपने समाज का अहोभाग्य समझता हूँ कि जिस मे आप सरीखे पूज्यपाद सन्त मुनिराज है।

आज अगर समाज मे साम्प्रदायिकता की वज्रभित्तियाँ खडी न होती तो मेरा खयाल है पूज्यश्री सरीखे परमपुनीत मुनिराजो के सम्पर्क से अपना यह समाज अपने अतीत गौरव को प्राप्त करने मे बहुत बढ गया होता।

१२—जैनाचार्य पू.श्री जवाहरलालजी म.सा.की जीवन झांकी

(प्रवर्तिनी महासतीजी श्री उज्वल कवरजी)

जैनाचार्य जैसे महान् विचारक एव विवेचक सन्तपुरुष के लिए कुछ कहना मेरे लिए जितना सद्भाग्य पूर्ण है, उतना ही मुश्किल भी, क्योकि उनके घनिष्ट परिचय मे आने का मुझे अवसर ही नही मिला। परन्तु सूर्य को दूर से देखने वाला कोई भी व्यक्ति यह तो कह सकता है कि सूर्य पृथ्वी पर प्रकाश फेलाने वाला ज्योतिपुज हे, वैसे ही मुझे भी कहना चाहिए कि वे एक धर्म प्रवर्तक हे ।

विद्वानो का यह वाक्य "I come like light in the world" भावार्थ - मै जगत मे प्रकाश की तरह आता हूँ,। धर्म (सत्य) प्रवर्तको ही के लिए हे।इतना होने पर भी वास्तव मे देखे तो धर्मप्रवर्तको का रास्ता हमेशा सरल, साफ नही होता। उन्हे प्रचड विरोधो का सामना करते हुए प्रगति करनी पडती हे। सच कहे तो सर्वसाधारण लोग सत्य-प्रकाश को समझ भी नही पाते हे। वे तो अज्ञान अधकार मे चाहे जिसके पीछे घूमते रहते हे। यही कारण हे कि आम जनता का मानसिक ओर आत्मिक विकास वहुत ही कम हो पाता हे। इस वास्ते कह सकते हे कि सामान्य लोगो के हृदय उल्लू के नेत्रो की तरह ज्ञानयुक्त प्रकाश को ग्रहण करने मे असमर्थ रहते हे। उल्लू अपने नेत्रो की कमजोरी न समझते हुए सूर्य-प्रकाश को चाहे बुरा कहे या नही, परन्तु साधारण लोग तो अपने हृदय की दुर्बलता नही पहचान कर सत्य-प्रकाश को ही बुरा वताते हे।

अन्याय, दुराग्रह ओर प्रमाद (आलस्य) के पहलुओ को सर्व सामान्य लोग आज भक्षक के वदले रक्षक मान वेठे है। इस कारण आज के सत्यप्रवर्तको के कधो पर लोगो के इन मोह जालो को चीरने की दुगुनी जिम्मेवारी आई हुई हे। क्योकि इन मोहजाल के पडदो को चीरे विना उनके दिलो-दिमाग सत्य-प्रकाश को ग्रहण नही कर सकेगे।

पूज्यश्री के जीवन की विशेषताए भी ऐसी ही हे। उनके भी जीवन का अधिक भाग (ऊपर लिखे अज्ञानियो की गेरसमझ दूर करके सत्य-प्रकाश उनके दिलो-दिमाग मे पहुँचाते हुए) अनेक विरोधो एव विरोधियो का सामना करने मे व्यतीत हुआ, कहा जा सकता हे। इस वास्ते वे आज न केवल जेन पथ प्रदर्शक के नाते से, वल्कि मानवीय उदारता के मार्गदर्शक की भाति चमक रहे हे ओर यह चमक हर प्रवर्तक को अनेक खडतर विरोधो का मुकाविला करने पर ही मिल सकती हे।

वर्तमान युग मे वेज्ञानिक शोधो के फलस्वरूप उसकी यशस्विता विमान, रेडियो ओर वायरलेस जेसे साधनो के रूप मे हम प्रत्यक्ष देख सकते हे। ये सव धीरज, लगन, विवेक ओर साहस के परिणाम है, इतने पर भी वैज्ञानिको के सहारे से तो हम हजारो मील दूर की वाते ही देख ओर सुन सकते हे, परन्तु पूज्यश्री जेसे वेज्ञानिको के सहारे से हम विना किसी साधन के केवल अपने हृदय रूपी यत्र का उपयोग करके विश्व भर की भूत, वर्तमान और भविष्य की वाते देख, सुन ओर वता भी सकते हे। इतना ही नही चाहे तो हम अपना आत्मिक विकास साध कर अमरता को भी प्राप्त कर सकते हे। अव पाठक स्वयं वतावे कि कोनसा वैज्ञानिक कल्याणकारी एव महान हे ? इस तरह स्वय पूज्यश्री भी वर्तमान समाज मे जेन समाज का गौरव वढाने वाले वेज्ञानिक हे। इनकी वाणी हमे महारम्भ (यत्रवाद) की सत्यानाशी प्रवृत्ति से वचा कर अल्पारभ (गृह उद्योग) की प्रवृत्ति की ओर ले जाने वाली हे। इसलिए स्तुत्य है।

इस तरह की विवेचना के वाद हर व्यक्ति जान सकता हे कि मनुष्य जीवन की महत्ता उसकी भोतिक विजय पर ही नही, किन्तु उसके आत्मिक सत्य की शोध पर आश्रित हे। इसलिए वास्तविक तोर पर आत्मिक सत्य ही मनुष्य को हर जगह चिर शाति दे सकता हे। वेसे ही इतिहास मे भी उन्ही के नाम सुवर्णाक्षरो मे लिखे रहते हे, जिन्होने आत्मिक विजय पाई हे।

इसलिए कह सकते हे कि समय शूरवीरो को भुला सकता हे, परन्तु सत्पुरुषो को नही। सत्पुरुषो को भुलाना उसके सामर्थ्य से वाहर हे। पराक्रमी पुरुष प्रजा के शरीर पर राज्य कर सकता हे न कि हृदय पर। जनता के हृदय सम्राट् तो सन्त महात्मा ही हो सकते हे।

पराक्रमियो की पाशविक शक्ति अपने भय द्वारा लोगो से अपने सामने अपनी आज्ञा आज भी मनवा सकती हे। परन्तु 'गाय वछडे' की भाति अपने पीछे लोगो को रखने वाली तो सत्पुरुषो की देवी शक्ति ओर उनकी विश्वप्रेम की भावना ही हे। हम आज 'जेन जवाहर' का इस हेतु अनुसरण कर सकते हे कि उनके सहारे से अपने भक्त हृदय को विकसित कर उनके साथ आत्मविकास कर सके।

❑

राजा-रईसों आदि की श्रद्धाजलियां

१३—महाराजा साहेब श्री लाखाधिराज बहादुर एस वी ई , के ई एस आई , एल एल डी , मोरवी नरेश

श्री स्थानकवासी जैन सम्प्रदाय ना प्रतिभाशाली धर्मनायक जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराजश्री जेवा वयोवृद्ध, ज्ञानवृद्ध सतनु राजकोट मा स १९९२ नु चातुर्मास थता, मोरवी मा तेमज काठियावाडना अन्य स्थलो मा तेमनी यशकीर्ति फेलाता, आवा महानुभावनु चातुर्मास मोरवी मा थाय तो अमारी जैन अने जैनेतर प्रजा तेमना सदुपदेश नो लाभ लई कृतार्थ बने एवी भावना थी अमारा शहेरना अग्रेसरो मारफत मोरबीना चातुर्मास माटे अमे पू महाराजश्री ने विनती करेली, जे तेओ श्रीए सहर्ष स्वीकारी स १९९३ नु चातुर्मास मोरवी मा पसार कर्युं

मोरवी नी अमारी स्थानकवासी जैन प्रजाए जे उत्साह, खत अने प्रेमभरी लागणी थी पूज्यश्री नु स्वागत कर्यु, तेमज बहारना सेकडो मेमानो ना अतिशय सत्कार माटे अमारी जेन प्रजाए जे जेहमत उठावी हती, तेनी अत्रे नोध लेवामा अमने सतोष थाय छे।

पू महाराजश्री ना चातुर्मास दरम्यान तेओश्रीना प्रवचन नो तेमज अगत परिचय नो लाभ लेवाना अपने घणा प्रसगो मल्या हता। पू श्री ना व्याख्यान मा जेन धर्म नी व्यापकता, सस्कारिता अने उदारता ने व्यक्त करता, जैन तत्व विषयक मधुर व्याख्यानो अमे साभलेला। तेनी अमारा ऊपर ऊडी छाप पडी छे।

पू श्री ना दरेक व्याख्यानो मा प्रार्थना ने महत्व नु स्थान मलतु। जीवन ने सार्थक अने प्रभुमय बनाववामा प्रभु प्रार्थना एक अमोघ साधन छे, अने ए कारणे पूज्यश्री प्रार्थना उपर हृदय स्पर्शी विचारो द्वारा सचोट उपदेश आपता अने प्रभु भक्ति तरफ जनता नु लक्ष खेचता।

पूज्य महाराज श्री नी तलस्पर्शी विद्वत्ता, समन्वय शैली अने कोई ने पण कडवु न लागे छता हितकर सत्य उच्चारवानी सादी छता भव्य पद्धति थी अमने घणोज सतोष थयो हतो।

पूज्य महाराजश्री दीर्घायु भोगवे, धर्मशास्त्र नी उन्नति ना कार्यो करता रहे अने एमना देदीप्यमान प्रकाश थी भारतवर्षी कल्याण साधे एज अमारी भावना छे।

१४–श्रीमान् ठाकुर श्री दीपसिंहजी साहेब वीरपुर नरेश

श्रीमान् जैनाचार्य महाराज श्री जवाहरलाल जी महाराज ज्यारे विक्रम सवत् १९९२ थी १९९५ सुधी काठियावाडमा विहार करता हता ते दरम्यान मने युवराज अने राजकर्ता तरीके तेमने वीरपुर, राजकोट, सायला अने मोरवी मा मलवानो प्रसग मल्यो हतो। जवाहरलाल जी महाराज ज्यारे स १९९२ ना अरसा मा पहेला वीरपुर पधार्या त्यारे सयोगवशात् हूँ राजना काम प्रसगे बाहरगाम गयेलो। पाछल थी पूज्य पिताश्री हमीरसिह जी साहेब तेमने मलवा पधार्या। तेमने मली पोते बहुज खुशी थया अने तेमना ज्ञाननो तथा तेमना प्रवचन नो लाभ पोताना युवराज ने मले एटला खातर एक दिवस आग्रह करी वीरपुर मा वधारे रोक्या अने मने तुरत वीरपुर मा बोलावी महाराज साथे मिलाप कराव्यो। महाराजनु प्रवचन पाच मिनट साभलताज मारा मननी अदर छाप पडी के "यथा नाम तथा गुण" प्रमाणे जवाहलालजी महाराज नु जेवु नाम एवाज पोते भारतवर्ष ना एक जवाहीर छे, एवी जातनी मने ऊँडी छाप पडी अने तेमनु प्रवचन खूब साभल्यु। छता एटला थई मने सतोष नही थवाथी मे ऊपर लख्या स्थलोए अनेक बखत पोताने मलवानो प्रसग उपस्थित करी बखतो बखत हुँ तेमना प्रवचन मा राजा अने प्रजा ने पोत पोताना कर्तव्य नो बोध आपता सामली बहु आनद मेलवतो अने ते कोई दिवस भुलाय तेम नथी। एटलुज नही पण तेमना प्रवचन नो बखतो बखत लाभ लेवा ज्या महाराजश्री विहार करता होय त्या जई साभलवानी तीव्र इच्छा थती अने हजी थाय छे पण महाराजश्री काठियावाड मा विहार करता हता ए दरम्यान मा ज पूज्य पिताश्री नो स्वर्गवास थता राजनो बोझो शिर ऊपर आवी पडता सासारिक उपाधि ने लई जवाहरलाल जी महाराज ना दर्शन नो लाभ वधारे उठावी शक्यो नथी जे माटे घणो दिलगीर छु।

प्रभु पासे मारी एवी प्रार्थना छे के परमात्मा तेमने तदुरुस्ती साथे लाबु आयुष्य आपे अने तेमना ज्ञाननो लाभ भारतवर्षनी जनता लीए अने जीवन मा तेमनो बोध उतारी जीवन ने उज्ज्वल बनावे।

१५–हिज हाईनेस महाराणा राजा साहेब बहादुर श्री वाकानेर नरेश

श्री स्थानकवासी जेन सम्प्रदाय ना जेनाचार्य पूज्य श्रीमान जवाहरलाल जी महाराज श्रीनु वाकानेर पधारवु थयु ते बखते तेओ श्रीना प्रवचनो साभलवानो लाभ अमने प्राप्त थयो हतो। पूज्यश्रीना व्याख्यान घणा सुदर अने आकर्षक हता। तेओश्रीना उत्तम चारित्र नी, सरल मायालु स्वभाव नी अने ऊँचा ज्ञाननी अमारा ऊपर ऊडी छाप पडी छे। पूज्यश्री दीर्घायु भोगवे अने पतित अवस्थाने पामता जीवने पोताना ज्ञाननो लाभ आपे एज अमारी भावना छे।

१६–श्रीमान् ठाकुर साहेब श्री मूली नरेश

श्री स्थानकवासी जेन सम्प्रदायना पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराजनु राजकोट चातुर्मास थएलु ते बखते राजकोट जता एक दिवस माटे अही तेओनु पधारवु थएलु, ज्यारे अमोने तेओश्रीनो फकत एकज व्याख्यान साभलवानो प्रसग प्राप्त थएल हतो।

पूज्य महाराज श्रीए व्याख्यान मा जेन धर्म मा समाएला केटलाक पवित्र तत्वोनी सारी समजावट करवा उपरान्त शुद्ध चारित्र साथे प्रभु भक्ति करवा थी थता महान लाभो अने मनुष्य जिदगीनु सार्थक्य ए बहुज सुन्दर रीते समजावेलु हतु।

पोते वयोवृद्ध छता, धर्मना फेलाववा खातर घणो परिश्रम वेठे छे। तेओनी बोध आपवानी एवी तो असाधारण शैली छे के जेन अने जेन सिवायना बधा साभलनाराओ ने तेओश्री तरफ पूज्यभाव उत्पन्न थाय।

टुक बखतना परिचय मा पण तेओश्री ना ज्ञान अने विद्वत्ता माटे अमोने घणीज खुशी उत्पन्न थयेल छे।

१७—श्री मालदेव राणा साहब, पोरबन्दर

परम कृपालु, परमपूज्य, जैनाचार्य, सन्तशिरोमणि श्री जवाहरलाल जी महाराज श्रीना पवित्र चरण कमलनी सेवा मा -

पोरबदर थी लखी चरण रज सेवक मालदेव राणा ना सविनय साष्टाग दण्डवत् प्रणाम स्वीकारशो जी। लखवा विनती ए के आप श्री अन्ने पोरबदर पधारी पोरबदर नी प्रजाने तेमना आत्मकल्याण माटे जे सद्बोध रूपी अमृत रसनु पान कराव्यु छे ते कदी पण भुलाय तेम नथी। आप श्रीनो सर्वमान्य उपदेश, आप श्रीनु अति सादु जीवन, उच्च चारित्र, शुद्ध अहिंसा पालन आदि उच्च सद्‌गुणो सदा याद आव्या करे छे। आप श्रीना उदार दिल ना परिणामे कोई पण जात के धर्म नो भेदभाव राख्या शीवाय समभावे विशाल दृष्टि थी आप श्रीए प्राणिमात्र नु कल्याण केम थाय ए भावना थी जे उपदेश आप्यो छे ए खरेखर अमूल्य अने प्रशसा पात्र छे। महाराज श्री! आप श्री ना जीवन ने धन्य छे। आप श्री ना सदुपदेश मुजब जो अमे वर्ती शकीए तो जरूर अमे मानव जीवन नी सार्थकता करी शकीए।

आप श्री ना उपेशना वचनो हृदयना ऊडापण थी निकलता। ए हतो शुद्ध आत्मा नो आवाज अने तेथीज श्रोता जनो पर तेनी सचोट छाप पडती। सत पुरुषो पोतानी प्रशसाना लोभी न ज होय छता गुणवान् विभूति ना सत्य गुणगान करवा मा पण एक प्रकार नो आनन्द छे। एटले आप श्री ने प्रिय लगाडवा मा आ शब्दो नथी पण जे सद्‌गुणो आप श्री मा जोया ए स्वाभाविक बोलाई जाय या पत्र मा लखाइ जाय तो कदाच आप श्रीने प्रिय न लागे तो क्षमा करशो जी। सतो ते खुशामद प्रिय होता नथी।

एटले आ खुशामद ना शब्दो नथी पण अनुभवेली सत्य हकीकत छे। अने ते स्वाभाविक लखाइ जाय छे।

१८—सर मनुभाई मेहता **kt C S I**, फोरेन एण्ड पोलिटिकल मिनिस्टर ग्वालियर, भूतपूर्व प्रधान मन्त्री वड़ौदा तथा वीकानेर

I had the preveliege and rare advantage of attending at Vyakhyanas of Swami Guru Jawaharlalji at Bikaner when I had the honour of holding the post of Prime Minister here Swami Jawaharlalji has the art of expressing highly philosophic truths in language easily intelligible to the masses He holds liberal and Catholic views about the truths of Diverse religious creads in the country and his mode of treatment of a subject that is capable of polemical and controversial treatment with tolerance and fair play was very praiseworthy

I wish him a long and successful carrier as a spiritual Guru and guide to the Jain fraternity

हिन्दी–अनुवाद

"जब मे वीकानेर मे प्रधान मन्त्री था उस समय स्वामी गुरु जवाहरलालजी महाराज के व्याख्यान सुनने का दुर्लभ अवसर एव लाभ प्राप्त हुआ था। स्वामी जवाहरलालजी मे महान दार्शनिक तत्वो को ऐसी सरल भाषा मे प्रकट करने की कला है जिसे साधारण जनता भी आसानी से समझ सकती है। देश के विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायो मे रहे हुए सत्य के प्रति आपके उदार सहानुभूतिपूर्ण विचार है। विवाद अथवा चर्चावाले विषय को सहनशीलता एव न्याय के साथ प्रकट करने का आपका ढग बहुत प्रशसनीय है।

जेन समाज के पथ-प्रदर्शक तथा आध्यात्मिक गुरु के रूप मे मे उनके दीर्घ एव सफल जीवन की कामना करता हूँ"।

१६–दीवान वहादुर, दीवान विशनदासजी **kt** जम्मू

I had the honour of paying my homage to the most venerable Jain muni Shree Maharaj Jawaharlalji During my visit to Ajmer In the course of several interviews which His Holiness permitted me to hold with him there I was much impressed by his vast Knowledge of Jain Shastras

जव मे अजमेर गया हुआ था, मुझे जैन मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज के प्रति अपनी भक्ति प्रदर्शित करने का लाभ प्राप्त हुआ था। पूज्यश्री के साथ वार्तालाप करने के जो थोडे से अवसर प्रात हुए उनमे उनके जेनशास्त्र सम्वन्धी विशाल ज्ञान का मुझ पर वहुत प्रभाव पडा।

२०–श्री त्रिभुवनदास जे राजा, चीफ मिनिस्टर, रतलाम

I came in contact with the gifted teacher when he was on a religious tour and paid a visit to Porbandar in 1937 April-May on his way to Morvi to spend the Chaturmasa at the latter place I attended his many of soul-stirring lectures at Porbandar and the lay public both Jain and non-jain were so keen to persuade Pujyashri to stay on at Porbandar During the ensuing rainy season that I was literally compelled to make an open and public Appeal to him His Highness the Maharaja Rana Sahib Shri Natwarsinghji Bahadur K C S I of Porbandar and other members of the Raj family, state Officials and gentry, learned Brahmins, Sirdars and Jagirdars, Orthodox Vaishnavas, even musalmans, flocked in thousands to hear Pujyashri s learned discourses and almost every one male and female, audience felt personally ennobled by his direct appeal to live and let other live, a life of Peace and Piety and Non-Violence Maharaj Shri Jawaharlalji is not only a great orator but a great soul whose human sympathies

extend for beyond the narrow pole of Jain asceticism or dogma I wish there were more religious teachers in India of the type of Pujya Shri so that there would be no communal bitterness I have personally felt myself a betterman after having come in contact with him and the influence that his spiritual megnatism has exerted on me would not be wiped off

I called on Pujyashri again while he was indisposed at Jamnagar and another happy audience with him

सन् १९३७ का एप्रिल-मई महीना था। पूज्यश्री का चातुर्मास मोरवी मे तय हो चुका था। धर्म प्रचार करते हुए आप पोरबन्दर पधारे। उसी समय मुझे इस प्रतिभाशाली धर्मशिक्षक का परिचय हुआ। मैने पोरबन्दर मे आपके कई व्याख्यान सुने जो आत्मा मे हलचल पैदा कर देते थे। आगामी चातुर्मास मे पूज्यश्री को पोरवन्दर ठहराने के लिए जेन एव जैनेतर जनता इतनी उत्कण्ठित थी कि मुझे सर्वसाधारण की ओर से खुले रूप मे प्रार्थना करने के लिए वस्तुत बाध्य होना पडा। पूज्यश्री के विद्वत्तापूर्ण भाषण सुनने के लिए हिज हाईनेस महाराजा राणासाहेब श्री नटवरसिहजी बहादुर के सी एस आई पोरबन्दर नरेश, राज परिवार, राज्याधिकारी और प्रतिष्ठित नागरिक, विद्वान् ब्राह्मण, सरदार ओर जागीरदार, कट्टर वेष्णव, यहा तक कि मुसलमान तक हजारो की सख्या मे आते थे। जीना ओर जीने देना एव शान्ति, पवित्रता तथा अहिंसामय जीवन के लिए जब आप साक्षात् देशना देते थे तो प्रत्येक स्त्री पुरुष अपने व्यक्तित्व को ऊचा उठा हुआ पाता था। महाराजश्री जवाहरलालजी महान् उपदेशक ही नही किन्तु महान् आत्मा है। आपकी सहानुभूति जेन साधु सस्था या सिद्धान्तो तक ही सीमित नही है किन्तु उनके वाहर भी दूर तक फेली हुई है। मेरी कामना है कि भारतवर्ष मे पूज्यश्री के समान वहुत-से धर्मोपदेशक हो जिससे साम्प्रदायिक कटुता दूर हो जावे। आपके परिचय मे आने के वाद से मे अपने व्यक्तित्व को कुछ उन्नत अनुभव कर रहा हूँ। आपके आध्यात्मिक आकर्षण ने मुझ पर जो असर डाला हे वह कभी मिट नही सकता।

जामनगर मे जव पूज्यश्री अस्वस्थ थे, मुझे मिलने का फिर सोभाग्य प्राप्त हुआ था। इस समय के वार्तालाप से भी मुझे वडी प्रसन्नता हुई।

२१—श्री जे एल जोवनपुत्र, चीफ मिनिस्टर सचिन स्टेट

I had the privilege to hear three sermons of this learned Swamiji when he had kindly camped at Rajkot in 1938-39 India is still a land of saints and Jawahar lalji Maharaj is one of the eminent jewels in the galaxy His attitude towards life's noble mission is robust and cheerful He possess in a pre-eminent degree the most outstanding qualities of an Acharya and his sermons balanced with fitting anecdotes full of worldly wisdom go deep into the mind of his hearers Truth is one and indivisible, but so long as there appears the veil of Maya or ignorance, the preachings of such Sadhus help to clear the

way of the Sadhakas While every soul (Jivatma) is on its evolutionary path to liberation and catches so much of the preachings of such Sadhus for which they have "Adhikar" the benevolent associations of such Sadhus with the public do not fail to do some good to every one of them They are like trees that give shelter to all who resort to them and like rivers that purify the land they traverse They come on earth to help and guide the souls that have developed and need nourishment Every sermon of Jawaharlalji Maharaj was full of not only of his Masterly groop of the Jain Philosophy, but replete with his deep study of comparative philosaphy of other Darshanas

विद्वान स्वामी जी (जवाहरलालजी महाराज) सन् १९३८-३९ मे जब राजकोट विराजमान थे उस समय मुझे उनके तीन व्याख्यान सुनने का सोभाग्य प्राप्त हुआ। भारतवर्ष अभी तक सतभूमि है ओर जवाहरलाल जी महाराज उस सतमाला के प्रधान रत्नो मे से है। जीवन के महान् उद्देश्य के प्रति उनका रुख दृढ ओर आनन्दपूर्ण है। उनमे एक आचार्य की मुख्यतम विशेषताए अत्यधिक मात्रा मे विद्यमान हे। दुनियावी सूझ से परिपूर्ण छोटे-छोटे चुटकलो वाले उनके व्याख्यान श्रोताओ के हृदय मे गहरे उतर जाते हे। सत्य एक तथा अविभाज्य है। किन्तु जव तक माया या अविद्या का परदा रहता है, ऐसे साधुओं के उपदेश साधको के मार्ग को स्पष्ट करने मे सहायता करते हे। जव कि प्रत्येक जीवात्मा अपनी मुक्ति के लिए विकास के पथ पर चल रहा है ओर ऐसे साधुओ के उपदेशो को ग्रहण करता हे जिन के लिए उनका अधिकार हे, जनता का ऐसे साधुओ के साथ उपयोगी सत्सग प्रत्येक व्यक्ति के लिए कुछ न कुछ लाभ अवश्य करता हे। वे वृक्षो के समान हे जो पास आने वाले को आश्रय देते हे और उन नदियो के समान हे जो जहाँ-जहाँ प्रवाहित होती हे उस क्षेत्र को पवित्र बना देती हे। वे उन आत्माओ को सहायता पहुँचाने तथा पथप्रदर्शन करने आते हे जिन्होने मार्ग प्राप्त कर लिया हे ओर उस पर चलने के लिए शक्ति चाहते हे। पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज का प्रत्येक व्याख्यान उनके जेन दर्शन पर पूरे अधिकार के साथ-साथ दूसरे दर्शनो के भी गहरे तथा तुलनात्मक पाडित्य से परिपूर्ण होता हे।

२२—राव साहेव अमृतलाल टी महेता, बी ए एल एल बी , भूतपूर्व दीवान पोरवन्दर, लीमडी और धर्मपुर स्टेट

I had the good fortune to attend several lectures of the highly revered Jain Acharya pujya maharaj shri Jawaharlalji in Morvi as well as Rajkot My admiration for him is not due to only his being Jain Ascetic but to his being a preacher of moral principals common to most religious

I was very much impressed by his learning earnestness, eloquence and morvellous lucidity of expression and ex-position His strong desire for the welfare of his flock often prompted him to take a deep interest in their social life and entitled him and endeered him to them to be called their guide, philosopher and friend

मोरवी तथा राजकोट मे परमपूज्यश्री जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज के कुछ व्याख्यान सुनने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था। केवल जेन साधु होने के नाते ही नही किन्तु सर्वधर्म साधारण नैतिक नियमो के उपदेशक होने के कारण भी वे मेरी प्रशसा के विषय हैं।

उनकी विद्वत्ता, भावप्रवणता, वाग्धारा एव व्याख्यान तथा अभिव्यजना की सरसता ने बहुत प्रभावित किया है। अपने अनुयायियो के हित की तीव्र भावना से प्रेरित होकर वे सामाजिक कार्यों मे बडी रुचि लेते है। इसीलिए वे लोग आपको अपना नेता, धर्माचार्य तथा मित्र मानते है जिसके कि आप पूर्ण अधिकारी है।

२३—राव साहेब माणेक लाल सी पटेल,
रिटायर्ड डिपुटी पोलिटिकल एजेट

W I S Agency

I had occsion to listen to some of his (Pujya Shri Jawahar lal ji's) sermons during the first satyagraha Compaign of the year 1938 when I was member of the State Executive Council He was then on a tour in Kathiawar and came down to Rajkot from Jamnagar with a view to bring about peace between the Rajkot State and its people He had religious ceremonies performed, delivered sermons and used all his persuasive powers and influence to bring about peace which was attained when his camp was actually at Rajkot His sermons preached constructive peace and contentment in a spirit of duty and bore the impress of a disciplined life with a broad minded universal morality aceptable to all creeds and communities I wish the Maharaj Shri a long life in his useful humanitarian mission in the disturbed times of brutal wars through which the earth is passing at the present moment

१९३८ मे राजकोट के प्रथम सत्याग्रह सग्राम के समय मुझे आपके (पूज्यश्री के) कुछ व्याख्यान सुनने का अवसर प्राप्त हुआ था। उस समय मै स्टेट एक्सीक्यूटिव काउसिल का सदस्य था। पूज्यश्री उन दिनो काठियावाड मे विचरते हुए राजकोट राज्य तथा प्रजा मे शान्ति स्थापित करने के लिए जामनगर से पधारे थे। आपने धार्मिक अनुष्ठान करवाए, व्याख्यान दिए और शान्ति स्थापित करने के लिए अपनी सारी प्रवर्तक शक्तियो तथा प्रभाव का प्रयोग किया। परिणाम स्वरूप उनके राजकोट मे विराजते समय ही शान्ति हो गई। वे अपने व्याख्यानो मे रचनात्मक शान्ति तथा सन्तोष को कर्तव्य समझने का उपदेश देते थे। वे हृदयविशालता से भरी हुई सार्वजनीन नैतिकता के साथ-साथ जीवन के अनुशासन पर जोर देते थे। उनमे उदार हृदयता से परिपूर्ण सार्वजनीन नैतिकता तथा अनुशासित जीवन की छाप रहती थी। जब कि पृथ्वी दानवी युद्धो के इस क्षुब्ध वातावरण मे से गुजर रही है, मानवतापूर्ण कार्यों के लिए मे महाराजश्री के दीर्घायुष्य की कामना करता हूँ।

24–श्री वैकुण्ठप्रसाद जोशीपुरा सेक्रेटरी टू दी दीवान पोरवन्दर

I cherish the happiest recollections of the visit of revered Jain Acharya Shri Jawaharlal ji maharaj to Porbandar during his tour in Kathiawar about five years ago Brief as was his stay at Porbandar, it proved to be of lasting benefit to the hundreds of citizens who attended his inspiring discourses every morning among whom I was privilaged to be one, one whose admiration of the Preceptor has perhaps been second to none His versatile exposition of the highest principle of "Ahinsa" as applied to daily life and his powerful exortation to envolve all that is best in human life evoked spontaneous response and created around him spiritual atmosphere in which one is roused to the consciousness of the frailities to which man is prove and at the same time of the infinite strength he is capable of exerting to overcome them My devout feelings go forth to the distinguished Jain Acharya Shri Maharaj and I consider it may great good fortune to have had the opportunity of paying him my humble and respectful tribute

पाच साल पहले काठियावाड मे भ्रमण करते हुए जब जेनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज पोरबन्दर पधारे, उस समय की आनन्ददायक स्मृतिया मेरे हृदय पर अकित है। पोरवन्दर मे आपका विराजना अल्प समय के लिए ही हुआ था फिर भी सेकडो लोगो ने आपके प्रेरणा से भरे हुए उपदेश सुने ओर स्थायी लाभ उठाया। प्रतिदिन सुबह व्याख्यान सुनने वाले भाग्यशालियो मे से मे भी एक था किन्तु उस उपदेशक के प्रशसको मे मेरा स्थान सभवतया किसी से पीछे नही था। देनिक जीवन मे आचरण करने योग्य अहिंसा के उच्चतम सिद्धान्त पर आपकी भावमयी वाग्धारा तथा मानव जीवन मे रही हुई श्रेष्ठ वातो को प्रोत्साहित करने वाले आपके प्रेरक शब्द तत्काल असर करते थे। चारो तरफ एक ऐसा आध्यात्मिक वातावरण वन जाता था जिससे आत्मा मानवीय प्रलोभनो की तुच्छता समझकर ऊचा उठ जाता था। साथ ही वह अपनी अनन्त शक्ति का अनुभव करने लगता था जिससे अपने को उन्हे जीतने के प्रयत्न के लिए पूर्ण समर्थ मानने लगता था। असामान्य जेनाचार्य श्रीजीमहाराज के प्रति मेरी भक्ति भावना रखता हुआ मे इसे अपना सोभाग्य मानता हूँ कि उनके प्रति श्रद्धाजलि प्रकट करने का अवसर मिला।

25–श्री द्वारकाप्रसाद एल सरय्या, बी ए एल–एल बी , पोलिटिकल सेक्रेटरी, नवानगर स्टेट

I first attended his discourse on the life of Lord Shri Krishna on Shravan Vad 8th in that year I was struck by the great spirit of toleration shown by him in his remarks about Lord Shri Krishna whom I revere and adore sincerely being a Vaishnav muself

There is no mention in Sanatani Shastras about the near relationship of Lord Shri Krishna with the great Jain Tirthankar Shri

Neminath ji which he explained at great lenght I was charmed with his nice performance and so greatly attracted that I then made it a point to attend as many of his discourses as possible consistently with my other duties I remember to have not only attended several of his discourses but also found pleasure in seeking his company, whenever it suited me to do so His lectures were charactinized by a high pitch of learning and erudition HIs eloquence was so impresssive and attactive that many non-jain like myself took pleasure in listening to him

I may be pardoned if I mention that he even once paid a visit to my humble habitation It so happened that the late Modi Shamji Shivji who was a great philanethropist was my next door neighbour He invited the Maharaj Shri once to his place I was then at home and on my request the Maharaj Shri immediately came to my house and not only honoured me by a visit, but accepted some milk from my house It so happened that my cows were being milked at the time and following the Jain Principle of सूजतो आहार of the spontenous gift, he was pleased to accept it from me I think it is the theory of कर्म or action, that every man is responsible not only for his own actions but also for thing done for him That is, if certain things are done not by you, but for you by others, you cannot escape your responsibility for such things I think this सूजतो आहार means the acceptence gifts not intended for the recipient It creates no responsibility for the individual enjoying its benefit This is how I understand this principle and I believe in accepting this gift of milk from my cows, being sponteneous and not originally meant for the Maharaj Shri, was acceptable to him What I want to convey by this incident is that, his spirit of toleration was so great as not to make any distinction between a Jain adn non-Jain In his eyes all were equal and this spirit of true generasity adorns his life I take this opportunity of paying my humle but sincere homage to Maharaji Shri Jawaharlal ji by this short note of mine which I hope will be acceptable to him like my milk

उस वर्ष की श्रावण वदी अष्टमी के दिन मेने पहले-पहल भगवान् कृष्ण के जीवन पर उन का व्याख्यान सुना। मे स्वय वैष्णव हू और भगवान् कृष्ण का भक्त तथा पुजारी हूँ। मुनिश्री ने श्री कृष्ण का वर्णन करते हुए जो सहिष्णुता की भावना वताई मे उससे चकित रह गया। भगवान् श्री कृष्ण और महान् जेन तीर्थङ्कर श्री नेमिनाथ जी के निकट सम्वन्ध की बात सनातनी शास्त्रो मे नही हे। इस कथा का उन्होने वडे विस्तार के साथ वर्णन किया। मे उनके सुन्दर भाषण पर मुग्ध हो गया ओर इतना अधिक आकृष्ट हो गया कि मेने अपने दूसरे कार्यों के साथ-साथ उनके यथा सम्भव अधिक से अधिक भाषण

सुनने का निश्चय कर लिया। मुझे स्मरण हे कि मेने उनके भापण ही नही सुने किन्तु सुविधानुसार सत्सग भी किया। उनके भाषण शिक्षा ओर पाडित्य के उच्च आदर्श से भरे होते थे। उनका भापण प्रभावशाली तथा आकर्षक था कि मेरे सरीखे वहुत-से अजैन भी उसे सुन कर प्रसन्न होते थे।

इस वात का निर्देश करते हुए मे क्षमा चाहता हूँ कि उन्होने मेरे तुच्छ निवास स्थान पर भी पदार्पण किया था। वात यह थी कि प्रसिद्ध दानी स्वर्गीय मोदी शामजी शिवजी मेरे पडोसी थे। मुझ से दूसरा उन के घर का द्वार था। उन्होने एक वार महाराजश्री को अपने घर पर निमन्त्रित किया। मे उस समय घर पर ही था। मेरी प्रार्थना को महाराजश्री ने शीघ्र स्वीकार कर लिया ओर मुझे आपने पदार्पण द्वारा ही सम्मानित नही किया किन्तु मेरे घर से थोडा-सा दूध अङ्गीकार किया। मेरी गौए उसी समय दुही जा रही थी ओर 'सूजतो आहार' के सिद्धान्तानुसार उस स्वत सिद्ध भेट को उन्होने स्वीकार कर लिया। मेरे खयाल मे यह कर्मवाद का सिद्धान्त है कि मनुष्य अपने द्वारा किए गए कार्यों के लिए ही नही किन्तु उन बातो के लिए भी उत्तरदायी हे जो उस के लिए की जाती हे। तात्पर्य यह हे कि कुछ वस्तुए आप नही करते, किन्तु आपके लिए दूसरे करते हे। ऐसी वस्तुओ के उत्तरदायित्व से आप नही वच सकते। मेरी दृष्टि मे सूजतो आहार का अर्थ हे ऐसी वस्तु को स्वीकार करना जिसमे ग्रहीता का निमित्त न हो। इस प्रकार से उपभोग करने वाला व्यक्ति उस वस्तु के उत्तरदायित्व से वच जाता हे। मैंने इस सिद्धान्त को इसी रूप मे समझा हे।

यही बात मेरी गोओ का दूध स्वीकार करने मे भी मैंने समझी हे, क्योकि वह दूध स्वाभाविक रूप से दुहा जा रहा था महाराज श्री के निमित्त से नही, इसीलिए वह उनके लिए स्वीकरणीय हुआ। इस घटना से मे यह कहना चाहता हूँ कि उन मे सर्वधर्म सहिष्णुता की भावना इतनी वढी हुई हे कि वे जैन ओर अजैन मे कोई भेद नही डालते। उन की दृष्टि मे सभी समान हे। यह सच्ची उदारता उन के जीवन को अलकृत करती हे। मे इस छोटे लेख द्वारा महाराज श्री जवाहरलालजी के प्रति नम्र ओर श्रद्धापूर्ण भक्ति अर्पित करता हूँ। आशा हे, मेरे दूध की तरह वे इसे भी स्वीकार करेगे।

२६—एक मुस्लीम ना हृदयोद्‌गार

(ले जनाव अब्दुल गफुर नूरमहम्मद वलोच, कामदार मटियाणा स्टेट जूनागढ़)

पूज्यपाद धर्मात्मा सुप्रसिद्ध जेनाचार्य गुरुवर महाराज श्रीजवाहरलालजी नु जीवन-चरित्र लखाय छे एम मारा साभलवामा आवता ते सापडेली अमूल्य तके मारा जेवा एक मुस्लीम श्रोता ने तेओ श्री नी वाणि-श्रवण अने वाचन तेमज अनुभव थी थयेल धर्म भावनाए उत्पन्न करेली मानबुद्धिना आवेशे ते पूज्य महात्मा निसवते वे शब्दो लखवा प्रेरायो छु।

तेओ श्री पोतानी जन्मभूमि मारवाड दूर देश थी बिहार करी वि स १९९२ मा काठियावाड मा पधारी आप्रान्तनी जनता ने दर्शन नो लाभ आपवा उपरान्त राजकोट, जामनगर अने मोरवी मा स १९९२ थी १९९४ सुधीत्रण चोमासा करी जे धर्मोपदेश आपी लाखो श्रोताजनो ना मलीन आत्माओ ने पावन कर्या छे तेमज पावन थवाना नेक पवित्र रस्ते चडाव्या छे ते महान उपकार काठियावाड नी धर्मनिष्ठ प्रजा सेकडो वर्ष नही भूलवा साथे तेओश्रीए आपेला ज्ञानसागर रूपी व्याख्यानो ऊपर थी भविष्यनी प्रजापण वोध ग्रहण करती रही पावन थती रहेशे अने तेओ पूज्य

महात्मा नी वार्षिक जन्म तिथि उजववाना के ते निमित्ते कई धर्मनीम करवानो हमेशने माटे योग्य प्रबन्ध करी ते ऋषिवर नु सस्मरण ताजु राखता रही जन समाज अने विशेषे करीने जैन समाज ऊपर करेला उपकार नु यत्किचित् ऋण अदा करता रहेशे एम मानु छु

ज्यारे पूज्य महर्षि विहार करता-करता जूनागढ पधारेला त्यारे अकिकरने दर्शन नो लाभ मारा परम पूज्य परमोपकारी वडील भ्राता के पिता जे कहू तेओ मा मे वकील मुरब्बी जेठालाल भाई प्रागजी रूपाणी ना अहर्निश समागम ना पतापे मेलववा हू भाग्यशाली थयो हतो अने महाराज श्री ना व्याख्यानो तथा धर्म चर्चा साभलवा नो अमूल्य लाभ मल्यो हतो ए सन्त समागम तेमज धर्मना महान् सैद्धान्तिक व्याख्यानो नी मारा अन्त करण ऊपर थयेली विजलीक असर थी मारा हृदय मा थी अन्धकार रूपी मलीनतानो नाश थवा साथे प्रकाशरूपी धर्मभावना जो जागृत थई होय तो ते वन्दनीय पूज्य तपस्वी जवाहरलालजी महाराज श्री नी धन्यवाणि नो ज प्रताप मानी रह्यो छु

तेओश्रीए पोताना अलौकिक ज्ञान सागरमा थी मधुरवाणी रूपी आपेला व्याख्यानो ना तय्यार थयेला पुस्तको नो हू ग्राहक हतो ते बधा पुस्तको खरीद करी तेना वाचन मनन नो पूरतो लाभ मे लीधो छे, ए वाचन मनन थी मारो आत्मा रगाई जवा साथे मारा भविष्यना बाकी रहेला जीवन ने दया, नीति, सत्कर्म, अहिंसा, दान, धर्म विगैराना सत्यमार्गे दोरनारा तरीके हमेश ने माटे सहायभूत बनशे। ए बोध ने हू मारा जीवननी ज्ञान नौका तरीके मानु छु

जेन धर्म ना महान् आचार्य पूज्य जवाहरलालजी महाराज पोताना उपदेश व आचरण द्वारा लोको पर जे महान् उपकार करे छे ते काई ओछो उपकार नथी। पण तेओ पोते उपकार करेलो नहि मानता पोताना आत्म-कल्याणार्थे करी रहेला माने छे। परन्तु तेओ श्री ना महाज्ञान प्रतापे लाखो मनुष्यो ना आत्मकल्याण थया छे थाय छे अने थशे। ए बात जन समाज भूली शकशे नही, खरेखर तेओ श्री जगद्गुरु सम छे

महात्मा श्री पोते जेन धर्म ना आचार्य महापडित छे अने महान् उपदेशक छे, परन्तु पोताना व्याख्यान मा सर्वधर्म मा थी बोधिक दाखला दृष्टान्तो आपी सर्वधर्म नु सरखापणु बतावनी श्रोता जनो मा दुनियाना सर्वेधर्मो प्रत्ये मानवुद्धि उत्पन्न करावे छे, कोई पण धर्म नी निदा करवी के साभलवी तेमा पाप माने छे अने मनावे छे। तेओ श्री कुरान शरीफ, गीता, रामायण, भागवत, बाईबल आदि ग्रन्थो नो अभ्यास करी वाकेफी मेलवी चुका छे। तेओश्री लाबु आयुष्य भोगवे एम इच्छु छु।

२७ – राव वहादुर मोहनलाल पोपट भाई,

भू पू सदस्य स्टेट काउसिल, रतलाम

सन् १९३५ मे श्रीमज्जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी म सा के शुभ दर्शन का सोभाग्य मुझे रतलाम मे प्राप्त हुआ था। उस समय पूज्यश्री के व्याख्यानो का लाभ मेने पूरे चार मास तक लिया था तथा आपकी यथेष्ट सेवा भी की थी। पूज्यश्री की भव्य एव प्रभावान्वित मुख-मुद्रा का मेरे अन्तस्तल पर जो प्रभाव पडा था वह शब्दो द्वारा नहीं कहा जा सकता। आपके मुखकमल से वह शान्तिस्रोत प्रवाहित होता हे, जिसमे अवगाहन करके मानवमात्र कृतकृत्य हो जाता हे। जव आपके दर्शनमात्र से मानव अपना अहोभाग्य समझता हे, तव हार्दिक उद्‌गारो के साथ प्रवाहित होने वाली आपकी सात्विक वाग्धारा से

मनुष्य कितना प्रभावित हो सकता हे यह स्वत कल्पनागम्य हे। इसका अनुभव जब मे श्रीमान् रतलाम नरेश के साथ चातुर्मास मे गया था, तव हुआ था।

श्रीमान् रतलाम नरेश ने आपका व्याख्यान सुनने के लिए आधा घटा निश्चित किया था, किन्तु जब पूज्यश्री ने योग्य राजा, प्रजा एव योग्य अधिकारियो के कर्तव्याकर्तव्यो की तात्विक मीमासा प्रारम्भ की तब आधे घटे के बजाय दो घटे का समय व्यतीत हो जाने पर भी श्रीमान् रतलाम नरेश की व्याख्यान श्रवण करने की पिपासा शान्त नही हुई। व्याख्यान की सर्वप्रियता का इससे वढकर ओर उदाहरण क्या दिया जा सकता है। आपके व्याख्यानो मे जेनदर्शन के साथ अन्य दर्शनो की तुलनात्मक प्रक्रिया ओर साथ ही सर्वधर्म-समन्वय की जो पद्धति दृष्टिगोचर होती हे वह बडी ही चित्ताकर्षक है। किसी भी गूढातिगूढ विषय को सर्वसाधारणगम्य भाषा मे समझाना तो आपकी व्याख्यान शैली की खास विशेषता हे।

जब पूज्यश्री प्रभु प्रार्थना करते हे तब आपकी तन्मयता के साथ सारा श्रोतृ मण्डल भी तन्मय हो जाता है। आपकी अलौकिक प्रार्थना शेली से भक्त एव भगवान के अनन्यतम सम्वन्ध का मानो प्रत्यक्ष दर्शन हो जाता है। आत्मा ओर परमात्मा का साक्षात्कार करा देने का सामर्थ्य आपकी प्रार्थना मे विद्यमान-सा प्रतीत होता है। सक्षेप मे कहा जाये तो एक सुयोग्य प्रतिभाशाली वक्ता मे जो गुण होने चाहिए, वे सब गुण पूज्यश्री मे पूर्णतया विद्यमान हे।

पूज्यश्री भारतीय महापुरुषो मे अग्रगण्य हे। सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन एव सम्यक् चरित्र रूप रत्नत्रय का पूर्ण सामञ्जस्य आपके जीवन मे ओतप्रोत दिखाई देता हे। आप केवल जेन समाज के लिए ही नही बल्कि सारे भारतवर्ष के लिए आदर्श स्वरूप एव पथप्रदर्शक हे। पूज्यश्री 'जवाहर' नाम वाले यथार्थ मे भारत के जवाहर हे।

अन्य शब्दो मे कहा जाय तो पूज्यश्री अहिंसा और सत्य के महान् प्रचारक, श्रमण सस्कृति के जाज्वल्यमान रत्न, धर्म ओर कर्म मार्ग के अप्रतिम प्रकाशक, मोक्ष मार्ग के अद्वितीय प्रसाधक, तत्त्वज्ञान के अपूर्व व्याख्याता एव जेनधर्म के प्रवल प्रचारक हे। आप जेसे आदर्श मुनिराज के जीवन-चरित्र के प्रकाशन की कमी का दीर्घकाल से अनुभव किया जा रहा था परन्तु बडे हर्ष की वात है कि उस कमी को पूरा करने का श्री 'जवाहर-जीवन-चरित्र-समिति' भीनासर ने निश्चय किया हे।

अन्त मे मेरी शासनदेव से यही विनम्र अभ्यर्थना हे कि पूज्यश्री दीर्घायु हो एव देश, समाज और राष्ट्र के पथप्रदर्शन मे सदेव अग्रगण्य रहे।

२८—श्रीयुत काजी ए. अख्तर, जागीरदार, जूनागढ़ स्टेट

The late Swami Dayanand was an ideal monotheis, whom the fertile soil of our Kathiawar had produced and who wrought a mighty change to the Hindu hierarchy by his gigantic reformation Of such a class of reformers and preachers comes Maharaj Shree Jawaharlal ji as very learned preacher and a great missionary of the Sthankwasi cult It is a privilege to write something about such a sainty

personage who is deeply revered not only by the votaries of his own faith but has a large circle of admirers outside it, and as such an admirer I have been asked to give here a reminiscence of my personal contract with him some six years ago

It was in the year 1936 that I came in contact with this great man who during his missionary perigrimations came down to Junagarh by travelling on foot from a long distance to give benefit of his learned discourse to his co-religionists After incessant anxieties and worries of this worldly life one finds great comfort and solace in the company of learned sages and leaders of spiritual thought Such an opportunity was apporded to me by my valuable friednt Jethalal Bhai Rupani through whose kind courtesy I had the pleasure of meeting this Jainacharya who deeply impressed me with his simple habits, polite manners, tolerant spirit and friendly behaviour His learned discourses had won the hearts of many of his visitors while in his Company everybody felt as ease as if they were sitting with a friend and chatting with him on different topics There was no air of pretentions sanctity about the Maharaj nor any sort of lugubrious sobriety, but a calm screne and well composed propriety which marked the high and noble mind in this great savant I had a little chat with him on different religious topics and the satisfactory answers to my quernes on certain pertinent inter-religious points made me to think of the man as a compromising theosophist rather than a garrulous controversialist

I was much interested in his talks or rather popular lectures which he delivered to a large audience including men, women and members of other sects and creeds I attended those sermons for three consecutive days and was much benifitted by his moral and religious precepts which represente the gist and essence of all the true religions His delivery and power of speech in hindi and even in Gujarati which he spoke with same ease were remarkable and the audience heard him with rapt attention He did not confine himself to any particular topic but spoke on different aspects of religion and commented on the ethical and spiritual teaching of great sages of yore in a masterly fashion He mostly dwelt on the intricacies of human life,its miseries and troubles and showed the way how to get out of this tangle by means ascetic practices and austere habits through which a higher plane of spiritual life could be reached His philosophical analysis of the subjects he dealt with, was not only non-technical and free from scientific terminology but it was so clear cut, expressive and prectical that it went home to the hearts of his

hearers The parables and stories which he related by way of illustration were not only amusing but were informing and instructive and left indelible impression on the minds of his audience Mostly he dilated upon the present day degradation and demoralization and in a lighter vein he used to under rate the irreligiosity and the corrupt ingenuity of the so called religious-minded people He was disigned to expose the rack hypocracy of the so called religious heads and their priestly importunity and the shameless treachery with which they were sucking the life blood of their own community During the course of his speeches he dwelt on certain reforms to be introduced among the followers of his sect by sheer forces of arguments supported by the authority of the Jain Shashtras which greatly appealed to his audience and once I remember that during the course of his speech the ladies impressed by his admonition resolved on the spot to forsake the undesirable custom of wailing and lamenting over the dead by making a public demonstration His arguments were so convincing that one felt an urgency of prompt and immediate action

The Maharaj Shree is not only a scholar of his own religion but he seems to have studied the teachings of other religions His theosophical observation of different religions have inspired in him fellow feeling, sympathy, love and regard towards the followers of other faiths and creeds a tolerant spirit lacking in the present day teachers, much less in the reformers and politicians of the day He preached for tolerance and inter-religious amity which the sores need of the our I wish there were many preachers of Maharaj Shree Jawahralal ji's type who could alone bring about harmonious relations among the followers of different creeds Had there been many jawaharlal, the task of national unity could have been easier

In the end I pray that the Maharaj Shree may be spared a long life to fulfill his laudabel mission of binding people in the sacred tie of religion and leading them on the path of heavenly bliss and enternal happiness

स्वर्गीय स्वामी दयानन्द आदर्श एकेश्वरवादी थे। उन्हे काठियावाड की उपजाऊ भूमि ने जन्म दिया था। अपने विशाल सुधार द्वारा हिन्दू रूढिवाद मे उन्होने शक्तिशाली परिवर्तन किया। महाराज श्री जवाहरलालजी ऐसे ही सुधारक तथा उपदेशको की श्रेणी मे आते है। वे उच्च श्रेणी के विद्वान्, उपदेशक तथा स्थानकवासी सम्प्रदाय के महान् प्रचारक है। ऐसे सन्त पुरुष के लिए कुछ लिखना सौभाग्य की बात है। वे भक्तिपूर्वक अपनी सम्प्रदाय के अनुयायियो द्वारा ही नही पूजे जाते किन्तु उस के वाहर भी आप के प्रशसक वडी सख्या मे है। एक ऐसा प्रशसक होने के कारण ही मुझे कहा गया है कि आप के साथ छह साल पहले मेरा जो वैयक्तिक परिचय हुआ है, उस के सस्मरण लिखू।

इस महापुरुष के परिचय मे मे सन् १९३६ मे आया था। स्थानकवासी समाज को अपने विद्वत्ता पूर्ण भाषणो का लाभ देते हुए, धर्म प्रचार के लिए स्थान-स्थान पर विचरते हुए आप पैदल विहार कर के बडी दूर से जूनागढ पधारे थे। सासारिक जीवन की अविरत झझटो और चिन्ताओ के बाद प्रत्येक व्यक्ति को आध्यात्मिक विचारो वाले नेता तथा विद्वान् मुनियो के सत्सग मे बडी शान्ति तथा सुख प्राप्त होते है। मेरे परम मित्र जेठालाल भाई रूपाणी ने मुझे एक ऐसा ही अवसर प्रदान किया। उन्ही की भद्रता के कारण मुझे उपरोक्त आचार्यश्री के दर्शनो का लाभ प्राप्त हुआ। आपकी सादगी, नम्र व्यवहार,सहनशीलता तथा सौहार्द्र ने मुझे एकदम प्रभावित कर लिया। आपका विद्वत्तापूर्ण वार्तालाप श्रोताओ के हृदय को हर लेता है। आपका सत्सग करते समय प्रत्येक व्यक्ति ऐसा अनुभव करता है जैसे वह अपने किसी मित्र के साथ बैठा हो और विभिन्न विषयो पर बातचीत कर रहा हो। आप मे न तो पवित्रता के दिखावे की झलक है और न उदासी से भरी हुई गभीरता है। शान्त, स्वस्थ,सयत तथा शुद्ध आचार का औचित्य आप सरीखे ज्ञानी मुनि के उच्च तथा विशाल मस्तिष्क का परिचय देता है। कुछ धार्मिक विषयो पर मैने आप से सक्षिप्त वार्तालाप किया। धर्मो के पारस्परिक व्यवहार के विषय मे मैने जो प्रश्न पूछे, आपने उन का सन्तोषजनक समाधान किया। उस से मेरे मन मे आया कि आप एकता के प्रेमी तथा ईश्वरी सत्य का आदर करने वाले महापुरुष हे। कलहपूर्ण विचार आप को पसन्द नही है।

मुझे आप के वार्तालाप तथा सार्वजनिक भाषणो मे बडी रुचि थी। वे भाषण ऐसी सभा मे हुए थे जिस मे स्त्री-पुरुष तथा दूसरे धर्मों और सप्रदायो के अनुयायी भी बडी सख्या मे थे। मैने उन उपदेशो को लगातार तीन दिन तक सुना। आप के नैतिक तथा धार्मिक उपदेशो ने सभी धर्मों का साराश तथा निचोड निकाल कर रख दिया गया था। हिन्दी तथा गुजराती, जिसे वे सरलता से बोल सकते थे, मे आप के भाषण की शैली तथा शक्ति आश्चर्यजनक थी। जनता उसे पूरे ध्यान से सुना करती थी। आप किसी एक विषय मे ही सीमित नहीं रहते थे किन्तु धर्म के विविध पहलुओ पर भाषण दिया करते थे। प्राचीन आचार्यों के नैतिक तथा आध्यात्मिक उपदेशो पर पाडित्यपूर्ण व्याख्यान किया करते थे। मानव जीवन की उलझनो तथा उन से होने वाले कष्टो ओर झझटो पर आप बहुत अधिक बोला करते थे। साथ मे यह भी बताया करते थे कि तपस्या तथा सयमी जीवन द्वारा इस जजाल से कैसे निकला जा सकता हे और आध्यात्मिक जीवन की उच्च श्रेणी को केसे प्राप्त किया जा सकता हे। किसी भी विषय का दार्शनिक विवेचन करते समय आप पारिभाषिक तथा वेज्ञानिक शब्दो से बहुत दूर रहते थे। आप का प्रतिपादन इतना स्पष्ट, प्रभावशाली तथा व्यावहारिक होता था कि वह श्रोताओ के हृदय मे सीधा उतर जाता था। उदाहरण के रूप मे जो चुटकले तथा कहानिया सुनाते थे, वे केवल मनोरजक ही नही किन्तु ज्ञान ओर शिक्षा से भी पूर्ण होती थी। जनता के हृदय पर उनका स्थायी असर होता था। आधुनिक अवनति तथा नेतिक पतन पर भी आप बहुत वोलते थे। धर्मात्मा कहलाने वाले व्यक्तियो के विकृतज्ञान तथा उनमे वास्तविक धर्म के अभाव की आप वहुत निन्दा किया करते थे। धर्मनेता कहलाने वाले व्यक्तियो का घोर पाखण्ड, धर्म की ओट मे होने वाली नीचता तथा लज्जापूर्ण धोखेवाजी जिसके द्वारा वे समाज के जीवनरक्त को चूस रहे हे, आदि का भी वे स्पष्ट चित्र खीचा करते थे। अपने व्याख्यानो मे आपने स्थानकवासी समाज के

लिए कई सुधार भी पेश किए। शास्त्रो के प्रमाण तथा युक्तिवल से उनका ऐसा समर्थन किया कि वे जनता को वहुत अच्छे लगे। मुझे याद है कि आपकी उपदेशपूर्ण फटकार से प्रभावित होकर स्त्रियो ने उसी समय मृत व्यक्ति के लिए सार्वजनिक प्रदर्शन करते हुए रोने-पीटने की प्रथा को छोड दिया। आपकी युक्तियाँ इतनी असरकारक होती है कि प्रत्येक व्यक्ति उस वात को उसी समय कार्यरूप मे परिणत करने की नितान्त आवश्यकता अनुभव करने लगता है।

महाराजश्री अपने धर्म के ही विद्वान नहीं है किन्तु आपने दूसरे धर्मों के सिद्धान्तो का भी अध्ययन किया है। धर्म ग्रन्थो के इस तुलनात्मक अध्ययन के कारण ही आपकी सभी धर्मों के प्रति सद्भावना है। आप विविध धर्मों मे ईश्वरीय सत्य को देखते है। इसी कारण आप मे अन्य धर्मों के अनुयायियो के प्रति मित्रता, सहानुभूति, प्रेम तथा सद्भावना जागृत हुई है। वर्तमान धर्मोपदेशको मे यह सहनशीलता नही पाई जाती। सुधारको और राजनीतिज्ञो मे तो यह और भी कम है। आप सहनशीलता तथा धर्मों मे पारस्परिक मित्रता पर वहुत जोर देते थे। आजकल की यह सव से वडी आवश्यकता है। मेरी हार्दिक अभिलाषा है कि महाराजश्री जवाहरलालजी सरीखे वहुत-से उपदेशक हो। ऐसे उपदेशक ही धार्मिक सम्प्रदायो मे मधुर सवन्ध स्थापित कर सकते है। यदि अनेक जवाहरलाल होते तो राष्ट्रीय एकता का कार्य सरल वन जाता।

अन्त मे मै प्रार्थना करता हूँ कि महाराज श्री चिरजीवी हो और जनता को धर्म के पवित्र वन्धन मे वाधने तथा उसे स्वर्गीय आनन्द और अनन्त सुख का पथ-प्रदर्शन करने के अपने महान् उद्देश्य को पूरा करे।

२९—सौराष्ट्र द्वारे स्वागत

(श्री कालीदास नागरदास शाह, एम ए ,एज्युकेशनल ऑफिसर, वढ्वाण स्टेट)

परमप्रतापी जेनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराजना दर्शनना तथा व्याख्यानना अनुपम लाभ वढवाण शहेरना श्री स्थानकवासी जेन सघ ने सवत् १९९२ ना जेठ मास मा मलेल हतो।

श्री सोराष्ट्र ना द्वार रूपी श्री वर्धमानपुरी मा पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज नो प्रवेश थयो त्यारे तेओश्रीना स्वागत माटे तथा दर्शन माटे जेन समाज मा जे आनन्द अने उत्साह उभराई रह्या हता ते अवर्चनीय हता। आखा काठियावाड ना जे शहेरो तथा गामडोना सघोने आ वावत ना खवर अगाउ पडेल हता। ते ते सघोना सख्यावन्ध पुरुषो अने स्त्रियो पूज्य साहेव ना दर्शन माटे आवी पहोच्या हता। हजारो नी सख्या मा पूज्यश्रीनु स्वागत घणा हर्ष थी करवामा आव्यु हतु। वढवाण शहेर ना वाहरना भाग मा श्री हाजीपुरा मा आवेल श्री महाजन नी विशाल धर्मशाला मा पूज्य साहेव तथा तेमनी साथे पधारल अनेक शिष्योने उतारवा मा आवेल हता, व्याख्यानो पण तेज स्थले राखवा मा आवेल हता।

श्री महावीर प्रभुना समय मा जेम जेन तथा जेनेतर पुरूषो अने स्त्रियो प्रवचन साभलवा माटे हजारो ना टोला मा जता हता तेम वढवाण शहेर मा पण जाति अने धर्मनो भेद जाण्या सिवाय सेकडो स्त्री पुरुषो व्याख्यान नो लाभ लेवा माटे आवता हता। पूज्यश्रीना आगमन थी खरखर स्थानकवासी धर्मनो वणो उद्योत थयो हतो। अने हालना समय मा श्री स्थानकवासी सघो मा एक

या बीजा कारणे जे छिन्न-भिन्नता थयेल हती तथा श्री महावीर प्रभुना फरमावेल सिद्धान्तो प्रमाणे वर्तन करवानु शिथिल थई गयुँ हतु, ते समये पूज्य साहेबनु आगमन एक महान् धर्मप्रचारक, धर्मोत्तेजक तरीके उपयोगी थई पडेल हतु। तेओ साहेबनु जेनधर्मनु ऊडु अने तलस्पर्शी ज्ञान दरेक सिद्धान्त ने सरल रीते समजाववानी शक्ति, अति पशसनीय वक्तृत्वशैली वगेरे गुणो थी श्रोताओ ना हृदय मा अतर ना प्रेम अने उत्साह ना झरणा सजीवन थया हता, अने तीव्र गति थी वहेता हता।

आवा कठिन काल मा पाचमा आरामा पण चोथा आरानी स्थितिनु चित्र खडु करनार आ महान् आचार्य प्रति एक-एक व्यक्ति नो प्रेम अने पूज्य भाव उभराई जता हता। तेओ साहेब नी सरलता, निर्व्याजता, सस्कारिता, राष्ट्रप्रेम देदीप्यमान थई विद्युत नी माफक दरेकने असर करता हता। जैन धर्मना ऊँडा ऊँडा तात्विक रहस्यो सादा दाखला दलील थी तेओ साहेब एवी सरस रीते समजावता अने एवी सचोट रीते असर करता के ते असर मन ना तथा हृदय ना ऊँडा ऊँडा क्षेत्र मा सचोट रीते प्रसरती हती। अने तेथी ते समय ना काठियावाड मा ववायेल बीजो मा बहु सुन्दर वृक्षो फली फूली नीकलेल छे।

राजकोट, जामनगर, मोरवी वगेरे स्थले पूज्य साहेब चातुर्मास पधारवा कृया करेल हती, जेना फल रूपे राजकोट मा जैनगुरुकुल नी उत्पत्ति थयेल छे। ए सस्था आजे सारी प्रगति करी रहेल छे।

तेओ साहेब ना काठियावाड ना प्रवास दरम्यान घणा वेर भेद भूली गया हता। अने धर्म प्रेम तथा मानव प्रेम मा मानव दयाना मोजाओ ससाररूपी दरिया मा उछली रहेल हता।

आजे विद्वानो अने तेवा साधुमार्गी उच्चतम रहेणी करणी वाला साधुजीओ मा तेमनी मुख्य गणत्री छे। तेओ सरलहृदयी, उच्चतम ज्ञानी, अने बोलवानी अनुपम छटा तथा उपदेशक तरीके एक महान् विजेता काठियावाड मा निवड्या छे, एम सौ कोइए कह्या वगेर चाले तेम न थी।

३०—पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज

(ले श्री गौरीशकर दफ्तरी एल सी ई सुपरिण्टेण्डिग इजिनीयर, बम्बई।)

सने १९२३-२४ ना चौमासा मा ज्यारे महाराजश्री घाटकोपर मा विराजता हता त्यारे हु दसेक माइल दूर थाणा मा एक्जीक्यूटिव इजिनीयर हतो। त्यारे महाराज श्री ना व्याख्यान माटे अवार नवार घाटकोपर जतो। ते प्रसगे तेओश्रीना व्याख्यान, तेमनी बात समजाववानी छटा, तेमना ऊँच चारित्र वगेरेनी मारा ऊपर घणीज ऊँडी छाप पडी हती। ते वर्षमाना तेमना प्रयासोने अगेज घाटकोपर गोशाला सस्था हयाती मा आवी अने हाल पण ते सस्था जे उमदु काम करी रहेल छे तेनो झाझो यश पूज्य महाराज श्री जवाहरलालजीनेज आपवो घटे छे।

सने १९३७ मा म्हारा भाईना लग्न प्रसगे हु जामनगर डाक्टर प्राणजीवन म्हेता ने त्या गयेल, त्यारे पू महाराज श्रीनु त्या चोमासु होई म्हारे त्रणेक रोज नो मेलाप थएल। ते दिवसो मा महाराजश्री साथे एक प्रश्न चर्चायेल अने तेओश्री तेनो करेल खुलासो आजे पण तादृश खडो थाय छे। सवाल ए हतो के जमानाने अगे आपणा साधु मुनिराजोए पण पोतानी रहेणी करणी मा फेरफार करवो न घटे के? हालनु घोरण पूज्य लोकाशाए सैकाओ पूर्व घडयु त्यार वाद काल मा घणा घणा पलटा

आवी गया। खास करीने छेला ३०-४० वर्ष मा थएल अजव शोधो अने सुधारा ना जमाना मा वर्षो पहेला नु वधाएल घोरण नीभाववु अशक्य ज वनतु चाल्यु छे।

पूज्य महाराज श्री नो जवाव हतो के जवाव वे भागो मा वेहचवो जोइए। (१) एक तो चालु व्रतधारी साधुओ के जूना घोरण मुजव व्रतो आदरी वेठा छे-जेवा के पोताने अने तेमना शिष्यो विगरे- तेवाओ ने माटे तो तेमनी फरज एज छे के तेमणे लीधेला व्रतो सागोपाग पार उतारवा अने तेमा व्रतभग नो दोप क्याय आववा देवो नही।

(२) वीजो भाग रहया भविष्य ना धर्म उजालनाराओ जेओ व्रतधारी थया नथी। तेवाओ जरूर सारा अने विद्वान श्रावको नु एक मडल रची तेमा चर्चा अने विचारनी आपले करता काई- जमाना ने वध वेस्तु घोरण नीपजावी काढे-मोटे भागे पूज्य महाराज नो आग्रह " श्रावकनु घोरण जमाना ने बध वेस्तु गोठववामा अने ते प्रमाणे आचार मा मूकवा मा आवे ते तरफ नो हतो। ऊँचा चारित्रधारी श्रावको पण धर्मप्रचारक थई शके छे। अने आगम मा साधुपणा ना जूना रिवाज तेमने कडक अगर काल ने नही वध वेसता लागता होय तो तेओ पोता ने माटे जरूर वीजु सारु अने बध वेस्तु घोरण नीपजावी शके छे। आ बात अगत पसन्दगी नापसदगी नी नही रहेता साम्प्रदायिक निर्णय अने घोरण नी बनवी जोइए।

पू महाराज श्री आपणा स्थानकवासी गच्छ मा एक घणा अग्रगण्य मुनि छे। पोतानी चारित्र- चुस्तता, ऊँडा ज्ञान, समजाववानी शैली, उदार विचार, गभीर वाणी वगेरे अनेक ऊँचा गुणो थी आपणी जनतानी तेओ श्रीए घणी अमूल्य सेवा वर्षो सुधी वजावी छे। अने तेथी ते श्रीनो आपणा सर्वे ऊपर महा उपकार थयो छे। प्रभु तेमने दीर्घायुष्य आपे एम प्रार्थना।

३१—दानवीर खां साहेव होरमशाह कुंवरजी चौधरी, (एक पारसी सज्जन)

(काठियावाड़ अनाथालय तथा चौधरी हाई स्कूल के भवन निर्मात, राजकोट)

पूज्य महाराज श्रीजवाहरलालजी नु गुणगान करवु ते पण जे आत्माए तेमना आत्मा नु अवलोकन कर्युं तेना थीज वनी शके।

मारे प्रथम थीज कहेवु जोइए के मने एमनो अगत परिचय नो लाभ लेवा वहुत थोडी तक मली छे, एटले-तेमना व्याख्यान जे मै साभल्या छे ते उपरज हु वे शब्दो कही शकु छु।

तेमनी विद्वत्ता, पोताना परमात्मानी कृपा थी तेमना हृदय मा जे प्रज्ञा रूपे उद्‌भवेल छे ते तेमणे पोताना जीवन मा उतारी छे। एटले एवा व्याख्यान करनारानी वाणी जनता ना आत्मा ऊपर शिक्षा रूपे असरकारक थाय, ए एक खरा सिद्धान्त नी वात छे।

एमना व्याख्यान मा थी जे वे मारा ऊपर सचोट असर करी छे ते ब्रह्मचर्य अने भक्तिमार्ग नो महिमा छे।

आ रीते पूज्य महाराज श्रीए पोताना 'जवाहरलाल' नाम ना खरा गुण प्रमाणे जनता ने ब्रह्मचर्य अने मुक्ति मार्ग ऊपर जे अति अमूल्य व्याख्यान आप्या छे ते साभलनाराओ माथी जेओए पोताना जीवन मा उतार्या हशे, तेओ ज तेनो लाभ पामी पूज्य महाराज श्रीना व्याख्यान नी खरी कदर करशे अने गुण गाता रहेशे।

बीजी तेमना व्याख्यान नी खूबी मने जणाई हती ते तेमनी जिदगीपर्यन्त ना शुद्ध चारित्र ने परिणामे तेमनी समझाववानी शैली,ऊच विचार अने गम्भीर वाणी हता।

आ रीते पूज्य महाराज श्री पोताना जवाहीर ना नाम प्रमाणे गुणो धरावता होई ने तेमणे जनता नी जे अमूल्य सेवा बजावी छे, ते तेमना तरफ थी एक महान् उपकार तरीके स्वीकारवाने आपणने हर्ष थाय छे।

तेमनो वियोग आपणने निराश करे ए स्वाभाविक होवा थी जनता मा थी घणा आत्माओ तेमनी साथे पगे चाली ने लाम्बे साथ आपी छुटा पड्या हता, जे हृदयना प्रेमनी भावना वगर बनी शकतु नथी।

महाराज श्री जैन समाज नु जवाहर छे एम कहेवामा आवे छे, पण तेय कहेवा मा काई अपूर्णता मने देखाय छे। ते ए छे के ते एक जैन धर्म ना जवाहर करता 'सर्वधर्मो नु जवाहीर' तरीके गणवा ने लायक छे, केमके तेमणे विश्वधर्म ने ध्यान मा राखीनेज सघला व्याख्यानो जनता ने समजाव्या छे। ते थी तेओ जेनोनी साथे बीजी सर्व जनता ने प्रिय थई पड्या छे।

परमात्मा तेमनु दरेक रीते रक्षण करो, देहना अन्त सुधी पूरतु आरोग्य भोगवो, अने जेने परिणामे पोता थी बनतो लाभ जनता ने आपता रहे एवी सहृदयनी भावना, अने प्रार्थना साथे।

एक पुण्य स्मरण

राजरत्न सेट मचरशाह हीरजी भाई वाडिया, पोरबन्दर

पाचेक वर्ष ए पुण्यस्मरण ने फोराए वही गया परन्तु मानसदेशे ए सदा जीवन्त रहेशे। पोरबन्दर मा प्रतिदिन प्राकृटना दोरा फूटे अने ज्ञान तरस्या मुमुक्षुओ मा प्राणने पगला माणेक चौकनी उत्तरे स्थानिक दशा श्रीमाली वाणिआनी महाजनवाडी नी पगधार पर पडता घडीआल ना नव ने टणकारे जडवाद डूब्या जगत ने आध्यात्मिकता ना आदेश आपवा तप्या तरणि ना तापने टालवा, जर ने जजाल सरजी माया छायडी मा भूलेला जीवन नी साची केडी दर्शाववा उत्तरीय ओढेला प्रचड कायधारी, शान्ति ने अहिंसा नी साक्षात् सौम्य मूर्ति शा एक साधुराज पधारता अने जरा शा उन्नत आसने विराजता त्यारे तो उल्टेली मानवमेदिनी लली लली नमती तोये न नम्याना ओरता सेवती। एवो एमनो अप्रतिम पुण्य परिमल म्हेक हतो। पोताना प्रिय अने पथ्य प्रवचन नो प्रारम्भ प्रार्थना थी आदरता ने जाणे जुग-जुग नो जोगन्दर सर्वधर्म समभावनी आराधना ने आराधतो न होय एवी आत्म प्रतीति थती। एना नयनो तपप्रभानी पुण्य प्रोज्वलता थी प्रकाशता, ललाटे तत्वचिन्तन नी रेखाओ दोराती, ने ज्ञानभारे नमता पोपचा मा थी अभ्यास ने अनुभवना अमी आपोआप ढलता। एमना सोम्य ने साधु जीवन ना प्रेरणा बोल के के ने 'निद्रा' मा थी लवड दई ने जगाडता। एतो शोधी दाखवता हता जीवन मा, जगतमा ने जिदगानी मा हटाई गयेला जवाहीरो ने। हता ए जेन आचार्य, परन्तु समत्व ने सत्याग्रह भावे थया हता जनो ना आचार्य, उद्बोधता श्री महावीरना मोघाभूला उपदेश मन्त्रो परन्तु पारकाना गुणधर्म ने परभागवानी ने नाणवानी महानुभाविता एमने सहज वरी हतो। ए महानुभाव महाराज ते जैनाचार्य श्री जवाहरलाल जी महाराज। जनता ने एओश्री नो केवल त्रीस

दिवसनो ज लाभ मल्यो, परन्तु त्रीस वर्षे पण न पचे एवी ए आत्म ओषधि हती। पुण्य होय, पुरुषार्थ-होय तो पचे।

शास्त्रो ने शोधे, सत्वसग्रही आचारी उद्बोधे ने आचरावे एवा ए अहिंसा ना आचार्य छे। एमनी अहिसा ने भावना विशाल ने विस्तृत छे। व्यावहारिक जीवन मा जीवो सौखी शकाय एवी छे। एक अथवा अन्य प्रकारे हिंसामा डूबेली जनता ने एमनु अहिसा दर्शन आध्यात्मिकता नु वातावरण उभु करे छे। ने ते साथे पोताने सदा अपूर्व मानता मानव मा केवी ने कटेली अमाप आत्मशक्ति सदुपयोग साधे तो वसेल छे तेनु आत्मदर्शन थाय छे। आवा एक तपस्वीना सद्बोध श्रवण नो सुयोग मने जे सापडेलो अने सघलु मारु आ जीवन-धन रहेशे- आत्म-सागरना मोघामूला मोती ने मूलवता आवडे तो ए सतो नी सात्विक भूमिका जवाय।

सतनी ए पुण्य प्रोज्वल सात्विकता ने मारा सदाना सहस्रधा वदन हो।

३३—मेहता तेजसिंह जी कोठारी, बी ए.एल.एल.बी , कलेक्टर, उदयपुर

श्रीमद् जेनाचार्य पूज्य श्री १०८ श्री श्री जवाहरलाल जी महाराज बाईस सप्रदाय व जेन समाज मे ही नही किन्तु ससार की इनी गिनी उच्चकोटि की महान् आत्माओ मे से एक महान् आत्मा, जीती जागती तपश्चर्या की सजीव मूर्ति एव धर्म की एक महान् विभूति हे।

चरित्र गठन, तपबल, आदर्शधर्म दृढता, सयमशीलता, शास्त्र-निपुणता एव विद्वत्ता आपके प्रवचन श्रवण के पहले ही प्रथम दर्शन मात्र से दर्शक को हृदयगम होकर उसे प्रभावित कर देती हे। यदि ऐसे सौ पचास महात्मा भी इस समय विद्यमान होकर देशसेवा, समाजसेवा एव धर्मप्रसार मे अपना सर्वस्व लगादे तो गृह, समाज एव राष्ट्र का महान् उद्धार होकर उन्नत दशा की प्राप्ति अवश्यमेव सुलभ हो सकती हे।

मुझे आपके दर्शनो का एव सत्सग का शुभ अवसर मेरे पूज्य स्व पितामह के पुण्यप्रताप से प्राय प्राप्त हुआ करता था ओर लगभग मेरे बालकाल से (अबसे पाच वर्ष पीछे तक जब तक पूज्य पितामह आरोग्य थे व अब भी) अब तक करीब तीस वर्ष का समय हो जाता हे-आपके तपोबल, दर्शन, श्रवण एव मनन से दिनो दिन मेरी भावना आपके सद्गुणो की ओर बढती रही हे। सत्य, अहिसा, ब्रह्मचर्य, परिग्रह, त्याग एव तपश्चर्या आपके व आपके धर्म के तीव्र सद्गुण हे।

आपकी विशेष प्रशसा करना मेरे जेसे अल्पज्ञ एव सामान्य व्यक्ति के लिए सूर्य को दीपक दिखाने के तुल्य होगा, किन्तु आपके प्रति श्रद्धा एवम भक्ति ने मेरे मनमन्दिर मे स्थान क्यो किया ओर उसका मूल कारण क्या था इसको यदि प्रकट न किया जाय तो म अपने आपको कर्तव्यशून्य एव कृतघ्न मानने को बाध्य हो जाता हूँ। अब इस विषय मे दो शब्द नीचे कहना चाहता हूँ।

मे ऊपर कह चुका हूँ कि ऐसे महात्मा की सेवा का महान् लाभ प्राप्त होना केवल मात्र मेरे पूज्य पितामह स्व कोठारी जी साहब बलवन्त सिह जी भूतपूर्व प्रधान राज्य मेवाड की पहली कृपा का कारण था। मेरी ५ वर्ष की आयु मे मेरी माता का स्वर्गवास हो गया तब से पूज्य पितामह ने मुझे अपने पास ही रख लालन पालन किया। मेरे शिशु काल से योवन काल तक जब तक मुझे पूज्य पितामह की सेवा का लाभ एव सोभाग्य मेरे भाग्य मे बदा रहा एव उनका कृपा रूपी छत्र

मेरे मस्तक पर सुशोभित रहा, लगातार पितामह की सेवा मे मेरे बराबर साथ रहने से पूज्यश्री की सेवा का सौभाग्य भी पाय प्रतिवर्ष मुझे मिलता ही रहा ओर उन्ही पूज्य पितामह की कृपा का फल है कि उन्ही सस्कारो के कारण अब भी पूज्यश्री की सेवा का लाभ लेने की सद्‌भावना बनी हुई है।

पूज्य पितामह अन्धविश्वासी एव वेशपुजारी न थे वे विचारशील एव स्पष्टभाषी व्यक्ति थे। यो तो जैन समाज मे मुख्यत बाईस सम्पदाय के साधुओ के प्रति उनके विचार श्रद्धायुक्त एव भक्ति को लिए हुए न थे, यही नही बल्कि विरोधी भाव को लिए हुए कहा जाय तो भी अत्युक्ति नही होगी। उन्हे इन साधुओ के प्रति पेम न था बल्कि यहाँ तक अमान्यता थी कि १९४५ के वर्ष हमारे घर मे पितामह की विमाता ने जैन साधुओ का चातुर्मास करवाया तो भरे चातुर्मास मे कारण विशेष पर उन्होने उन्हे घर से निकलवा दिया था।

सयोगवश १९५३ वि के वर्ष स्व पूज्यश्री श्रीलाल जी महाराज का चातुर्मास उदयपुर मे हुआ तब आपका भी स्व पूज्यश्री से समागम हुआ। पितामह ने सथारा व स्वहत्या करने मे क्या अन्तर है, मैले कुचैले कपडे की क्या आवश्यकता है इत्यादि-इत्यादि अनेक प्रश्न स्व पूज्यश्री से किये और उन सब ही प्रश्नो का सतोषजनक उत्तर मिलने व जैन धर्म के विशेषत हृदयगम होने पर आपकी विरोधी भावना मिटकर यकायक इस धर्म के प्रति उच्च भावना एव श्रद्धा बढने लगी और तब से लेकर अन्त समय तक आप पूज्यश्री की सेवा का लाभ बराबर उठाते रहे और हमेशा के लिये अनन्य भक्त बन गये। इतना होने पर भी जिस विषय मे आपको शका रह जाती, खुले दिल पूज्य श्री से प्रश्न कर शका समाधान करते थे। हाँ मे हाँ मिलाना व अन्धविश्वासी बन हाथ जोडे रहना यह पितामह के स्वभाव से परे था, पूज्य पितामह को महाराणा साहब की सेवा का अवसर प्राप्त हुआ ओर स्व म सा फतहसिह जी जैसे न्यायशील, नीतिनिपुण, धर्मनिष्ठ नरेश के दीर्धकाल तक मुख्य मन्त्री रहे। आप अपने विचारो के धनी एव चरित्र के मानी थे। ससार के सुख व दु ख दोनो का आपको अनुभव था। जो आप से परिचित हुआ वह प्रभावित हुए बिना नही रहा। ऐसे योग्य अनुभवशील वयोवृद्ध मत्री को दोनो पूज्यश्री के तपोबल ने क्योकर अपनी ओर आकर्षित किया, इस विषय मे क्या ही अच्छा होता यदि पूज्य पितामह द्वारा उनके जीवन काल मे उनकी सम्मति के दो शब्द लेखनी द्वारा पृष्ठ मे अवतीर्ण हो जाते किन्तु सचमुच दु ख का विषय हे कि इस देश मे प्राय इतिहास एव ऐतिहासिक सामग्री की ओर लोगो की धारणा व लक्ष्य बहुत ही कम रहता हे। पूज्यश्री जैसे महापुरुष ने हजारो ही उपकार किये और कई एक को धर्ममार्ग दिग्दर्शन कराया होगा किन्तु इनके शुभ कार्यों का सग्रह, जो भावी जनसमुदाय को भी कल्याणकारक एव सन्मार्गदर्शक बन सके, करने की ओर अब तक उद्योग नही किया गया। फिर भी किसी कदर यह जान कर सतोष एव हर्ष होता हे कि पूज्यश्री के जीवन चरित्र की सामग्री तेयार की जा रही हे। ऐसे समय मे पितामह के विद्यमान नही होने से उनकी लिखित सम्मति प्राप्त नही है, किन्तु मे पूर्ण विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि स्व पूज्यश्री एवम् वर्तमान् पूज्यश्री के प्रति पूज्य स्व पितामह के विचार उच्च एव श्रद्दा युक्त थे ओर अन्त समय तक वे पूज्यश्री के अनन्य भक्त रहे हे। इन दोनों महापुरुषो के आदर्श चरित्र, धर्मतप एव सयम के वल ने पितामह को प्रभावित किया ओर वे नित्य

इनके सत्समागम के लिए तृषित ही रहे। पूज्यश्री के दर्शन, श्रवण एव मनन से पूज्य पितामह न धार्मिक तत्वो का मनन कर वहुत कुछ लाभ उठाया। ओर आत्मोन्नति मे साधक वनाया था।

मेरे दो शव्द प्रकट करने से पितामह के विचारो का रूप किसी अश मे भी यहा परिणित हो सका हे तो मे अपने को कृतकृत्य मानता हुआ परम पिता परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि ऐसे सन्मार्गदर्शी महात्मा को आगे वाले कई वर्षो के लिए चिरायु करे ओर एक वट की अनेक शाखा तुल्य ऐसे महापुरुष से अनेक महापुरुष वन जाये व साथ ही पूज्यश्री के युवाचार्य श्री गणेशीलाल जी महाराज आदि सन्त समुदाय पूज्य श्री के गुणो का अनुकरण करते हुए स्व आत्मा एव पर आत्मा के कल्याणदायक एव हितकर सिद्ध हो।

❑

प्रतिष्ठित पुरुषों की श्रद्धाञ्जलियां

जैन शासन की वर्तमान परिस्थिति और परम प्रभावशाली आचार्य श्री जवाहरलालजी म. जैसे मुनिवरों की आवश्यकता

३४–डॉ प्राणजीवन माणिकचन्द मेहता, एम डी **M S , F C P S**

चीफ मेडीकल ऑफिसर, नवानगर स्टेट

महाराज श्री जवाहरलालजी तत्त्वज्ञानोपदेश और अपने विशुद्ध चारित्र द्वारा जैन धर्म और जेन चतुर्विध सघ की उत्कृष्ट सेवा कर रहे है। भक्त गुरु की प्रशसा करे, यह प्रेम और विनय की सामान्य प्रथा हे। उसके द्वारा कहे गए प्रशसावचन यथार्थ है या अयथार्थ, यह जानने के लिए वैज्ञानिक दृष्टि की आवश्यकता होती हे। जब इस दृष्टि से गुरु की श्रेष्ठता सिद्ध होगी तभी वे जगत् के वदनीय गिने जाएगे।

जेन तत्वज्ञान विश्व का अनुपम तत्वज्ञान है। जैन साधु सस्था कठोर चारित्र की उच्चतम श्रेणी पर टिकी हुई है। नवयुग मे श्रावक-सस्था धर्मरहित होती जा रही हे। ऐसे समय मे धर्म की ज्योति जाज्वल्यमान रखने वाले उच्च चारित्रवान् साधु ही है। अपना चारित्र सर्वदा पूर्ण विशुद्ध रखते हुए जेन जनता को धर्मोपदेश देने वाले, विश्वप्रेम की भावना पैदा करके समाज को रुचिकर, हृदयगम और देश कालानुकूल व्याख्यान देने वाले साधु ही जेनधर्म की ज्योति को अखण्ड रख सकते हे।

ऐसे परम प्रभावशाली महाराज श्रीजवाहरलालजी के दर्शन हमारे लिए बडे भाग्य की बात थी। वि स १९९३ के शेषकाल मे एक मास निवास करने के लिए पूज्य महाराज जामनगर आए। उस समय आपके दाहिने घुटने मे शोथ के कारण दरद हो रहा था। मास पूर्ण होने पर आपने विहार किया। यहा से पाच मील 'हाया' नामक गाव मे पहुचते ही दरद बढ गया। उस व्याधि के उद्भव से जामनगर की जनता का भाग्य खुल गया। पूज्यश्री का चातुर्मास मोरवी मे निश्चित हो चुका था। उसके वदले जामनगर मे ही चातुर्मास हुआ। सूर्यकिरण चिकित्सा के लिए पूज्यश्री को डोली मे वेठाकर जामनगर लाया गया। उस मुनीश्वर के चारित्र, दर्शन और अनुपम उपदेश से जनता को वहुत लाभ मिला। इतने समय मे सोलेरीयम के प्रभाव से पूज्यश्री के घुटने की व्याधि निर्मूल हो गई। चातुर्मास पूर्ण होने पर आपने पेदल विहार किया।

एक वार उनसे प्रार्थना की गई कि विद्युच्चिकित्सा से तत्काल आराम हो जायगा। धार्मिक वाधा के कारण पूज्यश्री ने उसे स्वीकार नही किया।

महाराजश्री की हम कितनी प्रशसा करे ? प्रतिभाशाली देह, मधुर वाणी, तेजस्वी मुखारविन्द, गद्यपद्य दृष्टान्त तथा शास्त्रीय प्रमाणो से भरपूर प्रवचन। केवल जेन जनता के लिए ही नही किन्तु जामनगर की अन्य जनता के लिए भी महाराजश्री का प्रवचन रुचिकर तथा आकर्षक था। न किसी की निन्दा न किसी के प्रति बुरे विचार, विवाद मे भी उदार ओर उदात्त भावना आदि अनेक गुणो से आकृष्ट होकर अनेक विद्वान् मध्याह्न और सध्या समय पूज्यश्री के पास धर्मचर्चा के लिए आते थे।

काठियावाड को दो वर्ष के वदले तीन वर्ष महाराजश्री के सदुपदेश का लाभ मिला। यदि पाव मे दरद न होता तो दो वर्षों मे ही अपना सकल्प पूरा करके पूज्यश्री दूसरी जगह पधार जाते।

महाराज श्रीजवाहरलालजी पचम आरे मे जेनधर्म के आभूषण रूप है। जेनधर्म की ज्योति प्रकाशित रखने के लिए आपने यावज्जीवन उच्चतम चारित्र का पालन किया है। लोकोपयोगी पद्धति से जनता को उपदेश दिया है। सहस्रो जीवो को सन्मार्गगामी भी वनाकर स्वकीय साधुजीवन दीप्त किया है।

उस मुनि को मेरी अनन्तानन्त वन्दना हो।

३५–श्रीरतिलाल थेला भाई मेहता, एज़्यूकेशनल इन्स्पेक्टर, राजकोट स्टेट

From a few of the sermons I attended, however, I could see, as everybody else, that the Maharaj Shree adopted his teachings and methods in such a way as to suit all conditions of modern life He expounded the spiritual truths in a simple and lucid, yet vigorous and impressive manner, which appealed not only to the inellect but also to the hearts of large congregation of men and women of all classes, Jains of course, preponderating, who, one and all, though they could ill afford to miss the sermon ever for a day

The precepts of Maharaj Shree suited men and women of all castes, creeds and communities, and in all circumstances of life, be they philosophers or simple folk-a peculiar aspect which was the secret of his success as an ideal Guru He stressed the doctrine of Universal love and brotherhood and warned the Jain Devotees against internal dissentions asking them to realise that self seeking had no place in the higher ideal of humanity

What charmed the hearers most, was the fact that he invariably prefaced his discourses by prayers, explaining their efficacy as an aid to meditation and elevation of the mind

He showed in the course of his narratives, how a house holder (गृहस्थी) can best discharge his duties as such, by a strict observance of the religions vows and abandonment of last, hatred, unity and other foes of mankind, as running after earthly pleasures only tend to shorter the happiness and peace of mind

In conclusion it would be no exaggeration to say that the education of the soul under such a worthy Acharya as the Maharaja Shree can alone elevate our minds to the highest perfection our life would be worth living only if we know ourselves and what we live for

This was all the essence of the Maharaj Shree's teachings as I understand it

मैने महाराजश्री के थोडे से व्याख्यान सुने। उन से मालूम पडा कि आप के उपदेश तथा भाषण ऐसे ढाचे मे ढले होते है जिस से वर्तमान जीवन की सभी अवस्थाओ के लिए उपयोगी बन सके। आप के व्याख्यान सुन कर प्रत्येक व्यक्ति इस बात को जान सकता है। आप आध्यात्मिक सत्यो को सरल तथा सुगम किन्तु ओजस्वी एव पभावशाली ढग से प्रकट करते थे। आप के भाषण विद्वानो को ही नही सुहाते किन्तु सभी श्रेणियो के स्त्री-पुरुष उन्हे हृदय से पसन्द करते है। जैनियो की सख्या नि सन्देह बहुत अधिक रहती है। वे तो एक दिन के लिए भी आपके व्याख्यान को नहीं चूकना चाहते।

महाराजश्री के उपदेश सभी जाति, पन्थ, समाज तथा जीवन की अवस्थाओ के लिए उपयोगी होते है। बडे-बडे दार्शनिक और साधारण गृहस्थ आप के व्याख्यानो से समान लाभ उठाते हैं। यह विशेषता आदर्श गुरु की सफलता का रहस्य है। विश्वप्रेम तथा बन्धुत्व के सिद्धान्त पर आप बहुत जोर देते थे। जैनधर्म के अनुयायियो को आन्तरिक कलह से दूर रहने का उपदेश देते थे तथा कहते थे कि मानवता के उच्च आदर्श मे स्वार्थ-साधना का कोई स्थान नही है।

वे अपने सभी व्याख्यान ईश्वर की स्तुतियो से प्रारम्भ करते थे। इस के बाद प्रार्थना का महत्त्व बताते हुए कहते थे कि आत्मचिन्तन तथा मानसिक उन्नति के लिए यह समर्थ साधन है। यह बात सभी श्रोताओ को मोह लेती थी।

कथानको के आख्यान मे आप ने बताया कि गृहस्थ अपने कर्त्तव्यो को उत्तम रूप से कैसे पाल सकता हे। धार्मिक व्रतो का कठोर पालन, राग, द्वेष, अहकार तथा मानव जीवन के दूसरे शत्रुओ का त्याग श्रावक को ऊँचा उठा सकता है। भौतिक सुखो के पीछे दौडना मानसिक शान्ति तथा आनन्द को नष्ट कर देता है।

अन्त मे यदि यह कहा जाए तो अत्युक्ति न होगी कि ऐसे आचार्यों की सेवा मे आत्मशिक्षा प्राप्त करके ही हमारा मस्तिष्क ऊँचा उठ सकता हे तथा पूर्णता प्राप्त की जा सकती हे। हमारा जीवन तभी सफल है जब हम अपने को पहिचाने तथा यह जानें कि हमारे जीने का क्या प्रयोजन है।

मेने जहाँ तक समझा हे पूज्यश्री के उपदेशो का यही सार हे।

३६—डॉ ए सी दास, एम डी (U S A.), बबई

I had a great fortune to meet Pujaya Shree Jawaharlalji Maharaj (a Jain Sadhu) twice or thrice at Jalgaon and Ratlam I had also occasion to listen to his discourses on spiritual subjects which has convinced me that he is a great apostle of self renunciation and realisation of truth, which is the only path of peaceful salvation in human lives

जलगाँव और रतलाम मे पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज के दर्शन करने का मुझे दो वार सोभाग्य प्राप्त हुआ। हे। आध्यात्मिक विपयो पर उन के व्याख्यान सुनने का भी अवसर मुझे मिला है। इस से मेरी धारणा वन गई है कि आप आत्म त्याग ओर सत्य की खोज के महान् प्रचारक है। मानव जीवन में शान्ति ओर दु खो से छुटकारे का यही एक मार्ग हे।

३७–डॉ एस आर मुलगावकर, एफ आर सी एस , वम्वई

My memory goes back to the year 1923 when I saw Pujya Maharaj Jawaharlalji at Jalgaon, when he had a septic infection in the hand As it is well known such infections are very painful and one of the things that was impressed on my mind was the fortitude with which he bore the pain There were many of his followers and among them my friend, the late M/s Amrit lal Rai Chand Javeri, Those were all Sthanakwasis, who are a division of Shvetambari Jains The Pujya Maharaj, who was then about 47 years old, bore his infliction with great patience and almost cheerfully The thing that impressed me most as I have said was his fortitude and great patience

मुझे वे दिन याद आ रहे है जव १९२३ मे मेने पूज्य जवाहरलाल जी महाराज के जलगाव मे दर्शन किए थे। उस समय उन के हाथ मे जहरीला फोडा हो गया था। यह वात सभी जानते ह कि ऐसे फोडे भयङ्कर कष्ट देने वाले होते हे। जिन वातो ने मुझे प्रभावित किया उन मे से एक उनकी सहनशीलता हे जिसके द्वारा उन्होने कष्ट को सहा (विना क्लोरोफार्म सूवे ऑपरेशन करवाया था)। उस समय उन के वहुत-से अनुयायी उपस्थित थे ओर उन मे मेरे मित्र स्व सेठ अमृतलाल रायचन्द्र झवेरी भी थे। वे सभी स्थानकवासी थे, जो कि श्रेताम्वर जेनो का एक फिरका हे। पूज्य महाराज ने, जो उस समय ४७ वर्प के थे, उस कष्ट को धेर्य ओर सर्वथा प्रसन्न रह कर सह लिया। जेसा मे पहले कह चुका हू मुझ पर सव से अधिक प्रभाव डालने वाली वात पूज्यश्री की सहनशीलता ओर महान् धेर्य हे।

३८–श्री इन्द्रनाथ जी मोदी वी ए , एल एल वी , जोधपुर

I consider it a privilege to have this opportunity of offering my humble tribute of devotion to His Holiness Maharaj Shree Jawaharlal ji It was about twelve years ago that I had the esteemed opportunity of sitting at the feet of Guru Maharaj during his Chaturmasa in Jodhpur His remarkable personality and, greater still, his reasoned exposition fo the jain religion, his fearless out-look on the many burning problems of modern life and more than all the magnificient catholicity of his teachings was little short of a revelation to me To my mind today as it was, is vivid the picture of heat broken Jodhpur at the departure of His Holiness from our midst and if I am permitted to say so, few religious personalities have created greater impression on my little self then that of the great Maharaj His Holiness is without

doubt the pride of the Jain wherever they may be and occupies a highly honoured place wherever religious and ethical thought and culture shine in their true light It is my earnest hope and prayer that the Guru Maharaj may bespai ed long to help, heal the gaping wounds of the erring humanity irrespective of caste or creed

पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज के प्रति भक्तिपूर्ण श्रद्धाजलि प्रकट करने का अवसर प्राप्त होना मेरे लिए सौभाग्य की बात है। बारह वर्ष पहिले गुरु महाराज का चातुर्मास जब जोधपुर मे हुआ था, उस समय मुझे उनकी चरणसेवा का सुअवसर प्राप्त हुआ था। आपका असाधारण व्यक्तित्व और उससे भी बढकर जेनधर्म के सिद्धान्तो का युक्तियुक्त प्रतिपादन आधुनिक जीवन की ज्वलन्त समस्याओ पर निर्भय विचार और सब से अधिक स्वर्गीय विश्वप्रेम से परिपूर्ण आपके उपदेश मेरे लिए ईश्वरीय सत्य के समान थे। पूज्यश्री के विदा होते समय जोधपुर को जो हार्दिक दु ख हुआ उसका चित्र मेरे हृदय मे अब भी स्पष्ट रूप से अकित हे। पूज्यश्री का मुझ पर जो प्रभाव पडा ऐसा किसी दूसरे धार्मिक नेता का नही पडा। नि सन्देह पूज्यश्री सभी जैनो के गोरव है चाहे वे कही भी रहते हो। जहाँ भी धार्मिक एव नैतिक विचार तथा सस्कृति अपने वास्तविक प्रकाश मे चमक रहे हे वहाँ पूज्यश्री का बहुत ऊँचा तथा सम्मानित स्थान हे। मेरी हार्दिक कामना है कि गुरु महाराज दीर्घ काल तक जीवित रहे तथा जाति और पन्थ की पर्वाह न करते हुए गलत रास्ते पर चलती हुई जनता के बढते हुए घावो को भरने में सहायता करे।

३९—श्री शभूनाथ जी मोदी, सेशन जज, उपाध्यक्ष साधुमार्गी जैन सभा, जोधपुर

मुझे जोधपुर के चातुर्मास के समय श्रीमज्जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलाल जी म सा के उपदेशप्रद व्याख्यान श्रवण का सुखद सौभाग्य प्राप्त हुआ। पूज्यश्री की विद्वत्ता, व्याख्यान, गम्भीरता, विवेचन शक्ति की पटुता, सेद्धान्तिक तात्विक रहस्योद्घाटन की दक्षता ही उनकी मुख्य विशेषताएँ है। आप श्री के व्याख्यानो मे एक ऐसी चमत्कारान्विता शक्ति की प्रधानता रहती है जो जेन व जैनेतर सभी जनसमुदाय के हृदयपट पर समान रूप से धार्मिक प्रभाव अकित करती है।

आप श्रीमान् के प्रकाण्ड पाडित्य से केवल जैन विद्वान् ही मुग्ध नही हुए है अपितु जैनेतर जनता भी पर्याप्त मात्रा मे प्रभावित हुई हे। पूज्यश्री की इस गोरवगाथा पर हमे व हमारे समाज को नाज हे, साथ ही शासननायक से प्रार्थना करते हे कि पूज्यश्री दीर्घायुष्य होकर जैन जनता को विशेष कर्तव्य-ज्ञान कराने मे सहायक सिद्ध हो।

४०—डाक्टर मोहनलाल एच शाह **M B B S (Bom) D T M (Zia) z U (Wien)**

प्रतापी पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज नी अस्वस्थावस्था बखते जलगाँव मा त्रण मास जेटलो लाम्बो वखत सेवा करवानो अलभ्य लाभ मने मल्यो हतो।

पूज्य श्री नो पोताना मन ऊपर नो काबू, देह पर नी अममत्व, प्राणिमात्र प्रत्येनो उभरातो अनुकम्पाभाव अद्भुत अनुभव्यो। एमनो अने एमनी साथे ना मुनिमडल नो त्याग, सयम, शान्ति, ज्ञानरमणता, अने चरित्रशीलताए मारा ऊपर अद्भुत जादू कर्यूं। अर्हन्नीति ऊपर ना एमना व्याख्यानोए मारा मन ऊपर घणीज ऊडी असर कीधी हती। आ समय मारा जीवन माटे परम सुख अने शातिमय हतो। जीवन मा आवी धन्य पलो थोडी पण मले तो स्वर्गीय सुख अनुभवाय एम मने लागे छे।

समाज धर्म अने देशना उत्कर्ष माटे एमनी लागणी तीव्र हती। प्रभु एमने दीर्घायुषी बनावो अने एमनी मधुर वाणी थी समाज तथा धर्म ने वधु अने वधु उत्कर्षमय बनावे एवी प्रार्थना थी विरमु छु।

41 —पूज्यश्री के सम्बन्ध में

श्री पी एल चुडगर बार एट ला , राजकोट

1 It gives me very great pleasure and I esteem it is very rare privilege indeed to have got this opportunity of contributing my humble tribute to the venerable Shree Jawaharlal ji Maharaj for his profound scholarship, his deep study of Jain philosophy along with the comparative study of Jain religions of the world and the clear exposition of the principles of the religion in their practical Application to the daily life of the community

2 Shree jawaharalal ji's great fame had preceded his visit to Western India and particularly to Kathiawar and tens of thousands of Jains all over this side of the country were very eager to have his Darshan and to hear him and learn at his feet the cardinal principles of the Jain religious philosophy

3 He very kindly honoured us with his visit in the year 1936-37 and gave the benefit of his learning to tens of thousands of Jain and inumerable followers of other faiths in the principle cities and towns of Kathiawar such as Rajkot, Junagarh Morvi and Porbandar etc

4 I was one of the fortunate persons who attended some of his lectures which proved to be the great inspiration of my life

5 He delivered five lectures in the Rajkot civil Station Connought Hall, in each one of which, the Hall was full to sufocation and the lectures were attended not only by the Jains, but by other Hindus, Moslems, Parsis, Christains etc The resounding thundering voice and his inimitable eloquence won the admiration of all and inspired every body with the greatness of the Sthanakwasi jain religion and the Philosophy of life as expounded by him Each lectuere created an eagerness to hear more and more from him, and the appetite became simply voracious

6 Every day left with the firm impression that he was as indeed a great teacher of mankind, a profound scholar, a reformer and above all a great patriot

7 If Shree jawaharlal ji Maharaj was free to travel by vehicles and if he was permitted to tour all over the world, I have no doubt that he would have easily won over millions of peoples all over the world and converted to be followers, of the Jain religion

8 Shree Jawaharlal ji Maharaj is one of those great men who not only elevate the moral and spiritual life of men but bring into being ideas and forces that control and regulate in a great measure, the ordinary day to day life of peoples and permanently affected their out look and their ideas He left everlasting and inefficable influence when he goes and creates a wonderful spiritual atmosphere and he shows the light to thousands struggling in darkness for it

9 I may sum up Shree Jawaharlal ji's greatness in the words of Thomas Carlyle Great men are the fire pillars in this dark pilgrimage of mankind They stand as heavenly signs, everliving witnesses of what has been prophetic tokens of what still may be revealed, embodical possibilities of human nature"

10 May he be spared long and may his mental and physical strength be maintained throughout his life so as to enable him to continue his great mission for the moral and spiritual uplift of mankind

१ पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज की विशाल विद्वत्ता, ससार के महान धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन के साथ-साथ जैन दर्शन का तलस्पर्शी ज्ञान, समाज के देनिक जीवन मे व्यावहारिक उपयोग बताते हुए धार्मिक सिद्धान्तो का विशद विवेचन आदि बातो के लिए अपनी विनम्र श्रद्धाजलि प्रकट करने का अवसर प्राप्त होना मेरे लिए अलभ्य लाभ हे।

२ पश्चिमी भारत और विशेषतया काठियावाड मे पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज के पधारने से पहले ही उनका यश फेल चुका था। इस प्रदेश के हजारो जैन उनका दर्शन करने, व्याख्यान सुनने और उनकी चरणसेवा से जैनधर्म के मूल सिद्धान्तो को सीखने के लिए अत्यधिक उत्सुक थे।

३ सन् १९३६-३७ मे आपने परम कृपा करके अपने पदार्पण द्वारा हमे सम्मानित किया और राजकोट, जामनगर, मोर्वी, पोरबन्दर आदि काठियावाड के प्रधान नगरो मे हजारो जेन तथा अनगिनत अन्य मतावलम्बियो को अपनी विद्वत्ता का लाभ दिया।

४ मे उन भाग्यशाली व्यक्तियो मे से था, जिन्होने उनके कुछ व्याख्यान सुने थे। अगर मै कहू कि उनके व्याख्यान मेरे जीवन मे सब से अधिक प्रभाव करने वाले हुए तो इसमे तनिक भी अतिशयोक्ति नही हे।

५ उन्होने राजकोट सिविल स्टेशन के कनाट हाल मे पाँच व्याख्यान दिये थे। प्रत्येक व्याख्यान मे सारा भवन ठसाठस भर जाता था। आपका व्याख्यान सुनने जेन ही नही, किन्तु दूसरे हिन्दू, मुसलमान पारसी और क्रिश्चियन आदि भी आते थे। आपकी प्रतिध्वनित गरजती हुई वाणी तथा अनुकरणातीत वाग्मिता सभी की प्रशसा को प्राप्त कर लेती थी तथा स्थानकवासी जेनधर्म तथा उनके कहे गए जीवन-सिद्धान्तो की महानता से उन्हे प्रभावित कर लेती थी। प्रत्येक व्याख्यान उनसे अधिकाधिक सुनने की उत्सुकता पेदा करता था ओर सुनने की भूख वढती थी।

६ उठने से पहले प्रत्येक व्यक्ति मे यह दृढ विश्वास जम जाता था कि वे वास्तव मे मानवता के महान् उपदेशक, गम्भीर विद्वान, सुधारक तथा सब से ऊपर महान् देशभक्त है।

७ यदि जवाहरलाल जी महाराज गाडी से मुसाफिरी करने मे स्वतन्त्र होते और उन्हे समस्त ससार की यात्रा के लिए अनुमति मिल जाती तो इसमे सन्देह नही है कि वे ससार मे करोडो व्यक्तियो को अपना भक्त तथा जेनधर्म का अनुयायी वना लेते।

८ श्री जवाहरलाल जी महाराज उन महापुरुषो मे से है, जो जनता के आध्यात्मिक तथा नैतिक जीवन को ही ऊँचा उठाने की कोशिश नही करते, किन्तु उन विचार तथा शक्तियो को भी अस्तित्व मे लाने की कोशिश करते है, जिन से एक वडे परिमाण मे जनता का साधारण देनिक जीवन नियन्त्रित तथा नियमित होता है और जो उनके दृष्टिकोण तथा विचारो पर स्थायी असर डालते है। वे जहाँ जात है वही अपना स्थायी तथा कभी नही मिटने वाला असर डाल देते है, वहाँ एक आश्चर्यपूर्ण आध्यात्मिक वातावरण पेदा कर देते है और उन हजारो व्यक्तियो को आलोक प्रदान करते है, जो इसके लिए अँधेर मे झगड रहे है।

९ टॉमस कार्लाइल के शब्दो मे मै श्री जवाहरलाल जी महाराज का उपसहार करता हूँ- "मानवसमाज की अधकारपूर्ण यात्रा मे महापुरुष अग्निस्तम्भ है। वे नक्षत्रो के समान चमकते रहते ह, वीती हुई घटनाओ के सनातन साक्षी है, भविष्य मे प्रकट होने वाली वातो के लिए भविष्यसूचक चिह्न है तथा मानवप्रकृति की मूर्तिमती सभावनाएँ है।"

१० वे चिरकाल तक वने रहे तथा उनकी वौद्धिक तथा शारीरिक शक्ति आजीवन काम देती रहे, जिससे वे मानवसमाज की आध्यात्मिक तथा नेतिक उन्नति के अपने लक्ष्य को जारी रख सके।

42—श्रेष्ठ ज्ञान और चरित्र के धनी

(श्री मणिलाल एच उदानी एम ए ,एल एल.वी एडवोकेट, राजकोट)

I had the good Luck of knowing Jainacharya pujya Shree Jawaharlalji, when he happened to pass his monsoon sojourn at Rajkot in the year 1936 I heard from the city that an orthodox Jain Saint has come to Rajkot in the Bhojanshala and was giving his lectures which were very valuable I inquired from different directions and heard that he was very particular in rites & rituals according to the Jain Sutra, was keeping anti-granted dress and that many Persons who were orthodox Jains were collecting round him every day for religious discussions

It came into my mind then not to lose the opportunity of paying a visit to him and coming into his contact So I went to his place one afternoon and saw him On seeing the very face of pujya Maharaj Shree and his brilliant forehead his deep and peaceful discussions, I could immediately find that he was a person of sound knowledge His very physiognomy impressed upon me and inspired respect for him

in my heart This was our first meeting A learned pandit was reading a Sanskrit Book of philosophy with him and he was following every Stanza with very great interest I could find that at this age Maharaj Shree was studying Sanskrit like a student He was comparing the Jain and Vedant philosophy and minutely showing the substance and the truth of jainism I Could see that he had read all the jain Scriptures thoroughly well and had a sound knowledge of the Magdhi language After that his reading with the pandit was finished, I commenced discussions and after a few questionnaire, I could see the vast knowledge that Pujya Maharaj Shree had acquired and thoroughly dijested We went upon discussing the soul-philosophy according to jainism and he explained it fully well to my entire satisfaction He could show me how soul and matter were two different objects and with what chord of Karmas they were joined together and causing birth and re-birth His simplicity of style and masterly way of explaining were sufficient proof of his vast knowledge and his great experience Our first interview was sufficient to impress upon my mind that he was one of the Geno in the Jain Saintsangh the preaching of such a great person would be very ueseful to the society

Then I went to his lecture A number of Sadhus were sitting on different benches with pujya Maharaj Shree in the middle He commenced with a manglacharan (introductory song) with a tingling voice and in a chorus and then pujya Maharaj Shree caught one sentence from it and went on preaching for an hour and a half on one word He never looked up into any of the books which is usually done by other sadhus His brain was like an ocean from which all the waves of thought were coming out with all their force In the lecture, he was preaching sound principles of Jainism, comparing them with other religions, taking out the substance of all and giving out the cream of all his vast reading to the public and I found that even if a man were to attend, understand, grasp and digest one lecture it was sufficient for him to get the right knowledge and to acquire Samkit (true knowledge) He was illustrating every philosophical text with illustrations from the Jain Sutras which were also at the tip of his tongue It was in the same style that lord Mahavir was preaching Jain principles in the samavsaran He concluded his lecture with blessings and benedictions to the audience Having found that pujya Maharaj Shree was an ocean of right knowledge I made up my ming then not to miss any of his lectures, although it was difficult for me to spare time in the morning and to go to such a long distance every day But the value of his lecture was thousand times more precious than my

time and so I went to his lectures practically every day during his stay at Rajkot

In the other lactures I could find various distinguishing features although orthodox in stayle & dress, I could find that in his knowlege, he was upto date, with the present educated persons who very rarely attend the jain temples, would find from his lactures anything and everything about religious, socal, moral, intellectual & prectical lessons of life, If a man were to follow his directions, he can move in the fashionable society with perfect ease and comfort, can aquire wealth name and fame and still remain a true Jain who would be honoured in every society and who can still conqur his karmas & acquire salvation One day when he was talking of the educated persons, he distinguished independence from insolence with a masterly hand, and convinced that Everybody should have independence of thinking but it should be-in perfect harmony with the prenciples of religion and with complete respect to the leaders It should not be self conceitad and insolent which is always due to want of thorough knowledge he impressed very well on different occasions upon the necessity of complete obedience to the parents and respecting their experienced mind He said that real education consists in acquaring knowledge and in putting it into practice by a correct understanding of the various phases of life and how to become useful to society

One day he gave preaching on the subject of birth-control, and it was a very important subject & his lecture was also very valuable In these fashionable times when the value of Brahmacharya, its masterly results are totally forgotten and when men and women forget their real manners of living and go about openly in the publications, send for advertisement of birth-control appliances, Pujya Maharaj Shree's lecture was a marvelous lesson He started with the stavan of lord Neminath and showed the instance of his great Brahamcharya He said that the world was a garden and all the living beings were different trees in it Man is a mango tree They do not know how to keep the mango tree sweet and fertile People have no control over the tongue They have no control over the other organs and thus they create children, make themselves miserable and come into trouble If they have to preserve Brahmchaya, power, knewledge, position strenth and religion would all come automatically He gave many instances of greatmen, who by preserving their strength, left an immortal name in the world He said "man has to understand whether passion is the enemy of men or whrther creation is the enemy This is to understand by the right sanse and there would be a solution to

problems He gave the instance of Bhishampitamah & explained how people of India were strong in the past and passionate thoughts and waste of energy He gave the instance of Sati Anjana & impressed upon the audience that it was absolutely necessary for every man and woman to own benefit that every man should be devoted to his wife and every woman should be devoted to her husband If the generation is getting weaker, every day, it is due to bad company and their own actions of thinking

One day he gave a very useful lecture upon the present condition of the society and he explained so nicely the necessity of complete union in the family, in the country, and in all the societies People should do away with all sorts of jealousy and evil thoughts for each other, should regard every creature as a soul, should maintain divine love towards each other and should see how he can be useful to the society and to the humanity in general On the New Year's day people put on new clothes and go to their friends and relatives for offering their best wishes but on the very next day they put quarrels and so all such false show is absolutely unnecessary and there should complete Harmony and feelings for all, pujya Maharaj Shree said 'disiples of shri Mahaveer should visit of helpless and distressed and if they can be he Jpfulin the houses removing their miseries, that would be their real duty on the Diwali holiday On this day, we have to think why our situation in the world is so much lowered, and by what means and ways we can elevate the status of our people Put the principle of Lord Mahavir into the depths of your heart and see what are the defects and self examination will make you completely perfect He explained with complete scientific treatment How by religion alone, one can make oneself happy, acquire Nirvan and can become useful to society and the present miserable condition of the people will then come to an end '

I went to several of his lectures and I must say that they were very instructive and coming out from masterly brain and on all the subjects, Pujya Maharaj Shree had complete knowledge and was up to date He was always punctual in each and every programme and I found him working for the whole-day at this advanced age Everybody who came to him was received respectfully and I found that sometimes youngmen coming to him for jokes were also appeased and passified with the coolness of replies of Maharaj Shree and they went away ashamed of their own behaviour

When Maharaj Shree went for bringing his food, he was very particular that everything was served with perfect obedience to Jain

rituals and he was always regular in every respect He had a number of disciples, who are all trained under his own direct care and they were also remaining busy with the work that was allotted to them

Pujya Maharaj Shree is a person of very high character very great knowledge and experience, sound intellect, and sharp memory and he was devoting all his time to make his life useful to the society He has done a great obligation upon the people of Kathiawar by coming to Rajkot and giving us the blessings of his very high preachings His life is extremely pious and beneficial to all Many of his lectures are printed and it is a very useful accumulation of excellent thoughts

I went to Morvi also and I found that he had impressed so highly upon the people of Morvi by his very high preachings He could give the best of thoughts and the substance of philosophy in a very simple and impressive language and the orthodox as well as the refined classes had both very much to learn from him His gospel of non-violence and peace and not injuring the feelings of anybody was also very impressive and I mush say in a word that I could see in Pujya Maharaj Shree all the traits of highest knowledge, highest cheracter, simplest living and highest thinking I found myself very fortunate to have come to know him and to have the pleasure of hearing his valuable lectures which have benefitted me so much He is a very useful asset in the Jain Community and has done valuable work throughout his life and I do not think any word would be sufficient for expressing our gratitude to him for all this valuable service

In conference matters, Pujya Maharaj Shree is also taking keen interest, giving all practical directions and was giving spirit to the leaders of the different provinces He was perfect in everything and by his experience could guide even the minds of the best of the leaders

I wish and pray that his great and masterly soul may always remain healthy He mey continue to give his valuable preachings to the community and may be able to improve the present condition of the Jains and that he may have a healthy long-life which is always useful and serviceable to every body

जेनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज ने सन् १९३६ का चातुर्मास राजकोट मे किया था। उसी समय मुझे उनके परिचय मे आने का सोभाग्य प्राप्त हुआ। मेने सुना कि एक साम्प्रदायिक जेन महात्मा राजकोट की भोजनशाला में पधारे है। उनके व्याख्यान वडे महत्त्वपूर्ण है। विविध उपायो स पूछताछ करके मंने जान लिया कि वे जेन शास्त्रानुसार क्रियाकाड का पालन करने मे वहुत सावधान ह किन्तु रुढि की परवाह नही करते। वहुत से रुढिवादी जेन प्रतिदिन उनके पास जाकर चर्चावाता करते ह।

उस समय मेरे मन मे आया कि उनके दर्शन और परिचय मे आने के इस अवसर को न खोना चाहिए। एक दिन सायकाल मे उनके स्थान पर गया और दर्शन किए। पूज्य महाराजश्री की मुखाकृति, दीप्त-भाल तथा गभीर एव शान्त चर्चावार्ता को देखते ही मे समझ गया कि वे ठोस विद्वान् हे। उनकी आकृति ने ही मुझे बहुत प्रभावित कर लिया और मेरे हृदय मे उनके प्रति सम्मान पेदा कर दिया। यह हमारा प्रथम मिलन था। एक विद्वान् पण्डित सस्कृ त मे लिखी हुई दर्शनशास्त्र की पुस्तक उन्हे सुना रहे थे और वे प्रत्यके श्लोक को बडी रुचि के साथ समझ रहे थे। मुझे ऐसा मालूम पडा कि इस अवस्था मे भी महाराजश्री एक विद्यार्थी के समान सस्कृत पढ रहे हे। वे जैन और वेदान्त दर्शन की तुलना कर रहे थे तथा जैन दर्शन के रहस्य तथा उसकी सत्यता का सूक्ष्म निरूपण कर रहे थे। मुझे ऐसा मालूम पडा कि वे सभी जेन आगमो के पूर्ण ज्ञाता है और मागधी भाषा के भी अच्छे पण्डित हे। पण्डितजी का वाचन समाप्त हो जाने के बाद मैंने चर्चा प्रारम्भ की। पूज्यश्री ने जो विशाल ज्ञान प्राप्त करके पचा लिया है उसका पता मुझे कुछ पश्नो के बाद लगा। हमने जैनदर्शन के अनुसार आत्मतत्त्व पर चर्चा की। पूज्यश्री ने उसकी सर्वांगीण तथा सुन्दर व्याख्या की। मुझे उससे पूर्ण सन्तोष हो गया। उन्होने बताया कि किस प्रकार आत्मा और पुद्‌गल दो भिन्न वस्तुएँ है, किस प्रकार वे कर्मों की रस्सी से जुडी हुई है तथा जन्म और पुनर्जन्म का कारण बनी हुई है। तत्त्वो को समझाने का ढग तथा अधिकारपूर्ण वार्तालाप उनके विशाल ज्ञान तथा महान् अनुभव को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त थे। प्रथम दर्शन से ही मै मानने लगा कि वे जैन महात्माओ मे एक रत्न है। ऐसे महापुरुष के उपदेश समाज को बहुत उपयोगी होगे।

इसके बाद मे उनके व्याख्यान मे गया। कई साधु भिन्न-भिन्न आसनो पर बैठे हुए थे। पूज्यश्री सबके मध्य मे थे। पूज्यश्री ने कापती हुई वाणी मे मगलाचरण किया, अपने गीत का ध्रुवपद गाया और उसी मे से एक शब्द लेकर डेढ घटे तक बोलते रहे। जैसा कि दूसरे साधु साधारणतया किया करते हे, पूज्यश्री ने एक बार भी किताब मे नही देखा। उनका मस्तिष्क एक समुद्र के समान मालूम पडता था जिसमे से विचारो की तरगे अपनी पूर्ण शक्ति के साथ उठ रही थी। उस व्याख्यान मे वे जैन धर्म के मूल सिद्धान्तो का उपदेश दे रहे थे, उनकी दूसरे धर्मों के साथ तुलना कर रहे थे, जनता को उन सभी का निचोड कर तथा अपने विशाल अध्ययन का मक्खन निकालकर दे रहे थे। मुझे ऐसा मालूम पडा कि यदि कोई व्यक्ति उनके एक व्याख्यान को भी सुन ले, समझ ले, ग्रहण कर ले और पचा ले तो वह सम्यग्ज्ञान ओर सम्यग्दर्शन प्राप्त करने के लिए पर्याप्त हे। अपने उपदेशो के साथ-साथ वे जैन शास्त्रो के उद्धरण देते जाते थे, जो कि उनके जिह्वाग्र पर स्थित थे। भगवान् महावीर इसी प्रकार समवसरण मे जेन सिद्धातो का उपदेश दिया करते थे। जनता के लिए शुभकामना तथा आशीर्वाद के साथ उन्होने अपना व्याख्यान समाप्त किया। यद्यपि प्रतिदिन सुबह समय निकालना और इतनी दूर जाना मेरे लिए कठिन था फिर भी जव मेने यह जान लिया कि पूज्यश्री यथार्थ ज्ञान के समुद्र हे तो निश्चय कर लिया कि उनके किसी भी व्याख्यान को न चूकूगा। उनके व्याख्यानो का मूल्य मेरे समय से हजार गुना अधिक था। जब तक वे राजकोट मे ठहरे, मे प्रतिदिन व्याख्यान मे जाता रहा।

दूसरे व्याख्यानो मे कई प्रकार की असाधारण विशेषताएँ मालूम पडी। यद्यपि उनका ढग और वेशभूषा पुरानी थी किन्तु उनमे भरा हुआ ज्ञान पूर्णतया सामयिक तथा वर्तमान जनता के उपयोग का था। मेरा विश्वास हे कि वर्तमान शिक्षित व्यक्ति, जो जेन मन्दिरो मे बहुत कम जाते है, उनके उपदेशो से धार्मिक, सामाजिक, नेतिक, बोद्धिक तथा व्यावहारिक सभी प्रकार की जीवनोपयोगी शिक्षाएँ प्राप्त

कर सकते हे। यदि मनुष्य उनके उपदेशानुसार चले तो वह वर्तमान सभ्य समाज मे सुख ओर सरलता के साथ उठ-वेठ सकता हे, धन,यश तथा नाम कमा सकता हे ओर फिर भी सच्चा जेन वना रह सकता हे। प्रत्येक समाज मे उसका आदर भी होगा ओर साथ ही कर्मों का क्षय करके वह मोक्ष भी प्राप्त कर सकता हे। एक दिन वे शिक्षित व्यक्तियो के साथ वार्तालाप कर रहे थे। उस समय उन्होने अधिकारपूर्ण ढग से स्वतन्त्रता को धृष्टता से अलग करके समझाया। सुनने वाले अच्छी तरह मान गए कि वर्तमान सन्तति धृष्टता ओर स्वतन्त्रता का सम्मिश्रण कर रही हे और इसीलिए जीवन मे विफल हो रही हे। प्रत्येक व्यक्ति को विचार करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए किन्तु धर्म के मूल सिद्धान्तो के साथ पूरी सगति और नेताओ के प्रति आदर होना आवश्यक हे। स्वतन्त्रता का अर्थ आत्म वञ्चना या मिथ्या दर्प नही हे। इसके विपरीत धृष्टता हमेशा पूरे ज्ञान की कमी से होती हे। माता-पिता की आज्ञा का पालन तथा उनके अनुभवी मस्तिष्क के प्रति आदरभाव होने की आवश्यकता पर उन्होंने कई अवसरो पर उपदेश दिया ओर इस बात को जनता के हृदय मे वेठा दिया। उनका कथन है कि ज्ञान को प्राप्त करना तथा जीवन के विविध पहलुओ को ठीक-ठीक समझकर और समाज के लिए उपयोगी बनने के उपायो को सीख कर उन्हे जीवन मे उतारना ही सच्ची शिक्षा हे।

एक दिन उन्होने सन्तति नियमन पर व्याख्यान दिया। जिस प्रकार विषय महत्त्वपूर्ण था, उसी प्रकार पूज्यश्री का व्याख्यान भी मननीय था। फेशन के इन दिनो मे, जब कि ब्रह्मचर्य की कीमत ओर उसके अचूक परिणाम सर्वथा भुला दिए गए हे, स्त्रियाँ ओर पुरुष जीवन के वास्तविक तरीको को भूलकर अपने विचारो का खुल्लमखुल्ला प्रचार करते हे, सन्तति नियमन के विज्ञापन देखते हे ओर कृत्रिम साधनो को काम मे लाते हे, ऐसे समय मे पूज्यश्री का उपदेश अत्यधिक शिक्षाप्रद था। उन्होने अपना व्याख्यान भगवान् नेमिनाथ के स्तवन के साथ प्रारम्भ किया ओर उनके उत्कृष्ट ब्रह्मचर्य का उदाहरण पेश किया। उन्होने कहा कि ससार एक उद्यान हे ओर इसमे रहने वाले सभी प्राणी विविध प्रकार के वृक्ष है। मनुष्य आम्र वृक्ष हे। लोग यह नही जानते कि इस वृक्ष को मीठा ओर हरा-भरा केसे रक्खा जाये ? रसनेन्द्रिय उनके वश मे नही होती। इसी प्रकार दूसरी इन्द्रियो पर भी नियन्त्रण नही होता। बच्चे पैदा होते हे ओर दुख एव आपत्तियाँ खडी हो जाती हे। यदि वे ब्रह्मचर्य का पालन करे तो शक्ति, ज्ञान, सम्मान, बल ओर धर्म सभी स्वय आ जायेंगे। उन्होने बहुत-से महापुरुषो के उदाहरण दिए जिन्होने वीर्य की रक्षा करके ससार मे अमर नाम प्राप्त किया। उन्होने कहा कि मनुष्य को विवेकपूर्वक समझना चाहिए कि उसका शत्रु काम हे या सन्तान ? यदि इस बात को ठीक-ठीक समझ लिया जाय तो उपरोक्त समस्या अपने आप सुलझ जाये। भीष्म पितामह का उदाहरण देते हुए आपने बताया कि प्राचीन समय में लोग कितने बलवान् होते थे ओर आजकल वीर्यनाश ओर गन्दे विचारो के कारण कितने निर्बल हो गए हे। सती अजना का उदाहरण देकर आपने श्रोताओं के चित्त मे वेठा दिया कि पत्नी को अपने पति मे अनुरक्त रहना चाहिए ओर पति को अपनी पत्नी मे अनुरक्त रहना चाहिए। इससे स्त्री ओर पुरुष का लाभ हे। सन्तान के प्रतिदिन निर्बल होने का कारण बुरी सगति ओर बुरे विचार ही हे।

एक दिन आपने समाज की वर्तमान दशा पर सारगर्भित भाषण दिया। परिवार, देश तथा सभी समाजो मे पूर्ण एकता की आवश्यकता का आपने बहुत सुन्दर प्रतिपादन किया। जनता को पारस्परिक ईर्ष्या ओर बुरे विचार छोड देना चाहिए। प्रत्येक प्राणी को अपनी आत्मा के समान समझना चाहिए।

परस्पर पवित्र प्रेम बढाकर समाज और मानवमात्र के लिए उपयोगी बनने का पयत्न करना चाहिए। नए वर्ष के दिन लोग नए कपडे पहनते हे। अपने मित्रो ओर सम्बन्धियो से मिलने जाते हे ओर अपनी शुभ कामना प्रकट करते हे। किन्तु दूसरे ही दिन झगडा खडा कर लेते हे। ऐसी दशा मे मिथ्या प्रदर्शन से कोई लाभ नही हे। सभी के प्रति एकता और प्रेम की भावना वास्तविक होनी चाहिए। महावीर-निर्वाण के दिन पूज्यश्री ने कहा कि महावीर के अनुयायियो को दुखी ओर असहायो के घर जाना चाहिए। यदि वे उनके कष्टो को दूर करने मे कुछ भी सहायक हो सके तो दीवाली के त्यौहार की सच्ची आराधना होगी। आज हमे सोचना चाहिए कि ससार मे हमारी दशा इतनी गिरी हुई क्यो हे, किन साधनो तथा उपायों से हमारे समाज का स्तर ऊँचा किया जा सकता है। भगवान् महावीर के सिद्धान्त को हृदय मे उतारो और अपनी कमियो पर विचार करो। आत्मपरीक्षा तुम्हे पूर्ण बना देगी। आपने सर्वथा वेज्ञानिक ढग से बताया कि किस प्रकार केवल धर्माराधना से मनुष्य आनन्द प्राप्त कर सकता है, निर्वाण हासिल कर सकता है और समाज के लिए भी उपयोगी बन सकता है। उस समय ससार की वर्तमान अशान्ति का अन्त हो जाएगा।

मै उनके बहुत से व्याख्यानो मे गया। यह कहना पडेगा कि वे सभी शिक्षा से भरे हुए होते थे। वे एक अनुभवी तथा परिपक्व मस्तिष्क की उपज थे। सभी विषयो पर पूज्यश्री का ज्ञान सर्वाङ्गीण और बिलकुल सामयिक था। वे अपने प्रत्येक कार्यक्रम के लिए समय के पूरे पाबद थे। वृद्धावस्था मे भी सारा दिन काम मे लगे रहते थे। वे अपने पास आने वाले प्रत्येक व्यक्ति का सम्मान करते थे। मैने कई बार देखा कि नवयुवक जो उनका मजाक उडाने के लिए आते थे वे भी पूज्यश्री के शातिपूर्ण उत्तरो से शान्त तथा सन्तुष्ट होकर अपने व्यवहार के लिए शर्मिन्दा होते हुए लौटते थे।

जब महाराजश्री आहार के लिए जाते तो इस बात का बहुत ध्यान रखते थे कि प्रत्येक वस्तु जेन शास्त्रानुसार शुद्ध प्राप्त हो रही हे। वे प्रत्येक बात मे सदा नियमित रहते थे। उनके साथ कुछ शिष्य भी थे। वे सभी उनकी साक्षात् देखरेख तथा चारित्र की शिक्षा प्राप्त करते थे। वे पूज्यश्री द्वारा बताए कार्यों मे व्यस्त रहते थे।

पूज्यश्री का चारित्र बहुत ऊँचा है। ज्ञान तथा अनुभव अति विशाल हे। बुद्धि स्वस्थ तथा प्रगाढ है, स्मरण शक्ति तीव्र हे। उन्होने अपना सारा समय व जीवन को समाज के लिए उपयोगी बनाने मे लगा दिया है। राजकोट पधारकर ओर अपने उत्तम उपदेशो का वरदान देकर आपने काठियावाड पर महान् उपकार किया हे। आपका जीवन परम पवित्र और सभी के लिए कल्याणप्रद हे। आपके बहुत-से व्याख्यान छप चुके हे। वे श्रेष्ठ विचारो के उपयोगी सग्रह है।

मे मोरवी भी गया था। वहाँ भी अपने श्रेष्ठ भाषणो द्वारा आपने जनता को प्रभावित कर लिया था। उत्तम से उत्तम विचार ओर दर्शनशास्त्र के रहस्यो को वे सरल और प्रभावशाली भाषा में समझा सकते हे। पुराने ओर सुधरे हुए विचारो वाले सभी उनसे बहुत कुछ सीख सकते हे। आपका अहिंसा, शान्ति और दूसरे के मन को न दुखाने का सदेश भी बहुत प्रभावोत्पादक था। एक शब्द मे कहा जाय तो पूज्यश्री में श्रेष्ठ ज्ञान, श्रेष्ठ चारित्र तथा सादा जीवन और श्रेष्ठ विचार के सभी गुण विद्यमान हे। मे इस बात के लिए अपने को भाग्यशाली मानता हूँ कि आपके परिचय मे आने तथा अमूल्य व्याख्यान सुनने का अवसर मिला। उन व्याख्यानो से मुझे वहुत लाभ हुआ हे। आप जेन समाज के अत्युपयोगी

रत्न है। आपने सारा जीवन उपयोगी कार्यों मे लगा दिया है। आपकी अमूल्य सेवाओ के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए हमारे पास शब्द नही है।

कार्फ्रें स के मामलो मे भी पूज्यश्री वहुत रुचि लेते रहे है। वे विभिन्न प्रान्तो के नेताओ को व्यावहारिक आदेश देते थे और सभी के मार्ग-प्रदर्शक थे। वे प्रत्येक वात मे पूर्ण थे और अनुभव द्वारा सर्वश्रेष्ठ नेताओ के मस्तिष्क को भी सचालित कर सकते थे।

मेरी हार्दिक अभिलापा है और साथ ही ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि उनकी महान् आत्मा सदा स्वस्थ वनी रहे। वे अपने अमूल्य उपदेश समाज को सुनाते रहे जिससे जेन समाज की वर्तमान दशा सुधरे। उन्हे और दीर्घ जीवन प्राप्त हो जो कि सदा से प्रत्येक व्यक्ति की सेवा और उपयोग मे लगा हुआ है।

४३—श्रीमूलजी पुण्यस्मरण भाई सोलकी, राजकोट

श्री जवाहरलालजी म मोरवी हता। सन् १९३८ ना चातुर्मास दरम्यान मने तेमनो प्रथम परिचय थयो। आ समये मोरवी शहर दूर-दूर देश थी आवता जेन स्त्री पुरुषो अने वालको थी उभरातु। ते एक महान् यात्रा ना परमधाम समु वनी रह्यु हतु। कोई एक व्यक्ति ना दर्शनार्थे आटली मोटी मानव मेदिनी मे आ पहेला कदी जोई न हती। ए मात्र मानव मेदिनी नहिं परन्तु भावभीना अने कल्याणकाक्षी लोको नो प्रेम नो सतत चालतो स्रोत हतो।

तेमना प्रथम दर्शन कर्या ते पहेला तेमने विषे जाण्यु हतु के श्री जवाहरलालजी एक प्रखर विद्वान, सम्पूर्ण चारित्रवान् अने महान् आत्मनिष्ट व्यक्ति छे। मारा प्रथम परिचयेज तेमना विषे मे जे साभल्यु हतु तेनी प्रतीति थई। त्यार पछी तो वखतो वखत तेना व्याख्यानमा जतो अने व्याख्यान ना समय वहार पण तेमना सत्सग नो लाभ लेतो। तेमना व्याख्यानोनी मारा ऊपर शु असर थएली तेनी नोंध हु मारी रोजनीशि मा राखतो। ते रोजनीशिमाथी केटलाक अवतरणो आ साथे मोकलु छु। ते अवतरणो थी आप समजी शकशो के ते वखते श्री जवाहरलालजी प्रत्ये मारो शु भाव हतो।

शुद्ध खादी ना वनेला मात्र वे चीवर थी ढकाएलु तेमनु जरा-जर्जरित स्थूल शरीर व्याख्यान माटे आसनवद्ध थतु त्यारे तेमनामा साचा धार्मिक जीवननी प्रभा, निर्भयता अने आत्मविश्वास थी उत्पन्न थती कार्यशक्ति, नरवरता ते वखते तेमना प्रसन्न मुख नेत्रवान् दर्शन थी तेमना प्रत्ये जनसमूह पूज्य भावथी आकर्पातो।

तेमना व्याख्याननी शेली शान्त छता असरकारक हती। तेमना व्याख्यान साभलनार भाग्येज कोई व्यक्ति हशे के जेने ते व्याख्यान साभल्या पछी पोताना जीवननी धर्मशिथिलताथी दु ख थतु न होय। तेमना व्याख्यानो सामान्य जन समाज माटे करवामा आवता होई तेमा जेन तत्वज्ञान नी झीणी छणावट आवती नही। परन्तु भगवान बुद्ध तथा महावीरे लोको ने नेतिक जीवनना उत्कर्प माटे जे वोधपद्धति ग्रहण करेली तेज पद्धति स्वामीजी नी पण हती। सामान्य जनता ने माटे तत्वज्ञान नी सूक्ष्म चर्चा साधारण रीते शुष्क वने छे।

पोताने जे सत्य लाग्यु ते कहेवामा पोताना सघाडा नी के श्रोताजनमानी कोई व्यक्ति नो तेमना मा परवाह न हती। साचा साधु जीवननी तेमनी निर्भयताने छाजे तेवी विवेक मर्यादा ते कदी भूलना नही। घणी वखत मोरवी सघना केटलाक अटपटा प्रश्न ऊपर ते छुट थी वोलता त्यारे सघनी कहेवानी

समझदार' व्यक्तियो ने लागतु के महाराज श्री मा व्यवहारकुशलता नथी। आवा व्यवहारकुशल माणसो धार्मिक जीवन मा आर्जवता नु स्थान न समजी शके, तेमा काई आश्चर्य थवानु नथी। To be great is to be misunderstood (महान् बनने का अर्थ हे गलत समझा जाना)। (जगत् नी महान् व्यक्तिओ) ना सबन्ध मा आ सूत्रमा जणावेली स्थिति सामान्य बने छे। जेटली तेमना सबधमा बधारे गेरसमज तेटलीज तेवी व्यक्तियो नी महत्ता छे।

मोरवी राज्यमा सप्तमीना तहेवारमा मेला भराय छे। आ मेलाओमा राज्य तरफ थी जुगार रमवाना खास परवाना अपाता अने तेमा थी राज्य ने ठीक आवक पण थती। आ बात नी महाराज ने जाण थता जुगार नी बदी ऊपर तेमने व्याख्यान आप्यु। आ बखत मोरवी ना श्रीमान् महाराजा साहेब पण हाजर हता। तेमना ऊपर स्वामीजी ना व्याख्यान नी एटली सुदर असर पडी के स्वामी जी नु व्याख्यान पूरू थयु के तरतज श्रीमान् महाराजा साहेबे जुगारना परवाना नही आपवा हुक्म कर्यो। श्रीजवाहरलालजी नु मोरवी नु चातुर्मास आ एकज बनाव थी चिरकाल स्मरणीय रहेशे।

पूज्य श्री स्वामी जी मा धर्मसकुचितता नथी तेनो परिचय आपणने तेमना कृष्ण जयन्ति ऊपर ना व्याख्यान थी थयो। तेज वखते अमारी खात्री थई के हिन्दु धर्म अने जैन धर्म एकज महान् वृक्ष नी बे शाखाओ छे। ते दिवसे तेमना गो पालन ना उपदेशनी बहु सुन्दर असर थई। चुस्त जैन जे अन्य धर्मों प्रत्ये उभय सहिष्णुता बतावता चूके तो तेमने जैन कहेता मने आचको लागे। स्वामी जी जेवा चुस्त जैनज अन्य धर्मी प्रत्ये उदार वलण राखी शके। कोई पण धर्म के सप्रदाय नी श्रेष्ठता-ते धर्म अथवा सप्रदाय अन्य धर्म तथा सप्रदाय तरफ केटली उदारता बतावी शके तेना ऊपर थी ज धरावी शकाय। आ श्रीकृष्ण जयन्ती ना व्याख्यान ना अन्ते स्वामीजी मा मे जैन धर्म नी मूर्ति ना दर्शन कर्या।

व्याख्यान ना समय वहार पण घणी बखत श्री जवाहरलालजी ना उत्तम सत्सग नो मने लाभ मल्यो छे। त्या मे तेमनो विद्याप्रेम अनुभव्यो छे। बीजा पण प्रसगो छे परन्तु आपनी समिति नु काम हुँ करवा मागतो नथी। एटले विरमु छु।

पूज्य स्वामी जी ने अने तेमना शिष्य श्रीमल्ल जी ने मारा वदन कहेवडावशो तो उपकृत थईश।

43-Extracts From My Diary.

22nd July 1938

In the morning I went to the Upashraya to hear Swami jawaharlal ji, a reputed Jain Muni, I was anxious to hear him as I had heard he has the reputation of a good speaker and a learned man Moreover he has a reputation of a man who puts in practice his conviction When I went to the lecture I found him quite upto his reputation He has certain peculiarities common to Jain Munis, but one can easily see in him a noble soul His words are really stimulating

30th July, 1938

Yesterdya morning I had been to the Vyakhayan of Jain Muni Jawharlal ji I find in Muniji a sincere and transperent soul His

speaches are learned, pratical and inspiring, because, I believe, Muniji does not give advice which he does not practice or desire to practice

Ist August 1939

Yesterday morning I had been to the lecture of Muni Jawaharlal ji More I hear him, more I feel his sincerety He is a man who can flare up revolutions, but unfortunately his audience is too plaint for that, His speach was telling and inspiring

6th August, 1938

In the morning I had been to the Upasharaya More I hear Swami Jawaharlal ji More I admire him He is a fearless speaker

मेरी डायरी के उद्धरण

२२ जुलाई १९३८

प्रात काल प्रसिद्ध जेन मुनि स्वामी जवाहरलालजी का व्याख्यान सुनने के लिए मे उपाश्रय मे गया। एक अच्छे वक्ता ओर विद्वान के रूप मे उनकी प्रसिद्धि मे सुन चुका था, इसलिए मे विशेष उत्सुक था। इसके साथ-साथ उनके लिए यह भी प्रसिद्ध था कि वे अपनी धारणाओ को कार्यरूप मे परिणत करते हे। जव मै व्याख्यान सुनने गया तो उन्हे वेसा ही पाया जेसी प्रसिद्धि थी। जेन साधुओ की साधारण विशेषताएँ उनमे विद्यमान हे, किन्तु उनमे एक उच्च आत्मा का अनुभव किया जा सकता हे। उनके शब्द वास्तव मे उत्तेजना से भरे हे।

३० जुलाई १९३८

कल सुवह मे जेन मुनि जवाहरलालजी का व्याख्यान सुनने गया था। मुझे मुनिजी मे एक सच्ची ओर निर्मल आत्मा दिखाई देती हे। उनके भापण विद्वत्तापूर्ण, व्यावहारिक ओर प्रभावशाली होते हे। क्योकि मेरे खयाल मे मुनिजी किसी ऐसी वात का उपदेश नही देते जिसे वे स्वय आचरण मे नही लाते या लाना पसन्द नही करते।

१ अगस्त १९३८

कल सुवह मै मुनि जवाहरलालजी का व्याख्यान सुनने गया था। मे जितना सुनता हूँ उनमे उतना ही यथार्थता का अधिक अनुभव होता जा रहा हे। वे ऐसे व्यक्ति हे जो क्रान्ति फूक सकते हे, किन्तु दुर्भाग्य से आपके श्रोता इस वात के लिए वहुत शान्त हे। उनकी वाणी प्रेरणा ओर उत्तेजना से भरी होती थी।

६ अगस्त १९३८

सुवह मे उपाश्रय मे गया था। स्वामी जवाहरलालजी को मे जितना सुनता हूँ उतनी अधिक प्रशसा करता हूँ। वे एक निर्भय वक्ता हे।

४४— आदर्श उपदेशक

श्री वीरचन्द पानाचन्द शाह, महामत्री श्री जैन श्वेताम्वर कान्फ्रेस, वम्वई

पूज्य महाराज श्री ना हूँ जे थोडा परिचय मा आव्यो छु तेनी मारा मन ऊपर घणीज ऊडी छाप पडी छे। मने बे पसग सहज याद आवे छे।

एक बखते तेओ श्री पासे हूँ बैठो हतो। एक बहन आव्या। गुरु श्री ने विनति करी के 'महाराज श्री, मने सत्य (बोलवा) नी प्रतिज्ञा सेवरावो।

महाराज श्री खूब शान्तिपूर्वक ते बहेन ने कह्यु के ''बहन' खाद्य वस्तुओ नी बाधा लेवी, सामायक प्रतिक्रमण ना नियम लेवा, आयबील, उपवास विगेरे तपश्चर्या करवी अने देहदमन करवु ते घणु दुष्कर छे। अने मनोनिग्रह तो तेथी पण वधारे दुष्कर छे। तमारो सत्य बोलवा आचरवा माटे आग्रह हशे परन्तु आ ऊपरानु वातावरण तम ने ज्यारे तमारी प्रतिज्ञा पालवा मा प्रतिकूल जणाशे त्यारे तमने कोई कोई वार खेद थशे। हमणा थोडे समय तमे वातावरण जोता रहो अने तेने सुधारता रहो। आ प्रश्न ऊपर हजु बधारे मथन करजो अने पछी निर्णय पर आवजो''।

ते बहेने मक्कम मनथी अने सरल भावे एटलुज कह्यु - ''महाराज श्री, मे विचार करी जोयो छे, मात्र कोइक वार भूल थई जाय छे प्रतिज्ञा मने वधारे जागृत राखशे। आप प्रतिज्ञा सेवरावी अने ते पालवानु मने बल मले तेवी आशीर्वाद आपो''।

पूज्य महाराज श्रीए योग्य समजण आप्या पछी बाधा आपी। आपणे आथी उल्टु घणी बार जोइए छीए। पात्र नी पूरी शक्ति जोया सिवाय, साधुवर्ग तेमने प्रतिज्ञा लेवडाववा मा बहु तत्पर होय छे। तेओ अति उत्तम आशय थी प्रेरायला होय छे के प्रतिज्ञा अने व्रतो माणसना जीवन ने उच्च कक्षाए लाववामा मदद रूप थाय छे। ते बात साची छे। छता योग्यायोग्य नो विचार तो करवो जोइए। केटलाक बाधा लेनारा भाई बहेनो समाज निन्दा ने कारणे अने केटलाक शरमथी परन्तु अनिच्छाए हा पाडे छे अने तेथी तेवा माणसो पाछल थई प्रतिज्ञा न पाली शके तो तेओ ऊँचे आववाने बदले नीचे जाय छे। अने प्रतिज्ञा प्रत्ये वधारे उदासीन बने छे। पूज्यश्रीए सामे थी प्रतिज्ञा लेवा आवनार व्यक्ति ने वधी वस्तुस्थिति समजावी ने पछी योग्य निर्णय करवा जणाव्यु। तेओश्री नी आ रीत प्रत्ये मने घणुज मान थयू।

एक बीजो प्रसग-श्री अखिल हिंद हरिजन सेवक सघ वाला श्री अमृतलाल विट्ठलदास ठक्कर जेओने 'ठक्कर बापा' ना अति परिचित नामे ओलखीए छीए, तेओए राजकोट खाते आव्या छे-एवी पूज्य गुरुदेव ने खबर पडी। तेओ हमेशा साधु जीवन नी मर्यादा मा रहीने पोतानु जीवन गाले छे। छता देशोदय अने समाजोद्धारना कार्यो मा शुद्ध प्रवृत्ति करनाराओ तथा आत्म–भोग आपनाराओ प्रत्ये तेमना हृदय मा आदर अने सहानुभूति हता। तेओए तेमने मलवानी इच्छा व्यक्त करी, अने अमे ते बात श्री ठक्करबापा ने करी। ते ओ राजी थया अने अतिव्यवसायी अने पोताना कार्यक्रम ने अति चुस्तपणे वलगी रहेनारा तरीके तेमने वधा ओलखे छे। तेओ समय नो योग्य प्रवन्ध करी महाराज श्री ना दर्शने जेन उपाश्रय मा आव्या।

महाराज श्रीए तेओ ने उद्देशी ने कह्यु के ''अमारा श्रावक समुदायना थोडा आगेवानो आ प्रसगे अही हाजर छे। तो आप हरिजनो, भीलो विगेरे पछात कोमोनी वच्चे जे काम करो छो ते विषे अने तमारा

अनुभव विषे बे शव्दो कहो''। श्री ठक्कर वापाए अति नम्रता भावे जणाव्यु के ''महाराजश्री। हूँ तो आपना दर्शने आव्यो छु। आप अमने काईक वाणी सभलावो''। परन्तु पूज्य महाराज श्री ना आग्रह थी तेओ थोडु वोल्या अने पछी महाराज श्री ए हरिवल मच्छीमार, मेतारज मुनि वगेरे नु जीवन प्रथम केटलु पतित हतु ? पछी तेमनो केवी रीते उद्धार थयो ? ते वधु सविस्तर समजाव्यु। जेन साधुओए भूतकाल मा पतितोनी केवी रीते सेवा करी छे, तेना दृष्टान्तो आप्या। जेन शास्त्र मा 'अस्पृश्यता' विषयनु मन्तव्य शु छे, ते पण स्पष्ट शव्दो मा कह्यु। तेओए जणाव्यु के वर्ण धर्म, ज्ञातिभेद अने अस्पृश्यता ने जेन धर्म मा स्थान नथी परन्तु काले करीने हिन्दुधर्म अने जेनधर्मनी परस्पर एक वीजाना ऊपर घणी असर थई छे, वगेरे वधु सूक्ष्मरीते समजाव्यु। ते थी अमे जोयु ठक्कर बापा ने वहु सतोष थयो हशे। अमे वहार नीकल्या त्यारे ठक्कर बापा मात्र एटलु वोलेला के ''महाराज श्री मा साम्प्रदायिकतानी सकुचितना नथी, के एवो कोई जातनो आग्रह नथी। ए जोइने मने बहु आनद थाय छे। आवा पवित्र आत्माओ समाजने घणी सेवा आपी रह्या छे।

आ बे प्रसगो उपरान्त महाराजश्री साथे मारे एकाद बे मुद्दा ऊपर चर्चा थई हती। आपणे जेनो अत्यारे जे प्रकार नी जीवदया पालीए छीए अने जे रीते जीवरक्षा करीए छीए आ सवधे ते ओ श्री नु मन्तव्य पूछयु हतु। महाराज श्री शास्त्र आज्ञाओने मान्य राखी आ मुद्दा ऊपर एटली वधी सुन्दर तलस्पर्शी मीमासा करी के सनातन अने सुधारक विचारवाला बन्नेने-तेमना मोटा भागने मान्य रही शके। बन्नेने तेओश्रीनो उपदेश ग्राह्य जणाता, तेओ श्री ए एक वस्तु बहु स्पष्ट करी अने कया भूल थाय छे ते जणाव्यु, '' साधु जीवन नी अमुक मर्यादाओ छे परन्तु ''विशेषनु विशेष फल'' एवा खयालो मा साधु जीवन नी मर्यादाओ ने श्रावक जीवन साथे मेलवी आमा थी केटलोक गोटालो वधी वस्तुस्थिति ने जोई तपासी काले काले मिश्रित थई गयेली वस्तुओ नु सम्मार्जन करवु जोईए''।

आ प्रश्न तेओ श्री सप्तनय विगेरे वधी दृष्टीए चर्च्यो हतो जेना उपर घणु लखी शकाय। परन्तु मे तो पूज्य गुरुदेवना टुका परिचयनी नोध करी छे।

पूज्य महाराज श्री सवत १९९८ ना विहार दरम्यान समढीआ थी पसार थता तेओ श्रीए 'श्रीग्राम सुधारणा समिति' नी मुलाकात लीधी हती। परन्तु ए समये हु अने मारा पत्नी विगेरे मलाया अने जावानी मुसाफरी ऊपर गया हता। ऐटले ए समये अमारी गेरहाजरी मा अमारी श्री सार्वजनिक होस्पिटल ना डॉक्टर श्री मणिलाल शाह एम वी वी एस तथा श्रीरामजी भाई विगेरेए तेमनो सत्कार कार्यों हतो अन सस्था विषेनो तेओश्री ने परिचय आप्यो हतो। महाराजश्रीए पोतानो सतोष व्यक्त कार्यो हतो अने शिष्य समुदाय साथे तेओश्रीए पछी आटकोट विहार कर्यो हतो।

पूज्य महाराज श्री काठियावाड मा ज्या-ज्या विचर्या छे त्या त्या अने जेनेतरो ऊपर तमना पवित्र जीवन नी अने उपदेस शेली, जेमा हमेशा मिष्ट, प्रिय अने हितकारी वाणी नो उपयोग थतो रह्यो हतो तेनी घणी ऊँडी असर थई छे। एम मे अनुभव्यु छे।

पृज्य महाराज श्री नो शिष्यवर्ग गुरुदेवनी उत्तम प्रणालिका ने चालु राखवा शक्तिमान थाओ एवी हार्दिक नम प्रार्थना साथे विरमु छु।

४५– अगणित–वन्दन

रायसाहेव डाक्टर लल्लूभाई सी शाह, लल्लूभाई विल्डिग, राजकोट

राजकोट चातुर्मास माटे मारवाड तरफ थी विहार करता करता पूज्य श्री चोटीला मुकामे पधार्या (राजकोट थी ३० माइल दूर) ते वखते हु मारा कुटुब साथे मोटर मा चोटीला पूज्य श्री ना दर्शनार्थे गयो। सोथी प्रथम चोटीला गामे मे तेमना दर्शन कर्या। व्याख्यान मा गाम ना प्रमाण मा माणस घणु हतु। पूज्यश्रीए व्याख्यान नो विषय पण बहु सुदर पसद कर्यो। भगवान श्री रामचन्द्र जीना जीवन मा ना केटलाक प्रसगो ऊपरनु पूज्य श्री ए घणी सारी सुदर अने सरल गुजराती भाषा मा असर कारक व्याख्यान आप्यु। (तेमनी मातृभाषा गुजराती नही होवा छता तेमनो गुजराती भाषा ऊपरनो काबू अजब हतो।) शु भगवान श्रीरामचन्द्रजी चा बीडी पीता हता ? ज्यारे तमो तेना भक्तो चा बीडीना व्यसन राखो ते केटलु शरम भरेलु कहेवाय ? आ सचोट उपदेश थी घणा लोकोए ते वखते चा तेमज बीडी नही पीवानी बाधाओ लीधेला।

आ तो चोटीला गाम पूरती प्रस्तावना करी। हवे पूज्यश्री राजकोट पधार्या। राजकोट नी जेन प्रजाए घणी मोटी सख्यामा राजकोट थी अमुक माइल सुधी सामे जइने घणो भावभीनो सतकार कर्यो। चातुर्मास दरम्यान पूज्यश्रीए श्री अनाथी मुनि नो अधिकार (सनाथ–अनाथ) घणीज सुदर, सचोट, विद्वत्ताभरी अने साभलनारी प्रखदा ने असर करे अने छाप पाडी शके तेवी सादी-सीधी अने सरल गुजराती भाषा मा आवो अधिकार समझावेलो ते भूली शकाय तेम नथी (पुस्तक रूपे सनाथ अनाथ निर्णय प्रकट थयो छे)। सार्वजनिक उपदेश खातर हर रविवारे तेमना व्याख्यानो जुदा जुदा विषय ऊपर राखवामा आव्या हता, जे साभलवा माटे जेनेतर वर्ग मोटी सख्या मा आवतो अने लाभ मेलवतो। आ व्याख्यानोनु जुदु पुस्तक श्री महावीर जेन ज्ञानोदय सोसाइटीए 'श्री जवाहर ज्योति' ना नाम थी प्रकट करेल छे। उपरान्त तेमना हमेश ना व्याख्यानो पण पुस्तक रूपे 'श्री जवाहर व्याख्यान सग्रह' भा १/२ श्री महावीर जेन ज्ञानोदय सोसाइटीए प्रगट करेल छे।

व्याख्यानमा प्रखदा घणीज मोटी सख्यामा भराती। अने व्याख्यान शैली एवी सुदर हती के साभल्याज करवानु मन थाय। तेमनी व्याख्याननी शरूआत प्रार्थना थी थती। प्रार्थना मा श्री चौबीस तीर्थंकर प्रभुनी सरनि राखवा मा आवी हती। प्रार्थना वखते वधा सतो साथे गाता गाता पूज्य श्री एक तार थई जता। व्याख्यान पूरू थवाना पहेला थोडो टाइम श्रीसुदर्शन चरित्र नो अधिकार समझावता, जेनु पण काव्य-रूप मा 'श्री सुदर्शन चरित्र' नाम थी पुस्तक प्रगट थयेल छे।

पूज्य श्री नो अभ्यास एकलो जेन धर्मना सूत्रो पूरतो न होतो। श्री गीताजीना दरेक अध्ययन तेमने कठस्थ हता। व्याख्यान मा गीताजी ना श्लोको तथा वेद, कुरान तेमज वाइविल मा थी पण समय अनुसार दृष्टातो आपता। ते थी पूज्यश्री ने जेनधर्म उपरान्त बीजा धार्मिक ग्रथो नो अभ्यास घणो सारो होवो जोइए, एम श्रोताओ ने लाग्या विना रहे नही।

एक अति महत्व नो प्रसग ए हतो के ज्यारे अत्रे सत्याग्रह नी चलवल चालती हती अने अशान्तिनु वातावरण हतु ते प्रसगे पूज्य श्री फकत शेष काल माटे श्री वाकानेर थी (राजकोट थी ३० माइल) राजकोट नी जेन जनता ना खास आग्रह थी अत्रे पधारेला। ते प्रसगे तेमने विचार आव्यो के जो एक अठवाडीआ सुधी श्री शान्तिनाथ प्रभु नो जाप अखड रात अने दिवस सतत चालू रहे तो जरूर राजकोट

मा शान्ति थाय। तेमनी इच्छा ने मान आपीने श्री शान्तिनाथ प्रभु नो जाप अखड रात अने दिवस आठ दिवस सुधी चालू राख्यो हतो। अने आश्चर्य साथे राजकोट नी लडत नु समाधान थयु अने शान्ति थइ जवाथी तेओ श्री ना श्रद्धापूर्वक ना कथन माटे अमो तेमना ऋणी छीए।

मारा ऊपर तेमनो घणोज उपकार छे। मारी मादगी वखते पूज्यश्री सीडी ऊपर चडी शकता न होता छता मने सगलीक सभलाववा माटे पूज्य श्री वारवार मारा घरे पधारता। मगलीक तथा आत्मिक औषध रूपी धार्मिक उपदेश थी मने अत्यन्त शाता उपजती अने मारू मादगीनु दर्द मुलाई जतु ते खातर हु तेम नो सदानो ऋणी छु।

आवा सत महात्माओ ना पगला थी अने तेमनी सुवाणी अने सु उपदेश थी जेनधर्म नो वावरो फरकी रह्यो छे।

एक छेल्लो हमणा नोज प्रसग। पूज्यश्री नी भीनासर (वीकानेर) गामे थी घणी सखत मादगी ना समाचार अत्रे आव्या। मारे डाक्टरो नी मीटीग ने अगे ते अरसा मा दील्ही जवानु हतु। दील्ही जवानो तारीख मोडी हती। छता पण पूज्य श्री नी मादगी साभली ने हु तुरत अत्रे थी बीकानेर गयो। ते वखत तेमनी सेवा करवानो जे लाभ मने मल्यो ते माटे हु मारी जात ने घणी भाग्यशाली मानु छु। तेमनी मादगी घणीज भयकर हती अने तेमने दर्द पण घणु असह्य हतु, छता तेमनी शान्ति अने समभाव आश्चर्य पमाडे तेवा हता। दील्ही थी मारे वनारस (मारा दीकरानी त्या वनारसी कापड नी दुकान छे) जवानो विचार हतो, परन्तु पूज्य श्री नी मादगी नी स्थिति चिताजनक हती जे थी मीटीग नु काम पूरू थये हु तरतज पाछो वीकानेर गयो। पूज्य श्री नी तबीयत सुधारा ऊपर जोई, अने तेम नी सेवानो विशेष लाभ मल्यो।

ते वखते त्याना श्रीमान् सेठ चम्पालाल जी वाठिया, स्व सेठ श्री अमृतलाल रायचन्द झवेरी ना पत्नी ग स्व बेन केसरवाई नी तथा अन्य गृहस्थो नी तथा त्या ना डॉक्टर श्री अविनाश जेओ पूज्यश्रीनी सारवार करता हता ते वधानी सेवा जोइने मने घणोज आनन्द थयो। पूज्यश्री पासे तेओ वधा उभे पासे हाजर रहेता हता।

श्रीमान् सेठ चम्पालाल जी बाठिया ना समागम मा हु पहेल वहेला आ प्रसगे आव्यो। मारा भीनासर पहोच्या पछीना बीजेज दिवसे पूज्य श्री नी मादगी छणीज भयकर अने अति वेदना वाली हती। तेनु आ दु ख जोइने श्रीमान् सेठ चपालाल जी वाठीयाए मने जणाव्यु के पूज्यश्री ने कोईपण रीते वहला आराम थाय अने जेम वने तेम दर्द ताकीदे ओछु करी शकाय तेम तमो ने लागतु होय अने ते माटे कोइ पण मुबई ना मोटा डॉक्टर ने वोलाववानी जरूर लागती होय तो गमे त खर्च ना भोगे तमो वोलावी शको छो। आ साभली ने पूज्य श्री तरफ नी तेमनी आवी महान् भक्ति जोई मने घणोज हर्ष थयो। श्रीमान् सेठ चपालाल जी वाठिया नी पूज्य श्री प्रत्येनी केटली वधी अजव भक्ति छे तेनो वाचनारने आ ऊपर थी खयाल आवशे। वे दिवस तबीयत तपास्या वाद तबीयत मा सारो सुधारो जोवा थी वहारगाम थी डॉक्टर ने वोलाववा नी जरूर मने लागी नहीं।

राजकोट थी ज्यारे पूज्यश्री विहार कर्यो त्यारे शहेर नी बाहर वीदाई-वाणी साभलता श्रोताओ नी चक्षुओ अश्रु भीनी थएली, एवु मानीने के हवे आ सत महात्मा नी अमृत वाणी ना प्रसादी राजकोट मा मलवानी नथी। पूज्यश्री वधा सतो साथे आगल अने आगल विहार करता रह्या अने तेमना पवित्र चरणरज नी प्रसादी पामता उदास भावे प्रखदा वीखरवा लागी।

आवा सत महात्मा ने मारा अगणित वदन हो।

४६— दो-पत्र

प्रसिद्ध देशभक्त श्रीमान् सेठ पूनमचन्द जी राका

वेलोर जेल १४-१०-४२

जवाहर ज्योति नाम की पुस्तक इस बार जेल मे पढने का अनायास ही मोका मिल गया। मघा की कथा मे सारा निचोड आगया। आप की राष्ट्रवृत्ति विद्वत्ता त्याग आदि से परिचित हूँ। इसी भावना से आप की याद वनी रहती हे। मैने अनेक सतो के दर्शन किये। राष्ट्रवृत्ति मे आप की रुचि विशेष देखी। ऋषि सपदाय के मुनिश्री मोहन ऋषि जी की वृत्ति भी ठीक देखी। भगवान् महावीर के तत्त्वो के प्रचार तथा आचार का यही समय हे। अहिंसा, सत्य का ससार पर असर होकर रहेगा पर उस के लिए त्याग आदि भी जरूरी हे। गतवर्ष नागपुर जेल में स्व से जमनालालजी बजाज आदि साथ थे। वे आप से जलगाव मे मिले थे। एक दिन आप के सबन्ध मे हम दोनों की बात हुई कि कभी मौका मिला तो दर्शन करने चलेगे। ऐसा सोचा गया पर उनकी इच्छा सफल नही हुई। एक दिन आगे पीछे सभी को इसी रास्ते पर जाना हे। कृपा रखे। प्रत्यक्ष मे मैने आप की सेवा की नही और भविष्य मे भी होगी नही। यह होते हुए भी परस्पर का प्रेम अत तक रहेगा। दोनो का मार्ग एक ही है।

पूज्यश्री को राष्ट्र के दृष्टिकोण से देखा और समझा। मेने उनको जो कुछ समझा वह ठीक है या नही, इसलिए महात्मा भगवान्दीन जी तथा स्व सेठ जमनालालजी बजाज को पूज्यश्री से मिलाया। हम तीनो का एक मत रहा। वह इस स्थल (जेल) मे लिखने मे उपयोगी नही होगा। पूज्यश्री ने अपने जीवन का सदुपयोग ही किया पर शिष्य और श्रावको मे उन से उपयोग लेने वाले नही निकले। वर्तमान परिस्थिति भगवान् का मार्ग दीपाने की है पर पूज्य श्री का २-३ वर्ष से शारीरिक रोग से लाचार हो जाने से विशेष उपयोग न होना स्वाभाविक हे। फिर भी पूज्यश्री को ऐसे समय मे भक्तो की तो क्या, शिष्य गणो को प्रेरणा करके उन की परीक्षा ले लेनी चाहिए। २-३ भी मिल जाएगे तो पूज्यश्री की आयु, त्याग, तपश्चर्या का उपयोग हो जाएगा। पूज्यश्री का भी यह अतिम समय है। जो कुछ सचय किया हे वह भगवान् के अहिंसा, सत्य मे होम दे। उस का उनके पीछे समाज को कुछ भी तो उपयोग होगा।

४७—पूज्यश्री संवंधी मेरे संस्मरण

(ले धर्मभूषण, दानवीर सेठ भैरोदानजी सेठिया, वीकानेर)

श्रीमज्जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज के प्रति मेरी जो सहज स्वाभाविक श्रद्धा सदा से रही हे ओर उनके उच्च आचार विचारो से प्रभावित होने के कारण जो उत्तरोत्तर वृद्धि गत होती रही हे उसी की प्रेरणा ने मुझे यहाँ अपने मनोभाव सक्षेप मे व्यक्त करने को प्रेरित किया हे। उनके जीवन की मीमासा, आलोचना, अथवा विश्लेषण करने की मेरी स्थिति नही हे। यह कार्य तो विद्वद्वरो की लेखनी से ही सुसपन्न होता हे। एक पूज्य आचार्य के प्रति एक श्रद्धालु श्रावक की दृष्टि से ही मेंने उन्हे देखा हे ओर उसके वाद तटस्थ होकर जव तब उस पर विचार किया हे, उसी का साराश मे यहा दे रहा हूँ।

पूज्यश्री का मेरा सम्पर्क वहुत पुराना हे। युवा तपस्वी की उग्र तेजस्विता मेने उनके चेहरे पर देखी थी, वही धीरे-धीरे सोम्य, स्निग्ध शाति मे केसे परिवर्तित हो गई ? यह मे जव आज सोचता हूँ

तो हृदय पुलकित हो उठता है। मुझे लगता है कि उन्होने जीवन के इस परम सत्य को किस अच्छी तरह अवगत कर लिया था कि मानव जीवन कुशा की नोक पर रखी हुई ओस की उस बूद की तरह है जो क्षण भर मे अपने अस्तित्व से रहित हो जायेगी। इसीलिए काया के मोह को उन्होने छोड दिया था। असह्य वेदना को कितनी दृढता और कितने धैर्य के साथ उन्होने सहन किया था! इस बीच मुझे जब जब उनके दर्शनो का सुअवसर मिला था, मैने कभी उनके मुख पर व्यथा या वेदना के चिह्न नही देखे, उनकी जिह्वा से कभी सिसकना नही सुना। हम आप सब को विदित है कि Carbuncle (जहरी फोड़ा) मे केसी असह्य वेदना मनुष्य को होती है। उसकी यत्रणा के साथ वडे-वडे धैर्यशालियो का धैर्य छूट जाता है। वे छट-पटाते हुए देखे जाते है। पर पूज्यश्री ने जेसे उस वेदना पर विजय प्राप्त कर ली हो, इस प्रकार परम शाति से उसकी घोर पीडा को समभावपूर्वक सहन किया। मेने ही क्या, किसी ने भी उनके मुँह से उफ् तक न सुनी। शायद वे इस आस्था से सदा वलवान् रहे कि वेदना से जीव कभी अजीव नही हो सकता। कर्मों के ऋण को चुकाने पर ही जीव मुक्ति पा सकता है।

अपने जीवन के अंतिम समय मे बीकानेर व भीनासर मे पूज्यश्री ने लगभग तीन वर्ष तक स्थिर वास किया था। इस बीच वे कुछ दिन पारखजी की बगीची मे, कुछ दिन डागाजी की बगीची मे, कुछ दिन ऊन प्रेस मे और फिर वाद मे अन्त समय तक भीनासर मे थे। मुझे इस बीच अनेक बार आपके दर्शनो का सोभाग्य प्राप्त हुआ था। आपके व्यक्तित्व मे जो विशेष प्रकार का आकर्षण था उससे लोग सहज ही आपकी ओर खिचते थे। आपके चेहरे पर महर्षियो का शीतल, सोम्य तेज इस काल मे मैने सदा विराजमान देखा। उसी प्रकार आपकी वाणी मे अपूर्व सयम और विशुद्ध निर्मल भावना का प्रसार पाया। ऐसा प्रतीत होता था कि मन, वचन और काया के अन्तरबाह्य दोनो को उन्होने परिशुद्ध कर लिया है। ऐसी परिशुद्धि जीवन मे तभी सम्भव हो सकती हे जब तपश्चर्या और साधना की चरम प्राप्ति के कठोर और कष्टकर मार्ग पर चल कर उसकी मजिल पूरी कर ली गई हो एव कषायो पर विजय प्राप्त कर ली गई हो। ऐसा सुयोग और सद्भाव वडे-बडे महात्माओ और योगनिष्ठ भाग्यशालियो को ही प्राप्त होता है। मनोभावो और परिणामो की अत्यन्त निर्मलता बिना कोन इसे पा सका है? मुझे यह देख कर सदा ही सतोष हुआ कि चतुर्विध सघ के शीर्ष पर विराजमान हमारे धर्माचार्यश्री मे वही देवोपम ज्योति झलमला रही थी। जिस आदर्श की स्थापना के लिए वे पूज्य पद पर आरूढ हुए थे, जिनवरो के उस आदर्श को उन्होने चरितार्थ करके दिखा दिया था। समाज की आत्मा ने उसे अवश्य ही ग्रहण किया होगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

पूज्यश्री ने साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका रूप चतुर्विध सघ से जिन शब्दो मे क्षमा-याचना एव क्षमादान किया था वे बार-बार याद करने योग्य है। आपने फरमाया था -

' मेरा शरीर दिन-प्रतिदिन क्षीण होता जा रहा है। जीवन शक्ति उत्तरोत्तर घट रही है, इस बात का कोई भरोसा नही कि इस भौतिक शरीर को छोड कर प्राणपखेरू कब उड जाये? ऐसी दशा मे जब तक ज्ञानशक्ति है, भले-बुरे की पहचान है तब तक ससार के सभी प्राणियो से तथा विशेषतया चतुर्विध श्रीसघ से क्षमायाचना करके शुद्ध हो लेना चाहता हूँ, मेरी आप सभी से विनम्र प्रार्थना है कि आप भी शुद्ध हृदय से मुझे क्षमा प्रदान करे। इसी तरह जो मेरे द्वारा क्षमा पाने के उत्सुक है उन्हे मै भी अन्तःकरणपूर्वक क्षमा प्रदान करता हूँ। मैने अपनी आत्मा को स्वच्छ एव निर्वैर बना लिया है।'

यह केवल कथन मात्र नही था। जिन्होने अन्तिम समय मे उनके दर्शन किये है उन्हे इस बात का अनुभव होगा कि ये शब्द उनकी आत्मा के अन्तरतम प्रदेश से निकले हुए स्वाभाविक उद्‌गार थे। ससार के व्यवहार के प्रति उन्हे समदृष्टि रखने की अवस्था प्राप्त हो गई थी। जीवन-व्यापी साधना की परम सिद्धि पर उन्होने अधिकार कर लिया था। यदि ऐसा न होता तो क्या उनके चेहरे पर वह परम शान्ति रह पाती जिसका अखण्ड साम्राज्य अन्त समय तक अक्षुण्ण रहा। उन्होने इसी समाधि की अवस्था मे वेर-विरोध यशकीर्ति, रागद्वेष सब से तटस्थ होकर पण्डितमरण पूर्वक शान्ति की अमर गोद मे शयन किया। उनका सारा जीवन ही इस परिणाम की प्राप्ति मे निरत रहा। बीच-बीच मे जो कई ऐसे स्थल आये हो जहाँ शासन के उत्तरदायित्व के लिए या सत्य की स्थापना के लिए उन्हे कठोर होना पडा हो, ये उनके द्वारा प्रस्तुत आदर्शो मे मुख्य नही हो सकते, क्योकि आखिर उन्होने ऐसे प्रसङ्गो के लिए भी क्षमायाचना कर ली थी, उनके प्रति किसी तरह का आग्रह नही दिखाया था प्रत्युत अपनी आत्मा को निर्वेर बना कर समस्त प्राणियो के साथ मेत्री भाव स्थापित किया था। किसी के साथ किसी प्रकार के वेर-विरोध को शेष नही रखा था। तब आज उनके जीवन से आलोक की किरणे बटोरते समय हमे क्या अधिकार है कि हम उन्हे स्थान दे ? हमारे लिए क्यो न उनके चारित्र का वही परमोज्ज्वल शात और सयत रूप पथप्रदर्शन का काम करे- वही जो उनके महिमाशाली जीवन का सार तत्त्व था।

४८— पूज्यश्री का हृदयस्पर्शी उपदेश

श्रीयुत प शोभाचन्द्रजी भारिल्ल, ब्यावर

जीवन को ऊचा उठाने के लिए प्रवृत्ति और निवृत्ति रूप दो पखो की आवश्यकता है। जिस पखी का एक पख उखड जायेगा वह अगर अनन्त और असीम आकाश मे विचरण करने की इच्छा करेगा तो परिणाम एक ही होगा-अध पतन। यही बात जीवन के सबध मे है। जीवन मे एकान्त निवृत्ति निरी अकर्मण्यता हे ओर एकात प्रवृत्ति चित्त की चपलता है। इसीलिए ज्ञानी पुरुषो ने कहा है-

असुहादो विणिवित्ती सुहे पवित्ती य जाण चारित्त॥

अर्थात्- अशुभ से निवृत होना और शुभ मे प्रवृत्ति करना ही सम्यक्‌चारित्र समझना चाहिए। और चारित्र ही धर्म है इसलिए इस कथन को सामने रखकर विचार करने से स्पष्ट हो जाता है कि धर्म प्रवृत्ति ओर निवृत्तिरूप हे। 'अहिंसा' निवृत्ति भेद है पर उसकी साधना विश्वमैत्री और 'समभावना' को जागृत करने रूप प्रवृत्ति से होती हे। इसी से अहिंसा व्यवहार्य बनती है। किन्तु हमे प्राय जीवघात न करना सिखाया जाता हे पर जीवघात न करके उसके वदले करना क्या चाहिये ? इस उपदेश की ओर उपेक्षा वताई जाती हे।

आचार्यश्री जवाहरलालजी महाराज के उपदेशो ने इस त्रुटि को पूर्ण किया था। उन्होने धर्म को व्यवहार्य, सर्वांगीण ओर प्रवर्त्तक-रूप देने की सफल चेष्टा की थी। अपने प्रभावशाली प्रवचनो द्वारा उन्होने शास्त्रो का जो नवनीत जनता के समक्ष रखा, निस्सदेह उसमे सजीवनी शक्ति है। उनके विचारो की उदारता ऐसी ही थी जेसे एक मार्मिक विद्वान जेनाचार्य की होनी चाहिये।

आचार्यश्री की वाणी मे युगदर्शन की छाप थी। समाज मे फेले हुए धर्म सबधी अनेक मिथ्या विचारो का निराकरण था। फिर भी वे प्रमाणाभूत शास्त्रो से इच मात्र भी इधर-उधर नही होते थे।

उनमे समन्वय करने की अद्भुत क्षमता थी। वे प्रत्येक शब्दावली की आत्मा को पकडते थे और इतन गहरे जाकर चिन्तन करते थे कि वहा गीता और जैनागम एकमेक से मालूम होने लगते थ।

गृहस्थ जीवन को अत्यन्त विकृत देखकर कभी-कभी आचार्यश्री तिलमिला उठते थे और कहत थे-'मित्रो! जी चाहता है, लज्जा का पर्दा फाडकर सब बाते साफ-साफ कह दूँ। नैतिक जीवन की विशुद्धि हुए बिना धार्मिक जीवन का गठन नही हो सकता, पर लोग नीति की नही, धर्म की ही बात सुनना चाहते है, आचार्य श्री उन्हे साफ-साफ कहते थे- ''लाचारी है मित्रो! नीति की बात तुम्हे सुननी होगी। इसके बिना धर्म की साधना नही हो सकती''। और वे नीति पर इतना ही भार देते थे जितना धर्म पर।

आचार्य के प्रवचन ध्यानपूर्वक पढने पर विद्वान् पाठक यह स्वीकार किये बिना नही रह सकने कि व्यवहार्य धर्म की ऐसी सुन्दर, उदार और सगत व्याख्या करने वाले प्रतिभाशाली व्यक्ति अत्यन्त विरल होते है। आचार्यश्री अपने व्याख्येय विषय को प्रभावशाली बनाने के लिए और कभी-कभी गूढ विषय को सुगम बनाने के लिए कथा का आश्रय लेते थे। कथा कहने की उनकी शैली निराली थी। साधारण से साधारण कथानक मे वे जान डाल देते थे। उसमे जादू-सा चमत्कार आ जाता था। उन्होने अपनी सुन्दरतर शैली, प्रतिभामयी भावुकता एव विशाल अनुभव की सहायता से कितने ही कथा-पात्रो को भाग्यवान् बना दिया है। वे प्राय पुराणो और इतिहास मे वर्णित कथाओ का ही प्रवचन करते थे पर अनेक बार सुनी हुई कथा भी उनके मुख से एकदम मौलिक और अश्रुतपूर्व-सी जान पडती थी।

आचार्यश्री के उपदेश की गहराई और प्रभावोत्पादकता का प्रधान कारण था- उनके आचरण की उच्चता। वे उच्च श्रेणी के आचारनिष्ठ महात्मा थे।

आचार्यश्री के प्रवचनो का उद्देश्य न तो अपना वक्तृत्व कौशल प्रकट करना था और न विद्वता का प्रदर्शन करना ही, यद्यपि उनके प्रवचनो से उक्त दोनो विशेषताए स्वत झलकती है। श्रोताओ के जीवन को धार्मिक एव नैतिक दृष्टि से ऊचा उठाना ही उनके प्रवचनो का उद्देश्य था। यही कारण है कि वे बार-बार उन बातो पर प्रकाश डालते हुए नजर आते थे जो जीवन की नीव के समान है। इतना ही नही, उनके एक ही प्रवचन मे अनेक जीवनोपयोगी विषयो पर भी प्रकाश पडता था। उनका यह कार्य उस शिक्षक के समान था जो अबोध बालक को एक ही पाठ का कई बार अभ्यास कराकर ऊँचे दर्जे के लिए तैयार करता है।

४९—गुरुदेव!

(श्री बालेश्वरदयालजी, सस्थापक एव सचालक, डूगरपुर विद्यापीठ)

मै तुलसीदास नही जो अपने राम के प्रति श्रद्धा प्रकट कर सकूँ, अर्जुन जितनी प्रतिभा नही जो योगिराज कृष्ण का शिष्य कहला सकूँ, स्वर्गीय महादेव भाइ की भाति शान्त एव क्रियाशील भी नही, जिन्होने अपने चरित्र नायक गाधी की जीवन सफलता के लिए अपनी अपनी श्रद्धा और भाव की भेट चढा दी, मै गुरुदत्त विद्यार्थी भी नही जिसने स्वामी दयानन्द के जीवन को अपने हृदय पर अकित कर लिया, बडी देर यही विचारमन्थन रहा कि क्या मै इतना योग्य हूँ कि पूज्यश्री के जीवन के प्रति यथार्थ श्रद्धाभाव का परिचय दे सकूँ। अन्त को चचल मन ने इस विचार-विनिमय पर विजय पाई।

पूज्यश्री के दर्शन के अवसर मुझे बहुत कम मिले है, मे जब-जब उनकी सेवा मे उपस्थित हुआ मुझे वे एक ही आशय का प्रश्न पूछते-कहिये भीलो की क्या हालत हे? इस वर्ष उनकी फसल कैसी हे? प्रश्न एकसा ही होता परन्तु उत्तर में मुझे सदेव नवीनता का अनुभव होता, ठीक उसी भांति जैसे कि सूर्य पति दिन एक-सा ही उगता हे, परन्तु प्रत्येक दूसरे दिन उसमे नवीन स्फूर्ति, नव्य जीवन एव नया ही सदेश रहता हे।

मेरे कल्पित किले के नायक! भीलो के आतरिक जीवन के प्रति आपकी इतनी लागणी देखकर हे गुरुदेव! कभी-कभी मुझे ऐसा पतीत होता है कि यदि सयोगवश इस महाविभूति की शक्ति कोई भील-सेवा की दिशा मे प्रयुक्त कर देता तो अधोगति की इस मोजूदा अवस्था मे भील जनता न दिखाई देती प्रत्युत लाखो भीलो का यह इलाका रचनात्मक सेवा का एक आदर्श उपस्थित करता, जो भारत के अन्य प्रान्तो के सेवकों के कष्टसहन और त्याग मे पथ प्रदर्शन का काम देता।

कल्पना बडी सुन्दर ओर सुखद हे कि पूज्यश्री इस सेवा क्षेत्र के आचार्य होते ओर लेखक उनकी उद्देश्यपूर्ति में एक छोटे-से सेवक का स्थान सम्हालता। विदेश की कलुषित सभ्यता के जो काटे आज सरल ओर सौम्य भावपूर्ण देहाती भील जनता मे घर कर गये हे वे न होते ओर होता एक प्राचीन समाज का अर्वाचीन चित्र जिसे देख हिन्दुस्थान तो क्या बिजली की चकाचोध वाला जगत चकित हो उठता। परन्तु ऐसा होता केसे!!! आपको तो लाखो ही नही वरन् कोटि-कोटि जनता मे वीर वाणी का सुरसरि-स्रोत बहाना था।

करोडो के उद्धारक को लाखो मे सीमित कर रखने की मेरी कल्पना कोरी विचार कृपणता ही सही परन्तु भाव भीनी होने से क्षम्य है।

गरीब की गुदड़ी के लाल

नारकी जीवनलीला के क्षेत्र मे नर ककाल और भूखे नगे भीलो के डूगरो (पर्वतो) मे कही कोई जवाहर भी हाथ लग जायेगा। यह किसे कल्पना थी?

अज्ञान-तिमिर मे चलने वाली डूगर प्रदेश की जनता ने "अन्धे के हाथ बटेर" की भाति जवाहर की ज्योति पाई। इस अलोकिक देन के लिये मे प्रकृति और परमात्मा का आभारी हूँ। महान आत्माए धनवानो के महलों मे भी जन्म ले सकती हे ओर गरीबो की झोपडियो मे भी। इस बात की एक नई पुष्टि आपके गोरवशाली जन्म से मिलती हे। प्राय निर्धनता ओर तपस्या का वातावरण ऐसे महापुरूषो के शुभागमन के लिये अधिक अनुकूल होता हे। आपका एक साधारण कुल मे पैदा होना इन सब बातो का एक ज्वलन्त उदाहरण हे।

क्रान्तिकारी धर्मगरू

महापुरुषो के अस्त्र-शस्त्र तथा प्रयोग भी भिन्न-भिन्न होते हे। कोई तीर, तलवार, बन्दूक और तोपो की विध्वसक गर्जना से विरोधियो के गर्व को चूर करता है, तो कोई क्षमा का चोगा पहन साधु रूप मे अपनी विवेकपूर्ण वाणी ओर लेखनी से सिह-गर्जना करता हे, कोई सशस्त्र क्रान्ति करता हे तो कोई शास्त्र-सगत क्रान्ति कर प्रेमावतार बन जाता हे ओर शत्रुओ को शिष्य बनाता हे। अहकार, अनीति, वृथाडम्बर ओर पाखण्ड के वातावरण मे पली भ्रष्टोन्मुख कपि-सन्तति को आपने धर्म

की मूल वातो का वास्तविक अर्थ दिया, आपके भाषणो पर से लिखी गई अनेक पुस्तको मे से धर्मव्याख्या एक छोटी-सी पुस्तक भी जेनधर्म की व्यापकता को निर्विवाद वनाने के लिये पर्याप्त हे।

भारत के विविध स्थानो मे पूर्व से पश्चिम ओर उत्तर से दक्षिण तक घूम फिर कर कुमार्ग गामिया को प्रबल तर्क, अद्भुत् युक्तियो से परास्त कर गम्भीर विचार-पूर्ण कई ग्रन्थो की रचना की। आस्तिकता, दया और सुधार का नया स्रोत बहाया।

गीता के गायक गुरुदेव!

प्राचीन ऋषियो की भाति जब आप गीता के गुह्य उपदेशो की व्याख्या करने बेठते हे तो एक ही वाणी से अवस्थानुकूल भिन्न-भिन्न अर्थों की सृष्टि होने लगती है, वयोवृद्ध उसे निवृत्ति का उपदेश मान सन्तुष्ट दिखाई देता हे ओर युवा हृदय उसी उपदेश को प्रवृत्ति मार्ग का प्रेरक मान कर्मवीर की भाति तरगो मे वहता हुआ नव-चेतन्य प्राप्त करता हे। यह केवल अनुभवगम्य हे जिनका आनन्द केवल उन्ही को मिला हे जिन्होने गुरुवाणी का लाभ लिया हो।

हे विशालवुद्धि तपस्वी, दार्शनिक गुरुदेव! आपको मेरा त्रिकाल वन्दन!

५०—आचार्य श्री जवाहरलालजी के कुछ संस्मरण

(श्री मणिलाल सी पारेख, राजकोट)

Some Years ago when Acharya Shri Jawaharlalji Maharaj was here, I had the opportunity to hear a few of his sermons and I must say that I was deeply impressed by them I found in these sermons a quality which is not often present in the (व्याख्यान) vyakhyans as they are called by the Jains It was not the matter so much as the manner in which Acharya Shri presented whatever he had to say that constituted the charm and the attraction of his sermons These came not from his intellect but from his heart which was full of sympathy and love for the congregation Not that the matter was not very important and of a high quality, but the manner was of the essence thereof He speaks from a deep experience of religious life and because of this he created an atmosphere which was very helpful to his hearers

The most important part of his sermons lay in the fact that he began them with prayers and a short sermon on the meaning of these prayers and the place of prayerfulness in life This put his lectures on a different level altogether, making them sermons in the true sense of the term From my boybood I have heard a number of Jain SadEus giving their (व्याख्यान) Vyakhyanas, but I have never known any who gave such prominence to prayer This puts a new spirit in the sermon proper that Shri Jawaharlalji gives The atmosphere is surcharged with devotion and the congregation is decidedly better prepared to receive the teaching given in the (व्याख्यान) Vyakhyana proper

As for the (व्याख्यान) Vyakhyana, it was always full of sound moral and religious teaching This was, however of a practical kind and speculation had a small place in it

So far I have said something about the matter and the manner of the sermons of Acharya Shri Jawaharlalji These I noticed when I saw him first But there is something more which I must mention here I came to know the Maharajshri personaly better when he came to the Rajkot civil station after some months stay in the city proper I had two intimate talks with him about things concerning spiritual life and it was these which revealed to me that he is true Sadhu We talked about the way in which peace could be obtained and when I told him what my personal experience was in regard to this matter, he agreed with me and told me that he too had the same experience To be more explicit I told him to start with that since I believed in God the secret of religious life lay in being smaller and smaller, less and less and that it was this alone which gave real peace to me He replied to this by saying that he himself had found this to be true in his own case that it was only when he thought of himself, not as a big person or a great Sadhu or a leader or a Guru, but as an ordinary man, one among the others, that he had peace of mind He aded that when he ceased to think in this way, the disturbance in mind began My feeling is that he said this last in reference to his position as one of the most important leaders of the Jain Sadhus

Whatever this be, I found in the course of these too short but extremly intime personal talks that he is a true Sadhu and when I say this I am paying him a great tribute I found in him the most important qualities, according to my own idea of the Sadhu life viz Simplicity of soul, humility of heart and sincerity He has certainly the qualities usually expected in a Jain Sadhu, but the ones mentioned above are the basic qualities and also the crown and fulfilment of the ordinary virtues of Sadhu life It is these which prevent a man and much more a Sadhu from becoming a prey to pride, which is always ready to attack and take possession of those who would follow the higher path Pride, especially in its subtler form is the greatest enemy of those who are apt to think themselves as Sadhu, and as such superior to laymen or the Shrawaks, and it is still more so of those who attain to a high position among the Sadhus Both in the East and the West, a number of Saints have said that it is easy to renounce the world, both (कचन ओर कामिनी) the Kanchan and Kamini, wealth and woman, but that the hardest thing to renounce is pride Because of this one must have true humility in one s heart and the roots of this must go deep into one's

soul I am glad to say that I found something of this humility in Acharya Shri Jawaharlalji and it was this which evoked true love and respect for him in my heart I have seen a number of deeply religiousmen and women of various comunities such as the Jains, the Brahmans, the Christians, the Hindus etc , etc and I place Shri Jawaharlalji among the very few who have impressed me the most for their truly Sadhu life

This is what it should be, especially in a congregation numbering hundreds of people and containing all sorts of men and women and even boys and girls In such congregations the teaching should be such as sustains the interest of all throughout, a matter in which Shri Jawaharlalji Mharaj's sermons never failed The teaching was full of illustrations of all kinds drawn from jain scriptures and other books and also from the scriptures of other religiouns and even from ordinary life From the way in which shri Jawaharlalji Maharaj dealt with various subjects, it seemed to me that he is not only extremely tolearant towards all religions but has a positive, friendly and reverent attitude towards them This too is but proper and it adds to his spiritual stature While drinking deeply from the fountains of Jain Scriptures, he has drawn much inspiration from such gret scriptures as the Gita, the Upanishads and the Bhagvata Even the Bible and the Kuran are not alien to him and he is ready to receive inspiration from them In this also I fould him a class by hemself among the jain Sadhus, especially when we look to his age and early surroundings His power of impressing the congregation also lay in the fact that he is fully alive to what is going on in the world to-day, in his close acquaintance with our prresent political, economic and social problems He knows the besetting temptations and the sins of our people to-day and has sound advice to give as to how we should avoid these All this makes his sermons truly vital

In addition to this, I found in these sermons as orginal quality which I have noticed in few jain preachers This Comes from shree Jawaharlalji's deep thinking on various subjects and from talents which he has been endowed with from his birth There is a touch of poetry in this originality which also must be mentioned Had he thought it proper to devote himself to leterary work, I am sure he could have earned a good name for himself in the literary world But he has wisely chosen to be a Sadhu and his occupation is certainly higher than that of a literary man

The qualities mentioned above have with them another which may be partly the cause and partly the effect thereof This is no other

than what is called child-likeness one of the greatest qualities a human being can have When some children were brought to Jesus christ by their mothers to be blest by him his disciples would not allow them to come near him, thinking that thereby his dignity would suffer Seeing this he said to the disciples Let them come for such is the Kingdom of heaven made The innocence, the sense of wonder the teachableness etc are the qualities of children and I found in Maharaj Shri Jawaharlalji some of these He is alive to the fact that Knowledge is infinite and that it can be had in all directions, provided one does not close the doors of one s soul bu stupid bigotry I found in him this openness of soul, this readiness to learn and appreciate other people's points of view and even to assimilate whatever may be good in them

I had a concrete proof of this not only in my talks with him but in the following incident, which is indeed remarkable I presented him two small books of mine before leaving him finally, one of these was (जीवन-वेद) Jeewan Veda by the great Bengali religious teacher Brahmarshi Keshub Chander Sen It is a kind of his autobiography and is in many ways a most remarkable production After leaving this book with him, I went to hear him the next day in the open meeting and my surprise can only be imagined when he gave us a talk on prarthana, prayer, which is indeed a favourite sadhan with him, but which was in the present case suggested to him by the very first chapter of (जीवन-वेद) the jeewan veda He had read it and even based his sermon on it, of course he treated the subject from his own point of view, but his appreciation of the other was visible throughout He did a similar thing again the next day when he gave his talk on the Sense of Sin, which formed the second chapter of the book An incident of this kind shows the magnanimity of his mind as nothing else can

I believe very soon after this he left Rajkot, perhaps the next day, and when we went to see him off, there was a large crowd of people, all of whom were extremly sorry to part with him After having bade him good-bye to them all amidst scenes of sorrow and pain, when his eyes fell on me while passing by me he said to me "we are carrying with us your boklets "

After having such experience with him I must say that things of this kind are not done by ordinary men I may also add that, taken all in all Acharya shri jawaharlalji is a Sandhu, in the truest sense of the term

कुछ वर्ष पहले जब आचार्यश्री जवाहरलालजी महाराज यहाँ विराज रहे थे, मुझे उनकी वक्तृताए सुनने का अवसर प्राप्त हुआ था। निस्सन्देह उनका मुझ पर गहरा असर पडा। मुझे उन मे एक एसी विशेषता मालूम पडी जो जेनो द्वारा व्याख्यान शब्द से कहे जाने वाले उपदेशो मे प्राय नही होती। आचार्यश्री के उपदेशो मे जो बात आकर्षण ओर प्रभाव को पैदा करती हे वह उन का कथनीय विषय नही किन्तु उसे जनता के सामने रखने की शेली हे। वे उपदेश उन के मस्तिष्क से नही किन्तु उस हृदय से निकलते हे जो श्रोतृसमाज के प्रति सहानुभूति ओर प्रेम से पूर्ण हे। यह वात नही हे कि उनका विषय महत्वपूर्ण ओर ऊँचे दर्जे का नही होता किन्तु प्रभाव का वास्तविक रहस्य उनकी शेली हे। वे अपने धार्मिक जीवन के गहरे अनुभव के आधार पर वोलते हे। इस कारण एक ऐसा वातावरण उत्पन्न कर देते हे जो श्रोतृवर्ग के लिए बडा सहायक हे।

उनके उपदेशो का सव से अधिक महत्व इस बात मे हे कि वे उन्हे प्रार्थनाओ के साथ प्रारम्भ करते हे। उस के बाद प्रार्थनाओ के अर्थ तथा जीवन मे प्रार्थना के स्थान पर छोटा-सा भाषण देते हे। यह बात उनके व्याख्यानो को एक दूसरे स्तर पर पहुँचा देती हे। वे उस समय सच्चे अर्थ मे धर्मोपदेशक बन जाते हे। मेने अपने बचपन से वहुत-से जेन साधुओ के व्याख्यान सुने हे किन्तु प्रार्थना को इतना महत्व देने वाला कोई नही मिला। जवाहरलाल जी महाराज के उपदेशो मे यह बात नई जान डाल देती है। सारा वातावरण भक्ति मे परिणत हो जाता हे ओर जनता असली व्याख्यान को सुनने के लिए अधिक तेयार हो जाती हे।

आप का व्याख्यान नीति ओर धर्म के ठोस उपदेशो से भरा होता हे। वह सारा का सारा व्यावहारिक होता हे। थोथी सेद्धान्तिक वाते उसमे कम रहती हे। उपदेश ऐसा ही होना चाहिए विशेष रूप से ऐसी सभा मे जहाँ सेकडो की सख्या मे स्त्री, पुरुष, वालक, वालिकाए आदि सभी प्रकार की जनता हो। ऐसी सभा मे ऐसा व्याख्यान होना चाहिए जिसमे सभी के काम की वाते हो। श्री जवाहरलालजी महाराज के उपदेश इस वात मे कभी नही चूकते। उनके व्याख्यान विविध प्रकार के दृष्टान्तो से भरे होते हे, जिन्हे वे जेन आगम तथा दूसरे ग्रन्थो के साथ-साथ इतर सम्प्रदायो के धार्मिक ग्रन्थो तथा सामान्य जीवन से उद्धृत करते हे। श्री जवाहरलाल जी महाराज भिन्न-भिन्न विषयो की जिस रूप से चर्चा करते हे उन से मालूम होता हे कि दूसरे धर्मों के प्रति वे अत्यधिक सहनशील ही नही हे किन्तु विध्यात्मक मित्रता तथा सम्मान का भाव रखते हे। यह बात भी उन की विशेषता हे ओर उनके आध्यात्मिक पद को ऊँचा करती हे। जेन वाङ्मय के गहरे अध्ययन के साथ-साथ गीता, उपनिषद् आदि भागवत सरीखे महान ग्रन्थो से भी उन्हे महती प्रेरणा मिली हे। बाइविल ओर कुरान से भी वे अपरिचित नही ह ओर उनसे भी आध्यात्मिक प्रेरणा लेने को तेयार हे। इस बात क लिए भी जन साधुओ मे आप अपनी श्रेणी के एक ही हे, विशेषतया जब हम उनके समय ओर आस-पास के वातावरण को देखते हे। उनमे जनता को प्रभावित करने की जो शक्ति हे उसका एक कारण यह भी ह कि वे ससार की सामयिक हलचल मे पूर्ण जागरूक रहते ह। वर्तमान राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक समस्याओ से वे पूर्ण परिचित हे। आधुनिक जनता को जो प्रलोभन ओर पाप घर हुए हे वे उन्हे जानते ह तथा उन्हे दूर करने के लिए निर्दोष परामर्श देते ह। ये सभी बात उनके उपदेशो को सजीव बना देती ह।

इनके साथ-साथ आपके उपदेशो मे मुझे एक मौलिक विशेषता दिखाई दी है जो इतर जैन उपदेशको मे नही देखी गई। यह विशेषता श्री जवाहरलाल जी महाराज मे विभिन्न विषयो पर किए जाने वाले गभीर विचार तथा जन्मसिद्ध स्वाभाविक प्रतिभा के कारण आई है। उनकी इस मौलिकता के साथ कवित्व का भी उल्लेखनीय सम्मिश्रण है। यदि वे अपना जीवन साहित्यिक क्षेत्र मे लगाते तो मै निश्चयपूर्वक कह सकता हूँ कि वे साहित्यिक ससार मे अच्छा नाम पेदा करते। किन्तु उन्होंने समझ बूझ कर साधु बनना पसन्द किया हे और उन का कार्य क्षेत्र एक साहित्यिक से नि सन्देह बहुत ऊँचा है।

अभी तक मैने आचार्यश्री जवाहरलाल जी महाराज द्वारा दिये गए उपदेशो के प्रतिपाद्य विषय और उनकी शैली के विषय मे कहा हे। जब मैने उनके पहले-पहल दर्शन किए तभी इन वातो की ओर मेरा ध्यान गया था। किन्तु इन से भी अधिक कुछ और बाते हे जिनका उल्लेख अवश्य करना चाहिए। महाराज श्री कुछ महीने राजकोट नगर मे विराजने के वाद जव राजकोट सिविल स्टेशन पर आए उसी समय मुझे उनके व्यक्तिगत परिचय का अधिक लाभ मिला। आध्यात्मिक जीवन से सम्वन्ध रखने वाले विषयो पर मेरा उन से दो बार घनिष्ठ वार्तालाप हुआ। उसी समय वात स्पष्ट हुई कि वे एक सच्चे साधु है। हमने शान्ति के मार्ग पर वार्तालाप किया था। जब मैने इस विपय मे अपने विचार उनके सामने रक्खे तो वे सहमत हो गए और कहने लगे, मेरा भी यही अनुभव हे। मैने उनसे कहा-मै ईश्वर मे विश्वास करता हूँ। इसलिए मानता हूँ कि धार्मिक जीवन का रहस्य यही है कि मनुष्य अपने को छोटे से छोटा अनुभव करता जाये। इसी अनुभव ने मुझे वास्तविक शान्ति प्रदान की है।

उन्होंने उत्तर दिया- मुझे अपने जीवन मे भी यही बात सत्य प्रतीत हुई हे। जव मै अपने-आपको एक बडा आदमी, बडा साधु, नेता या गुरु न समझ कर साधारण व्यक्ति समझता हूँ, अपने को दूसरे साधारण प्राणियो मे से ही एक मानता हूँ उस समय मुझे मानसिक शान्ति प्राप्त होती हे। जब मै इस प्रकार सोचना बन्द कर देता हूँ, मस्तिष्क क्षुब्ध हो उठता हे"।

मेरा विचार है, यह अन्तिम बात उन्होने जैन सम्प्रदाय के नेता के रूप मे अपने ऊँचे पद को ध्यान मे रख कर कही थी।

जो कुछ भी हो, इन दो छोटे किन्तु अन्तरङ्ग वार्तालापो के सिलसिले मे मुझे मालूम हो गया कि वे एक सच्चे साधु हे। ऐसा कहकर मै उनके प्रति अपनी महान श्रद्धाञ्जलि समर्पित कर रहा हूँ। आत्मा की सरलता, हृदय की नम्रता तथा निष्कपटता आदि जो विशेषताएँ मेरे विचार से एक साधु मे महत्वपूर्ण स्थान रखती हें वे मुझे उनमे प्रतीत हुई। नि सन्देह, जेन साधु मे साधारणतया जो विशेषताएँ होनी चाहिए वे सभी उन मे विद्यमान हे, किन्तु मैने जो विशेषताएँ ऊपर बताई हे वे साधु जीवन का आधार हे तथा उनके लिए आवश्यक साधारण गुणो मे मूर्धन्य तथा उन्हे पूर्ण करने वाली हे। यही विशेषताएँ साधारण व्यक्ति, विशेषतया साधु को अभिमान के आक्रमण से बचाती हे,जो कि ऊँचे मार्ग मे चलने वालो पर आक्रमण करने तथा अधिकार जमाने के लिए सदा तेयार रहता हे। अपने को श्रावको से बडा तथा साधु समझने वाले व्यक्तियो का अभिमान, विशेषतया अपनी सूक्ष्म अवस्था मे, सब से बडा शत्रु हे।

साधुओ मे भी ऊँचे पद को प्राप्त करने वालों के लिए तो यह और भी घातक है। पूर्वीय और पश्चिमीय बहुत से साधुओ ने कहा हे कि कचन ओर कामिनी को छोडना आसान हे किन्तु अभिमान को छोडना कठिन हे। अभिमान को छोडने के लिए हृदय में सच्ची नम्रता होनी चाहिए और इस की जडे आत्मा

मे गहरी उतरनी चाहिए। मुझे यह कहते हुए हर्ष होता हे कि पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज मे यह नम्रता मुझे किसी हद तक मिली ओर इसी ने मेरे हृदय मे उनके प्रति सच्चे प्रेम ओर आदर को जन्म दिया। जेन, ब्राह्मण, क्रिश्चियन, हिन्दू आदि जातियो के धर्म मे गहरे उतरे हुए वहुत से स्त्री ओर पुरुषो के मेने दर्शन किए हे, उन मे जिन्होने अपने सच्चे साधु जीवन के द्वारा मुझ पर प्रभाव डाला हे उन थोडे से इने गिने महापुरुषो के साथ श्री जवाहरलाल जी महाराज के लिए मेरे हृदय मे स्थान हे।

ऊपर वताई गई विशेषताओं के अतिरिक्त एक ओर विशेषता हे जो कि कार्य ओर कारण दोनो रूप से विभक्त हे। वह हे उनकी वालक-सी सरलता। यह मानवजीवन की सबसे वडी विशेषताओ मे से हे। ईसामसीह का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए जव कुछ माताएँ अपने वच्चो को लेकर उनके पास आई तो उनके शिष्यो ने वालको को पास न आने दिया। वे सोचने लगे कि इससे ईसामसीह का माहात्म्य घट जायेगा। यह देख कर ईसामसीह ने अपने शिष्यो से कहा-वच्चो को आने दो। इन्ही के द्वारा स्वर्ग का साम्राज्य वनता हे। भोलापन, आश्चर्यान्वित वुद्धि, ग्रहणशीलता आदि वालको के गुण हे। इनमे से कुछ मुझे जवाहरलालजी महाराज मे भी प्राप्त हुए। वे इस वात को अच्छी तरह जानते हे कि ज्ञान अनन्त हे और वह सभी दिशाओ से प्राप्त किया जा सकता हे, वशर्ते कि मूर्खतापूर्ण धर्मान्धता के द्वारा व्यक्ति अपनी आत्मा के द्वार वन्द न करे। आत्मा का यह खुलापन, दूसरे व्यक्तियो के दृष्टिकोण को समझने, उनका आदर करने तथा उनमे रहे हुए अच्छेपन को अपनाने की तत्परता पूज्यश्री मे मुझे स्पष्ट प्रतीत हुई हे।

उनके साथ की गई वातचीत ही नही किन्तु एक घटना के रूप मे मेरे पास इस बात के लिए ठोस प्रमाण हे। यह घटना वास्तव मे उल्लेखनीय हे -

अन्तिम विदा से पहले मेने उन्हे दो छोटी-छोटी पुस्तके दी। उनमे से एक का नाम था जीवन वेद' जो कि वगाली धर्मोपदेशक ब्रह्मर्षि केशवचन्द्र सेन द्वारा लिखी गई थी। यह एक प्रकार से उनकी आत्म-कथा हे ओर कई वातो के लिए वहुत ही महत्वपूर्ण पुस्तक हे। वह किताव उनक पास छोडने के वाद दूसरे दिन मे उनका जाहिर व्याख्यान सुनने गया। जव उन्होने प्रार्थना, जिसे वे अपने जीवन का साधन मानते हे, पर व्याख्यान दिया तो मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उसमे 'जीवन वेद' के पहले अध्याय की वहुत-सी वाते थीं। उन्होने उसे पढा था ओर अपने उपदेश को उसी के आधार पर दिया था। नि सन्देह उन्होने विषय की चर्चा अपने दृष्टिकोण के अनुसार ही की थी किन्तु 'जीवन वेद, के प्रति उनका आदर सारे व्याख्यान मे प्रतीत होता था। यही वात दूसरे दिन भी हुई जव उन्होने 'पाप की वुद्धि' पर व्याख्यान दिया। यह पुस्तक का दूसरा अध्याय था। यह घटना उनके हृदय की विशालता को प्रकट करती हे, जिसके विना यह हो ही नही सकता।

इस घटना के वाद वहुत शीघ्र सम्भवतया दूसरे ही दिन उन्होने राजकोट छोड दिया। जव हम उन्हे पहुँचाने गये तो वहाँ वहुत भीड इकट्ठी हुई थी। उनके वियोग से सभी वहुत दुखी थे। शोक ओर दु ख के उस दृश्य मे सव को अन्तिम मगलाचरण सुनाने के वाद मेरे पास से निकलते समय जव उनकी दृष्टि मुझ पर पडी तो कहा-आपकी पुस्तके हम अपने साथ ले जा रहे हे।

उनके विषय मे इस प्रकार का अनुभव प्राप्त करके मे कहूँगा कि ऐसी वात साधारण व्यक्ति नही कर सकता। सभी वातो को लिया जाय तो हमे कहना पडेगा कि श्री जवाहरलालजी महाराज साधु शब्द के सच्चे अर्थ मे साधु हे।

५१— श्रद्धांजलि

वा मस्तराम जैनी, एम ए , एल एल वी , अमृतसर

It was in the summer of, most probably, 1932 that I had Darshans of His Holiness at Delhi Baradari, Chandni Chowk where I had gone with the Punjab batch, to attend a meeting of the All India Sthanakwasi Sadhu Sammelan, which was held a year after at Ajmer Before I had heard a good deal about the austerity learning and diction of His Holiness discourses, which made an impression on the hearts of his audience, At Delhi what struck me the most was the disciplined and spontaneous divotion of the Shrawak Sangh that he enjoyed, as over a thousand people were sitting spell bound while he was delivering his discourse in the morning, in a lucid manner in which he was placing, will find and intricate philosophical principles before his audience It was really a treat to hear him, and I consider myself lucky indeed that I was afforded an opportunity of being present there In that discourse I remember what a fine tribute he paid to his late-Holiness Acharya Shiromani Shri Pujya Sohanlalji Maharaj for his piety, learning and austerity, and who can deny the worth of such a tribute when paid by one great man to another equally great, for merit and worth alone can recognise and apperciate what merit and worth means and where it lies

Just on the eve of the Ajmer Sadhu Sammelan, at Beawar, I had his darshan again along with Rai Sahab Tekchand Ji and lala Rattanchandji of Amritsar As it is a open secret, he could not easily reconcile himself with the holding of the Sammelan and the final Sanction attaching to its decisions, till some preliminary doubts were resolved and removed But once this was over, he was a whole hearted supporter of the Sammelan As soon as we entered, he was having a talk with the late Seth Gadhmalji Lodha, of Ajmer He immediately had a talk with us regarding the sammelan, and what impressed me was the ready and quick manner in which he was catching our points, and vast and comprehensive out look that he was bringing to bear on the problems discussed, and at once appreciating the point of view other than his own I had so far the experience of people leading a life of specialisation seclusion having a great natural difficulty to understand other points of view, what say of appreciating them This meeting was really a pleasant and welcome surprise for me

Then finally his opening speech at the time of the open session of the Ajmer Sadhu Sammelan by itself an event of great historical importance was the most important and impressive event of the

occasion, and I noticed what command he had over the hearts of the largest member of men and women present in the whole concourse and the utmost devotion that was shown to him It is not wonder that with this devotion and discipline on the one side, and the deep insight, knowledge, piety, austerity, lofty idealism, save and well balanced views and a comprehensive out look on the other is a combination, which, though luckily, is a very rare one indeed, but is nevertheless capable of producing results most fruitful and abiding

I along with others, join in paying my humble tribute to the qualities of head and heart of His Holiness and pray that he be spared for more time, in full possession of his physical and mental powers to guide the destinies of the Jain Samaj

सम्भवतया १९३२ की गरमी मे जव पूज्यश्री चादनी चौक देहली की वारादरी मे ठहरे हुए थे, मैने आपके दर्शन किए। मे उस समय अखिल भारतीय स्थानकवासी साधु सम्मेलन की एक वेठक मे सम्मिलित होने के लिए पजावी दल के साथ गया था। सम्मेलन का अधिवेशन एक साल वाद अजमेर मे हुआ था। पूज्यश्री के कठोर सयम, विद्वत्ता और श्रोताओ के हृदय पर स्थायी प्रभाव डालने वाली आप की भाषण-शेली के विषय मे मेने पहले सुन रखा था। देहली मे जिस वात ने मुझे सव से अधिक प्रभावित किया वह थी श्रावक सघ की आपके प्रति स्वाभाविक तथा अनुशासनपूर्ण भक्ति। प्रात काल जिस समय आप भाषण दे रहे थे, हजारो व्यक्ति मत्र-मुग्ध से वेठे थे। अत्यन्त सूक्ष्म तथा उलझे हुए दार्शनिक सिद्धान्तो को श्रोताओ के सामने आप वडी प्राजल भाषा ओर सुगम शेली मे रख रहे थे। वास्तव मे आपका भाषण सुनना एक दुर्लभ वस्तु है। उस समय उपस्थित होने का अवसर मिलने के लिए मे अपने को भाग्यशाली मानता हूँ। मुझे स्मरण हे कि उस समय स्वर्गस्थ आचार्यशिरोमणि पूज्य श्री सोहनलाल जी महाराज के प्रति उनकी पवित्रता, विद्वत्ता, सयम के लिए श्रद्धाजलि समर्पित की थी। जव एक महापुरुप अपने ही समान दूसरे के प्रति श्रद्धाजलि समर्पित करता हे तो उसके महत्व के विषय मे किसी को सदेह नही हो सकता। क्योकि गुण ओर योग्यता किसे कहते हे और वे कहाँ रहते ह, इस वात की पहिचान ओर कदर गुण ओर योग्यता ही कर सकते हे।

अजमेर साधु-सम्मेलन के कुछ ही पहले मैने व्यावर मे आप के फिर दर्शन किए। उस समय रायसाहेव लाला टेकचन्द जी ओर अमृतसर के लाला रतनचन्द जी मेरे साथ थे। यह एक सर्वविदित रहस्य हे कि पूज्य श्री साधु-सम्मेलन करने ओर उसके निश्चयो को मानने के लिए तव तक तेयार नही थे जव तक कि उन की प्रारम्भिक शङ्काए समाधान द्वारा दूर न कर दी गई। किन्तु एक वार शङ्काए दूर होने पर वे सम्मेलन का हार्दिक समर्थन करने लगे। जिस समय हम अन्दर गए, आप स्व सेठ गाढमलजी लोढा अजमेर से वात कर रहे थे। आपने तुरन्त हमारे साथ सम्मेलन के विषय मे वातचीत आरम्भ कर दी। जिस शीघ्रता ओर तत्परता के साथ वे हमारे विचारो को समझ रहे थे, विवादग्रस्त समस्याओ के लिए वे जिस विशाल तथा व्यापक दृष्टिकोण को अपना रहे थे और विरोधी दृष्टिकोणो का जिस प्रकार स्वागत कर रहे थे, इन सव का मुझ पर वहुत असर पडा। मुझे अव तक ऐसे व्यक्तियो का अनुभव हुआ था जो या तो अपने विचारो को वहुत महत्व देते हे या सवथा अलग हो जाते ह। दूसर के दृष्टिकोण को समझना भी उन के लिए स्वभावत कठिन होता

है उस का आदर करना तो दूर की वात है। यह मुलाकात मेरे लिए वास्तव मे आनन्द और आश्चर्य से भरी थी।

अजमेर मे साधु सम्मेलन का खुला अधिवेशन हुआ। यह वात स्वय अपना ऐतिहासिक महत्व रखती है। किन्तु उस मे भी सव से अधिक महत्वपूर्ण और प्रभावशाली घटना थी सम्मेलन का प्रारम्भ करते समय दिया गया आपका भाषण। सम्मेलन मे वहुत वडी जनसख्या थी। सभी स्त्री और पुरुषो के हृदय पर आपका प्रभुत्व और आपके प्रति सभी की अत्यन्त भक्ति मुझे उसी समय देखने को मिली। इसमे कोई आश्चर्य नही कि एक ओर इस प्रकार की भक्ति और अनुशासन तथा दूसरी ओर गम्भीर सूक्ष्म दृष्टि, ज्ञान, पवित्रता, तपस्या, उच्च आदर्श, सुसगत और समतुल विचार तथा व्यापक दृष्टिकोण एक ऐसा मेल है जो भाग्य से वहुत ही विरले महापुरुषो में उपलब्ध होता है। ऐसा मेल वहुत ही लाभदायक तथा स्थायी कार्य कर सकता है।

पूज्यश्री के हृदय और मस्तिष्क की विशेषताओ के लिए दूसरो के साथ मे भी अपनी श्रद्धाजलि समर्पित करता हूँ और प्रार्थना करता हूँ कि वे अपनी शारीरिक मानसिक शक्तियो को अक्षुण्ण रखते हुए चिरकाल तक जीवित रहे और जैन समाज के सिद्धान्तो के लिए मार्ग प्रदर्शन करते रहे।

५२— जैन समाजनुं जवाहर

ले प्रो केशवलाल हिंमतराय कामदार एम ए वड़ोदा

मै अनेक जैन साधु साध्वीओनो समागम कर्यो छे, तेमा श्री जवाहरलाल जी महाराज ने हूं उच्च कोटिमा मूकु छु। मने स्थानकवासी, मूर्तिपूजक अने दिगम्बरी साधुओनो थोडो घणो परिचय छे। तेमनी पासे थी मे अनेक बार बोध लीधो छे। तेमा ना घणाओ साथे मारो सपर्क गाढ छे एम पण हु कही शकु। ए वधा मडलमा मने श्री जवाहरलाल जी महाराज उच्च कोटिना साधु लाग्या छे।

बोटाद मुकामे अमे त्रण चार दिवस रोकाया हता। त्यारे मने पूज्य महाराजना व्याख्यानो साभलवानो लाभ मल्यो हतो। महाराज श्री व्याख्यान शरू करता ते अगाडी हमेशा तेओ एकाद तीर्थकरनु स्तवन करता हता। ए स्तवन अत्यन्त भाववाही हतु। ते ते स्तवन नो अर्थ तेओ अमने सुन्दर रीते समजावता हता। वृद्ध उमरे पण तेमनो आवाज सेकडो नर नारीओना समुदाय ने छेडे सुधी जई शकतो। महाराज श्री ना व्याख्यानो श्रोताजनोना स्वभाव ने अनुकूल पडे तेवा हता। तेमा न्याय, विद्वत्ता, करुणारस, बोध, लोककथा, फिलसुफी, वगेरे वधा तत्वो आवता। नरी फिलसुफी सामान्य श्रोताजनोने स्पर्शी शकती नथी। नर्यो न्याय सामान्य श्रोताजनोना मगजमा वेसी शकतो नथी। नरी विद्वत्ता लूखी लागे छे। महाराज श्रीना व्याख्यानो मा वधा तत्वो नो समावेश थतो हतो ते थी अमने तेमा घणो रस पडतो अने अमारा ऊपर तेनी सचोट असर पडती। एवा तेमना व्याख्यानो ना सग्रहो राजकोट निवासी तेमना प्रशसको तरफ थी अने तेमा पण मारा मित्र भाई श्री चुन्नीलाल नागजी वोराना प्रयास थी वहार पडेला छे, जे वाचको ने मली शके छे। अनेक कुटुम्वो आ सग्रहोने वाचीने चारित्रशील अने विनयशील बन्या छे।

महाराज श्री जवाहरलाल जी वृद्ध उमरे पण नवीन विचारो धरावे छे। एटले के तेओ सर्व स्वभावना समुदाय ने अनुकूल नीवड्या छे। तेओ सम्प्रदाये स्थानकवासी साधु छे, पण तेमना मा कशो दुराग्रह नथी। अलवत्त, स्थानकवासी सप्रदायनी साधुत्वभावना ने अवलबी ने तेओ रहे छे, ते खरू छे।

तेओ बीजा मत मतान्तर प्रत्ये उदार दृष्टि धरावे छे। शास्त्रो नो अर्थ तेओ नवीन दृष्टि ने अनुकूल पड तेवी रीते करी शके छे। तेना पालन मा तेओ कशी शिथिलता चलावता नथी। पोताना प्रशसको द्रव्य सग्रह करी जेन समाज नी व्यावहारिक उन्नतिमा तेने उपयोग करे ते प्रत्ये तेओ एकदम उदासीनता सेवे छे। स्थानकवासी सप्रदायनी सघ व्यवस्थामा जेन दृष्टि सचवाई रहे तेटलु तेओ इच्छे छे। तेमने पक्षापक्षी जरा पण गमती नथी, जो के स्थानकवासी दृष्टि थी कोई साधु नु वर्तन विरुन्द्ध जाय तो ते तेमने अनुकूल आवतु नथी।

महाराज श्री जवाहरलालजीनो पोताना शिष्यसमूह मोटो छे। ते समूहमा योग्य व्यक्तिओ ने तेओ अनुकूल शिक्षण आपवा हमेशा तत्परता धरावता रह्या छे। तेम ना शिष्यो मा केटलाएकोनु सस्कृत साहित्यनु ज्ञान मने उच्चकोटिनु लागेलु। वडोदरा मुकामे तेओ पधार्या हता त्यारे तेमना एक शिष्य ने हु प्राच्य विद्यालमाय लई गएलो, त्यारे मने तेनो, खास अनुभव थएलो।

पूज्यश्री जवाहरलालजी ना चातुर्मासो वधा जेन समुदाय ने अवलबे छे। तेओ एकज देशमा के विभागमा रह्या नथी। तेमणे जेनोने मोटे भागे वोध्या छे। पोते जेन साधु छे ते बात तेओ भूली जता नथी। जैन साधुओ जेनेत्तर समाज ने बोधे ते वरजनीय छे, पण केटलीक वार कोइ कोइ जेन साधुओ फकत जेनेतर समाजनेज सेवे छे अने जेन वेश धारे छे छता जेनेतर दृष्टि थी जीवन चर्चा करे छे अने लोकोनो प्रेम मेलववा प्रयत्न करे छे। श्री जवाहरलाल जी महाराज आवा विचित्र स्वभाव थी दूर रह्या छे, अने छता तेओ जेनोने जेटला प्रिय छे तेटलाज जैनेतरो ने पण प्रिय छे।

५३— महाराजश्री के साथ कुछ घड़ियां

कुमारी सविता वेन मणिलाल पारेख, बी ए राजकोट C S

In the year 1939 Maharajshri Jawaharlalji with his disciples benefited the Rajkot public by his arrival in Rajkot Rajkot was thus made a sacred place

But this fact I realized only a few days before the Maharajshri s departure from Rajkot to other places, and so far I was quite unfortunate because I could not take full advantage of the religious knowledge of the holy-minded Saint

I was made to respect him and was attracted to talk to him by his instructions in holy knowledge to the Rajkot public and especially the Jains I heard him in Hindi too and that made me pay my respects to him more and more

First I shall deal with his (व्याख्यान) "Vyakhyans' and the impressions they left upon my mind

The thing which impressed me the most is that he is a nationalist saint He aspires after the Kalyan' of Bharat and Bhartiya He asks and preaches the people to follow Gandhiji, the great national leader of India, in Ahimsa and Khadi especially He gives much importance

to Gandhiji s constructive programme His meetings ... with Gandhiji and Vallabhbhai Patel shows that ... nationalist Saint That he is a nationalist Saint is a true ... same time he can never even think of injuring the ... interests, which show his greatness Britishers and other ... in no way his enemies they are brethern to him and he ... their Kalyan too

Another great thing in him is his philosophy Much can ... about it Prayer and the Prayed one are the most important ... of his philosophy These are the centres around which the whole ... his philosophy revolves He says that the prayer should be Nishkam which is one of the greatest preachings of the Gita he says that ... prayer should be made for the welfare of all people He gives very great importance to the peace of mind, and he always says that prayer is the only way to make our life happy and peaceful

In the few hours which I passed with him, I found him to be the very soul of virtue

His kindness attracts the people to him the most He treats all individuals equally He was talking to me as he used to talk with what we call big people, even though I was very young at that time and almost a child He can become childlike with children and can thus make them happy At the same time one must say that he is so influential that he can impress upon even great men

He is a socialist so far as his treatment of different sorts of people is concerned And so, we may call him, a spiritual socialist He does not cease talking to a child even if a great man comes

I have not come in close contact with Gandhiji, but from what I have known about him, I have concluded that Maharajshri Jawaharlalji and Mahatma Gandhiji, are exactely alike in certain spheres He is a Gandhi of Jainism

सन् १९३९ मे महाराज श्री जवाहरलाल जी ने अपने शिष्यो सहित राजकोट पधार कर यहाँ की जनता को लाभ दिया। उन के पधारने से राजकोट तीर्थस्थान बन गया।

किन्तु मेने इस तथ्य को महाराजश्री के विहार से कुछ ही दिन पहले पहिचाना। उस पवित्र हृदय सन्त के धार्मिक ज्ञान से इतने दिन लाभ न उठा सकने के लिए मे अपने को हतभाग्य मानती हूँ।

राजकोट की साधारण जनता तथा विशेषतया जेन समाज मे उनके पवित्र ज्ञान की प्रसिद्धि ने मेरे हृदय में उनके प्रति आदर तथा बातचीत करने की इच्छा पैदा की। मैने उन्हे हिन्दी मे भाषण करते हुए सुना जिससे मेरी श्रद्धा उन के प्रति और बढ गई।

पहले मे उन के व्याख्यान तथा मेरे हृदय पर उन के प्रभाव का जिक्र करूंगी।

सव से अधिक जिस वात ने मुझ पर असर किया वह यह है कि वे एक राष्ट्रीय विचारा के सन्त है। वे भारत ओर भारतीयो के कल्याण की आकाक्षा करते है। वे जनता को विशेषतया अहिंसा ओर खादी के लिए महान् राष्ट्रीय नेता गाधी जी का अनुसरण करने के लिए कहते है तथा उपदेश भी देते है। वे गाधी जी के रचनात्मक कार्यक्रम को वहुत महत्व देते है। राजकोट म गाधी जी ओर वल्लभ भाई पटेल के साथ उन की जो मुलाकात हुई थी, उस से स्पष्ट मालूम पडता है कि वे राष्ट्रीय सन्त है। राष्ट्रीय सन्त होने के साथ साथ यह भी सत्य है कि वे ब्रिटेन निवासियो के स्वार्थों पर आघात करने की कभी इच्छा भी नही करते। यह वात उन की महानता को प्रकट करती है। ब्रिटिश निवासी या दूसरे राष्ट्र उन के शत्रु नही है। वे उन के भाई है, और वे उन के भी कल्याण की कामना करते है।

उन मे दूसरी वडी वात उन के दार्शनिक विचार है। इस विषय मे वहुत कुछ कहा जा सकता है। उन के दार्शनिक विचारो मे प्रार्थना और जिस की प्रार्थना की जाय, ये दोनो महत्वपूर्ण तत्व है। ये वह है जिन के चारो तरफ उन के विचार घूमते है। वे कहते है कि प्रार्थना निष्काम होनी चाहिए जो कि गीता का सव से वडा सिद्धान्त है। वे कहते है कि प्रार्थना सर्वसाधारण के कल्याणाथ होनी चाहिए। मन की शान्ति को वे वहुत महत्व देते है और कहते है कि प्रार्थना ही एक ऐसा मार्ग है जो हमारे जीवन को आनन्दमय और शान्तिपूर्ण बना सकता है।

थोडी सी घडियाँ ही मेने उनके साथ विताई। उन से मालूम पडा कि वे धर्म की आत्मा है। उन की दयालुता जनता को उन की ओर विशेष आकृष्ट करती है। वे सभी के साथ समान वताव रखते है। यद्यपि मैं उस समय वहुत छोटी थी और विल्कुल वच्ची थी फिर भी मेर साथ उन का वर्ताव ऐसा ही था जेसा कि वे वडे कहे जाने वाले व्यक्तियो से करते थे। वे वच्चो के साथ वच्च वन जात है और इस प्रकार उन्हे प्रसन्न कर देते है। इसके साथ यह भी कहना पडेगा कि वे इतने प्रभावशाली है कि वडे-वडे व्यक्तियो को भी प्रभावित कर सकते है।

भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यक्तियो के साथ उन का जो वर्ताव है उस से वे समाजवादी मालूम पडत है। हम उन्हे आध्यात्मिक समाजवादी कह सकते ह। किसी वड आदमी के आने पर भी व वालक स वातचीत करना वन्द नही करते।

म गाधी जी के घनिठ परिचय मे नही आई हूँ किन्तु उन के विषय मे मे जितना जानती हूँ उसक आधार से कह सकती हूँ कि महाराज श्री जवाहरलाल जी और महात्मा गाधी जी वहुत-सी वाता म समान ह। वे जन समाज के गाधी ह।

५४— अनुभवोद्गार

ले श्री नयचन्द स्हेचर झवेरी वकील, जूनागढ

टुक वखत मा तओ श्रीए मारा अन्त करण पर जे सुन्दर छाप पाडी छ अन तओ श्री माट मा जे मान तथा प्रेम अने सद्भावना प्रकट्या छ तनो खरो चितार शब्दा द्वारा हु आपा शकु नम नथा। परन्तु तेओ श्री प्रत्येनी मारी सद्भावना व्यक्त करी आत्मसन्तोष मेलववा खातर हु मारा अनुभवादगार अति सक्षेप मा व्यक्त करु छु।

श्रोत्रिय अने ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु, गुरुर्देवो [illegible]
गुरुरेव परं ब्रह्म, तस्मै श्रीगुरवे [illegible]

गुरु ब्रह्म रूप छे, विष्णु रूप छे, गुरु महेश्वर (महादेव) [illegible]
नमस्कार हो।

गुरु गोविन्द दोनु खडे, किसको [illegible]
वलिहारी गुरुदेव की, गोविन्द दिया [illegible]

पूज्यपाद महाराज श्री जैनधर्म ना एक महान् आचार्य होवा [illegible]
पोताना सदुपदेश द्वारा धर्म नु खरू रहस्य समजावी पावन करे छे। [illegible]
घणा माणसो पण तेओ श्री प्रत्ये गुरु-भावना राखी तेओ श्री ना परम [illegible]
होवा साथे श्रोत्रिय (शास्त्र विशारद) अने ब्रह्मनिष्ठ (परमात्मा परायण) [illegible]
सहेजे प्राप्त छे। तेमने हु परमभाग्यशाली मानु छु।

प्रखर वक्ता

पूज्यपाद महाराज श्री वयोवृद्ध अने अति प्रभावशाली छे। शान्त, गभीर, [illegible]
वदन छे। आथी करी पोताना व्याख्यान थी श्रोता पर सारी छाप पाडे छे। [illegible]
नी पद्धति, हलक अने वाक्यपटुता एवा तो कोई अजव छे के व्याख्या [illegible]
दे छे। तेओश्रीनी मातृभाषा मारवाडी होवा छता गुजराती भाषा पर पण [illegible]

समर्थ ज्ञानी

महाराजश्रीनु ज्ञान पण कोई अजव ज छे। तेओश्रीना व्याख्यान मा हरवखत [illegible]
स्पर्शी सुन्दर दृष्टान्तो आवे छे। आथी तेओश्रीनु वहु श्रुतपणु जणाई आवे छे। व्याख्या [illegible]
शीय अनेक सुन्दर आख्यायिकाओथी श्रोताओना मन रजन करी शके छे। एटलु ज नहि पण [illegible]
शक्ति थी श्रोताओ ने पोता प्रत्ये गुरु भावना वाला वनावी तेओ श्री ना वधु व्याख्यान सा [illegible]
कोई ने परम उत्सुक वनावे छे।

पूर्ण-त्यागी

कोई कविए कह्यु छे के -

"त्याग अने वेराग्य विण ज्ञान न शोभे लगार"

गमे तेवु ज्ञान अने चाहे तेवु वक्तृत्व होय छता पण जो त्याग के वेराग्यवृत्ति न होय तो
न के वक्तृत्व शोभतु नथी। महाराज श्री तो 'आचार प्रथमो धर्म' माननार छे अने कहे छे ते
स्व गणु अनुसरणा करी लोकोने पोताना दाखला थी सन्मार्गे वालनारा छे। पूज्यपाद महाराज
ने मारा स्नेही वकील वधु जेठालाल भाई प्रागजी रूपाणीए एक नानु सरखु उपवस्त्र व्होरी पावन
रवा विनती करेली। परन्तु पोताने हाल तो जरूर नथी एम प्रसन्न वदने कही ते उपवस्त्र पण
धेलु नहि।

मे पोते एक पुस्तक वाचवा माटे महाराज श्री ने आपेलु। विदाय थती वखते ते पुस्तक मने पाछु आपवा माड्यु त्यारे मारा थी सहेज भावे वोलायु के आप आ पुस्तक राखो। जवाव मा जणाव्यु के अमारे अमारो भार मुसाफरी मा जातेज उपाडवो जोइए एटले विना कारण आ भार लेवो नथी। पुस्तक मने पाछु आपेलु।

महाराज श्री फरता फरता एक वखत पूज्यपाद महाराज श्रीनाथ शर्म्मा ना विलखाना आनन्दाश्रम मा पधारेला। ज्या तेमने दूध के कई फलाहार व्होरवा विनती करवा मा आवेली। जेना जवाव मा तेओ श्री ए जणावेलु के नियत स्थल विना तेमज नियत समय विना पोता थी आहार पाणी लइ शकाय नहिं।

कहो आवा अद्‌भुत त्याग अने वेराग्यशील महात्मा ने कोण पोताना मस्तक न नमावे! आचार अने विचार नी एकता दाखवनार सत महानुभाव नो ज्वलन्त दाखलो महाराजश्री वतावी आपे छे। अने कहेणी रहेणा एक वतावनार विरला पैकी ना एक छे।

कहेणी मिसरी खाड है, करणी कच्चा लोह।
कहेणी रहेणी एक होय, ऐसा विरला कोय॥

अति नियमित अने सतत उद्योगी

महाराजश्री समय पालनमा पण पूर्ण आग्रही छे। सवारथी साज सुधीना तमाम नियत कर्मो शरीर वृद्ध छता नियमसर अने समयसर करवा आग्रह राखी करे छे अने अति नियमितता जालवे छे। तेमज क्षण पण नकामी जवा देता नथी। स्वाध्याय पण कर्या करे छे अने शिष्यो ने अध्यापन पण कराव्या करे छे।

मनुष्य वनावनार

व्यवहार सुधर्या विना परमार्थ सुधरतो नथी। महाराज श्री ना उपदेशनु मुख्य लक्ष्य मनुष्यो ने मनुष्य वनावानु छे। एटले मनुष्यो पोतानो व्यवहार सुधारी परमार्थ ने पथे चले ए उद्देश्य ने प्रधानपणे जालवी उपदेश आपे छे।

'धर्मेण हीना पशुभि समाना'

आकृतिए मनुष्य रूपे देखाता छता जो धर्म थी रहित होय तो पशु समान गणाय। ब्राह्मण कुल मा जन्मवाथी नहि पण उपनयन सस्कार थी ब्राह्मण थवाय छे।

जन्मना जायते शूद्र सस्काराद द्विज उच्यते।

मनुष्य योनि मा जन्म ग्रहण करवा थी नहि पण मनुष्य ना गुण ग्रहण करनार मनुष्य वने छे। महाराज श्री असत्य, कुसम्प, रागद्वेष, ईर्ष्या, काम, क्रोध, लोभ, मोह, विश्वासघात, दगा, फटका, चोर वृत्ति वगेरा पशु भावो त्यजी सत्य, सम्प वगेरा सद्‌गुणो पालवा उपदेश आपी धर्म नु खरु रहस्य समजावी धर्म भावना जागृत करावी, पशुवृत्ति तजावी मनुष्याकार देखाता मनुष्यो ने खरा मनुष्य एटले सस्कार वाला वनावे छे।

मे पोते एक पुस्तक वाचवा माटे महाराज श्री ने आपेलु। विदाय थती वखते ते पुस्तक मने पाछु आपवा माड्यु त्यारे मारा थी सहेज भावे बोलायु के आप आ पुस्तक राखो। जवाब मा जणाव्यु के अमारे अमारो भार मुसाफरी मा जातेज उपाडवो जोइए एटले विना कारण आ भार लेवो नथी। पुस्तक मने पाछु आपेलु।

महाराज श्री फरता फरता एक वखत पूज्यपाद महाराज श्रीनाथ शर्म्मा ना विलखाना आनन्दा श्रम मा पधारेला। ज्या तेमने दूध के कई फलाहार व्होरवा विनती करवा मा आवेली। जेना जवाब मा तेओ श्री ए जणावेलु के नियत स्थल विना तेमज नियत समय विना पोता थी आहार पाणी लई शकाय नहिं।

कहो आवा अद्‌भुत त्याग अने वेराग्यशील महात्मा ने कोण पोताना मस्तक न नमावे' आचार अने विचार नी एकता दाखवनार सत महानुभाव नो ज्वलन्त दाखलो महाराजश्री बतावी आपे छे। अने कहेणी रहेणा एक बतावनार विरला पेकी ना एक छे।

कहेणी मिसरी खाड हे, करणी कच्चा लोह।
कहेणी रहेणी एक होय, ऐसा विरला कोय॥

अति नियमित अने सतत उद्योगी

महाराजश्री समय पालनमा पण पूर्ण आग्रही छे। सवारथी साज सुधीना तमाम नियत कर्मो शरीर वृद्ध छता नियमसर अने समयसर करवा आग्रह राखी करे छे अने अति नियमितता जालवे छे। तेमज क्षण पण नकामी जवा देता नथी। स्वाध्याय पण कर्या करे छे अने शिष्यो ने अध्यापन पण कराव्या करे छे।

मनुष्य बनावनार

व्यवहार सुधर्या विना परमार्थ सुधरतो नथी। महाराज श्री ना उपदेशनु मुख्य लक्ष्य मनुष्यो ने मनुष्य बनावानु छे।एटले मनुष्यो पोतानो व्यवहार सुधारी परमार्थ ने पथे चले ए उद्देश्य ने प्रधानपणे जालवी उपदेश आपे छे।

'धर्मेण हीना पशुभि समाना'

आकृतिए मनुष्य रूपे देखाता छता जो धर्म थी रहित होय तो पशु समान गणाय। ब्राह्मण कुल मा जन्मवाथी नहि पण उपनयन सस्कार थी ब्राह्मण थवाय छे।

जन्मना जायते शूद्र सस्काराद् द्विज उच्यते।

मनुष्य योनि मा जन्म ग्रहण करवा थी नहि पण मनुष्य ना गुण ग्रहण करनार मनुष्य बने छे। महाराज श्री असत्य, कुसम्प, रागद्वेष, ईर्ष्या, काम, क्रोध, लोभ, मोह, विश्वासघात, दगो, फटको, चोर वृत्ति वगेरा पशु भावो त्यजी सत्य, सम्प वगेरा सद्‌गुणो पालवा उपदेश आपी धर्म नु खरूरहस्य समजावी धर्म भावना जागृत करावी, पशुवृत्ति तजावी मनुष्याकारे देखाता मनुष्यो ने खरा मनुष्य एटल धर्म सस्कार वाला बनावे छे।

समाज सुधारक

महाराज श्री दुर्व्यन तजवा अने समाजना सडा काढवा नो पण सद्बोध आप्या करे छे। चा, तमाखू, बीडी,भाग, दारु, मद्य, मास, परस्त्री गमन, जुआ, चोरी आदि अनेक दुर्व्यसनो तजवा अने रोवु कूटवु, खोटा नात वरा, बाललग्न, वृद्धलग्न, कन्या विक्रय वगेरा अनेक कढगा रीति रिवाजो तजवा व्याख्यान मा आग्रहपूर्वक भलामण करे छे अने चमत्कारी ढगे प्रतिज्ञा करावे छे।

सर्वधर्म समभाव

महाराजश्री श्रेय नो सर्व शास्त्र मा सामान्य रीते प्रतिपादन करेल पथ एटले सामान्य धर्म ना मूल तत्त्वो बहुज युक्ति प्रयुक्ति थी समजावी बधा धर्मनी एकता प्रतिपादन करे छे। अने 'राम कहौ रहेमान कहो' एवा वाक्य थी शुरू थतु पद अजब प्रेमाई भावे ललकारी बधा धर्मनी एकता सिद्ध करी विश्व बधुत्व नो पाठ भणावी अन्य धर्म पथ के सम्प्रदाय वाला ने पोता प्रत्ये मान, प्रेम अने गुरु भावना वाला करी दे छे।

कुटुम्ब धर्मे वेष्णव होवा छता जैन धर्म प्रत्ये मने मान तथा प्रेम तो हता ज, परन्तु महाराज श्री ना सत्समागम पछी तेमा घणो वधारो थयो छे।

५५– समाज सुधारक अने राष्ट्रप्रेमी

ले श्री जटाशकर माणेकलाल मेहता, मत्री जैन युवक सघ, राजकोट

प्रथम परिचय – स्थानकवासी जैन कॉन्फरसना बीकानेर नी पासेना भीनासर नामना गामडा मा पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज विराजता हता। तेमना दर्शनार्थे हु दर रोज सवार मा जतो अने तेमना व्याख्यान नो लाभ मेलवतो। आ व्याख्यानो मा मे पहेली ज वखत जैन साधु ने सचोट रीते अने धर्मशास्त्रो ना अनुमोदनो टाकी ने सामाजिक सुधारणा नो उपदेश आपता जोया। एमनो उपदेश मुख्यत्वे वरविक्रय, कन्या विक्रय नी रूढीनो विरोध, व्यापार धधा नी प्रामाणिकता, बाललग्न सामे विरोध, रेशम ना उपयोग सामे सख्त विरोध, अस्पृश्यता निवारण, सादु जीवन, खर्चाल न्यात वरा अने सामाजिक प्रसगो मा सुधारा नी आवश्यकता वगेरे ना सम्बन्ध मा हतो। तेओ श्री एम पण कहेता 'ज्या सुधी मनुष्य मानव धर्म समज्यो नथी अने एनु सामाजिक जीवन शुद्ध नथी, त्या सुधी आध्यात्मिक जीवन गालववानो ते अधिकारी थतो नथी,'।

आ साभली मने सतोष थयो, तेमा पण खास करी ने पूज्य महाराज श्री आ सामाजिक सुधारणा नी आवश्यकता पर धर्मशास्त्र नी छाप मारता अने 'ज्या सुधी माणस मा ए प्रकार ना दोष रह्या होय त्या सुधी ए जैन कहेवा ने लायक नथी' एवु मन्तव्य स्पष्ट रीते जाहेर करता, ते साभली ने मने वधु आनन्द थयो। आ महापुरुषना दर्शन थी मारी जात ने कृतकृत्य थयेली मानतो, अने जे आशय थी हु आटले दूर सुधी घसडाई आव्यो हतो, ते एक नही तो बीजे प्रकारे परिपूर्ण थयेलो जोइने मारू मन तृप्त थयु।

बीजी मुलाकात - आ वात ने आठ नव वर्ष वीती गया। अमे काठियावाड जेन युवक परिषद नु प्रथम अधिवेशन बोलववानो निर्णय कर्यो हतो। आज अरसा मा पूज्य श्री नु स्वागत करवा हु अने मारा मित्रो वढवाण गया। जवा मा अमारो ए पण आशय हतो के परिषद् ना अधिवेशन वखते पूज्य श्री ना विचारो थी अमने अमारा काम मा सहायता मलशे के विरोध।

विचारोनी उदारता

अमे महाराज श्री नी मुलाकात लीधी, अनेक सामाजिक प्रश्नो नी मुक्त रीते चर्चा करी। एमना विचारो अमने वधाने गम्या, जो के विधवा विवाह अने लग्न विच्छेदना विचारो सामे एमनो विरोध हतो। ते तेमणे स्पष्ट रीते जाहेर कर्यो। परन्तु तेओ श्री एकदरे अमारी प्रवृत्तिओ थी खुश थया हता। अने परिषद् ना अधिवेशन ने आवकार आप्यो हतो। आ तेमना विचारो नी उदारता अने खेलदिल स्वभाव नो नमूनो हतो।

अधिवेशन वखते नवी गप उडी के पूज्य महाराज श्री नो आ अधिवेशन सामे विरोध छे। तरत अमे एमनी सेवा मा पहोच्या अने हकीकत साभली ने एमने खरेखर नवाई लागी। बीजी सवारे व्याख्यान मा तेमणे जाहेर कर्युं के 'जुवान वर्ग ना अमुक उद्दाम विचारो साथे हु सहमत न होवा छता नवजुवानो नी प्रवृत्तियो अने एमना विचारो जाणी ने मने आनन्द थयो छे। एमनी परिषद् सामे मारे कोई जातनो विरोध नथी। जेमने एमना विचार भूल भरेला लागता होय, तेमनी फरज परिषद् मा हाजरी आपी एमनी भूल दर्शाववानी अने पोतानु मतव्य रजु करवानी छे।

राष्ट्रीय प्रेम

मारा परिचित एक बहेन ने हु घणा समय थी खादी पहेरवा समजावी रह्यो हतो पण हु सफल न थयो। परन्तु आचार्य महाराज ना उपदेश थी अने खादी मा अहिंसा नु पालन होवानु तेओ श्रीए कारण दर्शाव्या थी आ बहेने आजीवन खादी परिधान नु व्रत अगीकार कर्युं हतु। राष्ट्रीय भावना मा महाराज श्री नी प्रगतिशीलता मे राजकोट सत्याग्रह नी लडत वखते निहाली हती। जुगार विरोधक लडत मा जेल जइ आव्या पछी पूज्य महाराज श्रीए मने एमनी समक्ष बोलावी ने अभिनन्दन आप्या हता।

राजकोट सत्याग्रह वखते जेल मा पण मने समचार मल्या हता के आ प्रजाकीय लडत प्रत्ये पूज्य महाराज श्री नी सहानुभूति छे। अने तेओ श्री जोरशोर थी खादी प्रचार अने स्वदेशी नी भावनाने उत्तेजन आपी रह्या छे। लडत चालु होवा थी आ मथनकाले सघ जमण न करवा तेमणे आगेवानो ने आपेली सलाह सफल निवडी हती।

समाधान थता राजद्वारी केदीओ ने मुक्त करवा मा आव्या। तेमनो सरघस ज्यारे पूज्य महाराज श्री ना निवासस्थान पासे थी पसार थतु हतु त्यारे महाराज श्री बहार पधार्या, जेल गएला सत्याग्रहीओ नु सन्मान कर्युं अने प्रजा ने अतर ना आशीर्वाद आप्या। आ दृश्ये मारा हृदय ऊपर घणी मोटी असर करी हती।

महात्मा जी साथे मुलाकात

राजकोट मा पूज्य महात्मा गाधी जी नु तेमना काका श्री खुशालचन्द भाई नी मादगी न कारणे पधारवु थयु। ते वखते महात्मा जी अने पू आचार्य महाराज नी मुलाकात नो प्रसग खरखर हृदयगम हतो। महाराज श्री ने म गाधी जी अने तेमना सिद्धान्तो प्रत्ये घणु ऊचु मान हतु। ए हु आ मुलाकात वखते ज जाणी शक्यो।

आज नो आपणे साधु समाज पूज्य श्री जवाहरलाल जी म ना जीवन मा थी काइ प्रेरणा मेलवशे तो तेओ देश अने समाज नु घणु कल्याण साधी शकशे।

स्टेट जेल
राजकोट १२-११-४२

५६– प्रभावक वाणी और विचार

लेखक ला रतनचन्द जी तथा राय सा टेकचन्द जी जैन

We had the good fortune of paying our respects to His Holiness on several occasion First of all we had his Darshana at Delhi, where we were rightly struct to note his devotion to Shree Jain Dharma and force fo his character and strict discipline The way of his speech and expression of his thoughts was so powerful that it pierced right through the hearts of his hearers who were just convinced of the doctrines preached by His Holiness

Afterwards during the tour of the All India jain Deputation Convened for inviting the acharyas and prominent munis of different sampradayas of india to attend the All India sadhu Mahasammelan to be held at Ajmer We visited Jodhpur and made our request to His Hollíness He was not at first favourably inclined to join the deliberations of the Sammelan as he was doubtful about the ultimate result But on discussion and pursuation he was pleased to give way and thus proved his high sense of responsibility and showed that he was always amiable to reason and right

At Ajmer we came in contact with His Holiness almost everyday and had continued opportunities to notice his force of character, straight-forwardness and willingness to do justice to all but not to yield haphazardly to any one In our opinion His Holiness is a symbol of a true Monk, devoted to right path and wedded to firm convictions of righteousness and piety

At all times we noted how sincely he was revered and held in esteem by all who happened to see him Lala Rattan Chand ji had also another occassion of his Darshans at Morvi in 1938, where even His Highness the Maharaja of Morvi regularly attended and heard his sermons and discourses He was accompanied by lala Moti Lal, Lala Hans Raj of Amritsar and Lala Muni Lal of Lahore These gentlemen also got a very high impression about His Holiness as anyone who heard him once wished to hear him again and again

पूज्य श्री के दर्शन करने का हमे कई बार सोभाग्य प्राप्त हुआ हे। पहले पहल हमने आपके देहली मे दर्शन किये थे। जेनधर्म के प्रति आपकी श्रद्धा, चरित्र-वल ओर आपके कठोर अनुशासन को देख कर हम चकित हो उठे। आपकी वाणी ओर विचारो को व्यक्त करने का ढग इतना प्रभावशाली

था कि वह श्रोताओ के हृदय मे सीधा उतर जाता था। आपके उपदेश श्रोताओ के हृदय मे जम जाते थे।

अजमेर मे होने वाले अखिल भारतीय साधु सम्मेलन मे सम्मिलित होने की प्रार्थना करने के लिए सभी आचार्यों ओर प्रमुख मुनियो के पास समस्त भारत के चुने हुए व्यक्तियो का एक जेन शिष्ट-मण्डल गया था। उस समय भी हमने पूज्य श्री के दर्शन किये थे। हम आपसे जोधपुर मे मिले और सम्मिलित होने की प्रार्थना की। प्रारम्भ मे उन्हे सम्मेलन की वात पसन्द नही आई। आपको उसके अन्तिम परिणाम के विषय मे सन्देह था। किन्तु विचार-विनिमय ओर लगातार प्रार्थना करने पर वे हमारी वात मान गए। अपने उत्तरदायित्व का आप को कितना भान हे, यह वात इससे सिद्ध हो जाती हे। आपने यह भी बता दिया कि युक्ति ओर सत्य के सामने आप सदा झुकने को तेयार हे।

अजमेर मे प्राय प्रतिदिन हम पूज्य श्री के परिचय मे आते थे। आपके चरित्र-वल, स्पष्टवादिता, सभी के प्रति न्याय करने की अभिलाषा तथा विना सोचे विचारे किसी की न मानना आदि गुण देखने के हमे बहुत से अवसर प्राप्त हुए। हमारी राय मे पूज्य श्री सच्चे साधुत्व के प्रतीक हे, सत्य मार्ग म लीन हे तथा सत्य ओर पवित्रता पर दृढ विश्वास रखते हे।

हमने इस वात को हमेशा ध्यान से देखा कि जो व्यक्ति आपके दर्शन करने आते हे वे किस प्रकार हृदय से आपका सम्मान करते हे। १९३९ मे लाला रतनचन्द जी ने आपके दर्शन मोरवी मे भी किये थे। मोरवी नरेश भी आपके भाषणो मे आया करते थे ओर उन्हे अच्छी तरह सुनते थे। लाला रतनचन्दजी के साथ अमृतसर के लाला मोती लाल ओर लाला हसराज तथा लाहोर के लाला मुन्नीलाल भी थे। इन सज्जनो के भी पूज्यश्री के विषय मे बहुत ऊँचे विचार हे। आपकी वाणी को जो एक वार सुन लेता था वह वार-वार सुनने की इच्छा करता था।

५७- जीवन कला का दिव्य-दान

ले. शान्तिलाल वनमाली सेट, जैन गुरुकुल, व्यावर

पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज एक साधक महात्मा हे। उन्होने अपने जीवन का वहुत वडा भाग 'आत्म-साधना ओर जन-कल्याण-साधना' रूप धर्मकला की उपासना करने मे व्यतीत किया हे। ५१ वर्ष जितनी सुदीर्घ सयमी-जीवन की सतत 'साधना' ने उनको धर्म-जीवन के कुशल कलाकार ओर 'स्थविर' कर्णधार-धर्मनायक वना दिया हे। सच्चा स्थविर-धर्मनायक केसा होना चाहिए इसके विपय मं ठीक ही कहा गया हे कि -

न तेन वयो सो होति येनस्स फलित सिरो।
परिपक्को वयो तस्स मोधजिण्णो 'ति वुच्चति॥
यम्हिसच्च च धम्मो च अहिसा सजमो दमो।
स वे वन्तमलो धीरो सो थेरोत्ति पवुच्चति॥

-धम्मपद

अर्थात् जिनके मस्तक के वाल पक गये ह अथवा जो वयोवृद्ध हो गय हे उन्हे 'स्थविर' नही कह सकते। उन्ह तो 'मोघजीर्ण' ही कह सकते ह। सच्च स्थविर धर्मनायक तो व ही ह जिनके हृदय म अहिसा सयम, सत्य, दम-तप इत्यादि धर्मगुणो का वास हो और जो दोष रहित और धीर-वीर हो।

खुद के जीवन को सफल बनाना और दूसरो का जीवन-निर्माण करना-इन दोनो मे काफी अन्तर है। जगत मे आत्म-साधना और आत्म-ध्यान करनेवाले और उसी मे तल्लीन रहने वाले निवर्त्तक साधु-पुरुष कम नही हे लेकिन शास्त्रविहित निवृत्ति धर्म के आचार-नियमो का यथाविधि पालन करने के साथ-साथ जन-समाज का जीवन-निर्माण करना, जन को ज्ञान और चरित्र का शक्ति-दान देकर 'जैन' बनाना और मानव-समाज को सद्धर्म का मर्म शास्त्र-रीति तथा विज्ञान-नीति के द्वारा युक्ति प्रयुक्तिपूर्वक समझाकर धर्मनिष्ठ बनाना-आदि धर्ममूलक सत्प्रवृत्तियाँ करने वाले साधु पुरुष-महात्मा विरले ही होते है। ऐसे विरले महापुरुषो मे पूज्यश्री का स्थान अपूर्व और अद्वितीय है।

बबई के सुप्रसिद्ध गुजराती दैनिक पत्र 'जन्मभूमि' साहित्य-विभाग के सपादक ने 'कलम अने किताब' नामक स्तभ मे पूज्यश्री की 'जीवन-कला' पर (पूज्यश्री के व्याख्यानो के आधार पर इन पक्तियो के लेखक द्वारा सपादित 'धर्म अने धर्मनायक' नामक पुस्तक की) समालोचना करते हुए थोडा-सा प्रकाश इस प्रकार डाला है-

''धर्माचार्यों पर ऐसा आरोप-आक्षेप किया जाता है कि उन्होने प्राचीन शास्त्रग्रथो को सकीर्ण अर्थों मे कैद कर रक्खा है। आज एक जैनाचार्य ने अपने आदि पुरुषो की धर्मवाणी को उदार रूप देकर बधनमुक्त कर दिया है। जिस सरलता से दधिमथन नवनीत को उपरितल पर ला देता है उसी सरलता को इस विद्वान् आचार्यश्री ने शास्त्र-दोहन और शास्त्र-मथन की 'कला' के रूप मे रख दिया है। उन्होने शास्त्र-अर्थ को मोडा-तोडा नही है, न किसी प्रकार की खीचातानी ही की है। उन्होने तो प्राचीन जैन-ग्रन्थो को नवयुग के नूतन मानव-धर्मों के स्वर वाहक बना दिये है। यह उनकी प्रतिभा का द्योतक है।

वर्तमान जीवन को महत्त्व देकर जिन आचार्यश्री ने प्राचीन धर्मबोध को पुनर्जीवित किया हे उन्हे हम सच्चे समय-धर्मी-युगप्रधान के नाम से सबोधित करेगे और सच्चा समयधर्म-युगधर्म सनातनधर्म से भिन्न नही है यह भी हम साथ मे कहेगे''।

पूज्यश्री के जीवन-परिचय मे एक बार भी आने वाले और उनकी धर्मवाणी सुननेवाले उक्त उल्लेख से पूर्ण सहमत होगे, ऐसा मुझे विश्वास है। उक्त उल्लेख से पूज्यश्री ने जैनधर्म को, शास्त्रमर्यादाओ को ध्यान मे रखते हुए युगधर्म का रूप देकर ओर उसे विश्व-शान्ति का सन्देश वाहक बनाकर समाज और राष्ट्र में नवजीवन का सचार किया है और इस प्रकार श्रमण-सस्कृति का समुत्थान करने मे अपनी जीवन कला का दिव्य दान दिया हे-इस बात का सामान्य प्रतिभास मिलता है।

पूज्यश्री को अपने उत्तरदायित्व का पूरा भान हे। उन्होने अपनी सारी जीवन-शक्ति सद्धर्म के प्रचार मे ओर मुख्यत जन समाज के तथा सामान्यत जन-समाज के उद्धार के लिए समर्पित कर दी हे और उनकी उद्बोधक, प्रेरक और रोचक व्याख्यान-वाणी के द्वारा समाज ओर राष्ट्र को आशातीत लाभ भी पहुँचा हे।

उन्होने धार्मिक अन्धश्रद्धा के स्थान पर 'धार्मिकता' की पुन प्रतिष्ठा की हे। समाज-जीवन मे घुसी हुई कुरूढियो के थरो को समाज के अग-प्रत्यग क्षत-विक्षत न हो ऐसी सतर्कता के साथ एक कुशल कलाकार के से कोशल से उखाड कर फेक दिया हे ओर उनके स्थान पर समाज की नवरचना

की है। समाज म से, रूढिच्छेद करने से धार्मिक अन्धश्रद्धा दूर करने से समाजोद्धार, सघोद्धार ओर राष्ट्रोद्धार की प्रवृत्ति को काफी वल मिला हे ओर समाज व धर्म की जागृति के द्वारा राष्ट्र की जागृति भी हुई है। इसका श्रेय पूज्यश्री की धर्म-प्रचारकता, समयसूचकता ओर उनकी जीवन-कला की उपासना को प्राप्त होता है।

इस प्रकार जव पूज्यश्री की सर्वाङ्गीण जीवन-विकास की जीवन-कला के अनन्य उपासक ओर उसके प्रखर प्रचारक की दृष्टि से-समीक्षा करते हे तव हमे कहना पडता हे कि पूज्यश्री केवल जेन-समाज की ही नही अपितु समस्त भारतवर्ष की वदनीय विभूति है। जेन-समाज के तो जगमगाते ज्योतिर्धर 'जवाहर' हे ही उन्होने अपनी जीवन ज्योति के द्वारा राष्ट्र, समाज ओर धर्म को आलोकित किया है।

वास्तव मे पूज्यश्री की ओजस्विनी, प्रभावोत्पादक धर्मवाणी वाग्विलास की वानगी नही है अपितु सुदीर्घ सयम-साधना के फलस्वरूप अन्तस्तल से निकली हुई युगवाणी है। इस उदान वाणी के उद्गाता ने जेनधर्म के प्राण भूत तत्त्वो का युगदृष्टि से पर्यवेक्षण करके जेन धर्म को युगधर्म बनाने मे वडा भारी योगदान दिया है। यही उनका दिव्य-दान है। पूज्यश्री की यह वहुत वडी देन है।

५८— हिन्दना धर्मगुरुओ अने क्रान्ति

सौराष्ट्र-राष्ट्रनायक राजकोट सत्याग्रह सेनानी श्री ढेवर भाई

खरेखर हिन्दुस्तान वीजा देशो करता जुदी जातनो मुल्क छे। वीजा दशो करता तेनी विशिष्टता एमा समायेली छे के तेनो वधार सामाजिक तथा राजकीय होवा छता साथे-साथे आध्यात्मिक पण छे। हिन्दुस्तान नी भूतकाल नी लगभग वधीज क्रान्तिओना प्रणेताओ राजपुरुष होवा ने उपरान्त अथवा विशिष्टपणे सत अने महात्माओ हता। अने आजे पण तेज इतिहास नु पुनरावर्तन आपणी नजर समक्ष आपणे देखीए छीए।

आथी ज्यारे-ज्यारे हिन्दनी वर्तमान क्रान्ति नु विचार करू छु त्यारे साथो साथ हिन्दमा विचरता धर्मगुरुओ धारे तो, हिंदने अत्यार नी पतित अने अनाथ दशा मा थी उगारवानी दिशामा ज कार्य हाल थई रह्यु छे तेने केटलो वेग मले ? अने टेको आपी शके! तेना विचारो मारा मन आगल तरी आव छे।

मारी आ लागणीना जवाव रूपेज जाणे होय नहि तेम १९३८ नी सालमा राजकोट सत्याग्रह वखते श्रीमद् जवाहरलालजी महाराज राजकोट मा विराजता हता। आने जेन अन जेनेतर समाज ने हिम्मत भरी रीते तेज दिशामा मार्गदर्शन आपी रह्या हता।

तेमनु प्रभावशाली व्यक्तित्व, तेमनु सिद्धासन, तेमनो अस्खलित वाणी प्रवाह, आध्यात्मिक विषयनी चर्चा करती वखते पण श्रोताओनी मर्यादा अने तेने परिणामे उपस्थित थती धर्म-प्रवक्ता तरीकेनी पोतानी जवावदारी नो ऊडो खयाल, ए-मर्यादाओ ने लक्षमां राखी ने व्यवहार शुद्धि ऊपर तेमना भार, अने अहिसा ना आचार धर्म-तरीके खादी ने अपनाववानो , दरिद्र नारायण मात्रनी सेवा करवानो, राष्ट्रभावना नो विकास साधवानो अने सर्व रीते जीवन मा स्वाश्रयी वनवानो तेमनो आग्रह ए वधा आ पण मारी नजर आगल तरे छे।

५९— गीताशास्त्र के मर्मज्ञ

श्री हरनाथजी टल्लू, पुष्करणा–समाज नेता, जोधपुर

जब से पूज्यश्री जोधपुर मे चातुर्मास कर अपने व्याख्यान रसास्वादन का मुझे चस्का लगा कर गये हे, तब से आज तक मेरी यही हार्दिक मनोकामना रही आई हे कि मे एक बार उसी आत्मशान्ति का पुन अनुभव करू जो कि पूर्व चातुर्मास मे कर चुका हूँ। तदनुसार प्रयत्न आरभ कर एक बार मे स्वय कोसिल-सेक्रेटरी श्रीउमरावसिहजी के साथ जेठाणे तथा दूसीर बार श्रीमान् जसवन्तराजजी के साथ जयतारण भी विनत्यर्थ गया किन्तु पूज्यश्री की शारीरिक अस्वस्थता के कारण हमे अपने प्रयास मे सफलता प्राप्त न हो सकी। फिर भी मुझे उनके सम्पर्क मे रहने पर उनके व्यक्तित्व के सम्बन्ध मे जो कुछ अनुभव हुआ हे उसके आधार पर मै यह दावे के साथ कह सकता हूँ कि पूज्यश्री जवाहरलालजी म सा गीता-शास्त्र के पूर्ण मर्मज्ञ है। गीता के गभीर श्लोको का जो अर्थ-स्पष्टीकरण करते हे, वह वास्तव में अनुपम, सरल और सुबोध है। ऐसे मर्मज्ञ साधु अन्य समाज मे कम पाये जाते है। उनकी शान्त मुखमुद्रा ओर ध्यान-स्थिति ने मेरे हृदय पर भक्तिभावना के नवीन ही अकुर अकुरित किये हे।

६०— प्रभावक प्रवचन

शाहजी जी हनवन्तचन्द्रजी लोढ़ा, जोधपुर

मेरे मन मे चिरकाल से यह उत्कठा तीव्र रूप धारण करती जा रही थी कि मे पूज्यश्री जवाहरलालजी म सा जैसे उच्च महात्मा पुरुष का समागम करू व उनके सारगर्भित रहस्यपूर्ण व्याख्यान का श्रवण करू। निदान मेरी यह भावना उनके जोधपुर चातुर्मास के समय पूर्ण हुई। उक्त महात्मा के प्रवचनामृत का पान मैने पूर्ण उमग और हार्दिक भक्तिभावना से किया। अन्य सत महात्माओ की अपेक्षा भी उनमे जो प्रशसनीय गुण मैने पाया वह यह कि उनके उपदेश-तत्व विद्वान, मूर्ख, आबाल-वृद्ध, वनिता आदि सब पर एक समान जादू का असर डालकर सबको सन्मार्ग की ओर तत्काल आकर्षित कर लेते हे। उनकी व्याख्यान शैली की विशिष्टता भूरि-भूरि प्रशसनीय है।

६१— परम प्रतापी पूज्यश्री जवाहरलाल जी म. के घटाकोपर चातुर्मास की एक महती स्मृति

श्री छत्रसिह चुन्नीलाल परमार, मैनेजर घाटकोपर जीवदया खाता

शास्त्र में ओर व्यवहार मे यह बात सर्वमान्य कही जाती है कि जहा–जहा सत पुरुष के पदार्पण होते हे वहाँ सुख और शान्ति का साम्राज्य छा जाता हे। यह भी एक ऐसी घटना हे जो उपरोक्त कथन का सविशेप समर्थन करती हे।

स १९७९ की साल थी। परमप्रतापी श्रीजैनाचार्य १००८ श्री पूज्यश्री जवाहरलालजी म दक्षिण प्रान्त को पावन करते हुए चातुर्मास के लिये बम्बई के प्रति विहार कर रहे थे।

घाटकोपर शेष काल विता कर आगे बढे। बीच मे बादरे और कुरले के कसाई खाने मे कतल किये गये पशुओ के मास को ले जाते हुए टोकरो पर पूज्य महाराज साहब की दृष्टि पडी। पूज्य महाराज साहब ने साथ मे चलते हुए श्रावको से सभी हाल मालूम कर लिया ओर बम्बई के दोनो कसाई खानो

की है। समाज में से, रूढिच्छेद करने से धार्मिक अन्धश्रद्धा दूर करने से समाजोद्धार, सघोद्धार और राष्ट्रोद्धार की प्रवृत्ति को काफी वल मिला है और समाज व धर्म की जागृति के द्वारा राष्ट्र की जागृति भी हुई है। इसका श्रेय पूज्यश्री की धर्म-प्रचारकता, समयसूचकता और उनकी जीवन-कला की उपासना को प्राप्त होता है।

इस प्रकार जव पूज्यश्री की सर्वाङ्गीण जीवन-विकास की जीवन-कला के अनन्य उपासक और उसके प्रखर प्रचारक की दृष्टि से-समीक्षा करते है तव हमे कहना पडता है कि पूज्यश्री केवल जेन-समाज की ही नही अपितु समस्त भारतवर्ष की वदनीय विभूति है। जेन-समाज के तो जगमगाते ज्योतिर्धर 'जवाहर' है ही उन्होने अपनी जीवन ज्योति के द्वारा राष्ट्र, समाज ओर धर्म को आलोकित किया है।

वास्तव मे पूज्यश्री की ओजस्विनी, प्रभावोत्पादक धर्मवाणी वाग्विलास की वानगी नही है अपितु सुदीर्घ सयम-साधना के फलस्वरूप अन्तस्तल से निकली हुई युगवाणी है। इस उदान वाणी के उद्‌गाता ने जेनधर्म के प्राण भूत तत्त्वो का युगदृष्टि से पर्यवेक्षण करके जेन धर्म को युगधर्म वनाने मे वडा भारी योगदान दिया है। यही उनका दिव्य-दान है। पूज्यश्री की यह वहुत वडी देन है।

५८— हिन्दना धर्मगुरुओ अने क्रान्ति

सौराष्ट्र-राष्ट्रनायक राजकोट सत्याग्रह सेनानी श्री ढेवर भाई

खरेखर हिन्दुस्तान वीजा देशो करता जुदी जातनो मुल्क छे। वीजा देशो करता तेनी विशिष्टता एमा समायेली छे के तेनो वधार सामाजिक तथा राजकीय होवा छता साथे-साथे आध्यात्मिक पण छे। हिन्दुस्तान नी भूतकाल नी लगभग वधीज क्रान्तिओना प्रणेताओ राजपुरुष होवा ने उपरान्त अथवा विशिष्टपणे सत अने महात्माओ हता। अने आजे पण तेज इतिहास नु पुनरावर्तन आपणी नजर समक्ष आपणे देखीए छीए।

आथी ज्यारे-ज्यारे हिन्दनी वर्तमान क्रान्ति नु विचार करू छु त्यारे साथो साथ हिन्दमा विचरता धर्मगुरुओ धारे तो, हिंदने अत्यार नी पतित अने अनाथ दशा मा थी उगारवानी दिशामा जे कार्य हाल थई रह्यु छे तेने केटलो वेग मले ? अने टेको आपी शके' तेना विचारो मारा मन आगल तरी आवे छे।

मारी आ लागणीना जवाव रूपेज जाणे होय नहि तेम १९३८ नी सालमा राजकोट सत्याग्रह वखते श्रीमद् जवाहरलालजी महाराज राजकोट मा विराजता हता। आने जेन अने जेनेतर समाज ने हिम्मत भरी रीते तेज दिशामा मार्गदर्शन आपी रह्या हता।

तेमनु प्रभावशाली व्यक्तित्व, तेमनु सिद्धासन, तेमनो अस्खलित वाणी प्रवाह, आध्यात्मिक विपयनी चर्चा करती वखते पण श्रोताओनी मर्यादा अने तेने परिणामे उपस्थित थती धर्म-प्रवक्ता तरीकेनी पोतानी जवावदारी नो ऊडो खयाल, ए-मर्यादाओ ने लक्षमाँ राखी ने व्यवहार शुद्धि ऊपर तेमनो भार, अने अहिसा ना आचार धर्म-तरीके खादी ने अपनाववानो , दरिद्र नारायण मात्रनी सेवा करवानो, राष्ट्रभावना नो विकास साधवानो अने सर्व रीते जीवन मा स्वाश्रयी वनवानो तेमनो आग्रह ए वधा आज पण मारी नजर आगल तरे छे।

५९— गीताशास्त्र के मर्मज्ञ

श्री हरनाथजी टल्लू, पुष्करणा—समाज नेता, जोधपुर

जब से पूज्यश्री जोधपुर मे चातुर्मास कर अपने व्याख्यान रसास्वादन का मुझे चस्का लगा कर गये है, तब से आज तक मेरी यही हार्दिक मनोकामना रही आई हे कि मे एक बार उसी आत्मशान्ति का पुन अनुभव करू, जो कि पूर्व चातुर्मास मे कर चुका हूँ। तदनुसार प्रयत्न आरभ कर एक बार मे स्वय कौसिल-सेक्रेटरी श्रीउमरावसिहजी के साथ जेठाणे तथा दूसीर बार श्रीमान् जसवन्तराजजी के साथ जयतारण भी विनत्यर्थ गया किन्तु पूज्यश्री की शारीरिक अस्वस्थता के कारण हमे अपने प्रयास मे सफलता प्राप्त न हो सकी। फिर भी मुझे उनके सम्पर्क मे रहने पर उनके व्यक्तित्व के सम्बन्ध मे जो कुछ अनुभव हुआ है उसके आधार पर मै यह दावे के साथ कह सकता हूँ कि पूज्यश्री जवाहरलालजी म सा गीता-शास्त्र के पूर्ण मर्मज्ञ है। गीता के गभीर श्लोको का जो अर्थ-स्पष्टीकरण करते हे, वह वास्तव में अनुपम, सरल ओर सुबोध है। ऐसे मर्मज्ञ साधु अन्य समाज मे कम पाये जाते है। उनकी शान्त मुखमुद्रा और ध्यान-स्थिति ने मेरे हृदय पर भक्तिभावना के नवीन ही अकुर अकुरित किये है।

६०— प्रभावक प्रवचन

शाहजी जी हनवन्तचन्द्रजी लोढ़ा, जोधपुर

मेरे मन मे चिरकाल से यह उत्कठा तीव्र रूप धारण करती जा रही थी कि मै पूज्यश्री जवाहरलालजी म सा जैसे उच्च महात्मा पुरुष का समागम करू व उनके सारगर्भित रहस्यपूर्ण व्याख्यान का श्रवण करू। निदान मेरी यह भावना उनके जोधपुर चातुर्मास के समय पूर्ण हुई। उक्त महात्मा के प्रवचनामृत का पान मैने पूर्ण उमग और हार्दिक भक्तिभावना से किया। अन्य सत महात्माओ की अपेक्षा भी उनमे जो प्रशसनीय गुण मैने पाया वह यह कि उनके उपदेश-तत्व विद्वान, मूर्ख, आबाल-वृद्ध, वनिता आदि सब पर एक समान जादू का असर डालकर सबको सन्मार्ग की ओर तत्काल आकर्षित कर लेते हे। उनकी व्याख्यान शैली की विशिष्टता भूरि-भूरि प्रशसनीय है।

६१— परम प्रतापी पूज्यश्री जवाहरलाल जी म. के घटाकोपर चातुर्मास की एक महती स्मृति

श्री छत्रसिह चुन्नीलाल परमार, मैनेजर घाटकोपर जीवदया खाता

शास्त्र में ओर व्यवहार मे यह बात सर्वमान्य कही जाती है कि जहा—जहा सत पुरुष के पदार्पण होते हे वहाँ सुख और शान्ति का साम्राज्य छा जाता है। यह भी एक ऐसी घटना है जो उपरोक्त कथन का सविशेष समर्थन करती हे।

स १९७९ की साल थी। परमप्रतापी श्रीज्जैनाचार्य १००८ श्री पूज्यश्री जवाहरलालजी म दक्षिण प्रान्त को पावन करते हुए चातुर्मास के लिये वम्बई के प्रति विहार कर रहे थे।

घाटकोपर शेप काल बिता कर आगे बढे। बीच मे बादरे ओर कुरले के कसाई खाने मे कतल किये गये पशुओ के मास को ले जाते हुए टोकरो पर पूज्य महाराज साहब की दृष्टि पडी। पूज्य महाराज साहब ने साथ मे चलते हुए श्रावको से सभी हाल मालूम कर लिया ओर वम्बई के दोनो कसाई खानो

मे पतिदिन होती हुई हजारो निर्दोप दुधारू पशुओ की कतल को सुनकर उपस्थित सभी किर्तव्य विमूढ से हो गये। पूज्य महाराज न भी मन मे सोच लिया कि इन निर्दोप दुधारू पशुओ की कतल हमारे देश-जाति-धर्म मानवता का एक महान कलक रूप हे। पूज्य महाराज साहव के मन मे यही मथन चला। अन्त म कई कारणो को ध्यान मे लेते हुए वम्वई चातुर्मास से इन्कार करते हुए वम्वई को विना फरस ही वीच मे वापिस घाटकोपर लोट आये ओर अनायास ही पूज्य महाराज साहव के चातुर्मास का अपूर्व लाभ घाटकोपर को मिल गया।

घाटकोपर के चातुर्मास मे पूज्य महाराज साहव अपने व्याख्यानो मे जीवदया के प्रश्न की चर्चा करते ही रहते थे परन्तु साथ ही साथ एक ऐसा अपूर्व अवसर आ मिला जिसके फलस्वरूप इस श्री घाटकोपर सार्वजनिक जीव दया खाता की स्थापना मे खास निमित्त मिल गया।

पूज्य श्री जवाहरलाल जी म के सुशिष्य तपस्वी मुनि श्री सुन्दरलाल जी म ने ८१ दिन के उपवास की घोर तपश्चर्या शुरू की। तपस्वी जी के दर्शनार्थ वम्वई शहर के ओर दूर सुदूर के जेन जेनेतर भाई-वहन आने लगे। व्याख्यानो मे जीव दया का सतत उपदेश,तपस्वी जी के तपश्चर्या के प्रभाव ओर स्थानीय तथा दर्शनार्थ आनेवाले आगेवान जेन जेनेतर भाइयो के सत्प्रयत्न से ता १८-८-२३ तदनुसार मिति स १९७९ की श्रावण शुक्ला सप्तमी के रोज 'श्री घाटकोपर सार्वजनिक जीवदया मण्डल' की स्थापना हुई।

६२– जवाहिर-ज्योति

ले. प. रतनलालजी सघवी 'न्यायतीर्थ' विशारद, छोटी सादड़ी (मेवाड़)

वर्तमान-काल की विश्व विभूतियो मे जेनाचार्य श्री जवाहिरलाल जी महाराज भी एक उच्च कोटि की विभूति थे, ऐसा कहना, न तो अत्युक्ति पूर्ण हे ओर न मिथ्या-कल्पना। उनका स्वतन्त्र व्यक्तित्व, वैराग्यमय साधुत्व, मोलिक-विचारधारा, अल्पारभ-महारभ रूप विवाद के प्रति उनका अपना गभीर सचोट विवेचन, आत्यतिक श्रद्धामय उनकी ईश्वर भक्ति, राष्ट्रीय भावना का प्रतीक रूप उनका खादी प्रेम, प्राञ्जल-शेली युक्त प्रसाद गुण सपन्न उनकी साहित्य-रचना ओर समय समय पर राष्ट्रधर्म के प्रति उन द्वारा दिये गये व्याख्यानों से प्रकटित उनका राष्ट्रीय नेतृत्व, निस्पृहतापूर्ण उनका आचार्यत्व, अछूतोद्धार-भावना, सत्य के प्रति उनका स्नेह ओर अहिंसा के प्रति उनकी आस्था - ये वे गुण हे, जो कि उनके जीवन मे, मन मे, वचन मे, कर्म में, आत्मा मे ओत-प्रोत थे! उनके इन्ही गुणो ने मुझे लेख की आदि मे यह लिखने को विवश किया कि "वे विश्व-विभूति थे"।

श्री स्थानकवासी समाज के दायरे मे जीवन-यापन नही कर यदि राष्ट्रीय-क्षेत्र मे जीवन-यापन का प्रसग उपस्थित होता तो पूज्य श्री, महात्मा गाधी ओर प जवाहरलाल नेहरू के समान ही भारत के राष्ट्रीय क्षितिज पर अपनी दिव्य ज्योति के साथ चमकते एव यह भी निस्सकोच कहा जा सकता हे कि उस दशा मे भी इनकी कार्यप्रणाली ओर साधन अहिसा एव सत्य ही रहते।

आचार्य श्री का पाडित्य पल्लवग्राही नही था, वल्कि वर्षों तक आपने भारतीय दर्शनो के साथ साथ भारतेतर-मुस्लिम, ईसाई आदि के धर्म-ग्रन्थो का भी वाचन, मनन ओर श्रवण किया था। आपकी व्याख्यान शेली-मधुर, अनुभूतिपूर्ण, सरल किन्तु मार्मिक ओर शव्दाडम्वरो से रहित होती हुई भी

पभावशाली एव हृदय तक पहुँच करने वाली होती थी। व्याख्याता की वाणी श्रोताओ के हृदय तक तभी पहुच सकती हे जबकि वह हृदय से निकली हुई हो। वे केवल व्याख्यान देने के लिये व्याख्यान नही देते थे, किन्तु हृदय की अनुभूति को प्रकाश मे लाने के लिये ही व्याख्यान दिया करते थे। उनकी त्यागमय श्रद्धा शब्द-शब्द मे टपकती थी। उनका आत्मबोध स्व पर कल्याणकर था। उनकी ईश्वरीय भक्ति सासारिक मोह को काटने मे एक अमोघ अस्त्र थी।

उनके स्वतत्र व्यक्तित्व ने यह उक्ति प्रचलित कर दी है कि भारत मे दो जवाहिर है-एक धर्मनायक तो दूसरे राष्ट्रनायक। निस्सदेह इस उक्ति मे सच्चाई है, क्योंकि उनके त्यागमय जीवन और वेराग्यमय भावना ने उनको एक आध्यात्मिक महापुरुष के रूप मे परिणत कर दिया था। भारतीय दार्शनिक सस्कृति के अनुरूप उनमे अनुभूतिपूर्ण आत्मिकता और ईश्वरीय प्रेम, ईश्वरीय-अनुभव, प्राचीन ऋषियो के समान ही ज्योति रूप से विद्यमान था। इसी मौलिक विशेषता मे उनका स्वतत्र व्यक्तित्व निवास करता था, जो कि जनता को उनके प्रति आकर्षित, मोहित और श्रद्धामय करता था।

इनकी मौलिक विचार-धारा का पता इसी से लगता है कि ये अपने राष्ट्रऋण राष्ट्र-धर्म को साधु-मर्यादा मे भूल नही गये थे बल्कि खादी, अछूतोद्धार, देशभक्ति और राष्ट्र-प्रेम के मार्ग मे बडा सुन्दर और स्तुत्य प्रयत्न व्याख्यानो द्वारा जीवन-पर्यंत चलता रहा। स्थानकवासी-जेनसमाज के साधुओ की व्याख्यानो की परिपाटी मे उपरोक्त प्रयत्न से सुधार का विकास हुआ और अनेक साधुओ के हृदय मे "देश क्या हे और समाज का-श्रीसघ का क्या कर्त्तव्य है" की भावना ओर विचार जागृत हुए।

अल्पारभ-महारभ का प्रश्न उनके जीवन मे बडा ही सुन्दर चला था। आपने बडी सुन्दर रीति से तात्विक तर्को के साथ-मशीनवाद रूप महारभ को और अन्य कृत वस्तु को खरीदने मे, हाथ की कारीगरी और स्वीकृत-वस्तु के उपयोग के आगे, महारभ सिद्ध किया था। आज भी अनेक साधुओ के मस्तिष्क मे यह बात नही आ रही है-यह आश्चर्य और दु ख की बात हे। स्थलसकोच से इस विषय मे यहाँ पर अधिक नही लिखकर यह प्रयत्न करूँगा कि एक अलग ही स्वतन्त्र लेख में इस विषय पर प्रकाश डालू।

खादी उनके व्याख्यानो का एक अभिन्न अग थी। खादी मे वे सत्य ओर अहिंसा की झाकी देखते थे। मीलवाद बनाम मशीनरीवाद उनकी दृष्टि मे आत्मा का हनन करने वाला और नैतिक पतन के साथ-साथ महान् गरीबी लाने वाला था। खादी को वे गरीबो की रोटी, विधवाओ का सहारा और अन्धो की लकडी समझते थे। कहना प्रासगिक ही होगा कि स्थानकवासी समाज के अनेक धनाढ्य व्यक्तियो ने आप ही के उपदेश से खादी को पहनना प्रारम्भ किया था।

उनकी साहित्य रचना की शेली भी युगानुसारिणी थी। यही कारण हे कि आपका साहित्य सेकडो वर्षो तक जनता मे इसी प्रकार आदर प्राप्त करता रहेगा जेसा कि उसे आज आदर प्राप्त हे। उनकी स्मृति मे जो धन-राशि एकत्र की जा रही हे, अच्छा यह हो कि इस धन-राशि से उनके अमर साहित्य का अत्यल्प मूल्य मे जेनेतर-जनता मे प्रचार किया जाय एव नूतन-मोलिक साहित्य की रचना करवा कर उसे प्रकाशित किया जाय। तात्पर्य यह हे कि उनकी पवित्र स्मृति की रक्षा साहित्य-निर्माण के कार्य से की जाय ओर एकत्र धन-राशि का यही उपयोग किया जाये।

६३—धर्माचार्य जवाहर

श्री इद्रचन्द्र शास्त्री एम ए शास्त्राचार्य, वेदान्तवारिधि, न्यायतीर्थ प्रोफेसर वैश्य कॉलेज, भिवानी

विशाल हृदय, सूक्ष्म निरीक्षण, दृढ निश्चय तथा मानव समाज को उन्नत-ऊँचा उठाने की तीव्र भावना महापुरुष के आवश्यक गुण हे। जीवन के आन्तरिक रहस्य को खोजकर ससार के सामने रखना महान् आत्माओ का सव से वडा कार्य होता हे। जो व्यक्ति सर्वप्रथम उस रहस्य को अभिव्यक्त करता हे उसे अवतार कहा जाता हे। जो उसे सगीतमय वना देता हे वह महाकवि हे। जो उसके लिए युद्ध करता हे वह नेता हे। जो उसके लिए साधना करता हे वह तपस्वी हे। जो उसे जनता मे फेलाता हे वह उपदेशक हे। धर्माचार्य मे नेता, तपस्वी ओर उपदेशक तीनो का सम्मिश्रण होता हे। पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज सच्चे धर्माचार्य थे।

एक सम्प्रदाय के गद्दीधर नायक होने पर भी उन का हृदय विशाल था। मत मतान्तरो का पारस्परिक-विरोध आपकी दृष्टि मे नगण्य था। समुद्र की एक तरग इधर से उठती हे, एक उधर से उठती हे। दोनो शत्रु वनकर टकराती हे किन्तु समुद्र मे विलीन होकर एक हो जाती हे। गभीर समुद्र एक हे। तरगे ऊपर का खेल हे। इसी पकार वास्तविक धर्म एक हे। मत मतान्तर तो केवल तरगे हे। उसका विकार है। बुदबुदे हे। आध्यात्मिक रहस्य एक ही हे। विभिन्न परिस्थितियो के कारण ऊपरी विरोध खडे होते हे और परस्पर टकाराकर एकता मे लीन हो जाते हे। चिरकाल से परस्पर विरोधी मानी जाने वाली श्रमण ओर ब्राह्मण सस्कृतियो के मूल मे भी पूज्य श्री एकता का दर्शन करते थे। भगवद्‌गीता और जेन शास्त्रो मे आपकी निष्काम कर्मयोग या अनासक्तिवाद का तत्त्व समान रूप से दिखाई देता था।

आप मानवता के पुजारी थे। मानवता आपकी दृष्टि मे सव से वडा धर्म था। दया, प्रेम, परस्पर सहानुभूति मानवता के स्वाभाविक गुण हे। जो मत या सम्प्रदाय इनके विरुद्ध प्रचार करे वह आपकी दृष्टि मे मानवता का रोग हे। उसका प्रबलतम विरोध करना तथा उसे मिटा देना आप अपना कर्तव्य मानते थे। इसके लिए कष्टो की परवाह न करते हुए वाणी, लेखनी ओर तपस्या के साधनो द्वारा आपने अथक परिश्रम किया ओर जनता के सामने सच्चाई रखी। आप कहा करते थे-"जव गरीव आपको प्यारे नही लगते तो क्या दूसरो को मारने के लिए ईश्वर से वल की याचना करते हो" ?

ईश्वर रक्षा के लिए वल देता है, संहार के लिए नहीं

धर्म की निर्जीवता का कारण क्या हे ? इस प्रश्न पर आपने सूक्ष्म दृष्टि से विचार किया था। आपका यह विश्वास था कि सासारिक द्वन्द्वो से डरा हुआ व्यक्ति धर्म का पालन नही कर सकता। उन द्वन्द्वो पर विजय प्राप्त करने वाला ही धर्म का सच्चा आराधक हो सकता हे। आप की दृष्टि मे धर्म केवल उपाश्रय या स्थानक मे वेठकर करने की चीज नही हे किन्तु जीवन की प्रत्येक प्रवृत्ति मे, प्रत्येक क्षेत्र मे ओर प्रत्येक क्षण में उसकी उपासना होनी चाहिए। धर्मस्थान मे सन्ध्या, उपासना, सामायिक आदि करता हुआ भी जो व्यक्ति व्यापार के समय धर्म को भूल जाता हे, अपने भाइयो के साथ वर्ताव करते समय धर्म की परवाह नही करता वह सच्चा धर्मात्मा नही हे। उसका धर्म निष्प्राण हे। नि सार हे। निर्जीव हे।

समाज मे फैली हुई अन्ध श्रद्धा और कुरीतियो पर आपकी आत्मा तिलमिला उठती थी।

बीकानेर राज्य के प्रधानमत्री सर मनुभाई मेहता गोलमेज कान्फरेस मे सम्मिलित होने के लिए इग्लेड जा रहे थे। उस समय आप आचार्य श्री का सन्देश प्राप्त करने आए। आचार्य ने कहा-

लोग कहते है, धर्म व्यक्तिगत वस्तु है। इसलिए गोलमेज कान्फरेस में धर्म का कोई प्रश्न नही हो सकता। मै कहता हूँ, गुलाम और अत्याचार पीडित जनता मे वास्तविक धर्म का विकास नही हो सकता। धार्मिक विकास के लिए स्वतन्त्रता अनिवार्य हे''।

''विधवाओ की दुर्दशा देख कर आप की आत्मा पुकार उठती है-मित्रो! विधवा बहिने आपके घर की शील देविया है। इनका आदर करो। इन्हे पूज्य मानो। इन्हे खोटे दुखदाई शब्द मत कहो। ये शीलदेवियाँ पवित्र है। पावन है। मगल रूप है। इनके शकुन अच्छे है। शील की मूर्ति क्या कभी अमगलमयी हो सकती है'' ?

देशसेवा से प्रेरित होकर आपने एक दिन कहा-''याद रखिए आपके ऊपर मातृ भूमि का ऋण सब से अधिक है। आपके माता पिता इसी भूमि मे पले है और इसी के द्वारा आपका तथा उनका जीवन टिक रहा है। आपका सर्वप्रथम कर्तव्य मातृभूमि का ऋण चुकाना होना चाहिए। मातृभूमि और माता का ऋण चुकाने के बाद आगे पैर बढाना चाहिए''।

आचार्य श्री की प्रतिभा सर्वतोमुखी थी। राष्ट्रीय, सामाजिक, आध्यात्मिक, नेतिक अथवा व्यावहारिक ऐसा कोई भी विषय नही है जिस पर आपने अधिकार पूर्ण विवेचन न किया हो। आप की वाणी मे जादू था। बिल्कुल साधारण सी बात को प्रभावशाली एव रोचक बनाने में आप सिद्धहस्त थे। सभी धर्म तथा सभी सिद्धान्तो का समन्वय करके नवनीत निकालने की कला अद्‌भुत रूप से विद्यमान थी। जीवनकला के आप महान् कलाकार थे। वैयक्तिक तथा सामाजिक, राष्ट्रीय तथा धार्मिक सभी क्षेत्रो मे आप की कला अव्याहत थी। आपके उपदेश सभी मार्गों के सगमस्थल थे।

जहाँ प्राणियो का दुख देख कर आपका हृदय रो पडता था, वहाँ आप कठोर अनुशासन के भी पक्षपाती थे। किसी प्रकार का दोष लगने पर प्रिय से प्रिय शिष्य को भी आपने उचित दण्ड दिया। योग्य होने पर दूसरे को भी ऊचे से ऊचा पद दिया। जिस बात को आपने ठीक समझा उसके लिए विरोध की परवाह न की। उसी के युक्ति द्वारा गलत साबित हो जाने पर अपनी भूल स्वीकार करने मे कोई हिचकिचाहट नही की। उस समय आप विरोधी दल के अग्रणी बन गए। विरोध के सामने झुकना आपने सीखा ही नही किन्तु युक्ति के आगे सिर झुकाना अपना कर्तव्य माना।

वह प्रतिभा, वह त्याग, वह तपस्या, वह तेज, वह सत्यप्रियता और वह वाणी अब कहाँ ?

६४—अहिंसा और सत्य के महान् प्रचारक प्रतिभाशाली जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज

(श्री पदमसिह जी जैन)

जेन जाति के उद्धार के लिये जिन्होने आजीवन अविश्रान्त श्रम किया, थली जेसे मिथ्या श्रद्धा वाले देश मे पैदल भमण कर हजारो मिथ्या श्रद्धा वालो को शुद्ध श्रद्धा वाले वनाये, मोरवी नरश आदि ऐसे अनेक राजा महाराजाओ को जेन धर्म की श्रेष्ठता ओर जेन धर्म के सिद्धान्त समझाये। गुजरात,

काठियावाड, मारवाड, मेवाड, मालवा, थली, दक्षिण खानदेश, वम्बई, दिल्ली आदि प्रान्तो मे पेदल भ्रमण करके जैनो मे से अज्ञानजन्य रूढिया दूर कराई ओर जिनके उपदेश मात्र से अनेक लोकोपकारी सस्थाए स्थापन हुई, ऐसे स्वनामधन्य जेनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज के सबध मे यह लेखनी लिखने की कुछ भी शक्ति नही रखती।

सामाजिक, धार्मिक एव देशोद्धारक कार्यों मे रात-दिन लगे रहने पर भी आपने अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो की रचना ऐसी सरल व सरस भाषा मे की हे जिसके कारण आज उनके द्वारा जेनत्व और जेन धर्म के सत्य सिद्धान्तो का घर-घर मे प्रचार हो रहा हे।

एक चतुर कलाकार मिट्टी के लोदे को जिस तरह अपनी अगुलियो की करामात से जी चाहा रूप दे देता हे, उसी तरह पूज्यश्री को लोगो के दिल अपने अनुकूल बना लेने की शक्ति प्राप्त हे। आपके उपदेश मे एक खास विशेषता हे। वह यह कि-यद्यपि पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज जेनाचार्य हे परन्तु आपका उपदेश सर्वसाधारण के लिए ऐसा रोचक ओर उपयोगी होता हे, जिससे ब्राह्मण, जेन, क्षत्रिय, मुसलमान और पारसी आदि समस्त लोग मुग्ध हो जाते हे।

वादीमान-मर्दक प्रात स्मरणीय स्वर्गीय जेनाचार्य श्री माधव मुनिजी तो आपको समाज में शार्दूलसिह समान शक्तिशाली ओर शख जेसा पवित्र समझते रहे। ऐसी महान् आत्मा का साया हम पर बना रहे यही शासन देव से प्रार्थना हे।

६५— तीर्थराज जवाहर

(लेखक – श्री तारानाथ रावल विशारद)

यो तो 'तीर्थ' शब्द के कोष मे १७ अर्थ लिखे हे, मुझे उन सबसे कोई मतलब नही। मे तो यहा उन्ही अर्थों को लिखूगा जो मुझे अभिप्रेत हे। वे अर्थ ये है - 1 माता पिता, 2 ईश्वर, 3 तारने वाला, 4 ब्राह्मण, 5 गुरु, 6 अवतार, 7 यज्ञ, 8 शास्त्र, 9 कोई भी पवित्र स्थान, 10 वह पवित्र या पुण्य स्थान जहा धर्म भाव से लोग यात्रा, पूजा या स्नान आदि के लिये जाते हो।

अब विज्ञ पाठक समझ गये होगे, कि 'तीर्थ' शब्द का प्रयोग मेने यहा किन अर्थो मे किया हे, और क्यो इस लेख का शीर्षक 'तीर्थराज जवाहर' लिखा हे।

मेने पूज्यश्री के सबसे प्रथम बार दर्शन जयपुर राज्य मे किये और अपनी बुद्धि के अनुसार कुछ चर्चा भी की। चर्चा के विषय गाधीजी, अहिंसा और तत्कालीन राजनीतिक समस्याये थी। उस समय मुझे यह जानकर बहुत आश्चर्य हुआ कि एक जेन साधु के मस्तिष्क मे भी कई राजनीतिक समस्याओ का कितना सुन्दर, सरल ओर व्यावहारिक हल था। अहिंसा पर काफी देर तक चर्चा हुई। मेने अनुभव किया कि गाधी जी द्वारा राजनीतिक हथियार के रूप में प्रचारित अहिंसा मे ओर जेन शासन द्वारा प्रचारित अहिसा मे जमीन आसमान का अतर हे। मेने यह भी अनुभव किया कि जेन शासन द्वारा समर्पित अहिंसा सिद्धात पर अमल करने वाला व्यक्ति तो गीतावर्णित स्थितप्रज्ञ की दशा को प्राप्त कर ही सकता है। ओर पूज्यश्री का वाद विवाद का ढग कुछ ऐसा हृदयग्राही था कि प्रतिवादी प्रभावित हुए विना नही रह सकता था। वे to the point बोलते थे-अपने विषय के केन्द्र पर डटे रहते थे। परिणाम यह होता था कि प्रतिवादी को या तो उनके सिद्धान्तो की लोक हितेषिता स्वीकार करनी पडती

थी या उनके अकाट्य तर्कों का लोहा मानना पडता था। और पूज्यश्री का यही सर्वोपरि गुण था, जो अनगिनत नर नारियो को उनकी ओर आकर्षित कर देता था। यही वह अदृश्य डोरी थी जो असख्य श्रद्धालुओ को देश के कोन-कोने से पूज्यश्री के चरणो पर, फिर वे चाहे जहा हो, ला पटकती थी।

एक दिन खबर सुनी कि कल महाराज श्री के व्याख्यान मे दीवान साहब पधारेगे। उन दिनो बीकानेर मे दीवान सर मनु भाई मेहता थे, और वे शीघ्र ही दूसरी गोलमेज काफ्रेन्स मे जाने वाले थे। मे उस दिन व्याख्यान स्थल पर जल्दी ही जा पहुचा। पूज्यश्री पधार गये थे। व्याख्यान प्रारम्भ करने का समय हो गया था। पर दीवान साहब नही आये थे। मेने समझा, शायद दीवान साहब के आने तक प्रतीक्षा करेगे। पर यदि उस दिन प्रतीक्षा की जाती, तो मुझ जेसे के मन पर तो दीवान साहब के बडप्पन की छाप अकित होना ही स्वाभाविक था, पर नही, पूज्यश्री ने अपना भाषण ठीक समय पर प्रारम्भ कर दिया। दीवान साहब देर से आये। आकर वे अपने आसन पर बैठ गये। दीवान साहब के आने पर भी पूज्यश्री के रग-ढग ओर व्यवहार मे कोई परिवर्तन दृष्टिगोचर न हुआ। वे अपना भाषण उसी प्रकार देते रहे। दस पन्द्रह मिनिट तक तो पूज्यश्री के व्याख्यान मे धार्मिक कथाए चलती रही। मेने मन में सोचा कि इस ढग की वातो मे सर मनुभाई जेसे अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के मुत्सद्दी को क्या रस आ रहा होगा। मगर वाह! पूज्यश्री ने विषयातर न करते हुए दीवान साहब के आगे कुछ ऐसे सुझाव रखे कि दीवान साहव को वहा पूज्यश्री को धन्यवाद देते हुए विश्वास दिलाना पडा।

सन् ४२ के अगस्त या सितम्बर मे मै इन्दौर था ओर वही पूज्यश्री की बीमारी की खबर सुनी। दिल में एकाएक धक्का-सा बैठा। मन मे सवाल उठा-क्या जैन जाति अपनी इस अलौकिक विभूति से वचित हो जायेगी ? पर श्री सेठ चपालाल जी बाठिया को पूज्यश्री की सेवा करके उन्हे एक साल ओर रख लेने का श्रेय मिलना था। हालाकि निराश तो तब ही सभी हो चुके थे। मेरा खयाल है तत्कालीन युवाचार्य ओर वर्तमान पूज्यश्री श्रीगणेशीलाल जी महाराज, प मुनि श्री सिरेमल जी महाराज आदि साधु सन्तो की तथा सेठ चपालाल जी बाठिया और भीनासर, गगाशहर, बीकानेर तथा आस-पास के अन्य श्रावको की श्रद्धा, भक्ति, निष्काम सेवा और प्रार्थनाओ का ही यह प्रभाव था कि पूज्यश्री का औदारिक शरीर एक साल तक रह गया। नही तो उन्होने अपने शरीर को तप-अग्नि में इतना तपा डाला था कि वह इस लोक मे टिक सकने योग्य नही रह गया था।

सन् ४३ के फरवरी मे ओर फिर एप्रिल से अन्तिम दिन तक मुझे पूज्यश्री के दर्शन करने का सोभाग्य मिलता रहा। इन्ही दिनों मुझे अपने अकारण मित्र श्री शोभाचद जी भारिल्ल द्वारा सम्पादित और भीनासर के श्री सेठ चपालाल जी तथा सेठ वहादुरमल जी वाठिया द्वारा प्रकाशित जवाहर किरणावली के तीनो भाग पढने को मिले। उक्त पुस्तको मे महाराज श्री के व्याख्यान पढकर तथा उनके विचारो पर मनन करके मे इस परिणाम पर पहुँचा कि यदि यह विभूति इस पराधीन भारत मे, खास जेन जाति मे उत्पन्न न होकर, किसी स्वतत्र देश मे उत्पन्न हुई होती तो वहा वाले आज तक इनके विचारो का प्रचार करने के लिए क्या-क्या न कर चुके होते। दक्षिण वालो ने पूज्यश्री को जेनियो का 'दयानन्द' ठीक ही कहा था। मे कहता हू कि यदि ये पाश्चात्य देशो में होते तो क्या इन्हे लूथर न कहा जाता ?

एक दिन मे महाराज के दर्शन करने गया। पूज्यश्री तख्ते पर लेटे थे। आखे मुदी हुई थीं। उन्हे वोलने मे कष्ट भी होता था। पूज्यश्री की तन्मयातापूर्वक अनुपम सेवा करने वाले मुनि श्री सिरेमल जी

महाराज ने मेरा कुछ परिचय दिया। पूज्यश्री ने आखें खोली। मेरे प्रणाम के उत्तर मे हाथ उठाकर आशीर्वाद दिया और कहा कि तुम तो गत वर्ष भी मिले थे। मुझे पूज्यश्री की इस स्मरण शक्ति पर आश्चर्य हुआ। फिर ईर्ष्या भी हुई। यह भयकर बीमारी! यह जराजर्जर देह!! और गत वर्ष मिलने की बात याद!!! मुझ से पहले और बाद मे, मुझ जेसे कितने ही उपस्थित हुए होगे। चरण छूकर और अन्य प्रकार से, न जाने कितने अनेको ने अपनी असीम श्रद्धा और भक्ति का प्रकटीकरण न किया होगा इस तपोधन के आगे! पर मे, जिसने कभी साधारण प्रकार से प्रणाम करने के सिवा पूज्यश्री के प्रति अपनी भक्ति प्रगट न की, इस असाधारण शारीरिक कष्ट मे भी एक वर्ष के बाद तक याद केसे रह गया।

उक्त पक्तिया लिखने से मेरा आशय यही हे कि पूज्यश्री का पच भोतिक देह यद्यपि निर्बल था, तो भी उनका मानस निर्बल नही था।

भगवान् बुद्ध ने भी अपने निर्वाण के समय, अपने आस-पास उपस्थित अपने रोते हुए शिष्यो को बडे जोरदार शब्दो मे सान्त्वना दी थी। भगवान् कृष्ण ने अपने पर तीर चलाने वाले बहेलिये को सान्त्वना देकर निर्भय किया था। और महर्षि दयानन्द ने तो अपने अन्तिम क्षणो मे हँसते हुए, अपने ईश्वर की लीला की प्रशसा की, और मानो उससे बाते करते हुए अपना शरीर छोडा था। ये सारे उदाहरण मानसिक कमजोरी के परिचायक नही हे। खेर।

एक दिन मे महाराज के दर्शन करने भीनासर गया था। मेने समझा कि बीमारी के कारण पूज्यश्री लेटे हुए होगे। सभव हे निद्रा मे हो। अत मे हॉल के आस पास एक दी दिशा मे इधर उधर मडराने लगा पर जब दूसरी दिशा मे पहुँचा, तो वहाँ का दृश्य देख कर मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। पूज्यश्री तख्ते पर एक दो शिष्यो के सहारे बेठे थे। और श्री गणेशीलाल जी महाराज श्री भगवद्गीता का पाठ सुना रहे थे। और पूज्यश्री बडे प्रेम से सुन रहे थे। मे भागा-भागा श्री सिरेमल जी महाराज के पास पहुँचा। अपने आश्चर्य का कारण कहा। महाराज ने कहा–पूज्यश्री मोन रहते हे। और जेन शास्त्रो के अलावा अन्य धर्म ग्रन्थो का भी कुछ समय तक पाठ सुनते हे। आज श्रीमद् भगवद्गीता की बारी होने से उसी का पाठ हो रहा हे।

मेने मन मे कहा-यदि भारत के सभी धर्माचार्य अपने मे उदारता रख कर अन्य धर्मों के प्रति सहिष्णुता रख कर उनके धर्म ग्रथो का मनन किया करे तो देश के धार्मिक झगडे बहुत कुछ दूर हो सकते हे।

इसके बाद फिर मे जब जब गया पूज्यश्री की तबीयत गिरती ही गई।

उस दिन शनिवार था। सायकाल के चार या पाच बजे मे बीकानेर मे, सेठिया विद्यालय मे बेठा महाराज श्री के विषय मे ही अपने एक दो मित्रो से बाते करता करता लगभग गोधूली के समय जब कोट दरवाजे के बाहर पहुँचा और सेठ लाभू जी श्रीमाल के कटले को बद होते देखा, तभी समझ गया कि पूज्यश्री का सथारा सीझ गया हे। और जरा देर मे तो सारे शहर मे यह बात बिजली की तरह फेल गई।

फिर मेने उस दिन के अपने सब कामो को छोडा और भीनासर चल दिया। रास्ते मे भीनासर जाने वाले भक्त नर-नारियो का ताता सा लगा था। भीनासर पहुँचा। हॉल मे घुसा। भीड को चीरता हुआ आगे बढा। जो कुछ दिखाई दिया अतिम दर्शन थे, अतिम झाकी थी। पूज्यश्री तो वहा जा पहुँचे

थे, जहा के लिए भगवान श्रीकृष्ण कहते है, "यद् गत्वा न निवर्तंते तद्धाम परम मम।" पर पूज्यश्री का ओदारिक देह, जो उस दिन से ६९ साल पहिले मालवे के थादला ग्राम मे बालरूप मे अवतरित हुआ था, जिसने युवा, प्रोढ और वृद्ध रूप धारण किया था, अभी वही था। अभी उस निर्जीव देह से भी कुछ कार्य होना बाकी था।

एक लकडी के तख्ते पर, जिस पर बेठे-बैठे पूज्यश्री ने स्वस्थावस्था मे अनेक व्याख्यान, ओर रुग्णावस्था मे अपने भक्तो को आशीर्वाद ही दिये होगे, उनका देह व्याख्यान देते समय बेठने की स्थिति मे रखा था, हॉल के एक खभे से टिकाया हुआ। मालूम होता था व्याख्यान दे रहे हे। मुख पर मुखवस्त्रिका लगी थी। पास मे रजोहरण पडा हुआ था। आखे खुली थी। दोनो हाथ घुटने पर रखे थे। सुखासन से बैठे थे। रात हो चुकी थी। हॉल मे लगभग १०० केडल पॉवर की बत्ती जल रही थी। उसी के प्रकाश मे पूज्यश्री का मुखमडल जगमगा रहा था। मानो दोनो एक दूसरे की ज्योति को बढा रहे थे। दर्शनार्थी आ जा रहे थे। आते अधिक थे, जाते कम थे। क्योंकि जो सुबह वापिस आने का कष्ट न झेलना चाहते थे उन्होने वही रात बिताने का इरादा किया।

इस भीड मे मैने सेठ चपालाल जी बाठिया को ढूढना चाहा। पर उस समय तो वे पूरे जगम जीव बने हुए थे। बीकानेर से बाहर सब जगह तार से सूचना पहुँचाना, राज्याधिकारियो से राज्य के लवाजमे का प्रबन्ध करना, और कहा तक गिनाए, सारा प्रबन्ध उस एक दुबले पतले व्यक्ति के कधो पर आ पडा था। हा, कुँवर लहरचद जी सेठिया अवश्य उनके साथ इधर-उधर दौड धूप कर रहे थे।

रात को नीद न आई। सुबह पहुँचना जो था। बिस्तरा छोड कर, अपने आवश्यक कार्य से निपट कर, अँधेरे अँधेरे ही भीनासर की ओर चल पडा। गगाशहर की घाटी के ऊपरी सिरे पर पहुँचते पहुँचते मैने अपने को इक्के तागे और पैदल जानेवालो की भीड मे खोया हुआ सा पाया। पानी की बूदे शुरू हो गई थी। लोग भीगते चले जा रहे थे। किसके लिए ? तीर्थराज जवाहर के अन्तिम दर्शन के लिए! उस तीर्थराज जवाहर के लिए जो अपने जीवनकाल मे अपने देश, जाति और सप्रदाय के लिए अलौकिक विभूति साबित हुआ था।

हॉल, सामने का बरडा, पीछे का बरडा, बाग, सामने की सडक, आस-पास के कमरे नर-नारियो से ठसाठस भरे थे। प्रबन्ध पूरा था। स्वयसेवक जी जान से काम कर रहे थे। इस समय जाने वाला कोई नही था। सब आने वाले थे। देविया दर्शन के लिए टूटी पडती थी। उनके लिए प्रबन्ध अलग था, फिर भी उन्हे इस बात की पर्वाह नही थी कि उनका कोई जेवर कही गिर न पडे या किसी पुरुष से उनका स्पर्श न हो जाये। बच्चे भीड को चीरते हुए घुसे जाते थे।

कई आदमी उछाल के लिए फड एकत्र करने मे लगे थे। और देने वाले बडी श्रद्धा भक्ति से दिये चले जा रहे थे। उस दिन पूज्यश्री के लिए कागज के रूप मे चादी बरस रही थी। महिलाओ की दानशीलता उस दिन देखने के काबिल थी। जेवरो से लदी हुई श्रीमती अगर एक अच्छी रकम दे देती थी तो कौन आश्चर्य की बात थी, पर जब एक ऐसी देवी जिसका वस्त्र-विन्यास लक्ष्मी की उदासीनता प्रगट करता था, फैलाये हुए पल्ले मे मुक्त हस्त से कुछ डालती नजर आती थी, तो बरबस मुह से 'धन्य धन्य' ही निकल पडता था।

अत मे गगनभेदी जयघोप के साथ चादी का विमान, जिसमे पूज्यश्री का शव रखा गया था, ओर जिसे श्री सेठ चपालाल जी वाठिया ने पहले से तेयार करवा रखा था, उठाया गया। मार्ग तो नरमुडा से ठसाठस भरा ही था, पर आस पास के मकान भी दर्शनार्थियो से भरे नजर आते थे। गगाशहर के एक अच्छे भाग मे विमान घुमाया गया। लोग विमान के आगे दडवत करने के लिए ओर उसे कधा देने के लिए टूटे पडते थे। शवयात्रा दिवगत आचार्य की जीवनकाल के गोरव के अनुरूप ही थी। विमान के आगे राज्य की ओर से आया हुआ लवाजमा था। फिर दडवत करने वालो, जय घोप करने वालो, भजन गाने वालो ओर स्वयसेवको की भीड थी। इसके वाद विमान के वाद पुरुपो की अपार भीड। पुरुपो की भीड के वाद गीत गाती हुई स्त्रिया। ओर सवके वाद ऊँट पर चढे हुए, रुपये ओर सोने चादी के फूल उछालने वाले ओर सवके वाद लूटने वाले।

पूज्यश्री के शव के फोटोग्राफरो ने फोटो भी खीचे। जीवितावस्था मे तो फोटो खीचे जाने के लिए वे तो, अपने धार्मिक सिद्धान्तो के कारण कभी स्वीकृति दे ही न सकते थे। पर इस समय फोटोग्राफर और प्रेस वाले कव चूकने लगे थे ? खास तोर से तव, कि जब उन्हे कोई रोकने वाला न हो ? पूज्यश्री की शवयात्रा के विमान उठने के स्थान से लगाकर श्मशान पहुँचने तक के कोई पाच सो फोटो खीचे गये होगे।

विमान नौ बजे उठा था। गगाशहर के परले सिरे तक घूम कर श्मशान तक पहुँचने मे १-१/२ मील का चक्कर लगा होगा। पर इतने ही चक्कर मे, भीड की अधिकता के कारण ३-४ घटे लगे। श्मशान मे विमान की चादी लूटने को लोग टूट पडे।

यहा् मुझे महाकवि तुलसीदास की एक चोपाई याद आ रही हे -

नयनन्हि सत दरश नहिं देखा। लोचन मोरपख कर लेखा॥

ते सिर कटु तुवरि समतूला। जे न नमत हरि गुरु पद मूला॥

यही वात मे उन लोगो के लिए भी कहूँ, जिन्होने न तो पूज्यश्री के दर्शन किये, न उनके आगे अपना सिर झुकाया, ओर न उनकी शवयात्रा का जुलूस देखा।

६६ – प्रखर तत्त्ववेत्ता श्रीमज्जवाहिराचार्य

(श्री घेवरचन्द वॉठिया 'वीरपुत्र' जैन न्यायव्याकरणतीर्थ, श शास्त्री, वीकानेर)

परम प्रतापी श्रीमज्जेनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज साहव जेन समाज की ही विभूति नही अपितु 'विश्व विभूति' थे। उनमे ऐसे अनेक गुण विद्यामान थे जिन्होने उन्हे 'विश्व विभूति' वना दिया था। वे सच्चे महात्मा, महान्योगी, प्रखर तत्ववेत्ता, कुशल उपदेशक, प्रकाण्ड विद्वान्, महान् त्यागी तपस्वी ओर कठोर सयमी थे। उनका हृदय अत्यन्त निर्मल ओर पवित्र था। इन महात्मा के दर्शन ओर वाणी श्रवण का सोभाग्य मुझे अनेक वार प्राप्त हुआ था ओर जव पूज्यश्री का चातुर्मास जोधपुर था तव चार महीने तक उनके निकट सम्पर्क मे रहने का भी मुझे सुअवसर मिला था। उस समय पूज्यश्री की समग्र दिनचर्या देखने का मुझे अवसर मिला था। पूज्यश्री प्रात काल ब्राह्म मुहूर्त मे उठकर तत्त्वो का चिन्तन किया करते थे। तत्पश्चात् प्रतिक्रमण के वाद वे ध्यान मे विराजते थे। उनके ध्यान का आसन महान् योगी सा वडा स्थिर होता था। उस समय महान् योगी के चेहरे से

सताप के श्रीताप को मिटा देने वाली अपूर्व शान्ति टपकती थी। प्रकृतिदेवी की छोटी से छोटी बात का भी वे बडा सूक्ष्म निरीक्षण करते थे और व्याख्यान के समय उस पर जीवन का कोई महान् तत्त्व उतारते थे।

व्याख्यान शुरू करने से पहले आप 'विनयचन्द चौबीसी' मे से एक तीर्थंकर भगवान् की प्रार्थना फरमाते थे। पार्थना की कडिया बोलते समय वे उसमे तल्लीन हो जाते थे और आत्म शान्ति का पूर्ण रसास्वाद करते थे। प्रार्थना गा लेने के पश्चात् प्रार्थना मे आये हुये विषय पर कुछ फरमाते थे और प्रार्थना का माहात्म्य बतलाते थे। प्रार्थना पर अत्यधिक जोर देते हुए आप फरमाते थे कि - मुमुक्षु पुरुष को अपना सारा जीवन ही प्रार्थनामय बनाना चाहिए। जिसका जीवन प्रार्थनामय वन जाता हे उसे फिर किसी बात की कमी नही रहती। वह पूर्ण आत्म-शान्ति का अनुभव करता है। प्रार्थना पर बोलते हुए आप कई वक्त इन कडियो को दुहराया करते थे -

सुनेरी मेने निर्बल के बल राम।
देखे री मेने निर्बल के बल राम॥

प्रार्थना तो पूज्यश्री के जीवन का एक विषय बन गया था। प्रति दिन प्रार्थना के विषय मे वे कुछ न कुछ अवश्य फरमाते थे। सब दर्शनो का समन्वय करने की क्षमता आपकी अपूर्व थी।

कथा कहने का ढग आपका निराला था। कथा के पात्रो को ऐसा चित्रित करते थे मानो वे सामने खडे हो। साधारण से साधारण कथा में भी जान डाल देना आपका विशेष गुण था।

पूज्यश्री स्वभाव के जितने नरम थे, अनुशासन के वे उतने ही कठोर थे। अनुशासन की किचिन्तमात्र शिथिलता को वे सहन न कर सकते थे। अनुशासन के विषय मे यह कथन उन पर लागू होता था-

'वज्रादपि कठोराणि, मृदूनि पुष्पादपि'

अर्थात्-सन्तो के हृदय फूल से भी कोमल होते है किन्तु परिस्थिति के अनुसार वे ही हृदय वज्र से भी कठोर हो जाते है।

सत्य सिद्धान्त का पालन करते हुए उस मार्ग मे आनेवाली विघ्न बाधाओ के विरोध से पूज्यश्री तनिक भी घवराते न थे। जिस प्रकार सत्य सिद्धान्त का प्रतिपादन करने मे वे निर्भीक वक्ता थे उसी प्रकार उसका पालन करने मे भी आप निर्भीक थे। एक ऐसे कठिन परीक्षा के प्रसङ्ग को देखने का मुझे अवसर मिला था। अजमेर साधु सम्मेलन के समय कान्फरेन्स के पण्डाल मे मुनियो के व्याख्यान हुए थे। वहाँ लगे हुए लाउडस्पीकर मे बोलने के लिए आपसे कहा गया तो आपने लाउडस्पीकर मे वोलने से साफ इन्कार किया और यह स्पष्ट कहा कि लाउडस्पीकर मे अग्नि का स्पर्श होता हे। उसमे बोलने से जेन मुनियो को दोष लगता हे। उस पर वही उपस्थित जनता के बहुभाग ने वडा विरोध किया और लाउडस्पीकर मे वोलने के लिए पूज्यश्री को काफी जोर दिया तथा वडा कोलाहल मचाया किन्तु पूज्यश्री इस विरोध से तनिक भी न घबराये और सत्यसिद्धान्त की रक्षा के निमित्त वे लाउडस्पीकर मे न बोले। हजारो की मानवमेदिनी से भरे हुए पण्डाल मे से उठकर आप बाहर चले आये। इस प्रकार ऐसा विकट प्रसङ्ग एव कठिन परीक्षा का समय उपस्थित होने पर पूज्यश्री

ने जिस अपूर्व सत्साहस का परिचय दिया वह हमारे लिए गोरव लेने जेसी वात हे। उस महापुरुष के इस सत्साहस को देख कर अपने से विरोध रखनेवाली तेरह-पन्थ समाज के मुह से भी वरवस प्रशसा के शब्द निकल पडे थे -

"लाउडस्पीकर मे न वोल कर पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज ने समस्त वाईस सम्प्रदाय समाज का मस्तक सदा के लिए उन्नत रखा हे ओर जनता के विरोध से न घवराते हुए सत्य सिद्धान्त पर अटल रह कर उन्होने महापुरुषोचित सत्साहस का परिचय दिया हे"।

जिस प्रकार पूज्यश्री का आध्यात्मिक शरीर उत्कृष्ट था उसी प्रकार भोतिक शरीर भी उत्कृष्ट था।

लम्वा कद, गोर वर्ण, विशाल भाल, तेजोमय सुदीर्घ नेत्र, चमकता हुआ ललाट, दीर्घ मस्तक, मुखमण्डल की अपूर्ण काति, ये सव पूज्यश्री के भोतिक शरीर की उत्कृष्टता को सूचित करते थे। उनकी उत्कृष्ट शारीरिक सम्पदा, देखने वाले एक अनजान व्यक्ति को भी एकदम प्रभावित किये विना न रहती थी। उनकी आवाज वडी वुलन्द थी। जव वे व्याख्यान मण्डप मे वेठकर व्याख्यान फरमाते थे तव ऐसा प्रतीत होता था मानो कोई सिह गर्जना कर रहा हो। जो व्यक्ति एक वक्त उनके दर्शन कर लेता था उसके हृदय पर उनकी तेजोमय सोम्य मूर्ति की छाप सदा के लिए अमिट हो जाती थी। वह उन्हे कभी भूलता न था। जो एक वक्त उनका व्याख्यान श्रवण कर लेता था वह सदा के लिए उनका श्रद्धालु भक्त वन जाता था। उनके व्याख्यान मे जादू की सी शक्ति थी। उनका व्याख्यान तात्त्विक होता था, उसमे शव्दाडवर नही होता था। वे शब्दो की आत्मा को पकडते थे ओर उसमे गहरे उतर कर तत्त्व विश्लेषण पूर्वक विचार करते थे। गहन से गहन तत्त्वो की थाह लेने की उनमे क्षमता थी। उनमे ज्ञान, चारित्र रूप रत्नत्रय का त्रिवेणी सगम था। जिस प्रकार वे अपनी विद्वत्ता ओर वक्तृत्व कोशल से परमतावलम्वियो को पराजित करने में समर्थ थे उसी प्रकार वे कठोर सयम पालन मे भी चुस्त थे।

यद्यपि पूज्यश्री का भोतिक शरीर आज हमारे सामने विद्यमान नही हे तथापि उनका निर्मल यश रूपी शरीर सदा अजर अमर रहेगा।

ऐसे युगावतारी महापुरुष के चरणो मे मे भक्ति-पूर्वक अपनी श्रद्धाजलि समर्पित करता हूँ। इति शुभम्।

६७— एक मुख से हजारों की वाणी

श्रीयुत शुभकरनजी

यो तो मेरे पिता ने मेवाड राज्य की काफी सेवा की हे, लेकिन मे भी करीब ३ [illegible] वाड की सेवा कर रहा हूँ। लेकिन मेरा जीवन गोश्त खाना, शराब पीना, पान खाना सिगर शिकार करना (आदि कामो मे) ही ओतप्रोत रहता था। अत्युक्ति न होगी [illegible] मे उस स एक जबर्दस्त शराबी व गोश्त खाने वाला व शिकार करने वाला कहूँ। [illegible] रने मे नहीं था।

लेकिन सन् २० मे उदयपुर मे पूज्यश्री जवाहर के दर्शन का [illegible] बलवतसिह जी के साथ प्राप्त हुआ। पूज्यश्री के उपदेश से मेरे मन मे [illegible]

और मन ही मन बडा पश्चाताप करने लगा और उपदेश की दिल मे इतनी लगन लगी कि गोश्त खाना, शराब पीना,पान, तमाखू, बीडी पीना व शिकार करना सब छोड दिया।

मैं कह सकता हूँ कि पूज्यश्री की वाणी मे इतनी शक्ति और ऐसी अमृततुल्य हे कि मुझ से जवर्दस्त मासाहारी व शराब पान करने वाले के दिल को भी सच्चा मार्ग सुझा दिया। आप बहुत सरल स्वभावी व अलोकिक मूर्ति है, जिससे मन बहुत ही प्रसन्न होता हे।

मेरे जीवन के बदलने के बाद सन् १९२१ के बाद आज तक उसी तरह अमल कर रहा हूँ व एक वक्त सादा भोजन (चावल आदि) लेता हूँ। स्वास्थ्य पहले से काफी अच्छा है। इस ६० वर्ष की आयु मे भी पूज्यश्री के उपदेश से सब बुरी चीजो का सेवन छोड देने से जवान की तरह काम कर सकता हूँ और सादगी से समय बिताता हूँ।

सन् २० के बाद पूज्यश्री के चातुर्मास घाटकोपर, रतलाम, सरदारशहर, चूरू, धार, ब्यावर वगैरह स्थानो पर हुए। मै दर्शन करने को बलवतसिह जी के साथ जाता रहा और अमृतवाणी सुनता रहा हूँ, जिससे काफी शान्ति मिली है।

ज्यादा शब्द मेरे पास नही कि मै ऐसे उच्च मुनि की तारीफ करूँ, लेकिन मेरा जीवन ही उनके गुणो का गान करने के लिए थोडा-सा नमूना काफी है।

पत्रों की प्रतिध्वनि

सम्पादक 'फूलछाब' राणपुर (काठियावाड़)

भारत मे 'जवाहर' एक ही नही, दो है, एक राष्ट्रनायक है दूसरा धर्मनायक। युक्त प्रान्त से लेकर सौराष्ट्र की सीमा तक जिनकी सुवास महक रही है, वे जैन मुनि श्री जवाहरलाल जी दो एक वर्ष से काठियावाड मे है।

बारह वर्ष की (? सोलह वर्ष की) वय मे दीक्षा लेने वाले यह साधु इस समय सत्तर (?) से अधिक वर्ष की वय वाले व्याधिग्रस्त वृद्ध है। स्थानकवासी सम्प्रदाय के साधु होते हुए जैनेतर जगत् से भी सम्मानित है। कालमीढ किले के बीच खडे रहते भी ये ऐसे पूर्ण प्रगतिशील विचारक है कि रूढिभक्त अनुयायियो को जिसकी कल्पना भी नही हो सकती। ये प्रामाणिक, निडर और निर्मल सत है।

अपनी क्रिया के विषय मे पक्के जैन होते हुए भी ये राष्ट्रवाद के उपासक है।

गाधीजी के और गाधीजी के विचार-तत्वो के (प्राय) निडर अनुमोदक है। गाधीजी, मालवीयजी, तिलक-सब से इनका मिलन हुआ है। गीता पर लिखे भाष्य मे जेन धर्म सबधी स्व लोकमान्य की भूल प्रमाणित करके देने पर लोकमान्य ने उसे सुधारना स्वीकार किया था।

राजपूताना और मारवाड के हजारो जवाहर भक्त केवल मुनिश्री की खादी-प्रशसा पर खादी धारी बने हे। ये सुधारक हे, चितक है, दर्शक हे, पूर्ण क्रियानिष्ठ एव वेराग्य के ही उपासक हे। ये अनेक युक्तियों से ओर आधी सदी से मुग्ध करने वाली नित्य-नई नूतनतापूर्वक अपनी समर्थ वाणी द्वारा ससारियो को ससार एव धर्म का रहस्य समझाते हे।

(१३ मई, १९३८)

ने जिस अपूर्व सत्साहस का परिचय दिया वह हमारे लिए गोरव लेने जेसी बात हे। उस महापुरुष के इस सत्साहस को देख कर अपने से विरोध रखनेवाली तेरह-पन्थ समाज के मुह से भी बरबस प्रशसा के शब्द निकल पडे थे -

"लाउडस्पीकर मे न बोल कर पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज ने समस्त बाईस सम्प्रदाय समाज का मस्तक सदा के लिए उन्नत रखा हे ओर जनता के विरोध से न घबराते हुए सत्य सिद्धान्त पर अटल रह कर उन्होने महापुरुषोचित सत्साहस का परिचय दिया हे"।

जिस प्रकार पूज्यश्री का आध्यात्मिक शरीर उत्कृष्ट था उसी प्रकार भोतिक शरीर भी उत्कृष्ट था।

लम्बा कद, गोर वर्ण, विशाल भाल, तेजोमय सुदीर्घ नेत्र, चमकता हुआ ललाट, दीर्घ मस्तक, मुखमण्डल की अपूर्ण काति, ये सब पूज्यश्री के भोतिक शरीर की उत्कृष्टता को सूचित करते थे। उनकी उत्कृष्ट शारीरिक सम्पदा, देखने वाले एक अनजान व्यक्ति को भी एकदम प्रभावित किये बिना न रहती थी। उनकी आवाज बडी बुलन्द थी। जब वे व्याख्यान मण्डप मे बेठकर व्याख्यान फरमाते थे तब ऐसा प्रतीत होता था मानो कोई सिह गर्जना कर रहा हो। जो व्यक्ति एक वक्त उनके दर्शन कर लेता था उसके हृदय पर उनकी तेजोमय सौम्य मूर्ति की छाप सदा के लिए अमिट हो जाती थी। वह उन्हे कभी भूलता न था। जो एक वक्त उनका व्याख्यान श्रवण कर लेता था वह सदा के लिए उनका श्रद्धालु भक्त वन जाता था। उनके व्याख्यान मे जादू की सी शक्ति थी। उनका व्याख्यान तात्त्विक होता था, उसमे शव्दाडबर नही होता था। वे शब्दो की आत्मा को पकडते थे ओर उसमे गहरे उतर कर तत्त्व विश्लेषण पूर्वक विचार करते थे। गहन से गहन तत्त्वो की थाह लेने की उनमे क्षमता थी। उनमे ज्ञान, चारित्र रूप रत्नत्रय का त्रिवेणी सगम था। जिस प्रकार वे अपनी विद्वत्ता और वक्तृत्व कोशल से परमतावलम्बियो को पराजित करने में समर्थ थे उसी प्रकार वे कठोर सयम पालन मे भी चुस्त थे।

यद्यपि पूज्यश्री का भौतिक शरीर आज हमारे सामने विद्यमान नही हे तथापि उनका निर्मल यश रूपी शरीर सदा अजर अमर रहेगा।

ऐसे युगावतारी महापुरुष के चरणो मे मे भक्ति-पूर्वक अपनी श्रद्धाजलि समर्पित करता हूँ। इति शुभम्।

६७— एक मुख से हजारों की वाणी

श्रीयुत शुभकरनजी

यो तो मेरे पिता ने मेवाड राज्य की काफी सेवा की हे, लेकिन मे भी करीब ३५ वर्ष से मेवाड की सेवा कर रहा हूँ। लेकिन मेरा जीवन गोश्त खाना, शराब पीना, पान खाना, सिगरेट तमाखू पीना, शिकार करना (आदि कामो मे) ही ओतप्रोत रहता था। अत्युक्ति न होगी, अगर मे उस समय का जीवन एक जबर्दस्त शराबी व गोश्त खाने वाला व शिकार करने वाला कहूँ। जीवहिंसा करने मे कोई पशोपेश नहीं था।

लेकिन सन् २० मे उदयपुर मे पूज्यश्री जवाहर के दर्शन का सोभाग्य भूतपूर्व दीवान कोठारी वलवतसिह जी के साथ प्राप्त हुआ। पूज्यश्री के उपदेश से मेरे मन मे घृणा व आत्मग्लानि उत्पन्न हुई

और मन ही मन बडा पश्चाताप करने लगा और उपदेश की दिल मे इतनी लगन लगी कि गोश्त खाना, शराब पीना,पान, तमाखू, बीडी पीना व शिकार करना सब छोड दिया।

मैं कह सकता हूँ कि पूज्यश्री की वाणी मे इतनी शक्ति और ऐसी अमृततुल्य हे कि मुझ से जवर्दस्त मासाहारी व शराब पान करने वाले के दिल को भी सच्चा मार्ग सुझा दिया। आप बहुत सरल स्वभावी व अलौकिक मूर्ति हे, जिससे मन बहुत ही प्रसन्न होता हे।

मेरे जीवन के बदलने के बाद सन् १९२१ के बाद आज तक उसी तरह अमल कर रहा हूँ व एक वक्त सादा भोजन (चावल आदि) लेता हूँ। स्वास्थ्य पहले से काफी अच्छा हे। इस ६० वर्ष की आयु मे भी पूज्यश्री के उपदेश से सब बुरी चीजो का सेवन छोड देने से जवान की तरह काम कर सकता हूँ और सादगी से समय बिताता हूँ।

सन् २० के बाद पूज्यश्री के चातुर्मास घाटकोपर, रतलाम, सरदारशहर, चूरू, धार, ब्यावर वगैरह स्थानो पर हुए। मै दर्शन करने को बलवतसिह जी के साथ जाता रहा और अमृतवाणी सुनता रहा हूँ, जिससे काफी शान्ति मिली है।

ज्यादा शब्द मेरे पास नही कि मे ऐसे उच्च मुनि की तारीफ करूँ, लेकिन मेरा जीवन ही उनके गुणो का गान करने के लिए थोडा-सा नमूना काफी है।

पत्रों की प्रतिध्वनि

सम्पादक 'फूलछाब' राणपुर (काठियावाड़)

भारत मे 'जवाहर' एक ही नही, दो हे, एक राष्ट्रनायक है दूसरा धर्मनायक। युक्त प्रान्त से लेकर सौराष्ट्र की सीमा तक जिनकी सुवास महक रही है, वे जैन मुनि श्री जवाहरलाल जी दो एक वर्ष से काठियावाड मे है।

बारह वर्ष की (? सोलह वर्ष की) वय मे दीक्षा लेने वाले यह साधु इस समय सत्तर (?) से अधिक वर्ष की वय वाले व्याधिग्रस्त वृद्ध है। स्थानकवासी सम्प्रदाय के साधु होते हुए जैनेतर जगत् से भी सम्मानित है। कालमीढ किले के बीच खडे रहते भी ये ऐसे पूर्ण प्रगतिशील विचारक है कि रूढिभक्त अनुयायियो को जिसकी कल्पना भी नही हो सकती। ये प्रामाणिक, निडर और निर्मल सत है।

अपनी क्रिया के विषय मे पक्के जेन होते हुए भी ये राष्ट्रवाद के उपासक है।

गाधीजी के और गाधीजी के विचार-तत्वो के (प्राय) निडर अनुमोदक है। गाधीजी, मालवीयजी, तिलक-सब से इनका मिलन हुआ है। गीता पर लिखे भाष्य मे जैन धर्म सबधी स्व लोकमान्य की भूल प्रमाणित करके देने पर लोकमान्य ने उसे सुधारना स्वीकार किया था।

राजपूताना और मारवाड के हजारो जवाहर भक्त केवल मुनिश्री की खादी-प्रशसा पर खादी धारी बने हे। ये सुधारक हे, चितक हे, दर्शक हे, पूर्ण क्रियानिष्ठ एव वैराग्य के ही उपासक हे। ये अनेक युक्तियों से और आधी सदी से मुग्ध करने वाली नित्य-नई नूतनतापूर्वक अपनी समर्थ वाणी द्वारा ससारियो को ससार एव धर्म का रहस्य समझाते हे।

(१३ मई, १९३८)

स्थानकवासी जैन, अहमदावाद

स्थानकवासी जेन साधुओ मे ज्ञान, दर्शन ओर चारित्र का त्रिवेणी-सगम हो सकता हे। विद्वत्ता ओर वक्तृत्वशक्ति मे जेनेतरो को भी मात कर सकते हें ओर जहाँ-जहाँ विहार करे वहाँ-वहाँ हजारो मनुष्यो को सच्चे अर्थ मे श्रावक वना सकते हे, यह वात विना अतिशयोक्ति के अगर किसी के लिए कही जा सकती हे तो श्री जवाहरलाल जी महाराज के लिए ही। उनमे न कोरा ज्ञान हे, न अध क्रिया हे ओर न श्रोताओ के समूह पर उनका असर क्षणिक होता हे। यह आचार्य श्री ज्ञान ओर क्रिया के चक्रो से चारित्ररथ को अग्रसर करते हुए लगभग आधी शताव्दी से जेन जनता की अनन्य सेवा वजाकर चार मास पहले स्वर्गवासी हुए हे।

❑

पद्यमयी श्रद्धांजलियां

श्रद्धाञ्जलि

(प श्री गजानन्दजी शास्त्री, अजीतसरिया सस्कृतपाठशाला, रतनगढ)

(१)

प्रतिभाप्रतिभाषित शास्त्रचय,
शरदिन्दुसमानयशोनिलयम्।
विगतारिभय भवदु खदह,
प्रणमामि जवाहरलालमहम्॥

(२)

जिन तत्त्वजुषा विदुषा प्रमुख,
शरणागतपालनलब्धसुखम्।
तपसा परिशोभितदिव्यमुख,
प्रणमामि जवाहरलालमहम्॥

(३)

सुखशान्तिरकर परमार्तिहर,
जगतामुपकारविधानपरम्।
करुणापरिपूर्णविचारधर,
प्रणमामि जवाहरलालमहम्॥

(४)

मनसा वचसा महता तपसा,
प्रतिपादित लोकहितसततम्।
करुणाकरसाधुजनैकगति,
प्रणमामि जवाहलालमहम्॥

(५)

अनुकम्पनयोगरत विरत,
शमसयमसाधनतानिरतम्।
अमृतोपमपुण्यवच सहित,
प्रणमामि जवाहरलालमहम्॥

(६)

सोम्य प्रशान्त यशसा महान्त,
दिव्येरनेके सुगुणेर्विभान्तम्।
आचार्यवर्यं सुसमाधिचर्यं,
जवाहर लालयुत नमामि॥

(७)

दिव्य धर्मदिवाकर कलियुगे व्याप्तेऽपि विद्योतयन्,
पाखण्ड परिखण्डयन् प्रतिदिन सम्मण्डयन् सज्जनान्।
कारुण्य समुपादिशश्च निरत विद्या परा वर्धयन्,
श्री जेनेन्द्रजवाहर यतिवरो जीव्याज्जगत्या चिरम्॥

जय जवाहरलाल की

(रचयिता - श्री तारानाथ रावल)

(१)

निज जन्म से जिस साधुवर ने जेन जाति निहाल की।
हो, पूज्य श्री आचार्य मुनिवर, जय जवाहरलाल की॥
नर देह मे वह देव था, सिद्धान्त का वह भक्त था।
व्यवहार मे वह दक्ष था, कर्त्तव्य पर आसक्त था॥
उसमे सभाचातुर्य था, वह वाक् पटुता का धनी।
अति ओज वाणी मे भरा था, शान उसकी थी घनी॥

(२)

प्रभविष्णुता उसमे अलोकिक ज्ञान का भडार था।
निर्भीक तार्किक, शास्त्र ज्ञाता, शील का अवतार था॥
श्रोता-श्रवण पावन हुए, उसके सदा उपदेश से।
अबक सदा परितुष्ट थे, उस साधु के वर वेश से॥

(३)

निज-अपर-हित सयम विधायक वह अतीव कठोर था।
हा, ज्ञान-घन लख नाच उठता नित्य मानस-मोर था॥
वह सप्रदायाचार्य था, थे जानते इसको सभी।
पर साप्रदायिकता न उसके पास फटकी थी कभी॥

(४)

उसकी तपस्या सफल थी, सपूर्ण थी, निष्काम थी।
उपदेश, प्रवचन, वाणिया, अनमोल थीं, अभिराम थी॥
सयम-सफल, सद्गुण-सदन, सद्भाव-सद्म सुजान था।
आचार्यवर, निजजाति का गोरव तथा अभिमान था॥

(५)

पावन परम उस साधुवर की, जन्म-भू मालव मही।
थी, पर प्रशसा देश भर मे, आज घर घर हो रही॥
अनुयायियो पर प्रेम की, उसकी अनोखी धाक थी।
निर्वाक चख-सकेत बस, आज्ञा कठोर सवाक थी॥

(६)

सर्वस्व त्यागी, निरभिमानी, ब्रह्मचारी, सत था।
तार्किक पवर, उसका तथा विद्या विलास अनत था॥
गुण-गण रसिक, सद्धर्म दश लक्षण-प्रचारक धीर था।
पडित प्रवर, प्रतिभा-पसिद्ध, प्रबुद्ध-पूजित पीर था॥

(७)

था वह स्वदेशी वस्तु-वस्त्र प्रयोग का हामी बडा।
निजदेश की परतत्रता का हृदय मे काटा गडा॥
हर रोम मे उसने रमाया अहिसा सिद्धान्त था।
पर-पक्षियो के सामने निश्चल तथा निर्भान्त था॥

(८)

ससार मे चहुँ ओर उपदेशक दिखाई दे रहे।
जय घोष सुनकर अभ्र भेदी फूल कुप्पा हो रहे॥
पर वह जवाहर था, कि जो सब बात मे व्यवहार मे।
प्राचीन ऋषियो सा सदा था अनेकात विचार मे॥

(९)

था दयानद महर्षि लूथर या कि जैन समाज मे।
अवधूत पूत, सदा निरत था, लोक सेवा काज मे॥
वह एक अतर्बाह्य था, उसमे न छल का लेश था।
श्रोता समूह विमुग्धकर, उस साधु का वर वेश था॥

(१०)

उस-सा अपर अब कौन है, उसका वही उपमान था।
जब खोलता मुख गूजता जिन-पथ-गोरव-गान था॥
वह आर्य जीवन काल मे नित लोकहित करता रहा।
मन से, वचन से, कर्म से, शुभ भावना भरता रहा॥

(११)

जिन देव-शासन-शख फूका, जोर से किसने कहो।
श्री साधु मार्गी सघ को किसने दिपाया था अहो॥
शुभ राष्ट्र-सेवा-प्रेरणा की सघ मे की स्थापना।
ओ शून्य कह दे जोर से जय जवाहर उन्नतपना॥
निज कर्म से आचार्यवर ने, जेन जाति निहाल की।
हो, पूज्य श्री मुनिवर तपोधन, जय जवाहरलाल की॥

गुरुदेव! छिपे हो किस अनन्त के कोने में?

(श्री मुनीन्द्रकुमारजी जेन)

(१)

ओ समाज के कर्णधार! ओ वुझते दीपक की आशा।
तुमने भी वुझकर दिखलाया जग हे एक तमाशा॥
किन्तु तुम्हारे वुझने ने जग अन्धकार मे डाला।
हम सव की छाती मे मानो चुभा दिया हे भाला॥

(२)

जगमग हीरे जेन जगत के! जेन जनो के सेनानी।
लाखो की आखो से तुमको क्या ढुलकाना था पानी॥
देख रही हे आखे अब तो एक राख की ढेरी।
छोड गये यह देह किंतु युग युग तक गाथा हे तेरी॥

(३)

झोली लेकर निकल पडे तुम जग का सुनकर हाहाकार।
व्याकुल जग को देख देख तुम व्याकुल भी थे स्वय अपार॥
भारत के कौने कोने मे घूम घूम तुम आये थे।
जग के दुःख बटोर-बटोर कर झोली तुम भर लाये थे॥

(४)

तुमने कहा- "जगत के वासी! क्यो तुम स्वय दुखी होते?
लगा चोट अपने ही हाथो तुम क्यो स्वय भला रोते?
ढूढ रहे सुख कहा जगत मे सुख जग मे किसने पाया?
नभ का लेने पार चले हो, पार भला किसने पाया"?

(५)

तुमने कहा- "अरे ओ धनवानो! क्यों धन पर इठलाते हो?
इस धन को अच्छे कृत्यों मे हँस-हँस क्यो न लगाते हो?
निर्धन का तुम गला घोंट कर धनिक आज दिखलाते हो?
धनवानो! तुम एक धनिक वन लाखो को रुलवाते हो"॥

(६)

तुमने कहा- "अहिंसावादी! क्यो कायर तू वनता हे?
आज देश मे युद्ध छिडा हे, क्यो न युद्ध को ठनता हे?
सत्य अहिसा ले हाथो मे, करो युद्ध की तेयारी।
शत्रु भी तव काप उठेगा लख कर शक्ति तुम्हारी"॥

(७)

तुमने कहा- "जैन धर्म नही कायरता सिखलाता है।
अवसर आने पर वह हँस-हँस बढ-बढ हाथ बताता है॥
जेनधर्म तो वीरो का ही धर्म सदा बनता आया।
पर हमने अपने ही हाथो घर का मान घटाया"॥

(८)

तुमने कहा- "सभी मुनिवर से चेत सकें तो चेते हम।
परिवर्तन करना हमको उपदेश सदा जो देते हम॥
हम मुनिगण ही इस सेना के कहलाते है सेनानी।
हमी लोग जो झगडेगे तो होगी पतन कहानी"॥

(९)

तुमने कहा- "जैन जगत से सभी एक हो जाओ।
बीती बातो को सपने में याद कभी मत लाओ"॥
सुनी नही हा! इन बातो को कीमत हमने पहचानी ना।
एक बार ही सुन लेते तो ऐसी दशा दिखाती ना॥

(१०)

राष्ट्रदूत! ओ धर्मदूत!! तुम जीवन के निर्मोही।
तुम-सा अन्य जवाहर हम क्या पा लेगे अब कोई?॥
दुख के सागर मे धकेल कर चले गये क्यो हमे अहो।
कितना तडफाना अब बाकी, सचमुच गुरुवर! हमे कहो॥

(११)

राष्ट्रवाद आध्यात्मवाद के तुम थे एक पुजारी।
जग का दर्द मिटाने निकले थे तुम एक भिखारी॥
वही भिखारी, वही पुजारी बीच हमारे नही रहा।
वीच जवाहर को नहीं पा सभी व्यथित है आज महा॥

(१२)

बिना हमे कुछ कहे गुरुदेव! नही चल देना था।
जाने से कुछ पूर्व तुम्हे गुरुदेव! हमे कह देना था॥
आज तुम्हारी मधुर याद मे लगा हुआ जग रोने मे।
वतलाओ गुरुदेव! छिपे हो किस अनन्त के कौने मे॥

'अंजलि'

(कुवर केशरीचन्द सेठिया, वीकानेर)

मोक्षमार्ग के पथिक पूज्यवर,

हम कृतकृत्य आज सारे।

तपोधनी, ऋषिवर्य! तुम्हारी

महिमा से उज्ज्वल सारे।

आज तुम्हारे त्याग, शील का

यश छाया भूमण्डल मे।

हिंसा का जब प्रलय नृत्य

हो रहा व्योम मे, जल–थल मे।

आज विश्व का उर आहत है,

पीडित है वसुधा सारी।

हम सब को तब प्राप्त अहिंसा

का है तुम–सा व्रतधारी।

हम सब के पथ मे प्रभुवर तुम

ज्ञान–प्रदीप सजग करते।

हम सबको धर्मामृत देकर

तुम सत्पथ पर ले बढते।

कैसे आज तुम्हारे गुणगण

कहूँ प्रभो! मै तुम्ही कहो।

जिसकी करुणा से भीगा है

रोम–रोम यह आज अहो।

अगर कहे तुमने समाज का

हित ही रक्खा है आगे।

और हमी सब को है प्रस्तुत

किये एकता के धागे।

दोषारोप आप पर होगा

तो ये पुण्यचरित! मेरा।

जो समदृष्टि रहा जीवन मे,

जिसने सबको सम हेरा।

इसे आपका स्वार्थ कहे

या कहे परार्थ बताओ तो।

विश्वदृष्टि लेकर तुम आये

मुझको भी अपनाओ तो।

जीवन बने यज्ञ की वेदी

अहकार कुछ हो न जहाँ।

सदा आपके चरणचिह्न का

रहे ध्यान ही मुझे यहाँ।

वही करूँ जो रुचा तुम्हे प्रभु

इस देवोपम जीवन मे।

देश, जाति क्या सब जगती को

मानू अपना–सा मन में।

कभी न मुझसे कष्ट मिले

हो ऐसा, सदा भाव मेरा।

इष्ट हमारा बने वही जो

मत्र आपने है प्रेरा।

''श्रद्धांजलि-समर्पण''

(लेखक-प्रिसिपल प श्री त्रिलोकनाथ मिश्र, लोहना दरभगा)

पूज्य जवाहरलाल-सूर्य को किस बादल ने छिपा लिया?।
किसने हा!! सारी दुनियाँ को, अन्धकार से लिपा दिया?।
अन्न-वस्त्र लुट कर भारत के, प्राण जवाहर को लूटा।
इस कसाई सवत ने हाहा!! धर्म्म-मर्म्म को भी कूटा॥
जिनके आगे हीरा-नीलम, पुखराज न कुछ दम रखते थे।
वे रत्न जवाहर कहाँ गये, जो दिन-दिन और चमकते थे?॥
जिनके वचनामृत को पीकर, मुर्दे भी जिन्दा होते थे।
दुनिया की झझट को निपटा, आनन्द सेज पर सोते थे॥
जिनके उपदेशो का प्रभाव, राजाओ पर भी रहता था।
जिनकी अविरल वाणी-धारा से अमृत-स्रोत नित वहता था।

ससार-पूज्य मालवी ओर गाधी, से भी जो पूजित थे।
जिनके शब्दो से दिगन्त, जल-थल, वन-उपवन गूजित थे॥
जो सदाचार के उदयाचल, दुर्व्यसन-तिमिर के भास्कर थे।
सन्तापहरण, मृदुवचन, शान्ति मे, जो अकलङ्क सुधारक थे।
जो कटुवाद-कुहेस दिवस थे, धर्मवीरता मे वे-जोड॥
पूज्यपाद वे आज 'जवाहर', कहाँ गये भक्तो को छोड॥
जिन-प्रवचन का कोन करेगा, अव वेसा सुन्दर उपदेश।
कोन सुनावेगा भविजन को, ईश्वर का सच्चा सन्देश॥
कर के सारे भारत ही को शून्य, न केवल राजस्थान।
यद्यपि वे भोतिक शरीर को छोड सिधारे दिव्यस्थान॥
तो भी पूज्य जवाहर के विरही भक्तो की यही पुकार।
एक बार वह रूप दिखाकर भक्तो का कर दे उपकार॥
तप्त हृदय की ज्वाला का नहिं ओर दीखता हे प्रतिकार।
निज भक्तो के लिए सदा प्रभु का रहता हे सब अधिकार॥
भक्ति–रसामृत को जिस बादल ने बरसाया आठो याम।
इस नभ मण्डल बिच फिर भी वह आ जावे यह हे मन–काम॥

पूज्यश्री जवाहरजी महाराजनी स्तुति

(रचयिता-गोडल सम्प्रदायना वयोवृद्ध श्री अम्बाजी महाराज)
राग–नदजीना लाल रमवा आवो ने रे

वर्त्यो छे जय–जयकार, पोरमा पूज्यजी पधार्या
जगत–जीवो तेणे तार्यां, पोरमा पूज्यजी पधार्या–टेक
पूज्य जवाहरलालजी जेवा,
ज्ञान–झवेरात लाग्या छे देवा,
मोक्षना सुखज लेवा पोरमा ॥१॥
देशी विदेशी ने निहाल करीने,
पोर बदरमा पाव धरी ने,
प्रतिबोधे चित्त हरी ने पोरमा ॥२॥
शिष्य–परिवार शोभे छे भारी,
कुमति कुबुद्धि ने दूर निवारी
पाँचे समिति ने धारी पोरमा ॥३॥
वेरागीनु मन ज्ञानमा वसीयु,

अजर अमर पद सेवानु रसीयु,
अज्ञान–तिमिर खसीयु पोरमा ॥४॥
अमूल्य तत्व तणी देशना दीधी
सुणता थाय खरे आत्मनी सिद्धि,
ज्ञान प्रसादी पाय पीधी पोरमा ॥५॥
पूजयश्री तमे छो जग उपकारी,
घणु जीवी लेजो घणाने तारी,
आबाजी कहे हर्षधारी पोरता ॥६॥

जैनाचार्य पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराजना जीवन चरित्र अङ्गे

(लेखक- श्री टी जी शाह)

जैनो तणु साचु ए तो जवाहर छे रे (राग)

देश देश मा भ्रमण जेणे कर्युं रे
सँभलाववाने सुत्रो तणो सार (१)
महा कष्ट वेठी सिद्धान्त पालन कर्युं रे,
दु ख सह्यु जेणे देहे पारावार (२)
अहिंसा सत्य तणो जेणे प्रचार कर्यो रे
दया तणो जे छे अखूट भण्डार (३)
घाटकोपर जीवदया मडली,
वली गोशाला ए एमनो प्रताप (४)
जेनी वाणी केसरी सिह समी रे,
उपदेशे वली जे छे अजोड (५)
जेनु जीवन चरित्र आदर्श छे रे
जेनो वाणी साथे कार्यनो सुमेल (६)
पारस मणि ज्यो लोहने कचन करे छे रे
तेम उजाल्या अनेकना चरित्र (७)
जेनाकाशे ए तो शशी तणी ज्योत छे रे
जेनो अमी-भर्यो शीतल प्रभाव (८)

पूज्यश्रीनो वाणी-प्रभाव

(लेखक- अमीलाल जीवन भाई ठाकी)

राग–विकसावे नवजीवन–कुसुम आ विद्यानी वाडी।

पलटावे अम पथ जीवननो पूज्य तणी वाणी-टेक

शूरवीरता नो नाद जगवती, भव-भवनी भ्रमणाओ हरती।

निर्मल मन करती पूज्य तणी वाणी। –पलटावे ॥

पवित्र जीवन नो पाठ पठवती उर-उरना अधारा हरती।

पतित ने पावन करती, पूज्य तणी वाणी। –पलटावे ॥

साखी

अणमूल अवसर आवीयो जामनगर ने द्वार।

पूज्य पुनीत विराजता ल्यो लाखोणो ल्हाव।

उन्नत दशा जो आणे व्रह्मचर्य तणा वी वावो।

प्रेम सहित पचावो, श्रीपूज्य तणी वाणी। –पलटावे ॥

ढव चारणी

परव मडाणा परम ज्ञानना,

पीओ पीओ ज्ञान तणी रस-लहाण।

पुण्य योगे पूज्य पधार्या,

वही रही छे वचनामृत धार।

वाणी जेनी मधुर मीठडी,

भर्यो ज्या न्याय तणो भडार।

पात्र बनी ने पीओ प्रेम थी,

सफल करो सहुजन जनमार।

कल्प वृक्ष फल्यो काठियावाड मा,

पीरसता परब्रह्मतणा पकवान।

उर्मि उभराये अम उरमा,

खूल्या अम अन्तरना द्वार।

सान्त स्वभावे गुरु शोभता,

गभीर गुणीअल छे अणगार।

मुखडु जाणे पूर्ण चन्द्रमा,
जीवन जेहनु झलकतु उजमाल।
शिष्य सुगुणी श्रीमल्ल नाम छे,
विनयवत विरल ने विद्वान्।
वन्दन स्वीकारो वीर-बालना,
वसवु सद्गुरु चरणे वास।

हृदयोद्गार

(लेखक- श्रीहरिलाल के पारेख, राजकोट)

पूनित पगले पावन करी सुन्दर धरा सौराष्ट्रनी
जय-घोष सद्धर्मतणो कर्यो दशे दिशा गुजी रही
यशस्वी आ भूमी अहा! ज्या वीर नर पाक्या घणा
जया पाकता सीह केसरी गीरीवर शीखर कदरा।
वाय सुसवाट वायरो पवित्र रजकण जेमा भर्या
हीमगीरी थी पूनीत जे गिरनार शेत्रुजय अहा।
रमणी ने कचन तणा मोह स्पर्शी ना शक्या
महा प्रतापी जे महर्षी नेमिनाथ ज्या प्रवर्ज्या।
हाहाकार सुणी त्रस जीवोनो मडपे थी पाछा फर्या
राजेमती महासुन्दरी पूनीत पगले परवर्या
जगावी जोत आतम तणी अज्ञान-तिमिर छायो घणो।
चिर स्मृतिमा जे रहे व्याख्यानना प्रतिध्वनीओ
रजन कर्या कर्या मुग्ध जेणे दील जैन अजैनना
जीनोए बोध्यु तत्त्व जे समजाबयु ते विशेषता
विशेष थी समजाव्यु जेणे प्रमाण दई नय सप्तना।
भय टले भव अनत केरा जो थाय आतम-सरधना
वसमी छे आगल वाट हा जो थाय न आत्म सरधना
अनत पुद्गल परावर्त्तन लख चौरासी फरसना।

काठियावाड़-विहार-वर्णन

(श्रीवल्लभजी रतनशी वीराणी)

लावणी

मरुधर भूमि सत शिरोमणि जग सोरठ मे आय खडे,
नृपति भूपति सेठ सामतो प्रेम से उसका पाय पडे।
राजकोट शहर मे चौमासा ज्ञान की नोवत गडगडे,
देश-विदेशी मानव आवे दर्शन का वहा हेला पडे॥

वद वीज वीती कीर्ति जीती जे ताणे प्रभु पाय धरे,
गोंडल के गादीधर आकर आप तणो सत्कार करे।
धोराजी जूनाणो जाणो, ज्या गिरवर गिरनार खरे।
जेन जेनेतर की नहिं गणना सघ सुधारा शीघ्र करे॥
खडीआ वीलखा मेन्द्रगढे थई वेरावल मगरोल खरे,
माधवपुर मे पहायन जाकर श्रीजी हजूर मुजरो ज करे।
राणा साहब भाविक भारी दीवान दरसन आवी करे,
चटकी लग गई सारे शहर मे चोमासे लाएँ केस* लडे॥
एक विनती मेरी गुरुजी गोवा इधर बहुर खडे,
आप विना अवतारी योगी कौन उन्हो की व्हार करे।

जामनगर में-पूज्यश्री

(रचयिता-राजकवि- श्रीकेशवलाल श्यामजी जामनगर)

मारवाडते दूर अति देश काठियावार।
होत वहा के साधु को याते विरल विहार ॥१॥
तामे सत तपोनिधि वयोवृद्ध तन स्थूल।
पूज्य जवाहिरलालजी औसर लखि अनुकूल॥२॥
गुर्जर जेन समाज को आग्रह जानि अथोर।
कर निश्चय द्वय वर्ष को विचरे मुनि इस ओर॥३॥
राजाकोट मे आरहे प्रथमहि चातुर्मास।
जामनगर आये बहुरि कछु दिन करन निवास॥४॥
थोरे दिन यहँ ठहरकर गयेउ हापा गाम।
चरण व्याधिते पुनि यहा लियो पूज्य विश्राम॥५॥

मनोहर

चातुर्मास दूजा मोरवी मे जाई करिवे का।
निश्चय था इतने मे भई और घटना॥
केशव निपट बात व्याधि पूज्य चरन मे।
भया मन सोचा अब केसे राह कटना।
डाक्टर मेहता को बुलायके सुनाई बात
डाक्टर ने कहा ठहरो! यहा से न हटना॥
हम श्रम ले करेगे सूर्य किरनोपचार
देव के अधीन व्याधि मिटना न मिटना॥६॥
पूज्य ने मजूर किया केना प्रानजीवन का।

* मोरवी मे निश्चित हुए पूज्यश्री के चातुर्मास को वदलवाकर पोरबदर मे कराने की चर्चा जोरो से छिडी थी और पोरबदर नरेश ने इसके लिए भारी प्रयत्न किया था।

डोली मेह बेठ जाने लगे होस्पिटल मे॥
केशव दुमास मे विनष्ट भया वातरोग।
चलन लगे पदाति बढा रक्त बल मे॥
सेवक को ज्ञान रस मिल्यो यश डाक्टर को।
द्विगुन निवास जामनगर अन्न जल मे॥
विमल चरित्र श्री जवाहिरलाल जेसे
जेनाचार्य आजकल होगे कोउ स्थल मे॥७॥

मनोहर

पूज्यपाद जेनाचार्य जवाहिरलालजी को।
चातुर्मास हेतु जामनगर मे निवास भो॥
केशव उनीसशत त्रानु के सवत्सर मे।
जेन जनता के हिय परम हुलास भो॥
अगनित मानव के सन्निध उपाश्रय मे।
गुरु मुख व्योम ज्ञान भानु को प्रकाश भो।
सद्विचार सदाचार आदि को विकास भो॥८॥
मान्यवर महाराज जवाहिरलालजी की।
प्रवचन शैली अति आकर्षक जानि के॥
केशव सौ पौढ गिरा आस्वादन करिबे को।
आन लगे जैनेतर श्रद्धा उर आनि के॥
प्रतिदिन चूटि चूटि नये नये बोध पुष्प।
माला बनवाई अनुपम गुन ठानिके॥
अवलो करत श्रोता मनन उसी को यहा।
सुमरत हे वक्ता के सुभाव को बखानिके॥९॥
कोउ पूछे महाराज जवाहिरलाल जी को।
कैसा हे प्रभाव श्वेताम्बर के समाज मे॥
केशव तो कहि दीजे बिन ही सकोच बुध।
जेसा हे प्रभाव काष्ठ-तुम्बी और जहाज मे॥
दुस्तर अथाह भवसिन्धुको तरत आप।
तारत अनेक जीव सिद्ध निज साज मे॥
वीरता हे बाज मे ज्यो शौर्य मृगराज मे त्यो
मृदुता भरी हे इस सत शिरताज मे॥१०॥

परिशिष्ट

परिशिष्ट ‘क’

(पृष्ठ न ५५ का परिशिष्ट

जयतारण शास्त्रार्थ का प्रारम्भ

भगवान् महावीर स्वामी के चूकने के विषय मे प्रथम प्रश्न था। उसका उत्तर तेरहपन्थियो ने दस स्वपो के आधार पर भगवान् को मोहनीय कर्म का उदय होना बताकर दिया था। मुनि श्री जवाहरलाल जी महाराज ने उसी के विषय मे प्रश्न किया -

प्रथम प्रश्न

भगवान् महावीर स्वामी ने जो दस स्वप्न देखे थे, वे सभी सत्य थे। इसलिए सभी धर्म मे अन्तर्गत है। मोहनीय कर्म का उदय उनका कारण नही हे। यह बात श्रीदशाश्रुतस्कन्ध सूत्र के पाचवे अध्ययन की तीसरी गाथा मे है। उस अध्ययन के अर्थ ओर टीका से यह बात अच्छी तरह सिद्ध हो जाती हे।

श्री फौजमल जी स्वामी का उत्तर

श्री स्थानाग सूत्र के छठे स्थान मे छह प्रकार का प्रतिक्रमण बताया गया है। उसमे छठा स्वप्न का प्रतिक्रमण है। भगवती सूत्र के सोलहवे शतक के छठे उद्देशक मे पाच प्रकार के स्वप्न बताए गए है। उनमे सत्य स्वप्न भी गिना है। धर्म मे अन्तर्गत वस्तु का प्रतिक्रमण नही होता। इससे सिद्ध होता हे कि सभी स्वप प्रमाद के कारण होते हे। चाहे वे सच्चे हो या मिथ्या हो। भगवान् महावीर स्वामी के स्वप्न भी प्रमाद ही थे। इससे मोहनीय कर्म का उदय होना सिद्ध होता है, क्योंकि मोहनीय कर्म के बिना प्रमाद नही आता।

मुनिश्री जवाहरलाल जी महाराज

श्री स्थानाग सूत्र के छठे स्थान की दीपिका, टीका ओर टब्बे मे नीचे लिखा खुलासा है -

“आउल माउलाए सुमणवित्तियाए” इस प्रकार आवश्यक सूत्र का मूल पाठ है। इसका उद्धरण स्थानाग की दीपिका आदि मे दिया गया हे। आवश्यक सूत्र मे ‘आउल माउलाए’ का अर्थ है स्त्री के विषय मे आकुल चित्त किया हो। ‘सुमणवित्तियाए’ का अर्थ हे अनेक जजाल आदि का स्वप्न देखा हो। इससे सिद्ध होता हे कि मिथ्या स्वप्नो के लिए प्रतिक्रमण कहा गया हे, सत्य स्वप्नो के लिए नही।

श्री फौजमल जी स्वामी

‘आउल माउलाए’ यह पाठ अलग हे ओर स्वप्नो का पाठ अलग हे। ‘आउलमाउलाए’ पाठ जाग्रदवस्था के लिए हे। स्वप के लिए नही हे। जवाहरलाल जी ने जो उत्तर दिया हे उस से हमारे प्रश्न का समाधान नही होता।

इसके वाद पहले दिन का शास्त्रार्थ समाप्त हुआ। चारो मध्यस्थो ने हस्ताक्षर किए।

दूसरा दिन

(मुनि श्री जवाहरलालजी महाराज)

प्रतिवादी का कहना है कि 'आउल माउलाए, पाठ जाग्रत अवस्था का है, स्वप्न का नहीं''। यह कहना मिथ्या है क्योंकि स्थानाग सूत्र की टीका, दीपिका ओर टवा मे यह पाठ स्वप्न कोटि मे मोजूद हे। उसे कोई भी देख सकता हे।

दूसरी बात यह हे- दशाश्रुतस्कन्ध सूत्र के पाँचवे अध्ययन मे चित्तसमाधि के दस स्थानक कहे गए हे। उनमे तीसरा स्थान यथातथ्य स्वप्नदर्शन की प्राप्ति हे। हमारी और प्रतिवादी दोनो की यह मान्यता है कि जिन कार्यों को भगवान् ने अच्छा कहा हे अर्थात् जिन के लिए भगवान् की आज्ञा हे उनमे पाप नही हे। चित्त समाधि के दसो स्थान भगवान् की आज्ञा मे हे, इस लिए पाप नहीं हे। तीसरी चित्तसमाधि की टीका मे यथातथ्य स्वप्नो का उदाहरण देते हुए भगवान् के स्वप्नो का उदाहरण दिया हे। इसलिए भगवान् के स्वप्न का यथार्थ होना तथा उनका चित्तसमाधि मे गिना जाना वताया हे।

तीसरा दिन- श्री फौजमल जी स्वामी

वादी का कहना हे कि 'आउल माउलाए' पाठ जाग्रदवस्था का नही हे ओर स्वप्नावस्था का हे। इसे वे दीपिका आदि का प्रमाण देकर सिद्ध करने को तेयार हे। इसके लिए हमारा यही कहना हे कि उस पाठ को देखकर निर्णय कर लेना चाहिए। हमारा कहना तो यही हे कि 'आउल माउलाए' जाग्रदवस्था के लिए है ओर 'सुमिणवित्तियाए' यह स्वप्नावस्था के लिए। सूत्र मे दोनो अवस्थाओ के लिए प्रतिक्रमण बताया गया हे, क्योकि दोनो में चित्त का विक्षेप समान रूप से होता हे। यदि कोई स्वप्न मे समुद्र को भुजाओ से तैरता हे अथवा शत्रु को जीतता हे तो उसे चित्तविक्षेप से होने वाली क्रिया तो अवश्य लगेगी। चाहे जगने पर वे स्वप्न सत्य ही सिद्ध हो जायँ। भगवान् ने यथार्थ स्वप्न देखे थे, यह बात मे मानता हूँ। किन्तु स्वप्नकाल मे तो चित्त का विक्षेप ही था। विक्षेप मोहनीय कर्म के उदय से होता हे। इससे स्वप्न पाप सिद्ध हो जाते हे।

चौथा दिन-मुनि श्री जवाहरलाल जी म.

'आउलमाउलाए, सुमिणवित्तियाए' इस पाठ के लिए अव तर्क की आवश्यकता नही हे। मध्यस्थ महाशयो को चाहिए कि विद्वानो से पूछ कर अच्छी तरह निर्णय कर लेवे।

यह प्रसन्नता की वात हे कि प्रतिवादी ने भगवान् के स्वप्नो को सत्य स्वीकार कर लिया हे। किन्तु ऐसा करने मे वे अपने पूर्वाचार्य जीतमल जी का विरोध कर बेठे हे। क्योकि उन्होने 'भ्रम विध्वसन' मे लिखा हे-''वलि भगवत छद्मस्थपने दश स्वप्ना दीठा ते पण विपरीत छे।''

आवश्यक सूत्र मे जहाँ स्वप्नो का प्रतिक्रमण वताया गया हे वह मिथ्या जजाल आदि विपरीत स्वप्नो के लिए हे। यथार्थ स्वप्नो के लिए नही। यह बात स्वय भ्रमविध्वसन से सिद्ध होती हे। उसमे लिखा हे-

इहाँ सवुडो स्वप्नो देखे यथा तथ्य साचो देखे कह्यो। साधु तो आल जजाल आदि देखे तो झूठा पिण आवे छे! जे आवश्यक अध्ययन चोथे कह्यो- सोवण वित्तियाए। कहता स्वप्ना मे जजाल आदि देखे करी तथा आगल कह्यो 'पाणभोयणविपरियासयाए' कहता स्वप्ना मे पाणी नो पीवो, भोजन करवो ते अतिचार नो मिच्छा मि दुक्कड। इहा स्वप्न जजालादिक जूठा विपरीत स्वप्ना साधुने आवता कह्यो छे।

ठाणाग सूत्र मे जहाँ प्रतिक्रमण की बात आई है, वहाँ टीका मे आवश्यक सूत्र का उद्धरण दिया है और आवश्यक सूत्र मे आए हुए पाठ की व्याख्या जीतमल जी ने ऊपर लिखे अनुसार की है। इससे यह स्पष्ट है कि जीतमल जी भी यह मानते है कि सत्य स्वप्न का प्रतिक्रमण नही होता। ऐसी दशा मे फौजमल जी सत्य स्वप के लिए भी प्रतिक्रमण बताकर अपने पूर्वाचार्य और सिद्धान्त ग्रन्थ का विरोध कर रहे है।

यह नियम नही है कि प्रतिक्रमण उसी बात का होता है जो मोहकर्म के उदय से हो। वृहत्कल्प सूत्र मे प्रथम और चरम तीर्थङ्करो के साधुओ के लिए दोनो समय प्रतिदिन प्रतिक्रमण करना आवश्यक बताया गया है। बाकी बाईस तीर्थंकरो के साधुओ के लिए दोष लगाने पर प्रतिक्रमण का विधान है। ऐसी दशा मे भगवान् महावीर के शासन मे प्रतिक्रमण के लिए दोष का होना आवश्यक नही है।

हमने कहा था कि तीसरी चित्तसमाधि होने के कारण यथार्थ स्वप्न भगवान् की आज्ञा मे है, इसलिए पाप नही है। प्रतिवादी ने इसका कोई उत्तर नही दिया। भ्रमविध्वसन मे लिखा है-

"तो इहाँ साचो स्वप्नो देखे इम क्यो कह्यो, एनो न्याय-ये सर्व सवुडा साधु आश्री न थी। विशिष्ट अत्यन्त निर्मल चारित्र नो धणी सवुडो स्वप्नो देखे ते आश्री कह्यो छे।" इति।

भगवती सूत्र १६ शतक ६ उद्देश्य के टब्बे मे भी यही बात लिखी है। टब्बाकार और जीतमल जी दोनो इस बात को मानते है कि यथार्थ स्वप्न अत्यन्त निर्मल चारित्र वाले को ही आते है। फिर यथार्थ स्वप्नो के कारण भगवान् को प्रमाद वाला बताना कितनी बुरी बात है।

आचाराग सूत्र नवमाध्ययन तीसरे उद्देश की ८वी गाथा मे कहा है- छद्मस्थ अवस्था मे भगवान् ने पाप नही किया, नही कराया, करते को भला नही जाना।

इसी उद्देश की पन्द्रहवी गाथा मे कहा है कि भगवान् ने छद्मस्थापने मे एक बार भी प्रमाद कषाय आदि पाप नही किया।

इन सब प्रमाणो के होते हुए भगवान् को पाप लगने की बात कहना शास्त्रविरुद्ध तथा स्वसिद्धान्त विरुद्ध है।

"स्वप्न मे शत्रु जीतना, समुद्र पार करना आदि चित्त का विक्षेप है। इसलिए पाप है।" यह कर कर भगवान् को पाप बताना भी ठीक नही है। हम यहाँ शास्त्रो का अर्थ और उससे सिद्ध होने वाली बात का निर्णय करने के लिए बैठे है। भगवान् के स्वप्न पाप नही है, इसके लिए अनेक शास्त्रीय प्रमाण दिए जा चुके है। उनका विरोध किसी शास्त्र के प्रमाण द्वारा ही होना चाहिए। लौकिक स्वप्नो के साथ भगवान् के स्वप्न की तुलना करना उचित नही है। स्वप्नो का कारण चित्तविक्षेप ही नही है। सूत्र मे स्वप्नो के बहुत से कारण बताए गए है। सब स्वप्नो को बराबर करना ठीक नही है। लोकोत्तर बातो के लिए हमे आगम से निर्णय करना चाहिए। अपनी अटकल लगाने से मिथ्यात्व का भागी होना पडता है।

पांचवा दिन- श्री फौजमल जी

१ वादी ने अपने कथन मे 'आउल माउलाए' पाठ का अर्थ लिखा है। यह हमारा प्रश्न नही है। हमारा प्रश्न है कि यह पाठ जाग्रदवस्था का है या स्वप्नावस्था का ? इसी प्रश्न का उत्तर देना चाहिए।

दूसरा दिन

(मुनि श्री जवाहरलालजी महाराज)

प्रतिवादी का कहना हे कि 'आउल माउलाए, पाठ जाग्रत अवस्था का हे, स्वप्न का नही''। यह कहना मिथ्या हे क्योंकि स्थानाग सूत्र की टीका, दीपिका ओर टवा मे यह पाठ स्वप्न कोटि मे मोजूद हे। उसे कोई भी देख सकता हे।

दूसरी बात यह हे- दशाश्रुतस्कन्ध सूत्र के पाँचवे अध्ययन मे चित्तसमाधि के दस स्थानक कहे गए है। उनमे तीसरा स्थान यथातथ्य स्वप्नदर्शन की प्राप्ति हे। हमारी ओर प्रतिवादी दोनो की यह मान्यता है कि जिन कार्यों को भगवान् ने अच्छा कहा हे अर्थात् जिन के लिए भगवान् की आज्ञा हे उनमे पाप नही है। चित्त समाधि के दसो स्थान भगवान् की आज्ञा मे हे, इस लिए पाप नहीं हे। तीसरी चित्तसमाधि की टीका मे यथातथ्य स्वप्नो का उदाहरण देते हुए भगवान् के स्वप्नो का उदाहरण दिया हे। इसलिए भगवान् के स्वप्न का यथार्थ होना तथा उनका चित्तसमाधि मे गिना जाना बताया हे।

तीसरा दिन- श्री फौजमल जी स्वामी

वादी का कहना है कि 'आउल माउलाए' पाठ जाग्रदवस्था का नही हे ओर स्वप्नावस्था का हे। इसे वे दीपिका आदि का प्रमाण देकर सिद्ध करने को तेयार हे। इसके लिए हमारा यही कहना हे कि उस पाठ को देखकर निर्णय कर लेना चाहिए। हमारा कहना तो यही हे कि 'आउल माउलाए' जाग्रदवस्था के लिए है ओर 'सुमिणवित्तियाए' यह स्वप्नावस्था के लिए। सूत्र मे दोनो अवस्थाओ के लिए प्रतिक्रमण बताया गया है, क्योकि दोनो में चित्त का विक्षेप समान रूप से होता हे। यदि कोई स्वप्न मे समुद्र को भुजाओ से तैरता है अथवा शत्रु को जीतता है तो उसे चित्तविक्षेप से होने वाली क्रिया तो अवश्य लगेगी। चाहे जगने पर वे स्वप्न सत्य ही सिद्ध हो जायँ। भगवान् ने यथार्थ स्वप्न देखे थे, यह बात मै मानता हूँ। किन्तु स्वप्नकाल मे तो चित्त का विक्षेप ही था। विक्षेप मोहनीय कर्म के उदय से होता हे। इससे स्वप्न पाप सिद्ध हो जाते है।

चौथा दिन-मुनि श्री जवाहरलाल जी म.

'आउलमाउलाए, सुमिणवित्तियाए' इस पाठ के लिए अव तर्क की आवश्यकता नही हे। मध्यस्थ महाशयों को चाहिए कि विद्वानो से पूछ कर अच्छी तरह निर्णय कर लेवे।

यह प्रसन्नता की बात है कि प्रतिवादी ने भगवान् के स्वप्नो को सत्य स्वीकार कर लिया हे। किन्तु ऐसा करने मे वे अपने पूर्वाचार्य जीतमल जी का विरोध कर बेठे हे। क्योकि उन्होने 'भ्रम विध्वसन' मे लिखा हे-''वलि भगवत छद्‌मस्थपने दश स्वप्ना दीठा ते पण विपरीत छे।''

आवश्यक सूत्र मे जहाँ स्वप्नो का प्रतिक्रमण बताया गया हे वह मिथ्या जजाल आदि विपरीत स्वप्नो के लिए हे। यथार्थ स्वप्नो के लिए नही। यह बात स्वय भ्रमविध्वसन से सिद्ध होती हे। उसमे लिखा हे-

इहाँ सवुडो स्वप्नो देखे यथा तथ्य साचो देखे कह्यो। साधु तो आल जजाल आदि देखे तो झूठा पिण आवे छे। जे आवश्यक अध्ययन चोथे कह्यो- सोवण वित्तियाए। कहता स्वप्ना मे जजाल आदि देखे करी तथा आगल कह्यो 'पाणभोयणविपरियासयाए' कहता स्वप्ना मे पाणी नो पीवो, भोजन करवो ते अतिचार नो मिच्छा मि दुक्कड। इहा स्वप्न जजालादिक जूठा विपरीत स्वप्ना साधुने आवता कह्यो छे।

ठाणाग सूत्र मे जहाँ प्रतिक्रमण की बात आई है, वहाँ टीका मे आवश्यक सूत्र का उद्धरण दिया है और आवश्यक सूत्र मे आए हुए पाठ की व्याख्या जीतमल जी ने ऊपर लिखे अनुसार की है। इससे यह स्पष्ट है कि जीतमल जी भी यह मानते है कि सत्य स्वप्न का प्रतिक्रमण नही होता। ऐसी दशा मे फौजमल जी सत्य स्वप्न के लिए भी प्रतिक्रमण बताकर अपने पूर्वाचार्य और सिद्धान्त ग्रन्थ का विरोध कर रहे है।

यह नियम नही है कि पतिक्रमण उसी बात का होता है जो मोहकर्म के उदय से हो। वृहत्कल्प सूत्र मे प्रथम और चरम तीर्थङ्करो के साधुओ के लिए दोनो समय प्रतिदिन प्रतिक्रमण करना आवश्यक बताया गया है। बाकी बाईस तीर्थंकरो के साधुओ के लिए दोष लगाने पर प्रतिक्रमण का विधान है। ऐसी दशा मे भगवान् महावीर के शासन मे प्रतिक्रमण के लिए दोष का होना आवश्यक नही है।

हमने कहा था कि तीसरी चित्तसमाधि होने के कारण यथार्थ स्वप्न भगवान् की आज्ञा मे है, इसलिए पाप नही है। प्रतिवादी ने इसका कोई उत्तर नही दिया। भ्रमविध्वसन मे लिखा है-

"तो इहाँ साचो स्वप्नो देखे इम क्यो कह्यो, एनो न्याय-ये सर्व सवुडा साधु आश्री न थी। विशिष्ट अत्यन्त निर्मल चारित्र नो धणी सवुडो स्वप्नो देखे ते आश्री कह्यो छे।" इति।

भगवती सूत्र १६ शातक ६ उद्देश्य के टब्बे मे भी यही बात लिखी है। टब्बाकार और जीतमल जी दोनो इस बात को मानते है कि यथार्थ स्वप्न अत्यन्त निर्मल चारित्र वाले को ही आते है। फिर यथार्थ स्वप्नो के कारण भगवान् को प्रमाद वाला बताना कितनी बुरी बात है।

आचाराग सूत्र नवमाध्ययन तीसरे उद्देश की ८वी गाथा मे कहा है- छद्मस्थ अवस्था मे भगवान् ने पाप नही किया, नही कराया, करते को भला नही जाना।

इसी उद्देश की पन्द्रहवी गाथा मे कहा है कि भगवान् ने छद्मस्थापने मे एक बार भी प्रमाद कषाय आदि पाप नही किया।

इन सब प्रमाणो के होते हुए भगवान् को पाप लगने की बात कहना शास्त्रविरुद्ध तथा स्वसिद्धान्त विरुद्ध है।

"स्वप्न मे शत्रु जीतना, समुद्र पार करना आदि चित्त का विक्षेप है। इसलिए पाप है।" यह कर कर भगवान् को पाप बताना भी ठीक नही है। हम यहाँ शास्त्रो का अर्थ और उससे सिद्ध होने वाली बात का निर्णय करने के लिए बैठे है। भगवान् के स्वप्न पाप नही है, इसके लिए अनेक शास्त्रीय प्रमाण दिए जा चुके है। उनका विरोध किसी शास्त्र के प्रमाण द्वारा ही होना चाहिए। लौकिक स्वप्नो के साथ भगवान् के स्वप्न की तुलना करना उचित नही है। स्वप्नो का कारण चित्तविक्षेप ही नही है। सूत्र मे स्वप्नो के बहुत से कारण बताए गए है। सब स्वप्नो को बराबर करना ठीक नही है। लोकोत्तर बातों के लिए हमे आगम से निर्णय करना चाहिए। अपनी अटकल लगाने से मिथ्यात्व का भागी होना पडता है।

पांचवा दिन- श्री फौजमल जी

१ वादी ने अपने कथन मे 'आउल माउलाए' पाठ का अर्थ लिखा है। यह हमारा प्रश्न नही है। हमारा प्रश्न है कि यह पाठ जाग्रदवस्था का है या स्वप्नावस्था का ? इसी प्रश्न का उत्तर देना चाहिए।

२ हमारा दूसरा प्रश्न हे-साधु या गृहस्थ को यथातथ्य स्वप्न आते हे या नही ? यदि आते ह तो वे चित्तसमाधि मे गिने जाएँगे या नही ? यदि चित्तसमाधि मे हे तो उन स्वप्नो की चित्तसमाधि मे ओर इन स्वप्नो की चित्तसमाधि मे क्यों फरक हे ?

३ आचाराग सूत्र १ श्रुतस्कन्ध, ९ अध्ययन, २ उद्देश्य की दूसरी गाथा मे १० स्वप्नो को निद्राप्रमाद कहा हे। निद्राप्रमाद मोहनीय कर्म के उदय से होता हे, इसलिए १० स्वप्न पाप हे। इस प्रमाण के होते हुए वादी का यह कहना हे कि भगवान् ने छद्मस्थ अवस्था मे एक बार भी प्रमाद का सेवन नही किया, शास्त्रसगत नही हे।

४ आचाराग सूत्र की टीका, दीपिका व टव्वा मे यह लिखा हे कि भगवान् के १२ वर्ष व १३ पक्ष के छद्मस्थपने मे एकवार प्रमाद का सेवन किया।

५ ठाणाग सूत्र के १०वे ठाणे की दीपिका मे भी निद्रा प्रमाद होना लिखा हे।

६ प्रतिवादी का यह कहना भी शास्त्रविरुद्ध हे कि प्रतिक्रमण मोहनीय कर्म के उदय से होने वाले किसी कारण के विना भी शास्त्रविहित हे। क्योंकि प्रतिक्रमण अतिचारो का होता हे ओर अतिचार मोहनीय कर्म का उदय रूप हे।

७ प्रतिवादी का कहना हे कि भ्रमविध्वसन मे शास्त्रविरुद्ध वाते हे ओर भगवान् महावीर स्वामी पर विपरीत स्वप्न देखने का कलक लगाया गया हे। हमारे आचार्य जीतमल जी महाराज ने कोई वात शास्त्र विरुद्ध नही लिखी। भगवान् महावीर के वचनो के विपरीत प्ररूपणा भी नही की। इसके विपरीत प्रतिवादी महोदय ने ब्यावर मे आठ निह्नवो की प्ररूपणा की है, जवकि ठाणाग सूत्र मे सात ही निह्नव वताए गए है।

हमारे स्वामी जी पर मिथ्या आरोप तथा शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करने के लिए प्रतिवादी को प्रायश्चित्त लेना चाहिए। हमने शास्त्र के प्रमाण से अपनी वात को सिद्ध कर दिया।

छटा दिन-मुनि श्री जवाहरलाल जी

१ प्रतिवादी से हमारा प्रश्न था कि वे यथार्थ स्वप्न को मोहनीय कर्म के उदय से होना शास्त्र द्वारा सिद्ध करे। उन्होने निद्राप्रमाद को लेकर मोहनीय कर्म का होना वताया हे। किन्तु निद्राप्रमाद ओर स्वप्नदर्शन भिन्न-भिन्न हे। स्वप्नदर्शन शास्त्रो मे क्षायोपशमिक भाव वताया गया हे। ठाणाग सूत्र के आठवे ठाणे का पाठ हे -

सुमिणदंसणे

टव्वाकार ने उसकी व्याख्या नीचे लिखे अनुसार की हे -

"स्वप्न दर्शन तो अचक्षु दर्शन मा ही ज आवे, पिण सूतानी अवस्था माटे जूदी विवक्षा इति।"

उपरोक्त उद्धरण मे स्वप्न दर्शन को अचक्षु दर्शन का भेद कहा हे। टीकाकार भी इसी प्रकार कहते है -

स्वप्नदर्शनस्याचक्षुर्दर्शनान्तर्भावेऽपि सुप्तावस्थोपाधितो भेदो विवक्षित इति।

इन प्रमाणो से स्वप्न दर्शन अचक्षुदर्शन का भेद है, यह सिद्ध हो जाता है। अनुयोगद्वार सूत्र मे अचक्षु दर्शन को क्षायोपशमिक भाव कहा है-

"खउवसमिया अचक्खुदसणे।"

तेरहपथ के प्रणेता भीम जी ने अपने बनाए हुए तेरह द्वारो मे भी यही बात लिखी है-

' दर्शनावरणीय कर्म रो क्षयोपशम निपन्न होवे तो ५ इन्द्रिय, ३ दर्शन एव ८।" नन्दी सूत्र मे स्वप्नप्रज्ञान को इन्द्रिय मतिज्ञान का भेद बताया है-

"एव स्वपमधिकृत्य नोइन्द्रियस्यार्थावग्रहादय प्रतिपादिता ।"

इन सब प्रमाणो से सिद्ध है कि स्वप्न का दर्शन और स्वप्न का ज्ञान क्षायोपशमिक भाव है। क्योंकि स्वप्नदर्शन को अचक्षुदर्शन का भेद बताया गया है और अचक्षुदर्शन क्षायोपशमिक भावो मे बताया गया है। इससे स्वप्नदर्शन का भी क्षायोपशमिक भावो मे होना सिद्ध हो जाता है। निद्राप्रमाद ओदयिक भाव है, स्वपदर्शन नही है।

'आउल माउलाए' पाठ स्वप कोटि मे है। इसे कोई भी देख सकता है।

प्रतिवादी का छद्मस्थ या साधु को यथार्थ स्वप्न आते है या नही, इत्यादि पूछना शास्त्रार्थ के नियम विरुद्ध है। क्योंकि निश्चयानुसार पहले हमारे प्रश्न का उत्तर हो जाना चाहिए, फिर प्रतिवादी नया प्रश्न खडा कर सकते है। बीच मे नई-नई बाते खडी करना ठीक नही है। भगवान् ने छद्मस्थपने मे प्रमादकषायादि पाप का सेवन नही किया, उसके लिए आचाराग सूत्र का निम्नलिखित पाठ टब्बार्थ ओर टीका के साथ दिया जाता है-

मूल पाठ-छउमत्थो वि परक्कममाणोण पणमाय सय विकुव्वित्था।

टब्बा- श्री महावीर छद्मस्थ छतो पिण विविध अनेक प्रकार सयम अनुष्ठान ने विषे प्राक्रम करतो एक बार प्रमाद कषायादिक न करे, स्वामी इण परे वरत्या इति।

टीका-न प्रमादकषायादिक सकृदपि कृतवानिति।

इस पाठ को देख लेने के बाद सन्देह का अवसर नही रहता। यदि फोजमल जी इसे भी मानने को तैयार न हो तो हमारे पास कोई उपाय नही है। हमारा कार्य तो सत्य वस्तु को प्रकट कर देना है।

प्रतिवादी फोजमलजी का यह कहना भी ठीक नही है कि भगवान् के १० स्वप्न निद्रा प्रमाद मे हे और निद्रा प्रमाद मोहनीय कर्म का उदय हे। इसके लिए उन्होने आचाराग तथा ठाणाग की दीपिका आदि के जो प्रमाण दिए हे, उनमे कही पर भी उपरोक्त बात नही हे।

शास्त्रो मे निद्रा दो प्रकार की बताई हे- द्रव्यनिद्रा ओर भावनिद्रा। नीद आना या स्वप्न आदि देखना द्रव्यनिद्रा हे ओर मिथ्यात्व, अविरति कषाय आदि भावनिद्रा हे। भावनिद्रा मोहनीय कर्म के उदय से असयती जीव को होती हे। वही पाप हे। द्रव्यनिद्रा दर्शनावरणीय के उदय से होती हे, उसमे पाप नही हे।

भगवान् ने एक वार द्रव्यनिद्रा का सेवन किया था, भावनिद्रा का नही। इन सब बातो के लिए हम शास्त्र ओर प्रतिवादी के सिद्धान्तग्रन्थ 'भ्रमविध्वसन' का प्रमाण देने को तेयार हे-

भगवती सूत्र के १६ शतक ६ उद्देश मे पाठ है-

सुत्ते ण भन्ते सुविण पासन्ति, जागरे सुविण पासति, सुत्तजागरे सुविण पासति ? गोयमा! नो सुत्ते सुमिण पासइ, नो जागरे सुविण पासइ, सुत्तजागरे सुविण पासइ।''

इसके अर्थ मे बताया गया है कि द्रव्यनिद्रा से सोता-जागता स्वप्न देखता है। टीका मे भी यही बात है-

नाति सुप्तो नाति जागर इत्यर्थ । इह सुप्तो जागरश्च द्रव्यभावाभ्या स्यात्तत्र द्रव्यतो निद्रापेक्षया भावतश्चाविरत्यपेक्षया। तत्र स्वप्नव्यतिकरो द्रव्यनिद्रापेक्ष उक्त ।

इससे स्वप्न का आना द्रव्यनिद्रा मे सिद्ध होता है। 'भ्रमविध्वसन' मे भी यही लिखा है-

अथ इहा कह्यो सूतो स्वप्नो न देखे, जागतो स्वप्नो न देखे, सूतो जागतो स्वप्नो देखे, तो कह्यो ते सूता नाम निद्रा मे, जागरो नाम जागता मे छे। ए तो सूतो निद्रा मे कह्यो ते द्रव्यनिद्रा नी अपेक्षाय सूतो कह्यो, पिण भावनिद्रानी अपेक्षा य सूतो न कह्यो। तेहनी टीका मे पिण इम कह्यो, इहा पिण द्रव्यनिद्रा भावनिद्रा कही छे तो भावनिद्रा थी पाप लागे, द्रव्यनिद्रा थी पाप नही लागे। अनेक ठामे सुवणो ते निद्रा नो नाम कह्यो छे ते माटे जेण थी सूता पाप न लागे सुवण री आज्ञा छे ते माटे इति। (जुना भ्रमविध्वसन पाना १५३)

उपरोक्त पाठ से स्वप्न का द्रव्यनिद्रा होना तथा उसमे पाप नही लगाना स्पष्ट है। फोजमल जी इसमे मोहनीय कर्म का उदय तथा पाप बता कर शास्त्र तथा अपने गुरु दोनो के विरुद्ध वोल रहे है।

दीपिका आदि मे जहाँ भगवान् के स्वप्नो के विषय मे 'निद्राप्रमाद' शब्द आया है वह द्रव्यनिद्रा के लिए ही है।

दीपिका तथा टीका मे आया है-

''निद्रामप्यसो अपरप्रमाद रहितो न प्रकामत सेवते।'' अर्थात् दूसरे प्रमादो से रहित भगवान् निद्रा को भी खूब नही लेते थे। इससे यह सिद्ध होता है कि निद्रा के सिवाय भगवान ने ओर किसी प्रमाद का सेवन नही किया। निद्रा भी यहा द्रव्यनिद्रा है। आचाराग सूत्र के तीसरे अध्ययन, प्रथम उद्देश के पहले सूत्र मे कहा है-

मू ''सुत्ता अमुणी मुणिणो सयय जागरति''

दीपिका-इह सुप्ता द्वेधा द्रव्यतो भावतश्च। ततो निद्राप्रमादापन्ना द्रव्यसुप्ता भावसुप्तास्तु मिथ्यात्वाज्ञानमयमहानिद्राव्यामोहिता , ततो येऽमुनयो मिथ्यादृष्टय सतत भावसुप्ता सद्विज्ञानानुष्ठानरहितत्वात् निद्रयानुभजनीया ।मुनयस्तु सद्‌वोधोपेता मोक्षमार्गे चलन्तस्ते सततमनवरत जाग्रति हिताहितप्राप्तिपरिहार कुर्वते अतो द्रव्यनिद्रोपेता अपि क्वचिद्‌द्वितीय पोरुष्यादो सतत जागरूका न एव। तदेव दर्शनावरणीयकर्मविपाकोदयेन क्वचित् स्वपन्नपि य सविग्नो यतनावाश्च स दर्शनमोहनीयमहानिद्रापगमात् जाग्रदवस्थ एवेति।

भावार्थ-सुप्त दो प्रकार के होते हे- द्रव्यसुप्त ओर भावसुप्त। निद्राप्रमाद वाला द्रव्यसुप्त होता है। जो व्यक्ति मिथ्यात्व ओर अज्ञान रूप महानिद्रा मे सोया हुआ हे वह भावसुप्त हे। असयीत मिथ्यादृष्टि निरन्तर भावसुप्त हे। सम्यग् ज्ञान ओर तदनुकूल अनुष्ठान न होने से वे निद्रा मे पडे हुए हे। सम्यग् ज्ञान

वाले मुनि जो मोक्षमार्ग मे चलते हे वे तो सदा जागृत हे। वे हित की प्राप्ति तथा अहित का परिहार करते है। इसलिए दूसरी पोरुषी आदि मे द्रव्यनिद्रा लेते हुए भी वे सदा जागते हे। इस प्रकार दर्शनावरणीय कर्म के विपाक का उदय होने से कही पर सोता हुआ भी जो सवेग तथा यतना वाला हे वह दर्शनमोहनीय रूप महानिद्रा हट जाने से जागृत ही हे।

उपरोक्त टीका मे भावनिद्रा वाले को अमुनि तथा मिथ्यादृष्टि कहा हे। भगवान् तो सर्वश्रेष्ठ मुनि तथा सम्यग्दृष्टि थे। उनके लिए उपरोक्त विशेषण नही हो सकते। इसलिए उनके भावनिद्रा का होना भी सिद्ध नही होता।

भगवतीसूत्र ६ शतक उद्देश मे भावनिद्रा वाले को अव्रती कहा हे। इसलिए भगवान् को भावनिद्रा न मानकर दर्शनावरणीय कर्म के उदय से होने वाली द्रव्यनिद्रा ही माननी चाहिए। द्रव्यनिद्रा मे पाप नही हे, यह वात भ्रवविध्वसनकार भी मानते हे। इसके लिए पाठ ऊपर लिखा जा चुका है। एक ओर जगह 'भ्रमविध्वसन' मे लिखा है-

"एक मोहनीय रा उदय बिना और कर्मा रा उदय थी पाप न लागे।"

द्रव्यनिद्रा दर्शनावरणीय का उदय है, मोहनीय का नही। यह सिद्ध हो चुका हे। इसलिए भगवान् को पाप का लगना बताना शास्त्रविरुद्ध तथा भ्रमविध्वसन विरुद्ध है।

निद्राप्रमाद को मोहनीय कर्म का उदय मूल या दीपिका आदि किसी मे नही बताया गया है। इसके लिए फोजमल जी का कथन कपोलकल्पित है। द्रव्यनिद्रा के लिए निद्राप्रमाद शब्द हम आचाराग की टीका तथा दीपिका मे बता चुके है।

फोजमल जी का यह कथन भी ठीक नही है कि निद्रा ओर निद्राप्रमाद दोनो भिन्न भिन्न है। उत्तराध्ययन सूत्र के ११वे अध्ययन की तीसरी गाथा मे टीकाकार लिखते हे-

"प्रमादेन मदविषयकषायनिद्राविकथारूपेण।"

इसमे निद्रा को ही निद्राप्रमाद बताया गया हे।

आवश्यक सूत्र मे अज्ञान का प्रतिक्रमण बताया गया हे। इसका पाठ है- 'अन्नाण परियाणामि'

अनुयोगद्वार सूत्र मे तीन अज्ञानो को क्षायोपशमिक भाव कहा हे। ऐसी दशा मे मोहनीय के उदय का ही प्रतिक्रमण वताना शास्त्रविरुद्ध हे। श्री बृहत्कल्पसूत्र के चोथे उद्देश का प्रमाण भी पहले दिया जा चुका हे।

फोजमल जी का यह कहना ठीक नही हे कि जीतमलजी ने कही पर शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा नही की ओर न भगवान् की अवज्ञा की हे। भगवान ने सत्य स्वप्न देखे थे, ऐसा शास्त्रो मे जगह जगह आया हे। 'भ्रमविध्वसन' मे उन्हे विपरीत लिखा हे। यह शास्त्र ओर भगवान् दोनो का अनादर हे।

फोजमल जी ने हमारे लिए कहा हे- शास्त्र मे सात निह्नव हे ओर जवाहरलालजी ने आठ निह्नव वताकर शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा की है। उनका यह कथन ठीक नही हे।

उत्तराध्ययन सूत्र के तीसरे अध्ययन की टीका का लेख हे-

"अथ भूरिविसवादी प्रसगात् प्रोच्यतेऽष्टम श्री वीरमुक्तेर्जातोऽव्दशते पड्‌भिर्नवोत्तरे ।"

अर्थात् वीरनिर्वाण के ६०९ वर्ष वाद भूरिविसवादी आठवा निह्नव हुआ।

आवश्यक सूत्र की निर्युक्ति मे भी यही वताया हे-

छव्वास सयाइ नवोत्तर तइआ सिद्धिगयस्स वीरस्स।

तो वोडी अणादिट्ठी रहवीरपुरे समुप्पन्ना॥

इन सब प्रमाणो से आठवाँ निह्नव सिद्ध होता है। यद्यपि यह विपयान्तर है किन्तु फोजमल जी को उत्तर देने के लिए सक्षेप से वता दिया है। इन सव वचनो के होते हुए यह कहना कि आठवाँ निह्नव नही है, शास्त्रो की अनभिज्ञता को सूचित करता है।

फोजमल जी लिखते हे कि हमने स्वप्न का आना मोहनीय कर्म के उदय से ही होता है, इस वात को सिद्ध कर दिया हे। अव इसमे प्रश्नोत्तर की गुञ्जाइश नही हे। उनका कहना ऐसा ही हे जेसे किसी कर्जदार का मिट्टी की ठीकरियाँ देकर यह कहना कि हमने कर्ज चुका दिया हे, अव किसी को कुछ न मागना चाहिए।

निर्णायक सूत्र

पौष शुक्ला द्वादशी के दिन मुनि श्री जवाहरलाल जी महाराज ने अपने प्रमाण देने के वाद कहा था- "यदि फोजमलजी का यही कहना हे कि भगवान् महावीर को दस स्वप्न मोहनीय कर्म के उदय से आए तो वे शास्त्र या टीका आदि प्रमाण दिखलाएँ।"

इस पर फोजमल जी ने भगवती सूत्र १६ शतक ६ उद्देश पृष्ठ १३२२ (छपी हुई प्रति) मे टीका का नीचे लिखा पाठ बताया-

"एषा च पिशाचाद्यर्थाना मोहनीयादिभि स्वप्नफलविषयभूते सह साधर्म्यं स्वयमूह्यमिति।"

इस पाठ का मनमाना अर्थ करके फोजमल जी ने कहा कि स्वप्नो का मोहनीय कर्म से आना सिद्ध हो गया हे।

मुनिश्री जवाहरलाल जी ने उस पाठ को अपने हाथ मे लिया ओर फोजमल जी की गलती वताकर ठीक अर्थ कर दिया।

इस पर मध्यस्थो ने मुनि श्री जवाहरलाल जी तथा फोजमल जी दोनो से अपना अपना अर्थ लिख देने के लिए कहा। मुनिश्री जवाहरलाल जी ने तो उसी समय ठीक ठीक लिख दिया किन्तु फोजमल जी ने सभा मे जेसा कहा था, वेसा न लिखकर अडवड करना शुरू किया। मध्यस्थो ने उन्हे वहुत कहा किन्तु फिर भी अपने कहे अनुसार अर्थ नही लिखा। इस पर मध्यस्थो ने सवेगी श्री केसरविजय जी के कथन को प्रमाण मानकर निर्णय कराने के विषय मे पूछा। फोजमल जी ने यह वात भी नही मानी इस पर मुनिश्री जवाहरलालजी ने कहा- अव सभा के नियमानुसार मध्यस्थो को अन्तिम निर्णय दे देना चाहिए।

पोष शुक्ला चतुर्दशी को मध्यस्थो ने कहा-ऊपर लिखे पाठ का अर्थ वाईस सम्प्रदाय की तरफ से पण्डित विहारीलाल जी तथा तेहरपथ की तरफ से पण्डित वालकृष्ण जी लिखकर दे देवे। हम उसका निर्णय अपनी इच्छानुसार विद्वानो से करा लेवेगे। वह निर्णय दोनो पक्ष वालो को मान्य होगा?

दोनो पक्ष वालो ने इस बात को मान लिया।

बाईस सम्प्रदाय की तरफ से नीचे लिखे अनुसार लिखा गया- "हमारा कथन यह हे कि स्वप्नदर्शन को श्रीमत् ठाणाग जी के आठवे ठाणे मे अचक्षुदर्शन का भेद कहा है। यानि अचक्षुदर्शन के गर्भित ही हे और अचक्षुदर्शन को श्रीमत् सूत्र अनुयोगद्वार जी मे क्षयोपशम भाव मे कहा हे। तथा प्रतिवादी फौजमल जी के मत के आदि पुरुष भीषमजी ने जो तेरह द्वार बनाए है, उनके अष्टम द्वार मे भी अचक्षुदर्शन को क्षमोपशम भाव मे कहा हे। स्वप्न दर्शन अचक्षुदर्शन के अन्तर्गत हे, इसलिए क्षयोपशम भाव मे है। मोहनीय कर्म के उदय भाव मे नही हे। इस हेतु से यह सिद्ध होता हे कि भगवान् महावीर स्वामी द्वारा देखे गए दस स्वप्न मोहनीय कर्म के उदय भाव मे नहीं हे।

श्री भगवती सूत्र की टीका का खुलासा निम्ननिखित है-

"एषा च पिशाचाद्यर्थाना मोहनीयादिभि स्वप्नफलविषयभूतै सह साधर्म्यं स्वमूह्यमिति।"

अर्थ-इन पिशाचादि अर्थों का स्वप्नफल के विषय रूप मोहनीय कर्म आदि के साथ सादृश्य स्वय समझ लेना चाहिए।"

हम अपनी तरफ से समेगी श्री केसरविजय जी को निर्णायक चुनते हे। यदि टीका का अर्थ ऊपर लिखे अनुसार न हो अथवा इससे स्वप्नो का कारण मोहनीय का उदय सिद्ध होता हो तो केसरविजय जी का निर्णय हमे मजूर है।

फौजमल जी की तरफ से नीचे लिखे अनुसार लिखा गया-

हमारा यह कथन है कि सूत्र भगवती जी का शतक १६ मा उद्देश छठा छापा की पडत पत्र १३२२ मा की टीका-

"एषा च पिशाचाद्यर्थाना मोहनीयादिभि स्वप्नफलविषयभूतै सह साधर्म्यं स्वयमूह्यम्।"

इस टीका मे भगवान् महावीर स्वामी ने देखे वह यथातथ्य स्वप्न मोहनीय कर्म के उदय सिद्ध होते हे।

मध्यस्थो ने पूछा- क्या आपको समेगी केसरविजय जी का निर्णय मान्य होगा ?

तेरहपथी साधु फोजमलजी तथा जयचन्द जी ने विचार करके बाद मे उत्तर देने के लिए कहा। दूसरे दिन तेरह पथियो ने उन्हे निर्णायक तो मान लिया किन्तु केसरविजय जी विहार कर गए।

मुनि श्री जवाहरलालजी महाराज ने मध्यस्थो से अन्तिम निर्णय के लिए फिर कहा। मध्यस्थो ने दोनो तरफ के पण्डितो की लिखित राय ली।

बाईस सम्प्रदाय की तरफ से पण्डित बिहारीलालजी ने नीचे लिखे अनुसार राय दी।

"सूत्र भगवती जी का शतक १६ मा उद्देश छठा छापा की पडत का पत्र १३२२ की टीका-

"एषा च पिशाचाद्यर्थाना मोहनीयादिभि स्वप्नफलविषयभूते सह साधर्म्यं स्वयमूह्यमिति।"

एषा पूर्वोक्ताना पिसाचाद्यर्थाना स्वप्नफलविषयभूते मोहनीयादिभि सह स्वय विद्वद्भिरिति शेप साधर्म्यमूह्य तर्कणीयमित्यन्वय । इन पिशाचादिक स्वप्नो के अर्थात् पीछे जो कह चुके हे, इनके

जो स्वप्नो के फल विषय भूत मोहनीयादिक हे अर्थात् दश स्वप्नो के दश फल ज्यो पीछे कह चुके है, इनके साथ स्वय विद्वान् पुरुषो ने साधर्म्य जेसे होय वेसे तर्कणा करना योग्य हे। सो अब दश स्वप्न ओर दश स्वप्नो के फल दोनो नीचे दर्ज करते हे।

स्वप्न	**फल**
१-ताल पिशाच	मोहनीय कर्म घात करना।
२-शुक्ल पक्षी कोकिल	शुक्ल ध्यान का ध्याना।
३-विचित्र पख का कोकिल	द्वादश अगो की प्ररूपणा।
४-रत्नमाला का जोडा	साधु श्रावक के धर्म को स्थापन करना।
५-श्वेत गायो का वर्ग	चतुर्विध सघ को स्थापन करना।
६-पुष्पो से भरा पद्म सरोवर	चतुर्विध देवता की प्ररूपणा।
७-समुद्र तरण	ससार समुद्र को तिरना।
८- तेजस्वी सूर्य	केवल ज्ञान केवल दर्शन उत्पन्न होना।
९-मानुषोत्तर पर्वत को आतो वीटा	तीनों भुवन मे कीर्ति फेलना।
१०-मेरु पर्वत की चूलिका पर सिहासन पर बैठै	बारह प्रकार की पर्षदा मे सिहासन पर बैठ के धर्मोपदेश सुनाना।

इन सभो का भावार्थ यह है कि इस टीका से भी भगवान् ने दस स्वप्न देखे, उनसे मोहनीय कर्म को जीतना आदि दस फल प्राप्त हुए। परन्तु इस टीका से भगवान् ने दस स्वप्न देखे वह स्वप्नदर्शन मोहनीय के उदय मे नही है। जेकर होवे तो जैसा हमने टीका का अन्वय अर्थ लिखा हे वेसा ही इस टीका से दश स्वप्न मोहनीय कर्म के उदय है, ऐसा टीका व अन्वय अर्थ लिख के दिखावो, तिस से सत्य निर्धार होवे और टीका से मोहनीय कर्म के उदय मे स्वप्नदर्शन सिद्ध होवेगा तो माना जायगा। अन्य बातो से प्रयोजन नही है।

तेरह पथियो की तरफ से पण्डित बालकृष्ण जी की राय-

सभा के मध्यस्थ महाशयो से हमारा कथन हे कि सूत्र भगवती जी का शतक १६ मा उद्देश ६ पाना १३२२ पक्ति (एषा च पिशाचाद्यर्थाना मोहनीयादिभि स्वप्नफलविषयभूते सह साधर्म्य स्वयमूह्यमिति) एषा दश स्वप्नाना कथ भूताना पिशाचाद्यर्थाना स्वप्नफलविषयभूते मोहनीयादिभि साधर्म्यमस्ति। ते पिशाचराजिते मोह पराजित करिष्याभि इत्यादि सम्वन्ध ।

पिशाच गत हे सो उदय हे, मोहनीय कर्म को जीतना हे सो क्षायिक भाव हे। अठे मोटा पण मे दोनो ने समान धर्म आश्रयी लिया हे। एषा कहिये यह दश स्वप्न पिशाच आदि अर्थ को प्राप्त होने वाले। इन्हो का स्वप्न फल का विषय भूत जे मोहनीय आदि कर्म तिन करके साधर्म्य नाम समान उत्पन्न धर्म हे। स्वयमेव साधन को प्राप्ति हो करके प्रतिबुद्ध हुआ नाम जागृत हुआ उस वक्त मे छद्मस्थपना यानि मोहनीयादि कर्म सावित रहा। क्षय पीछे हुआ ओर निद्रा प्रमाद मे स्वप्न हुआ उस वक्त छद्मस्थ

गुणस्थान ६ कर्म ८ सहित थे। उस वक्त क्षय नहीं हुआ। इस बजे से मोहनी सावित हे। इसका प्रमाण पहिला ठाणाग आचराग की टीका दीपिका टबा आदि प्रमाण पहले दे चुके हे। सभाजन के सामने मोहनीय कर्म का उदय सावित हे।

इन दोनो लेखो का निर्णय करने के लिए पण्डित देवीशङ्कर जी को मध्यस्थ चुना गया, उन्होने नीचे लिखे अनुसार फैसला दिया-

श्रीमान् सर्व मध्यस्थ महाशयो से श्रीमाली ज्ञाति पडित देवीशङ्कर का यह निवेदन हे कि आपने जेतारण ग्राम मे तेरापथी साधु फोजमल जी आदि तथा बाईस टोलो के साधु जवाहरलाल जी आदि का यहाँ समागम होने से विराजने से दोनो साधु जी के परस्पर स्वप्न विषय मे चर्चा ठहरी। उसमे साधु जी जवाहरलाल जी का प्रश्न यह हे कि भगवान् महावीर स्वामी को दस स्वप्न आए सो चित्तसमाधि मे हे। और धर्मध्यान मे हे। ओर फोजमल जी का उत्तर यह है कि मोहनीय कर्म का उदय में है। तो यहा मध्यस्थो की अपेक्षा हुई जद दोनो की रजाबदी से ४ मध्यस्थ मुकर्रर किए गए। वह मध्यस्थो के नाम- जेनधर्मी सेठ साकलचन्द जी मन्दिरमार्गी, सेठ मुल्तानमल जी मन्दिर मार्गी, विष्णुधर्मी कथाव्यास जी सरूपचन्द जी, पचोली उदयराजजी, और बाईस टोलो की तरफ से पडित विहारीलाल जी ओर तेरह पथियो की तरफ से पडित बालकृष्ण जी। ओर मध्यस्थो की तरफ से दोनो साधु जी की रजाबन्दी से मुझ को मुकर्रर किया। जिस पर दोनो साधु जी की तरफ से सूत्र समवायाग जी, ठाणाग जी की टीका, दीपिका टबा का प्रमाण परस्पर दिखलाया। बाद मे सूत्र छापा की भगवती जी की सस्कृत टीका की पक्ति। एषा च पक्ति -

'एषा च पिसाचाद्यर्थाना मोहनीयादिभि स्वप्नफलविषय
भूते सह साधर्म्यं स्वय समूह्यमिति।"

छापा की भगवती सूत्र के पत्र १३२२ के शतक १६ उद्देश ६ मे लिखी हुई पक्ति पर टूट होने की ठहरी। पोष सुदी १४ के रोज, बाद मे माघकृष्ण ३ के रोज मध्यस्थो ने मुझ को कहा कि आपने इतने दिन वेठ के ग्रन्थो का दोनो तरफ से प्रमाण सुना तो इससे आप की राय क्या हे सो लिखो। जब मेने ग्रन्थो को सुनने से या देखने से या तुच्छ मेरी बुद्धि के अनुसार राय लिखता हूँ तो यथा -

महावीर स्वामी ने छद्मस्थ अवस्था मे दश स्वप्न देखे थे। तो छद्म नाम कपट तत्र कोष -

कपटोऽस्त्री व्याजदाम्भोपधयश्छद्मकेतवे।
कुसृतिर्निकृर्ति शाठ्य प्रमादोऽनवधानता॥

इत्यमर ।

तर्हि शठत्वात् चित्तसमाधिर्न ज्ञायते। छद्मस्थपणे से चित्तसमाधि रो ज्ञान नही होवे हे किन्तु सदा ही काल मोहादिक बने रहते हे। ओर वीर प्रभु को दश स्वप्न आये थे उसी समय छठा गुणठाणा था तो छठा गुणस्थान का नाम प्रमादी हे प्रमाद नाम भी कपट का हीज हे। तो धर्मध्यान के साथ विल्कुल सम्वन्ध हे ई नही। हमेशे पाप के साथ सम्वन्ध सिद्ध हे तो इनसे भी मोहादिक सिद्ध हुए। ओर भगवती सूत्र का टीका का अर्थ यह हे कि-एष च पिशाचाद्यर्थाना मोहनीयादिभि स्वप्नफलविषयभूते सह साधर्म्यं स्वयमूह्यमिति।"

पिशाचादि अर्थो को प्राप्ति होने वाले जो दश स्वप्न उनो का स्वप्न फल का विषयभूत जो मोहनीय आदि कर्म हे उन्हे करके सदृशपणा हे, ऐसे पोते महावीर स्वामी तर्क करते हुए। इति भावार्थायानि तात्पर्य यह हे कि प्रथम स्वप्न पिशाच ने हनन करने से मोहने जीतूगा यह विचार वर्तमान काल का था, यानि छद्मस्थ अवस्था का था। वहाँ कार्य कारण का उपाधि करके सम्वन्ध हे। स्वप्न तो कारण हे ओर पिशाच ने हनन करना उपाधि हे, उनसे कार्य क्या वना कि मोह कू जीतूगा, और यह केवल ज्ञान उत्पन्न हुए बाद मोहकर्म के साथ पिशाचादिक अर्थो का अर्थ मोहादि कर्मो के साथ घटना करनी चाहिए। इस वास्ते मध्यस्थ महाशयो से निवेदन हे कि ऊपर लिखे हुए लेख से तो मोहनीय कर्म हीज सिद्ध होता हे। अलमति विस्तरेण। सवत् १९६० रा मिति माघ कृष्णा ४ सोम्यदिने लिखितम्॥

मध्यस्थो को पण्डित देवीशङ्कर जी का निर्णय पक्षपातपूर्ण मालूम पडा। इसलिए उन्होने किसी जेन शास्त्र विद्वान् से निर्णय कराने का निश्चय किया। इसके लिए दोनो पक्षो की राय लेकर जयपुर मे समेगी महाराज श्री शिवजीराम जी के पास पहिले दिन के प्रश्न भगवती सूत्र की टीका के पाठ तथा तीनो पडितो की निर्णय की नकल भेज दी तथा अन्तिम निर्णय के लिए लिख दिया।

महाराज शिवजीराम जी ने नीचे लिखा फेसला भेजा- सवत् १९६० का मिति माघ वदि ९ का पत्र १ आया। दस्तखत इतना जनो का-गाधी साकलचन्द जी, सेठ मुल्तानमल जी, पचोली उदयराज जी, व्यास रूपचन्द जी। जिसमे यह लिखा हे कि यहाँ बाईस समुदाय के साधु जी जवाहरलाल जी ओर तेरह पथियो के साधु जी फौजमल जी के आपस मे पोष वदि ५ से लेकर पोष सुदी १४ तक चर्चा हुई। जिण चर्चा मे माने चारो जणाने दोनु तरफ से मुकर्रर किया हा सो उस चर्चा का खुलासा पोष सुदी १४ के रोज टूट होने के वास्ते यह बात मुकर्रर हुई कि सूत्र भगवती जी का शतक १६ वाँ उद्देश छठा छापा की प्रति पाना १३२२ की टीका मे खुलासा होना ठहरा। उस पाठ का अर्थ दोनू तरफ के पडितो का नकल करके भेजा हे। और एक श्रीमाली ब्राह्मण यहाँ का पडित देवीशङ्कर ने उस टीका का अर्थ किया। उसकी भी नकल, जुमले नकल तीन ओर पहिले रोज से प्रश्न चला उसकी विगत आपकू भेजी हे, इस मजमून का पत्र हमारे पास आया। बाँच कर वाकब हुए। जिसमें था लोकाने लिखा कि दोनो तरफ के पडितो की तरफदारी होने से इसका भेद खुल सका नही। ये था लिखी। जिस पर इहा से हमारी बुद्धि के अनुसार ओर वर्तमान काल मे इस सप्रदायगत विद्वज्जन जो अर्थ करते हे उसके अनुसार उस पक्ति का कि जिस पर टूट होना ठहरा था इसका अर्थ इस मुजब हे। या पक्ति जिण सूत्रो पर हे सो सूत्र सूचन के वास्ते लिखते हे।

समणे भगव महावीरे छउमत्थकालियाए अतिमराइयसि इमे दस महासुमिणे पासित्ताण पडिबुद्धे। त जहा॥

यह पिशाच स्वप्न प्रतिपादक प्रथम सूत्र से लेकर दश सूत्र हे।

'एकं च णं'

मदिरे सिहासनस्थ आत्मा दर्शनरूप यह दश सूत्र स्वप्न प्रतिपादक सूत्र हे। इन स्वप्नो का फल प्रतिपादक भी सूत्र हे। सो यह हे-

ज ण समणे भगव महावीरे मह घोररूव दित्तधर तालपिसाय सुविणे पराजिय पासित्ताण पडिवुद्धे तेण समणे भगव महावीरे मोहणिज्ञे कम्म मूलओ घाइओ॥

यह प्रथम सूत्र स्वपफली प्रतिपादकसूत्र हे। इसी रीति से दश सूत्र तो स्वप्न प्रतिपादक हे ओर दश ही सूत्र इनो का फल प्रतिपादक एव बीस सूत्र हे।

अनुक्रम योजना ऐसे हैं-

१ पिशाच	मोहघात।
२ श्वेतच्छद पुस्कोकिल	शुक्लध्यान प्राप्ति।
३ चित्रच्छद कोकिल दर्शन	द्वादशाङ्गी प्ररूपण।
४ दामयुग	द्विविध धर्म प्ररूपण।
५ श्वेत गोवर्ग	चतुर्विध सघ स्थापना।
६ पद्म सरोवर	चतुर्विधदेव प्ररूपण।
७ भुजाओ से सागर तरण	ससार समुद्र तरण।
८ दिनकर दर्शन	कैवल्य समुत्पत्ति।
९ आन्तडियो से मानुषोत्तर वेष्टन	त्रैलोक्य कीर्ति।
१० मन्दर चूलिकास्थसिहासन पर बैठना	१२ प्रकार की पर्षदा मे धर्म का कथन।

श्रमणो भगवान् महावीर छद्मस्थकालिक्यामन्तिमरात्रौ छद्मस्थकालसम्बन्धिन्या रात्रेरन्तिमभागे इत्यर्थ । इमान् महास्वप्नावान् दृष्ट्वा प्रतिबुद्धस्तद्यथा- एक महान्त घोररूप दीप्तिधर तालपिशाच स्वप्ने पराजित दृष्ट्वा प्रतिबुद्ध । इत्यादित दशम स्वप्नप्रतिपादकानि सूत्राणि सन्ति। एतेषा फलप्रतिपादकानि सूत्राणि त्विमानि। यत् श्रमणो भगवान् महावीर एक महान्त घोररूप दीप्तिधर तालपिशाच स्वप्ने पराजित दृष्ट्वा प्रतिबुद्धस्तच्छ्रमणेन भगवता महावीरेण मोहनीयकर्म मूलतो घातितम्।इति स्वप्नफलप्रतिपादकानि सूत्राणि। एव विशतिसूत्राणि सूत्रकारेण कथितानि।

भावार्थ-भाषा मे-वीर प्रभु ने दश स्वप्न देखे सो सूत्र ऊपर लिखा ही हे। उनो के फल कहने वाले सूत्र नीचे लिखे हे। अब सर्व स्वप्न कहने वाले और उसके फल कहने वाले सूत्रो को यथायोग्य अन्वित करके वृत्ति के कायदे से व्याख्या कर्ता श्री अभयदेवाचार्य बोलते है- एषा च पिशाचाद्यर्थाना मोहनीयादिभि स्वप्नफल विषयभूते सह साधर्म्यं स्वयमूह्यम्।'' कीदृशै मोहनीयादिभि स्वप्नफलविषयभूते इत्यन्वय । च शब्दात् ऊह्यमिति क्रियापद प्रत्येक योजनीयम्। यथा पिशाचधर्मं मोहनीयधर्मेण सह व्याख्याकर्तृभि स्वयमात्मना तर्कणीय विचारणीयम्। एवमग्रेतनानि श्वेतपुरुषकोकिलपदान्यपि अनयैव क्रियया सयोजनीयानि इति। इनका भाषार्थ-

इन पिशाच आदि अर्थो का धर्म स्वप्नफल का विषयभूत मोहनीयादिको के धर्म के साथ साधर्म्यं समानधर्मता तुल्यधर्मता व्याख्यान करने वालो ने आप ही तर्कना ओर उन स्वप्नो ओर स्वप्नो के फल की साधर्म्यता बार बार विचारना ये ही तात्पर्य हे। उसकी धर्मयोजना इस प्रकार है-पिशाच मे अनेक धर्म रहते हे पिण यहाँ कोन धर्म लेके मोह के धर्म के साथ जोडना और पिशाच के लगने से वा उसके देखने से मनुष्यो की बुद्धि विपरीत हो जाती हे वेसे ही मोहनीय कर्म के प्रभाव से जीव स्वरूप के विपर्यय को प्राप्त होता हे। उस विपर्यय को वीरप्रभु ने अपनी बुद्धि मे नही होने दिया अर्थात् मोह का प्रभाव स्वात्म प्रदेशो मे किचित् भी नही होने दिया, निष्फल कर दिया। ये ही मोह का जीतना ह।

प्रथमस्वप्नप्रतिपादक सूत्र मे ' मूल ओ घाइओ' यह क्रिया धरी तो 'पराजित ' ओर 'मूलतो घातित ' यह दोनो एकार्थ प्रतिपादक हे। हिसी हिंसाया चुरादि, हन हिंसागत्यो अदादि। हन् गत्यर्थक अधिक हे। मूलत घातित इसका अर्थ झटपट ये कर लेते हे कि मारा पिण भावार्थ नही सोचते हे। भावार्थ ये हे कि मूल से घात किया हिंसा किया। हिंसा का अर्थ ये हे- प्राणवियोगानुकूलो व्यापारो हिसा। प्राण का वियोग हो जाय ऐसी तरह का व्यापार यानी क्रिया उसको हिंसा कहते हे। अर्थात् जुदा करने का नाम हिंसा है उसका घात-मारा वोलते हे। पराजित परा उपसर्ग पूर्वक 'जि जये' परा का अर्थ 'जी' के उपदेश मे भृशार्थक होता हे, इससे अत्यर्थ पणे मोह का असर अपने ऊपर नही होने दिया। अनादि काल से सर्व जीवो को मोहने अपने वश कर रखा हे। अनन्त चतुष्ट्य आदि आत्मा के निजगुणो का विपर्यय करके अपने सवभाव का असर कर दिया। इसीसे अनादि काल से ससार मे रुलाता हे। उस असर को भी वीरप्रभु ने बिलकुल मूल से उखाड के दूर किया। इसका आगामी फळ केवल ज्ञान का पाना हुआ। इसी तरे अगाडी के श्वेतपुरुषकोकिल स्वप्न के अर्थ को शुक्लध्यान के अर्थ के साथ साधर्म्यता विचारना। इसी तरे दशवे स्वप्न तक आपस में साधर्म्य विचारना। एषा च इत्यादि पक्ति का भावार्थ वृत्तिकार श्रीमान् अभयदेवाचार्य कहते हे सो विचार लेना। ओर सवुड महानुभावो को जो स्वप्न आते हे सो सत्यार्थ ही आते हे। वही छठे उद्देश मे हे। अव यहाँ महाशयो को विचारणीय हे कि इस पक्त्यर्थ में मोहोदय से स्वप्न आए यह बात तो सूत्र के प्रकृति प्रत्ययो से वा वृत्ति के अक्षरो के प्रकृति प्रत्ययो से निकल सकती हे नही ओर इस सूत्र वृत्ति के अक्षरो से जो कोई विद्वान् महाशय निकाले तो हम भी उपकार माने।

और नकल तीन पडितो की भेजी जिसमे पडित जी देवीशकर जी की लिखित तो विपरीत (अशुद्ध) हे। यह लिखित देखने से मालूम पडता हे कि जेनग्रन्थो से मूल मे अजाण हे॥

और पडित जी बालकृष्ण जी ने जो पक्ति का अर्थ किया हे सो अशुद्ध अन्वय लगाया हे सो दुरुस्त नही है। और पडित जी बिहारीलाल जी ने पक्ति का जो अर्थ लिखा हे सो ठीक हे, शास्त्र से मिलता हे।

इति तत्वम्

मिति फागण कृष्ण ८ भोम सवत् १९६०॥

नोट - मध्यस्थो का फेसला पृ ५५ पर दिया जा चुका हे।

सुजानगढ़—चर्चा

सुजानगढ़-चर्चा

सुजानगढ मे सोमवार तारीख १७-२-३० मिति फाल्गुन कृष्णा ५ सवत् १९८६ को जब पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज, श्रीइन्द्रचन्द्रजी सिघी के भवन (बैठक) मे व्याख्यान दे रहे थे ओर सैकडो की सख्या मे स्त्री-पुरुष तथा सनातनधर्मसभा के प्रेसीडेण्ट श्रीलक्ष्मणप्रसादजी आदि आदि अनेक प्रतिष्ठित सज्जन श्रवण कर रहे थे, उस समय तेरह पन्थ समप्रदाय के लगभग १५-२० श्रावक जिनमे से श्रीबालचन्दजी बेगाणी, श्रीहजारीमलजी रामपुरिया, श्रीझीटूलालजी बोरड, श्री आशकरणजी भूतोडिया, श्रीमूलचन्दजी सेठिया, श्रीरूपचन्द्रजी बोथरा, श्रीसच्यालालजी भूतोडिया के नाम उल्लेखनीय हे, जिन्होने आकर पूज्यश्री से प्रार्थना की कि तेरह पन्थ-सम्प्रदाय और बाईस सम्प्रदाय मे जिन बातो का मतभेद हे, हम उन बातो के विषय मे आप से प्रश्न करना चाहते हे। पूज्यश्री ने उक्त प्रार्थना के उत्तर मे फरमाया कि यह समय व्याख्यान का है। नियमानुसार व्याख्यानमे न तो बडे प्रश्नोत्तर होते ही हे, न थोडे समय मे प्रश्न सुन कर उनका समुचित उत्तर देना ही सम्भव है। यदि आप लोग इस विषय मे प्रश्न करना चाहते हे तो किसी दूसरे समयमे प्रश्नोत्तर करना ठीक होगा। प्रार्थी सज्जनोने पूज्यश्रीसे फिर कहा, कि हम लोग प्रश्न करने के लिए आपके समीप किस समय आवे ? पूज्यश्री ने फरमाया कि एक वजेसे तीन वजे तक का समय इसके लिये उपयुक्त होगा, अत आप लोग उस समयमे प्रश्न पूछ सकते हे। आये हुए तेरह पन्थ सम्प्रदाय के श्रावको ने पुन प्रश्न किया कि, क्या हम आजही आ सकते हे ? पूज्यश्रीने फरमाया-यद्यपि आज सोमवार मेरा मोन का दिन है, तथापि शास्त्र-विषयक प्रश्नो के उत्तर देने मे मुझे कोई आपत्ति नही।

इस वातचीत के पश्चात् व्याख्यान समाप्त हुआ। व्याख्यान में उपस्थित जनता को इस वातचीत से मालूम हो ही गया था कि, आज एक बजे तेरह पन्थ के श्रावको ओर पूज्यश्री मे प्रश्नोत्तर होगे, अत दर्शक जनता निश्चित समयके पहिले से ही पूज्यश्री के ठहरने के स्थानके समीप श्री सिघीजी के मन्दिर (देवसागर) के पूर्वकी ओर की छाया मे एकत्रित होने लगी। सन्तो सहित पूज्यश्री ठीक एक वजे ही जहा जनता एकत्रित थी वहा विराज गये ओर तेरहपन्थ-सम्प्रदायी श्रावको के निश्चित समय के पश्चात् भी न आने के कारण श्रीगणेशीलालजी महाराज ने ओजस्विनी वाणी द्वारा उपस्थित जनता को ज्ञानोपदेश करना प्रारम्भ कर दिया। डेढ वजे के लगभग श्रीझूमरमलजी डोसी, श्रीझूमरमलजी

चोरडिया, श्रीवालचन्दजी वेगाणी, श्रीहजारीमल जी रामपुरिया, श्रीमेघराजजी भूतोडिया, श्रीझीटूलालजी वोरड, श्रीटीकमचन्दजी डागा, श्रीआशकरणजी भूतोडिया, श्रीकुन्दनमलजी सेठिया, श्रीकन्हैयालालजी रामपुरिया, श्रीरूपचन्दजी वोथरा, श्रीमोहनलालजी डोसी, श्रीसच्यालालजी भूतोडिया, श्रीहुलासमलजी रामपुरिया, श्रीपन्नालालजी वोरड आदि सुजानगढ के सेकडो तेरह पन्थ-सम्प्रदाय के श्रावक तथा लाडनू वीदासर, सरदारशहर ओर जयपुर के अल्प सख्यक तेरहपन्थी श्रावक, श्री नेमीनाथजी सिद्ध (जाट, सरदारशहर निवासी) को लेकर आये। तेरहपन्थ–सम्प्रदायी श्रावकोकी ओर से नेमीनाथजी सिद्ध (जाट, सरदारशहर निवासी) को लेकर आये। तेरहपन्थ–सम्प्रदायी श्रावको की ओर से नेमीनाथजी ने पूज्यश्री से फिर प्रार्थना की कि आपके ओर हमारे अर्थात् तेरहपन्थ के वीच मे जिन वातो का मतभेद हे हम उन बातो के विषय मे आपसे कुछ प्रश्न करना चाहते हे। पूज्यश्री ने फरमाया कि आप लोग जो प्रश्न करना चाहते हे, वे शास्त्रार्थ की तरह या केवल शका निवारण के लिये ? नेमीनाथजी ने पूज्यश्री के प्रश्न के उत्तर मे कहा कि दोनो वातो का क्या अर्थ हे ? पूज्यश्री ने फरमाया- शास्त्रार्थ ता नियम पूर्वक किसी को मध्यस्थ नियत करके होता हे तथा उसमें एक विजयी व दूसरा पराजयी होता हे ओर शका निवारण के लिये जो प्रश्न पूछे जाते हे, उनमे केवल शकाओ का समाधान करना अभीष्ट होता हे। इनमे न तो किसी की विजय होती हे न पराजय ओर न किसी को मध्यस्थ नियत करने की आवश्यकता होती हे। नेमीनाथजी ने कहा हम केवल अपनी शकाओ के निवारणार्थ प्रश्न करना चाहते है। तब पूज्यश्री ने नेमीनाथजी से प्रश्न किया कि आप व्यक्तिगत प्रश्न पूछना चाहते हे या तेरहपन्थ समाज की ओर से ? इस प्रश्न का उत्तर मूलचन्दजी सेठिया ने दिया कि ये (नेमीनाथजी) यहा वेठे हुए तेरहपन्थ समाज की ओर से प्रश्न करते है। पूज्यश्री ने फिर पूछा कि जिनकी ओर से नेमीनाथ जी प्रश्नकर्त्ता नियत हुए है, उन उपस्थित तेरहपन्थ समाज के श्रावको की अनुमानत कितनी सख्या होगी ? इसके उत्तर मे मूलचन्दजी सेठिया ने कहा- उपस्थित तेरहपन्थ सम्प्रदायी श्रावको की मर्दुमशुमारी (मनुष्य-गणना) तो नही हे, हम बैठे हुए श्रावको की ओर से नेमीनाथजी प्रश्न करते हे। इत्यादि वाते होकर प्रश्नोत्तर के लिये श्री नाजिम साहव सुजानगढ, श्रीतहसीलदार साहव सुजानगढ, श्री सरिश्तेदार साहब निजामत सुजानगढ आदि प्रतिष्ठित सज्जनो द्वारा यह नियम वनाया गया कि प्रश्नकर्त्ता उपस्थित जनता आदि सबको अपना प्रश्न सुनाकर उन प्रश्नो को लिखवा दे ओर इसी प्रकार पूज्यश्री का जो उत्तर हो, वह सबको सुनाया जाकर प्रश्नकर्त्ता को नोट करा दिया जाय। तेरहपन्थ सम्प्रदाय तथा इस ओर से श्रीनाजिम सा को शान्ति रक्षा के लिये चुना गया।

नेमीनाथजी ने अपना प्रश्न उपस्थित जनता, जो लगभग डेढ दो हजार होगी, को सुनाकर श्रीगणेशीलालजी महाराज आदि को नोट कराया, वह निम्न हे -

"जो कोई धर्मावलम्बी जेनधर्म को असत्य मानता हुआ अपने धर्म का पूर्ण अनुरागी, वेष्णवधर्म को माननेवाला, अपने धर्म मे अनुरक्तता रखता हुआ जप, तप, ब्रह्मचर्य, अहिसा इत्यादिक धर्म का पालन करता हे उसका यह उपरोक्त कर्त्तव्य जन्म-मरण की वृद्धि का हेतु हे या घटाने का ? उस कर्त्तव्य से कर्म वधते हैं या कटते हे ?"

इस प्रश्न का जो उत्तर पूज्यश्री ने उपस्थित लोगो को सुनाकर प्रश्नकर्त्ता को नोट कराया वह नीचे लिखा जाता हे -

"जो पुरुष जेनधर्म को या कोई भी सत्यधर्म को असत्य मानता हे वह पुरुष शास्त्रोक्त अहिंसा-सत्य आदि का कदापि पालन नही करता हे, क्योकि 'वह सत्य जेनधर्म को असत्य मानता हे, ऐसा वादी कायम कराता हे।' अतएव उस पुरुष के जब शास्त्रोक्त अहिंसा सत्यआदि व्रत हे ही नही तो फिर उसके अहिंसा-सत्य आदि व्रत पालने का प्रश्न करना बन्ध्या-पुत्र की तरह असम्भव हे।

तेरहपन्थ-सम्प्रदाय की ओर से इस उत्तर के खण्डन और अपने प्रश्न के समर्थन के लिये पुन नेमीनाथजी ने निम्न प्रश्न सुनाकर नोट कराया -

' हमारे पूछने का अभिप्राय यह हे कि, जेनेतर जनता सत्य, तप, ब्रह्मचर्य, अहिंसा का पानल करती हे उससे उनका जन्म-मरण घटता हे या बढता हे ? इसका उत्तर आपने कुछ भी न दिया मेरे प्रश्न को असम्भव बताया। यह तो जब उचित था कि जेनधर्म के सिवाय अन्य धर्मवाले कोई भी सत्य न बोलते हो। किन्तु जेनधर्म मे इसका पुष्ट प्रमाण है कि अन्य धर्म वाले भी सत्य को ग्रहण करते हे, जिसका प्रमाण पश्नव्याकरण मे देखिये। यह हे-

अनेग पाखण्डि परिग्गहियं

जिसका यह अर्थ हे कि सत्यको अनेक पाखण्डियो ने ग्रहण किया हे। इससे सत्य बोलना जेनधर्मानुसार भी अन्य धर्मवालो के लिये पमाणित हे। तब मेरा प्रश्न सत्यादि के विषय मे असम्भव केसे हुआ ? ओर आपने जो 'जैनधर्म के अतिरिक्त कोई भी सत्यधर्म को असत्य मानता है' ऐसा उत्तर मे लिखा है तो वह सत्यधर्म कौनसा है!

इसका जो उत्तर पूज्यश्री ने सुना कर नोट कराया, वह इस प्रकार है-

"प्रश्नकर्त्ता अपने लेखी प्रश्न को भी टालाटूली करके शका मे लिखता है कि 'हमारा अभिप्राय और था' इत्यादि लिख कर अपना मूल प्रश्न उलटाना चाहता है, परन्तु वह लेखवद्ध होने से अब उलट नही सकता। जेनेतर के लिये प्रश्न नही लिखवाया किन्तु जैनधर्म को असत्य मानने वाले दुराग्रही के लिये पूछा हे। ओर जो सत्य जेनधर्म को असत्य मानता है, वह अहिंसा सत्य आदि व्रतो का कदापि पालन नही करता हे। अतएव प्रथम पूछा हुआ प्रश्न गलत हे। वह अपनी गलती स्वीकार किये विना प्रश्नकर्त्ता का आगे बढकर बोलना व मूल प्रश्न को उलटाना कदापि उचित नही कहा जा सकता। ओर जो प्रश्नव्याकरण सूत्र का मूल पाठ का अर्थ प्रश्नकर्त्ता ने, वह भी प्रश्नकर्त्ता के उस पाठ की टीका का आज्ञानपना सूचित करता हे। जब प्रश्न ही गलत हे तब उसके विषय मे प्रमाणादिक देने की बाते करना वन्ध्या पुत्रका विवाह करने की तरह व्यर्थ हे।

---

१ 'जैन' शव्द 'जि' धातुसे बना है और 'नक्' प्रत्यय है। जिन शव्दका अर्थ विजय करना या जीतना है। अभिप्राय यह कि, राग, द्वेष और काम–क्रोध इत्यादि क्लिष्ट वृत्तियो का दमन करना 'जिन' शव्दका अर्थ होता है। इसलिये जैन उस धर्मका नाम है, जो क्लिष्ट वृत्तिया दमन करना 'जिन' शव्द का अर्थ होता है। इसलिये जैन उस धर्मका नाम है, जो क्लिष्ट वृत्तियो को जीत कर मोक्ष प्राप्त करने का अभिलाषी हो। वौद्ध और वैष्णव के लिये भी कोष मे 'जिन' शव्द का प्रयोग किया गया है। अतएव जो पुरुष जैन धर्म को असत्य मानता है, वह क्लिष्ट वृत्तियो को दमन करना' यह भी असत्य मानने वाला ठहरता है। ऐसी अवस्था मे उसके अहिंसादि व्रतो का पालन करना असम्भव बताना ठीक ही है। –प्रकाश।

और मैने उत्तर में कोई भी सत्यधर्म को असत्य नही लिखा हे, उस पर भी 'सत्यधर्म को असत्य आपने अपने उत्तर मे कहा "यह प्रश्नकर्त्ता का कहना अति ही गलत हे।"

इन प्रश्नोत्तर मे लगभग ३॥वज चुके थे, अत दूसरे दिन के लिये यही समय नियत करके सभा विसर्जित हुई।

दूसरे दिन मगलवार तारीख १८/२/३० मिति फाल्गुन कृष्ण ६ को फिर कल की ही तरह कार्य्यारम्भ हुआ।उपस्थिति कल सी ही थी।हा, कल की अपेक्षा आज प्रतिष्ठित सभासदो मे श्रीशेरसिहजी जज साहब और प्रतिष्ठित तेरहपन्थ-सम्प्रदायी श्रावको मे श्रीवृद्धिचन्दजी गोठी सरदारशहर निवासी विशेष थे। नेमीनाथने अपने कलवाले प्रश्न के समर्थन मे जो कुछ लिखकर लाये थे उसे पढकर सुनाया ओर जो कुछ सब को सुनाया गया था, उसे श्रीवृद्धिचन्दजी गोठी ने नोट कराया, वह नीचे दिया जाता हे।

"(क) आपने लिखा हे कि प्रश्नकर्त्ता अपने प्रश्नको टालाटूली करके शका मे लिखता हे, जिसके प्रमाण स्वरूप आपने यह वाक्य लिखे हे कि प्रश्नकर्त्ता मूल प्रश्न मे जेन धर्म को असत्य मानने वाला लिखता हे और अब जैनेतर लिखता हे।" मुझे आश्चर्य हे कि जिसको साधारण मनुष्य भी समझ सकता हे कि जेनधर्म को असत्य माननेवाला निज धर्म का अनुरागी, ओर 'जेनेतर' ये शब्द एक ही अर्थ के वाचक हे। आपकी इन शब्दोमे भेद दिखाने की चेष्टा व्यर्थ हे"

"(ख) आपने लिखा है कि, 'प्रश्नकर्त्ता लिखता हे कि हमारा अभिप्राय ओर था परन्तु मेने 'मेरा अभिप्राय ओर था' ऐसा कही भी नही लिखा हे।मेने मेरे द्वितीय प्रश्न मे 'मेरा अभिप्राय यह हे' ऐसा लिखा हे इसलिये आप मेरा लिखा हुआ 'यह हे' के बदले 'ओर था' यह शब्द कहा से ले आये ? क्योकि मेने 'मेरा अभिप्राय और था' ऐसा कही नही लिखा हे।मेने तो मेरे प्रश्न को स्पष्ट करने के लिये 'जेनेतर' शब्द दिया हे जो कि जेनधर्म को असत्य मानने वाला पर पूर्ण रूप से घटता हे। आपने जो मेरे प्रश्न के लिखित वाक्यों के विपरीत लेखनी चलाने की चेष्टा की हे, उन वाक्यो को आप कृपया फिर दुबारा देखिये।"

"(ग) मेरे मूल प्रश्नमे कोई भी सत्यधर्म को असत्य मानता हे, ऐसा शब्द नही आया तो फिर आपने उत्तर न १ मे 'कोई भी सत्यधर्म को असत्य मानता हे' ऐसा क्यो लिखा ? ओर उत्तर न १ मे उपरोक्त बात लिखकर उत्तर न २ मे फिर आप लिखते हे कि 'मेने अपने उत्तर मे कोई भी सत्य धर्मको असत्य नही लिखा हे' यह परस्पर विरोधी वचन क्यो ?"

"(घ) उत्तर न २ मे जो जेनधर्म को असत्य मानता हे, उसको दुराग्रही की पदवी आपने दी हे। मेने मेरे प्रश्न मे जेनधर्म को असत्य माननेवालेके लिये 'दुराग्रही' शब्द नही लिखा हे। फिर आप मेरे पर असत्य-कलक क्यो लगते हे ? आप चाहे उसको दुराग्रही कहे तो आपकी इच्छा ओर उसका दायित्व आपके ऊपर हे।'

"(ड) ओर आपने जो उत्तर न २ मे लिखा कि 'जो जेन धर्मको असत्य मानता हे, वह अहिसा सत्य आदि का कदापि पालन नहीं करता हे' यह आपका लिखना शशक-श्रृगवत् हे, क्योंकि शिवराज ऋषि (जेनधर्म अगीकार करने के पहिले) जेनधर्मको असत्य मानता हुआ भी अपने नियमादि मे दृढ था। प्रमाण भग श ११ उ ९।"

''(च) आपने उत्तर न २ मे प्रश्न व्याकरण सूत्रके मूल पाठ की टीका से प्रश्नकर्त्ता की अज्ञानता सूचित की हे, वह व्यर्थ हे क्योकि वह टीका मेरे ही प्रमाण के अनुकूल हे।''

''अतएव आप जो मेरे प्रश्नको गलत बताते है, वह प्रश्न ठीक है, लेकिन आपकी समझ मे ही गलती हे। इसलिये मेरे प्रश्न का उत्तर मिलना चाहिये।''

उक्त वातो को सुनाने व नोट कराने के पश्चात् समय बहुत कम रह गया था। पूज्यश्रीने इन बातो के उत्तर मे जवानी ही ५-७ मिनिट मे कुछ फरमाया, परन्तु समयाभाव से पूरा उत्तर सुनाया जाकर नोट करा देना असम्भव था ओर गोठीजी तथा नेमीनाथजी को, जो उत्तर आज सुनाया जाय उसे कल नोट करना स्वीकार करना न था, अत कल के लिये भी यही समय नियत होकर तीन बजे के लगभग सभा विसर्जित हुई।

तीसरे दिन बुधवार ता १९-२-३० मिति फाल्गुन कृष्ण ७ को फिर उसी प्रकार कार्यारम्भ हुआ। जनता आज भी उसी सख्या मे थी। श्रीनाजिम साहब कार्यवश किसी अन्य ग्राम को चले गये थे ओर उनके स्थान पर श्रीडिस्ट्रिक्ट सुप्रेण्डेण्ट साहब पुलिस सिपाहियो सहित पधारे थे जिन्होने शान्तिरक्षा का कार्य अपने हाथ मे लिया।

नेमीनाथजी ने अपने प्रश्न के समर्थन मे कल जो बाते सुनाई थी और गोठीजी ने जिन्हे नोट कराया था, उन सम्पूर्ण बातो का क्रमवार उत्तर तथा भविष्य मे उन मुख्य-मुख्य बातो जिनमे तेरहपन्थ ओर बाईस-सम्प्रदाय में मतभेद है- के विषय मे प्रश्नोत्तर होने आदि के लिये जो लेख पूज्यश्री की ओर से तेरहपन्थ-सम्प्रदायी और दर्शक जनता को सुना कर नोट कराया गया, वह नीचे दिया जाता हे-

''(क) आपने जो 'जेन धर्म को असत्य मानने वाला निज धर्म का अनुरागी' और 'जेनेतर' इन शव्दो को एक ही अर्थ का वाचक लिखा है, वह बिलकुल असगत हे। जिन शब्दो का प्रवृत्ति-निमित्त एक होता हे, वह ही शब्द एकार्थ वाचक होते है, जेसे घट और कलश। क्योकि इन दोनो का प्रवृत्ति-निमित्त एक ही घटत्व जाति हे। परन्तु 'जैन धर्म को असत्य मानने वाला निज धर्म का अनुरागी है' ओर 'जेनेतर' इनका प्रवृत्ति-निमित्त एक नही है। 'जैनेतर' शब्दका प्रवृत्ति-निमित्त जैनोपाधि व्यतिरिक्तापाधि धारित्व हे। यानी 'जेन' इस उपाधि से भिन्न किसी दूसरी उपाधि का धारण करना है। और जेन धर्म को असत्य मानता हुआ निज धर्म का अनुरागी' इसका प्रवृत्ति-निमित्त केवल जैनोपाधि व्यतिरिक्तोपाधि धारित्व' नही है। किन्तु जो जेन शास्र मे विधान की हुई बातो को एकान्त पाप तथा निषेध की हुई बातो मे धर्म मानता हो ओर इस प्रकार के अपने धर्म मे अनुराग रखता हो यह प्रवृत्ति-निमित्त हे चाहे वह जेनोपाधि धारी ही क्यो न हो जेसे, साधु के गले मे लगी हुई फासी को काटना, किसी निर्दोष बच्चे के पेट मे छुरी भोकते हुए को रोकना, क्रोधित होकर कुए या गड्ढे मे गिरते हुए को बचाना, गायो से भरे हुए वाडे मे अग्नि लगने पर दरवाजा खोलकर उनकी रक्षा करना, दीन दु खी पर अनुकम्पा लाकर उनका दुख मिटाना इत्यादि जेन शास्त्र मे किसी और पुण्य रूप मे विधानकी हुई वात को एकान्त-पाप वताकर जो निषेध करता हे, तथा साधुओ के स्थान मे रात के समय ओरतो का आना ओर उन्हे व्याख्यान सुनाना, गृहस्थो के घर से वारी बाधकर साधुओ का भोजन लाना ओर विहार मे गृहस्थियो को साथ रख कर उनके पास से भोजन लेना आदि जैन-शास्त्र मे निषेध की हुई, वात का जो विधान करता हुआ तदनुसार आचरण करता हे, वह जेन-धर्म को असत्य मानने वाला ओर निज धर्म का

अनुरागी हे। पर वह जेनोपाधिधारी होने से लोक मे जेनेतर नही कहलाता। अत उक्त दोनो शब्द एकार्थवाची नही हे ओर मेरा भेद दिखाना उचित ही हे।

"(ख) आपने परसो के दूसरे लेख मे 'हमारे पूछने का अभिप्राय यह हे' इत्यादि लिखकर जो आशय प्रकट किया हे, वह आपके प्रश्न न १ के वाक्यो से नही निकलता। क्योकि यह वताया जा चुका हे कि 'जेन धर्म को असत्य-मानने वाला' ओर 'जैनेतर' यह दोनो शव्द पर्यायवाची नही हे। अत जेन धर्म को 'असत्य मानने वाला निज धर्म का अनुरागी' इस शव्द का 'जेनेतर जनता' यह अभिप्राय बतलाना और ही हुआ। इसलिये जो मेने आपका अभिप्राय ओर वतलाया हे, वह अनुचित नही हे। अलबत्ता आपने 'ओर' शव्द का प्रयोग नही किया लेकिन यह ओर शव्द आपके लिखे हुए का अनुकरण नही, बल्कि हमारी तरफ से हे ओर ठीक है। क्योकि आपका अभिप्राय 'जेनेतर' लिख कर प्रश्न से जो आशय प्रकट नही होता है, वह वतलाना है।"

"(ग) आपने 'जेन धर्म को असत्य मानने वाला' यह विशेषण ब्रह्मचर्य, अहिंसा, सत्य आदि के पालन करने वाले के लिये लगाया हे। अत उसका उत्तर देते हुए मेने लिखा हे कि 'जो पुरुप जेन धर्म को या कोई भी सत्य धर्म को असत्य मानता हे, वह पुरुप शास्त्रोक्त अहिंसा सत्य आदि का कदापि पालन नही करता हे।' इस उत्तर मे मेने जेन धर्म या कोई भी सत्य धर्म को असत्य वताने वाला लिखा है, इसमे आपके बताये हुए जेन धर्म को असत्य मानने वाला भी सगृहीत हो गया हे। फिर यह आपका आक्षेप करना व्यर्थ है कि उत्तर न १ मे कोई भी सत्य धर्म को असत्य मानता हे, क्यो लिखा ? यह आपके प्रश्न-वाक्य का अनुसरण नही, कितु हमारा उत्तर वाक्य हे। विशेष रूप से पूछे गये प्रश्नो का सामान्य रूप से उत्तर दिया जाना भी शास्त्र प्रसिद्ध हे।"

"आपके लिखे हुए शब्द से भिन्न शब्द का लिखना मेरे लिये अनुचित समझते हो तो आपने मेरे उत्तर-वाक्य 'जो पुरुष जेन धर्म को या किसी भी सत्य धर्म को असत्य मानता हे' को उदधृत करते हुए 'जेनधर्म के अतिरिक्त कोई भी सत्य धर्म को असत्य मानता हे, इसमे 'अतिरिक्त' शव्द ओर कहा से लगा दिया ?"

"(२) 'सत्य धर्म को असत्य मेने नही लिखा' इसका मतलव यह हे कि इस लिखने से सत्य धर्म को असत्य कहने का मेरा अभिप्राय नही हे, किन्तु यह अभिप्राय हे कि कोई भी सत्य धर्म को असत्य माने उसमे अहिंसादि व्रत की प्राप्ति नही होती। अब आपका प्रश्न यह हे कि 'वह सत्य धर्म कोनसा हे' तो इस प्रश्न का उत्तर यह हे कि, जिस धर्म मे ज्ञान, दर्शन, चारित्र ओर तप यथार्थ रीति से माने जाते हो, तथा जो धर्म साधु के गले मे लगी हुई फासी को काटने, किसी निर्दोष बच्चे के पेट मे छुरी भोकते हुए को रोकने, क्रोधित होकर कुए या गड्ढे मे गिरते हुए को वचाने, जलते हुए वाडे से रक्षा के लिये गायो को निकालने आदि मे पाप न मानकर इनका प्रतिपादक हो ओर रात के समय साधुओ के समीप स्त्रियो के आने-जाने, साधुओ का गृहस्थियो के यहा से वारी वाध कर भोजन लाने, आदि मे धर्म न मानकर उनका निषेधक हो, वे सव सत्य धर्म हे, चाहे उनकी उपाधि कुछ भी हो।'

"(घ) जेन धर्म को असत्य मानने वाला वह हे जो जेन धर्म मे विधान किये हुए मरते प्राणी की रक्षा ओर दीन-दु खियो पर अनुकम्पा लाकर उनके दु खो को मिटाना इत्यादि पवित्र कार्य को एकान्त पाप कह कर अपवित्र वतलाता हो। वह चाहे आपके मत मे सत्याग्रही क्यो न हो, पर मे उसे दुराग्रही मानता हूँ ओर ससार भी उसे दुराग्रही ही कहेगा।"

"(ड) शिवराज ऋषि, जेन धर्म स्वीकार करने के पहले अहिंसा सत्य आदि व्रतो का पालन करने वाला था, वह भगवती शतक ११ उद्देश ९ मे नही लिखा हे। न जेन धर्म को असत्य मानने वाला ही लिखा हे। फिर उनके नियमादि का नाम लेकर जेन धर्म को झूठा मानता हुआ अहिंसा-सत्य आदि व्रतो का पालन करने का सम्भव बताना ही शशक-श्रृगवत् है।"

"(च) प्रश्न व्याकरण सूत्र की टीका को जो आपने अपने अनुकूल बताया, यह आपका भ्रम हे। वास्तव मे वह टीका, आपने जो अर्थ बताया है उसके सर्वथा प्रतिकूल है, क्योंकि वहा पाखण्डी शब्द का अर्थ व्रतधारी किया हे जेसे-

अनेकपाखण्डिपरिगृहीत नानाविधव्रतिभिरङ्गीकृतम्।*

तथा दशवैकालिक सूत्र की निर्युक्ति मे लिखा है-

पव्वइए अणगारे पासण्डे चरग तावसे भिक्खू।[१]

परिवाइए य समणे निग्गन्थे सञ्जए मुत्ते॥[२]

इसी निर्युक्ति की टीका में पाखण्डी शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए लिखा है-

पाखण्ड-व्रत तदस्यास्तीति पाखण्डी।[३]

इन सबो का तात्पर्य यह है कि पाखण्ड नाम व्रत का है और जो व्रतो को धारण करता है, वह पाखण्ड या पाखण्डी कहलाता है। ऐसे अनेक व्रतधारियो से स्वीकार किया हुआ होने से सत्य व्रत को 'अनेक पाखण्ड परिगृहीत' कहा है। निर्युक्तिकार ने व्रतधारी-साधुओ के पर्याय मे पाखण्ड शब्द की गणना की हे। वह निर्युक्ति ऊपर लिख दी गई है और उसकी टीका मे पाखण्ड शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए टीकाकार ने 'पाखण्ड' व्रत का नाम बताया है। परन्तु 'पाखण्ड' शब्द का और भी अर्थ है। जेसे कि 'पाखण्डी' दाम्भिक यानी ढोगी का भी नाम है। परन्तु वह पाखण्डी सत्य व्रत धारी नही होता, अत यहा वह अर्थ नही घटता । इसलिये 'पाखण्डी' शब्द का अर्थ 'व्रतधारी' टीकाकार ने किया है, यहा पर वही उपयुक्त हे।"

" अव आपने अपने पहिले नम्बर के प्रश्न को ठीक बतलाते हुए उसका उत्तर मेरे से मागा हे तो, यदि आपका पूछने का भाव यह हो कि, अहिंसा सत्य आदि व्रतो का धारण करने वाला जो जेन से भिन्न उपाधिधारी पुरुष हो तो वह अपने उक्त व्रत से ससार को घटाता है या बढाता है तथा अपने कर्मों का क्षय करता हे या वृद्धि करता है, तो इसका उत्तर यह है कि वह चाहे जैनोपाधि धारी हो चाहे किसी दूसरी उपाधि से विभूषित हो, पर उसके अहिंसा-सत्यादि व्रतो के धारण करने से जन्म-मरण घटता ही हे वढता नही हे । उसके कर्म क्षीण होते है, पर बढते नही हे। इस विषय मे उत्तराध्यन सूत्र अ २८ की गाथा प्रमाण हे। जेसे कि-

---

१ अनेक व्रतधारियो ने सत्य व्रत को स्वीकार किया हे।

२ प्रवर्जित, अणगार, पाखण्ड, चरक, तापस, भिक्षु, निग्रन्थ, सयत, मुक्त, परिव्राजित ओर श्रमण ये पर्यायवाची शब्द हे।

३ पाखण्ड नाम व्रत का है। यह व्रत जिसके अन्दर मोजूद हे, उसे पाखण्डी कहते ह।

नाण च दसण चेव चरित्त च तवो तहा।
एय मग्गमणुप्पत्ता जीवा गच्छन्ति सुग्गईं॥

अर्थात् ज्ञान, दर्शन ओर अहिंसा सत्यादि-सत्यादि व्रतरूप चरित्र मोक्ष के मार्ग है। इनका आश्रय लिये हुए जीव मोक्ष प्राप्त करते हे।

इस गाथा मे किसी विशेष उपाधिधारी की चर्चा नही करते हुए हर एक का मोक्षगामी होना कहा हे। मोक्ष पाने मे, उपाधि विशेष कोई कारण नही हे। जेसे कि जेन ग्रन्थो मे लिखा हे-

सेयवरो य आसवरो य वुद्धो अ अहव अन्नो वा।
समभावभाविअप्पा लहेइ मुक्ख न सन्देहो॥

अर्थात् श्वेताम्वर हो या दिगम्वर, वोद्ध हो या शेव, वेष्णवादि अन्य किसी उपाधि का धारी हो, पर समभाव से जिसकी आत्मा भावित हे, वह मोक्ष को प्राप्त करता हे, इसमे सन्देह नही।

इसी आश्य के जेन सूत्रो मे अङ्गोपागो मे भी पाठ पाये जाते हे। जेसे कि–

स्वलिङ्गि सिद्धा, अन्य लिङ्गि सिद्धा ओर गृहलिङ्गि सिद्धा।

अर्थात् अपने लिङ्ग मे अन्य लिङ्ग मे तथा गृहस्थ के लिङ्ग मे भी सिद्ध होते हे।

तथा अश्रुत्वा केवली के अधिकार मे भगवती सूत्र के अन्दर अन्य लिङ्ग मे भी केवल ज्ञान प्राप्त होना लिखा हे।

किसी विद्वान ने कहा हे कि-

भववीजाकुर जनना रागाद्या क्षयमुपागता यस्य।
ब्रह्मा वा विष्णुर्वा हरो जिनो वा नमस्तस्मे॥[1]

इसी तरह यह भी श्लोक हे कि-

य शेवा समुपासते शिव इति।[2]

---

१ भव–वीज के अकुर को उत्पन्न करने वाले रागादि दोष जिनके क्षीण हो गये हे, वह चाहे ब्रह्मा हो, या विष्णु हों, या हर हो, या जिन हो, उनको नमस्कार हे।

२ य शेवा समुपासते शिव इति ब्रह्मोति वेदान्तिनो।

वोद्धा वुदध इति प्रमाणपटव कर्तेति नेयायिका ॥

अर्हन्नित्यथ जेनशासनरता कर्मेति मीमासका ।

सोय वो विद्धातु वाछितफल त्रेलोक्य नाथो हरि ॥

अर्थात्–शेव लोग 'शिव' कहकर जिसकी उपासना करते हे, वेदान्ती लोग जिसे 'ब्रह्मा' कहते है, वोद्ध लोग जिसे 'वुद्ध' कहकर ध्याते ह, प्रमाण देने मे निपुण नेयायिक लोग 'कर्त्ता' वतलाते ह, जेन–शासन मे रत (जेन) लोग जिसे 'अर्हन्' मानते ह, मीमासक जिसे 'कर्म' वतलाते हे, वह तीनो लोक का नाथ हरि आप लोगो के मनोरथ को पूर्ण करे।

यह मेरा उत्तर जो लोग जेन से भिन्न उपाधिधारी होकर भी अहिंसादि व्रतो के पालन करने वाले है, उनके सम्बन्ध मे है। पर आपने तो जेन धर्म को झूठा मानने वाले के लिए पूछा है, इस पर तो मेरा कहना है कि, जेन धर्म को असत्य मानने वाला अहिसादि धर्मों को भी असत्य मानने वाला है। फिर वह अहिंसादि का पालन भी करता हो, यह वात असम्भव है।''

''हमारा अन्तिम वक्तव्य यह है कि प्रश्न के आरम्भ मे जवानी तोर पर तेरहपन्थ-सम्प्रदाय की ओर से माना गया था कि, जिन-जिन वातो मे आपके साथ हमारा मतभेद है, उन वातो का हम प्रश्नोत्तर द्वारा खुलासा करना चाहते है। इसके सम्वन्ध मे मेने यह कहा था कि तेरहपन्थ के पूज्य कालूरामजी मेरे साथ शास्त्रार्थ करते तो अति ही उत्तम होता, परन्तु मेरे खुले चेलेज देने पर भी शास्त्रार्थ नही हुआ। खैर, अब नेमीनाथजी द्वारा आप प्रश्न पूछना चाहते है तो भी शान्ति ओर नियमानुसार प्रश्नोत्तर करने मे मुझे कुछ भी आपत्ति नही है। जो नेमीनाथजी ने पूछा ओर दूसरे रोज नेमीनाथजी की ओर से सरदारशहर निवासी तेरहपन्थ-सम्प्रदाय के मुखिया श्रावक श्रीवृद्धिचन्दजी गोठी ने नेमीनाथजी के प्रत्युत्तर मे जो लिखवाया, उसका उत्तर मेरी ओर से आज आम सभा मे सुनाकर लिखा दिया जाता है। अब आगे व्यर्थवाद न वढाकर वाईस-सम्प्रदाय ओर तेरहपन्थ-सम्प्रदाय मे जिन मुख्य-मुख्य वातो का फर्क है, उन्ही के विषय मे विचार होना चाहिए। वे मुख्य बाते ये है-

(१) पच महाव्रतधारी साधु के गले मे किसी ने फासी लगा दी हो उसको कोई दयावान गृहस्थ खोल देगे तो उसमें वाईस-सम्प्रदाय वाले धर्म बतलाते है ओर तेरहपन्थ वाले एकान्त-पाप।

(२) किसी अवोध वच्चे के पेट मे छुरी भोकते हुए दुष्टो को रोकने और बच्चे को बचाने की अनुकम्पा करने मे बाईस-सम्प्रदाय वाले धर्म ओर तेरहपन्थ-सम्प्रदाय वाले पाप कहते है।

(३) गायो के वाडे मे किसी दुष्ट के द्वारा आग लगा देने पर उन गायो पर दया करके कोई यदि उस वाडे के दरवाजे को खोले अथवा आग लगाते हुए को रोक दे तो, उसमे बाईस-सम्प्रदाय वाले धर्म ओर तेरहपन्थ वाले एकात-पाप वतलाते है।

(४) ११ प्रतिमाधारी साधु तुल्य श्रावक को कोई निर्दोष आहारादि देवे तो उसमे बाईस-सम्प्रदाय वाले धर्म और तेरहपन्थ वाले एकान्त-पाप बतलाते है।

(५) अगली रात और पिछली रात मे साधुओ के स्थान मे स्त्रियो के आने-जाने और उन्हे रात मे मकान के अन्दर व्याख्यानादि सुनाने का वाईस-सम्प्रदाय वाले निषेध करते है और तेरहपथ वाले विधान।

(६) वारी वाधकर गृहस्थो के यहा से भोजन लाना ओर रास्ते मे अपने साथ सेवार्थ गृहस्थो को रखना ओर उनसे भोजन लेना, इनका बाईस-सम्प्रदाय वाले निषेध ओर तेरहपन्थ वाले विधान करते है।

(७) साध्वियो के साथ विना कारण आहार पानी आदि के लेने-देने का बाईस-सम्प्रदाय वाले निषेध ओर तेरहपन्थ वाले विधान करते है।

इन बातो का खुलासा होना चाहिये।[1]

-प्रकाशक।

इस उत्तरादि के सुनाते समय तेरहपन्थ-सम्प्रदायी लोगों ने हो-हल्ला मचाना प्रारम्भ ओर शान्ति-भङ्ग की चेष्टा अवश्य की, लेकिन श्री डिस्ट्रिक्ट सुप्रेण्टेण्डेण्ट साहव पुलिस के प्रशसनीय प्रवन्ध से वे लोग इसमे असफल रहे।

सुनाये जाने के पश्चात् जव कि टीकमचन्दजी डागा व नेमीनाथजी, इन दोनो को सुनाया हुआ उत्तर नोट कराया जा रहा था- तेरहपन्थ-सम्प्रदायवालो ने सुप्रेण्टेण्डेण्ट साहव पुलिस से इस उत्तर के खडन और अपने पक्ष के लिये अगले रोज फिर सभा होने के विचार प्रकट किए। उनके विचारोको सुनकर पूज्यश्री ने सुप्रेण्टेण्डेण्ट साहव से फरमाया कि, मैने एक ही प्रश्न का उत्तर तीन रोज तक दिया, परन्तु प्रश्नकर्त्ता हठवश यही कहते हे कि हमारे प्रश्न का उत्तर नही मिला। इतना ही नही कहते बल्कि इसके साथ असभ्यता के शव्दो का भी प्रयोग कर जाते हे। जेसे उनका यह कहना कि, 'आपने अपने उत्तर मे हमे गालिये लिखी हे। आदि, अत यदि प्रश्नकर्त्ता मेरे उत्तर से असतुष्ट हे ओर मेरे उत्तर को अपने प्रश्न का उत्तर नही समझते हे तो, कल दोनो ओर से किसी को मध्यस्थ नियत कर दिया जाय जो मेरे उत्तर और उनके प्रश्न को गलत सही का निर्णय दे सके। इसके सिवाय यदि तेरहपन्थ सम्प्रदाय वाले शास्त्रार्थ करना चाहते हो तो, नियमानुसार किसी को मध्यस्थ नियत करके शास्त्रार्थ हो जाये। तेरहपथ के पूज्य कालूरामजी या जो मुझसे शास्त्रार्थ करने के योग्य हो, उससे मै शास्त्रार्थ करने को तेयार हूँ। आप लोगो का, जनता का और मै अपना स्वय का इस प्रकार अकारण समय नष्ट नही करना चाहता।'

पूज्यश्री के फरमाने को सुनकर सुप्रेण्टेण्डेण्ट साहब ने तेरहपन्थ-सम्प्रदाय वालो से प्रश्न किया कि आप लोग मध्यस्थ नियत करके जो प्रश्नोत्तर हुए हे उनका निर्णय कराना चाहते हे या शास्त्रार्थ! लेकिन तेरहपन्थ-सम्प्रदाय की ओर से श्रीवृद्धिचन्दजी गोठी, श्रीमूलचन्दजी सेठिया, श्रीझीटूलालजी बोरड, श्रीबालचदजी बेगाणी, श्रीआशकरणजी भूतेडिया, आदि ने इन दोनो वातो मे से किसी भी एक को स्वीकार नही किया। अत ३। वजे के लगभग सभा विसर्जित हुई।

---

१ नोट – तेरहपन्थ और वाईस–सम्प्रदाय मे मतभेद के जो मुख्य–मुख्य विषय ऊपर वताये गये है, वे यथार्थ है। परन्तु जनता को भ्रम में रखने के लिये तेरहपन्थी लोग प्राय मतभेद की बातों की असलियत को तो छिपा रखते है और इन बातो के लिए यद्वा–तद्वा कहकर टाला–टूली कर देते है। इसलिए मतभेद की बातो के विषय मे हमारी सूचना है कि, यदि तेरहपन्थ–सम्प्रदायी लोग साधु के गले की फासी को गृहस्थ के खोलने आदि बातों में पाप न मानते हो तो फिर वे 'इन कामो मे हम धर्म मानते है, ऐसा स्पष्ट स्वीकार करके प्रसिद्ध कर दे, जिसमे तेरहपन्थ और बाईस–सम्प्रदाय मे मतभेद न रहकर एकता रहे। अन्यथा यह बाते स्वयसिद्ध हे कि तेरहपथ–सम्प्रदाय वाले, जो बाते ऊपर बताई गई है उन्हे उसी रूप मे मानते है। इसके सिवाय तेरहपथ सम्प्रदाय के प्रकाशित ग्रथों से भी इन बातो का इसी रूप मे माना जाना सिद्ध है। यदि तेरहपथ–सम्प्रदाय वाले यह कहते हो कि हमारे ये सिद्धान्त शास्त्रानुमोदित है तो उनके पूज्य कालूरामजी वाईस–सम्प्रदाय के पूज्य जवाहरलालजी से शास्त्रार्थ करे जिसमे सर्व साधारण को सन्तोष हो जाय।

इन प्रश्नोत्तरो को सर्वसाधारण की सूचना क लिये हम प्रकाशित किये देते है [illegible]-सम्प्रदाय के लोग कोई भ्रमोत्पादक वात न फैला सके।

अन्त मे हम श्री रघुवरदयालसिहजी नाजिम साहव, श्री[illegible] साहब [illegible] सुप्रेण्टेण्डेण्ट साहव पुलिस, श्रीहजारीसिह जी तहसीलदार साहव और [illegible] सनातनधर्म सभा को उनके निष्पक्ष शाति रक्षा और परिश्रम के लिए धन्यवाद देते है। [illegible] अम्बिकादत्तजी ओझा और पडित शकरप्रसादजी दीक्षित ने भी प्रशंसनीय परिश्रम किया है [illegible] भी धन्यवाद के पात्र है।

[पृ. १७४ का परिशिष्ट]

चूरू-चर्चा

सम्वत् १९८४ की साल मे पूज्यश्री १००८ श्री जवाहरलालजी म सा कोठारी मूलचन्दजी की आग्रह भरी विनती को स्वीकार कर बीकानेर, सरदारशहर विहार करते हुए चूरू नगर मे पधारे थे और वहा एक अग्रवाल सज्जन के मकान मे विराजे थे। सयोगवश उस समय तेरापंथियो का महामहोत्सव भी चूरू नगर मे ही था। इस उत्सव मे सम्मिलित होने के लिये स्थान-स्थान से तेरापंथी साधु और श्रावक चूरू मे एकत्रित हुए थे। पूज्यश्री जवाहरलालजी म सा का व्याख्यान जहा होता था, वहा जेन तथा जेनेतर जनता की अपार भीड होती थी। पूज्यश्री के युक्तियुक्त हृदयाकर्षक व्याख्यान का पभाव जनता पर जादू की तरह पडता था। एक दिन की बात हे कि पूज्यश्री ने अपने व्याख्यान मे प्रसगवश यह फरमाया कि साधु बिना कारण साध्वी का लाया हुआ आहार नही ले सकता। यदि लेता हे तो चातुर्मासिक प्रायश्चित्त का भागी बनता हे। वह साधु तीन बार तक प्रायश्चित्त लेकर गच्छ मे रह सकता हे, पर चोथी बार निष्कारण साध्वी से आहार पानी लेने पर यदि प्रायश्चित्त स्वीकार करे तो भी वह गच्छ से बाहर कर देने योग्य होता हे। इस विषय की सिद्धि के लिये पूज्यश्री ने अनेक शास्त्रीय प्रमाण बतलाये, जिसका जनता पर गहरा प्रभाव पडा। परन्तु यह बात तेरापन्थी श्रावको को अच्छी नही लगी। क्योंकि उनके साधु तो रोज ही बिना कारण साध्वियो से आहार-पानी लेते-देते हे। अत व्याख्यान श्रवण के पश्चात् चूरू -निवासी तेरापन्थी श्रावक गोरीलालजी वेद अपने पूज्य कालूरामजी के पास गये ओर इस विषय की चर्चा करते हुए अपने पूज्यजी से पूछा कि-क्या साधु बिना कारण साध्वी का लाया हुआ आहार-पानी नही ले सकता ?

पूज्य कालूरामजी ने उत्तर देते हुए कहा-यदि साध्वी का लाया हुआ आहार पानी नही कल्पता तो फिर हम क्यो लेते ?

वेदजी ने कहा- क्या इस विषय मे कोई शास्त्रीय प्रमाण भी हे ?

पूज्यजी- हा, बहुत प्रमाण हे।

वेदजी-अगर बाईस सम्प्रदाय के साधु इस विषय मे प्रमाण जानने के लिये अपके पास आवे तो क्या आप उन्हे बता सकेगे ?

भी शास्त्र विरुद्ध साध्वियो का लाया हुआ आहार पानी आदि भोगना साधु के लिये उचित नही हे। क्योकि वर्तमान काल के साधु-साध्वियो ने वीतरागावस्था को प्राप्त नही कर लिया हे। साधु-साध्वी के पारस्परिक अधिक ससर्ग रहने से मानसिक विकृति उत्पन्न होना स्वाभाविक हे।

वास्तविक बात यह हे कि ब्रह्मचर्य साधु धर्म का प्राण हे। वह सब तपो मे उत्तम तप हे। 'तवेसु वा उत्तम बभचेर' कह कर शास्त्रकारो ने ब्रह्मचर्य की महिमा प्रकट की हे। अतएव ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिये शास्त्रो मे अनेक मर्यादाए साधुओ के लिए बताई गई हे। दशवेकालिक सूत्र मे यहा तक कहा है कि 'चित्तभिति न निज्झाए' अर्थात् जिस दीवाल पर स्त्रियो के चित्र बने हो, उस दीवाल को भी साधु न देखे। ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए ही नो वाडो का कथन शास्त्र मे किया गया हे। ऐसी दशा मे साध्वी, साधु के लिए आहार-पानी लावे, साधु को परोस कर जिमावे, उनका विछोना विछावे, इत्यादि घनिष्ट सम्पर्क साधुओ के साथ रखे, यह कहाँ तक उचित कहा जा सकता हे ? गृहस्थ पति-पत्नी को यह व्यवहार भले ही शोभा देता हो, पर साधु साध्वी को यह शोभा नही देता। इस सीधे-सादे सत्य को जो नही समझते या समझकर भी जो अपनी सुख-सुविधा के स्वार्थ से प्रेरित होकर मानना नही चाहते, वे किस प्रकार अपने ब्रह्मचर्य का पालन कर सकते हे, यह भगवान् ही जाने या स्वय वही जाने।

इस प्रकार प मुनिश्री गणेशीलालजी म ने निम्न १२ प्रकार के सभोग बतलाये-

दुवालसविहे सभोगे पण्णत्ता, तजहा-
उवहिसु अ भत्तपाणे, अजलीपग्गहे त्ति य।
दायणे य निकाए य, अब्भुट्ठाणे त्ति आवरे॥
किइकम्मस्स य करणे, वेयावच्च करणे इ य।
समोसरण सन्निसिज्ज्ञा य कहाए य पवधणे॥

अर्थात्- (१) उपधि (२) शास्त्र की वाचना (३) आहार पानी (४) अजली-करण (५) वस्त्र तथा शिष्य आदि देना (६) स्वाध्याय, शय्या आदि के लिये निमन्त्रण देना (७) अभ्युत्थान, उठकर खडा होना (८) कृतिकर्म–विधिपूर्वक वन्दन करना (९) वेयावच्च-आहारादि देकर सहायता करना (१०) समवसरण–व्याख्यान आदि मे साधर्मी साधुओ का मिलना (११) निषद्या-एक आसन पर बेठना (१२) कथा प्रबध–पाच प्रकार की कथा करना।

इन वारह मे से साधु, साध्वी के साथ छह व्यवहार कर सकते हे। वह यह हे- १ श्रुत, २ अजलि-ग्रहण, ३ अभ्युत्थान, ४ कृतिकर्म, ५ समवसरण, ६ कथा प्रबध। कथा प्रबध मे से साधुवाद, जल्प तथा वितडा यह तीन कथाए साध्वी के साथ नही कर सकते हे- सिर्फ दो प्रकीर्ण कथा ओर निश्चय कथा ही कर सकते हे। इन छ व्यवहारो के अतिरिक्त शेष छह व्यवहार साध्वी के साथ साधु को करना नही कल्पता हे। अर्थात् १ उपधि (वस्त्र पात्र का धुलाना, रगाना, लेन देन) २ आहार- पानी लेना-देना, ३ सेवा के लिए शिष्यादिक देना ४ निमन्त्रण, ५ वेयावच्च ओर ६ निषद्या (एक आसन पर वेठना) यह छ प्रकार के सम्भोग करना शास्त्र मे निषिद्ध हे। उपरोक्त छ प्रकार के सम्भोगो का निषेध करते हुए समवायाग सूत्र की टीका मे लिखा हे- 'विसभोगिकेन पार्श्वस्थादिना वा सयत्या वा सार्द्धमुपधि शुद्धमशुद्ध वा निष्कारण गृहणन् प्रेरित प्रतिपन्नप्रायश्चित्तोऽपि वेलात्रयस्योपरि न सभोग्य । एवमुपधे परिकर्म परिभोग वा कुर्वन् सम्भोग्यो विसम्भोग्यश्चेति अर्थात्- अन्य गच्छ के साधु के साथ, शिथिलाचारी

साधु के साथ और साध्वी के साथ शुद्ध वस्त्र-पात्र आदि का ...
साधु को तीन बार तक तो प्रायश्चित्त देकर गच्छ मे लिया जा सकता है ...
करे और प्रायश्चित्त लेना चाहे तो भी उसे गच्छ से बाहर कर देना चाहिए ...
वस्त्र को धुलाना-सिलाना, पात्र को रगाना, ओघे पूजनी बटाना आदि ...
चीजो को साध्वी से लेकर पुन अपने काम मे लेने वाले साधु को भी ...
तो प्रायश्चित्त देकर गच्छ मे रखा जा सकता है, पर चौथी बार प्रायश्चित्त ...

'भत्तपाणे' त्ति-उपधिद्वारवद्वसेय, नवरमिह भोजनदान च ...

अर्थात्-भात-पानी का सभोग भी उपधि की तरह समझना चाहिए ...
हुआ विना कारण आहारादि ग्रहण करे या विना कारण साध्वी को देवे ...
को तीन बार प्रायश्चित्त देकर गच्छ मे रखा जा सकता है, परन्तु चौथी बार ...
रखा जा सकता है।

वैयावृत्यम्-'आहारोपधिदानादिना प्रश्रवणादिमात्रकार्पणादिना ...
वोपष्टम्भकरण तस्मिश्च विषये सम्भोगासम्भोगो भवत इति।'

अर्थात्- आहार और उपधि देना, लघुनीत और वडी नीत का परठना ...
कर शान्त करना, आसन विछाना, प्रतिलेखन करना, उठाना-बैठाना, गुना ...
यह सब व्यावच्च सभोग का अर्थ है। ये व्यावच्च सवधी वाते जो साधु ...
उसे तीन बार प्रायश्चित्त देकर गच्छ मे रखा जा सकता है, परन्तु चौथी बार ...
रखा जा सकता।

इसी तरह छहो सभोगो का समवायाग सूत्र की टीका मे निषेध किया गया है ...
भय से हम यहाँ सब सभोगों का विवेचन नही कर रहे है। वचे हुए सभोगो का ...
की तरह ही समझ लेना चाहिए। जव कि साध्वी से व्यावच्च कराने का व्यवहार सूत्र ...
है तो फिर साध्वियो से आहार-पानी मँगा कर खाना कहाँ तक उचित कहा जा सकता है?

इस पर तेरापथी पूज्य कालूरामजी ने कहा कि व्यावच्च करने का अर्थ केवल हाथ-पैर ...
ही है, यह वात शास्त्र-सम्मत नही है। व्यावच्च शब्द के इस सकीर्ण अर्थ की कल्पना सिर्फ इसलिए की
गई है कि तेरापथी साधुओ को आहार-पानी लाने का कष्ट न करना पडे और साधु साध्वियो का लाया
आहार-पानी करने मे सुविधा हो। अपनी सुविधा और मोज के लिए यह अर्थ करते समय न तो शास्त्रीय
अर्थ पर ध्यान दिया गया है और न अपने मान्य ग्रन्थ भ्रम-विध्वसन पर ही नजर फेरी है।

व्यवहारसूत्र मे वेयावच्च का विवेचन करते हुए कहा है-

दसविहे वेयावच्चे पण्णत्ते, तजहा-आयरियवेयावच्चे इत्यादि। इस पाठ के भाष्य मे कहा
है-त्रयोदशभि पदे वेयावृत्य कर्त्तव्यम्, तान्येव त्रयोदशपदान्याह-

भत्ते पाणे सयणासणे (म) पडिलेहपाममच्छिमद्धाणे।
राया तेणे दडगाहणे य गेलण्णमत्ते य। १२५।

टीका- 'भक्तेन भक्तानयनेन वेयावृत्य कर्त्तव्यम्। पानेन-पानीयानयनेन'

अर्थात्- भोजन ओर पानी लाकर देना व्यावच्च हे।

इस पाठ मे आहार लाने को स्पष्ट रूप से वेयावृत्त्य कहा हे। इसके अतिरिक्त आपके ग्रन्थ भ्रमविध्वसन मे भी लिखा हे-

वेयावच्च-भातादि धर्मना जे आधारकारी वस्तु तेणे करी ने आधार दे तो (भ्र, वि पृष्ठ २५८)

'व्यावच करे- आहारादिक आपवे करीने'। (भ्र वि पृ २५९)

इस उद्धरणो से यह बात स्पष्ट हुई कि वेयावच्च का अर्थ सिर्फ हाथ-पेर दवाना नही हे वल्कि आहार-पानी ला देना भी हे। ओर वैयावच्च नामक व्यवहार विना कारण साधु-साध्वी का आपस मे करना निषिद्ध हे, इसलिए साध्वी का लाया हुआ आहार ग्रहण करना साधु के लिए निषिद्ध हे। अत जो आहार लेता हे वह प्रायश्चित्त का भागी होता हे।

थोडी देर तक चुप्पी साधकर तेरापथी पूज्य कालूरामजी ने कहा कि-'देखिये, व्यवहार सूत्र मे स्पष्ट रूप से साध्वी द्वारा लाये हुए आहार-पानी को ग्रहण करने का विधान किया गया हे।

'कप्पतिनिग्गथाण वा निग्गथीण वा निग्गथी अण्णगणातो आगत खयायार सवलायार सकिलिट्ठायार चरित्त तस्स ठाणस्स आलोयावेत्ता पडिक्कमावेत्ता पायच्छित्त पडिवज्जित्ता उवट्ठावित्तए वा सभुजित्तए वा सवसित्तए वा तीसेइ तिरियादिसि वा उद्दिसित्तए वा धारित्तए वा'।

—व्यवहार सूत्र, उ ६।

अर्थात्- अन्य गच्छ से आई क्षत, शबल, भिन्न ओर सक्लिष्ट आचार वाली अकेली साध्वी को आलोचना कर लेने पर प्रतिक्रमण कर लेने पर ओर प्रायश्चित्त अगीकार कर लेने पर उसको महाव्रतो मे स्थापन करना, आहार आदि का सभोग करना, एक स्थान मे रखना ओर यथायोग्य पदवी देना साधु को कल्पता हे।

देखिए, जेसे यहा अकेली साध्वी आई ओर आलोचना आदि लेकर शुद्ध हो गई। अब इसके साथ आहार-पानी आदि लेना-देना कल्पता हे। इसी तरह दस ओर सो के साथ भी देना-लेना कल्पता हे'।

उपरोक्त व्यवहार सूत्र का प्रमाण बताकर जब पूज्य कालूरामजी म चुप हो गये तव प मुनिश्री गणेशीलालजी म ने कहा कि साध्वी के साथ आहार-पानी आदि लेने-देने का जो व्यवहार सूत्र के ६ उद्देश का प्रमाण बताया हे, वह बिलकुल असगत हे। क्योकि इस सूत्र मे तो अपवाद रूप से कथन किया गया हे। जिसका आशय यह हे कि सयम रक्षा के लिए किसी हालत मे भी अकेली साध्वी को रहना नही कल्पता हे। कम-से-कम ३ साध्विया ही एक साथ रह सकती हे। सयोगवश दो साध्विया यदि काल कर जाएँ या दो साध्विया कही मार्ग भूल जाएँ तो ऐसी हालत मे वह अकेली रही हुई साध्वी अगर भटकती हुई निर्ग्रन्थ मुनियो के पास आजाय, जहा अन्य साध्विया भी न हो तो उस साध्वी को वे निर्ग्रन्थ मुनि उसकी सयम रक्षा के लिए आलोचना आदि कराकर आहार-पानी आदि दे ले सकते हे ओर जहा तक दूसरी साध्वियो का योग न मिले वहा तक अपने स्थान मे भी रख सकते हे। इस प्रकार उपरोक्त सूत्र का विधान जहा अपवाद रूप मे किया गया हे वहा यदि कोई इस पाठ मे आये हुए 'सभुजित्तए' ओर 'सवसित्तए' आदि पदो को प्रमाण मे उपस्थित करके साध्वियो के साथ आहार-पानी का लेना-

देना और खाना-पीना सिद्ध करना चाहे तो उसका यह प्रयास समझदारो के सामने हास्यास्पद ही ठहरेगा। क्योकि 'सभुञ्जित्तए' और 'सवसित्तए' यह दोनो पद एक साथ आये हे। अगर सभुञ्जित्तए पद के आधार पर आहार-पानी के लेन-देन का विना कारण ही विधान मान लिया जाय तो 'सवसित्तए पद के आधार पर उपाश्रय मे विना कारण एक साथ निवास करना भी विधेय ठहर जायगा। अगर सकट-काल के बिना, साधारण अवस्था मे भी साधु-साध्वी का एक जगह वसना शास्त्रानुकूल हे तो फिर खेद के साथ कहना पडेगा कि ऐसे साधु-साध्वी गृहस्थ पुरुपा और स्त्रिया से किस वात मे श्रेष्ठ हे ?

अगर 'सवसित्तए' पद सिर्फ सकट काल के लिए है, सदा के लिए नही तो फिर 'सभुञ्जित्तए' पद भी सकट काल के लिए ही मानना उचित है।

तात्पर्य यह हे कि जेसे प्रवलतर कारण उपस्थित होने पर साधु, साध्वियो के साथ एक जगह निवास कर सकता हे उसी प्रकार पवलतर कारण के होने पर ही साधु साध्वी को आहार-पानी दे दिला सकता है। एक साथ निवास करने के विपय मे ठाणाग सूत्र का निम्न पाठ पमाण हे-

पचहिं ठाणेहिं निग्गथा निग्गथीओ य एगत्तओ ठाण वा सिज्ज वा निसीहिय वा चेतेमाणे णातिकम्मति, तजहा-अत्थेगइआ निग्गथा निग्गथीओ य एग मह अगामिंत छिन्नावाय दीहमद्धमडविमणुपविट्ठा। तत्थ गओ ठाण वा सेज्ज वा निसीहिय वा चेएमाणे णातिक्रमति (१) अत्थेगइआ निग्गथा २ गामसि वा नयरसि वा जाव रायहाणि वा वास उवगता एगतिया यत्थ उवस्सय लभति एगतिता णो लभति, तत्थेगतितो ठाण वा जाव नातिक्रम्मति। (२) अत्थेगतिआ निग्गथा य २ नागकुमारावाससि वा वास उवागता, तत्थेगयओ जाव नातिक्रमति। (३) आमोसगा दीसति ते इच्छति निग्गथीओ चीवरपडिताते पडिगाहित्तते, तत्थेगयओ ठाण वा जावणातिक्रमति (४) जुवाणा दीसति ते इच्छति निग्गथीओ मेहुणपडिताते पडिगाहित्तते, तत्थेगयओ ठाण वा जाव णातिक्रमति। (५) इच्चेहि पचहिं कारणेहिं जाव नातिक्कमति।'

भावार्थ- साधु तथा साध्वी निम्न-लिखित पाच कारणो से एक स्थान मे कायोत्सर्ग, उपवेशत (वैठना) शयन तथा स्वाध्याय करते हुए साधु की आचार सवधी आज्ञा का उल्लङ्घन नही करते।

(१) पहला कारण-दुर्भिक्ष आदि कारण से एक देश को छोडकर दूसरे देश मे जाते हुए रास्ते मे ऐसा जगल आ गया हो, जिसके इर्द-गिर्द कोई गाव न हो, जो वहुत वडा हो, जिसमे कोई निवास न करता हो, निर्जन हो, जिसमे अपने साथियो के तथा गो आदि के आने-जाने का पता न चलता हो, मार्ग मालूम न पडता हो, जिसे पार करने मे बहुत समय लगता हो, ऐसे भयानक निर्जन-वन मे साधु-साध्वी एक जगह निवास करे तो उन्हे आज्ञा के उल्लङ्घन का दोष नही लगता।

(२) दूसरा कारण-जहा राजा का राज्याभिषेक होता हो ऐसी राजधानी मे मनुष्यो की बहुतायत से साधु-साध्वी मे से एक को स्थान मिल गया हो और दूसरे को स्थान न मिला हो तो ऐसी अवस्था मे एक साथ रह सकते हे।

(३) तीसरा कारण-किसी गृहस्थ का घर रहने को न मिलने की हालत मे साध्वियो को सुनसान मदिर मे रहना पडे या जहा वहुत भीडभडक्का हो या जिसकी देख-रेख करने वाला कोई न हो ऐसे स्थान मे साध्वियो को रहना पडे तो उस स्थान पर साध्वियो की रक्षा के निमित्त साधु भी एक किनारे रह सकते हे।

(५) पाँचवाँ कारण-अगर कोई दुष्ट पुरुप साध्वियो का शील खडन करना चाहता हो तो उनके शील की रक्षा के लिए साधु, साध्वी के साथ रह सकते है।

यह एक अपवाद सूत्र हे। सामान्य नियम तो यह हे कि साधु ओर साध्वी एक साथ निवास न करे ओर न एकान्त मे भापण करे, किन्तु यहा पूर्वोक्त पाच कारणो मे से किसी कारण के उपस्थित होने पर साधु-साध्वियो के साथ रहने का अपवाद रूप मे विधान किया गया हे।

आप लोगो को समझना चाहिए कि व्यवहार सूत्र के छठे उद्देशक के २३वे सूत्र मे आये हुए 'सभञ्जिए' पद से अगर आप साधु-साध्वी आपस मे विना कारण ही आहार का लेन-देन शास्त्रानुकूल मानते है तो फिर 'सवसित्तए' पद से विना कारण ही साधु-साध्वी का एक ही उपाश्रय मे रहना शास्त्रानुकूल क्यो नहीं मानते ? सच तो यह हे कि शिथिलाचार वढ जाने के कारण ओर साधुओ मे आराम तलबी आजाने के कारण ही इस प्रकार की शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा होने लगी हे। ऐसा न होता तो साध्वियो के अधिक सम्पर्क से बचने के लिए दी गई शास्त्राज्ञा के विरुद्ध आप क्यो साध्वियो से आहार मगवा-मगवा कर खाते ? अगर आप अपने ही हाथो भिक्षा लावे ओर साध्वियो से न मगवावे तथा न परोसवावे तो आपकी क्या हानि हे ? ऐसा करने से आपके सयम की अशुद्धता की सभावना हट सकती हे ओर इस प्रकार लाभ ही हो सकता हे। हानि कुछ भी नही हे मगर पता नही, किस रहस्यमय कारण से आप अपना आग्रह त्यागना नही चाहते। कुछ भी हो, अगर दूरदर्शिता से काम न लिया गया तो एक दिन ऐसा भी आ सकता है जब आपके साधु ओर साध्वी विना कारण आहार-पानी का लेन-देन करने के समान बिना कारण एक ही मकान मे रहने लगे। ऐसा करने वाले शिथिलाचारी साधु कहेगे 'सभुञ्जित्तए' पद के आधार पर जेसे आहार पानी बिना कारण लिया जा सकता हे, उसी प्रकार 'सभुञ्जित्तए' पद के आधार पर एक मकान मे निवास भी किया जा सकता हे। जिनका शिथिलाचार भोजन के लेन-देन तक सीमित हे, वे उन्हे क्या उत्तर देगे ?

जो कुछ भी हो, दुराग्रह के कारण अगर कोई इस अच्छे आशय से दिये गये परामर्श को स्वीकार नही करता तो उसकी मर्जी। निष्पक्ष विचारक सच्चाई को समझ ले तो हमारा प्रयास असफल नही होगा।

हमने ऊपर ठाणाग सूत्र का उद्धरण देकर पाच कारण बताए हे, उनके अनुसार साधु ओर साध्वी दोनो ही एक स्थान मे रह सकते हे ओर कारणवश आई हुई अकेली साध्वी को भी अपने मकान मे रख सकते हे। जेसे कि किसी अनार्य पुरुष द्वारा किये जाने वाले अत्याचार से वचाने के लिये किसी सती स्त्री को हाथ पकड कर कोई गृहस्थ अपने घर ले आवे ओर उसके शील की रक्षा करे तो वह पुरुष लोक की दृष्टि मे अपराधी नही माना जाता हे, किन्तु उस सती स्त्री का शीलरक्षक होने के कारण धार्मिक माना जाता हे। इस अपवाद दृष्टान्त का आश्रय लेकर यदि कोई निष्कारण अवस्था मे पराई स्त्री का हाथ पकड कर अपने घर मे ले आवे तो वह अपराधी, अन्यायी ओर राजदड का भागी माना जाता हे, परन्तु धार्मिक नही। इसी तरह किसी अन्य गच्छ से निकल कर आई हुई अकेली साध्वी को यदि शील रक्षा करने के लिए शुद्ध करके अपने पास रखे ओर आहार आदि देवे तो वह शास्त्राज्ञा का उल्लङ्घन करने वाला नही, अपितु आज्ञापालक माना जायगा। परन्तु निष्कारण अवस्था मे यदि कोई इस अपवाद सूत्र का आश्रय लेकर साध्वी का लाया हुआ आहार स्वय ग्रहण करे ओर उसे देवे तो वह अवश्य ही शास्त्रविरुद्ध आचरण करने वाला होगा।

इस तरह प मुनिश्री गणेशीलालजी म के सबल प्रमाणो को जोश भरी वाणी मे सुनकर पूज्य कालूरामजी गुमसुम हो गए। उनका मुँह नीचा हो गया। मगर उस व्याख्यान-सभा मे उनके वहुत से अन्ध भक्त श्रोता मोजूद थे। अपने पूज्यश्री की यह दशा देखकर उन्होने मदद करदी। श्रोताओ ने अपने अमोघ अस्त्र का प्रयोग किया। वह अमोघ अस्त्र था-हो हल्ला! कोलाहल! चिल्लाहट!। भारी कोलाहल मे प मुनिश्री की वाणी विलीन-सी हो गई। पाचो मुनिराज अपने स्थान पर शान्ति पूर्वक लोट आये।

चूरू मे वर्तमान आचार्य प मुनिश्री गणेशीलालजी म की तेरापथी पूज्य कालूरामजी के साथ जो चर्चा हुई थी उसका सक्षिप्त वृत्तान्त यही हे जो ऊपर दिया जा चुका हे। परन्तु यह आश्चर्य के साथ कहना पडता है कि तेरापथ के वर्तमान आचार्य तुलसीरामजी ने अपने 'कालू जस रसायन' नामक ग्रन्थ मे चूरू की चर्चा का वर्णन करते हुए स्वरचित ढालो मे लिखा है कि चूरू की चर्चा मे पूज्य कालूरामजी ने निष्कारण साध्वियो से आहार लेने का विधान करने वाले शास्त्र का प्रमाण बतलाकर बाईस सम्प्रदाय के साधुओ को परास्त किया था। इस प्रकार मिथ्या बाते लिखकर अपनी पोपलीला को जाहिर न होने देने के लिये जो प्रयत्न किया गया है वह समझदारो की दृष्टि मे निद्य ही ठहरेगा। यदि वस्तुत शास्त्र मे ऐसा प्रमाण मिलता हो और तेरापथी साधु उसे बतलाने का कष्ट करे तो बाईस सम्प्रदाय के साधु अब भी मानने के लिए तेयार बेठे है। जब कि शास्त्र मे स्थान-स्थान पर इस विषय का निषेध पाया जाता है तब फिर इसका विधान हो ही केसे सकता हे-फिर भी तेरहपथी साधु अपने सयम मर्यादा के घातक मन्तव्य का समर्थन करने के लिए अक्सर ठाणाग सूत्र का पाठ पेश करते रहते है। अब यहाँ उस पाठ पर भी जरा विचार कर लेना आवश्यक है। वह पाठ इस प्रकार हे-

चउहिं ठाणेहिं णिग्गथे णिग्गथि आलवमाणे वा सलवमाणे वा णातिक्कमति तजहा-पथ पुच्छमाणे वा, पथ देसमाणेवा, असण वा पाण वा खाइम वा साइम वा दलेमाणे वा, दलाबेमाणे वा।

-ठा ड २, सूत्र २९।

टीका-चउहीत्यादि स्फुट, किन्तु आलपन् ईषत् प्रथमतया वा जल्पन् सलपन् मिथो भाषणेन नातिक्रमतिन लघयति निर्ग्रन्थाचार- 'एगो एगित्थिए सद्धि नेव चिट्ठे न सलवे विशेषत साधव्या इत्येव रूप, मार्गप्रश्नादीना पुष्टालम्बनत्वादिति, तत्र मार्गंपृच्छन् प्रश्नीयसाधर्मिक गृहस्थपुरुषादीनामभावे-हे आर्ये! कोऽस्माकमितो गच्छता मार्ग ? इत्यादिना क्रमेण मार्गं वा तस्या देशयन्-धर्मशीले! अय मार्गस्ते इत्यादिना क्रमेण, अशनादि वा ददत्-धर्मशीले! गृहाणेदमशनादीत्येव, तथा अशनादि दापयन्-आर्ये! दापयाम्येत्तत्तुभ्यम् आगच्छेह गृहादावित्यादिविधिनेति।

अर्थ- निर्ग्रन्थ का यह आचार हे कि वह अकेला अकेली स्त्री के साथ और खास कर साध्वी रे साथ न ठहरे ओर न वातचीत करे। किन्तु सूत्रोक्त चार कारणो मे से कोई कारण उपस्थित होने पर साधु यदि अकेली साध्वी के साथ थोडा या सभाषण करे तो वह अपने पूर्वोक्त आचार का उल्लघन नही करता क्योंकि, वार्त्तालाप करने के यह चार प्रवल कारण हे। अकेली साध्वी के साथ वार्त्तालाप करने के चार प्रवल कारण इस प्रकार हे-

(१) पहला कारण- जव पूछने योग्य कोई साधर्मी या गृहस्थ पुरुप न हो तो साध्वी से मार्ग पूछना। जेसे- 'आर्ये! हमारे इधर जाने का मार्ग कोन-सा हे ?'

(२) दूसरा कारण- साध्वी अगर मार्ग भूल गई हो तो उसे मार्ग वतलाना। जेसे- 'हे धर्मशीले! तुम्हारे जाने का मार्ग यह हे।'

(३) तीसरा कारण- अकेली साध्वी को भिक्षा न मिली हो तो यह कह कर भिक्षा देना- 'साध्वी! मैं अपनी भिक्षा मे से अशन आदि देता हूँ।'

(४) चोथा कारण- किसी गृहस्थ के घर से भिक्षा दिलाने के लिए कहना। जेसे- 'आर्यिके! आओ मे तुम्हे भिक्षा दिलवाता हूँ।''

अकेली साध्वी के साथ इन चार कारणो के होने पर ही साधु वार्त्तालाप कर सकता हे, अन्यथा नही। इस कथन से यह स्पष्ट है कि यह एक अपवाद रूप विधान हे जिसका सकट के समय ही प्रयोग किया जा सकता हे। अगर यह विधान विवशता ओर लाचारी की हालत का न होता तो फिर शास्त्रकार चार कारणो का उल्लेख ही क्यो करते ? चार कारणो का उल्लेख करने से ही यह सिद्ध हो जाता हे कि इन कारणो के अभाव मे साधु अकेली साध्वी से न वातचीत कर सकता हे ओर न उसके साथ खडा हो सकता हे।

यह पाठ इतना स्पष्ट है कि इस पर अधिक विवेचन करने की आवश्यकता ही नही हे। इस पाठ से साधु-साध्वी का आपस मे निष्कारण आहार आदि लेना-देना किसी भी हालत मे सिद्ध नही होता। यही नही वरन् इसी पाठ से बिना कारण उनका आहार लेना-देना निषिद्ध ठहरता हे।

सूत्र मे ओर सूत्र की टीका मे 'णिग्गथे' ओर 'णिग्गथि' यह एक वचन का प्रयोग हे। एक वचन के इस प्रयोग से यह भी स्पष्ट हो जाता हे कि मार्ग भूली हुई अकेली साध्वी को मार्ग वता देना अथवा साधु स्वय मार्ग भूल गया हो तो अकेली साध्वी से मार्ग पूछ लेना लाचारी की हालत मे दोष नही हे। इसी प्रकार गुण्डो आदि के उपद्रव के कारण जव साध्वी वाहर न जा सकती हो तव अकेली साध्वी को आहार-पानी देना भी साधु का कर्त्तव्य हे। यहाँ ध्यान देने योग्य एक वात यह भी हे कि सूत्र मे यह तो लिखा हे कि विशेष कारण होने पर साधु अपनी भिक्षा मे से साध्वी को भिक्षा दे दे, मगर यह कही नही लिखा कि साधु, साध्वी की भिक्षा मे से अपने लिए ले लेवे। ऐसी दशा मे साध्वियो के झुड के साथ साधुओ का खाना-पीना ओर बिना ही किसी कारण के उनकी लाई हुई भिक्षा ग्रहण कर लेना, यह शास्त्र से सर्वथा असगत हे, स्वेच्छा हे ओर लोलुपता का परिचायक हे। उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट सिद्ध हो रहा हे कि साधु-साध्वी निष्कारण आहार-पानी का लेन-देन नही कर सकते हे। यदि तेरहपथी साधु भी इस सरल सत्य को स्वीकार कर अपनी कुमान्यता का परिहार कर देगे तो अपने सयममार्ग को कलुषित होने से वचा सकेगे।

❑

परिशिष्ट

न्यायविजयजी से निवेदन

आपकी प्रश्नावली कालक्रम से माघ शुक्ल ११ मे हमे भी मिली। उसके आदि पृष्ठ मे आप तीनो फिरको के आपसी झगडे मिटाने की कोशिश करते हे। वह ऊपर से बहुत भली मालूम पडती है, किन्तु वास्तविक कलहवर्धक दोष को पोषिका है। इस बात को आपके मगलाचरण के अग्रिम असूया युक्त श्लोक साबित कर रहे हे। उन श्लोको मे से एक दो श्लोक का हिन्दी भाषा मे ज्यो का त्यो अनुवाद कर देते है, जिससे सर्व साधारण को यह आपका कर्त्तव्य अच्छी तरह समझ मे आ जाय।

(५) हे नामधारी जेनी! अगर अपना स्वीकृत धर्म का अभिमान रखते हो, तो खुले मैदान मे सभा के बीच आकर अपना बल देखावो। हम सब वाद करने को तैयार हे। किन्तु तुम्हारा घर से निकलना नही होगा। फिर भी जोर से कहते है, अगर मूर्ख न हो, तो चर्चा करो।

(६) हे घर मे बली! चर्चा करने मे असमर्थ हो, तो मेरे इन प्रश्नो का उत्तर दो। अगर यह भी न हो सके, तो जैन–मार्ग को प्राप्त करो। नही तो मूर्खता से अपने मार्ग मे ही प्रसिद्धि को प्राप्त करो।

इसी को कहते हे ' विनायक प्रकुर्वाणो रचयामास वानरम्'' बनाने लगे गणेश बना लिया बन्दर। विचारशील पुरुषो से यह बात छिपी नही है कि, आपका यह प्रयास शान्ति भग का बीज हे। अगर कोई मनुष्य किसी प्रकार की अच्छी शक्ति हासिल करता है, तो उससे प्रथम आत्म–सस्कार करता हे, बाद क्रम से मित्र का, गृह का, आम का, समाज का, देश का सस्कार करता हे। तदनुसार शान्ति–स्थापना की शक्ति यदि आपने हासिल की है, तो प्रथम अपना मूर्ति–पूजक–समाज का तपागच्छ ओर खरतर गच्छ मे जो भेदभाव से एक दूसरे पर आक्षेप करते हुए कुमति कुठार, कुमति कुदाल नामक ग्रन्थ प्रगट किया है, तथा तीन स्तुति चतुर स्तुति का बखेडा आदि कहा तक लिखे, आपके एक ही तपगच्छ मे सक्लेशरूप द्वन्द्व जेन पत्रादि मे बार बार निकल कर उक्त पत्र का पाठकवृन्द को सन्तपप्त किया हे, उसको सर्वथा शान्त कर, बाद अन्य सम्प्रदाय के बखेडे मिटाने मे हस्तक्षेप करते। ऐसा न करने अपनी साधुता दिखाने के लिए लिखना कि "आइन्दे के लिए इन तीनो फिरको के झगडो को मिटा देना चाहिए'' यह तो एक ऐसा हुआ कि "मुझे निष्ठीवन्त मनपचार्य तटस्ये शोर्याभिसरणम्'' मुख पर थूकनेवाले को कुछ न कहकर तटस्थ रहनेवाले पर बल दिखाना इस लोकोक्ति को सार्थक करना हे। आपका बारम्बार वाद करने के अभिमान वाक्य से "विद्या विवादाय धन मदाय शक्ति परेषा परिपीडनाय। खलस्य'' यह वाक्य स्मरण होता है। प्रश्नो को पढ कर तो और भी विस्मित होना पडा। क्योकि, सुई से सग्राम जीतने के समान इन प्रश्नो से सम्प्रदायगत भेद का अभाव होना हे। केवल अपनी विद्वत्ता, वाग्मिता आदि पब्लिक को समझाना और साथ साथ दूसरो को तुच्छ वताना रूप अहकार को सिद्ध करना ही इस प्रयास का उद्देश्य है। किन्तु, आप चूकते हे। इस नीरस निस्सार व्यवहार से सभ्य–समाज मे उलटे कलह कटक गिने जाइएगा। 'नम्रत्वेनोन्नमन्त '' इत्यादि सज्जन के लक्षण से च्युत होना पडेगा। अतएव–"सन्त स्वय प्रकाशन्ते गुणा न परतो जने । आमोदो नहि कस्तूर्या शपथेन विभाव्यते॥'' गुण रहने पर आपसे आप प्रकाश होता हे, किन्तु दूसरे के कहने से नही।

की सुगन्ध शपथ खाने से नही जानी जाती हे। इस वाक्य मे श्रद्धा रखकर, उदार जेनधर्म का क्या ध्येय हे इस वात को जान कर, विश्वव्यापी पवित्र प्रेम फेलावे, न कि घोडमुखी कलह। इस द्रोहमय व्यवहार से निर्मल साधुमार्ग मलिन होता हे।"अपृष्टोऽपि प्रिय व्रूयाद्यस्य नेच्छेत्पराभवम्" जिसका पराभव इष्ट न हो, विना पूछे भी उसे हित करना चाहिये। इस वाक्य के अनुसार इतना कहना हम उचित समझे।

आपके प्रश्नो मे से आठ प्रश्नो का उत्तर दिया हे। क्योकि, आपने जिज्ञासु होकर तत्व जानने की इच्छा से प्रश्न नही किया हे। किन्तु केवल अपना महत्व दिखाना, दूसरो की योग्यता देखनी इस आकाक्षा से ही प्रश्न किये गये हे। अतएव इसी इच्छा को पूर्ण करने के लिए हमने वालभापा को छोडकर सस्कृत भाषा मे श्लोकवद्ध आठ ही प्रश्नो के उत्तर दिए हे। इससे आप स्थालीपुलाक न्याय से अर्थात् जेसे एक चावल सिद्ध पाने से सब चावल सिद्ध समझा जाता हे। ऐसे ही आठ प्रश्नो के उत्तर से आपको दूसरे की योग्यता का भान अच्छी तरह से हो जायगा, तो फिर पठन–पाठन आदि कार्य मे समर्पित अमूल्य समय को हम व्यर्थ क्यो खोवे।

ओर "वत्तीस सूत्र से अन्य आप कुछ नही मानते हे" आपका लिखना एक देशी हे। क्योकि, वास्तविक हमारा आगम प्रमाण विषयक मन्तव्य ऐसा हे–आप्तोक्तवाक्यमागम , रागद्वेषाऽज्ञानभयादिरहितत्वादर्हतो वाक्यमागम , तदनुयायिपूर्वाऽविरुद्ध मिथ्यात्वाऽसयमकषायभ्रान्ति रहित स्याद्व दोषेत वाक्यमन्येषा शिष्टानामप्यागम ।" अर्थात् आप्त का कहा हुआ वाक्य आगम हे। राग, द्वेष, अज्ञान, भय आदि से रहित होने से अर्हद्वाक्य आगम हे। तदनुसार पूर्वा पर विरोधरहित मिथ्यात्व, असयम, कषाय, भ्रान्तिरहित, स्याद्वाद सहित अन्य शिष्ट का वाक्य भी आगम हे। इससे स्पष्ट हे कि, अर्हद्वाक्या का वर्द्धक ओर पोषक सर्व वाक्य प्रमाण रूप हे।"

ऐसे तो सख्या के अनुरोध से आप लोग भी 45 सूत्रो को ही मानते हे, तो क्या तदनुसार उससे अतिरिक्त कुछ भी नही मानते हें ? किन्तु, मानते ही हे। तद्वत् हमे भी वत्तीस सूत्रो के अविरोधी वाक्य प्रमाणभूत माननीय हे। तदनुसार प्रश्नो के उत्तर दिए गए हे। इन प्रश्नोत्तर से यदि आपकी आकाक्षा तृप्त नही तो हम पठन–पाठन के सबब से अभी महाराष्ट्र देश मे विचरते हे, यहा आकर आप चर्चा कर सकते हे।

अलमति विस्तरेण

प्रकाशक
साधुसेवक घोडनदी सघ
ने पो घोडनदी
जि पूना।

उत्तरदाता
प मुनि श्री १०८ जवाहिरलाल जी
महाराज।

''सत्यार्थकथन''

शान्तस्वान्तनितान्तसाधुचरितान् साधून् विधूयाऽऽत्मनो-
दौरात्म्य प्रकटीकरोपि परुषाऽऽलापे किमेव् भुवि॥
रुक्षाऽऽक्षेप दुग्क्षरैस्तव मुधा वाचा चये नोंद्विजे
किन्तु न्यायपद कलककयसि चेत्खेदोऽति न केवलम्॥ १॥
कस्मात् क्रोधरयोऽयमाविहभवद्भावत्क इद्दड्मयि
चिन्तासन्ततिभश्चिरात्सुरुचिर निरणायिनश्चेतसा॥
स्वार्थान्धीकृतज्ञानदृक् तव समोऽराग व्यधाद्रागिण
तते वालविजृम्भित न च सहे दोषोयमेको मम॥ २॥
ज्ञानेनाऽन्यधनै स्वकीयसुषमासवर्द्धन चेत्सता
धर्मच्छद्मवता तत सुरिचिरा अज्ञानकद्दस्पृश ॥
प्रज्ञावञ्चनता विदन्ति चरित केषा जनाना हित
युष्माक व्यसनानि नोनिरशनान्या होस्विदेव सदा॥ ३॥
वद्धाऽऽस्या ब्रवतेऽत्र जातु सुकृताऽऽलाप भवन्तो वय
धर्माऽऽसक्तधिय सदेव वसनेर्युक्ताऽऽनना स्मोऽनिशम्॥
धर्माऽधर्मपरायणास्तव समा स्यामेव ते सम्मति
सिद्धा नेव भविष्यतीव सहसा न्यायद्रुहामीहितम्॥ ४॥
वद्धाऽऽस्ये ख्लु के गुणा इति पूरा निर्णीयता तत्त्वत
ओदर्याऽग्निकदुष्णवायुनिवहैर्जायन्ति जीवा न वा॥
उच्छिष्ट न सरत्यर वृतमुख शिष्टत्वमापद्यते
शिष्टैर्दिष्टमितीष्टमिष्टगुणिभिर्माल्य भवेन्नोकथम्॥ ५॥
सर्वोत्कर्षमति समस्तजगता विद्यापति सद्गति
शान्तस्वान्तयति स्वधर्मनिधन श्रेयस्कर मन्यते॥
त्वन्तून्नेतुमना स्वकीयसरणावन्यान्सदेवेहसे
चेष्टेय तव हास्यता मुपन येन्नत्वा कय सव्यथम्॥ ६॥
एतानऽर्हदनर्हगर्हितपथान् त्वक्त्वात्मनीनान्पथो
भ्राम्यन्तान्तु सुशीलसबलबला स्थाने निदेशोऽस्ति मे॥
प्रज्ञावद्विमुख विरोधसुमुख शीलस्य शान्त्ये मख
कर्त्तव्य भवताऽवतात्ति विनय नो जातु देप्य क्वचित् ॥ ७॥
व्यर्थञ्चतदनल्पजल्पनमह कर्तु न चेशे तव
पृच्छाऽद्योत्तरवच्छतेपु प्रथमा नद्यावुदातारिषम्॥
तेरेव प्रतिजानता प्रतिवचो वाचा निजाना यतो
मा भूद्भूरिभयावद्द तव पुर शार्दूलविक्रीडितम्॥ ८॥
शकाऽऽतकिनि चेतसि प्रसरति प्रष्टु सतस्ते न चेत्

स्वप्नज्ञातदिशा समेत्य समितो शकाऽऽपनेया त्वया॥
दुर्दान्त कुविकल्पकल्पनमिद जल्पन् भवानन्यथा
पृच्छामात्रपटुर्गृहस्थित इति हास्यामहे त्वा वयम्॥ ९॥

अथ मंगलश्लोक:

अश्रद्धा प्रतिमाऽऽमयाऽपनयनाऽभिज्ञोऽगदकारक विघ्नोघप्रविणाश्नोष्णकमलासर्कपको मन्त्रवत्॥
निष्कामर्भववृन्दवन्दितपदस्त्रैलोक्य चिन्तामणि द्रव्याऽर्च्याशिवमार्गद्दतुमदिशन्वीरप्रभु पातु व ॥१॥
येनाऽधारिधराऽमरत्वमभितो मत्या सुयत्या मुदा येनाऽकारि करालकाल कलितोत्तापप्रशान्ति सदा॥
वाक्पीयूषविसर्जनेन जगतीप्राखण्डसखण्डन ॥ २॥
श्री १००८ श्रीलालगखऽधिप सजयतु प्राज्ञ क्षितेर्मण्डनम्
मोक्षेह शमतासुधासुकलहक्ष्वेड स नोत्पादयेन् तीक्ष्णज्ञप्तिरहर्दिव हि सगुणा मेध्यक्रिया सेवते।
लाभस्तत्त्वविचारणासु समता तुभ्य समाधीयते लप्सीष्टोत्तरचन्द्ररश्मिनिचयैस्तोष मुने रुतेजसा ॥ ३॥

प्रश्न १

विकलाऽऽदेश सप्त भगी का क्या लक्षण हे ? स्याद्वाद का क्या स्वरूप हे ? उसे न माना जाय तो क्या हरकत होगी ? सो न्याय से सिद्ध कर दिखावे।

उत्तर १

आदेशो विकलोऽग्र भेदबहुला दृष्टि विधायाऽथया भेदस्येव प्रधानता परिवहन् धर्म गृहीत्वा क्रमात्॥
प्रत्येक विषय करोति नयतो भिन्नस्वरूप सदा
यस्मात्सोऽस्ति नयाऽऽकृति क्रमवशाद्धस्त्वाऽऽकृतिग्राहक ॥ १॥
जीवादो कुहचित्स्वधर्मनिवहेष्वेकेकमादाय तन्–मुख्यत्त्वाज्ञनितेऽनुयोगनिवहे स्याचिह्नितेर्वाक्चये ॥
पार्थक्येष्वथवा समानसमये सत्तानिषेधादिपु प्रत्यक्षादिमितेर्विदन्तु सुधिय स्याद्वादरूप यथा॥ २॥
स्यादास्ते निजपर्यये , परगुणेर्नास्ते, परस्वेर्गुणे–र्नास्त्यस्ति, क्रमतो घटो न वचनेर्वक्तव्यता गाहते॥
स्यादस्त्यैव चनेव वाक्पथगतो, नास्त्योव वाच्योऽपि न
स्यादस्त्येव हि नास्त्यवच्य इति च स्यादरूपन्त्विदम् ॥ ३॥
सोऽय शस्तसमस्तवस्तुनिकष स्याद्वाद आदो न चेत् एक नित्यमनित्यमन्यदिति सत्प्रेज्ञावदुत्प्रेक्षितम्॥
तथ्य स्यादसति क्षमापरिवृढे सोपलचेवाऽवनो
निर्नीतिर्जनताऽर्हदर्हमतिभिर्वस्तुस्थिति स्यात् कथम् ॥ ४॥

प्रश्न २

प्रत्यभिज्ञान को प्रमाण नही मानने वाले बोद्धो के समाने किस न्याय से प्रत्यभिज्ञान की प्रमाणता सावित की जाय ?

उत्तर २

सद्यो जातशिशुर्विरोति हसति स्तन्य जिघृक्षुर्मुहु–र्मातुर्वक्षति तत्पयोधरयुगे सवेशयत्याननम्॥
पूर्वस्मिन् जनने विचेष्टितमदो न स्याद्यदि ततस्मृतो शक्तो नेव भवेद्भवे भवति तन्मान्येव पूर्वस्मृति ॥१॥
ससारे व्यवहारकारणमिय जागर्ति पूर्वस्मृति स्मृत्येवाऽव विराजते नृपकृता मुद्राऽपि मान्या सदा॥
सवाऽय परिचीयते विरहित कालाद्वहोरागत सत्ता नेव भवेत्स्मृतेरिहभवेद्विद्याविहीन जगत्॥ २॥

प्रश्न ३

ठाणाग जी मे कारक का विचार चला हे, तो कारक क्या चीज हे ? कारक का सामान्य लक्षण क्या हे ? ओर उस लक्षणो को सव कारक मे केसे घटाया जाय ? कर्त्ता आदि कारको का विशेष लक्षण क्या हे ? हे देवदत्त' यह कोन सा कारक हे ? हेतु ओर कारण मे कितना फर्क है ?

उत्तर ३

येषा योग इह क्रियासु भवति श्रुत्याऽनुमित्याऽथवा
साक्षाद्वाऽस्तु परस्पराऽपि भवतु कुयु' क्रिया यानि च॥
तानि व्याकरणज्ञ आह नियमात् पट् कारकाणि क्रमात्
तेषा रूपमधो विधानविधिना बद्धादरो बुध्यताम् ॥ १॥
कर्त्ता कर्म करोति तत्परिणतो मत्या विरक्ताय तत् दत्ते चाभिमत च तेन सहसा तस्मात्सरत्यालस ॥
तस्याऽऽस्तेऽऽभ्युदय सखेऽव निपुण जानीहि यल्लक्षण
पूर्वोक्त घटते च कारकचये योगात् क्रियाकारणात् ॥ २॥
व्यापाराऽश्रय एव कर्तृपदग स्यात्स स्वतन्त्र कृतो वाच्य कर्मफलाऽऽश्रित च करण सिद्धक्रियाकारणम्॥
द्रव्यादेर्जनकोऽव हेतुरुदितो दानक्रियाकर्मणा
लिप्त यत् क्रिययाऽऽहित च तदपि स्यात्सप्रदानाऽभिधम् ॥ ३॥
विश्लेषेऽवधिरस्थिर स्थिरसमो गच्छत्यपादानता
सम्बन्धोऽस्त्य भिधेयतासुपगत पष्ट्या अनेकाऽऽकृति ॥
आधारोऽधिपुर परच करण कर्त्रा क्रियाया भवेत् हे देवेति कृतिश्रित तदधुना सम्बोधन बोधत ॥ ४॥
द्रव्ये वापि गुणे क्रियासु यदि वा बोभूयते जन्यता तद्दृष्ट्या जनकत्ववानिह सता हेतु समान्नायने॥
जन्यत्वात् कृतिनिष्ठतो जनकतावद्व्यापृतो निश्चित
मित्थ भेदयुत चकाऽस्ति करण हेतो सकाशादलम् ॥ ५॥

प्रश्न ४

बोद्ध आदि पाच दर्शन किस किस नय से प्रकट हुए हे ? जिस जिस नय से जो दर्शन प्रकट भया हे, उस उस नय के साथ उस दर्शन के सिद्धान्त का मिलान भी जरा सा कर दिखलावे।

उत्तर ४

जेनाऽन्यानि तु दर्शनानि प्रकटीभूतानि तत्कारण चत्वारो व्यवहारसग्रह ऋजूत्सूत्रा नया नेगम ॥
एकान्त स्थितितश्चतानि विमतग्रस्तानि पूर्वेर्नये–रायुक्तानि चतुर्भिरेव हि यतस्ते चैव दुष्टाऽऽश्रिता ॥१॥
साख्याऽऽम्नाय निदर्शनेस्ति पुरुषोऽकर्तेति युक्तेर्हि तत् एकान्तग्रहणे च सग्रहनये सविष्टमस्तीक्षणात्॥
राद्धान्तोयमुदेति जेमिनिमुनेर्व्याप्नोति जीव सदा तस्मात्सोऽपि समेति सग्रहनय तत्वान्तरेर्नेगमम् ॥ २॥
विश्व कार्यतया सकर्तुकमिद नेयायिकानामय व्याहारो व्यवहारमेव विशति प्रायो विशेषान्नये॥
सर्वस्मिन् घटते यतो नयविदा तत्व सत षड्विध बोद्धोपक्रमेआविशत्यलमत सूक्ष्मर्जुसत्रे नये ॥ ३॥
यस्मात्तस्य समीप्सितोऽस्ति पलिक सर्व पदार्थस्तत पञ्चस्कन्धप्रतीक्षया व्यवहृतो सोस्ति पविष्टो नये॥
प्रत्यक्ष मनुते ततो व्यवहृतो शुद्धेतराया नये चार्वाक प्रविशत्यल विमतितो जानाति नान्यद्यत ॥ ४॥
सर्वेऽमी निजदर्शनोर्जनविधो वृत्या प्रवृत्तास्तत सावद्या व्यवहारभेदनयत साधप्रवृत्यात्मके॥
इत्येव बहुभेदभूषितनये वक्तव्यतोऽन्त कृत चित्रोऽय नयवाद इत्यतिशय सूत्रान्तराद् ज्ञायताम् ॥ ५॥

प्रश्न ५

केवल ज्ञान ओर केवल दर्शन ये दोनो उपयोग यदि युगपत (एकसाथ) माना जाय, तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर ५

दृष्टि केवलसञ्जिका भवतु वा ज्ञप्तिस्तस्था केवला चेकस्मिन् समयेऽनयोर्व्यवहतो ज्ञप्त्यर्थभेद कृत ॥
दोषोऽय भवितैनयोश्चबहुधा भेदोऽर्थतो भासते वस्तु स्थूल विशेपरूपगमके स्त केवले दृक्चितो ॥१॥
तस्वद्भिन्नकृतोस्तयोर्हि भवति भिन्ना प्रवृत्ति सदा लब्धिर्यद्यपि जायते च युगपत् तथ्य तयोर्दृक्चितो ॥
भिन्नेऽनेहसि किन्तु भेदघटितेवास्ते प्रवृत्तिस्तयो मत्तज्ञप्तिचतुश्वचिद्वति मुनो वृत्तिर्यथा भेदत ॥२॥
यद्यप्यन्यमुनि सुयुक्तिनिवहे प्रावोधयत्सर्वथा वर्तेते युगपत्सदेव जगतीमे केवले दृक्चितो॥
किन्त्वन्यागणभद्रसूरिरपरे मान्यास्तिरश्चक्रिरे तद्युक्ति शतधा विभिद्य भवता सम्प्रेक्षयतामन्यत ॥३॥
साध्येऽस्मिन् विमताऽन्वितेऽपि बहुश प्रज्ञावता भासते भिन्ना वृत्तिरितिप्रतीतिरतुला या जेनभद्रो गणि॥
प्रावोचन्निगमप्रमाणसहिता मान्या सुधीभि सदा यस्मादागमपद्धतावपि तयोर्भिन्ना प्रवित्ति व्यधात्॥४॥

प्रश्न ६

लेश्या योग का परिणाम हे या कर्म का निष्पन्द हे ? सूत्रानुसार इस बात को सिद्ध करे।

उत्तर ६

लेश्या द्रव्यतया विभिन्नकथिता भावेन पृष्ठा यथा– सामान्येन तयोत्तर च भवता सामान्यरूप शृणु॥
सा कर्मोदयभावजन्यविकृतिर्लेश्याऽनुयोगानने उक्तात सुधियाऽपि मान्यममितो निष्यन्दन कर्मण ॥१॥

प्रश्न ७

अवधिज्ञान व अवधिदर्शन के पहले ओर पीछे जेसे अवधि दर्शन ओर केवल दर्शन माना ओर ज्ञान मात्र जब दर्शन के साथ सम्बन्ध रखता हे, तो मन पर्याय ज्ञान के पहले मन पर्याय दर्शन को क्यो न मजूर रक्खा ?

उत्तर ७

स्वान्त पर्ययसचितोरन हि पुरा हृत्पर्यय दर्शन स्वान्त पर्ययधीरिहाऽस्ति नयत सामान्यसग्राहिणी॥
सामान्य सविशेषयैव हि धिया ज्ञानेऽत्र सभासते एतस्याश्च मते क्षयोपशमताऽपीदृक्कृता वर्त्तते ॥१॥
याऽन्यच्चित्तगवस्तु पश्यति न तु स्वान्तर्निमित्तादृते तस्माद्भिन्नामिद क्षयोपशमतो ज्ञान हृद पर्ययम्॥
नेवोचुर्बुनया विमर्शपटव सिद्धाऽन्वित दर्शन विस्तारोऽपि बुधेलिमोऽवभवता सन्नन्दिसूत्रात्त्वया ॥२॥

प्रश्न ८

क्षायिक समकित वर्तमान काल मे हो सकता हे या नही ?

उत्तर ८

एतस्मिन्समये निषेधरहित स्वात्क्षायिक साम्यत जम्बुस्वामिनि मोक्षतामुपगते पड्क्यन्विता वृत्तय ॥
नाश जम्पुरिति प्रकाशधिषण सत्कल्पसूत्रेऽगदत् तन्नाऽपक्षिणतत्परोऽप्यहमिम नेक्षे निषेधाऽन्वितम ॥१॥

शुभमधिकम् ॥

परिशिष्ट

युगद्रष्टा युगपुरुष आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा के द्वारा तीर्थंकर देवो के सिद्धान्तो का वास्तविक रूप से भव्य प्रतिपादन हुआ। उस प्रतिपादन मे कुछ भ्रात धारणाए एव रूढ़िगत जैन धर्म के नाम से चलने वाली परम्पराओं का विखण्डन एव सत्य का मण्डन हुआ है। इस प्रतिपादन से सम्बन्धित व्यक्तियो मे स्वाभाविक तौर से ईर्ष्या भाव एव असहिष्णुता की भावना प्रबल हो चली तथा जन मानस मे आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा के प्रभाव को धूमिल करने हेतु तेरापथ समाज की ओर से कई प्रकाशन हुए और हो रहे है एतदर्थ साधुमार्गी जैन सघ ने सक्षिप्त मे प्रस्ताव भी पारित किया वह कुछ सक्षिप्त स्पष्टीकरण इस परिशिष्ट मे दिया जाना अति आवश्यक समझ कर दिया जा रहा है जिसमे अप्रमाणिकता और असत्यता सप्रमाण प्रस्तुत की गयी है। इससे तेरापथ समाज के साहित्य मे जो आचार्य श्री रूगनाथ जी म सा से लेकर आचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा एव आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा आदि पर जितने भी असत्य आरोप एव मन कल्पित बाते लिखी है वे सभी अप्रामाणिक सिद्ध होती है क्योकि वे असत्य और मन कल्पित है। इन सभी असत्य आरोपो को एव मन कल्पित वातो को यहाँ उद्धृत नही करते हुए नमूने के तौर पर कुछेक मन कल्पित बातो की अप्रामाणिकता बतलाई जा रही है।

श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ का उद्देश्य निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति के सरक्षण सवर्धन हेतु उसके अनुपोषक महापुरुषो के ज्ञान-दर्शन चारित्र की अभिवृद्धि मे सहयोग का रहा है। अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के परिप्रेक्ष्य मे सघ अछूतोद्धार एव धर्म शिक्षण जैसी अनेक जन कल्याणकारी प्रवृत्तियो को प्रश्रय देता रहा है।

सघ की नीति सदा सर्जनात्मक एव शान्त क्राति की रही है। निन्दात्मक एव आक्रान्ता नीति का सघ ने सदा वहिष्कार ही किया है। किन्तु सघ यह भी नही चाहता है कि आगम विरुद्ध धारणाओं, निर्मूल भ्रान्तियो एव असत्य आक्षेपो को भी सहन किया जाता रहे। ऐसे प्रसगो का यथोचित प्रामाणिक स्पष्टीकरण करके भ्रान्त धारणाओं को निर्मूल करना सघ अपना कर्त्तव्य समझता है।

श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ से अनुवन्धित चतुर्विध सघ के बहुमुखी विकास से उत्पन्न ईर्ष्या से एव निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति की सुरक्षा हेतु उठाए गये अहिसक असहयोग से विक्षुब्ध हो इस सघ के चरित्र-निष्ठ आदर्श पुरुषो पर कतिपय कट्टर साम्प्रदायिक मनोवृत्तियो ने हीन भावना के वशीभूत हो समाचार पत्रो एव साहित्य आदि के माध्यम से अप्रामाणिक मिथ्या आरोप लगाये गये। छल-छद्म नीति का प्रयोग कर वस्तु स्वरूप को तोड-मरोड कर विपरीत ढग से प्रस्तुत किया और जनमानस को भी

गुमराह किया। यहाँ तक कि अपने मन की दूषित असूया वृत्ति को सतुष्ट करने के लिए आगम के सिद्धान्त विरुद्ध एकान्तवादी मनोकल्पित अर्थ किये। अपनी साम्प्रदायिक धारणा को आगम सम्मत बताने हेतु आगमो का प्रकाशन किया और इस प्रकार आगम के साथ भी उत्सूत्र प्ररूपण जैसा महाअपराध किया है।

सघ ने अपनी सौम्य नीति के अनुसार तटस्थतापूर्वक सहन करने का प्रयास किया किन्तु इसका भी विक्षुब्ध मनोवृत्तियो ने दुरुपयोग किया और अपने दु साहस को बढ़ावा देते हुए पूर्वाचार्यों पर भी मिथ्या आक्षेप करने लगे।

आचार्य श्री रूगनाथजी म सा के द्वारा निष्कासित श्रीभीखणजी स्वामी आदि कतिपय सत एव श्रावको ने अपनी खिन्नता को रूपान्तरण देकर एक पथ चलाया और उसकी पुष्टि हेतु शास्त्रो के स्थलो को तोड-मरोड कर मनमाने तरीके से मानवता विरोधी कई सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया। बाद मे जयाचार्य जी ने तो उन सिद्धान्तो को ग्रथ के रूप मे ग्रथित भी कर दिया और उस भ्रमविध्वसन ग्रथ के पेज ७६ मे यहाँ तक कह दिया गया है कि—

'साधु थी अनेरो कुपात्र छे अनेरा ने दीधा अनेरी प्रकृति नो बन्ध कहयो ते अनेरी प्रकृति पाप नी छे।'

एव पृष्ठ ८२ की टिप्पणी मे कुपात्र दान का फल बताते हुए लिखा है कि—

'कुपात्रदान, मासादि सेवन, व्यसन-कुशीलादिक ये तीनो ही एक ही मार्ग के पथिक है। जैसे चोर, जार, ठग ये तीनो समान व्यवसायी है, वैसे ही जयाचार्य सिद्धान्तानुसार कुपात्रदान भी मास आदि सेवन एव व्यसन-कुशीलादिक की ही श्रेणी मे गिनने योग्य है।'

तात्पर्य यह है कि उनके उक्त कथनानुसार साधु के अलावा अन्य माता-पिता समाज एव राष्ट्र के नेता यहाँ तक कि महात्मा गाधी आदि का भी कुपात्र मे समावेश हो जाता है क्योकि वे पच महाव्रतधारी साधु नही कहलाते और उनको अन्न जल आदि किसी भी प्रकार की सहायता देना मास सेवन वैश्यागमन आदि के समान पाप करना है। जब मानव को किये जाने वाले उक्त सहयोग के लिए भी इस प्रकार पाप होना बतलाया जाता है तो पशु-पक्षी आदि के लिए तो कहना ही क्या ?

ऐसे सिद्धान्त जब जैन धर्म के नाम से प्रसारित होने लगे तब स्वर्गीय आचार्य श्री श्रीलाल जी म सा एव युगद्रष्टा स्वर्गीय आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा आदि जो चतुर्विध सघ के सचालक महापुरुष थे, ने भी जब इस प्रकार के सिद्धान्त जैन धर्म के नाम से जनता मे प्रसारित होते हुए देखे तो उनसे कैसे रहा जा सकता था ? क्योकि इस प्रकार के मानवता विरोधी सिद्धान्त जैन धर्म के नाम से प्रसारित हो इससे जैन धर्म का अवमूल्यन एव तीर्थंकर आदि पवित्र पुरुषो के प्रति जनमानस मे कलुषित भाव पैदा होना स्वाभाविक ही था।

इन भ्रान्त सिद्धान्तो को आगमीय धरातल पर भ्रात सिद्ध करते हुए सद्धर्ममण्डन आदि ग्रन्थो का प्रसग बना, जिससे प्रबुद्ध वर्ग सावधान होने लगा तो तेरापथ समाज का वर्ग येन-केन प्रकारेण उक्त आचार्य देवो का प्रभाव कम करने का प्रयत्न करने लगा एव प्रपचमूलक बाते भी रखने लगा। लेकिन आचार्य देवो ने एव उनके अनुयायियो ने यथास्थान यथायोग्य स्पष्टीकरण आदि के द्वारा वस्तु स्वरूप का प्रतिपादन किया। वर्तमान मे आचार्य श्री तुलसी तेरापथ समाज के एक मात्र अनुशास्ता कहलाते है और आचार्य श्री तुलसी जैन समाज की एकता सम्बन्धी बाते रखते हुए अपने उन पूर्वाचार्यो के सिद्धान्तो को जनता की दृष्टि से बचाने के लिए भाषा चातुर्य एव लेखन कला के माध्यम से जनता के समक्ष प्रस्तुत करने लगे। अनेक आयामो के साथ ऐसा कुछ वातावरण बनाया जाने लगा जिससे सहसा भाषित होने लगा कि सम्भव है आचार्य श्री तुलसी उन सिद्धान्तो के प्रति सक्रिय न रह रहे हो परन्तु आम जनता की रुचि के अनुसार साहित्य के साथ-साथ पूर्व की मानवता विरोधी मान्यता को शब्दो के आवरण मे कलापूर्ण तरीके से पुरानी शराब को नई बोतल मे भरने की तरह जन-मानस के सामने प्रसारित किया जाने लगा।

इतिहास आदि के नाम से कालुगणी आदि के जीवन चरित्र के प्रसग से एव दृष्यत आदि पुस्तको के माध्यम से आचार्य श्री रघुनाथ जी म सा से लेकर अन्य स्थानकवासी समाज के चारित्रनिष्ठ महाव्रतधारी महात्माओं के प्रति घृणास्पद अशुद्ध वायुमण्डल भी लुभावने प्रचार की आड मे चल रहा है। विशेष कर कालुगणी के जीवन चरित्र मे युगद्रष्टा आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा एव शान्त क्राति के अग्रदूत आचार्यप्रवर श्री गणेशीलालजी म सा पर जो मिथ्या आक्षेपात्मक वर्णन देकर अप्रामाणिक अनर्गल प्रलाप किया गया है, वह नितान्त असत्य तो है ही साथ ही तेरापथ सघ एव सघनायक की छद्मपूर्ण नीति एव अशोभनीय मनोवृत्ति को भी स्पष्ट करता है।

इस नीति का जब परिज्ञान होता है तो कोई भी सिद्धान्तप्रिय पुरुष इसे कैसे पसद कर सकता है? इधर तो जैन एकता का नारा और उधर छोटी-बडी पत्र-पत्रिकाओं एव पुस्तको के माध्यम से आज भी स्थानकवासी समाज को भ्रमित करने की असफल चेष्टा की जा रही है और स्थानकवासी महात्माओं को मनमाने तरीके से हीन बताने का असफल प्रयास किया जा रहा है। इस प्रकार के सिद्धान्त विरोधी साहित्य, चाहे वह इतिहास के रूप मे हो अथवा पुस्तकाकार एव पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से हो, जो कुछ किया जा रहा है वह कतई शोभास्पद नही है। आचार्य श्री तुलसी जी को चाहिए कि इस प्रकार की दुधारी नीति को अपनी छत्र-छाया मे न पनपने दे यही श्रेयस्कर है।

तेरापथ समाज के साहित्य मे स्थानकवासी साधुमार्गी महापुरुषो पर जो असत्य एव मन कल्पित अनर्गल लेखन हुआ है उससे साधुमार्गी सघ सदस्यो को

कितना आघात लगा उसे स्पष्ट करने के लिए उनके द्वारा पारित प्रस्ताव की शब्दश प्रतिलिपि १० नवम्बर १९८१ के श्रमणोपासक अक से दी जा रही है—

प्रस्ताव ११ —आज की यह आम सभा वालोतरा टाइम्स के तेरापथ विशेषाक मे 'तेरापथ के अष्टम आचार्य श्री कालूगणी' शीर्षक से श्री मोतीलालजी सालेचा द्वारा लिखित लेख मे 'विरोध व हत्या का षड्यन्त्र उपशीर्षक मे स्थानकवासी साधु गणेशराज जी व जवाहरलालजी इनको धर्मचर्चा मे परास्त नही करने के कारण विघ्न खडा करने पर तुले हुए थे। एक बार मगनलालजी स्वामी को स्थडिल भूमि से लौटते कोई कोडा मारकर चला गया एव इस घटना के बाद कालूगणी की हत्या के षड्यन्त्र का भडाफोड़ हुआ। बीकानेर के टीबो मे शौचादि से लौटते समय एक व्यक्ति कालूगणी के सामने पिस्तौल लेकर खडा हो गया आदि।' जिस तरह की भ्रातिपूर्ण एव अशिष्ट भाषा मे मनगढ़न्त जो उद्धरण दिया है, इससे समस्त साधुमार्गी जैन सघ के अनुयायियो के हृदय पर गहरा आघात ही नही लगा वरन् उत्तेजनापूर्ण वातावरण भी उत्पन्न हुआ है। अत समस्त सघ इसके प्रति कडा विरोध प्रकट करता है।

अनुशासन व एकता की बात करने वालो से यह अपेक्षा है कि वे अपनी कथनी व करनी मे एकरूपता दरसाये।

तेरापथ इतिहास मे सद्धर्ममडन के प्रकरण से जो कहा है उसका कुछ स्पष्टीकरण यहाँ किया जा रहा है—

तेरहपथ समाज के मान्य ग्रन्थ भ्रम-विध्वसनम् मे अप्रामाणिक वग चूलिया ग्रन्थ का उद्धरण देते हुए अपने मिथ्या अह का पोषण किया जो कि कल्पसूत्र आदि से विपरीत पडता है।

कल्पसूत्र से विपरीत भावो को व्यक्त करने वाले इस प्रसग को भ्रम विध्वसन मे देखा तो सद्धर्ममडन की प्रथम आवृत्ति की भूमिका मे भूमिकाकार ने उसी ग्रन्थ का उद्धरण देकर उनके मिथ्या अह का निरसन किया है।

वग चूलिका की प्रथम गाथा जिसमे कि वीर निर्वाण के २९१ वर्ष पश्चात् सम्प्रति राजा के होने का उल्लेख है, यह उल्लेख भगवान् के निर्वाण के पश्चात् कब-कब, क्या-क्या घटना घटी, इसका द्योतन करने के लिए किया गया है। वीर निर्वाण के पश्चात् २९१ वर्ष मे सम्प्रति राजा हुआ और उसने क्या-क्या कार्य किया और उसी वीर निर्वाण के १६६६ वर्ष से आगे ३३३ वर्ष तक दुष्ट व्यक्ति धर्म की अवमानना करते रहेगे। १६६६ वर्ष के बाद सघ अर्थात् भगवान महावीर की जन्म की राशि पर ३३३ वर्ष का धूमकेतु-ग्रह लगेगा। वह जब उस राशि पर से हट जायेगा तब सघ की पुन उदय-उदय पूजा होगी। इस आधार से भगवान निर्वाण के २०३२ वर्ष के लगभग धूमकेतु ग्रह हट जाने से सघ की उदय-उदय पूजा का प्रारम्भ होगा। यह बात कल्पसूत्र के मूल पाठ से प्रमाणित होती है।

'जप्पभिइ च ण सुद्धाए भास रासी महागहे दो वास सहस्सठिइ समणस्स भगवओ महा-वीरस्स जन्म नक्खत सकते तप्पभिइ च ण समणाण निग्गयाण य नो उदिए उदिए पूजा सक्कोर पवत्तई।' [कल्पसूत्र]

इस कल्पसूत्र के मूल पाठ को पुष्ट करने वाली बात सद्धर्ममडन की भूमिका मे स्पष्ट की गई है वह ठोस एव प्रामाणिक है।

तेरापथ इतिहास मे जो लिखा गया है उसमे वग चूलिका की प्रथम गाथा के अन्दर जो प्रथम घटना वीर निर्वाण के बाद घटी वह वीर निर्वाण के बाद २६१ वर्ष मे घटी। इस २६१ वर्ष को १६६६ मे और जोड़ लिया गया है, वह जोड़ना उपयुक्त नही है, क्योकि १६६६ वर्ष के अन्तर्गत ही २६१ वर्ष समाविष्ट हैं। यदि इनको १६६६ वर्ष से अलग गिनते है तो उदय-उदय पूजा नही होने का जो उल्लेख कल्पसूत्र मे है, उससे मेल नही होता। क्योकि २६१+१६६६+३३३ वर्ष जोडने से २३२३ वीर निर्वाण हो जाता है।

वीर निर्वाण के २००० वर्ष बाद दुष्ट ग्रह हटा और इसके बाद अब तक लगभग ५०८ वर्ष बीते यदि इन ५०८ वर्षो को २३२३ मे जोड़ेगे तो २८३१ होता है जबकि आज तक वीर निर्वाण को २५०८ वर्ष ही हुए है। अत यह प्रत्यक्ष विसगति एव अप्रामाणिकता सामने आती है।

तेरापथ इतिहास मे दूसरी अप्रामाणिकता यह प्रदर्शित हुई है कि वीर निर्वाण की २३२३ की गिनती लगाकर उसमे से ४७० वर्ष विक्रम सवत् का काटकर १८५३ वर्ष रखकर यह ध्वनित किया है कि १८५३ मे दुष्ट ग्रह की समाप्ति हुई। लेकिन यह १८५३ तो विक्रम सवत् से होता है। जबकि दुष्टग्रह की अवस्था वीर निर्वाण से २००० वर्ष तक चलने का कल्पसूत्र मे स्पष्ट कहा है। अत उससे यह सगत नही होता। विक्रम सवत् की दृष्टि से भी २००० वर्ष पूरे नही होते है। इस प्रकार तेरापथ इतिहास मे मनमाने तरीके से तोड-मरोड कर अप्रामाणिकता के साथ कई विसगतियॉ पैदा कर दी गई है और वह भी अप्रामाणिक ग्रन्थ के आधार पर।

सद्धर्ममडन की भूमिकाकार ने कल्पसूत्र के अविरुद्ध और वीर निर्वाण की विसगतियो से रहित वग चूलिका की प्रथम गाथा की सख्या सहित वीर निर्वाण से १६६६ वर्ष मे धूमकेतु ग्रह का ग्रहण किया। प्रथम गाथा मे २६१ वर्ष की घटना का उल्लेख कर यहाँ जोडने का प्रसग नही था इसलिए उसका उल्लेख नही किया है। लेकिन प्रथम गाथा की सख्या को १६६६ के अन्तर्गत ग्रहण किया है। वीर निर्वाण से १६६६ वर्ष तक और भी कई घटनाए घटी, उन सभी का उल्लेख करने का यहाँ प्रसग नही है। उसी तरह से वग-चूलिका की प्रथम गाथा की घटना का उल्लेख इस १६६६ मे सयुक्त कर लिया गया है, जो कि उपयुक्त एव प्रामाणिक है।

सद्धर्ममडन की भूमिका पृष्ठ ञ मे कल्पसूत्र का जो पाठ ऊपर दिया है उसे ध्यान से देखे। इस मूल पाठ मे स्पष्ट कहा है भगवान महावीर के जन्म नक्षत्र पर २००० वर्ष की स्थिति वाला भस्मराशि नामक महाग्रह जवसे लगेगा तव से श्रमण निर्ग्रन्थ निर्ग्रन्थियो का पूजा सत्कार उदय-उदय नही होगा।

भगवान महावीर का निर्वाण हो जाने के वाद जव २००० वर्ष पूर्ण हुए उस समय विक्रम सवत् १५३० चल रहा था। जव यह भस्म ग्रह सम्पूर्ण हो गया तव सवत् १५३१ मे लोकाशाह ने धर्म क्राति के वीज वोये। जिसके लिए तेरह पथ इतिहास के पृष्ठ २५ के दूसरे पेराग्राफ मे लिखते है—

'भष्म ग्रह जव वृद्ध हो चुका था उस समय लोकाशाह ने धर्म क्राति के वीज वोये थे। भस्म ग्रह के उतरते ही वे फलीभूत हुए और विक्रम सवत् १५३१ मे लोकाशाह प्रतिवोधित ४५ व्यक्ति ने एक साथ दीक्षा ग्रहण की।'

तेरहपथ इतिहास मे दिये गये इस उद्धरण से भी स्पष्ट हो जाता है कि कल्पसूत्र के मूल पाठ मे जो कहा गया है वह एव सद्धर्ममण्डन की प्रथम आवृत्ति की भूमिका मे दिया वह प्रामाणिक सिद्ध होता है। अत वंग चूलिका नामक ग्रन्थ का उद्धरण देकर विक्रम सवत् १८५३ वता कर जनता को भ्रमित करना मिथ्या सिद्ध होता है।

तेरह पथ इतिहास के पृष्ठ ४२७-४२८ मे चूरू चर्चा का उद्धरण देकर स्व आचार्य श्री गणेशीलाल जी म सा के विषय मे जो अनर्गल बाते लिखी है वे भी उपरोक्त वातो की तरह अप्रामाणिक है वहाँ की घटना की सिलसिलेवार व्यवस्थित जानकारी इसी जीवन चरित्र के चूरू चर्चा नामक परिशिष्ट से देखी जा सकती है।

इसी प्रकार तेरापथ इतिहास आदि ग्रथो मे अनेक अप्रामाणिक प्रसग दिये गये है इससे वे ग्रथ प्रामाणिकता की कोटि मे नही आ सकते है।

आचार्य श्री तुलसी भी अपने पूर्वाचार्यों की अप्रामाणिक परम्परा को निभा रहे है उसका भी एक नमूना 'नमस्कार महामत्र' विषयक यहाँ उद्धृत किया जा रहा है—

'आचार्य श्री हस्तीमलजी म सा का प्रश्नोत्तर' शीर्षक विचार जिनवाणी मई १९७८ के पृष्ठ पर 'क्या नवकार मे 'लोए' शव्द हटा दिया, सही है ? प्रकाशित हुआ। इसके उत्तर मे जिनवाणी १९७८ जून के पृष्ठ ३५ पर आचार्य तुलसी का स्पष्टीकरण छपा है—उसमे उनकी निम्न वाक्यावली—

'आचार्य श्री तुलसी ने नवकार मत्र से लोए शव्द को हटा दिया है या हटाने की वात करते है—यह सर्वथा मिथ्या एव भ्रमपूर्ण है। आचार्य श्री तुलसी ने नमस्कार महामत्र से न तो लोए शव्द को हटाया है और न हटाने की इच्छा रखते है ' से स्पष्ट है कि उन्होने न तो लोए शव्द हटाया है और न हटाने की इच्छा रखते है आदि जो स्पष्टीकरण दिया वह कहाँ तक सत्य है ?'

इसकी अप्रामाणिकता विश्व भारती लाडनू से प्रकाशित अग सुत्ताणिके विवाह पण्णती नामक अग से देखी जा सकती है। इस ग्रन्थ के प्रारभ मे मगलाचरण के रूप मे जो नमस्कार मत्र दिया है, उसमे लोए शब्द नही है। (अन्य भगवती सूत्र जो आगमोदय समिति सूरत से, आचार्य श्रीअमोलक ऋषि जी म सा के द्वारा हैदराबाद से, एव शास्त्रोद्धार समिति राजकोट से तथा सुत्तागमे लुधियाना से प्रकाशित हुए है अन्य भी कई स्थलो से प्रकाशित है उन सभी के मूल पाठ मे 'लोए' शब्द लिखा हुआ है।)

यदि उपरोक्त स्पष्टीकरण मे सत्यता होती तो नमस्कार मत्र के साथ ही लोए शब्द रहता पर किसी प्रति का बहाना लेकर लोए शब्द को मूल से हटाना और फिर कहना कि मै हटाना नही चाहता यह कितना असत्य है ? हाँ, 'लोए' शब्द को मूल से नही हटाकर टिप्पणी मे स्पष्टीकरण होता तब तो सत्यता प्रकट होती। पर ऐसा न करके मगलाचरण के रूप मे आये हुए नमस्कार मत्र के मूल पाठ मे से लोए शब्द को हटाकर स्पष्टीकरण मे यह कहना कि—

'आचार्य श्री तुलसी ने न तो लोए शब्द को हटाया और न हटाने की इच्छा रखते है।' यह कथन कैसे प्रामाणिक कहा जा सकता है ? ऐसे प्रत्यक्ष राजनैतिक ढग से अप्रामाणिकता बर्तने वाले अगुवा एव उनके अनुयायी 'तेरा पथ-इतिहास' के माध्यम से अप्रामाणिक तरीके से किसी को भी अप्रामाणिक करने मे या लिखने मे कैसे सकोच कर सकते है।'

अस्तु